इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

BGGET - 141
भारत का भूगोल

माध्यम IAS
'way to achieve your dream'

खंड

1

भौतिक विन्यास

इकाई 1
उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

इकाई 2
भूआकृति विज्ञान

इकाई 3
अपवाह तंत्र

इकाई 4
जलवायु

इकाई 5
मृदा एवं वनस्पति

शब्दावली

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड 1 भौतिक विन्यास

इकाई 1 उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

इकाई 2 भूआकृति विज्ञान

इकाई 3 अपवाह तंत्र

इकाई 4 जलवायु

इकाई 5 मृदा एवं वनस्पति

खंड 2 संसाधनों का आधार

इकाई 6 भूमि संसाधन

इकाई 7 जल संसाधन

इकाई 8 वन संसाधन

इकाई 9 खनिज संसाधन

इकाई 10 ऊर्जा संसाधन

खंड 3 अर्थव्यवस्था

इकाई 11 कृषि

इकाई 12 उद्योग

इकाई 13 परिवहन

खंड 4 जनसंख्या एवं बस्ती/अधिवास

इकाई 14 जनसंख्या

इकाई 15 बस्तीयाँ/अधिवास

खंड 5 भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

इकाई 16 भूआकृतिक उपगमन

इकाई 17 सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 18 आर्थिक उपगमन

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 1: भौतिक विन्यास

जैसा कि आप जानते हैं कि भूगोल प्राचीन काल से ज्ञान के सबसे पुराने ज्ञानक्षेत्रों में से एक रहा है। यह पृथ्वी की सतह और उसके लोगों के अध्ययन से संबंधित है। यह दोनों भौतिक और सांस्कृतिक विशेषताओं, उनके वितरण, स्थानिक भिन्नता और एक दूसरे के साथ अंतर्संबंधों का स्थान और समय में अध्ययन करता है। आप जानते हैं कि पहला समूह प्रमुख भू–आकृतियों के भूभाग और जल निकाय हैं। आप आगे जानते हैं कि ये दोनों प्रमुख भू–आकृतियां ग्रह पृथ्वी के भौगोलिक वातावरण की सीमा में समांगी रूप से वितरित नहीं हैं। इन दोनों की विभिन्न विविधताएं उप–विशेषताओं के रूप में हम सभी के लिए काफी स्पष्ट हैं जैसे पहाड़, नदी घाटियाँ, पठार, तट, द्वीप और अन्य जल निकाय आदि। भारत की उपमहाद्वीप में एक विशेष भौतिक विन्यास है। अद्वितीय भौतिक विन्यास ने भौगोलिक सीमाओं में ऐतिहासिक घटनाओं, दोनों घरेलू और विदेशी सहित में सरल से जटिल हस्तक्षेप के चक्रव्यूह को जन्म दिया है। इसने समाज, अर्थव्यवस्था और राष्ट्र को पूरी तरह से प्रभावित किया है। भारत एक असंख्य प्रकार के भौतिक दृश्यभूमियों के साथ–साथ जलवायु की बहुलताओं जैसे ठंडे मरुस्थल, शुष्क अल्पाइन, शीतोष्ण से लेकर उष्णकटिबंधीय जलवायु परिस्थितियों के बिंदुओं के साथ अंकित है। ये सब एक साथ मृदा की विविधता का विकास संभव बनाते हैं जिस पर मानव बस्तियां निर्मित हैं और असंख्य कृषि और उससे संबद्ध गतिविधियाँ क्रियान्वित की जाती हैं। इसके अलावा, उपजाऊ मृदा का आवरण बहुत सारे रंगों के साथ वनस्पति आवरण के विकास में भी मदद करता है विशेष रूप से जो उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक भिन्न है। यह भौतिक विन्यास है जो भूमि, जल, वन, खनिज और ऊर्जा आदि जैसे असंख्य संसाधनों की उपलब्धता को संभव बनाता है। निरंतरता में, ऐसे प्राकृतिक संसाधन मानवजनित संस्था के विभिन्न समूहों के द्वारा क्रियान्वित आर्थिक गतिविधियों के परस्पर क्रिया और व्यापार के स्रोत के रूप में आजीविका और समृद्धि के लिए मौलिक आधार प्रदान करते हैं।

इस प्रथम खंड में, हम आपको विशेष रूप से उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत की भौतिक विन्यास से परिचित करने के साथ–साथ इसकी भू–आकृति, अपवाह तंत्र, जलवायु और मृदा और वनस्पति पर ध्यान केंद्रित करेंगे, जिन पर पांच इकाइयों में विस्तार से चर्चा की गई है।

इकाई 1: उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

पहली इकाई उपमहाद्वीप में भारत के अध्ययन के लिए समर्पित है। यह आपको भारतीय उपमहाद्वीप में इसके अवस्थिति के पहलुओं की एक झलक प्रदान करेगा। सदियों से, भारतीय उपमहाद्वीप ने घरेलू और विदेशी राजनीतिक उथल–पुथल की एक श्रृंखला देखी है, जिनका आप ऐतिहासिक ढांचे के अंतर्गत अध्ययन करेंगे। नतीजतन, देश में सामाजिक–सांस्कृतिक प्रथाओं का एक समृद्ध मोजेक समय की अवधि में विकसित हुआ है जिसने हमारे देश को एक अद्वितीय व्यक्तित्व प्रदान किया है। ऐतिहासिक ढांचे और सामाजिक–सांस्कृतिक व्यक्तित्व ने मिलकर विविधता में एकता की समृद्ध रूपरेखा को चित्रित करने में मदद की है, जिसके बारे में आप इस इकाई के अंत में सीखेंगे।

इकाई 2: भूआकृति विज्ञान

दूसरी इकाई भूआकृति विज्ञान के अध्ययन के लिए समर्पित है। आप भूआकृति विज्ञान के अर्थ से अच्छी तरह वाकिफ हैं। यह विभिन्न प्रकार की भौतिक इकाइयों जैसे पहाड़ों, घाटियों, पठार, तट और द्वीप आदि हैं जिनका अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे और सीखेंगे। आप भूआकृति की विशेषताओं के बारे में भी सीखेंगे। इसके अलावा, हमने भू–आकृतियों के विकास से संबंधित विविध अवधारणाओं को भी समझाया है और साथ–साथ मानव बस्तियों और उनकी आर्थिक गतिविधियों के बारे में इनके महत्व की भी व्याख्या की है।

इकाई 3: अपवाह तंत्र

तीसरी इकाई अपवाह तंत्र के अध्ययन के लिए समर्पित है। आप जानते हैं कि अपवाह तंत्र व्यवस्था पृथ्वी ग्रह पर किसी भी भौगोलिक क्षेत्र के समाज और अर्थव्यवस्था के लिए बहुत महत्वपूर्ण होती है। आपको भारत की अपवाह तंत्र व्यवस्था के साथ–साथ इसके वर्गीकरण के बारे में विस्तृत जानकारी मिलेगी। आप हिमालय और प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र और इसके विकास के बारे में विस्तार से जानेंगे। इसके अलावा, आप भारत की प्रमुख नदी द्रोणीयों के बारे में भी जानेंगे।

इकाई 4ः जलवायु

चौथी इकाई जलवायु के अध्ययन के लिए समर्पित है। आप जलवायु और उसके कई संबंद्ध महत्वपूर्ण विशेषताओं के बारे में परिचित हैं। हमने आपको भारतीय जलवायु और मौसम की विशेषताओं से परिचित कराया है। आपको भारत में तापमान और वर्षा के वितरण के बारे में स्थानिक और कालिक संदर्भ में भी पता चलेगा। आप कृषि गतिविधियों में मानसून और इसके महत्व के बारे में जानते हैं। आप भारतीय मानसून के विशेष संदर्भ में वर्षा तंत्र के साथ–साथ कृषि–जलवायु क्षेत्रों के बारे में भी जानेंगे। आपको भारत की भौगोलिक सीमाओं में सूखे की स्थितियां पैदा करने के लिए जिम्मेदार जलवायु कारकों के बारे में भी जानकारी मिलेगी। समग्र रूप से, यह इकाई आपको जलवायु को समझने और जलवायु कारकों को भी समझने के लिए सक्षम बनाएगी जो बारीकी से देश के भूआकृति ढांचे से जुड़े और निर्धारित होते हैं।

इकाई 5ः मृदा एवं वनस्पति

पांचवीं इकाई मृदा और वनस्पति के अध्ययन के लिए समर्पित है। आप मृदा और वनस्पति की विशेषताओं के बारे में जानेंगे जो किसी भी भौगोलिक क्षेत्र में इन दोनों को नियंत्रित करती हैं। आप भारत की मृदा और वनस्पति की वर्गीकरण योजनाओं के बारे में जानेंगे। भारत की मृदा और प्राकृतिक वनस्पति के वितरण पर भी इस इकाई में चर्चा की गई है। इसके अलावा, आप भारत के प्रमुख मृदा और वनस्पति क्षेत्रों के बारे में समग्र रूप से जानेंगे।

हमें उम्मीद है कि इस खंड का अध्ययन करने के बाद, आप भारत के भौतिक विन्यास को एक बेहतर और स्पष्ट तरीके से समझने में सक्षम होंगे।

इस प्रयास में हमारी शुभकामनाएं सदैव आपके साथ है।

THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 1

उप–महाद्वीपीय विन्यास में भारत

संरचना

1.1 परिचय
    अपेक्षित सीखने के परिणाम
1.2 भौतिक विन्यास
    अवस्थिति
    आकृत्ति एवं आकार
1.3 ऐतिहासिक स्थिति
1.4 सामाजिक–सांस्कृतिक व्यक्तित्त्व
1.5 विविधता में एकता
1.6 अंत में कुछ प्रश्न
1.7 उत्तर
1.8 संदर्भ/आगे सुझावित पठ्न सामग्री

1.1 परिचय

खंड 1 की इकाई 1 भौतिक विन्यास के अध्ययन और वितरण के साथ प्रारंभ होता है। आप सीखेंगे कि भारत अपनी भौतिक विशेषताओं और सामाजिक–सांस्कृतिक स्थिति के संबंध में अत्यंत विविध है। यह अपनी अवस्थिति की सीमा की वजह से काफी विविध है एवं अपने विशाल आकार की वजह से प्रमुख भी है। यह अपनी आकृति एवं आकार के अलावा, अपने लंबे इतिहास की वजह से इसके सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यक्तित्त्व में भी बहुत अधिक विविधता का अंश जुड़ा हुआ है। भारत में अनेक धार्मिक एवं सांस्कृतिक समूहों के साथ विश्व की दूसरी सबसे बड़ी आबादी एकता के साथ रहती है। हमें भारत को व्यापक संदर्भ में जानने के लिए इसके संपूर्ण भूगोल एवं इतिहास के साथ–साथ संस्कृति और सामाजिक–आर्थिक विशेषताओं को भली–भांति समझने में मदद मिलती है। प्रचलित विविधताओं के बावजूद भारत की आबादी में एकता को ध्यान में रखते हुए इसकी सामाजिक–सांस्कृतिक विशेषताओं में और अधिक विशिष्टताएँ जुड़ जाती हैं। इसलिए, यह इकाई भारत की भौतिक अवस्थिति का परिचय देता है, जिससे देश के इतिहास एवं संपूर्ण सामाजिक–सांस्कृतिक विशेषताओं को समझने में मदद मिलती है।

अुनभाग 1.2 में, भौतिक अवस्थिति की चर्चा में, इसकी आकृति एवं आकार भी शामिल है। अनुभाग 1.3 में ऐतिहासिक कारकों एवं बलों पर प्रकाश डाला गया है, जिन्होंने ऐतिहासिक ढ़ांचे को आकार देने में भूमिका निभाई है। इससे भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक व्यक्तित्त्व को समझने एवं सराहना करने में मदद मिलेगी, जिसकी चर्चा अनुभाग 1.4 में की गई है। उपर उल्लिखित सभी चीजों के सार को बेहतर तरीके से समझने के लिए, आप अनुभाग 1.5 का अध्ययन करने के पश्चात् एकता में विविधता से संबंधित अंर्तदृष्टि प्राप्त करेंगे। इस इकाई का अध्ययन भौतिक

अवस्थिति को इसके संपूर्ण आयामों में उजागर करने में मदद करेगा एवं आपको अन्य भौतिक विशेषताओं का जेसे भू–आकृति विज्ञान, जलवायु, अपवाह तंत्र, मृदा एवं प्राकृतिक वनस्पति इत्यादि के संदर्भ में प्रत्यक्षीकरण करने के लिए सक्षम करेगा, जिनका खंड 1 की आगामी इकाईयों में व्याख्या की गई है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, आपको निम्नलिखित में सक्षम होना चाहिए;

- भारत की भौगोलिक स्थिति एवं इसके अनुकूलन भौतिक अवस्थिति होने के कारण लाभों की व्याख्या करने में;
- उस इतिहास की व्याख्या करने में, जिसने भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक दृष्टिकोण को आकार देने में भूमिका निभाई है; तथा
- विविधता के विविध रूपों का विश्लेषण एवं प्रचलित विविधता के भीतर एकता की व्याख्या करने में।

1.2 भौतिक विन्यास

इंडिया अर्थात् भारत, दक्षिण एशिया की कई महत्त्वपूर्ण नदियों द्वारा अपवाहित किया जाता है। पवित्र नदी गंगा, प्रमुख और सांस्कृतिक रूप से इनमें से एक है, जो दक्षिण एशियाई क्षेत्र का एक प्रमुख भाग है। यह उत्तर, उत्तर–पश्चिम एवं उत्तर–पूर्व में तरुणी या युवा वलित पर्वत श्रृंखलाओं से ढका हुआ है। 'इंडिया' शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द 'इंडियो' से हुई है जिसका अर्थ है, इंधस के निकट वाली भूमि (लैम्बर्ट, 1960)। रोमनों ने नदी को सिंधु के रूप में और इससे दूर देश को भारत के रूप में उच्चारित किया। इसी प्रकार, फारसियों और अरबों ने इस नदी को हिंदू (सिंधु नदी के लिए) एवं इसके पूर्व वाली भूमि को हिंदुस्तान की संज्ञा दी। इसलिए, देश के नाम की उत्पत्ति, पीछे के इतिहास में अलग–अलग समय अवधि में किए गए उच्चारणों से हुई मानी जाती है।

<u>अवस्थिति</u>

विश्व के उत्तरी एवं पूर्वी गोलार्ध में 8°4' उत्तर से लेकर 37°6' उत्तर अक्षांश एवं 68°7' पूर्व एवं 97°26' पूर्व देशांतर के बीच विस्तारित क्षेत्र में भारत स्थित है। व्यापक तौर पर, यह पूर्वी गोलार्ध के मध्य भाग को आवृत करता है। कर्क रेखा देश के मध्य भाग से होकर गुजरती है और भारत देश को लगभग दो भागों में विभाजित करती है, जिसके साथ दक्षिणी क्षेत्र गर्म उष्णकटिबंधीय क्षेत्र के अन्र्तगत आता है एवं उत्तरी क्षेत्र उपोष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण हिस्सों को निर्मित करने में सहायक होता है। अवस्थिति के संदर्भ में, यह हिंद महासागर के उत्तरी भाग में स्थित है। भारतीय प्रायद्वीप अपने चारों और दो विशाल जलनिकायों के साथ समुद्र में विस्तारित है, अर्थात् पश्चिम में अरब सागर एवं पूर्व में बगांल की खाड़ी। इन दो विशाल जलनिकायों के आसपास की तटरेखा लगभग 6083 किलोमीटर की लंबाई को आवृत करती है और साथ ही यह मध्य पूर्व, दक्षिण पूर्व एशिया एवं पूर्वी अफ्रिका के लोगों के साथ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, वाणिज्य एवं सांस्कृतिक बातचीत में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। चित्र 1.1 उपमहाद्वीप में भारत की स्थिति को दर्शाता है।

भू–राजनीतिक स्थिति के संदर्भ में, पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान इसके उत्तर–पश्चिम में, चीन, नेपाल एवं भूटान उत्तर में, बांग्लादेश एवं म्यांमार पूर्व में और श्रीलंका इसके दक्षिण में अवस्थित है। इसकी लगभग 15200 किलोमीटर की कुल सीमा रेगिस्तान अथवा मरूस्थल, उबड़–खाबड़ पर्वतों, दलदली भूमि एवं मैदानी भागों से होकर गुजरती है।

भारत की भौगोलिक स्थिति के कारण विविध जलवायवीय परिस्थितियों की उत्पत्ति हुई है, जिसके परिणामस्वरूप विविध प्रकार की वनस्पितियों एवं जीवों का अस्तित्त्व संभव हो पाया है। इसकी वजह से एक वर्ष के पूरे चक्र में कई फसलों के मौसमों को प्राप्त करने का भी लाभ मिला है।

विश्व में अपने केंद्रीय स्थान की वजह से, भारत के पास एक भू–रणनीतिक स्थिति है जिसे इस क्षेत्र के अन्य किसी भी देश द्वारा आसानी से सुगम्य नहीं किया जा सकता है। इस लाभ का भरपूर उपयोग ब्रिटेन द्वारा एशिया, अफ्रीका एवं महासागरों के अन्य देशों में उपनिवेश स्थापित करने और अपना वर्चस्व कायम करने के लिए किया गया था।

1.2.1 आकृति और माप

भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 32,87,263 वर्ग किलोमीटर है जोकि पृथ्वी के कुल क्षेत्रफल का लगभग 0.57 प्रतिशत % एवं विश्व की कुल भूमि क्षेत्र का 2.4 % है। रूस, कनाडा, अमेरिका, चीन, ब्राजील एवं आस्ट्रेलिया के बाद भारत विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा देश है। सन् 2011 में इसकी आबादी लगभग 1210.2 मिलियन थी। भारत जनसंख्या के मामले में, चीन के बाद विश्व में द्वितीय स्थान पर है। यह विशाल क्षेत्र एवं विशाल जनसंख्या देश के भीतर एवं बाहर सांस्कृतिक दोनों प्रकार की विविधताओं को प्रस्तुत करती है।

भारत का मौटे तौर पर, एक चतुष्कोणीय आकार है जोकि लगभग 3214 किलोमीटर उत्तर से दक्षिण तक एवं 2933 किलोमीटर पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ है। भारत देश के उत्तर–दक्षिण एवं पूर्व–पश्चिम विस्तार के बीच केवल 281 किलोमीटर का अंतर है। इसके अलावा, भारत में द्वीपों के दो मुख्य समूह भी हैं। अथार्त् बंगाल की खाड़ी में स्थित अंडमान–निकोबार एवं अरब सागर में स्थित लक्षद्वीप–मिनिकॉय द्वीप समूह इत्यादि।

बोध प्रश्न 1

भारत की भौतिक विन्यास एवं अपने पड़ोसी देशों के साथ इसके लाभ पर एक टिप्पणी लिखिए।

---

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

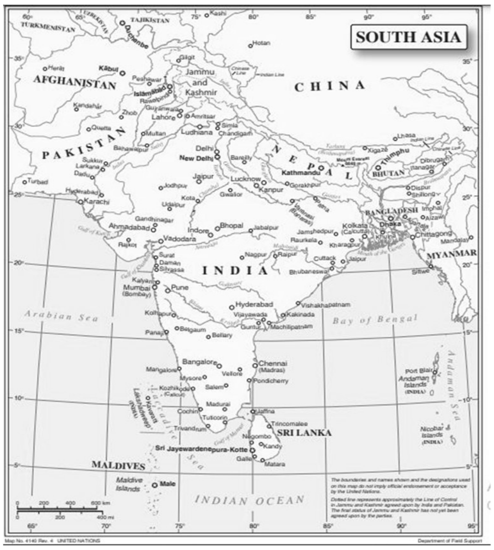

चित्र 1.1: भारत की स्थिति
Source:https://www.un.org/Depts/Cartographic/map/profile/SouthAsia.pdf.

1.3 ऐतिहासिक स्थिति

पुरातात्विक अध्ययनों की कमी के कारण, भारत के राजनीतिक संगठन के संबंध में प्रागैतिहासिक एवं आद्य–ऐतिहासिक काल के दौरान बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। हालांकि आर्यों (तिवारी, आर.सी.) से पूर्व क्षेत्र में द्रविड़ों की उपस्थिति एवं सिंधु घाटी की समृद्ध सभ्यता के वजूद को साबित करने के लिए पर्याप्त सबूत मौजूद पाए जाते हैं, जिनके निशान मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा (वर्तमान में पाकिस्तान में) और उत्तर–पश्चिम भारत के अनेक स्थानों में पाए गए हैं, जैसे लोथल एवं कालीबंगा (वर्तमान में गुजरात एवं राजस्थान के आसपास के स्थान), आर्यों की पंजाब के आसपास के क्षेत्र में आबादी थी। फिर धीरे–धीरे वे गंगा घाटी में अर्थात् हिमालय और विंध्य के बीच अग्रसर होने लगे।

ऋग्वैदिक काल के दौरान, छोटे राज्यों की विलय की प्रक्रिया एवं राजनीतिक एकता की अवधारणा प्रारंभ हुई, और वैदिक काल के दौरान, भारत का क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र पश्चिम में अफगानिस्तान से लेकर पूर्व में म्यांमार तक फैला हुआ था। उत्तर में नेपाल से लेकर दक्षिण में तमिलनाडु तक (तिवारी, आर.सी.) विस्तार था। कुछ विद्वानों का मत था कि प्राचीन काल में भारत का क्षेत्र चीन से लेकर सिंध तक एवं इराक से अरब सागर तक पूर्व में फैला हुआ था (लुईस, बी)। भारत देश अनेकों छोटे–छोटे राज्यों में विभाजित था, जिन्हें जनपद कहा जाता था। बाद के चरणों में (600 ईसा पूर्व के लगभग), कई जनपदों के विलय के पश्चात् मगध नामक एक बड़े साम्राज्य का निर्माण किया गया था। इसके साथ ही यह क्षेत्र में राजनीतिक एकता स्थापित करने की पहली पहल थी।

दक्षिण भारत का क्षेत्र इस दौरान चोलों, पांड्यों और ताम्रपानी शासकों द्वारा शासित था। मौर्य काल के दौरान, असम एवं कर्नाटक के दक्षिण जिलों के कुछ हिस्सों को छोड़कर, साम्राज्य का विस्तार अफगानिस्तान से लेकर हिंदुकुश तक दूर तक फैले हुए क्षेत्रों, बलूचिस्तान, सिंध, कच्छ एवं संपूर्ण भारत तक फैला हुआ था। चित्र 1.2 मौर्य साम्राज्य के विस्तार को दर्शाता है। हालांकि, मौर्य साम्राज्य अशोक की मृत्यु के बाद टुटकर बिखर गया। साकाओं एवं कुषाणों को मिलाकर कई अन्य छोटे–छोटे साम्राज्य अस्तित्त्व में आने प्रारंभ हुए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

300 से 450 ईस्वी के आसपास, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के नेतृत्व में गुप्ता साम्राज्य का काल बेहद शक्तिशाली हो गया था। अपने शासनकाल के दौरान, वह उत्तर में हिमालय से लेकर नर्मदा एवं गुजरात से बंगाल तक के अधिकतर उत्तरी क्षेत्रों को मज़बूत करके संघटित करने में सक्षम रहे थे। उस समय दक्षिण भारत में, चालुक्य, पल्लव, चोल, चेरा एवं पांडया इत्यादि छोटे–छोटे स्वतंत्र राज्य भी थे। हवेन सांग नामक विद्वान ने भारत का दौरा इस अवधि के दौरान किया और उस समय के लोगों की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्थितियों पर लेख तैयार किया था।

तुर्कों ने 11वीं एवं 12वीं शताब्दी के दौरान आक्रमण किया था। दिल्ली के अंतिम राजपूत राजा पृथ्वी राज चौहान को मौहम्मद गौरी ने हराकर गुलाम वंश की शुरूआत की। इसके पश्चात्, खिलजी वंश, तुगलक वंश, सेय्यद वंश एवं लोधी वंश जैसे अनेक राजवंशों का आगमन हुआ। 1526 ईस्वी में पुनः, बाबर ने अंतिम लोधी शासक इब्राहम लोधी को हराकर भारत में मुगल साम्राज्य की नींव की आधारशिला रखी। तत्पश्चात् मुगल साम्राज्य और अधिक फला–फूला तथा सम्राट अकबर ने पूरे भारतीय उपमहाद्वीप को पूर्व में उड़ीसा से लेकर पश्चिम में काबुल तक और उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण में अहमदनगर तक विस्तृत साम्राज्य को संघटित किया।

भारत के लिए, वास्को–डी–गामा (1498 ई.) द्वारा समुद्री मार्गों की खोज के साथ, 1500 ईसवी के दौरान कलीकर नामक स्थान पर पुर्तगालियों का आगमन हुआ। अकबर के शासनकाल के दौरान, अनेको प्रतिद्वंद्विताओं के फलस्वरूप अपना व्यवसाय चलाने के लिए अंग्रजों, फ्रांसीसीयों एवं डचों ने प्रवेश पाया। भारत में अपना पैर जमाने वाले यूरोपियन औपनिवेशिक शक्तियों में से फ्रांसीसी अंतिम थे। वे एशिया के साथ व्यापार करके लाभ कमाने के लिए अत्यधिक उत्सुक थे (बंसल, एस.एल. एवं अन्य)। अंत में, भारत को 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्रप्त हुई, जिससे अंग्रजों का शासनकाल समाप्त हुआ और भारत 26 जनवरी 1950 को गणराज्य बना। औपनिवेशिक काल के दौरान, भारत बड़ी संख्या में रियासतों से बना था, जिनमें 571 राज्य इकाईयाँ शामिल थी, जिनका तत्पश्चात् 27 राज्यों को बनाने के लिए विलय कर दिया गया था।

तत्पश्चात् राज्यों का पुनः पुर्नगठन किया गया, क्योंकि विभिन्न राज्यों, रियासतों द्वारा गठित सीमा रेखाएं सांस्कृतिक, भाषा एवं प्रशासनिक स्तर पर अधिक तार्किक नहीं पाई गई थी। इस कारण से 1953 में भारतीय राज्यों के लिए पुर्नगठन आयोग की स्थापना की गई थी। आगे चलकर इनमें से भाषा के आधार पर राज्यों के पुर्नगठन की आवश्यकता को बेहतर पाया गया और फलस्वरूप सन् 1960 में, महाराष्ट्र एवं गुजरात के कुछेक नवीन राज्यों का भूतपूर्व बाम्बे राज्य से निर्माण किया गया था। इसी प्रकार, सन् 1966 में पंजाब को दो राज्यों पंजाब और हरियाणा में विभाजित किया गया था।

फिर आगे चलकर, सन् 1971 में उत्तर–पूर्व क्षेत्रीय पुर्नगठन अधिनियम के तहत, उत्तर–पूर्व क्षेत्र को पांच राज्यों (असम, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड एवं त्रिपुरा) में विभाजित किया गया था और तत्पश्चात् अरूणाचल प्रदेश तथा मिजोरम को राज्य की उपाधि अलग से प्रदान की गई थी। सन् 1975 में, सिक्किम को देश का 22 वाँ राज्य इसकी संरक्षित राज्य की अवस्था से एकीकृत करके बनाया गया था। सन् 2000 के दौरान, तीन राज्यों क्रमशः छतीसगढ़ को मध्य प्रदेश, झारखंड को बिहार एवं उत्तराखंड को उत्तर प्रदेश से पुर्नगठित करके निर्मित किया गया था। अभी वर्तमान में, सन् 2014 में तेलंगाना राज्य को आंध्र प्रदेश राज्य से पुर्नगठित करके बनाया गया था। वर्तमान समय में, सन् 2019 में लद्दाख, जम्मू एवं कश्मीर को पृथक संघ शासित प्रदेशों में

गठित करने के पश्चात्, भारतीय संघ में 28 राज्य एवं 8 केन्द्र शासित प्रदेश शामिल हैं।

बोध प्रश्न 2

वर्तमान में विद्यमान उचित राजनीतिक संरचना से पूर्व घटित ऐतिहासिक घटनाओं की व्याख्या कीजिए।

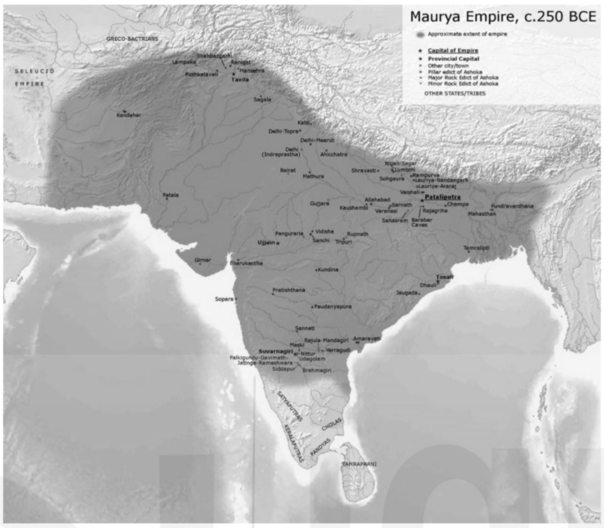

चित्र 1.2: भारत में मौर्य साम्राज्य का विस्तार

(Source:http://epgp.inflibnet.ac.in/epgpdata/uploads/epgp_content/indian_culture/01._outlines_of_indian_history/mauryan_empire/et/5193_et_et.pdf)

1.4 सामाजिक–सांस्कृतिक व्यक्तित्त्व

भारत बेमिसाल सांस्कृतिक विविधता से परिपूर्ण भाषा, भौगोलिक क्षेत्र, सामाजिक एवं धार्मिक समूहों के परिपेक्ष में एक अरब से अधिक आबादी वाला देश है। भारतीय संस्कृति सामाजिक प्रतिमानों, नैतिक मूल्यों, पारंपरिक आस्था प्रणालियों, कलाकृत्तियों, प्रोद्योकियों एवं राजनीतिक प्रणालियों इत्यादि के समृद्ध मिश्रण से युक्त एवं परिपूर्ण है। विशेषतया, आप्रवासन एवं औपनिवेशीकरण की प्रक्रिया द्वारा, भारत का सांस्कृतिक इतिहास दक्षिण एशिया एवं दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ दृढ़ता से जुड़ा हुआ है। भारतीय संस्कृति को अक्सर विविध संस्कृतियों के संयोजन के रूप में चिन्हित् किया जाता है जिसे अनेकों सहस्त्राब्दी प्राचीन इतिहास जैसे सिन्धु घाटी सभ्यता से भी प्रभावित माना जाता है। भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विविधता पर संस्कृति के विविध तत्त्वों जैसे धर्म, दर्शन, भाषा, नृत्य, संगीत एवं चलचित्रों का गहरा प्रभाव महसूस किया गया था, जिनके चिन्ह् आज भी मौजूद पाए जाते हैं। इसलिए, भारतीयों को अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विविधता की विशिष्टताओं पर गर्व की गूढ़ भावना निहित् है।

भारत भाषाई रूप से विविधता वाले राष्ट्रों में से एक है और बोल–चाल वाली भाषाओं की विविधता के संबंध में इसका चौथा स्थान है। भारतीय लोगों की भाषाई सर्वेक्षण (2010–2012) ने भारत देश में 780 भाषाओं (भाषाओं एवं उप–भाषाओं अथवा बोलियों को मिलाकर) के अस्तित्त्व की सूचना को अंकित किया है। भारत महान जातीय विविधतायों वाला देश है। भारत में जातियों को अक्सर विविध भाषाई समूहों के आधार पर विभाजित किया जा सकता है। आमतौर पर, इंडो–आर्यन समूह उत्तरी क्षेत्रों में पाया जाता है और वे हिन्दी, गुजराती, उर्दू, मराठी, पंजाबी, उड़ीया एवं बंगाली भाषा बोलते

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

हैं। दूसरी तरफ द्रविड़ियन दक्षिणी क्षेत्रों में निवास करते हैं और तमिल, कन्नड, तेलगू एवं मलयालम इत्यादि भाषाएं बोलते हैं।

हालांकि, इस प्रकार का वर्गीकरण भारत देश में लोगों की पहचान को नहीं दर्शाता है। इन व्यापक भाषा समूहों के भीतर, सेंकड़ों क्षेत्रीय अथवा स्थानीय बोलियाँ या उप–भाषाओं में बातचीत करने वाले लोगों के साथ महत्त्वपूर्ण भाषा की विविधता पाई जाती हैं। भारत के संविधान में 22 प्रमुख भाषाओं की पहचान की गई है, जिनमें हिंदी एवं अंग्रेजी आधिकारिक भाषाएं हैं।

मुख्यतः कर्म की संकल्पना पर आधारित भारतीय मूल के धर्मों में हिंदू, जैन, बौद्ध एवं सिख धर्म शामिल हैं। भारत के बाहर उत्पन्न होने वाले धर्मों जैसे अब्राहिम धर्म जिसमें यहुदी, इसाई एवं इस्लाम इत्यादि धर्मों के लोग भी भारत में निवास करते हैं। इसके साथ–साथ ही, पारसी एवं बहाई धर्म के लोग भी निवास करते हैं, यह दोनों अपने मूल स्थानों पर अत्याचार से बचकर कई सदियों से भारत में आश्रय पाए हैं।

भारत में विविध संस्कृति वाले 28 राज्य एवं 8 संघ शासित प्रदेश हैं और भारत चीन के बाद विश्व का सबसे दूसरा वृहत् आबादी वाला देश है। भारतीय संस्कृति को अक्सर भारतीय उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली कई अन्य संस्कृतियों के मिश्रण के रूप में चिन्हित् किया जाता है जोकि कई हज़ारों वर्षों पुराने इतिहास से प्रभावित एवं विकसित हुआ है। अपने संपूर्ण इतिहास काल के दौरान, भारतीय संस्कृति स्थानीय रूप से उत्पन्न रीतियों एवं रिवाजों से अत्यधिक घनिष्ठता से प्रभावित हुई है। भारतीय उपमहाद्वीप में घटित सांस्कृतिक विकास एवं परस्पर आदान–प्रदान की कड़ियों का प्रभाव इसके अधिकांश दर्शन, साहित्य, वास्तुकला, कला एवं संगीत में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। कई शताब्दियों से, भारत में हिंदुओं, मुसलमानों, बौद्धों, जैनियों, सिखों एवं जनजातीय आबादी के विभिन्न आस्थाओं के बीच एक परस्पर एवं महत्त्वपूर्ण मूल संबंध रहा है।

विश्व के धर्मों में, भारतीय धर्म भी अब्राहिम धर्मों के साथ महत्त्वपूर्ण रहा है। क्रमशः हिंदू एवं बौद्ध धर्म विश्व के तृतीय एवं चतुर्थ बड़े धर्मों में से हैं। भारत की जनसंख्या का लगभग 80–82 % भारतीय मूल धर्मों के अनुयायी हिंदू, सिख, जैन और बौद्ध हैं, भारत विश्व में सबसे अधिक धार्मिक एवं जातीय रूप से विविध देशों में से एक है, जिसमें कुछेक गुढ़ धार्मिक एवं सांस्कृतिक आस्थाओं और प्रथाओं वाला समाज निवास करता है। अधिकांश लोगों के जीवन में धर्म एक केंद्रीय एवं निश्चित भूमिका निभाता है। हालांकि, भारत देश हिंदू बहुसंख्यक धर्मनिरपेक्ष प्रधान देश है लेकिन यहां पर मुस्लिम जनसंख्या का भी बड़ा हिस्सा निवास करता है। कुछेक राज्यों एवं संघ शासित प्रदेशों को छोड़कर जैसे जम्मू और कश्मीर में मुस्लिम जनसंख्या बहुसंख्यक है, और देश के अन्य हिस्सों में भी अच्छी तरह से वितरित हैं। उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, केरल, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल एवं असम में इनका महत्त्वपूर्ण अनुपात है। भारत के अन्य महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक धर्मों में ईसाई, सिख और बौद्ध इत्यादि शामिल हैं।

भारत में विभिन्न धार्मिक समूहों की विविधता के परिणामतः कई बार उथल–पुथल एवं हिंसा की उत्पत्ति से विभिन्न धार्मिक समूहों के लोगों के बीच संघर्ष की स्थिति पैदा हुई है, कुछेक समूहों ने, कई राष्ट्रीय स्तर की राष्ट्रीय–धार्मिक राजनीतिक दलों की स्थापना की है, और सरकारी नीतियों के बावजूद, भारत के कई क्षेत्रों में, अल्पसंख्यक धार्मिक समूहों का अधिक प्रभावशाली समूहों द्वारा संसाधनों पर वर्चस्व एवं नियंत्रण बरकरार रखने के लिए उन्हें पूर्वाग्रह से अधीनीकृत किया जाता रहा है। विविध संदर्भों

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

में विविधताएँ जैसे जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, आर्थिक, धार्मिक, वर्ग एवं जाति समूह इत्यादि भारतीय समाज को एक–दूसरे से पृथक करती हैं। हिंदुओं में, वर्ण प्रणाली पर आधारित जाति व्यवस्था भारतीय समाज को चार व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत करती है, जिनमें ब्राहमण् (पुजारी वर्ग), क्षत्रिय (कुलीन एवं योद्धा वर्ग), वैश्व (व्यापारी वर्ग) एवं शूद्र (कारीगर अथवा श्रमिक वर्ग) इत्यादी शामिल हैं।

परंपरागत रूप से, वर्ण पर आधारित जाति व्यवसाय या पेशों से संबंधित रही है जैसेकि पुजारी, कुम्हार, नाई, बढ़ई, चमड़े का काम करने वाले, कसाई एवं धोबी इत्यादि। प्राचीन काल की सामाजिक व्यवस्था आज के समाज में भी विद्यमान है। आमतौर पर, प्रचलित सामाजिक व्यवस्था की वजह से उच्च श्रेणी वाली जातियों के सदस्य तुलनात्मक रूप से निम्न श्रेणी की जातियों के सदस्य से अधिक समृद्ध रहे हैं। जाति अनुक्रम अथवा पदानुक्रम में निम्न जातियों के सदस्यों को अक्सर गरीबी एवं सामाजिक स्तर पर प्रतिकूल परिस्थितियों या नुकसानों का सामना करना पड़ता था।

एक लंबी अवधि के दौरान, जाति व्यवस्था सामाजिक पदानुक्रम का एक महत्त्वपूर्ण घटक बन गई, जिससे कई शूद्र अछूत (दलित) बन गए जो समाज में उनके द्वारा क्रियान्वित कार्य की प्रकृति की वजह से थे। समाज में व्यवसाय ने एक महत्त्वपूर्ण घटक के रूप में इसे जाति व्यवस्था की ओर प्रेरित किया। हालांकि, इस प्रकार के मतभेद आज समाज में लागू नहीं होते हैं और जाति के आधार पर भेदभाव करना गैरकानूनी है।

जन्म के आधार पर प्राप्त पृष्ठभूमि से जातियों को श्रेणी, नाम, अंतर्विवाही समूहों एवं सदस्यता दी जाती है। भारत देश में हज़ारों की संख्या में जातियाँ एवं उप–जातियाँ पाई जाती हैं; जो करोड़ों में लोगों या निवासियों को शामिल करता है। दक्षिण एशिया की सामाजिक संरचना में यह वृहत् परिवार अथवा बंधुता पर आधारित मूलभूत समूह हैं। बहुत संख्या में लोग यह विश्वास करते हैं कि जाति पर आधारित सदस्यता एक मान्यता प्राप्त समूह से संबंधित होने की प्रबल भावना प्रदान करती है, जिस समूह से विभिन्न स्थितियों में समर्थन की उम्मीद रहती है।

संपूर्ण भारतवर्ष में पदानुक्रम पाए जाते हैं, चाहे वह उत्तरी भारत अथवा दक्षिण भारत हो, हिंदू अथवा मुस्लिम के बीच, शहरी अथवा ग्रामीण परिवेश में, एवं सामाजिक समूहों को विविध प्रकार के महत्त्वपूर्ण गुणों के अनुसार श्रेणीबद्ध या क्रमबद्ध किया जाता है। परिवार एवं बंधुता समूहों में, व्यक्तिगत स्तर पर, एवं जाति समूहों में सामाजिक पदानुक्रम स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष होता है। जातियाँ मुख्यतः हिंदु धर्म से संबंधित हैं; हालांकि जातियां भारतीय मुसलमानों, ईसाइयों एवं कुछ अन्य धार्मिक समुदायों के मध्य भी पाई जाती हैं, जोकि हिंदु धर्म की भांति विशिष्ट नहीं है। अधिकांश गाँव अथवा कस्बों के भीतर, प्रत्येक व्यक्ति स्थानीय रूप से प्रतिनिधित्व की जाने वाली प्रत्येक जाति की सापेक्ष क्रमविन्यास से परिचित होता है, जो विविध सामाजिक समूहों के मध्य व्यवहार प्रणाली को निरंतर आकार देता है।

भारतीय जीवन प्रणाली में व्यापत सर्वाधिक महान विषयों में से सामाजिक परस्पर–निर्भरता एक है। लोग समूहों में पैदा होते हैं, जिसमें परिवारों, गोत्रों/कुलों, जातियों, उप–जातियों एवं धार्मिक समुदाय इत्यादि प्रमुख हैं और वह इन समूहों से अपृथकता की गहरी भावना महसूस करते हैं। व्यक्तिगत जीवन में परिवार अथवा व्यापक सामाजिक समूहों से प्राप्त की गई सामाजिक समर्थन एक महत्वपूर्ण घटक है। परिवार एवं समुदायों के भीतर या मध्य एक गहरा संबंध होता है, जिसका लोग एक

हिस्सा होते हैं। आर्थिक गतिविधियां भी, सामाजिक बनावट अथवा ताने–बाने में गहराई से अंर्तनिहित होती हैं।

सामाजिक असमानताएं संपूर्ण विश्व में मौजूद हैं, परंतु भारतीय जाति की संस्थाओं की भांति शायद असमानता कहीं भी इतनी व्यापक रूप से निर्मित नहीं हुई है। जाति अनेकों शताब्दियों से प्रचलित हैं, परंतु इसकी आधुनिक काल में कड़ी या भरसक आलोचना हुई है और यह महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है।

सामाजिक पदानुक्रम में भिन्नताओं की मौजूदगी को स्थानिक संदर्भ में भी देखा जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में, अनेकों निम्न जाति वर्ग के लोग अभी भी भूमिहीन एवं बेरोजगार हैं और वह अक्सर विभिन्न दृष्टातों में विविक्तीकरण का शिकार होते रहे हैं। हालांकि, इस प्रकार की दृढ़ता से शहरी परिवेशों में जाति–आधारित विविक्तीकरण अब अपेक्षाकृत घट रहे हैं, जोकि अंर्तजातीय विवाहों की बढ़ती घटनाओं की स्वीकार्यता से स्पष्ट होता है। जाति एवं व्यवसाय आधारित सहसंबंध ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही क्षेत्रों में तेज़ी से घट रहे हैं।

ग्राम पंचायत को अक्सर एक परिषद् के रूप में मान्यता दी जाती है, जिसमें सामाजिक व्यवस्था को बरकरार रखने के लिए शासन से संबंधित संस्थाएं महत्त्वपूर्ण स्थानीय व्यक्तियों द्वारा गठित होता है। आमतौर पर, ग्राम पंचायत का प्रधान समाज द्वारा निहित विश्वास एवं शक्ति के आधार पर अपने निष्पक्ष निर्णयों से विवादों का समाधान करता है। आजकल, सरकार एक चुनी हुई पंचायत एवं प्रधान वाली प्रणाली का समर्थन करती है, जोकि परंपरागत प्रणाली से भिन्न है, और कई मामलों में, समाज के विभिन्न वर्गों के सदस्यों को उचित प्रतिनिधित्त्व प्रदान करने के लिए उनका शामिल होना अनिवार्य बनाती है। राज्यों के अधिनियमों ने ग्रामों की व्यवस्था में प्रवेश किया है और उनकी सामाजिक प्रणाली एवं संरचनात्मक संगठनों ने परंपरागत प्रणाली के अधिकारों को घटता हुआ अनुभव किया है। समय के साथ सामाजिक प्रणाली के संरचनात्मक संगठनों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। लोगों के मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक दृष्टिकोण में प्रमुख परिवर्तन लाने में आर्थिक विकास एवं समृद्धि काफी सहायक सिद्ध हुई है। भारत ने सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप इस अवधि में कुछ हद तक समग्र प्रगति की है जो इसने अपने सामाजिक बनावट या ताने–बाने को ध्यान में रखकर अपनाते हुए तरक्की का मार्ग प्रशस्त किया है।

बोध प्रश्न 3

भारत के इतिहास ने काफी हद तक भारत की सामाजिक–सांस्कृतिक विशेषताओं का आदान–प्रदान किया है। व्याख्या करें।

1.6 विविधता में एकता

अपने वृहत् भौगोलिक विस्तार की वजह से भारत महान विविधताओं का देश है। संपूर्ण देश में भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक से लेकर विविध रूपों में विविधताएं देखने को मिलती हैं। उदाहरण के लिए, भौतिक विविधता के विषय में बात करने के संबंध में से एक है। इसकी चट्टानें अमूमन आग्नेय एवं कायांतरी हैं जोकि लगभग 3000 दस लाख वर्ष पूर्व भी अपने निर्माण के पश्चात् कभी भी समुद्र तल के नीचे निमग्न नहीं हुई

हैं। इसके विपरीत, उत्तर में हिमालय पर्वत श्रृंखलाएं भी यहां पर है, जो पृथ्वी पर तरूणी पर्वत हैं। इन पर्वतों के भीतर, कुछ किलोमीटर की लघु दूरी के भीतर ही तुंगीय विभिन्नताएं अत्यधिक हैं। भारतीय प्रायद्वीप और हिमालय के बीच, सिंधु–गंगा के रूप में जाना जाने वाला विस्तृत मैदान स्थित है, जो आयु में अत्यधिक तरूण है।

यहां तक कि हिमालय और प्रायद्वीप की नदी प्रणालियों में भी विपरीत विशेषताएं मिलती हैं। उदाहरणस्वरूप, हिमालय की नदीयाँ हिमनदीयों एवं हिम से आवृत पर्वत चोटियों से उत्पन्न होती हैं, और यह प्रायद्वीपीय नदीयों के विपरीत प्रकृति में बारह मासी होती हैं, यह वर्षा के जल द्वारा प्रवाहित होती हैं और शुष्क महीनों के दौरान इनकी मात्रा एवं प्रवाह दोनों में तीव्रता से कमी होती है। इसके अलावा, यहां पर विभिन्न क्षेत्रों में पाए जाने वाली मृदा की विशेषताओं, वनस्पति के प्रकारों एवं जलवायु के संदर्भ में स्पष्ट अंतर पाए जाते हैं। उदाहरणतः, लदाख में द्रास जैसे स्थान पर –40°C तापमान को अनुभव किया जा सकता है, जबकि राजस्थान में बाड़मेर के आसपास तापमान 48°C से ऊपर जा सकता है। इसी प्रकार, चेरापूंजी के समीप मौसिमराम स्थान पर 1221 सेंटीमीटर से अधिक वार्षिक वर्षा होती है जबकि राजस्थान में जैसलमेर जैसे स्थानों पर केवल 12 सेंटीमीटर वर्षा होती है।

भौतिक परिस्थितियों में इस प्रकार की चरम एवं विविधताओं की वजह से देश में सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधताओं को जन्म दिया है। इसके वृहत आकार एवं अन्य क्षेत्रीय/ऐतिहासिक कारकों के कारण धर्मों, भाषाओं, संस्कृति तथा नस्लीय विषमांगता इत्यादि में काफी हद तक विविधता रही है।

हालांकि, अवश्य ही यह नहीं भूलना चाहिए कि उपयुक्त विविधताओं के बावजूद एक प्रकार की अंतर्निहित एकता भी व्याप्त है। भारत एक एकल प्रादेशिक इकाई के रूप में खड़ा होने में सक्षम रहा है। विभिन्न प्रकारों की भौतिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से विपरीत स्थितियों के बावजूद, यहां पर देश के लोगों के बीच अपनेपन का अटूट बंधन प्रबल रहा है। महान संत सार्वभौमिक भाइचारे का संदेश फैलाने में सक्षम रहे हैं और इसने सद्भाव से रह रहे विविध धर्मों, सांस्कृतिक समूहों तथा आर्थिक स्तर/तबके के लोगों को एकजुट या एकत्रित करने में मदद की है। जलवायु की लय भी लोगों के बीच एकता और सद्भाव की उदघोषणा करने में सक्षम है, उदाहरणतया, मानसून की शुरूआत और इसकी वार्षिक लय समस्त देश को प्रभावित करती है। विशेष रूप से, यह उत्तरी मैदानी क्षेत्रों, मध्य भारत एवं यहां तक कि पूर्वोतर क्षेत्रों की कृषि पद्धतियों में समरूपता लाकर सबको एक साथ लाती है।

यहां के लोगों के बीच प्रचलित धार्मिक संरचना एवं एकता यह दर्शाता है कि हिंदू धर्म इस्लाम के साथ एक जटिल सांचे में एक–दूसरे से परस्पर जुड़ा हुआ है जो अधिकांश भारतीयों के जीवन को प्रभावित करता है। 2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार, हिंदू 79.8%, जबकि 14.2% मुस्लिम, 2.3% ईसाई, 1.7% सिख, 0.7% बौद्ध एवं 0.37% जैन आबादी का हिस्सा थे। इतनी महत्त्वपूर्ण धार्मिक विभिन्नताओं के बावजूद, यहां पर भाईचारे की भावना भारतीयता की प्रक्षत्र में निहित है। भारत की विशाल जनसंख्या के कारण, धार्मिक अल्पसंख्यकों का निम्न अनुपात होने के बावजूद, इन समूहों के लोगों की वास्तविक संख्या काफी महत्त्वपूर्ण है।

इसी प्रकार, आर्थिक प्रगति एवं समृद्धि को भी भारत को एकल अस्तित्त्व एकजुटता में जोड़ने के रूप में देखा जा सकता है। उदाहरण के तौर पर, पूर्वी भारत के खनिज संसाधन क्षेत्र जैसे छतीसगढ़, झारखंड, ओडिशा एवं छोटा नागपुर पठारी एवं इसके

इर्द–गिर्द के कुछ क्षेत्र इत्यादि शामिल हैं, जिनकी वजह से आर्थिक समृद्धि लाने में सक्षमता हासिल हुई हैं। इसी प्रकार, पूर्वोत्तर क्षेत्र में असम में पैदा होने वाली चाय ने भी पूरे देश में समृद्धि की दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान देने में सक्षम किया है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, गुजरात एवं अन्य कई राज्यों में कृषि उत्पादकता के क्षेत्र में बेहतर प्रदर्शन देखा जा रहा है, जिससे देश अपनी खाद्य मांग को पूरा करने एवं निर्यात के लिए भी अनाज पर्याप्त रूप से पैदा कर रहा है।

आमतौर पर, भारतीय सद्भाव की भावना को महत्त्व देते हैं और अन्यों के साथ भी एकता कायम रखते हैं। समाज के अंदर समुदाय एवं रिश्तेदारों के बीच मज़बूत संबंध बरकरार रहते हैं। दूसरी तरफ, समुदाय परिवार अथवा लोगों को भी सहायता प्रदान करता है, जिनका वह हिस्सा होते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की तुलना में परस्पर–निर्भरता एवं सामाजिक संबंध अधिक मज़बूत होते हैं। यह बंधुत्व एवं सामाजिक जाल है, जो गांवों के लोगों को समर्थन एवं सुरक्षा प्रणाली मुहैया करता है। वर्तमान के संदर्भ में, समृद्ध सांस्कृतिक विविधता, जनसंख्या का आकार एवं प्राकृतिक संसाधन हमारे राष्ट्र की सबसे वृहत संपतियाँ हैं। विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों एवं सामाजिक–आर्थिक बनावट के संदर्भ में भारतीय जनसंख्या की एकता भारत को वैश्विक शक्तियों के समक्ष खड़े होने के लिए और मज़बूती देती है। कोई भी इस तथ्य से इनकार नहीं कर सकता है कि भारत संभावनाओं की भूमि है बशर्ते इसकी घनी एवं वृहत जनसंख्या के मध्य एकता, सद्भाव एवं भाईचारे की समानता बरकरार रहे।

बोध प्रश्न 4

भारत में परिवर्तित होती विविधताओं के अंश के बावजूद एकता मौजूद है। समझाइए।

1.7 सारांश

इस इकाई में, आपने निम्नलिखित सीखा है:

- भारत अपनी भौगोलिक विन्यास की दृष्टि से अद्वितीय देश है।
- यह अपने भौतिक अवस्थिति से अत्यधिक प्रभावित हुआ है, जिसकी वजह से यहां की जलवायु–वर्षा, तापमान और अन्य सामाजिक–सांस्कृतिक विशेषताएं भी महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित हुई हैं।
- इसके वृहत आकार और विस्तार के कारण, यहां पर विविधताओं के विभिन्न रूप देखे जा सकते हैं, जो विभिन्न रूपों में इसकी विविधता में और अधिक बढ़ोतरी करता है।
- भारत के इतिहास का इसकी संस्कृति से घनिष्ठ संबंध रहा है।
- समृद्ध संस्कृति के अस्तित्त्व के साथ–साथ अन्य संस्कृतियों के साथ एक समय के दौरान घटित संयोजन एवं पारस्परिक मिश्रण ने देश को एक विशिष्ट पहचान एवं सामाजिक विशेषताएं प्रदान करने में मदद की है।
- यहां की जनसंख्या और सांस्कृतिक समूहों के बीच भिन्नताएँ एवं विविधताओं के बावजूद, यहां की आबादी में एकता मौजूद है जो राष्ट्र के रूप में एकजुट/संयुक्त खड़े हो सकते हैं।

- यह सभी महत्त्वपूर्ण कारक भारत देश को सामाजिक–सांस्कृतिक एवं संजातीय–राजनीतिक भिन्नताओं के पृथक–पृथक अंश के साथ विशिष्ट बनाता है।

1.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. भारत के भौतिक विन्यास पर एक टिप्पणी लिखिए, जिसमें इसकी भौतिक संरचनाओं की विविधताओं पर प्रकाश डाला गया है।

2. प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक भारत में घटित ऐतिहासिक प्रगति एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों की व्याख्या करें।

3. भारत में विविधता में एकता मौजूद या विद्यमान है। व्याख्या कीजिए।

1.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1. अक्षांशीय विस्तार भारत को उष्णकटिबंधीय एवं शीतोष्ण जलवायु का अनुभव करने के लिए अनुकूल बनाता है जिससे इसके कृषि उत्पादन में विविधता जुड़ती है। इसके वृहत् क्षेत्र के अलावा, वृहत समुद्रों यानि अरब सागर एवं बंगाल की खाड़ी की उपस्थिति व्यापार एवं वाणिज्य के लिए काफी लाभदायक साबित हुई है।

2. भारत देश ने आक्रमणों की श्रृंखला को अनुभव किया है एवं इसका इतिहास अधिकांशता अन्य देशों की अपेक्षा पृथक रहा है। अंततः औपनिवेशिक ताकतों से स्वतंत्र होने से पूर्व, इसके क्षेत्रों में विभिन्न शासकों के शासनकाल के दौरान पुनःसंरचना एवं पुर्नगठन के अनेकों उदाहरण मिलते हैं।

3. विभिन्न आक्रमणकारी एवं शासकों ने न केवल अपने साथ अपने लोगों को लेकर आए अपितु अपनी संस्कृति भी लेकर आए। विभिन्न समयकाल के दौरान विविध प्रकार की संस्कृतियों का अंतर्मिक्षण हुआ था जिसकी वजह से भारत देश को सांस्कृतिक विशिष्टताएँ प्राप्त हुई हैं, जोकि वर्तमान समय में भी विद्यमान हैं।

4. मौजूदा विभिन्नताओं के बावजूद एकता इसकी विशिष्ट विशेषताओं में से रही हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, भारत की भौतिक विन्यास और इसकी विविधताओं पर प्रकाश डालकर इसकी प्रमुख विशेषताओं को भी शामिल करें। अनुभागों 1.1, 1.2 एवं 1.3 का संदर्भ लें।

2. इस प्रश्न का उत्तर देते समय, ऐतिहासिक प्रगति और सांस्कृतिक परिवर्तन की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालें जो भारत ने प्राचीन से आधुनिक काल तक देखे हैं। अनुभाग 1.4 का संदर्भ लें।

3. भारत में अनेकता में एकता के कथन या उक्ति के सार पर प्रकाश डालिए। अनुभाग 1.5 एवं 1.6 का संदर्भ लें।

1.10 संदर्भ/आगे सुझावित पठ्न सामग्री

- Tiwari R. C (2007): Geography of India. Prayag Pustak Bhawan, Allahabad
- Tirtha, Ranjit (2002): Geography of India, Rawat Publishers, Jaipur & New Delhi.
- Singh R. L, 1971: India: A Regional Geography, National Geographical Society of India.
- Deshpande C. D, 1992: India: A Regional Interpretation, ICSSR, New Delhi.
- Johnson, B. L. C, ed. 2001. Geographical Dictionary of India. Vision Books, New Delhi.
- Lewis B. et al. (eds): The Encyclopaedia of Islam, Vol. III, New Edition, p. 465.
- Mandal R. B, ed. 1990: Patterns of Regional Geography – An International Perspective. Vol. 3-Indian Perspective.
- Singh, Jagdish 2003: India; A Comprehensive & Systematic Geography, Gyanodaya Prakashan, Gorakhpur.
- Khullar D.R, (2000): Geography of India. Kalyani Publishers, New Delhi.
- Bansal S and Tripathi S (2019): Modern Indian History with a primer on Post Independence India, Mc Graw Hill Education, India.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2

भूआकृति विज्ञान

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
अपेक्षित सीखने के परिणाम
2.2 भौतिक/भूआकृतिक विशेषताएँ
2.3 स्थलाकृतियों का विकास
2.4 प्रमुख भुआकृतिक खंड
हिमालय
उत्तरी मैदान
प्रायद्वीपीय पठार
तटीय मैदान और द्वीप समूह
2.5 सारांश
2.6 अंतिम प्रश्न
2.7 उत्तर
2.8 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

2.1 प्रस्तावना

आप इकाई 1 में उपमहाद्वीप विन्यास में भारत की भौगोलिक स्थिति का अध्ययन कर चुके हैं। आपने भारत की भौतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक–सांस्कृतिक व्यक्तित्व और विविधता में एकता जैसे पहलुओं का भी अध्ययन किया और सीखा है। हमें उम्मीद है कि आप इस इकाई के संपूर्ण सार को समझ गए होंगे जो पूरे राष्ट्र को उसके विविध आयामों में एक अद्वितीय चरित्र प्रदान करती है। आपने यह भी देखा होगा कि भारतीय उपमहाद्वीपीय विन्यास के अध्ययन से संबंधित इन भौतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक–सांस्कृतिक घटकों पर इसकी भौगोलिक स्थिति का अत्यधिक प्रभाव है, जिसकी विशेषता इसकी समृद्ध विविधता है।

इस इकाई में, हम भूआकृतिक इकाइयों और उनके कई महत्वपूर्ण घटकों के संदर्भ में भौतिक आयामों पर चर्चा करेंगे। अनुभाग 2.2 में भूआकृतिक या भौतिक विशेषताओं का तथा अनुभाग 2.3 में भारत के प्रमुख भूआकृतिक खंडो या भौतिक प्रदेशों का वर्णन किया गया है। इसका उद्देश्य भारत की समग्रता में उनके महत्व के साथ–साथ हिमालय, उत्तरी मैदान, प्रायद्वीपीय पठार, तटीय मैदानों और द्वीपों जैसे विभिन्न भूआकृतिक भागों पर प्रकाश डालना है। अनुभाग 2.4 मानव बस्तियों और आर्थिक गतिविधियों सहित विभिन्न उद्देश्यों के लिए स्थलाकृतियों के विकास और उनके महत्व से संबंधित है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप :

- भारत के भौगोलिक विभाजन को समझ सकेंगे;

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

- हिमालय की उत्पत्ति और इसके महत्व जान सकेंगे;
- प्रायद्वीपीय पठार के बारे में जान सकेंगे;
- भारत के उत्तरी मैदानों और द्वीपों के बारे में भी समझ सकेंगे;
- भारत के पूर्वी और पश्चिमी तटों के बीच अंतर को समझ सकेंगे।

2.2 भू–आकृतिक या भौतिक विशेषताएँ

भारत विविधताओं का देश है। संस्कृति, अर्थव्यवस्था और यहां तक कि भारतीय भूदृश्य में भी विविधताएँ मिलती हैं। भारत की भौतिक लक्षणों में विस्तृत विविधता देश को भू–आकृति विज्ञान अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण इकाई बनाती है। भारत में पृथ्वी पर पाए जाने वाले प्रत्येक भूदृश्य है। भारत की सबसे महत्वपूर्ण भू–आकृतिक या भौतिक विशेषताएं हैं:

1) उत्तर भारत विशाल हिमालय से घिरा है जिसकी पश्चिम–पूर्व लम्बाई लगभग 2400 किलोमीटर (कि.मी.) एवं चौड़ाई 160 से 400 किलोमीटर के बीच है। हिमालय पर्वत पश्चिम में जम्मू और कश्मीर एवं लद्दाख से लेकर पूर्व में अरुणाचल प्रदेश तक 5 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है।

2) विशाल उत्तरी मैदान उत्तर में हिमालय और दक्षिण में प्रायद्वीपीय पठार के बीच पश्चिम में उत्तरी राजस्थान से लेकर पूर्व में गंगा डेल्टा और असम तक 7.8 लाख वर्ग किलोमीटर के जलोढ़ क्षेत्र में फैला है।

3) पश्चिमी भारत के दो लाख वर्ग किलोमीटर में एक गर्म मरुस्थल है जिसे 'थार मरुस्थल' के नाम से जाना जाता है। यह बड़े पैमाने पर अरावली पहाड़ियों के पश्चिम में राजस्थान राज्य के एक बड़े हिस्से को आवृत्त करता है और पंजाब, हरियाणा और गुजरात राज्यों से घिरा है।

4) तिकोने आकार वाला प्रायद्वीपीय पठार विशाल भारतीय मैदानों के दक्षिण में फैला हुआ है और इसके दक्षिणी छोर कन्याकुमारी तक विस्तृत है।

5) भारत की स्थलाकृति कई नदियों द्वारा विच्छेदित की गई है। इनमें बारहमासी या स्थायी हिमालयी नदियाँ और वर्षा आधारित प्रायद्वीपीय गैर–बारहमासी नदियाँ शामिल हैं। गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र अपनी सहायक नदियों के साथ प्रमुख हिमालयी नदी प्रणाली बनाते हैं जबकि कृष्णा, कावेरी, गोदावरी, महानदी, नर्मदा और ताप्ती महत्वपूर्ण प्रायद्वीपीय नदियाँ हैं।

6) भारत में विस्तृत और लंबे तट तथा कई उष्णकटिबंधीय द्वीप हैं।

भू–आकृतिक विशेषताओं का संक्षिप्त अध्ययन स्थलाकृतियों के विकास को समझने में मदद करेगा, जिसकी अगले भाग में चर्चा की गई है।

बोध प्रश्न 1

उपयुक्त उदाहरणों के साथ भू–आकृतिक या भौतिक विशेषताओं की संक्षेप में चर्चा कीजिए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2.3 स्थलाकृतियों /भू–आकृतियों का विकास

भारत की वर्तमान उच्चावच लाखों वर्षों में हुई कई भूवैज्ञानिक/भू–आकृति विज्ञान की घटनाओं का परिणाम है। वर्तमान अनुमान के अनुसार, पृथ्वी की आयु लगभग 4.54 अरब वर्ष है। अंतर्जात और बहिर्जात बलों ने पृथ्वी की विभिन्न स्थलीय एवं अधःस्थलीय आकृतियों के आकार निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्लेट विवर्तिनीकी सिद्धांत और महाद्वीपीय प्रवाह सिद्धांत से पृथ्वी की सतह के भौतिक आकृतियों के निर्माण की जानकारी प्राप्त होती है। प्रारंभ में, सभी महाद्वीप एक भूभाग थे, जिसे 'पैंजिया' या 'सुपर महाद्वीप' के नाम से जाना जाता था। यह भूभाग खंडित होकर कई भागों में अलग हुए जिससे आज के महाद्वीपों का निर्माण संभव हुआ। सुपर महाद्वीप के उत्तरी भाग का नाम 'अंगारा लैंड' या 'लौरसिया' और दक्षिणी भाग का नाम 'गोंडवाना लैंड' था। वर्तमान हिमालय और उत्तरी मैदान की जगह एक उथला सागर था, जिसे 'टेथिस' कहा जाता था। इन भूभागों पर बहने वाली नदियों ने टेथिस सागर में भारी मात्रा में तलछट जमा की। ये दो विशाल भूभाग क्रमशः एक–दूसरे की ओर बढ़ रहे थे तथा पार्श्व संपीड़न बल, विशेष रूप से दक्षिण से, सागर में जमा अवसादों में मोड़ उत्पन्न हुआ एवं ऊपर की तरफ उठ गया। लाखों वर्षों में, इस प्रक्रिया से हिमालय नामक विशाल पर्वत का निर्माण हुआ।

पर्वतों के निर्माण के साथ, हिमालय के दक्षिण में एक विशाल भूअभिनति या भूसन्नति निर्मित हुई जिसे अग्र गभीर (Foredeep) भी कहा जाता है। इस गर्त में नदियों द्वारा लाए गए जलोढ़ के जमा होने के परिणामस्वरूप उन्नत मैदानों का निर्माण हुआ। इन्हें सिंधु–गंगा का मैदान या उत्तरी मैदान कहा जाता है।

स्थलाकृतियों के विकास के अध्ययन से आपको भारत के प्रमुख भू–आकृतिक या भौतिक भागों को समझने में मदद मिलेगी, जिसकी व्याख्या अगले भाग में विस्तार से की गई है।

बोध प्रश्न 2

स्थलाकृतियों का विकास क्या है? संक्षेप में चर्चा करें।

2.4 प्रमुख भू–आकृतिक खंड या भौतिक प्रदेश

भारत की स्थलीय सतह इसकी निर्माण जैसे ही जटिल हैं। इसमें सभी प्रकार की भू–आकृतियाँ या स्थलाकृतियाँ जैसे पहाड़, पर्वत, पठार और मैदान हैं। कुल क्षेत्रफल का लगभग 11 प्रतिशत (%) भू–भाग पर्वतीय, 18% पहाड़ी, 28% पठारी और शेष 43% में एक समतल सतह यानि मैदानी है।

भूवैज्ञानिक जटिलताओं और भू–आकृति विविधताओं के कारण, भारत का भौतिक प्रदेशों या भू–आकृतिक खंडो में विभाजन एक कठिन कार्य है। इसे सामान्यतः पाँच भौतिक भागों में बाँटा गया है, जो निम्नलिखित हैं।

1) उत्तरी पर्वतमाला (हिमालय)

2) उत्तरी मैदान

3) प्रायद्वीपीय पठार

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

4) तटीय मैदान

5) द्वीप समूह

1) हिमालय

- हिमालय पश्चिम में जम्मू और कश्मीर से लेकर पूर्व में अरुणाचल प्रदेश तक फैला है जिसकी लम्बाई 2400 किलोमीटर एवं चौड़ाई 160 से 400 किलोमीटर है। इसकी औसत ऊंचाई 6000 मीटर है। यह अनुमान है कि ये तरुण या युवा मोड़दार पर्वत श्रृंखलाएँ 5 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैली हैं। ये विश्व के सबसे ऊंचे पर्वत हैं। हिमालय की चट्टानें मोड़दार एवं भ्रंशन प्रकार की हैं। इनमें कई अधिवलन, परिवलन, ग्रीवाखंड और आरूढ़ भ्रंश हैं। ये अभी भी सक्रिय निर्माण के चरण में हैं।

- दक्षिण से उत्तर की और, सीमान्त दरार इस प्रकार हैं:

  (1) मुख्य सीमांत दरार या क्षेप (मेन फ्रंटल थ्रस्ट, (एमएफटी); (2) मुख्य परिसीमा दरार या क्षेप (मेन बाउंड्री थ्रस्ट, (एमबीटी); (3) मुख्य केंद्रीय दरार या क्षेप (मेन सेंट्रल थ्रस्ट, (एमसीटी); (4) दक्षिण तिब्बती विलगन प्रणाली (South Tibetan detachment system) और अंत में (5) सिंधु–त्सांगपो सीवन क्षेत्र (Indus & Tsangpo Suture Zone, (ITSZ)।

  (2) दक्षिण से उत्तर तक के हिमालयी भूभाग को मूल रूप से निचे दिए, उप–समानांतर विवर्तनिक–स्तरिक उप–विभाजनों में विभाजित किया गया है:

A उप–हिमालय या बाह्य हिमालय,

B. लघु हिमालय,

C. उच्च हिमालय या महान हिमालय, और

D. ट्रांस हिमालय (ग्रेट हिमालयन श्रेणी के उत्तर में स्थित पर्वत श्रृंखलाएं)

बाह्य हिमालय (शिवालिक)

हिमालय की सबसे बाहरी सीमा को शिवालिक या बाह्य हिमालय के रूप में जाना जाता है। यह हिमालय की तलहटी में 600–1500 मीटर की ऊंचाई और 15 से 50 किलोमीटर की चौड़ाई में फैले हैं। शिवालिक और हिमाचल के बीच में समतल तली वाली अधोमुखी घाटियाँ पाई जाती हैं जिन्हें 'दून/दून' कहा जाता है। देहरादून घाटी (75 कि.मी. लंबी और 15–20 कि.मी. चौड़ी) इसका एक विशिष्ट उदाहरण है।

लघु हिमालय (हिमाचल)

मध्य हिमालय, दक्षिण में शिवालिक और उत्तर में महान हिमालय के बीच स्थित एवं दोनों श्रेणियों के लगभग समानांतर है। इसकी औसत ऊंचाई 3500 से 4500 मीटर और औसत चौड़ाई 60 से 80 किलोमीटर है। इसमे महत्वपूर्ण पर्वत श्रृंखलाएं जैसे पीरपंजाल, धौला धार, नाग टीबा, महाभारत–लेख श्रेणी और मसूरी श्रृंखला शामिल हैं। पीरपंजाल श्रेणी जो जम्मू और कश्मीर में और आंशिक रूप से हिमाचल प्रदेश में स्थित है, सबसे लंबी और सबसे महत्वपूर्ण रेंज है जो 300 से 400 किलोमीटर तक फैली हुई है। इसकी ऊंचाई 5000 मीटर तक है। प्रसिद्ध कश्मीर घाटी पीरपंजाल श्रेणी (रेंज) और वृहत

हिमालयन श्रेणी (रेंज) के बीच में स्थित है। पीरपंजाल श्रेणी रोहतांग दर्रे से कुछ दूरी तक फैली हुई है तथा उसके आगे धौलाधार श्रेणी है जो हिमाचल प्रदेश की सबसे प्रमुख श्रेणी है। इसकी उँचाई 4000 मीटर से कम है। मध्य हिमालय में मसूरी और नाग टिब्बा पर्वतमाला हैं। दक्षिणी नेपाल में महाभारत–लेख श्रेणी मसूरी श्रेणी का विस्तार है।

बृहत् या महान हिमालय (हिमाद्री)

इसे आंतरिक या केंद्रीय हिमालय के रूप में भी जाना जाता है। यह सभी हिमालय पर्वतमालाओं में सबसे उत्तरी या अंतरतम है, जिसकी समुद्र तल से औसत ऊँचाई 6000 मीटर और औसत चौड़ाई 25 किमी है। इन श्रेणियों का मूल ग्रेनाइट, शिस्ट आदि सहित आर्कियन चट्टानों से बना है। इसकी मुख्य श्रेणी जिसे बृहत् हिमालय श्रृंखला कहा जाता है, में दुनिया की कुछ सर्वाधिक ऊंची चोटियाँ हैं, जो सदा हिम से ढकी रहती हैं। इस श्रेणी में पाए जाने वाले कुछ सबसे ऊंची चोटियों में माउंट एवरेस्ट (8848 मीटर), कंचनजंगा (8598 मीटर), धौलागिरी (8172 मीटर), अन्नपूर्णा, नंगा पर्वत, मनासलु, नंदादेवी, कामेट, त्रिशूल आदि, ऊंचे पर्वतीय दर्रे में बारा लाचा ला, शिपकी ला, थांग ला, नीति दर्रा, लिपु लेख दर्रा, नाथू ला, और जेलेप ला, बुर्जिल दर्रा और जोजी ला इत्यादि हैं।

ट्रांस–हिमालय

बृहत् हिमालयन श्रेणी के उत्तर में स्थित पर्वतमाला को ट्रांस–हिमालय कहा जाता है। ट्रांस–हिमालय को तिब्बती हिमालय भी कहा जाता है क्योंकि इसका एक बड़ा हिस्सा तिब्बत में स्थित है। ये वृहद् हिमालयन श्रेणी के उत्तर में पूर्व–पश्चिम दिशा समानांतर रुप में लगभग 1000 किलोमीटर की दुरी, पूर्वी और पश्चिमी छोरों पर 40 किलोमीटर और मध्य भाग में लगभग 225 किलोमीटर की औसत चौड़ाई में फैला है। ये 5000 मीटर से अधिक उँचाई तक मिलते हैं। जांस्कर, लद्दाख, काराकोरम और कैलाश मुख्य ट्रांस–हिमालयी पर्वतमाला हैं।

हिमालय के प्रादेशिक विभाजन

हिमालय को पश्चिम से पूर्व तक के क्षेत्रों के आधार पर विभाजित किया गया है। सर सिडनी बर्रार्ड ने हिमालय की पूरी लंबाई को नदी घाटियों के आधार पर निम्नलिखित चार भागों में विभाजित किया हैः

A. पश्चिमी हिमालय (जम्मू और कश्मीर, लद्दाख और हिमाचल प्रदेश हिमालय शामिल हैं)

B. कुमाऊं हिमालय

C. नेपाल हिमालय

D. असम हिमालय

प्रो. एस. पी. चटर्जी (1973) ने हिमालय क्षेत्र को पश्चिम से पूर्व की ओर 5 क्षेत्रों में विभाजित किया है। इनकी चर्चा इस प्रकार हैः

A. कश्मीर हिमालय

B. हिमाचल हिमालय

C. कुमाऊं हिमालय (उत्तराखंड हिमालय)

D. मध्य हिमालय

E. पूर्वी हिमालय

i. कश्मीर हिमालय लगभग पूरी तरह से केंद्र शासित प्रदेशों जम्मू और कश्मीर एवं लद्दाख में स्थित है, जिसकी औसत ऊंचाई समुद्र तल से लगभग 3000 मीटर है। इसमें काराकोरम, लद्दाख, जास्कर, वृहद् हिमालय और पीरपंजाल जैसी श्रृंखलाएं शामिल हैं। कश्मीर हिमालय का उत्तर–पूर्वी भाग एक शीत मरुस्थल है, जो वृहद् हिमालय और काराकोरम श्रेणीयों के बीच स्थित है। काराकोरम श्रेणी सिंधु नदी के उत्तर में स्थित है, जिसमें ऊंची चोटियाँ और बड़ी संख्या में बड़े हिमनद हैं। लद्दाख पठार, कश्मीर घाटी और जम्मू हिमालय इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण भू–आकृतिक विशेषताएं हैं।

ii. हिमाचल प्रदेश हिमालय मुख्य रूप से हिमाचल प्रदेश राज्य को आवृत्त करता है। हिमालय का यह हिस्सा पश्चिम में रावी और पूर्व में यमुना (गंगा की एक सहायक नदी) के बीच स्थित है। हिमाचल हिमालय का सबसे उत्तरी भाग लद्दाख के शीत मरुस्थल का विस्तार है। हिमालय के सभी श्रेणीयाँ इस खंड में मौजूद हैं। इनमें वृहद हिमालय में वृहद् हिमालय श्रेणी और ट्रांस हिमालय में जांस्कर श्रेणी शामिल हैं। लघु हिमालय में धौलाधार श्रेणी जबकि बाह्य हिमालय में शिवालिक श्रेणी है। रोहतांग, बारालाचा ला और शिपकी ला हिमालय के हिस्से के महत्वपूर्ण पर्वतीय दर्रे हैं।

iii. उत्तराखंड हिमालय उत्तराखंड राज्य में स्थित है और इसे कुमाऊं हिमालय के नाम से भी जाना जाता है। यह भाग पश्चिम में टोंस (यमुना की सहायक नदी) और पूर्व में काली नदी (घाघरा की एक सहायक नदी) के बीच फैला हुआ है। इसकी मुख्य चोटियाँ नंदा देवी (7817 मीटर), कामेट (7756 मीटर), त्रिशूल (7140 मीटर), चौखम्बा I (7138 मीटर), सतोपंथ (7075 मीटर), केदारनाथ (6968 मीटर) और भागीरथी गिरिपिंड (मासिफ) हैं, जिनमें 6856 मी से 6193 मी. के बीच चार चोटियाँ हैं। कुमाऊं में लघु हिमालय की मसूरी और नागटिब्बा पर्वतमालाएं है। इस क्षेत्र में शिवालिक गंगा और यमुना नदियों के बीच मसूरी श्रेणी के दक्षिण में लगभग 75 किलोमीटर की लंबाई तक फैला है। थाया ला, मुलिंग ला, माना, नीति एवं मढ़ी ला इत्यादि महत्वपूर्ण दर्रे हैं।

iv. मध्य या केंद्रीय हिमालय पश्चिम में काली नदी और पूर्व में तीस्ता नदी के बीच लगभग 800 किलोमीटर की दूरी तक फैला है। हिमालय की तीनों मुख्य पर्वत श्रृंखलाएं इस खंड में स्थित हैं। दुनिया की कुछ सबसे ऊँची और प्रसिद्ध चोटियाँ जैसे माउंट एवरेस्ट, कंचनजंगा, मकालू, अन्नपूर्णा और धौलागिरी आदि यहाँ स्थित हैं। महाभारत–लेख श्रेणी लघु हिमालय का हिस्सा है। इसका अधिकांश भाग नेपाल में है।

v. पूर्वी हिमालय तीस्ता और ब्रह्मपुत्र नदियों के बीच लगभग 720 किलोमीटर तक फैला है। पूर्वी हिमालय में तीन व्यापक उप–भाग शामिल हैं, जैसे दार्जिलिंग–सिक्किम हिमालय, भूटान हिमालय और अरुणाचल हिमालय। दार्जिलिंग और सिक्किम पूर्वी हिमालय के पश्चिमी भाग का हिस्सा हैं जबकि भूटान इसके मध्य भाग में स्थित है। अरुणाचल प्रदेश भूटान हिमालय से पूर्व की ओर दीफू दर्रे तक फैला हुआ है। पूर्वी हिमालय में दार्जिलिंग के सिलीगुड़ी

उप–मंडल के साथ–साथ तिरप और लोहित जिले के हिस्से शामिल नहीं है जो अरुणाचल प्रदेश में लोहित नदी के दक्षिण में स्थित है।

दार्जिलिंग–सिक्किम हिमालय में चार उप–खंड या भाग हैं। सिंगलिला श्रेणी, डोनकिया श्रेणी, दार्जिलिंग पहाड़ी क्षेत्र, कलिम्पोंग पहाड़ी क्षेत्र है। जबकि भूटान हिमालय में चोमोल्हारी–कुलकांगरी क्षेत्र, पुनाखा–थिंपू क्षेत्र, तोंगसा क्षेत्र, देवनगिरी और फुंटसोलिंग क्षेत्र शामिल हैं। इसी तरह, डफला, मिरी, अबोर और मिशमी क्षेत्र अरुणाचल हिमालय के चार उप–खंड हैं।

पूर्वी पहाड़ियाँ या पूर्वांचल की पहाड़ियाँ

दिहांग महाखड्ड या गॉर्ज (ब्रह्मपुत्र महाखड्ड) के बाद, हिमालय दक्षिण की और मुड़ जाता है और अर्धचन्द्राकार में कम उँचाई वाले पहाड़ियों की श्रृंखला का निर्माण करती है जिसका उत्तल पक्ष पश्चिम की तरफ होता है। इन पहाड़ियों को सामूहिक रूप से पूर्वांचल कहा जाता है क्योंकि ये देश के पूर्वी भाग में स्थित हैं। ये पहाड़ियाँ उत्तर में अरुणाचल प्रदेश से लेकर दक्षिण में मिजोरम तक फैली हुई हैं और भारत और म्यांमार के बीच एक सीमा बनाती हैं।

इनमें निम्नलिखित पहाड़ियाँ शामिल हैं – मिश्मी, पटकाई बूम श्रेणी, नागा पहाड़ी, मणिपुर पहाड़ी और मिजो पहाड़ी (लुशाई पहाड़ी)। ये सभी पर्वतमालाएं आमतौर पर 2,000 मीटर या उससे कम ऊँचाई पर स्थित हैं, लेकिन घने जंगलों, बहुत उबड़–खाबड़ इलाकों और अवास्य जनजातियों के कारण निषिद्ध हैं।

हिमालय की उत्पत्ति

भूवैज्ञानिक रूप से हिमालय एक तरुण मोड़दार पर्वत प्रणाली है। इनमें विभिन्न भूवैज्ञानिक काल की रूपांतरित चट्टानें हैं। इन चट्टानों में विभिन्न काल के जीवाश्म प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। भूवैज्ञानिकों के अनुसार, 'पैंजिया' नामक एक विशाल महाद्वीप मौजूद था, जो 'पेंथलासा' नामक एक विशाल महासागर से घिरा हुआ था। लगभग 200 मिलियन वर्ष पूर्व, पैंजिया के केंद्र में टेथिस नामक एक भूअभिनति या भूसन्नति मौजूद थी, जो इसे उत्तरी महाद्वीप जिसे अंगारालैंड तथा दक्षिणी महाद्वीप जिसे गोंडवानालैंड कहा जाता था, में विभाजित किया। मेसोजोइक काल के अंत में, वृहत परिवर्तन हुए। लंबी अवधि में संपीड़न बल के कारण टेथिस के तलछट में सिकोड़न या आमोटन हुआ।

गोंडवानालैंड विखंडित हुआ एवं इसके भाग एक दूसरे से पृथक होने लगे। इस प्रकार, इस प्रक्रिया में हिंद महासागर का निर्माण हुआ। निक्षेपण और अवतलन लंबी अवधि तक चलता रहा। क्रिटेशियस काल के अंत में, टेथिस सागर तल में एक उत्थान हुआ और बड़े पैमाने पर संवलन के कारण हिमालय की उत्पत्ति हुई। विद्वानों का मत है की हिमालय का अभी भी उत्थान हो रहा है। प्लेट विवर्तिनीकी सिद्धांत के अनुसार हिमालय की उत्पत्ति प्लेट की गति का परिणाम है।

भारत में हिमालय का महत्व

सामरिक महत्वः यह अन्य देशों (चीन, अफगानिस्तान और पाकिस्तान) के साथ भारत की प्राकृतिक सीमा बनाता है।

जलवायु महत्वः यह ग्रीष्म मानसून के उत्तरागमन को रोकता है और साइबेरिया से ठंडी उत्तरी हवाओं को भारत में आने से रोकता है।

भौतिक महत्वः हिमालय के हिमनदों से उत्तर भारत की बारहमासी नदियों को जल प्राप्त होता है। नदियाँ पर्वत श्रृंखलाओं को काटती हैं और अत्यधिक उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी जमा करती हैं।

कृषि महत्वः हिमालय की नदियाँ तलहटी में बहुत सारी तलछट जमा करती हैं, जिससे भारत का सबसे उपजाऊ कृषि मैदान बनता है जिसे उत्तरी मैदान के रूप में जाना जाता है। हिमालय से निकलने वाली बड़ी नदियों के जल का उपयोग पनबिजली पैदा करने, सिंचाई, औद्योगिक और घरेलू उद्देश्यों के लिए किया जाता है।

आर्थिक महत्वः इसे हिमालयी नदियों की विशाल पनबिजली क्षमता, हिमालयी लकड़ी, हिमालयी जड़ी–बूटियों और औषधीय पौधों के संदर्भ में देखा जा सकता है। नदी तलछट का उपयोग खनिजों और निर्माण सामग्री के एक बड़े स्रोत के रूप में किया जाता है।

पर्यटन महत्वः इसमें व्यापक पारिस्थितिक जैव विविधता, प्राकृतिक दृश्य और पहाड़ी स्टेशन हैं। हिमालय अनेक जनजातियों का निवास स्थान है। हिमालय वनस्पतियों और जीवों में समृद्ध है।

बोध प्रश्न 3

हिमालय के अनुदैर्ध्य या देशांतरीय विभाजन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

2.4.2 उत्तरी मैदान

विशाल उत्तरी मैदान उत्तर में हिमालय और दक्षिण में प्रायद्वीपीय पठार के बीच स्थित हैं। ये मैदान पश्चिम में उत्तरी राजस्थान से लेकर पूर्व में गंगा डेल्टा तक और आगे पूर्व में असम तक फैले हुए हैं। इन मैदानों को सिंधु–गंगा–ब्रह्मपुत्र मैदान के रूप में भी जाना जाता है। सिंधु–गंगा–ब्रह्मपुत्र मैदान एक जलोढ़ क्षेत्र बनाता है जो 7.8 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र पर फैला है। यह मैदान सिंधु के मुहाने से गंगा के मुहाने तक 3200 किलोमीटर की लंबाई में फैला हुआ है, जिसमें 2,400 किलोमीटर भारतीय क्षेत्र में है जो उत्तरी भारत का बड़ा हिस्सा है। पूर्व से पश्चिम की और औसत चौड़ाई 150 से 300 किमी. के साथ इस मैदान का निर्माण गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र घाटियों तथा उनकी सहायक नदियों से हुआ है। इसमें भारत की कुल जनसंख्या का 40% से अधिक शामिल है। यह 25 सेंटीमीटर (से.मी.) प्रति वर्ग किलोमीटर की औसत ढलान के साथ एक अत्यंत समतल मैदान है।

उत्तरी मैदानों का महत्व

अत्यधिक उपजाऊ मैदानी जलोढ़ मृदा, बारहमासी नदियों और अनुकूल जलवायु ने मैदानी प्रदेश को कृषि की दृष्टि से सर्वाधिक समृद्ध बना दिया है। यहां विभिन्न खाद्य फसलों के साथ–साथ गैर–खाद्य फसलें भी उगाई जाती हैं। इस प्रदेश को 'देश का अन्न भंडार' कहा जाता है। मैदानी इलाकों में देश का लगभग 1/3वां भाग शामिल है जिसमे देश की 40% आबादी निवास करती है। प्रांरम्भ से ही मैदानी इलाकों ने कई राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों को देखा है। उत्तरी मैदान भारतीय इतिहास और संस्कृति का प्रमुख रंगमंच रहा है।

विशाल मैदानों की उत्पत्ति

मैदानों की उत्पत्ति की प्रक्रिया आज भी वितर्क योग्य है क्योंकि कई विद्वानों ने विभिन्न विचारों का प्रतिपादन किया है।

(1) सामान्य अवधारणा

भारत के विशाल मैदान की उत्पत्ति कई परस्पर प्रक्रियाओं और तंत्रों जैसे अवसादन, अवतलन, उत्थान और समुद्र प्रतिगमन आदि के परिणाम हैं। यह माना जाता है कि एक विशाल खाई (जिसे भूसन्नति या भूअभिनति के रूप में जाना जाता है) की उत्पत्ति हिमालय के निर्माण के कारण हुआ। हिमालय और प्रायद्वीप से निकलने वाली नदियों ने खाई में तलछट जमा करना शुरू कर दिया।

भारी मात्रा में अपरदित सामग्री (जलोढ़) के निरंतर अवसादन के बढ़ते भार से खाई या गर्त (trench) का क्रमिक अवतलन हुआ। इस प्रकार, लंबी अवधि में अवसादन और अवतलन दोनों प्रक्रियाओं की पुनरावृत्ति के परिणामस्वरूप अवसादों या तलछट का निक्षेपण वृहद स्तर (सैकड़ों मीटर) तक हो गया।

अंततः खाई या गर्त (trench) में अवसादों या तलछट के निक्षेपण से 'विशाल मैदान' बन गए। अरब सागर अग्रसरण परिणामस्वरूप, नए भूमि क्षेत्र समुद्र से मुक्त हो गए और मैदानी भाग का हिस्सा बन गए।

(2) E- Suess की अवधारणा

E- Suess के अनुसार, हिमालय और प्रायद्वीपीय भारत के बीच हिमालयी पर्वतन के कारण एक व्यापक अग्र गभीर (foredeep) का निर्माण हुआ। अग्र गभीर या अग्रभूमि एक व्यापक अभिनति के रूप में था, जो अनियमित और तरंगित तल के साथ एक व्यापक समभिनति (कई छोटे अपनति या एंटीक्लाइन और अभिनति या सिंकलाइन) था।

हिमालय से बहने वाली नदियाँ तलछट को अग्रभूमि में जमा करने लगीं। तलछट दक्षिणाभिमुख नदियों द्वारा हिमालय के क्षरण से जमा हुआ। समयावधि में अग्रभूमि तलछट से भर गई और इस प्रकार 'विशाल मैदानों' का निर्माण हुआ।

(3) S- Burrard की अवधारणा

एस. बुर्राड के अनुसार, हिमालय की उत्पत्ति और उत्थान के कारण 2400 किलोमीटर लंबी और 500 मीटर गहराई वाली एक विस्तृत भ्रंश घाटी का निर्माण हुआ। इस भ्रंश घाटी के उत्तरी और दक्षिणी खंड का निर्माण क्रमशः हिमालय की दक्षिणी श्रेणियों और भारतीय प्रायद्वीप के अग्रभूमि द्वारा हुआ। उनके अनुसार यह दरार दो सामान्य भ्रंश के बनने से बनी है। भ्रंश घाटी में हिमालय और प्रायद्वीप के पठार से आने वाली नदियों द्वारा लाए गए अवसादों का जमाव हुआ। इस प्रकार, समयावधि में अवसादन के कारण विशाल मैदानों का निर्माण हुआ।

हेडन और आरडी ओल्डम जैसे विद्वानों के साथ भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण अन्य भूविज्ञानी ने सिंधु–गंगा गर्त के विषय में बुराड के दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया है। हिमालय के सामने भ्रंश घाटी के निर्माण पर बर्राड के विचार मान्य नहीं हैं क्योंकि ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिला है जो भारतीय प्रायद्वीप के उत्तरी अग्रभूमि पर भ्रंश घाटी के निर्माण के विचार को मान्य कर सके।

स्थलाकृति

विशाल मैदान कुछ उच्चावच के साथ समरूप सतह होते हैं। यह एक साधारण जलोढ़ उपजाऊ मैदान है जो नदियों के निक्षेपों द्वारा निर्मित है।

मैदान को निम्नलिखित पट्टियों में विभाजित किया जा सकता है–

a) भाबर क्षेत्र

b) तराई क्षेत्र

c) बांगर क्षेत्र

d) खादर क्षेत्र

e) डेल्टा मैदान

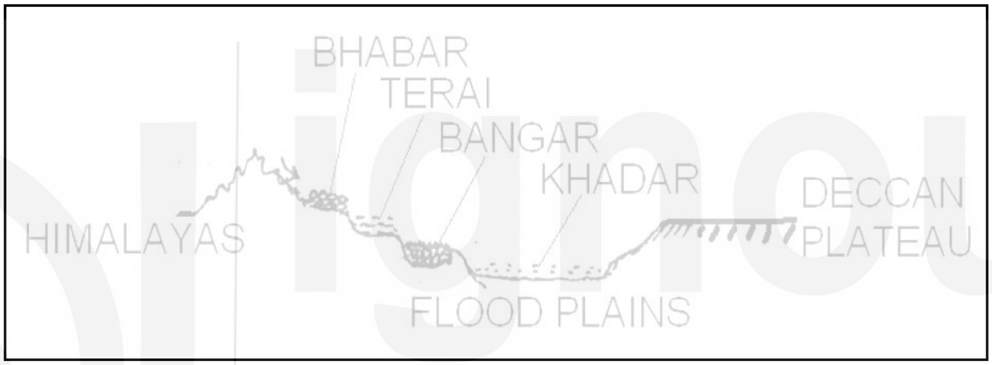

चित्र 2.1: भाभर क्षेत्र

भाबर क्षेत्र

भाभर क्षेत्र हिमालय गिरिपाद के समानांतर 7–15 किलोमीटर चौड़ी पतली पट्टी है। यह सरंध्र, चट्टानी मिट्टी और कंकड़ से बनी हैं जो ढाल–भंग के कारण हिमालय की तलहटी में जमा हो जाता है। यह उच्च श्रेणियों से आये हुए मलबे से बनी है। इस पेटी की सरंध्रता बहुत अधिक होने के कारण जल का रिसाव होता है तथा धाराएँ लुप्त हो जाती हैं और भूमिगत बहने लगती हैं।

तराई क्षेत्र

भाभर के दक्षिण में तराई क्षेत्र है जो 15–30 किलोमीटर चौड़ा दलदली भाग है। आधार–शैल के कारण भाभर में लुप्त धाराएँ तराई में पुनः प्रकट हो जाती हैं। इस प्रकार, जल स्तर बहुत अधिक होने की वजह से भूमि दलदली बानी रहती है। इसलिए तराई नम और घने जंगलों वाला क्षेत्र है जिसमें विभिन्न प्रकार के वन्यजीव निवास करते हैं।

बांगर क्षेत्र

यह उत्तरी मैदानों का सर्वाधिक बड़ा हिस्सा है जो पुराने जलोढ़ से बना है और बाढ़ के मैदानों के ऊपर एक जलोढ़ वेदिका बनाता है। मृदा पुराने जलोढ़ से बनी है तथा शुष्क भागों में, इसमें कैल्शियम युक्त जमाव होता है जिसे कंकर कहते है।

खादर क्षेत्र

खादर क्षेत्र बाढ़ के मैदानों में सभी नदियों के किनारे पाई जाती हैं। मृदा नए जलोढ़ से बनी है जो प्रत्येक वर्ष बाढ़ के कारण जमा हो जाती है।

डेल्टाई मैदान

डेल्टाई मैदान में बड़ी मात्रा में नए जलोढ़ होते है जो खादर के रूप में है। यह गंगा नदी की निचली विस्तार में 1.9 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। यह निक्षेपण का क्षेत्र है क्योंकि नदी इस पथ में धीमी गति से बहती है। डेल्टा के मैदान में मुख्य रूप से पुराने पंक, नए पंक और दलदल शामिल हैं।

भारत के विशाल मैदान का प्रादेशिक विभाजन

उत्तर भारत के विशाल मैदानों में समरूपता है और अत्यधिक क्षैतिजता और कम ऊंचाई इसकी विशेषता है। यह विशाल क्षेत्र विशिष्ट नजलीय प्रणाली, प्रवाह की दिशाओं और भू–आकृति विज्ञान को प्रदर्शित करता है। भारत के विशाल मैदान को निम्नलिखित चार प्रदेशों या क्षेत्रों में विभाजित किया गया है:

1) राजस्थान का मैदान
2) पंजाब–हरियाणा का मैदान
3) गंगा का मैदान
4) ब्रह्मपुत्र का मैदान

1. राजस्थान का मैदान

भारत के विशाल मैदानों के पश्चिमी छोर में थार या विशाल भारतीय मरुस्थल है जो पश्चिमी राजस्थान और पाकिस्तान के आसपास के हिस्सों में फैला है। थार मरुस्थल (जिसे ग्रेट इंडियन डेजर्ट भी कहा जाता है) एक गर्म मरुस्थल है जो पश्चिमी भारत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह भारत के चार राज्यों, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान और गुजरात में फैला हुआ है। इसका क्षेत्रफल 2 लाख वर्ग किलोमीटर है। इसका पाकिस्तान में चोलिस्तान मरुस्थल के रूप में विस्तार है। थार मरुस्थल का अधिकांश भाग राजस्थान में स्थित है, जो इसके भौगोलिक क्षेत्र का 61% है। इस क्षेत्र में गर्मियों में तापमान 45 अंश सेल्सियस से अधिक और कम वर्षा के साथ सर्दियों में हिमांक से नीचे होता है।

इस क्षेत्र की कुछ विशिष्ट विशेषताएं हैं:

- कुल क्षेत्रफल 2.0 लाख वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से 1.75 लाख वर्ग किलोमीटर भारत में है।
- भारतीय मरुस्थल का 2/3वां भाग राजस्थान में अरावली पर्वतमाला के पश्चिमी भाग में स्थित है।
- भारतीय मरुस्थल का 1/3वां भाग हरियाणा, पंजाब और गुजरात में स्थित है।

राजस्थान के मैदान को निम्न उप–भागों में विभाजित किया गया है –

1. पश्चिमी रेतीले मैदान

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

a. रेतीले टीला मुक्त भूभाग

i. मरुस्थली

ii. टिब्बा मुक्त क्षेत्र

b. अर्ध–शुष्क परिवर्ती मैदान (राजस्थान बागर)

i. लूनी बेसिन (गोडवार भूभाग)

ii. आंतरिक अपवाह मैदान (शेखावटी पथ)

2. पूर्वी मैदान

a. बनास द्रोणी

b. छपन (Chappan) मैदान

2. पंजाब–हरियाणा का मैदान

मैदान का कुछ हिस्सा समतल के साथ उत्तल सतह भी है। हरियाणा में इसकी पूर्वी सीमा यमुना नदी द्वारा बनाई गई है। शेष हरियाणा में कोई बारहमासी नदी नहीं है। इसे सिंधु–गंगा विभाजक कहा जाता है और इसमें ढलान का उत्क्रमण होता है। पंजाब राज्य पांच नदियों जैसे सतलुज, ब्यास, रावी, चिनाब और झेलम द्वारा जलोढ़ निक्षेपों के परिणामस्वरूप बने मैदान का एक हिस्सा है।

मैदान –

- यह लगभग 95,000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को आवृत करता है।
- इसके उत्तरी भाग की ऊँचाई 300 मीटर (समुद्र तल से ऊपर) है जबकि दक्षिण–पूर्वी हिस्से में 200 मीटर (समुद्र तल से ऊपर) है।

जलोढ़ नदी के किनारों से विखंडित हुआ जिससे खादर के व्यापक बाढ़ के मैदानों का निर्माण हुआ जो वप्र से घिरा होता है जिसे स्थानीय रूप में धायस (dhayas) कहा जाता है। 3 मीटर या उससे अधिक ऊंचे इन वप्र में व्यापक रूप से अवनालिका बनी है। नदियों के बीच की भूमि को दोआब कहते हैं।

शिवालिक पहाड़ियों से सटे इस मैदान के उत्तरी भाग में बीवे नामक मौसमी धाराओं से व्यापक अपरदन हुआ।

घग्गर और यमुना नदियों के बीच का क्षेत्र हरियाणा में स्थित है और इसे ''हरियाणा भूभाग'' कहा जाता है। यह यमुना और सतलुज नदी के बीच जल विभाजक का कार्य करता है।

3. गंगा का मैदान

यह उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों में दिल्ली से कोलकाता तक भारत के विशाल मैदानों का सर्वाधिक बड़ा हिस्सा जो लगभग 3.75 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला है। इसका नाम महान नदी गंगा के नाम पर रखा गया है। भू–आकृति विज्ञान की दृष्टि से संपूर्ण गंगा का मैदान सामान्य तौर पर सपाट है। विस्तृत बाढ़ के मैदान,

प्राकृतिक तटबंध, घाटियाँ, गोखुर झीलें, गलीड तटीय भूभाग, गूंफित जलमार्ग, वप्र आदि गंगा के मैदान की भूआकृति हैं।

संपूर्ण गंगा मैदान में भू–आकृति में समरूपता पाई जाती है। इसे सांस्कृतिक और आर्थिक कारकों के आधार पर आर. एल. सिंह (1971) द्वारा तीन भौगोलिक क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

a) ऊपरी गंगा का मैदान

b) मध्य गंगा का मैदान

c) निचला गंगा का मैदान

ऊपरी गंगा मैदान

ऊपरी गंगा का मैदान पश्चिम में यमुना घाटी और पूर्व में 100 मीटर समोच्च के बीच उत्तर प्रदेश के 1.49 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में स्थित है। यह मैदान पूर्व–पश्चिम दिशा में लगभग 550 कि.मी. लंबा और उत्तर–दक्षिण दिशा में लगभग 380 कि.मी. चौड़ा है। इसकी ऊँचाई समुद्र तल से 100 से 300 मीटर के बीच है।

सूक्ष्म स्तर पर स्थलाकृति (micro-level) और इसकी प्रादेशिक विशेषताएं चार भौतिक इकाइयों को प्रस्तुत करती हैं।

ये इस प्रकार हैं:

a) तलहटी या गिरिपाद (Sub & Montane) क्षेत्र

b) गंगा–घाघरा दोआब क्षेत्र

c) गंगा–यमुना दोआबी

d) यमुनापार खड्ड (Ravine) भूभाग

मध्य गंगा का मैदान

मध्य गंगा का मैदान पूर्वी उत्तर प्रदेश और पूरे बिहार में 1.44 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है। यह पूर्व–पश्चिम में लगभग 600 किलोमीटर और उत्तर–दक्षिण दिशा में लगभग 300 किलोमीटर तक फैला है। इसकी अधिकांश सीमाएँ पश्चिम में 100 मीटर समोच्च, उत्तर पूर्व में 75 मीटर समोच्च और दक्षिण–पूर्व में 30 मीटर समोच्च रेखाओं द्वारा बनाई गई हैं। यह एक बहुत ही निम्न मैदान है और इसके किसी भाग की उँचाई 150 मीटर से अधिक नहीं है।

उत्तर मध्य गंगा के मैदान में कई पुराजैव जलमार्ग, गोखुर झील, टैंक और तालाबों जिसे स्थानीय रूप से ताल (नदी प्रवाह में स्थानांतरण के कारण बनते हैं) कहते हैं, यहां पर मिलते हैं। अन्य भूआकृतियों में नदियों के तटवर्ती इलाकों में प्राकृतिक घाटियां, घाटियां और उत्त्खात भूमि, बाढ़ के मैदान, सर्पण, अपरदित लेकिन अस्थिर नदी के किनारे, रेतीले आकृति जैसे दून आदि शामिल हैं।

आर एल सिंह (1971) की योजना के अनुसार, मध्य गंगा के मैदान को दो व्यापक उप–भागों में विभाजित किया गया है।

a. उत्तर गंगा मैदान

i. गंगा–घाघरा दोआब

ii. सरयूपार मैदान (घाघरा–गंडक दोआब)

iii. मिथिला का मैदान (गंडक–कोसी दोआब) और

iv. कोसी का मैदान (कोसी–महानंदा दोआब)

b. दक्षिण गंगा मैदान

i. गंगा–सोन विभाजन

ii. मगध का मैदान और

iii. अंग का मैदान

निम्न (निचला) गंगा मैदान

इस मैदान में वास्तविक अर्थों में, पूर्णिया जिले (बिहार) की किशनगंज तहसील, पूरे पश्चिम बंगाल राज्य (पुरुलिया जिले और दार्जिलिंग और कलिम्पोंग जिले के पहाड़ी हिस्सों को छोड़कर), और बांग्लादेश का अधिकांश हिस्सा भी शामिल है। यह कुल भौगोलिक क्षेत्र के 81 हजार वर्ग किलोमीटर में फैला है। इस क्षेत्र का दो तिहाई भाग औसत समुद्र तल से 30 मीटर नीचे है।

आर. एल. सिंह (1971) ने समरूप सतह विन्यास के भीतर सूक्ष्म क्रम विविधता के आधार पर निम्न गंगा के मैदान को निम्नलिखित भौतिक उप–भागो में विभाजित किया है–

a. उत्तरी मैदान में द्वार (तराई) ताल, दियारा और बरिंद भूभाग है।

b. डेल्टा, जिसमें शामिल हैः

i. मोरीबंद डेल्टा
ii. उंजनतम डेल्टा
iii. बजपअम डेल्टा

डेल्टा के पश्चिमी किनारे को राढ़ का मैदान कहा जाता है।

ब्रह्मपुत्र का मैदान

इसे असम के मैदान की ब्रह्मपुत्र घाटी के रूप में भी जाना जाता है, इसका अधिकांश भाग असम राज्य में स्थित है। यह मैदान लगभग 720 किलोमीटर लंबा है और इसकी औसत चौड़ाई 60 से 100 किलोमीटर है। यह 56 हजार वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है। यह ब्रह्मपुत्र तथा उसकी सहायक नदियों के निक्षेपण कार्य द्वारा निर्मित एक उन्नत मैदान है। मैदान की सामान्य ऊँचाई पूर्व में 130 मीटर से लेकर पश्चिम में 30 मीटर तक है।

बोध प्रश्न 4

उत्तरी मैदानों की प्रमुख स्थलाकृतियों की चर्चा कीजिए।

2.4.3 प्रायद्वीपीय पठार

विशाल मैदान के दक्षिण में स्थित और तीन तरफ से समुद्रों से घिरा पठारी क्षेत्र प्रायद्वीपीय भारत के रूप में जाना जाता है। यह तिकोने अकार का पठार है जिसका आधार उत्तर में और विशाल मैदान के दक्षिणी किनारे के अनुरूप है तथा कन्याकुमारी इसकी चोटी बनाती है। यह दक्षिण–पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, तेलंगाना तथा आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, तमिलनाडु और साथ ही झारखंड के कुछ हिस्सों में फैला हुआ है। पूर्व में मेघालय में इसका बाहरी भाग है। यह तीनों और से पहाड़ियों से घिरा हुआ है। इसके उत्तर में अरावली, विंध्य, सतपुड़ा और राजमहल पहाड़ियाँ हैं। इसके पश्चिमी और पूर्वी किनारों पर क्रमशः पश्चिमी घाट और पूर्वी घाट हैं। सम्पूर्ण पठार उत्तर से दक्षिण में लगभग 1600 किलोमीटर और पश्चिम से पूर्व दिशा में 1400 किलोमीटर तक है। प्रायद्वीपीय पठार 16 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैले एक प्राचीन सपाट खंड का हिस्सा है। यह कई बड़े और छोटे पठारों, पहाड़ी श्रृंखलाओं, द्रोणीयों और घाटियों में विभाजित है।

प्रायद्वीपीय पठार की उत्पत्ति

प्रायद्वीपीय पठार की आयु 500 मिलियन वर्ष आंकी गई है। भूवैज्ञानिकों के अनुसार यह पठार प्राचीन गोंडवानालैंड का हिस्सा है। यह पर्वत–निर्माण बलों से अप्रभावित रहा है। हालांकि, इसमें कार्बोनिफेरस काल के दौरान नर्मदा और ताप्ती नदियों की भ्रंश घाटियों द्वारा प्रमाणित/साक्ष्य के रूप में चट्टानों के खण्ड–भ्रंशन और विस्थापन से हुआ है। क्रिटेशियस काल में, बड़े पैमाने पर ज्वालामुखीयता से कई हजार मीटर की गहराई में लावा की मोटी चादरों से युक्त दक्कन ट्रैप का निर्माण किया।

निम्नलिखित शैल अथवा चट्टान प्रणाली यहां पाए जाते हैं।

- आर्कियन समूह
- धारवाड़ प्रणाली
- कडप्पा प्रणाली
- विंध्य प्रणाली
- गोंडवाना प्रणाली

प्रायद्वीपीय पठार के भौतिक विभाजन

पूर्वी राजस्थान उच्चभूमि

यह अरावली पर्वतमाला के पूर्व में स्थित है, जिसे मारवाड़ उच्चभूमि के नाम से भी जाना जाता है, जिसकी ऊंचाई 250–500 मीटर के बीच है। इसका ढाल पूर्व की ओर है।

केंद्रीय या मध्य उच्चभूमि (सेंट्रल अपलैंड्स)

मध्य उच्चभूमि को मध्य भारत पत्थर के रूप में भी जाना जाता है जो मारवाड़ उच्चभूमि के पूर्व में स्थित है। इसके अधिकांश भाग में चंबल नदी द्रोणी शामिल है। यह क्षेत्र बीहड़ों और बंजर भूमि के लिए प्रसिद्ध है।

मालवा का पठार

मालवा का पठार मोटे तौर पर विंध्य पहाड़ियों पर आधारित एक त्रिभुज बनाता है, जो पश्चिम में अरावली पर्वतमाला से घिरा है और पूर्व में बुंदेलखंड की ओर सीधी ढाल बनाता है। उत्तर में, पठार चंबल खड्ड द्वारा चिह्नित होते है। यह पठार ढलावदार मैदान के साथ अत्यधिक ऊबड़–खाबड़ होते हैं, जो सपाट–शीर्ष, वनाच्छादित पहाड़ी श्रृंखलाओं द्वारा अलग किए गए हैं।

बुंदेलखंड उच्चभूमि

यह यमुना नदी और विंध्य पठार के बीच स्थित है जिसकी औसत ऊंचाई 300–600 मीटर के बीच है।

- लगभग 54 हजार वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है।
- यहाँ घोंघे प्रकार की स्थलाकृति, मेसा, ब्यूट, लंबे और संकरे कटक और कई कृत्रिम झीलें हैं।

बघेलखण्ड पठार

यह मैकाल श्रेणी के पूर्व में और सोन नदी के दक्षिण में स्थित है। यह 1.4 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को आवृत करता है। इसकी ऊँचाई 150 से 1200 मीटर है और इसकी सतह असमान है।

छोटा नागपुर का पठार

बंगाल द्रोणी के पश्चिम में और बघेलखंड के पूर्व में स्थित, छोटानागपुर पठार अधिकांशतः झारखंड, उत्तरी छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल के पुरुलिया जिले में फैला है।

- इसका क्षेत्रफल 87 हजार वर्ग किलोमीटर है।
- इस पठार की औसत ऊँचाई 700 मीटर है। अधिकतम ऊँचाई (1100 मीटर) मध्य–पश्चिमी भाग में पाई जाती है, जिसे सामान्यतः पाटलैंड्स के रूप में जाना जाता है।
- छोटा नागपुर के पठार में विभिन्न उँचाई के साथ पठारों की एक श्रृंखला जैसे हजारीबाग पठार, रांची पठार और राजमहल पहाड़ियाँ आदि हैं।

मेघालय का पठार

यह प्रायद्वीपीय पठार का बाहरी भाग है। गारो राजमहल दरार, मेघालय के पठार को प्रायद्वीपीय पठार के मुख्य खंड से अलग करता है।

- यह पश्चिम में गारो पहाड़ियों (900 मीटर) और पूर्व में खासी–जयंतिया पहाड़ियों (1500 मीटर) से घिरा हुआ है।
- शिलांग की चोटी (1961 मीटर) सर्वाधिक ऊँची शिखर है।

दक्कन का पठार

यह भारत के प्रायद्वीपीय पठार का सर्वाधिक बड़ा भाग है जो लगभग 5 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को आवृत करता है। यह तिकोने आकार वाला पठार, उत्तर पश्चिम में पूर्वी और पश्चिमी घाटों, सतपुड़ा और विंध्य पहाड़ियों तथा उत्तर में महादेव और मैकल पहाड़ियों के बीच स्थित है।

- इसकी ऊंचाई 600 मीटर से 1000 मीटर तक है।
- इसका निर्माण ज्वालामुखीय क्रिया से हुआ था। लावा निक्षेपण की मोटाई 200 मीटर से अधिक है।

दक्कन के पठार को कई छोटे पठारों में विभाजित किया गया है। ये इस प्रकार हैं:

1. महाराष्ट्र का पठार

- यह दक्कन के पठार का उत्तरी भाग बनाता है।
- इसका अधिकांश क्षेत्र बेसाल्टिक चट्टानों से निर्मित है।
- क्षैतिज लावा शीट के कारण डेक्कन ट्रैप का निर्माण हुआ है।
- सम्पूर्ण क्षेत्र में काली कपासी मृदा पाई जाती है जिसे रेगुर कहा जाता है।

2. कर्नाटक का पठार

- इसे मैसूर पठार के रूप में भी जाना जाता है जो महाराष्ट्र पठार के दक्षिण में स्थित है।
- यह पठार मलनाद तथा मैदान नामक दो भागों में विभाजित है।

3. तेलंगाना का पठार

- इसका दक्षिणी भाग इसके उत्तरी भाग से ऊँचा है।
- सम्पूर्ण पठार को दो प्रमुख भौतिक भागो में विभाजित किया गया है, अर्थात् घाट (Ghats) और समप्राय भूमि (Peneplains)।

प्रायद्वीपीय पठार की पहाड़ी श्रृंखलाएँ

अरावली पर्वतमाला

प्रायद्वीपीय भारत के प्रमुख भूआकृति अरावली श्रेणी है जो गुजरात से राजस्थान होते हुए दिल्ली तक दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व दिशा में लगभग 800 किलोमीटर तक फैली हुई है।

- यह कैम्ब्रियन पूर्व काल में निर्मित विश्व की सर्वाधिक प्राचीन पर्वत श्रृंखला का अवशेष है।
- इसकी औसत ऊंचाई 400–600 मीटर के बीच है, परन्तु माउंट आबू के पास, गुरु शिखर (1722 मीटर) सर्वाधिक ऊंची चोटी है।

विंध्य पर्वतमाला

मालवा पठार के दक्षिणी किनारे से, विंध्य पर्वतमाला लगभग 1200 किलोमीटर की दूरी तक फैली हुई है, जिसकी औसत ऊँचाई 300 मीटर से 650 मीटर तक है। इसका उत्थान नर्मदा नदीतल से होता है।

सतपुड़ा पर्वतमाला

यह उत्तर में नर्मदा और दक्षिण में ताप्ती की घाटी के बीच स्थित है। सतपुड़ा श्रेणी में पंचमढ़ी (1350 मीटर) सर्वाधिक ऊंचाई पर है। इस श्रेणी के पूर्वी भाग को मैकाल पठार

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

के नाम से जाना जाता है। मैकाल श्रेणी का उत्तर–दक्षिण दिशा में फैलाव है और अमरकंटक (1127 मीटर) इसकी अधिकतम ऊंचाई है।

पश्चिमी घाट (सह्यद्रि)

पश्चिमी घाट दक्कन के पठार के पूर्वी किनारे का निर्माण करते हैं। पश्चिमी घाट महाराष्ट्र में तापी घाटी (21°N) से कन्याकुमारी (11°N) तक उत्तर–दक्षिण दिशा में स्थित हैं। ये घाट पश्चिमी तट के समानांतर लगभग 1600 किलोमीटर तक फैली हैं। अरब सागर के तरफ खड़ी ढाल से व्यापक निमज्जन का संकेत मिलता है। पश्चिमी घाट में डोडा बेट्टा (2637 मीटर), अनाईमुडी (2695 मीटर), मकुर्ती (2554 मीटर), वावुल माला (2339 मीटर), महाबलेश्वर (1438 मीटर), कलासुबाई (1646 मीटर) और कुद्रेमुख (1892 मीटर) सर्वाधिक ऊंची चोटियाँ हैं। अनाच्छादन के कारण घाट में सीढ़ीनुमा स्थलाकृति मिलती हैं। इस घाट में तीन दरार (Gaps) है जिसे थालघाट (583 मीटर), भोरघाट (630 मीटर), और पालघाट (305 मीटर) के नाम से जाना जाता है।

पूर्वी घाट

दक्कन के पठार के पूर्वी किनारे की सीमा पर, पूर्वी घाट भारत के पूर्वी तट के लगभग समानांतर हैं और उसके आधार और तट के बीच विस्तृत मैदान मिलते हैं। पश्चिमी घाटों के विपरीत, पूर्वी घाट अविरत नहीं है एवं निम्न पट्टी हैं, जो पूर्वी तट के समानांतर स्थित हैं तथा महानदी घाटी के दक्षिण से तमिलनाडु में वैगई तक लगभग 800 किलोमीटर की दूरी तक फैला है।

उच्चावच और संरचना के आधार पर, पूर्वी घाटों को उत्तरी और दक्षिणी भागों में विभाजित किया जा सकता है। उत्तरी भाग में महानदी और गोदावरी के बीच, 200 किलोमीटर की चौड़ाई के साथ पूर्वी घाट उत्तर में पहाड़ी के रूप में नजर आता है जिसकी चौड़ाई दक्षिण में 100 किलोमीटर होती है। महेंद्र गिरी (1501 मीटर) सबसे ऊंची चोटी है।

प्रायद्वीपीय पठार का महत्त्व

1. पठार उपयोगी खनिजों जैसे मैंगनीज, लौह अयस्क, बॉक्साइट, सोना, तांबा, कोयला तथा हीरा आदि से समृद्ध हैं।
2. दक्कन के पठार की काली कपास मिट्टी कपास और गन्ना उगाने के लिए अनुकूल है।
3. पश्चिमी घाट और अन्य पहाड़ियों में घने जंगल हैं जिसमे सागौन, महोगनी, बांस, टीक, एबोनी, साल आदि सहित मूल्यवान लकड़ियाँ मिलती हैं।
4. पश्चिमी घाट जंगली जानवरों और पक्षियों के लिए प्राकृतिक आवास हैं।
5. प्रायद्वीपीय पठार से बहने वाली नदियाँ अपने मार्ग में अनेक जलप्रपात बनाती हैं जिनका उपयोग जलविद्युत उत्पन्न करने के लिए किया गया है।
6. ऊटी, पंचमढ़ी और महाबलेश्वर आदि कई पहाड़ी सैरगाह (hill resorts) देश–विदेश के पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

2.4 तटीय मैदान और द्वीप

प्रायद्वीपीय पठार के किनारों और भारत की तटरेखा के बीच 7516.6 किलोमीटर (6100 किलोमीटर मुख्य भूमि तटरेखा और 1197 किलोमीटर भारतीय द्वीपों की तटरेखा) की संकीर्ण तटीय पट्टी को तटीय मैदान कहा जाता है। पश्चिमी घाट और अरब सागर तट के बीच के क्षेत्र को पश्चिमी तटीय मैदान कहा जाता है और पूर्वी घाट और बंगाल की खाड़ी के बीच के क्षेत्र को पूर्वी तटीय मैदान कहा जाता है।

पूर्वी तटीय मैदान

पूर्वी तटीय मैदान उत्तर में सुवर्णरेखा मैदान से दक्षिण में कन्याकुमारी तक फैला है। यह 1500 किलोमीटर तक फैला है, जिसकी चौड़ाई लगभग 100 किलोमीटर है। पश्चिमी तटीय मैदान की तुलना में पूर्वी तटीय मैदान चौड़ा है। महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों के डेल्टा इस मैदान के लगभग 25ः क्षेत्र को आवृत करते हैं।

पूर्वी तटीय मैदान को भौगोलिक दृष्टि से निम्न भागों में उप–विभाजित किया जा सकता हैः

a) कोरोमंडल तट (तमिलनाडु तट और आंध्र तट के कुछ हिस्सों को संयुक्त रूप से कोरामंडल तट के रूप में जाना जाता है)।

b) उत्तरी सरकार तट (महानदी और कृष्णा नदियों के बीच तथा कृष्णा और कावेरी नदियों के बीच कर्नाटक)।

राज्यवार इसे निम्न प्रकार से विभाजित किया जा सकता हैः

उत्कल मैदान

- उत्कल मैदान में लगभग 400 कि.मी. लंबे ओडिशा के तटीय क्षेत्र शामिल हैं।
- इसमें महानदी डेल्टा भी शामिल है।

आंध्र का मैदान

- उत्कल मैदान के दक्षिण में स्थित है और पुलिकट झील तक फैला हुआ है। इस झील को श्रीहरिकोटा द्वीप बालू गर्त से बाधित किया गया है।
- गोदावरी और कृष्णा नदियों द्वारा निर्मित डेल्टा इस मैदान की सबसे महत्वपूर्ण आकृति एवं विशेषता है।

तमिलनाडु का मैदान

- तमिलनाडु का मैदान पुलिकट झील से तमिलनाडु के तट पर कन्याकुमारी तक 675 कि.मी. में फैला है। इसकी औसत चौड़ाई 100 किलोमीटर है।

- इस मैदान की सबसे महत्वपूर्ण आकृति एवं विशेषता कावेरी डेल्टा है जहां मैदान 130 किमी चौड़ा है।

- उपजाऊ मिट्टी और व्यापक सिंचाई सुविधाओं ने कावेरी डेल्टा को दक्षिण भारत का अन्न भंडार बना दिया है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

पूर्वी तटीय मैदान में टिब्बा और लैगून

पूर्वी तटीय मैदानों में कई रेत के टीले, लैगून और दलदली भूमि मौजूद हैं। रेत के टीलों की लंबाई 1–4 किलोमीटर और ऊँचाई 60–65 मीटर के बीच है। रेत के टीलों और तट के बीच लैगून स्थित हैं। ये समुद्र से मामूली रूप से जुड़े होते हैं, जैसे उत्कल तट पर चिल्का झील, आंध्र तट पर कोल्लेरू और पुलिकट झीलें।

पश्चिमी तटीय मैदान

यह उत्तर में कच्छ के रण से दक्षिण में कन्याकुमारी तक फैला हुआ है। पूर्व में यह पश्चिमी घाटों की खड़ी ढलानों से घिरा है तथा इसके पश्चिम में अरब सागर है। पूर्वी तटीय मैदान की तुलना में पश्चिमी तटीय मैदान संकरा है। पश्चिमी तटीय मैदान कच्छ तट से कन्याकुमारी तक संकरा होता जाता है। पश्चिमी तटीय मैदान की औसत चौड़ाई 65 कि.मी. है।

कच्छ और काठियावाड़ प्रदेश

कच्छ और काठियावाड़, हालांकि प्रायद्वीपीय पठार का विस्तार (क्योंकि काठियावाड़ दक्कन लावा से बना है और कच्छ क्षेत्र में तृतीयक काल की चट्टानें हैं) समतल होने के कारण, पश्चिमी तटीय मैदानों का भाग माना जाता है। कच्छ प्रायद्वीप, सागर और लैगून से घिरा एक द्वीप था। इस सागर और लैगून में, इस प्रदेश से बहने वाली सिंधु नदी द्वारा लाए गए अवसाद या तलछट जमा हो गए। वर्षा के अभाव में यह शुष्क और अर्ध–शुष्क स्थलस्वरूप में बदल गया है। कच्छ के उत्तर में लवणयुक्त मैदान 'महान रण' है। इसके दक्षिणी भाग को 'लिटिल रण' के नाम से जाना जाता है।

गुजरात का मैदान

यह पश्चिमी तट का उत्तरी भाग है एवं चौड़ा है। काठियावाड़ और कच्छ प्रायद्वीप के पूर्व में, गुजरात के दक्षिणी भाग सहित पश्चिम और दक्षिण–पश्चिम में स्थित मैदानी क्षेत्र और खंभात की खाड़ी के तटीय क्षेत्रों को गुजरात का मैदान कहा जाता है।

- यह नर्मदा, तापी, माही और साबरमती नदियों द्वारा निर्मित है।
- इस मैदान का पूर्वी भाग कृषि हेतु उपजाऊ है, लेकिन तट के पास का बड़ा हिस्सा लोएस (रेत के ढेर) से ढका हुआ है।

कोंकण का मैदान

- गुजरात के मैदान के दक्षिण में कोंकण का मैदान दमन से गोवा (50 से 80 किमी चौड़ा) तक फैला हुआ है।
- इसमें सागरीय अपरदन की कुछ आकृतियाँ पाई जाती हैं जिसमें शैल–भित्ति, माधस्थल, भृगु (cliffs) और अरब सागर में द्वीप शामिल हैं।

कर्नाटक तटीय मैदान

- कोंकण तट के दक्षिण में यह मैदान उत्तर में गोवा और दक्षिण में मैंगलोर के बीच 225 किलोमीटर में फैला है। यह 30–50 किलोमीटर की औसत चौड़ाई वाला एक संकरा मैदान है, जिसकी मैंगलोर के पास सर्वाधिक लंबाई 70 किलोमीटर है।

- शरवती इस खड़ी ढलान से उतरते समय शरावती नदी पर 271 मीटर ऊँचा एक जलप्रपात बनाती है जिसे गेरसोप्पा (जोग) नाम से जाना जाता है।
- इसके तट पर सागरीय स्थलाकृति मिलती है।

केरल का मैदान

- मैंगलोर और कन्याकुमारी के बीच स्थित इसे मालाबार मैदान के नाम से भी जाना जाता है।
- झीलें, लैगून, पश्चजल आदि इसकी महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं।
- पश्चजल, जिसे स्थानीय रूप से कायल (पर्यटन के लिए प्रसिद्ध) के रूप में जाना जाता है, समुद्र के उथले लैगून या प्रवेश द्वार हैं, जो समुद्र तट के समानांतर स्थित हैं।

भारत के तटीय मैदानों का महत्व

1. भारत की तटरेखा एक समान और नियमित है, बड़े खाड़ी या प्रवेशिका (इनलेट्स) द्वारा थोड़ा इंडेंट (दांतेदार) बनाया गया है। पश्चिमी तट में छोटे प्रवेश द्वार हैं जिनमें मुंबई, मरमोरा, कोचीन और न्यू मैंगलोर जैसे कुछ प्राकृतिक बंदरगाह है। पूर्वी तट में केवल विशाखापत्तनम ही प्राकृतिक बंदरगाह है।
2. पश्चिमी तटीय मैदान मसाले उगाने के लिए प्रसिद्ध हैं और दूसरी ओर पूर्वी तट चावल, ताड़, सुपारी और नारियल उगाने के लिए जाना जाता है।
3. पश्चजल (Backwaters), झीलें और लैगून मत्स्यन के लिए आदर्श हैं।
4. तटीय मैदान प्राचीन काल से ही अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वाणिज्य के केंद्र रहे हैं।
5. गोवा में मुडगांव समुद्र तट, मुंबई में जुहू समुद्र तट, समुद्र पर गोपालपुर, और ओडिशा में पुरी और चेन्नई समुद्र तट लंबे समय से पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।
6. केरल तट में मोनाजाइट का प्रचुर भंडार है और मुंबई के अपतटीय क्षेत्रों में पेट्रोलियम के भंडार प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

भारतीय द्वीप समूह

भारत के पास बंगाल की खाड़ी (204 द्वीप) और अरब सागर (43 द्वीप) में 247 द्वीप हैं। द्वीपों के दोनों समूह अपनी भूवैज्ञानिक संरचना में एक दूसरे से भिन्न हैं। बंगाल की खाड़ी के द्वीप तृतीयक पर्वतन (ऑरोजेनी) से जुड़े हैं जबकि अरब सागर के द्वीपों का मूल प्रवाल है।

भारतीय तटों के पास बड़ी संख्या में द्वीपों के अलावा, दो अन्य मुख्य समूह हैं।

अरब सागरीय द्वीप समूह

तट से 5 किलोमीटर की दूरी के भीतर स्थित अपतटीय द्वीपों में काठियावाड़ (गुजरात) के पास पीराम, भैंसला, हेनरी, कैनरी, कसाई, एलीफेंटा, अर्नाला (द्रोणी क्षेत्र में), भटकल और पिजऑनकॉक आदि, (मैंगलोर के उत्तर), दीव, वैद, नोरा, पिर्तन, खारियाबेट, अलीबेट, आदि (गुजरात में) शामिल हैं।।

सुदूर द्वीपों में लक्षद्वीप, मिनिकॉय और अमीनदीव शामिल हैं। लक्षद्वीप द्वीप मुख्य भूमि से 200–300 किलोमीटर की दूरी पर 108.78 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में स्थित हैं। मिनिकॉय द्वीप (4.3 वर्ग कि.मी.) दक्षिण की ओर स्थित है।

बंगाल की खाड़ी द्वीप समूह

अंडमान द्वीप समूह 6°45´N और 13°45´N अक्षांशों और 92°10´E और 93°15´E देशांतर के बीच लगभग 8300 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में स्थित हैं। उत्तर और मध्य अंडमान अत्यधिक विच्छेदित है और घने जंगलों से घिरा है तथा ऊंचाई में 730 मीटर तक है। दक्षिण अंडमान बड़े पैमाने पर समतल निम्नभूमि है।

निकोबार द्वीप समूह जिसमें 19 द्वीप हैं, 6°3′ उत्तर और 9°3′ उत्तरी अक्षांशों के बीच स्थित है। ग्रेट निकोबार 862 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र के साथ सबसे बड़ा द्वीप है। लिटिल निकोबार, कच्छल, कॉमर्टा, ट्रिंकेट, नानकोव्री, टेरेसा और तिलनचाग अन्य महत्वपूर्ण द्वीप हैं। पोर्ट ब्लेयर के उत्तर में स्थित बैरेन और नारकोंडम द्वीप ज्वालामुखी द्वीप हैं।

इस प्रकार, आपने भारत के प्रमुख भू–आकृतिक खंड या भौतिक प्रदेशो तथा इसके महत्व का विस्तृत अध्ययन किया है।

बोध प्रश्न 5

उपयुक्त उदाहरणों के साथ भारतीय द्वीपों की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

2.5 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा है:

- आपने सीखा है कि भू–आकृति विज्ञान भू–आकृति विज्ञान और भूविज्ञान की वह शाखा है जो वर्तमान स्थलाकृतियों के विकास से संबंधित है।
- भारत की वर्तमान स्थलरूपों का निर्माण विभिन्न भूवैज्ञानिक काल में और भू–जलवायु प्रक्रियाओं के कारण हुआ है।
- पर्वतीय क्षेत्र तृतीयक काल के महान पर्वतन के अंतर्गत आता है जबकि प्रायद्वीपीय भारत में लंबे समय तक क्रस्टल (भूपर्पटी) विरूपण नहीं हुआ है। परिणामस्वरूप, प्रायद्वीपीय भारत की स्थलाकृति में भूपृष्ठीय अनाच्छादन हुआ है।
- भारत के विशाल मैदानों का निर्माण सिंधु–गंगा और ब्रह्मपुत्र नदी प्रणाली की नदियों के द्वारा अवसाद निक्षेपण और उन्नयन कार्य के कारण हुआ है।
- भूगर्भीय संरचना और इतिहास में अंतर के कारण भारत की उच्चावच में बहुत विविधता है।

2.6 अंतिम प्रश्न

1. हिमालय के अनुदैध्य या देशांतरीय विभाजन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए

2. उत्तरी मैदानों के निर्माण का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

3. सिंधु–गंगा के मैदान पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

4. भारत के प्रमुख भू–आकृतिक खंडों या भौतिक प्रदेशों के नाम लिखिए। भारत के तटीय मैदानों और द्वीप समूह का संक्षिप्त विवरण लिखिए।

5. दक्कन के पठार का विवरण दीजिए।

2.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1. भारत की एक अद्वितीय भूआकृतिक विशेषता है। यह उत्तर में महान हिमालय पर्वत, विशाल उत्तरी मैदान, पश्चिम में थार मरुस्थल, दक्षिण में प्रायद्वीपीय पठार, बड़ी नदियों और तटीय मैदानों से घिरा है। ये सभी विन्यास भारत के भौतिक विशेषताओं को और अधिक महत्वपूर्ण बनाती हैं।

2. स्थलाकृति या भू–आकृति विकास वह प्रक्रिया है जिसमें स्थलाकृति का निर्माण एवं विकास होता है। यह स्थलाकृति के विकास प्रमुख कारकों और इसके अतीत और वर्तमान भूवैज्ञानिक विशेषताओं से संबंधित हैं। अंतर्जात और बहिर्जात बलों ने पृथ्वी की विभिन्न स्थलीय एवं अधःस्थलीय आकृतियों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्लेट विवर्तिनीकी एवं महाद्वीपीय प्रवाह सिद्धांत से पृथ्वी की सतह के भौतिक पहलुओं और भू–आकृति विकास के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

3. प्रो. एस. पी. चटर्जी (1973) ने हिमालय क्षेत्र को पश्चिम से पूर्व की ओर 5 क्षेत्रों में विभाजित किया है। यह हैं कश्मीर हिमालय, हिमाचल प्रदेश हिमालय, कुमाऊं हिमालय (उत्तराखंड हिमालय), मध्य हिमालय और पूर्वी हिमालय इत्यादि।

4. उत्तर भारत के विशाल मैदान समरूप है तथा अत्यधिक क्षैतिज और कम ऊंचाई इसकी विशेषता है। यह विशाल क्षेत्र विशिष्ट जलीय प्रारूप, प्रवाह की दिशाओं और भू–आकृति विज्ञान को प्रदर्शित करता है। इन्हें राजस्थान का मैदान, पंजाब–हरियाणा का मैदान, गंगा का मैदान और ब्रह्मपुत्र का मैदान कहा जाता है। इन सभी मैदानों की विभिन्न निर्माण एवं विकास प्रक्रियाएं हैं।

5. भारत के पास बंगाल की खाड़ी (204 द्वीप) और अरब सागर (43 द्वीप) में 247 द्वीप हैं। द्वीपों के दोनों समूह अपनी भूवैज्ञानिक संरचना में एक दूसरे से भिन्न हैं। बंगाल की खाड़ी के द्वीप तृतीयक पर्वतन से जुड़े हैं जबकि अरब सागर के द्वीप समूह प्रवाल मूल के हैं।

अंतिम प्रश्न

1. इस प्रश्न का उत्तर देते समय आपको पश्चिम से पूर्वी भागों में फैले हिमालय के देशांतरीय भागों को आवृत करना चाहिए। आप उप–अनुभाग 2.2.2 का उल्लेख कर सकते हैं।

2. आपके उत्तर में भारत के उत्तरी मैदानों के निर्माण और इसके महत्व को संक्षेप में शामिल किया जाना चाहिए। आप उप–भाग 2.2.3 का संदर्भ ले सकते हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

3. आप सिंधु–गंगा के मैदान की प्रमुख विशेषताओं पर चर्चा करेंगे। आप उप–अनुभाग 2.2.4 का संदर्भ ले सकते हैं।

4. आप भारत के प्रमुख भू–आकृतिक खंडों या भौतिक प्रदेशों के बारे में लिखेंगे और आपको भारत के तटीय मैदानों तथा द्वीप समूह का संक्षिप्त विवरण देना चाहिए। आप उप–भाग 2.2.5 का संदर्भ ले सकते हैं।

5. आप अपने उत्तर में दक्कन के पठार की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकते हैं। आप उप–अनुभाग 2.2.5 का संदर्भ ले सकते हैं।

2.8 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

- Chatterjee, S. P. (1999). *India: A Physical Geography,* publication division, Government of India, New Delhi.
- Gautam, Alka (2006). *Advanced geography of India.* Sharda Pustak Bhandar, Allahabad.
- Khullar, D. R. (2006): *India: A Comprehensive Geography*. Kalyani Publishers Ludhiana.
- Singh, R. L. (ed.) (1971). *India: A Regional Geography*. National Geographical Society of India, UBS publisher, Varanasi.
- Kayastha, S. L. (1964). *The Himalayan Beas, Basin: A Study in Habitat, Economy and Society* BHU Press, Varanashi. p-209.
- Negi, J, G, Pande, O. P & Agarwal, P. K (1986). Super-mobility of hot Indian Lithosphere. *Tectonophysics*. Volume 131, issues 1-2 Volume 131, Issues 1–2, 15 November 1986, Pages 147-156
- Ahmad, E. (1962): Geomorphic Regions of Peninsular India, *Journal of Ranchi university*, Vol. 3, no. 1 pp. 1-29
- Johnson, B. L. C. (1969): *South Asia,* Heinemann Educational Books Ltd London
- Krishnan, M. G. (1982): *Geology of India and Burma*, CAS publishers and Distributors, Delhi
- Mathur, M. S. (2004): *Physical Geology of India*, National Book Trust, India New Delhi
- Robinson, H. (1967): *Monsoon Asia: A Geographical Survey*
- Spate, O. H. K., and Learmonth, A.T.A. (1965): *India and Pakistan: A General and Regional Geography* Metheuss & Co. Lt d.
- Wadia, D. N. Meher (1993): *Geology of India*, McGraw Hill, New Delhi
- Farmer, B. H. (1983). *An Introduction to South Asia.* London: Methuen
- Shafi, M. (2000). *Geography of South Asia*, Calcutta: McMillan & Co.
- Deshpande, C. D. (1992). *India – A Regional Interpretation.* New Delhi, ICSSR, and Northern Book Centre.

इकाई 3

अपवाह तंत्र

संरचना

3.1 परिचय
अपेक्षित सीखने के परिणाम
3.2 भारत का अपवाह तंत्र
3.3 हिमालयी अपवाह तंत्र
3.4 हिमालयी अपवाह तंत्र की उत्पत्ति
3.5 सिंधु नदी तंत्र
3.6 गंगा नदी तंत्र
3.7 ब्रह्मपुत्र नदी तंत्र
3.8 प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र एवं इसकी उत्पत्ति
3.9 प्रायद्वीपीय अपवाह की प्रमुख नदी तंत्र
3.10 भारत की प्रमुख नदी द्रोणीयां
3.11 सारांश
3.12 अंतिम प्रश्न
3.13 उत्तर
3.14 संदर्भ/आगे सुझावित पाठ्य सामग्री

3.1 परिचय

भारतीय उपमहाद्वीय अनेकों भौतिक विशेषताओं की एक महान विविधता से निर्मित हुआ है, जो वृहत एवं लघु नदीयों की प्रणाली से युक्त है। नदीयाँ भारत में प्राकृतिक संसाधनों में से एक महत्त्वपूर्ण संसाधन है, जो कृषि, औद्योगिक गतिविधियों, घरेलू उपयोग, जल कृषि, आंतरिक जल परिवहन, एवं जल विद्युत उत्पादन इत्यादि के लिए जल उपलब्ध करती हैं। भारतीय नदीयाँ अपने मार्ग में विविध प्रकार की भू–आाकृतिक लक्षणों जैसे जलप्रपात, भृगू, क्षिप्रिका, घाटियों, बाढ़ के मैदानों एवं डेल्टा का निर्माण करती हैं। भारत में 120 सेंटीमीटर औसत वार्षिक वर्षा होती है। भारतीय नदीयों में जल की वार्षिक उपज 1,858,100 मिलियन घन मीटर है। जल की कुल उपज में से ब्रह्मपुत्र नदी एक तिहाई से अधिक (33.8%), गंगा नदी का (25.2%), गोदावरी नदी का (6.4%), सिंधु एवं नर्मदा नदी का (2.9%) का योगदान है।

इस इकाई में, भारत की अपवाह तंत्र एवं इसके वर्गीकरण पर अनुभाग 3.2 में दिए गए अनुसार चर्चा की गई है। हिमालयी अपवाह तंत्र एवं इसकी उत्पत्ति पर अनुभागों 3.3 तथा 3.4 में चर्चा की गई है। आगामी अनुभागों 3.5, 3.6 और 3.7 में, हिमालय की प्रमुख नदी प्रणालियों पर विस्तृत चर्चा की गई है। इसके अलावा, प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र और इसकी उत्पत्ति को अनुभाग 3.10 में प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र की प्रमुख नदी प्रणालियों का विस्तृत चित्रण प्रस्तुत किया गया है। भारत के प्रमुख नदी द्रोणियों की पहचान करके अनुभाग 3.11 में चर्चा की गई है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई का अध्ययन पूर्ण करने के पश्चात्, आप निम्नलिखित में सक्षम होने चाहिए:

- भारत की प्रमुख नदी प्रणलियों की पहचान करने में;
- हिमालयी एवं प्रायद्वीपीय अपवाह प्रणालियों की व्याख्या करने में;
- हिमालयी एवं प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्रों के वितरण एवं प्रतिरूप का वर्णन करने में; तथा
- भारत की प्रमुख नदी द्रोणियों के आकार एवं वितरण की पहचान करने में।

3.2 भारत का अपवह तंत्र

आप सभी भारत की नदीयों से सुपरिचित हैं जो हमारे द्वारा पुरातन काल से पूजनीय अथवा श्रद्धेय हैं और हमारी आर्थिक गतिविधियों के लिए जीवन रेखा के रूप में कार्य करती हैं। इस इकाई में, आप इन नदी प्रणालियों के संबंध में विस्तारपूर्वक सीखेंगे। व्यापक तौर पर, भारत की अपवाह तंत्रों को अनेकों आधारों पर विभाजित किया जा सकता है। इनका निम्नलिखित के आधार पर प्रमुख वर्गीकरण भी किया जा सकता है:

1. **उत्पत्तिः** उत्पत्ति के आधार पर, व्यापक तौर पर भारतीय नदीयों को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है (i) हिमालयी नदी तंत्र, जिसमें गंगा, सिंधु, ब्रह्मपुत्र और इनकी सहायक नदीयाँ शामिल हैं। (ii) प्रायद्वीपीय नदी तंत्र, जिसमें भारतीय नदीयाँ जैसे नर्मदा, तापी, कृष्णा, महानदी, कावेरी, गोदावरी एवं इनकी सहायक नदीयाँ शामिल हैं।

2. **समुद्र की तरफ अभिविन्यासः** भारतीय अपवाह तंत्र की द्वितीय वर्गीकरण की योजना समुद्र की तरफ नदीयों के अभिविन्यास पर आधारित है अर्थात् (i) बंगाल की खाड़ी में प्रवाहित होने वाली नदीयाँ, तथा (ii) अरब सागर में प्रवाहित होने वाली नदीयाँ।

   भारत का अधिकांश अपवाह तंत्र बंगाल की खाड़ी की तरफ उन्मुख है, जोकि 77 प्रतिशत है। इसमें गंगा, ब्रह्मपुत्र, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, महानदी एवं पेन्नेर इत्यादि नदीयाँ वृहत संख्या में सम्मिलित हैं।

   जबकि भारतीय अपवाह तंत्र का 23% क्षेत्र अरब सागर की तरफ उन्मुख है। इस अपवाह क्षेत्र को नदीयों जैसे सिंधु, साबरमती, माही, नर्मदा एवं तापी इत्यादि द्वारा सींचा जाता है।

3. **जलग्रहण क्षेत्र का आकारः** जलग्रहण क्षेत्र के आधार पर, भारतीय नदीयों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है (i) 2,000 वर्ग किलोमीटर से कम जलग्रहण क्षेत्र वाले नदी द्रोणियों को 'लघु नदी द्रोणी' के रूप में जाना जाता है। (ii) 2,000 एवं 20,000 वर्ग किलोमीटर के मध्य जलग्रहण क्षेत्र वाले नदी द्रोणियों को 'मध्यम नदी द्रोणी' के रूप में जाना जाता है, तथा (iii) 20,000 वर्ग किलोमीटर और इससे अधिक जलग्रहण क्षेत्र वाले नदी द्रोणियों को 'प्रमुख नदी द्रोणी' के रूप में जाना जाता है।

नीचे दिए गए चित्र 8.1 में भारत की अपवाह तंत्र को दर्शाया गया है। भारतीय अपवाह तंत्र के वर्गीकरण का अध्ययन करने के पश्चात्, आप आगामी अनुभागों में भारतीय अपवाह तंत्र के दो प्रमुख तंत्रों को विस्तार से सीखेंगे।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 1

समुद्र की तरफ अभिविन्यास के आधार पर, भारतीय अपवाह तंत्रों की दो श्रेणियां कौन सी है?

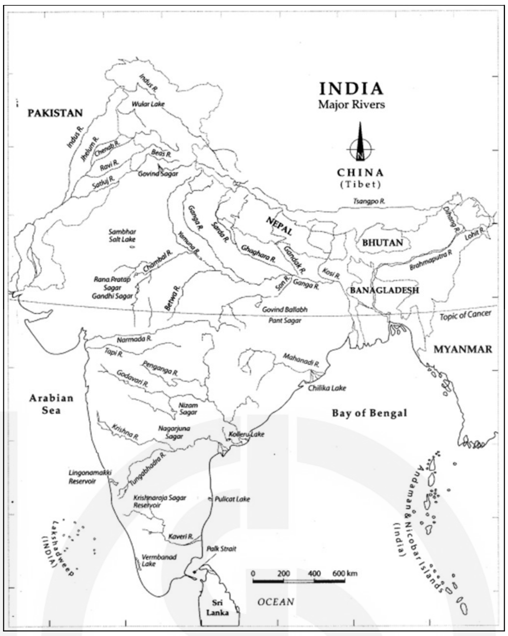

चित्र 3.1: भारतीय अपवाह तंत्र

3.3 हिमालय अपवाह तंत्र

हिमालयी नदी प्रणाली में सिंधु, गंगा एवं ब्रह्मपुत्र नदी प्रणालियाँ सम्मिलित हैं। अपने मार्गों में किए गए अपरदनात्मक गतिविधि के परिणामस्वरूप, इनमें से कुछेक नदीयाँ क्षिप्रिका एवं जलप्रपात एवं वी–आकार की घाटियाँ तथा गहरे महाखडड् का निर्माण करती हैं, विशेषतया पर्वतों में स्थित अपने ऊपरी मार्गों में मैदानी भागों में प्रवेश करने के पश्चात्, ये नदीयाँ निक्षेपण लक्षणों जैसे बाढ़ के मैदानों, चापझीलों, समतल घाटियों एवं डेल्टाओं का निर्माण करती हैं। यह नदीयाँ बारहमासी प्रकृति की होती हैं क्योंकि यह हिम पिघलन एवं मौसमी वर्षा से भी जल प्राप्त करते हैं। चित्र 3.2 हिमालय अपवाह तंत्र को दर्शाया गया है।

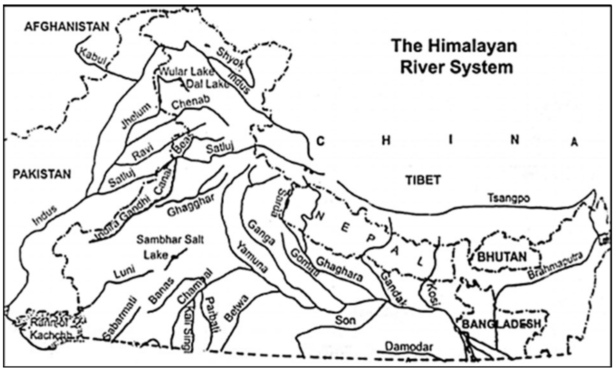

चित्र 3.2: हिमालय अपवाह तंत्र

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

3.4 हिमालय अपवाह तंत्र की उत्पति

यहां पर हिमालयी नदियों की उत्पति के संबंध में विविध दृष्टिकोण मिलते हैं। कई भूवैज्ञानिकों का विश्वास है कि मध्यनूतन काल के दौरान, एक प्रबल नदी जिसे वह शिवालिक अथवा इंडो–ब्रहम कहते हैं, जो असम से लेकर पंजाब तक हिमालय की संपूर्ण लंबाई के समांतर बहती थी और अंततः यह सिंध की खाड़ी में प्रवाहित हो गई। यह विश्वास किया जाता है कि समय के साथ यह नदी तीन अपवाह तंत्रों में विभाजित हो गई, नामत्; (i) मध्य भाग में, गंगा एवं इसकी सहायक नदीयों का निर्माण किया (ii) भारत के पूर्वी भाग में, यह विभाजित हो गई, और ब्रह्मपुत्र एवं इसकी सहायक नदीयों का निर्माण हुआ, जबकि (iii) पश्चिम भाग में, यह सिंधु नदी एवं इसकी सहायक नदीयों में विभाजित हो गई। अत्यंतनूतन काल के दौरान घटित पोटवार पठार सहित हिमालय के प्रोत्थान की प्रक्रिया को उत्तरदायी माना गया है। पोटवार पठार के उत्थान की वजह से, गंगा नदी एवं सिंधु नदी के बीच जल विभाजक का निर्माण हुआ। जबकि, बंगाल की खाड़ी की ओर प्रवाहित होने वाली ब्रह्मपुत्र एवं गंगा नदी की अपसरिता प्रणाली को मध्य–अंतयंतनूतन अवधि के दौरान मेघालय पठार एवं राजमहल पहाड़ियों के मध्य मालदा रिक्ति क्षेत्र के कोमल पिच्छ क्षेपण को उत्तरदायी ठहराया गया है।

3.5 सिंधु नदी तंत्र

सिंधु नदी तिब्बती पठार में कैलाश श्रृंखला के दक्षिणी पार्श्व पर 5,182 मीटर की ऊँचाई पर स्थित हिमनदी से उत्पन्न होती है। स्रोत से लेकर मुहाने तक, सिंधु नदी की कुल लंबाई 2,897 किलोमीटर है। सिंधु नदी भारत की सबसे पश्चिमी नदी तंत्र है। इस नदी को सिंधु घाटी सभ्यता को उद्‌गम के रूप में भी जाना जाता है।

आप सभी जानते हैं कि सिंधु नदी विश्व की सबसे वृहत नदी तंत्रों में से एक है। भारत में 4,026 मीटर की ऊँचाई पर प्रवेश करके, यह उत्तर–पश्चिम दिशा की ओर जांस्कर एवं लद्दाख पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य निरंतर प्रवाहित होती रहती है। लगभग 2,700 मीटर की उँचाई पर श्योक नदी इसमें मिल जाती है।

द्रास, जांस्कर, हुंज़ा, शिगर एवं गोरथांग इत्यादि महत्त्वपूर्ण हिमालयी सहायक नदीयाँ हैं, जो सिंधु नदी से मिलती हैं। सिंधु नदी को 'पंचनाद' द्वारा जोड़ा जाता है, झेलम, चिनाब, रावी, सतलुज एवं ब्यास, जोकि मैदानों में प्रवेश करने के बाद इन पांच नदियों के नाम हैं। सिंधु नदी के दाएं किनारे से उत्पन्न होने वाली सहायक नदियाँ संगर, गोमल, खुर्रमंद एवं लोधी हैं जो सुलेमान पर्वत श्रृँखला से उत्पन्न होती हैं, अंततः, सिंधु नदी कराची के दक्षिण में डेल्टा का निर्माण करने के पश्चात् अरब सागर में प्रवाहित होती है।

1. **झेलमः** यह नदी कश्मीर के दक्षिण–पूर्वी भाग में स्थित वैरीनाग नामक स्थान से उत्पन्न होती है। झेलम नदी की कुल लंबाई 724 किलोमीटर है। सिंधु–पाकिस्तान सीमा तक, झेलम नदी का जलग्रहण क्षेत्र 34,775 वर्ग किलामीटर है। झेलम नदी अपने स्रोत से निकलकर बुलर झील में प्रवाहित होती है और आगे चलकर दक्षिण–पश्चिम दिशा में प्रवाहित होती है एवं भारत–पाकिस्तान सीमा के 170 किलोमीटर के क्षेत्र में एक गहरी संकरी महाखडड् के द्वारा पाकिस्तान में प्रवेश करती है। यह पाकिस्तान में त्रिमू नामक स्थान पर चिनाब नदी में जुड़ती है।

2. **चिनाबः** चंद्रा एवं भागा नामक दो सरिताओं के संगम के पश्चात् चिनाब नदी का नाम पड़ा है। चंद्रा एवं भागा नदियाँ महान हिमालयी पर्वत श्रृंखलाओं के बारा लाचा दर्रे के पास स्थित लाहौल–स्पीति जिले में चंद्रताल एवं सूरजताल झील से उत्पन्न होती है। तांदी नामक स्थान पर, चद्रा एवं भागा नदी के संगम के पश्चात् इस नदी को संद्रभागा एवं तत्पश्चात् चिनाब के रूप में जाना जाता है। भारत–पाकिस्तान की सीमा तक, चिनाब नदी का जलग्रहण क्षेत्र 26,155 वर्ग किलोमीटर है और इसकी कुल लंबाई 1,180 वर्ग किलोमीटर है। चंद्रभागा की संयुक्त सरिता पीर पंजाल पर्वत श्रृंखलाओं से पांगी घाटी के समांतर उत्तर–पश्चिम दिशा में प्रवाहित होती है और 1838 मीटर की उँचाई पर चिनाब नदी के रूप में जम्मू एवं कश्मीर में प्रवेश करती है। यह किश्तवार नामक स्थान पर 1,000 मीटर गहरे महाखडड् को प्रतिछेदित करती है और 290 किलोमीटर तक प्रवाहित होती है। लगभग 330 किलोमीटर की दूरी तक प्रवाहित होने के पश्चात्, यह मैदानी भागों में प्रवेश करने के लिए, जम्मू एवं कश्मीर में अखनूर नामक स्थान पर पश्चिम की तरफ प्रवाहित होती है। यह 664 किलोमीटर की दूरी तक पाकिस्तान पंजाब के मैदानी भागों के माध्यम से जुड़ जाती है और फलतः झेलम एवं रावी के जुड़ जाने के पश्चात् सतलुज नदी से मिल जाती है।

3. **रावीः** यह नदी सिंधु नदी की महत्त्वपूर्ण सहायक नदी है और हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा ज़िले में स्थित बारा बीड़ बंगाल पर्वत श्रंखलाओं से उत्पन्न होती है। रावी नदी का कुल जलग्रहण क्षेत्र 14,442 वर्ग किलामीटर है, जिसमें से केवल 5,957 वर्ग किलोमीटर भारत में पड़ता है। स्रोत ले लेकर, यह उत्तर–पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित होती है और पीर पंजाल एवं धौला धार पर्वत श्रृंखलाओं के बीच वाले क्षेत्रों को अपवाहित करती है। दक्षिण–पश्चिमी दिशा की ओर घुमने के पश्चात्, यह धौलाधार पर्वत श्रृंखलाओं में एक गहरे महाखडड् को प्रतिछेदित या काटती है। यह माधोपुर नामक स्थान पर पंजाब के मैदानी भागों में प्रवेश करती है और तत्पश्चात् पाकिस्तान में प्रवेश करती है। यह 725 किलोमीटर तक प्रवाहित होने के पश्चात् सराए सिंधु नामक स्थान पर चिनाब नदी से जुड़ जाती है।

4. **ब्यासः** यह नदी सिंधु नदी की उप–सहायक नदी है जो लगभग 4,000 मीटर की ऊँचाई से रोहतांग दर्रे के पास ब्यास कुंड (झील) से उत्पन्न होती है। ब्यास नदी का कुल जलग्रहण क्षेत्र 20,303 वर्ग किलामीटर है। ब्यास नदी अपने ऊपरी खड़े मार्ग के द्वारा धौलाधार पर्वत श्रृंखला को पार करती है और लारजी से लेकर तलवास तक लगभग 900 मीटर गहरे एक महाखडड् को काटती है। यह दक्षिण–पश्चिम दिशा की ओर घूमती हैं और पंजाब में सतलुज नदी से जुड़ जाती है।

5. **सतलुजः** सतलुज नदी 4,570 मीटर की ऊँचाई से तिब्बती पठार में स्थित मानसरोवर एवं रक्षाताल झीलों से उत्पन्न होती है। यह लगभग 25,900 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को सींचती है और इसके मार्ग की लंबाई 1,450 किलोमीटर है, जिसमें से केवल 1,050 किलोमीटर भारतीय क्षेत्र के अंर्तगत आता है। भारत में, सतलुज नदी सिंधु नदी की सबसे लंबी सहायक नदी है। पंजाब के मैदानी भागों में प्रवेश करने से पूर्व, यह लगभग 400 किलोमीटर तक सिंधु नदी के समांतर प्रवाहित होती है और नैना देवी धार के पास एक गहरे महाखडड् को वेधती है। रोपड़ नामक स्थान में प्रवेश करने एवं पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित

होने के पश्चात्, हारिके नामक स्थान पर ब्यास नदी इससे जुड़ जाती है। भांखड़ा नंगल परियोजना को इस नदी पर निर्मित किया गया है।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 2

सिंधु नदी प्रणाली की 'पंचनाद' को पहचानिए?

3.6 गंगा नदी प्रणाली

गंगा भारत की सबसे महत्त्वपूर्ण पवित्र नदी प्रणालियों में से एक है। इसमें बड़ी संख्या में बारहमासी एवं गैर–बारहमासी सहायक नदीयाँ सम्मिलित हैं। गोमती, घाघरा, रामगंगा, गंडक, कोसी एवं महानंदा इत्यादि गंगा नदी की बाएं किनारे की मुख्य सहायक नदियाँ है। जबकि, यमुना, सोन एवं दामोदर इसकी दाएँ किनारे की सहायक नदियाँ हैं। इसका जल व्यापक रूप से सिंचाई, उद्योगों, जल विद्युत उत्पादन एवं घरेलु ज़रूरतों में उपयोग किया जाता है। गंगा नदी के बाढ़ के मैदानों को भारत के अन्न भंडार के रूप में पहचान प्राप्त है, जो देश की विशाल जनसंख्या का भरण–पोषण करती है। गंगा नदी की कुल लंबाई 2,525 वर्ग किलोमीटर है, जो विभिन्न राज्यों जैसे उत्तराखंड एवं उत्तर प्रदेश (1,450 किलोमीटर), बिहार (445 किलोमीटर) एवं पश्चिम बंगाल (520 किलोमीटर) में प्रवाहित होती है। यह भारत में लगभग 8.6 लाख वर्ग किलोमीटर के द्रोणी–क्षेत्र को आवृत करती है। देवप्रयाग नामक स्थान पर भागीरथी नदी एवं अलकनंदा नदी के संगम के पश्चात् गंगा नदी ने अपना नाम प्राप्त किया है। भागीरथी नदी की उत्पति गौमुख (3,900 मीटर) में गंगोत्री हिमनद से हुई है, जबकि अलकनंदा नदी की उत्पति सतोपंथ हिमनद तथा भागीरथी खड़क हिमनद से होती है। गंगा अपने उदगम् स्थान से 280 किलोमीटर की दूरी तयकर हरिद्वार में प्रवेश करके मैदानी भागों में प्रवेश करती है। यह लगभग 770 किलोमीटर की दूरी तक दक्षिण एवं दक्षिण–पूर्व दिशा में प्रवाहित होती है जहां पर यह यमुना नदी से मिलती है। यमुना गंगा नदी की सबसे महत्त्वपूर्ण सहायक नदियों में से एक है। गंगा एवं ब्रह्मपुत्र नदी बंगाल की खाड़ी में प्रवेश करने से पूर्व सबसे वृहत डेल्टा का निर्माण संभव बनाती है, जिसे सुंदरवन डेल्टा के रूप में जाना जाता है और सघन वन आवरण इसकी विशेषता है।

1. **यमुना** नदी की लंबाई लगभग 1,384 किलोमीटर है, यह बंदरपुंच श्रृंखला के पश्चिमी ढाल से यमुनोत्री हिमनद से 6,313 मीटर की ऊँचाई से उत्पन्न होती है। इसका जल पूर्वी एवं पश्चिमी यमुना नहर तथा आगरा नहर के द्वारा सिंचाई के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। यह गंगा नदी के समांतर प्रवाहित होती है और इससे इलाहाबाद में प्रयाग नामक स्थान पर जुड़ती है। केन, बेतवा, सिंध एवं चम्बल इसकी मुख्य नदियाँ हैं जबकि सासेर कदेरी, सेगर, हींडन, नोन, बरूणा एवं रिंद इसकी उत्तरी सहायक नदियाँ हैं।

2. **चंबल** नदी मध्य प्रदेश में मौह के नज़दीक सिगनर चौरी शिखर (843 मीटर) से उत्पन्न होती है। यह कुल अपवाह तंत्र क्षेत्र के 143,219 वर्ग किलोमीटर को आवृत करते हुए 965 किलोमीटर की लंबाई तक प्रवाहित होती है। यह इटावा के पास यमुना नदी से मिलने के लिए, विभिन्न राज्यों उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान को अपवाहित करके जुड़ती है। शिपरा, प्रजावती, बनासंद और काली सिंध इसकी सहायक नदियाँ हैं। अनेकों महत्त्वपूर्ण बांध परियोजनाओं को इस नदी के साथ निर्मित किया गया है, नामतः जवाहर सागर बांध एवं गांधी सागर बांध

इत्यादि, जिनसे जलविद्युत उत्पादन एवं सिंचाई सुविधाओं में अद्वितीय योगदान प्राप्त होता है।

3. **रामगंगा** नदी निम्न हिमालय के पास गैरसेन नामक स्थान से उत्पन्न होती है और कुल जलग्रहण क्षेत्र का 32,800 वर्ग किलोमीटर बनाते हुए 600 किलोमीटर की लंबाई तक प्रवाहित होती है। दियोहा, गंगन, कोसी, खोह एवं अरील इसकी महत्त्वपूर्ण सहायक नदीयाँ हैं। यह जिम कॉर्बेट राष्ट्रीय उद्यान से प्रवाहित होते हुए फारूखाबाद के समीप गंगा नदी से जुड़ जाती है।

4. **घाघरा** नदी मापचांचुगों हिमनद से उत्पन्न होती है। इसका जलग्रहण क्षेत्र 1,27,950 वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से केवल 45 प्रतिशत भारत में पड़ता है। बैरी नदी के जल (से मिलने के पश्चात्), टीला एवं सेती नदीयों, शीशापानी नामक स्थान पर घाघरा नदी 600 मीटर गहरे महाखडड् का निर्माण करती है। शारदा नदी इससे मैदानी भागों में जुड़ती है और छपरा नामक स्थान पर गंगा के साथ विलय होने से पूर्व यह आगे दक्षिण–पूर्वी दिशा में प्रवाहित होती है।

5. **गंडक** नदी नेपाल–तिब्बत सीमा के पास से उत्पन्न होती है। बारी, मयनगड़ी, त्रिशुली एवं काली गंडक इसकी मुख्य सहायक नदियाँ हैं। इसकी कुल लंबाई 425 किलोमिटर है और यह पटना के समीप गंगा नदी से जुड़ती है। गंडक नदी का कुल जल ग्रहण क्षेत्र 48,500 वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से 9,540 वर्ग किलोमीटर भारत में पड़ता है।

6. **कोसी** नदी सात सरिताओं से निर्मित है और इनमें से अरूण इसकी मुख्य सरिता है। यह गोसाईथान के उत्तर से उत्पन्न होती है। कुल 86,900 वर्ग किलोमीटर अपवाह तंत्र क्षेत्र के साथ इसकी कुल लंबाई 730 किलोमीटर है, जिसमें से केवल 21,500 वर्ग किलोमीटर भारत में पड़ता है। नेपाल में मध्य हिमालय को पार करने के पश्चात्, यह नदी पूर्व में तैमूर कोसी एवं पश्चिम में सनकोसी के साथ जुड़ती है। कोसी नदी निक्षेपण स्थल रूप का निर्माण करती हैं जैसे जलोढ़ पंख, जब यह शिवालिक से जियानगर के पास मैदानों में प्रवेश करती है। बारंबार बाढ़ की स्थिति उत्पन्न होने एवं इसके मार्ग में परिवर्तन की वजह से इस नदी को बिहार का संताप के रूप में भी जाना जाता है।

7. **सोन** नदी अमरकंटक पठार से उत्पन्न होती है और 780 किलोमीटर की लंबाई तक प्रवाहित होती है और लगभग 71,900 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को अपवाहित करती है। शुरूआत में, यह उत्तरी दिशा में प्रवाहित होती है और तब अपने मार्ग में उत्तर–पूर्वी दिशा में मोड़ लेकर पटना के पश्चिम में आरा के पास गंगा नदी से मिलती है। सोन गंगा नदी की दक्षिण किनारे की सहाक नदी है और कनहार, उत्तरी कोइल, गोपत, जोहिला एवं रिहंद इत्यादि सोन की महत्त्वपूर्ण यहायक नदीयाँ हैं।

8. **दामोदर** नदी छोटा नागपुर पठार की पहाड़ियों से उत्पन्न होती है। इसकी कुल लंबाई 541 किलोमीटर है और यह लगभग 22,000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को अपवाहित करती है। मानसून के मौसम के दौरान विनाशकारी बाढ़ उत्पन्न करने के कारण इसे 'बंगाल का संताप' के रूप में जाना जाता है। यह कोलकाता के दक्षिण में 48 किलोमीटर दूर हुगली नदी से मिलती है।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 3

गंगा नदी की दायीं एवं बायीं किनारों वाली सहायक नदीयों के नाम बताइए।

3.7 ब्रह्मपुत्र नदी प्रणाली

तिब्बत में, ब्रह्मपुत्र नदी को सांगपो के रूप में भी जाना जाता है। यह भारत की महत्त्वपूर्ण नदियों में से एक है। इसकी कुल लंबाई 2,480 किलोमीटर है, जिसमें से केवल 1,346 किलोमीटर भारत में आता है। यह 5,80,000 वर्ग किलोमीटर का कुल अपवाह क्षेत्र आवृत करता है। ब्रह्मपुत्र नदी का उद्गम स्रोत कैलाश पर्वत श्रृंखला की चेमांयुगडुंग हिमनदी से होता है। यह लगभग 1,200 किलोमीटर तक वृहत् हिमालय श्रृंखला अथवा श्रेणी के समांतर पूर्व की ओर प्रवाहित होती है और दक्षिण की तरफ एक तीव्र मोड़ लेती है और नमचा बरवा नामक स्थान पर गहरे महाखडड् का निर्माण करती है। यहां पर इसे सियांग अथवा दिवांग के नाम से जाना जाता है, आगे दक्षिण की तरफ प्रवाहित होते हुए इसे अरूणाचल प्रदेश में सादिया नामक स्थान पर बाएं किनारें वाली सहायक नदीयों जैसे लोहित एवं दिवांग अथवा सिकांग द्वारा जुड़ जाते हैं जिसके कारण इसे ब्रह्मपुत्र नदी के रूप में जाना जाता है। ब्रह्मपुत्र नदी असम में 720 किलोमीटर की दूरी तक प्रवाहित होती है। उत्तर एवं दक्षिण दिशा से काफी बड़ी संख्या में सहायक नदीयाँ इससे जुड़ती हैं। उत्तर दिशा से ब्रह्मपुत्र में विलय होने वाली सरिताएँ रेदाह, न्यारा अमा, कामेंग, गंगाधर, धरला एवं बेलसिरि इत्यादि हैं। दक्षिण दिशा से जुड़ने वाली सरिताएँ दीक्षु, कलंग, धनसिरि (दक्षिण) बुरही दिहिंग, नोआ दिहिंग एवं डिब्रु हैं। ब्रह्मपुत्र भारी मात्रा में अपने साथ गाद ले जाती है और इसमें अत्यधिक विसर्पण की विशेषता भी होती है। इसकी चौड़ाई डिब्रूगढ़ से 13 किलोमीटर से लेकर 16 किलोमीटर है जिसकी वजह से कई नदीय द्वीपों का निर्माण होता है। इनमें से सर्वाधिक प्रसिद्ध माजुली द्वीप है, जो लगभग 1,250 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को आवृत्त करती है। अमूमन प्रति वर्ष मानसून के मौसम के दौरान ब्रह्मपुत्र नदी में भारी जल की मात्रा विनाशकारी बाढ़ का परिणाम बनती है। ब्रह्मपुत्र नदी मेघालय में गारो की पहाड़ियों को पार या चंक्रम करने के पश्चात् धुबरी नामक स्थान के समीप बंग्लादेश में प्रवेश करती हैं।

3.8 प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र प्रणाली

प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र प्रणाली अत्यधिक प्राचीन है और इसमें कई महत्त्वपूर्ण नदीयाँ जैसे कृष्णा, कावेरी, सुवर्णरेखा, महानदी, गोदावरी, ब्रहमनी, पैन्नेर एवं तांबरपर्णो इत्यादि सम्मिलित है और जिसका अभिविन्यास डेल्टा का निर्माण करने के वास्ते बंगाल की खाड़ी की ओर है। प्रायद्वीपीय भारत के उत्तरी भाग से नदीयों जैसे चंबल, केन, सिंध, बेतवा एवं सोन की उत्पति हुई है और यह सभी गंगा नदी प्रणाली का हिस्सा हैं। नर्मदा और तापती को छोड़कर, अधिकतर प्रायद्वीपीय नदीयाँ पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर बहती हैं। प्रायद्वीपीय नदीयों में निम्न प्रवणता होती है जो परिणामतः निम्न जल वेग एवं अवसाद ढोने की क्षमता में परिलक्षित होती है। इसलिए, यह नदीयाँ अपने मुहाने पर वृहत् डेल्टा की विशेषता से परिपूर्ण होती है। हालांकि, प्रायद्विपीय नदीयों के मार्ग विसर्पण से रहित होते हैं। यह नदीयाँ बारहमासी स्रोतों के अभाव में, प्रायः गर्मियों में सूख जाते हैं अथवा निम्न मात्रा में जल ले जाते हैं। भारतीय प्रायद्वीप की अपवाह तंत्र प्रणाली को आकार देने के लिए भूतकाल की भूवैज्ञानिक घटनाएं उत्तरदायी रही हैं।

भूवैज्ञानिकों का सुझाव है कि (i) प्रारंभिक तृतीयकल्पी अवधि के दौरान प्रायद्वीप के पश्चिमी हिस्से का धंसना समुद्र के नीचे धंसने की ओर अग्रसर किया, जिसकी वजह से (नदी के सममित रूप में) मूल जल–विभाजक के दोनों किनारों में बाधा उत्पन्न हुई। (ii) हिमालय में प्रोत्थान पैदा हुई जब प्रायद्वीपीय खंड का उत्तरी छोर नीचे धंसना शुरू हुआ और पारिणामस्वरूप गर्त भ्रंशन उत्पन्न हुआ।

इसके माध्यम से अब प्रमुख पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नर्मदा और तापी नदी प्रवाहित होती है और अपनी अवशेष सामग्री के साथ मूल दरारों को भरती हैं। इसलिए, पश्चिमी तट पर जलोढ़ की उपस्थिति एवं डेल्टा के निर्माण का अभाव देखने को मिलता है। (iii) प्रायद्वीपीय खंड के दक्षिण–पूर्वी दिशा में झुकाव के परिणामतः इसकी नदीयों का बंगाल की खाड़ी की ओर संरेखण हो गया।

3.9 प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र की नदीयाँ

प्रायद्वीपीय भारत की महत्त्वपूर्ण नदीयाँ इस प्रकार हैंः

1. **गोदावरी** प्रायद्वीपीय भारत की सबसे बृहत नदी है और महाराष्ट्र राज्य के नासिक जिल्ले के समीप त्रिम्बक पठार से उत्पन्न होती है। यह 1,465 किलोमीटर की कुल लंबाई तक प्रवाहित होती है। यह महाराष्ट्र, छतीसगढ़, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और आंध्र प्रदेश राज्यों से होकर बहती है। प्राणहिता, पूर्णा, पेनगंगा, माजरा, वैनगंगा, प्रवरा, वर्धा, मनेर, इंद्रावती सबरी एवं पेंच इसकी महत्त्वपूर्ण सहायक नदीयाँ हैं। इसका कुल जलग्रहण क्षेत्र 3,12,812 वर्ग किलोमीटर है।

2. **नर्मदा** नदी मध्य प्रदेश में अमरकंटक पठार से उत्पन्न होती है जो समुद्र तल से अनुमानतः 1,057 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। लगभग 98,795 वर्ग किलोमीटर जलग्रहण क्षेत्र के साथ इसकी कुल लंबाई 1,312 किलोमीटर है। यह दक्षिण में सतपुड़ा एवं उत्तर में विंध्य श्रेणी के साथ एक रिफ्ट घाटी में प्रवाहित होती है, यह नदी संगमरमर चट्टान या शैल मघखडड में सोपानी जलप्रपात बनाती है और जबलपुर के समीप धुआंधार जलप्रपात का निर्माण करती है। यह 1,312 किलोमीटर की दूरी तय करने के बाद अरब सागर से मिलती है और 27 किलोमीटर लंबे ज्वारनदमुख का निर्माण करती है। सरदार सरोवर परियोजना को सिंचाई, पेयजल, जलविद्युत उत्पादन एवं नहर नेटवर्क जैसे उद्देश्यों के लिए इस नदी पर निर्मित किया गया है।

3. **तापी** नदी मध्य प्रदेश के बैतूल ज़िले में स्थित सतपुड़ा श्रेणी से मुलताई नामक स्थान से उत्पन्न होती है। यह पश्चिम की ओर बहने वाली महत्त्वपूर्ण नदियों में से एक है। इसका कुल जलग्रहण क्षेत्र 65,145 वर्ग किलोमीटर एवं लंबाई 700 किलोमीटर है। इसका लगभग 6 % द्रोणी क्षेत्र गुजरात में, 15 % मध्य प्रदेश में, जबकि महाराष्ट्र में 75 % का एक बड़ा भाग स्थित है।

4. **साबरमती** नदी ढेबर झील (मेवाड़ की पहाड़ियों) से उत्पन्न होकर खंभात की खाड़ी की ओर बहती है। हरनव, वात्रक, वकुल, सेंधी एवं मेशवा इसकी महत्त्वपूर्ण सहायक नदीयाँ हैं। इसकी कुल लंबाई 371 किलोमीटर है और (यह पश्चिम की ओर बहने वाली) प्रायद्वीपीय भारत की तीसरी बड़ी नदी प्रणाली है। इसका जलग्रहण क्षेत्र 21,895 वर्ग किलोमीटर है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

5. **महानदी** का स्रोत छतीसगढ़ के रायपुर ज़िले में सिहावा के समीप 442 मीटर की उँचाई पर स्थित है। यह नदी 858 किलोमीटर की दूरी तक प्रवाहित होती है। इब, मण्ड, हसदेव एवं सीओनाथ इसकी बाएं किनारे की सहायक नदीयाँ हैं। यह लगभग 1,41,589 वर्ग किलोमीटर के जलग्रहण क्षेत्र को आवृत करता है।

6. उड़ीसा में राउरकेला के समीप शंख एवं कोयल नदीयों के संगम की वजह से 800 किलोमीटर लंबी **ब्रहमनी** नदी का निर्माण होता है। इसका 39,033 वर्ग किलोमीटर का अपवाह तंत्र क्षेत्र है। टिकरा, कुरा एवं शंरवद इसकी सहायक नदीयाँ हैं और यह बालासोर, तालचेर तथा बोनाई जिलों के माध्यम से प्रवाहित होकर अंततः बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

7. **सुवर्णरेखा** नदी रांची के समीप पिस्का से उत्पन्न होती है। यह 470 किलोमीटर लंबी है एवं 19,296 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र को अपवाहित करती है। यह नदी सिंहभूम, मयूरभंज एवं मेदिनीपुर जिलों से होते हुए पूर्व दिशा में प्रवाहित होती है।

8. **कृष्णा** नदी प्रायद्वीपीय भारत की द्वितीय सबसे बृहत् नदी है। यह नदी 1,300 किलोमीटर लंबी है और इसके अपवाह तंत्र द्रोणी का क्षेत्र 2,58,998 वर्ग किलोमीटर है और इसे आंध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र राज्यों द्वारा सांझा किया जाता है। कृष्ण येरला, कोयना, पंचगंगा, वर्ण, घाटप्रथा, दूधगंगा, भीमा, तंगभद्रा, मालप्रथ एवं मुसी इसकी प्रमुख सहायक नदीयाँ हैं।

9. **पैन्नेर** नदी कर्नाटक राज्य के चिकबल्लापुर ज़िले के नंदी पहाड़ी से उत्पन्न होती है। इसकी कुल लंबाई 560 किलामीटर है और यह कृष्णा एवं कावेरी के बीच 55,213 वर्ग किलोमीटर के जलग्रहण क्षेत्र को आवृत करती है। केंदुरा, सगिलेरू, जयमंगली, चित्रावती, चेयरू एवं पापाघनी इत्यादि इसकी प्रमुख सहायक नदीयाँ हैं। यह गंडिकोटा कुदप्पा ज़िले के समीप एक महाखडड् को निर्मित करता है और नैल्लोर शहर के समीप समुद्र में विलीन हो जाता है।

10. **कावेरी** नदी कोडागु ज़िले में से ब्रह्मगिरी श्रेणी से 1,342 मीटर की उँचाई से उत्पन्न होती है। यह 805 किलोमीटर तक प्रवाहित होती है। श्रीमशा, लोकपावनी, हेरंगी, अर्कावती एवं हेमती इत्यादि इसकी उत्तरी दिशा में प्रवाहित होने वाली सहायक नदीयाँ हैं और अमरावती सुवर्णावती, लक्ष्मतीर्थ, भवानी एवं कबाना इसकी दक्षिणी दिशा वाली सहायक नदीयाँ हैं। कावेरी नदी 81,555 वर्ग किलामीटर के जलग्रहण क्षेत्र को अपवाहित करती है, जिसमें 55 % तमिलनाडु में, 41 % कर्नाटक में और 3% केरल में आता हैं। कावेरी नदी में संपूर्ण वर्ष में भरपूर या प्रचुर मात्रा में जल रहता है क्योंकि यह दोनों उत्तर–पूर्वी एवं दक्षिण–पश्चिमी मौसमों (मानसून) के दौरान वर्षा का जल प्राप्त करता है। अंततः, यह कावेरीपटनम नामक स्थान पर समुद्र में मिल जाता है।

11. **लूनी** नदी अरावली पर्वत की पुष्कर घाटी से 550 मीटर की उँचाई से उत्पन्न होती है। इसकी कुल लंबाई 495 किलोमीटर है और यह 37,363 वर्ग किलोमीटर के अपवाह तंत्र क्षेत्र को आवृत करती है। अपने ऊपरी मार्ग में, इस नदी को सागरमती के रूप में जाना जाता है। यह पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है और कच्छ के रण में उत्तर के समीप कच्छभूमि में समाप्त हो जाती है। बुंदी, सरसुती, सुकरी एवं जवाई इत्यदि इसकी सहायक नदीयाँ हैं।

प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र की नदी प्रणालियों का अध्ययन प्रवाह की दिशा के आधार पर पूर्व एवं पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित होने वाली नदी प्रणाली के रूप में भी किया जा सकता है। पूर्व दिशा की तरफ प्रवाहित होने वाली प्रायद्वीप नदीयाँ बंगाल की खाड़ी में जबकि पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदीयाँ अरब सागर में गिरती हैं, जैसाकि चित्र 3.1 में दर्शाया गया है। इनकी प्रवाह की दिशा के आधार पर पूर्व दिशा की ओर प्रवाहित होने वाली प्रमुख नदीयाँ निम्नलिखित हैः

1. गोदावरी
2. कृष्णा
3. कावेरी
4. महानदी
5. पैनेर
6. दामोदर
7. सुवर्णरेखा

पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित होने वाली नदीयाँ जो अरब सागर में गिरती हैं, वह इस प्रकार हैः

1. नर्मदा
2. तापी
3. साबरमती
4. लूनी
5. माही
6. शर्बती

अब तक, आपने दोनों हिमालयी एवं प्रायद्वीपीय मुख्य नदीयों का उनकी सहायक नदीयों के साथ अध्ययन करके सीख लिया है। अब, आप भारत की मुख्य नदी द्रोणी का संक्षेप में अध्ययन करेंगे।

स्व–मुल्यांकन प्रश्न 4

प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र प्रणाली की पूर्व एवं पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदीयों को पहचानिए।

3.10 भारत की प्रमुख नदी द्रोणीयाँ

एक नदी द्रोणी को प्रमुख नदी एवं इसकी सहायक नदियों द्वारा अपवाहित क्षेत्र भूमि के तौर पर परिभाषित किया जाता है। आप इसी पाठयक्रम की इकाई 7 के अनुभाग 7.2 का संदर्भ लेकर सभी भारतीय नदीयों की सतही जल के संभावित आँकड़ों का विवरण पा सकते हैं। भारत को संपूर्णतया 20 नदी द्रोणियों अथवा दूसरे शब्दों में नदी द्रोणियों के समूह के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यह एक साथ 12 प्रमुख एवं 8 मिश्रित नदी द्रोणियों के रूप में हैं। नदियों को मिश्रित द्रोणियों में वर्गीकृत करने का उद्देश्य जल संसाधनों की योजना एवं प्रबंधन करना है। 20,000 वर्ग किलोमीटर से अधिक अपवाह तंत्र क्षेत्र वाली 12 प्रमुख नदी द्रोणियों को निम्नलिखित के रूप में सूचीबद्ध किया हैः

1. सिंधु
2. गंगा–ब्रह्मपुत्र–मेघना

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

3. गोदावरी
4. कृष्णा
5. कावेरी
6. महानदी
7. पेन्नेर
8. ब्रहमनी–बैतरणी
9. साबरमती
10. माही
11. नर्मदा
12. ताप्ती

आठ मिश्रित नदी द्रोणियों को एक साथ मिलाने या जोड़ने का उद्देश्य भारत की अन्य शेष मध्यम एवं लघु नदी प्रणालियों को निर्मित करना है। मध्यम आकार की नदियाँ 2,000 से 20,000 वर्ग किलोमीटर के बीच अपवाह तंत्र क्षेत्र को आवृत करती हैं जबकि लघु नदी प्रणालियाँ 2,000 वर्ग किलोमीटर से कम अपवाह तंत्र क्षेत्र को आवृत करती हैं। इन्हें नीचे सूचीबद्ध किया गया हैः

1. सुवर्णरेखा सहित अन्य लघु नदियों के बीच स्थित सुवर्णरेखा एवं बैतरणी नदियाँ।
2. पेन्नेर एवं महानदी के मध्य स्थित पूर्व दिशा की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ।
3. पेन्नेर एवं कन्याकुमारी के मध्य स्थित पूर्व दिशा की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ।
4. राजस्थान के मरूस्थल में स्थित अंतःस्थलीय अपवाह तंत्र का क्षेत्र।
5. लूनी सहित कच्छ एवं सौराष्ट्र की पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ।
6. ताप्ती से तद्री तक पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ।
7. तद्री से कन्याकुमारी तक पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ।
8. लघु नदियाँ जो म्यांमार (बर्मा) एवं बंग्लादेश आदि देशों में प्रवाहित होकर अपवाहित करती हैं।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 5

एक नदी द्रोणी क्या है? भारत की प्रमुख नदी द्रोणियों के नाम बताइए।

3.11 सारांश

इस इकाई में, आपने निम्नलिखित सीखा हैः

- भारत अपनी विविध भौतिक विशेषताओं के साथ एक विविध श्रृणी की बृहत् एवं लघु नदियों से सुसज्जित हैं जोकि विकासात्मक उद्देश्यों के लिए महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन हैं।
- भारत में 120 सेंटीमीटर औसत वार्षिक वर्षा प्राप्त होती है। भारतीय नदियों की वार्षिक जल उपज 1,858,100 लाख घन मीटर है।

- भारत के अपवाह तंत्र प्रणाली को व्यापक तौर पर निम्न के आधार पर वर्गीकृत किया गया है (i) उत्पति (ii) समुद्र की ओर अभिविन्यास एवं (iii) जलग्रहण क्षेत्र का आकार इत्यादि।

- हिमालयी एवं प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र प्रणालीयाँ भारत की सबसे महत्त्वपूर्ण अपवाह तंत्र प्रणालियाँ हैं।

- भारत की सर्वाधिक बृहत् नदियाँ जैसे ब्रह्मपुत्र, सिंधु एवं गंगा हिमालयी अपवाह तंत्र प्रणाली में सम्मिलित हैं। यह बृहत् नदियाँ बृहत् सहायक नदियों द्वारा विशेषतया बनी हैं।

- प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र प्रणाली हिमालयी अपवाह तंत्र प्रणाली की अपेक्षा काफी प्राचीन है। हालाँकि, प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र की नदियों का मार्ग विसर्पण से रहित है।

- नदी द्रोणी मुख्य नदी एवं सहायक नदियों द्वारा अपवाहित क्षेत्र का हिस्सा है।

3.12 अंतिम प्रश्न

1. भारत की अपवाह तंत्र प्रणाली की पहचान करें एवं इस प्रणाली की व्यापक वर्गीकरण की योजना के बारे में बताइए।

2. हिमालयी अपवाह तंत्र प्रणाली की उत्पति की व्याख्या कीजिए। हिमालयी अपवाह तंत्र की किसी एक नदी प्रणाली की विस्तृत जानकारी दीजिए।

3. गंगा नदी प्रणाली में पाए जाने वाले मुख्य लक्षणों की व्याख्या कीजिए।

4. भारतीय प्रायद्वीप की अपवाह तंत्र प्रणाली के निर्माण में पहचाने गए तीन कारकों का वर्णन करें।

3.13 उत्तर

स्व–मूल्यांकन प्रश्न (SAQ)

1. समुद्र की ओर अभिविन्यास के आधार पर, भारतीय अपवाह तंत्र को दो प्रणालियों में वर्गीकृत किया गया है, जो (i) बंगाल की खाड़ी वाली अपवाह तंत्र प्रणाली, उदाहरणार्थ गंगा, ब्रह्मपुत्र, गोदावरी, महानदी, कावेरी एवं पेन्नेर इत्यादि, एवं (ii) अरब की खाड़ी वाली अपवाह तंत्र प्रणाली उदाहरणार्थ सिंधु, नर्मदा, ताप्ती, साबरमती एवं माही इत्यादि।

2. रावी, सतलुज, ब्यास, चिनाब एवं झेलम इत्यादि सिंधु नदी की 'पंचनाद' कहलाती हैं।

3. गोमती, घाघरा, रामगंगा, गंडक, कोसी एवं महानंदा गंगा नदी की (बाएं किनारे वाली) सहायक नदियाँ है जबकि सोन, यमुना, दामोदार इसकी दाएं किनारे वाली सहायक नदियाँ हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

4. महानदी, गोदावरी, कृष्णा एवं कावेरी पूर्व की तरफ प्रवाहित होने वाली जबकि नर्मदा एवं ताप्ती पश्चिम की तरफ प्रवाहित होने वाली प्रायद्वीपीय अपवाह तंत्र की मुख्य नदियाँ हैं।

5. एक नदी द्रोणी को प्रमुख नदी एवं इसकी सहायक नदियों द्वारा अपवाहित क्षेत्र भूमि के रूप में परिभाषित किया जाता है। भारत में 12 प्रमुख नदी द्रोणियाँ हैं।

अंतिम प्रश्न

1. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, आपको भारतीय अपवाह तंत्र प्रणाली की पहचान करनी होगी एवं व्यापक वर्गीकरण की योजना को भी सम्मिलित करना होगा। आप अनुभागों 3.1 एवं 3.2 का संदर्भ ले सकते हैं।

2. आपके उत्तर में हिमालयी अपवाह तंत्र प्रणाली की उत्पति के विवरण के साथ इसकी किसी भी एक नदी का विस्तृत विवरण शामिल होना चाहिए। आप अनुभागों 3.3 से लेकर 3.7 का संदर्भ ले सकते हैं।

3. आपको गंगा नदी प्रणाली की महत्त्वपूर्ण लक्षणों को सम्मिलित करना होगा। आप अनुभाग 3.6 का संदर्भ ले सकते हैं।

4. आपको भूवैज्ञानिकों द्वारा भारतीय प्रायद्वीप की अपवाह तंत्र प्रणाली के निर्माण में सहायक पहचाने गए तीन कारकों का विवरण शामिल करना चाहिए। आप अनुभाग 3.8 का संदर्भ ले सकते हैं।

3.14 संदर्भ/आगे सुझावित पठ्न सामग्री

- Tiwari R.C (2007) Geography of India. Prayag Pustak Bhawan, Allahabad
- Khullar D.R (2005) Geography of India. Kalyani Publication, New Delhi
- Singh R.L (1971): India: A Regional Geography, National Geographical Society of India
- Tirtha, Ranjit 2002: Geography of India, Rawat Publishers, Jaipur, and New Delhi.
- Singh, Jagdish 2003: India; A Comprehensive & Systematic Geography, Gyanodaya Prakashan, Gorakhpur.
- India (2020): A Reference Annual, Publication Division, Ministry of Information and Broadcasting, Govt. of India, New Delhi.

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 4

जलवायु

संरचना

4.1 परिचय
अपेक्षित सीखने के परिणाम
4.2 भारतीय जलवायु एवं मौसमीय विशेषताएं
4.3 वर्षा एवं तापमान का वितरण
4.4 भारतीय मानसून एवं कृषि–जलवायु क्षेत्रों के संदर्भ में वर्षा का वितरण
4.5 सूखा अथवा जलाभाव
4.6 सारांश
4.7 अंतिम प्रश्न
4.8 संदर्भ/आगे सुझावित पठ्न सामग्री

4.1 परिचय

प्रथम वाली तीन इकाईयों अर्थात् 1, 2 एवं 3 (खंड 1) में, आपने उपमहाद्वीप में भारत की भौगोलिक स्थिति, भूआकृतिक कारकों एवं अपवाह तंत्र इत्यादि का अध्ययन किया है। इस इकाई 4 में, आप अध्ययन करके सीखेंगे कि भारतीय जलवायु में वृहत् विविधताएं पाई जाती हैं। आप यह जानेंगे कि अपनी बृहत् भौगोलिक पैमाने एवं विविध स्थलाकृति के कारण भारत की जलवायु व्यापक प्रकारों की हैं। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि कर्क रेखा के देश के मध्य से गुजरने की वजह से भारत का भूगोल जलवायु के संदर्भ में केन्द्रीय है। इसके साथ ही, देश का अक्षांशीय विस्तार 8°4′ उत्तर से लेकर 37°6′ उत्तर तक भारत की स्थिति ठीक भूमध्यरेखा के ऊपर स्थित है और इसलिए भारत ज्यादा उष्णकटिबंधीय प्रकार की जलवायु को अनुभव करता है। आप उत्तर में महान हिमालय, दक्षिण में भारतीय महासागर, पश्चिम में अरब सागर एवं पूर्व मे बंगाल की खाड़ी की उपस्थिति की सराहना करने में सक्षम होंगे। इन सभी कारकों के मिश्रण से भारत की जलवायु का विशिष्टतम प्रकार के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त होता है। मानसून की भूमिका पर विशेष केंद्रबिंदु के साथ भारत की जलवायु को प्रभावितकरने वाले सभी कारकों पर निम्न के रूप में चर्चा की गई है।

हम इस इकाई में जलवायु एवं इसके विभिन्न संबंधित महत्त्वपूर्ण लक्षणों पर चर्चा करेंगे। भारतीय जलवायु एवं मौसम की विशेषताओं पर अनुभाग 4.2 में चर्चा की गई है। अनुभाग 4.3 में भारत में वर्षा एवं तापमान के वितरण पर व्याख्या की गई है। अनुभाग 4.4 भारतीय जलवायु एवं कृषि–जलवायु क्षेत्रों के संदर्भ में वर्षा की प्रक्रिया पर प्रकाश डालती है। अनुभाग 4.5 को भारत के विविध जलवायवीय कारकों पर समर्पित किया गया है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

संक्षेप में, इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आपको जलवायु को समझने एवं देश की भौगोलिक अथवा भू–आकृतिक संरचना से संबंधित एवं निर्धारित किए गए जलवायु के कारकों को समझने में मदद मिलेगी। जलवायु का ज्ञान प्राप्त करने के साथ, आप लोगों के जीवन, अर्थव्यवस्था एवं राष्ट्र के समाज में इसकी भूमिका एवं महत्त्व भी समझेंगे।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, आप निम्न में सक्षम होंगे :

- भारतीय जलवायु एवं मौसम की प्रमुख विशेषताओं को समझने में;
- भारत में वर्षा एवं तापमान वितरण के व्यापक प्रतिरूप को देखने में;
- भारत में जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी कारकों की व्याख्या करने में; तथा
- भारत की जलवायु को प्रभावित करने वाले कारकों की भूमिका का मूल्यांकन करने में।

4.2 भारतीय जलवायु एवं मौसम की विशेषताएँ

आप तीसरे छमाही पाठयक्रम की इकाईयों 12 एवं 13 का स्मरण कर सकते हैं, जहां आपने जलवायु आंकड़ों की प्रतिनिधित्व विधियों के साथ–साथ मौसम एवं जलवायु के तत्त्वों के बारे में सीखा था। आप विविध तत्त्वों की भूमिका एवं महत्त्व जानते हैं जो एक साथ किसी भी क्षेत्र के मौसम और जलवायु को नियंत्रित एवं निर्धारित करते हैं। किसी भी देश में एक समयावधि के दौरान तापमान, वर्षा एवं वायुमंडल दबाव के साथ–साथ पवन प्रणाली का अध्ययन भी सम्मिलित होता है। जलवायु स्थान से अक्षांशीय विस्तार, उच्चावच एवं भूमि एवं जल के वितरण के साथ–साथ अन्य कारकों के संदर्भ में काफी प्रभावित होता है। भारतीय संदर्भ में इन कारकों से आपको अवगत कराने के वास्ते, हम यहां पर भारत की जलवायु को प्रभावित करने वाले कुछेक प्रमुख कारकों की निम्नलिखित के रूप में चर्चा कर रहे हैः

a. भौगोलिक स्थिति एवं अक्षांशीय विस्तार

भारत लगभग कर्क रेखा के साथ 8°4′ उत्तर से लेकर 37°17′ उत्तर के मध्य तक विस्तारित है और यह लगभग देश के मध्य से गुजरता है। कर्क रेखा के दक्षिण की ओर स्थित क्षेत्र, भूमध्य रेखा के समीप होने के कारण, कर्क रेखा के उत्तर में स्थित भूमि की तुलना में अधिक तापमान के मूल्यों का अनुभव करते हैं। लेकिन समुद्री प्रभाव की वजह से, पश्चिम में अरब सागर एवं पूर्व में बंगाल की खाड़ी की उपस्थिति से तटीय क्षेत्रों का तापमान अपेक्षाकृत मृदु रहता है।

b. पर्वतीय श्रेणियों की उपस्थिति एवं ऊँचाई का प्रभाव (हिमालय)

जैसाकि इकाई 2 में आपने सीखा है कि भारतीय उपमहाद्वीप की जलवायु पर प्रभाव के संदर्भ में हिमालय का महत्त्व काफी महत्त्वपूर्ण है। मुख्यतः, यह दो तरीके से देश के लिए एक वरदान के रूप में कार्य करता है। सर्वप्रथम, यह शीतकालीन मौसम के दौरान मध्य एशिया से उतरने वाली अत्यंत ठंडी एवं शुष्क हवाओं के संभावित प्रवेश के लिए प्राकृतिक बाधा निर्मित करता है। दूसरा, यह पर्वत श्रृंखलाएं आर्द्रता वाली दक्षिण–पश्चिमी मानसूनी हवाओं के लिए अवरोध उत्पन्न

करती है, जिससे यह मानसून के चार महीनों (जून से लेकर सितंबर) तक इस क्षेत्र को वर्षा प्रयाप्त क्षेत्र बनाती है।

c. भूआकृति

इकाई 2 में, आपने सीखा कि भारत की भूआकृति तापमान मूल्यों, पवन की दिशा, वर्षा की मात्रा एवं प्रतिरूप में एवं वायुमंडलीय दबाव की प्रकृति में अंतर पैदा करने के लिए मुख्यतः उत्तरदायी हैं। कुल मिलाकर क्षेत्र की जलवायु दृश्यभूमि की भू–आकृतिक विशेषताओं द्वारा प्रभावित होता है। उदाहरणतया, आमतौर पर अधिक ऊँचाई पर स्थित स्थान ठंडे मौसम का अनुभव करते हैं, भले ही ऐसे स्थान (भारतीय) प्रायद्वीपीय में स्थित हों। वर्षा का समान वितरण, अवधि एवं तीव्रता काफी हद तक भूआकृतिक संरचना से प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए, अरब सागर से आने वाली (आर्द्रता वाली) दक्षिण–पश्चिमी मानसूनी हवाएँ पश्चिमी घाट पर लंबवत दिशा में टकराने के पश्चात्, पश्चिमी तटीय क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में वर्षा का कारण बनती है जोकि पवनाभिमुख किनारे की ओर स्थित हैं जबकि पश्चिमी घाट का एक विशाल क्षेत्र प्रतिपवन की तरफ स्थित होने के कारण इसलिए शुष्क रहता है। हिमालय पर्वतों में मानसूनी हवाओं के साथ ठीक ऐसा ही होता है जहां पर महान हिमालय की भू–आकृतिक विशेषताएँ उत्तरी मैदानों की जलवायु को प्रभावित करती हैं।

d. तटीय क्षेत्रों से दूरी

तटीय वातावरण भी काफी हद तक इसके आसपास के क्षेत्र की मौसम की स्थिति को प्रभावित करता है क्योंकि तटीय समुदों एवं तटीय भूमियों के तापमान मूल्यों में निरंतर मिश्रण होता रहता है। इसलिए, तटीय क्षेत्रों के समीप दैनिक तापमान की सीमा न्यूनतम रहती है जो समुद्र तट से बढ़ती दूरी के अनुपात में बढ़ती है। इसलिए, तटीय क्षेत्रों के समीप तापमान की दैनिक सीमा में न्यूनमत अंतर मौजूद रहता है जबकि देश के आंतरिक हिस्सों में दैनिक तापमान में उच्च सीमा पाई जाती है।

e. हवाएँ

मानसूनी हवाएँ भारतीय जलवायु की सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। गर्मी के मौसम के दौरान जो गर्म हवाएं बहती हैं वह देश के अधिकांश हिस्सों में दोनों मनुष्यों एवं फसलों के लिए सुखद वर्षा लाकर भारत की जलवायु में एक महत्त्वपूर्ण कारक का निर्माण करती हैं। दक्षिणी–पश्चिमी मानसूनी हवाएँ जो बंगाल की खाड़ी एवं अरब सागर से जून से सितंबर तक बहती है वह देश के अधिकांश हिस्सों में वर्षा लाती हैं। इसी तरह, सर्दियों के मौसम के दौरान भूमि की ओर से समुद्र की तरफ बहने वाली उत्तर–पूर्व मानसून अथवा निर्वतनी मानसून कोरोमंडल तट में प्रयाप्त मात्रा में वर्षा लाती है।

f. उष्णकटिबंधीय चक्रवात एवं पश्चिमी विक्षोभ

उष्णकटिबंधीय चक्रवात निम्न दबाव (केन्द्र में) विशेषता वाली तीव्रता से घूर्णन करती तूफान प्रणाली है। जो प्रायः भारी वर्षा एवं खराब मौसम की स्थिति से संबंधित होते हैं। आमतौर पर, यह अरब सागर एवं बंगाल की खाड़ी के ऊपर विकसित होते हैं और प्रायद्वीपीय भारत के कई हिस्सों को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। आमतौर पर, उष्णकटिबंधीय चक्रवात बंगाल की खाड़ी के इर्द–गिर्द के

क्षेत्रों में दक्षिण–पश्चिमी मानसून के मौसम के दौरान विकसित होते हैं। सर्दियों के मौसम के दौरान, कुछेक चक्रवात को निर्वतनी मानसूनी पवनों के समय में देखा जा सकता है। इसी तरह, पश्चिमी विक्षोभ पूर्वी भूमध्य सागर के आसपास उत्पन्न होती हैं जो पश्चिमी ज़ेट प्रवाह के प्रभाव के अंर्तगत पूर्वी दिशा की ओर बहती है और मुख्यतः उत्तरी भारत के पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र और पंजाब में, हरियाणा, दिल्ली एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में शीतकाल की वर्षा/हिम अपने साथ लाती है।

g. उपरितन वायु परिसंचारण

एक महत्त्वपूर्ण सीमा तक भारतीय भूभाग में उपरि वायु परिसंचारण देश की जलवायु को प्रभावित करती है। ज़ेट प्रवाह द्वारा ऊपरि वायु परिसंचारण जलवायु को दो तरह से प्रभावित करती हैं (i) विशेषता सर्दियों के मौसम के दौरान ज़ेट प्रवाह का प्रभाव देश की जलवायु को प्रभावित करता है। वायु का तीव्र परिसंचारण पश्चिमी विक्षोप के द्वारा सर्दियों की वर्षा करने में उत्तरदायी होता है। (ii) पूर्वी ज़ेट प्रवाह अर्थात् उपरि वायु में उत्क्रम प्रतिलोम सर्दियों में घटित होता है जो तिब्बत के पठार में परितापन की वजह से उत्तरी गोलार्ध में उत्पन्न होता है। यह परिघटना पश्चिमी मानसून के आरंभ होने में मदद करता है।

इसलिए उपर उल्लिखित सभी कारक भारत की संपूर्ण जलवायवीय विशेषताओं को प्रभावित करते हैं।

भारत के प्रमुख मौसम

उपरलिखित विभिन्न संबंधित (जलवायु के) कारकों एवं तत्त्वों जैसेकि अक्षांशीय विस्तार, तापमान एवं वर्षा के आधार पर, निम्नलिखित चार प्रमुख मौसमों की पहचान की गई हैः

a) शीत का मौसम (मध्य दिसंबर से मार्च तक)

b) शुष्क गर्म मौसम (मध्य मार्च से मई तक)

c) आर्द्र मौसम (जून से दिसंबर तक)

d) निर्वतनी मानसून का मौसम (अक्टूबर से मध्य दिसंबर तक)

a) शीत का मौसम

इस मौसम के दौरान, आमतौर पर तापमान उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ता है। सर्दियाँ, आमतौर पर दिसंबर से आरंभ होकर फरवरी तक रहती है। वर्ष के सर्वाधिक देश के मध्य भाग से एक 20 अंश सेल्सियस की समताप रेखा पूर्व से पश्चिम की ओर गुजरती है जो पश्चिम में कच्छ भूमि को एवं पूर्व में गंगा डेल्टा को जोड़ती है। जनवरी के दौरान, उत्तर–पश्चिमी भारत औसतन 15 अंश सेल्सियस से कम तापमान अनुभव करता है जिसमें पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश एवं उत्तरी राजस्थान के क्षेत्र आवृत होते हैं। हालांकि, इन सर्दियों के महीनों के दौरान, जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड एवं सिक्किम में औसतन 10 अंश सेल्सियस से कम तापमान अनुभव किया जाता है। यह मुख्यतः ऊँचाई के कारक की वजह से इन सभी पर्वतीय राज्यों में घटित होता है। हालांकि, भारत के प्रायद्वीपीय क्षेत्र में कोई पूरी तरह से परिभाषित शीतकालीन मौसम नहीं होता है। तटीय इलाकों में तापमान के वितरण प्रतिरूप में शायद ही कोई मौसमी परिर्वतन होता है क्योंकि इन क्षेत्रों में समुद्र का मध्यम प्रभाव एवं भूमध्यरेखा से निकटता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

आमतौर पर, भारत के अधिकांश हिस्सों में शीतकालीन मौसम शुष्क रहता है। हालांकि, पश्चिमी विक्षोभ की वजह से उत्तरी भारत के क्षेत्रों जैसे मुख्यतः पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 5 सेंटीमीटर से कम वर्षा होती है। जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड में भी वर्षा होती है लेकिन हिम के रूप में। कोरोमंडल तट में भी अक्टूबर एवं नवंबर के महीनों के दौरान पूर्वीय अवसाद के कारण कुछ वर्षा होती है जो अंततः उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र की बंगाल की खाड़ी में उपस्थिति की वजह से होती है। जब निर्वतनी मानसून उत्तर–पूर्व से बंगाल की खाड़ी के इधर–उधर बहती है, जहां से यह पर्याप्त मात्रा में नमी को लाती है, जो तत्पश्चात् प्रायद्वीप की तरफ वापिस आते हुए खाली होती है। इसलिए, अक्टूबर से दिसंबर तक, तमिलनाडु के तट में कम से कम वार्षिक वर्षण का कुल 40 इंच (1,000 मिलीमीटर) वर्षा प्राप्त होती है।

b) शुष्क गर्म मौसम

उत्तर भारत में अप्रैल, मई एवं जून गर्मियों के महीने होते हैं। भारत के अधिकांश हिस्सों में, 30 से लेकर 32 अंश सेल्सियस के मध्य तापमान दर्ज किए जाते हैं। मार्च के महीने में, दक्कन के पठार में लगभग 38 अंश सेल्सियस अधिकतम दैनिक तापमान पाया जाता है जबकि अप्रैल के महीने में गुजरात एवं मध्य प्रदेश में 38 अंश सेल्सियस एवं 43 अंश सेल्सियस के बीच तापमान पाया जाता है। मई महीने में, ताप पट्टी उत्तर की ओर चलती है और उत्तर–पश्चिम भारत के हिस्सों में, 45 अंश सेल्सियस से अधिक तापमान कुछेक हिस्सों में अनुभव किया जाता है।

देश यह तीव्र तापमान बढ़ोतरी की अवधि है। अप्रैल तक, 40 अंश सेल्सियस माध्य अधिकतम तापमान के साथ सतपुड़ा श्रेणी के दक्षिण में स्थित क्षेत्र गर्म हो जाते हैं। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, पंजाब एवं हरियाणा राज्यों के कुछेक हिस्सों में माध्य अधिकतम तापमान 42 अंश सेल्सियस के लगभग रहता है। देश के पहाड़ी क्षेत्रों एवं पूर्वी हिस्सों में तापमान 40 अंश सेल्सियस तक नहीं बढ़ता है लेकिन यह औसतन 30 से 35 अंश सेल्सियस के बीच रहता है।

देश के केन्द्रीय भागों में वायु अत्यधिक शुष्क रहती है जबकि आपेक्ष आर्द्रता 30% के लगभग अथवा इससे भी कम (गर्मियों के मौसम) के दौरान रहती है। राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में इस मौसम के दौरान कुल वर्षा की मात्रा का 2.5 सेंटीमीटर जितनी निम्न वर्षा दर्ज की जाती है।

c) आर्द्र मौसम

मानसून के आरंभ होने से पूर्व, तापमान जून के महीने में अधिकतम सीमा तक पहुंचता है। कुछेक क्षेत्रों में 46 अंश सेल्सियस के लगभग तापमान अनुभव किया जाता है।

जोधपुर में जून के महीने के दौरान, औसत दैनिक तापमान लगभग 40 अंश सेल्सियस तक रहता है और 30 अंश सेल्सियस दिल्ली में, 38 अंश सेल्सियस अहमदाबाद एवं चैन्नई में, 34 अंश सेल्सियस बेलारी में ओर कोलकाता में लगभग 33 अंश सेल्सियस रहता है। मानसून के आरंभ होने के तुरंत पश्चात्, तापमान के मूल्यों में गिरावट आती है। जुलाई के महीने में औसत मापतान 30 अंश सेल्सियस से अधिक रहता है।

मई एवं जून के महीनों में उच्च तापमान के परिणामस्वरूप उत्तर–पश्चिमी भारत के ऊपर एक 997 मिलीबार के लगभग निम्न–दाब प्रणाली विकसित होती है और केरल के समीप लगभग 1009 मिलीबार का दबाव विकसित होता है। इस मौसम के दौरान, दक्षिण–पश्चिम मानसून से देश के अधिकांश भू–खंड में अच्छे मेघ आवरण एवं पर्याप्त

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

मात्रा में (लगभग 79 प्रतिशत) वर्षा प्राप्त की जाती है। दक्षिण–पश्चिम मानसून दो शाखाओं में विभाजित होता है, जिन्हें 'अरब समुद्र शाखा' एवं 'बंगाल की खाड़ी शाखा' के रूप में जाना जाता है, जो वर्षा का कारण बनती है। अरब समुद्र शाखा पश्चिमी तट, पश्चिमी घाट, महाराष्ट्र, गुजरात एवं मध्य प्रदेश और राजस्थान के हिस्सों में, वर्षा का कारण बनती हैं। बंगाल की खांड़ी वाली शाखा पूर्वी हिमालय से टकराती है एवं पश्चिम की तरफ विक्षेपित होकर गंगा के मैदान एवं उत्तर–पूर्व की ओर मुड़ जाती है। यह शाखा पश्चिमी तटीय क्षेत्रों में, सहयाद्री, मेघालय, अरूणाचल प्रदेश, सिक्किम एवं दार्जिलिंग की पहाड़ियों में 200 सेंटीमीटर से अधिक वर्षा प्राप्त होती है।

d) निर्वतनी मानसून का मौसम

अक्टूबर एवं नवंबर के महीनों को निर्वतनी मानसून के रूप में जाना जाता है। सितंबर के मध्य तक, गंगा के मैदान वाली निम्न दबाव गर्त सूरज की दक्षिणावर्त मार्ग की ओर अग्रसर होने की वजह से मानसून कमजोर हो जाता है। निर्वतनी मानसून का मौसम साफ आकाश की स्थिति एवं तापमान की वृद्धि द्वारा चिन्हित् होता है। भूमि अभी भी आर्द्र रहती है। उच्च तापमान एवं आर्द्रता की स्थितियों की वजह से, मौसम अपेक्षाकृत असहनीय हो जाता है। इसे सामान्यतः 'अक्टूबर तप' के रूप में जाना जाता है। अक्टूबर महीने के द्वितीय मध्य में, विशेषकर उत्तर भारत में पारा तीव्रता से गिरने लगता है। अक्टूबर महीने की पहली छमाही में, देश के प्रमुख भागों में 25 अंश सेल्सियस से लेकर 28 अंश सेल्सियस के बीच औसत तापमान अनुभव किया जाता है। राजस्थान, गुजरात एवं पूर्वी तट के तटीय मैदानी क्षेत्रों में लगभग 28 अंश सेल्सियस तापमान अनुभव किया जाता है। जैसे ही मानसून दक्षिण की ओर निर्वतन प्रारंभ करता है, और दाब प्रवणता निम्न हो जाती हे। इस समय के दौरान, आमतौर पर स्थानीय दबाव की स्थितियाँ वायु को प्रभावित करती हैं।

भारत में दक्षिण पश्चिमी मानसून के निर्वतनी समय के दौरान दक्षिणी पूर्वी तटीय क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में वर्षा प्राप्त की जाती है। तमिलनाडु राज्य इस समय के दौरान अपनी वार्षिक वर्षा का आधा भाग प्राप्त करता है। इसे शीतकालीन मानसून अथवा उत्तर–पूर्व मानसून कहा जाता है।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 1

a) भारत की जलवायु में मानसूनी हवाओं की भूमिका एवं सार पर व्याख्या कीजिए।

b) उपयुक्त उदाहरणों की मदद से, शीतकालीन मौसम की मुख्य विशेषताओं पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

4.3 वर्षा एवं तापमान का विवरण

भारतीय मौसम विभाग (IMD) ने भारत को चार विशिष्ट मौसमों में वर्गीकृत किया है। मौसम के आधार पर, तापमान एवं वर्षा के वितरण की व्याख्या की गई हैं। भारत के मुख्य मौसम निम्नलिखित हैः

भौगोलिक संदर्भ में भारत एक बृहत् देश है, इसके विविध क्षेत्रों में बहुत ही विविध प्रकार की जलवायवीय परिस्थितियां पाई जाती है। यह भारत में वर्षा के वितरण में भी दिखता है। कुछेक क्षेत्र बहुत अधिक वर्षा प्राप्त करते हैं और कुछ अन्य अत्यधिक विरल मात्रा में

वर्षा प्राप्त करते हैं। दर्ज किए गए अधिकतम एवं न्यूनतम वर्षा की मात्रा में लगभग 1178 सेंटीमीटर का अंतर है। इस अनुभाग में, हम औसतन वार्षिक वर्षा के अनुसार भारत के विभिन्न क्षेत्रों के बारे में चर्चा करेंगे।

4.4 भारतीय मानसून के विशेष संदर्भ के साथ वर्षण तंत्र

भारतीय मानसून की विविध संकल्पनाओं एवं सिद्धांतों की चर्चा करने से पूर्व, आपको सर्वप्रथम मूलतः भू–खण्ड एवं जल निकायों अथवा जलाशयों की विभेदी उष्णता की मूलभूत परिघटना को समझना होगा जिसके परिणामस्वरूप हवाओं का मौसमी उत्त्क्रम प्रतिलोम होता है।

भारतीय मानसून एक वर्ष में मौसमी परिवर्तन के साथ पवन प्रणाली के पूर्ण उत्त्क्रम प्रतिलोम होने की विशेषता होती है। शीतकाल के दौरान, व्यापारिक पवनों की दिशा में भूमि से समुद्र की तरफ (पूर्वोतर से दक्षिण–पश्चिम की ओर) शुष्क पवनें चलती हैं। इन पवनों में कम तापमान की विशेषता होती है और इसलिए यह उच्च दाब क्षेत्र (भू–खण्ड) से निम्न दाब क्षेत्र (समुद्र) की और चलती हैं। यह परिघटना ग्रीष्म मौसम के वक्त पूर्णतया परिवर्तित हो जाती हैं अर्थात् हवाएँ दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व दिशा में समुद्र से भू–खण्ड की और चलती हैं। भारतीय भू–खण्ड के ऊपर वर्षण का प्रतिरुप एवं तीव्रता अथवा उग्रता में विभिन्नता की वजह मुख्यतः, ग्रीष्म एवं शीतकाल मौसमों के दौरान भूखण्ड एवं समुद्र के ऊपर प्रचालित तापमान एवं दाब प्रणाली में अन्तर उत्तरदायी हैं।

उष्णता से उत्पादित प्रेरित कारकों की वजह से ग्रीष्म एवं शीतकालीन मौसमों के दौरान भू–खण्ड एवं समुद्र के ऊपर वैकल्पिक निम्न एवं उच्च दाब प्रणाली का निर्माण परिणामतः हवा का भू–खण्ड से समुद्र की और (शीतकाल के दौरान) एवं समुद्र से भू–खण्ड की ओर प्रसार होता है। ग्रीष्म के दौरान, देश के उत्तर–पश्चिमी भागों के ऊपर भू–खण्ड का तीव्र उष्णता की वजह से तापीय प्रेरित निम्न दाब निर्मित होता है। संबंधित मौसमों के दौरान, यह निम्न दाब क्षेत्र समथिस्थ समुद्रों के ऊपर उच्च दाब परिस्थितियों के विपरित यह पवन प्रणाली की दिशा, प्रतिरुप, उग्रता एवं प्रवाह को प्रभावित करते हैं। यह प्रतिरुप शीतकालीन मौसम में परिवर्तित हो जाता है जहां पर उत्तर–भारत में उच्च दाब क्षेत्र निर्मित होते हैं जबकि निकटवर्तो समुद्रों में निम्न दाब निर्मित होता है। ग्रीष्म एंव शीतकालीन मौसम के दौरान पवन प्रणाली की दिशा को नीचे चित्र 4.1 में दर्शाया गया हैः

चित्र 4.1: भारतीय मानसून के विशेष संदर्भ में वर्षण तंत्र

वर्षा की बुंदों की निर्माण प्रक्रिया (टक्कर–संलयन सिद्धांत)

यह सिद्धांत व्याख्या करता है कि संवहनी धाराओं के कारण जल की प्रत्येक बूंदें एक दूसरे के विपरीत मेघ से टकराती हैं। जब बड़े जल की बूंदें (जो अभी भी मेघ में निलंबित हैं) छोटे जल की बूंदों से टकराती हैं, वे संलीन होती हैं (मिलती हैं) जिसके कारण जल की बूंदें बड़ी हो जाती हैं। यह सिद्धांत उष्ण मेघों में वर्षाबूंदों के निर्माण की सबसे अच्छी व्याख्या करता है जो सुझाव देता है कि मेघों में छोटी बूंदें टकराव और संलयन के द्वारा बड़ी हो जाती हैं जब तक वे गिरने के लिए पर्याप्त भारी नहीं हो जाती हैं। नीचे दिया गया चित्र व्याख्या करता है कि कैसे वायुमंडल में टकराव और संलयन घटित होता है अंततः जो इस प्रकार बूंदों को वर्षा के रूप में गिरने के लिए पर्याप्त भारी बना देता है।

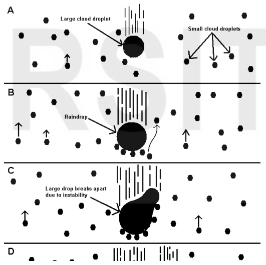

मानसूनी वर्षा भारतीय भू–खण्ड में मई के अंतिम सप्ताह से लेकर सितंबर के मध्य तक वर्षा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों को वर्षा की उपलब्धता मे पर्याप्त संभव बनाता हैं एवं नदियों के प्रवाह के आयतन में भी

प्रचुर बनाता है। इसके अलावा, उत्तर में हिमालय पर्वत भी आर्द्रतायुक्त वायु के लिए अवरोध के रुप में कार्य करने के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, जिसकी वजह से उत्तर भारत के अधिकांश भागों में वर्षा होती है। इस प्रकार, भारत की स्थिति बहुत अधिक अनुकूल रही हैं, जिसकी वजह से भू–खण्ड का एक हिस्सा अत्यंत एवं गंभीर सूखा या जलाभाव क्षेणी के अर्न्तगत आता है जबकि देश का अधिकांश हिस्सा वर्षा के रुप में र्प्याप्त जल प्राप्त करता है अथवा विभिन्न अन्य स्रोतों के द्वारा।

भारतीय मानसून

मानसून शब्द अरब शब्द 'मौसिम' से लिया गया है जिसका अर्थ है मौसम। यह एक विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में एक सामान्य वायुमंडलीय परिसंचारण हैं। जिसमें मुख्य हवाओं की दिशा में मौसमी परिवर्तन होता हैं। यहां पर भारतीय मानसून की उत्पति के संदर्भ में विविध धारणाएं मिलती हैं। इसकी उत्पति के संबंध में निम्नलिखित प्रमुख सिद्धांत हैं।

a) तापीय संकल्पना

एशियाई मानसून की उत्पति की व्याख्या करने के लिए यह 1686 में हैली द्वारा प्रस्तुत चिरप्रतिष्ठित सिद्धांत भी कहलाता है। इस संकल्पना के अनुसार मानसून महाद्वीपों एवं महासागरों की विभेदी उष्णता द्वारा उत्पादित बृहत पैमाने पर भूमि/थल एवं समुद्र हैं। ग्रीष्मकाल के दौरान, जब कर्क–रेखा पर सूर्य की किरणें लंबवत पडती हैं, एशिया का बृहत भू–खण्ड उष्ण होकर भूमि क्षेत्र में निम्न दाब निर्मित करता है जो शीतकाल में उल्टा हो जाता है जब मकर–रेखा पर सूर्य की किरणें उर्ध्वाधर पडती हैं, जो एशिया के भू–खण्ड की शीतलन में परिणामित होता है।

थल एवं समुद्र के विभेदी उष्णता के कारण, उच्च तापमान की वजह से भारतीय भू–खण्ड के ऊपर निम्न दाब विकसित होता है जबकि महासागरों के ऊपर उच्च दाब विकसित होता है। इसलिए, सतही वायु का प्रवाह समुद्र के ऊपर उच्च की तरफ और उष्ण थल की और निम्न होता है। भूमध्य रेखा को पार करते समय दक्षिण–पूर्वो व्यापारिक पवनें दाईं किनारे की ओर (फेरेल के नियम) विक्षेपित हो जाती हैं और भारतीय प्रायद्वीप में दक्षिण–पश्चिमी मानसून बन जाती हैं। क्योकि यह आर्द्रतायुक्त पवनें होती हैं इसलिए यह वर्षा प्रदान करती हैं।

हालाँकि, आधुनिक भूवैज्ञानिकों ने थल एवं समुद्र के ऊपर उच्च एवं निम्न दाब वाली तापीय उत्पति पर संदेह व्यक्त किया है और इसलिए वह नई संकल्पना गतिशील संकल्पना को लेकर आए हैं।

b) गतिक संकल्पना या अवधारणा

इस गतिक संकल्पना को फोहन नामक विद्वान द्वारा सन् 1951 में प्रतिपादित किया गया था। फोहन के अनुसार, वर्ष के विभिन्न महीनों में मानसून सूर्य की विविध अक्षांशों में स्थिति का अनुसरण करते हुए भूमंडलीय पवनों एंव दाब पट्टियों का मौंसमी प्रवास हैं। उत्तर अनयांग के दौरान कर्क–रेखा पर सूर्य की किरणे उर्ध्वाधर रुप में पड़ती हैं इसलिए दाब कटिबंध उत्तर की और विस्थापित होती हैं। अंततः उष्णकटिबंधीय अधिसरण क्षेत्र अथवा डोलड्रम उत्तराभिमुख की और बढ़ती हैं और इसकी उत्तरी सीमा 30 अंश उत्तर अक्षांश तक विस्तारित होती हैं आगे चलकर, उपमहाद्वीप के तीव्र परितापन से यह प्रक्रिया और तीव्र रूप लेती हैं। दाब कटिबंध के विस्थापन की वजह से, भारतीय उपमहाद्वीप विषुवतीय पश्चिमों पवनों के प्रभाव के अंतर्गत आती हैं जिन्हें दक्षिण–पश्चिमी मानसून कहा जाता है। शीतकालीन मौसम के दौरान, दाब एवं पवन

कटिबंधों के दक्षिणाभिमुख विस्थापन के कारण, उत्तर–पूर्वो व्यापारिक पवनों की भूमंडलीय प्रणाली इस क्षेत्र के ऊपर पुनःस्थापित हो जाती हैं। इन्हें पूर्वोतर शीतकालीन मानसून कहा जाता हैं जो शुष्क होती है। फोहन ने उष्णकटिबंधीय महाद्वीपीय वातावरण से लेकर सौर विकिरण की विभिन्नता को मानसून की उत्पति के संबंध में व्याख्या की है। हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता हैं कि उन्होंने ऊपरी वायुमंडलीय परिसंचारण को नजरअंदाज कर दिया है जो एशियाई मानसून को एक जटिल प्रणाली बनाता है।

c) भारतीय मानसून की उत्पति के बारे में वर्तमान संकल्पनाएँ

1950 के पश्चात् भारतीय मानसून के संबंध में संचालित शोध अभ्यासों से यह निष्कर्ष निकलता है कि इसकी उत्पति एवं तंत्र निम्नलिखित तथ्यों से संबंधित हैं:

- यांत्रिक अवरोध अथवा उच्च स्तरीय दाब के स्रोत के रुप में हिमालयी एवं तिब्बत के पठार की स्थिति की भूमिका।

- उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुवों में क्षोभमंडल के ऊपर (ऊपरी वायु) परिध्रुवीय भंवर का अस्तित्व।

- जेट–प्रवाह वायु या पवन का क्षोभमंडल में परिसंचारण।

- एशिया एवं इसके बृहत् भू–खण्ड एंव भारतीय महासागर का विभेदी परितापन एवं शीतलन।

- अल नीनों दक्षिणी दोलन (ENSO) की घटना।

उष्मा तंत्र के संदर्भ में संदेहों की एक श्रृंखला रही है जो यह कहती हैं कि इस प्रकार की उष्मा मानसून परिसंचारण उत्पन्न नहीं कर सकती हैं। वर्तमान के सिद्धांतों में वायुमंडल के ऊपर उपमहाद्वीप एवं निकटवर्तो क्षेत्रों के परिसंचारण पर बल दिया है। इसके अलावा, वर्तमान की संकलपनाएँ मानसून की उत्पति के लिए तिब्बत के पठार, जेट–प्रवाह एंव अल नीनों दक्षिणी दोलन को सामायिक कारकों में अधिक बल देती हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप में मानसून परिसंचारण का प्रारंभ करने के लिए तिब्बत का पठार महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। तिब्बत का पठार पश्चिम में 600 किलोमीटर से अधिक चौड़ा है और पूर्व में 1000 कि.मी. चौड़ा है। इसकी पश्चिम से लेकर पूर्व तक लंबाई लगभग 2000 कि.मी. है। इस पठार की औसत ऊंचाई जगभग 4000 मीटर हैं।

इस प्रकार, यह एक दुर्जेय रोधिका के रुप में यह एक उच्च मैदान का असाधारण खण्ड हैं। इसमें निकटवर्तो क्षेत्रों की अपेक्षा 2 अंश से लेकर 3 अंश तक अधिक तापमान रहता है। यह एक उच्च–स्तरीय उष्मा स्रोत के रुप में कार्य करता है। यह उष्मा इंजन इस क्षेत्र के ऊपर एक तापीय परिचक्रवात उत्पन्न करता है। यह हिमालय के दक्षिण में (परिचक्रपात) पश्चिमी उपोष्णकटिबंधीय जेट–प्रवाह को कमजोर करता है परन्तु परिचक्रवात के दक्षिणी किनारे में उष्णकटिबंधीय पूर्वो जेट उत्पन्न करता है। भारत के पूर्व में स्थित अक्षांशों में यह उष्णकटिबंधीय जेट–प्रवाह (सर्वप्रथम) विकसित होता है। और तब संपूर्ण भारत में पश्चिमाभिमुख विस्तारित होकर अरब सागर से पूर्वो अफ्रीका तक विस्तारित होता हैं। यह ऊपरी–स्तर के पूर्वो जेट तिब्बती पठार के दक्षिणी किनारे में हवा का प्रवाह निर्मित करते हैं जो उत्तरी भारत में निम्न स्तर तक नीचे पहुंचता है।

ग्रीष्म ऋतु के दौरान दाब प्रवणता में परिवर्तन एंव उत्तरी भारत के ऊपर हवा के प्रवाह के परिणामस्वरुप एवं साथ में, हिमालय के दक्षिण में स्थित तिब्बती पठार के ऊपर हवा का सूर्यातप उष्मा पश्चिमी उष्णकटिबंधीय जेट–प्रवाह को कमजोर करता है। यह सभी स्थितियाँ भारतीय उप–महाद्वीप के ऊपर दक्षिण पश्चिम मानसून के फटने का परिणाम बनती हैं। शीतकालीन एवं ग्रीष्म मौसम के दौरान जेट–प्रवाह एवं इसके प्रकार के प्रतिरुप को चित्र 4.2 में दर्शाया गया हैं।

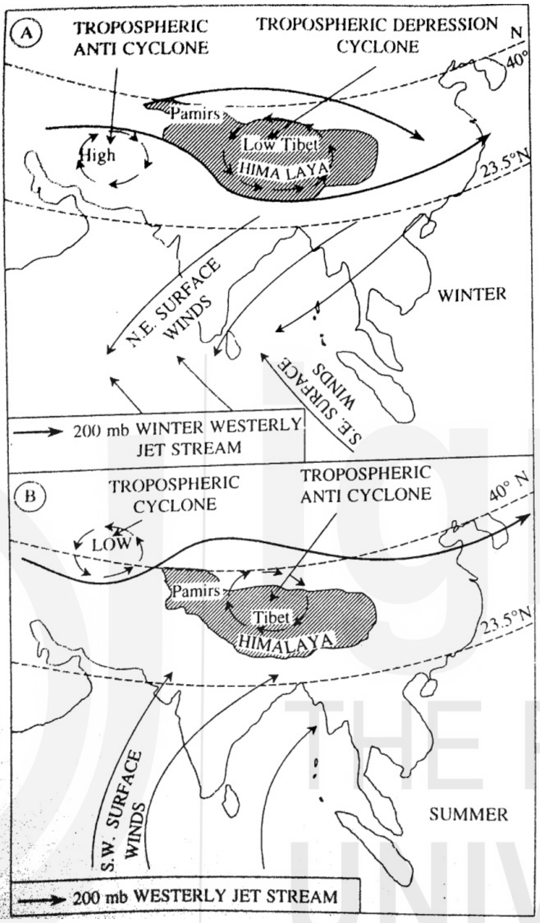

चित्र 4.2: जेट प्रवाह एवं इसके प्रवाह का प्रतिरुप

स्रोत : तिवारी, आर.सी, भारत का भूगोल, पृष्ट 109

भारत में वर्षा का वितरण

भारत में एक वर्ष के दौरान वर्षण की मात्रा अनियमित रहती है। जो देश के अधिकांश भाग में लगभग जुन से आरंभ होकर सितंबर के अंत तक अच्छी तरह से परिभाषित वर्षा के मौसम के साथ होती है। भारतीय मौसम विभाग के आँकड़ों के अनुसार, भारत में औसतन 118 सेंटीमीटर वर्षा होती हैं। भारत में वर्षा का वितरण निम्नलिखित रुप में हैं:

अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रः उत्तर–पूर्वो राज्य एवं पश्चिमी घाट के पवनाभिमुखी किनारे औसतन 300 से 400 सेंटीमीटर वार्षिक वर्षा प्राप्त करते हैं। असम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश एवं पश्चिमी घाट के पहाड़ी क्षेत्र उष्णकटिबंधीय वर्षा–प्रचुर वनों के स्रोत हैं। हालांकि, मेघालय के मौसिनराम गांव में भारत एवं विश्व की सर्वाधिक वर्षा 400 सेंटीमीटर दर्ज की गई हैं।

भारी वर्षण वाले क्षेत्रः 200 से 300 सेंटीमीटर तक वर्षा प्राप्त करने वाले क्षेत्र इस श्रेणी के अंतर्गत आते हैं। पूर्वो भारत का अधिकांश हिस्सा इस खण्ड में आवृत होती हैं। यह

क्षेत्र उष्णकटिबंधीय वर्षा–प्रचुर वनों के भी स्रोत हैं। पश्चिमी बंगाल, त्रिपुरा, नागालैंड, उड़ीसा एंव बिहार जैसे राज्य इस खण्ड के अंर्तगत आते हैं। उप–हिमालयी कटिबंध के अधिकांश क्षेत्र इस खण्ड के अंतर्गत आते हैं।

मध्यम वर्षण वाले क्षेत्रः 100 से 200 सेंटीमीटर वर्षा का अनुभव करने वाले क्षेत्रों में पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश के हिस्से एवं पश्चिमी घाट के प्रतिपवन किनारे शामिल हैं। इन क्षेत्रों की सबसे सामान्य प्राकृतिक वनस्पति में आर्द्र पर्णपाती वन शामिल हैं।

विरल वर्षण वाले क्षेत्रः इसके अर्न्तगत 50 से 100 सेंटीमीटर वर्षा वाले क्षेत्र आते हैं जिनमें महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश के हिस्से सम्मिलित हैं। उष्णकटिबंधीय घासस्थल, सवाना एंव शुष्क पर्णपाती वन इत्यादि इन क्षेत्रों में सामान्यता पाए जाते हैं।

मरुस्थल एवं अर्ध–मरुस्थल क्षेत्रः यह वह क्षेत्र हैं जहां पर 50 सेंटीमीटर से कम वर्षा प्राप्त होती है। वर्षा की मात्रा प्राप्त करने के आधार पर, राजस्थान, गुजरात एवं इसके निकटवर्तो क्षेत्रों को मरुस्थल अथवा अर्ध–मरुस्थल के रुप में वर्गोकृत किया गया है। जम्मू एवं कश्मीर के कुछेक भाग जैसे लद्दाख के पठार को भी इस खंड के अर्तगत शीत मरुस्थल के रुप में सम्मिलित किया गया है। यहां की वनस्पति पुष्ट से बनी होती हैं जो विस्तारित सूखे अथवा जलाभाव की स्थिति का सामना कर सके। गुजरात के कुछेक हिस्सों में सवाना प्रकार की वनस्पति पाई जाती हैं। राजस्थान राज्स के रुयली गांव में भारत की न्यूनतम वर्षा दर्ज की जाती हैं।

भारत में तापमान का वितरण

विश्व भर में तापमान का वितरण कारकों की श्रृंखला द्वारा प्रजालित होता है। विविध कारकों में महत्वपूर्ण कारक अक्षांश, ऊँचाई, दिन की लंबाई, पवन एवं समुद्र से निकटता इत्यादि सम्मिलित हैं। हम निम्नलिखित अनुच्छेदों में इनमें से प्रत्येक कारक पर संक्षेप में चर्चा करेंगेः

पृथ्वी ग्रह पर ऊर्जा का प्रमुख स्रोत सूर्य (सूर्यातप) हैं जो विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रुप में आता है क्षैतिज रुप से, यह व्यापक रुप से विभिन्नता युक्त हैं। जैसाकि तापमान सूर्यातप द्वारा नियंत्रित होता है, पृथ्वी पर तापमान के मूल्यों में व्यापक विविधताएँ नियंत्रित की जाती हैं।

अक्षांश एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योकि इससे सूर्य की किरणों का आपतन कोण एवं इसकी प्रभावशीलता निर्धारित होती है।

ऊँचाई भी तापमान के वितरण को प्रभावित करती हैं क्योंकि उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों में कम तापमान एवं इसके विपरीत होता है। ऊँचाई पर तापमान दोनो विपरित अथवा प्रतिलोम रुप से संबंधित होते हैं।

दिन की लँबाई को अन्य कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है। परन्तु महत्वपूर्ण नियम के अनुसार जितनी लंबी दिन की अवधि होगी, उतनी ही अधिक आने वाली सूर्य की विकिरण से प्राप्त होने वाली ऊर्जा होगी और इसलिए अधिक तापमान दर्ज किया जाता है। हालांकि, सूर्य की किरणों का आपतन एक अधिक प्रभावी भुमिका निभाता है। इसलिए, ध्रुवीय क्षेत्रों में लंबे दिनों की अवधि के बावजूद तापमान काफी कम रहता है।

पवनें उष्मा को एक अक्षांश से दूसरे अक्षांश में स्थानांतरित करती हैं। वह भूमि तथा जलाशयों के बीच उष्मा के आदान–प्रदान में भी सहायता करती हैं। समुद्री पवनों में समुद्र के मध्यम प्रभाव को तटीय क्षेत्रों तक ले जाने की क्षमता होती है जो कि शीतल ग्रीष्म एवं मृदु शीतकालीन मौसम में प्रकट होती हैं। यह प्रभाव केवल पवनाभिमुख किनारे की और स्पष्ट रुप से प्रत्यक्ष होता है (समुद्र की और उन्मुख किनारा) प्रतिपवन किनारे अथवा अंतस्थ क्षेत्रों में समुद्र का मध्यम प्रभाव नहीं दिखता है और इसलिए इन क्षेत्रों में तापमान की चरम सीमा का अनुभव होता है।

समुद्र से निकटता तापमान को निर्धारित करने के लिए एक बहुत महान नियंत्रक बल है। महाद्वीपों के अंतस्थ भागों में तापमान के अत्यंत रिकॉर्ड दर्ज किए जाते हैं। ग्रीष्म के मौसम में, यह इलाके बहुत गर्म होते हैं, लेकिन शीत समय में अत्यंत ठंड होते है। प्रचलित पवनें विश्व भर में तापमान का पुनर्वितरण करती है। ठीक ऐसा ही महासागरीय धाराओं द्वारा भी किया जाता हैं। यह दोनों ही अपने क्षेत्रों में (प्रभाव) तापमान को परिवर्तित करती हैं। ढाल एवं अभिमुखता भी सूर्य से प्राप्त ऊर्चा की मात्रा को निर्धारित करते हैं। भूमि की विशेषताओं एवं इसकी सतह के साथ वनस्पति का भी तापमान के वितरण पर अच्छा नियंत्रण होता है।

संपूर्णतया भूमध्यरेखा से तापमान का क्षैतिज वितरण घटता रहता है। जुलाई के दौरान, जब उत्तरी गोलार्ध में ग्रीष्म एवं दक्षिणी गोलार्ध में शीत होती है, सूर्य प्रत्यक्षता कर्क रेखा के ऊपर एवं निकटवर्तो क्षेत्रों पर चमकता है, इन क्षेत्रों में उच्च तापमान दर्ज किया जाता है। जबकि दक्षिणी गोलार्ध में तापमान निम्न रहता है। इसलिए, कर्क–रेखा के ऊपर अधिकतम तापमान रहता है और यहां से लेकर तापमान ध्रुवों की और घटता रहता है। ध्रुवीय क्षेत्रों में तापमान की प्रवणता अत्यधिक प्रबल होती है, समताप रेखाओं के अत्यधिक समीप होने से। जुलाई के दौरान, दक्षिणी गोलार्ध में ग्रीष्म की स्थिति प्रचलित रहती है, परन्तु उत्तरी गोलार्ध में शीत होता है। भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में तापमान की सीमा बहुत निम्न होती है क्योंकि सूर्य पूरे वर्ष में लगभग लंबवत या लंबवत के समीप होता है। उच्च अक्षांशीय क्षेत्रों में बहुत उच्च वार्षिक तापमान की सीमा अनुभव की जाती है। भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में, यह केवल 30 अंश सेल्सियस अथवा इससे कम रहता है जबकि एशियाई साईबेरिया के ध्रुवीय महाद्वीपीय क्षेत्रों में 600 अंश सेल्सियस से ऊपर वार्षिक तापमान की श्रेणी दर्ज की जाती है। यह अत्यंत कम तापमान के कारण होता है, परन्तु ग्रीष्म में, तापमान मध्यम रहता है जो इन दोनों के बीच अंतर को बड़ा बनाता है।

भारत के कृषि–जलवायवीय क्षेत्र

वर्षा की क्षेत्रीय विभिन्नता, तापमान की स्थिति, जलवायवीय प्रतिरूप और कृषि एवं फसल प्रणालियों के लिए उपयुक्त मृदा के प्रकार के आधार पर, यहां पर जलवायवीय प्रतिरूपों के आधार पर कृषि के भौगोलिक विभाजन किए गए हैं। यह विभाजन इस तरीके से क्रियान्वित किए गए हैं कि यह फसलों के आधार पर किसी विशेष क्षेत्र के संदर्भ में पूरे देश को विभाजित करती हैं।

इस प्रकार, एक कृषि–जलवायु क्षेत्र भूमि की एक इकाई है जिसका वर्गीकरण कुछेक फसलों की किस्मों की मुख्य जलवायवीय उपयुक्ता के आधार पर किया गया है। कृषि क्षेत्रों को सीमांकित करने का मूल उद्देश्य उत्पादन को सतत् बनाना एवं प्रादेशिक संसाधनों का भोजन, चारा एवं ईंधन की जरूरतों को अधिक वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन करना इत्यादि है। कृषि–जलवायु परिस्थितियाँ मुख्य रूप से मृदा के प्रकार, वर्षा,

तापमान तथा जल की उपलब्धता से संबंधित होती है जो प्राकृतिक वनस्पति के प्रकार को भी प्रभावित करती है।

भारतीय योजना आयोग ने अपनी सातवीं योजना में देश को 15 मुख्य कृषि–जलवायवीय क्षेत्रों में भू–आकृतिक, मृदा के प्रकार, भूवैज्ञानिक बनावट, जलवायु, फसल प्रतिरूप एवं सिंचाई और खनिज संसाधनों के विकास के आधार पर विभाजित किया है (चित्र 4.3)। इनमें से 14 मुख्य भूमि पर स्थित थे एवं शेष एक बंगाल की खाड़ी एवं अरब सागर के पास स्थित है। इसके अतिरिक्त, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा शुरूआत की गई राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान परियोजना (NARP) ने देश को कृषि प्रणाली, मुख्य फसलों, प्राकृतिक संसाधनों एवं उपादन की बाधाओं के आधार पर 127 कृषि–जलवायवीय क्षेत्रों में विभाजित किया है।

तालिका 4.1

प्रमुख कृषि क्षेत्र	भौगोलिक क्षेत्र/स्थिति	फसलें
उत्तर पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्र	जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड राज्य के पहाड़ी क्षेत्र	मक्का, केसर, जौ, गेहूँ, आड़ू, खुमानी, बादाम, चेरी एवं अखरोट आदि।
उत्तर पूर्वी पहाड़ी क्षेत्र	असम की पहाड़ी, अरूणाचल प्रदेश, सिक्किम, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा एवं पश्चिम बंगाल का दार्जिलिंग जिला।	चावल, आलू, मक्का एवं चाय, संतरे एवं नींबू
सतलुत यमुना का मैदानी क्षेत्र	पश्चिम बंगाल (पहाड़ी क्षेत्रों को छोड़कर) पूर्वी बिहार एवं ब्रह्मपुत्र घाटी।	चावल, दालें, कपास, आलू एवं मक्का
ऊपरी गंगा का मैदानी क्षेत्र	उत्तरी उत्तर प्रदेश एवं बिहार के हिस्से	चावल, बाजरा, मक्का, चना, गेहूं, जौ, आलू एवं सरसों
मध्य गंगा का मैदानी क्षेत्र	केन्द्रीय एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड राज्य का उधम नगर ज़िल्ला	गेंहू, गन्ना, चावल, बाजरा, चना, दाले, तिलहन एवं कपास
निम्न गंगा का मैदानी क्षेत्र	दक्षिणी–पूर्वी बिहार एवं पश्चिम बंगाल के आसपास के क्षेत्र	चावल, गेंहू, गन्ना एवं कपास
दक्षिण–पूर्वी पठारी क्षेत्र	छोटा नागपुर का पठार, झारखंड के हिस्से, छत्तीसगढ़ एवं उड़ीसा	चावल, मक्का, तिलहन, बाजरा, रागी, चना, अरहर, मूंगफली, सोयाबीन, उड़द एवं अरंडी
अरावली मालवा उच्च भूमि	बुंदेलखंड, बघेलखंड, मालवा का पठार एवं विन्धयन की पहाड़ी	बाजरा, गेंहू, चना, तिलहन, कपास एवं सूरजमुखी
महाराष्ट्र का पठारी क्षेत्र	महाराष्ट्र एवं दक्कन पठारी	कपास, गेंहू, चावल, ज्वार,

	क्षेत्र के कुछ भाग	बाजरा एवं दालें
दक्कन का अंतस्थ क्षेत्र	दक्कन का पठार, कर्नाटक के अधिकांश भाग, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु की उच्च भूमि	गेंहू, चना, बाजरा, कपास, वर्षा सिंचित क्षेत्रों में दालें, गन्ना, चावल एवं गेंहू सिंचित क्षेत्रों में (पहाड़ी ढालों के समांतर)
पूर्वी तटीय क्षेत्र	यह क्षेत्र कोरोमंडल तट के साथ आंध्र प्रदेश एवं उड़ीसा में आता है।	चावल, तंबाकू, चाय, गन्ना, मक्का, बाजरा, मूंगफली एवं तिलहन
पश्चिमी तटीय क्षेत्र	मालाबार, कोंकण तटीय मैदानों एवं सहयाद्री तक विस्तारित हैं।	नारियल, तिलहन, चावल, गन्ना, बाजरा, दालें एवं कपास
गुजरात क्षेत्र	इस क्षेत्र में काठियावाड़ की पहाड़ियाँ एवं मैदान तथा माही एवं साबरमती नदियों की घाटियां है।	चावल, मूंगफली, कपास, बाजरा, तिलहन, गेंहू एवं तंबाकू
पश्चिमी राजस्थान का क्षेत्र	राजस्थान पश्चिम अरावली एवं गुजरात के शुष्क क्षेत्र	बाजरा, ज्वार, मोथ प्रमुख खरीफ फसलें हैं।

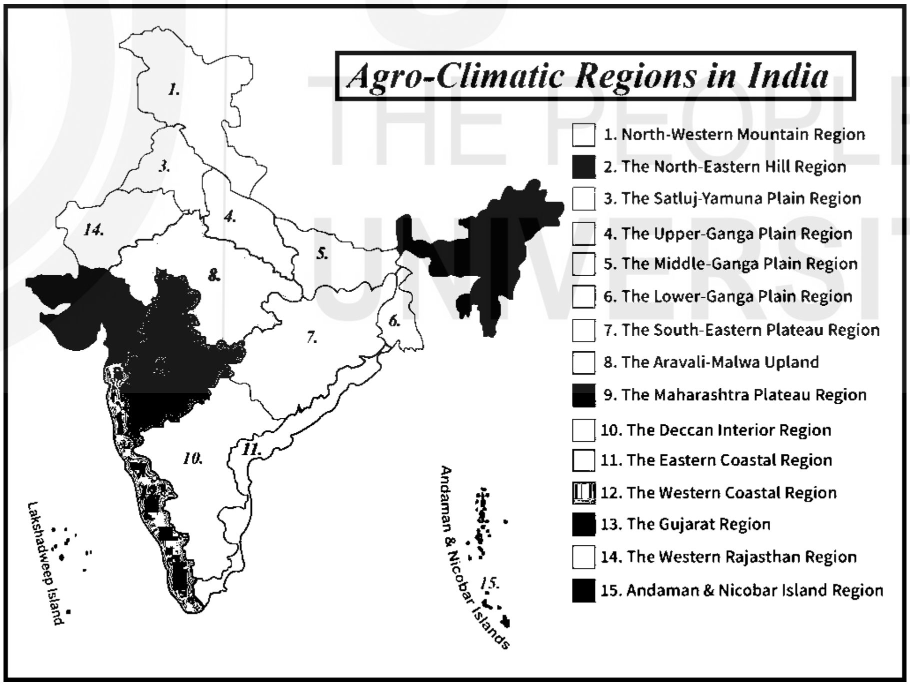

चित्र 4.3: भारतीय योजना आयोग के अनुसार मुख्य कृषि–जलवायवीय क्षेत्र।

स्व–मूलयांकन प्रश्न 2

कृषि–जलवायवीय क्षेत्र क्या हैं। उदाहरणों सहित संक्षेप में चर्चा करें।

4.5 सूखा अथवा जलाभाव

सूखा असामान्य रूप से शुष्क मौसम की एक विस्तारित अवधि होती है जब फसलों की खेती के लिए पर्याप्त वर्षा उपलब्ध नहीं होती है। सूखा कई महीनों या वर्षों तक रह सकता है और इसका मानव समाज के साथ–साथ क्षेत्र के पारिस्थितिक तंत्र पर बृहत् पैमाने में प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए वर्षा की कमी से फसल नष्ट हो सकती है जिसे एक तरह से आपदा भी माना जाता है। आपदा प्रबंधन पर उच्चाधिकार समिति की रिर्पोट के अनुसार 'कृषि, पशुधन, उद्योग एवं मानव जनसंख्या की सामान्य ज़रूरतों को पूरा करने के लिए किसी भी प्रकार की पानी की कमी को सूखा की संज्ञा प्रदान की गई है'। विशेषतया कृषक समुदायों के बीच, जलाभाव की गंभीरता का समाज पर बृहत् पैमाने पर प्रभाव पड़ सकता है। जल की अपर्याप्ता किसी विशेष क्षेत्र में प्रचलित कृषि–जलवायवीय परिस्थितियों को प्रभावित करती हैं। इसलिए सूखा क्षेत्र एवं फसल–विशिष्ट परिघटना है। वर्षा की कमी के कारण संकटमय स्थिति पैदा हो सकती है। इसलिए सूखे को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया गया है:

a) मौसम संबंधी सूखा या जलाभाव:

जब औसत वर्षा से एक महत्त्वपूर्ण गिरावट दर्ज की जाती है जो परिणामतः एक निश्चित अवधि के लिए सूखापन में दिखता है। भारतीय मौसम विज्ञान विभाग (IMD) ने सूखे को किसी भी क्षेत्र में जब सामान्य वर्षा से 75% वार्षिक वर्षा की औसत मात्रा प्राप्त होती है।

b) जलीय सूखा:

यह सतही एवं उप–सतही जल की आपूर्ति में कमी को संदर्भित करता है। मौसम संबंधी सूखा जलीय सूखे से संबंधित है।

जलीय जलाभाव अथवा सूखे को आगे निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया गया है:

i) **सतही जल सूखा:** यह सतही जल संसाधनों जैसे कि नदियाँ, सरिताएँ, झीलें, तालाब एवं सतही जलाशयों की अन्य प्रकारों के सूखने से संबंधित है। अधिकांशतः, सूखा मानवजनित गतिविधियों जैसे वनोन्मूलन, सड़कों का निर्माण, इमारतों तथा खनन गतिविधियों इत्यादि के कारण होता है।

ii) **भौमजल सूखा:** यह भौमजल की मात्रा में घटोतरी से संबंधित है। भौमजल के स्तर में गिरावट का कारण उद्योगों अथवा कृषि उत्पादकता में बढ़ोतरी के लिए भौमजल का अत्यधिक दोहन है। जब भौमजल के दोहन की दर पुनः पूरण की दर से अधिक होती है, इससे धीरे–धीरे भौमजल के स्तर में गिरावट होने की वजह से भौमजलीय सूखे की स्थिति पैदा हो जाती है। मृदा की प्रकृति मुख्यतः भौमजल के पुनः पूरण होने की दर को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, भारत के उत्तरी मैदान में संरध्र मिट्टी है, जो भौमजल को प्रायद्वीपीय क्षेत्र की कठोर मिट्टी की अपेक्षा अधिक तीव्र दर से पुनः पूरण करने के लिए संभव बनाता है।

iii) **कृषि सूखा:** यह मिट्टी की आर्द्रता में अपूर्णता को इंगित करता है जोकि मौसमी एवं जलीय सूखों के द्वारा संचारित होते हैं। जिसकी वजह से वस्तुतः वनस्पति के

लिए आर्द्रता की आपूर्ति में कमी होती है। कृषि सूखा फसलों की उत्पादकता एवं इस पर आश्रित कृषि समुदायों को प्रभावित करता है। 1960 के दशक में हरित क्रांति की शुरूआत के साथ, उच्च उपज देने वाली फसलों के किस्मों ने समय पर फसलों को जल प्रदान करने की आवश्यकता में बढ़ोतरी की है और किसी भी प्रकार की देरी से फसल उत्पादन को नुकसान हो सकता है और इसके परिणाम स्वरूप फसल नष्ट हो सकती है। ऐसा सूखा जो फसलों पर जल के अभाव अथवा अपूर्णता की वजह से गंभीर प्रभाव डालता है, ऐसे सूखे को 'कृषि सूखे' का नाम दिया गया है।

भारत के प्रमुख सूखाजनित प्रवृत

एक सूखा प्रवृत क्षेत्र को जब सूखा वर्ण में सूखे की संभावना 20% से अधिक रहती है, के रूप में परिभाषित किया गया है। एक चिरकालिक सूखा प्रवृत क्षेत्र वह है जिसमें एक वर्ष में सूखे की संभावना 40% से अधिक रहती है। एक सूखा वर्ष तब घटित होता है जब सामान्य दर से 75% कम वर्षा प्राप्त होती है। सूखे की परिस्थिति की प्रकृति के आधार पर, जो एक वर्ष में प्रचलित रहती है, भारत को चार प्रमुख क्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया है। भारत के चार सूखा प्रवृत क्षेत्र निम्नलिखित हैं (चित्र 4.4):

1. **शुष्क क्षेत्रः** इसमें राजस्थान, गुजरात एवं जम्मू–कश्मीर राज्यों के क्षेत्र सम्मिलित हैं जब संपूर्ण वर्ष का 50 सेंटीमीटर से भी कम वर्षा प्राप्त होती है।

2. **आर्द्र–शुष्क क्षेत्रः** इसमें पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश, तेलंगाना एवं मध्य प्रदेश के हिस्से एवं तमिलनाडू इत्यादि राज्य सम्मिलित हैं।

3. **उप–आर्द्र क्षेत्रः** पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल एवं उत्तर–पूर्वी राज्य इस तीसरे वर्ग के अंतर्गत आते हैं। यह उत्तरी मैदानों के आसपास का क्षेत्र आवृत्त करता है। उड़ीसा, पश्चिम बंगाल एवं छतीसगढ़ के कुछेक हिस्सों में उपरउल्लिखित श्रेणियों की विशेषताएँ नहीं पाई जाती हैं परन्तु यह मिश्रित प्रकार की होने के कारण इन्हें पृथक रूप में वर्गीकृत किया गया है।

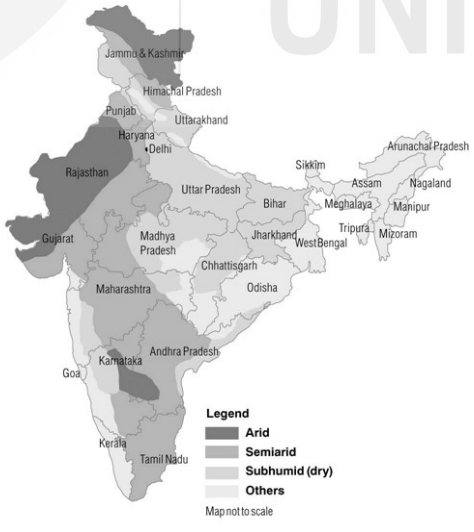

Source: Agro Economical Research Centre

चित्र 4.4: भारत के सूखा प्रवृत्त क्षेत्र

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 3

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

कृषि सूखा क्या है? उदाहरणों सहित संक्षेप में चर्चा कीजिए।

4.6 सारांश

इस इकाई में, आपने निम्नलिखित सीखा है:

- भारतीय जलवायु एवं मौसम की विशेषताएँ।
- भारत के विविध भौगोलिक क्षेत्रों में वर्षा और तापमान का विवरण।
- भारतीय मानसून एवं कृषि–जलवायवीय क्षेत्रों के विशेष संदर्भ में वर्षण तंत्र।
- भारत में विविध प्रकार के सूखे के बारे में सीखा है।

4.7 अंतिम प्रश्न

1. भारतीय मानसून के तंत्र की व्याख्या कीजिए।
2. आप सूखे से क्या समझते हैं? सूखे के प्रकारों की व्याख्या करें।
3. भारत के प्रमुख कृषि–जलवायवीय क्षेत्रों की व्याख्या करें।
4. भारतीय जलवायु की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए और इसको प्रभावित करने वाले कारकों पर भी चर्चा करें।

4.8 उत्तर

स्व–मूल्यांकन प्रश्न (SAQ)

1. a) भारत की जलवायवीय परिस्थितियों को रूपांतरित करने में मानसून एक महत्त्वपूर्ण भूमिका की तरह कृषि अर्थव्यवस्था में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

   b) भारत के उत्तरी भागों एवं दक्षिणी क्षेत्रों में इसमें तापमान की विभिन्नता के साथ कम तापमान की परिस्थितियों की विशेषता होती है। पश्चिमी विक्षोभ के कारण उत्तरी भारत के हिस्सों में शीतकालीन वर्षा एवं निर्वतनी मानसून के कारण तमिलनाडू के आसपास के क्षेत्रों में वर्षा भी इसकी एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

2. किसी क्षेत्र का कृषि–जलवायवीय वर्गीकरण जलवायवीय परिस्थितियों की उपयुक्तता पर आधारित होती है। इसे 15 प्रमुख प्रकारों में विभाजित किया गया है।

3. सूखा असाधारण रूप से शुष्क, मौसम की एक विस्तारित अवधि होती है जब फसलों की खेती के लिए पर्याप्त वर्षा नहीं होती है। इसे वर्षा की प्रवृति एवं तीव्रता के आधार पर चार मुख्य प्रकारों में विभाजित किया गया है।

अंतिम प्रश्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

1. इस प्रश्न का उत्तर देते समय, आपको उन प्रमुख लक्षणों को सम्मिलित करना चाहिए जो संक्षेप में मानसून के तंत्र को उजागर करने में मदद कर सकते हैं। आप अनुभाग 4.2 का संदर्भ ले सकते हैं।

2. आपके उत्तर में सूखे के अर्थ पर और इसके कृषि क्षेत्र एवं कृषक परिवारों अथवा समुदायों पर पड़ने वाले प्रभावों पर भी प्रकाश डालना चाहिए। आप उप–अनुभाग 4.2.3 का संदर्भ ले सकते हैं।

3. आपका उत्तर उपयुक्त उदाहरणों के साथ प्रमुख कृषि–जलवायवीय क्षेत्रों के मुख्य बिंदु पर केंद्रित होना चाहिए। आप अनुभाग 4.4 का संदर्भ ले सकते हैं।

4. आपके उत्तर में भारतीय जलवायु की प्रमुख विशेषताओं एवं इसको प्रभावित करने वाले मुख्य कारकों को सम्मिलित करना चाहिए। आप अनुभाग 4.2.2 का संदर्भ ले सकते हैं।

4.8 संदर्भ/आगे सुझावित पठ्न सामग्री

- Critchfield, H.J. (1993): *General Climatology*. New Delhi: Prentice Hall of India
- Deshpande C. D. (1992): *India: A Regional Interpretation*, ICSSR, New Delhi.
- Johnson, B. L. C, ed. (2001): *Geographical Dictionary of India*. Vision Books, New Delhi.
- Lal, D.S. (2011): *Climatology.* Sharda Pustak Bhawan, Allahabad.
- Singh R. L, (1971): *India: A Regional Geography*. National Geographical Society of India. Delhi.
- Singh, Jagdish (2003): *India; A Comprehensive & Systematic Geography*. Gyanodaya Prakashan, Gorakhpur.
- Tiwari R. C (2007): *Geography of India*. Prayag Pustak Bhawan, Allahabad.
- Tirtha, Ranjit (2002): *Geography of India.* Rawat Publishers, Jaipur.

इकाई 5

मृदा और वनस्पति

संरचना

5.1 प्रस्तावना
अपेक्षित सीखने के परिणाम
5.2 मृदा और प्राकृतिक वनस्पति की विशेषताएँ
5.3 वर्गीकरण और वितरण
5.4 भारत के प्रमुख मृदा और वनस्पति क्षेत्र
5.5 सारांश
5.6 अंतिम प्रश्न
5.7 संदर्भ अन्य पाठ्य सामग्री
5.8 उत्तर

5.1 प्रस्तावना

आपने खंड 1 की पिछली इकाइयों में उपमहाद्वीप में भारत की भौगोलिक स्थिति, भू–आकृति विज्ञान, अपवाह तंत्र और जलवायु का अध्ययन किया है। अब तक आप भौतिक विन्यास के इन सभी विषयों की भूमिका और प्रासंगिकता को विस्तार से समझ चुके होंगे। पांचवीं इकाई आपको मृदा और वनस्पति की व्यापक विशेषताओं तथा दूसरी, तीसरी और चौथी इकाइयों में वर्णित विषयों के साथ उनके संबंधों को समझने में मदद करेगी। मृदा पृथ्वी की सतह की पतली परत है, जिसमें चट्टानों के टूटने से बने भौतिक कण, जीवित जीवों के क्षय कार्बनिक पदार्थ, जल और वायु होता है। मृदा का निर्माण विशिष्ट प्राकृतिक दशाओ में होता है और प्राकृतिक पर्यावरण का प्रत्येक तत्व इस जटिल प्रक्रिया में योगदान देता है, जिसे मृदा वैज्ञानिकों ने 'पेडोजेनेसिस' (मृदाजनन) की प्रक्रिया के रूप में वर्णित किया है। मृदा–विज्ञान मृदा को एक प्राकृतिक इकाई, जैव रासायनिक रूप से अपक्षयित और प्रकृति का संश्लेषित उत्पाद मानती है। इस इकाई में हम मृदा और प्राकृतिक वनस्पति पर चर्चा करेंगे। अनुभाग 5.2 में मृदा और वनस्पति की विशेषताओं का वर्णन मिलेगा। अनुभाग 5.3 में, हम भारत की मृदा और प्राकृतिक वनस्पति के वर्गीकरण की योजनाओं और वितरण पर व्याख्या करेंगे। अनुभाग 5.4 में भारत के प्रमुख मृदा और वनस्पति प्रदेशो या क्षेत्रों का वर्णन मिलेगा। इस इकाई के अध्ययन से आप भारत की मृदा और प्राकृतिक वनस्पति और इन दो बहुमूल्य और मौलिक प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित समसामयिक महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में विस्तार से समझेंगे। ये मानव अस्तित्व और पृथ्वी के विविध पारिस्थितिक तंत्रों के रखरखाव एवं कल्याण के लिए सर्वोत्कृष्ट माने जाते है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप :

- भारत के मानचित्र पर प्रमुख मृदा प्रदेशो या क्षेत्रों की अवस्थिति ज्ञात कर सकेंगे;
- एक संसाधन के रूप में मृदा के महत्व को पहचान सकेंगे;
- भारत की प्रत्येक प्रमुख मृदा की मुख्य विशेषताओं को समझ सकेंगे;
- भारत में प्रमुख वनस्पतियो और उनकी विशेषताओं को समझ सकेंगे; तथा
- भारत के प्रमुख वनस्पति प्रदेशो या क्षेत्रों की अवस्थिति को ज्ञात कर सकेंगे।

5.2 मृदा और प्राकृतिक वनस्पति की विशेषताएं

मृदा

विशेषताओं का वर्णन करने से पहले, हम मृदा और वनस्पति की कुछ प्रमुख परिभाषाओं पर ध्यान देंगे। जोफ और मारबट के अनुसार ''मिट्टी प्राकृतिक सामग्री पर कार्य करने वाली प्राकृतिक शक्तियों द्वारा विकसित एक प्राकृतिक तत्व या पदार्थ है। इसे सामान्य रूप में भिन्न गहराई के खनिज और कार्बनिक घटकों के आधार पर संस्तर में विभेदित किया जाता है जो आकारिकी, भौतिक गुणों और घटकों, रासायनिक गुणों और संरचना तथा जैविक विशेषताओं में आधार जनक सामग्री से भिन्न होता है। रमन के अनुसार ''मृदा पृथ्वी की बाह्य पटल (ऊपरी सतह) की सबसे ऊपरी अपक्षयित परत है। इसमें छोटे टुकड़ों में चट्टानें होती है और उनमे रहने वाले पौधों और जानवरों के अवशेष सहित अधिक या कम रासायनिक रूप से बदल गई हैं।

मृदा की विभिन्न विशेषताओं में मूल सामग्री, खनिज पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ और इसकी बनावट शामिल हैं। हम प्रत्येक विशेषता का संक्षेप में वर्णन करेंगे।

मूल सामग्री: मृदा निर्माण के लिए सामग्री चट्टानों से प्राप्त होती है और इसे मूल सामग्री कहा जाता है। मूल सामग्री मृदा के रंग, बनावट के साथ–साथ इसकी खनिज संरचना को निर्धारित करती है। मूल सामग्री में ग्रेनाइट, संगमरमर के साथ–साथ स्लेट जैसी कठोर प्रतिरोधी चट्टानें तथा कम प्रतिरोधी चट्टानें जैसे ज्वालामुखी लावा और राख, और रूपांतरित (schist, gneiss) और अवसादी चट्टानें (बलुआ पत्थर, मिट्टी, गाद और चूना पत्थर) शामिल हैं।

खनिज पदार्थ : मृदा में खनिज पदार्थ की मात्रा 45% होती है। खनिज पदार्थ आकार में अत्यंत परिवर्तनशील होते हैं। कुछ छोटे चट्टान के टुकड़े जितने बड़े होते हैं जबकि अन्य चिकने महीन कण अत्यंत छोटे होते है जो सूक्ष्मदर्शी यंत्र या माइक्रोस्कोप की सहायता के बिना नहीं देखे जा सकते हैं। क्वार्ट्ज और कुछ अन्य प्राथमिक खनिज (बायोटाइट और मस्कोवाइट आदि) मूल चट्टान की संरचना में कुछ बदलाव के साथ बने रहते हैं। सामान्य तौर पर, प्राथमिक खनिज मृदा के मोटे कण में मिलते हैं। गौण खनिज (सिलिकेट, मिट्टी, लिमोनाइट और हेमेटाइट आदि) महीन सामग्री विशेष रूप से चिकनी मिट्टी में प्रमुख रूप से मिलते हैं। खनिज कण का आकार मृदा के गुणों को निर्धारित करता है।

जैव पदार्थ : इसमें आंशिक रूप से सड़े गले और अपघटित पौधे और जन्तुओं के अपशिष्ट होते हैं। मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा लगभग 5% होती है। मृत कार्बनिक पदार्थों के विघटन या टूटने से 'ह्यूमस' बनता है। यह संरचना रहित, गहरे भूरे या काले रंग की सड़ी गली मृदा सामग्री है जो मृदा सतह के भीतर पाई जाती है और उप–मृदा संस्तर की तुलना में ऊपरी परत को गहरा काला बनाती है। सूक्ष्मजीव ऐसी सामग्री को विघटित करते रहते हैं। परिणामस्वरूप, कार्बनिक पदार्थ अस्थायी मृदा के

तत्व है जो पौधों के अवशेषों के साथ नवीनीकृत होते हैं। कार्बनिक पदार्थ मृदा की भौतिक स्थिति और जल धारण क्षमता में भी सुधार करते हैं। यह मृदा सूक्ष्म जीवों के लिए ऊर्जा का एक प्रमुख स्रोत भी है। यह नाइट्रोजन, फास्फोरस और सल्फर जैसे पौधों के पोषक तत्वों का एक प्रमुख स्रोत है।

मृदा संरचना या गठन : यह आमतौर पर मृदा के कणों के आकार को बताता है। मृण्मय मृदा को महीन, बलुई मृदा को मोटे जबकि गाद एक मध्यवर्ती आकार है। मृदा कणों की माप के लिए मानक इकाई मिलीमीटर में है, लेकिन एक छोटी इकाई माइक्रोन (1 माइक्रोन = 0.001 मिमी) है जो मृदा कलिल या कोलॉइड की माप के लिए प्रयोग किया जाता है। बलुई मृदा, दोनों का आकार 0.05 और 0.2 मिमी के बीच भिन्न होता है जो नग्न आंखों से देखा जा सकता है। मृण्मय या चिकनी मृदा के दाने 0.002 मिमी व्यास के होते हैं। गाद रेत से महीन लेकिन चिकनी मृदा से मोटी होती है। इसलिए, इसके कणों का व्यास 0.02 और 0.002 मिमी के बीच पाया जाता है।

मृदा वायुः मृदा वायु मिट्टी के छिद्रों (अंतरालीय स्थानों) में मौजूद होती है, जो इसके कणों से नहीं बल्कि जल और आंशिक रूप से वायु से भरी होती है। मृदा संगठन में वायु की मात्रा 25% है। चूंकि रोमछिद्रों में जल और वायु दोनों होते हैं, इसलिए हवा का आयतन जल के आयतन के व्युत्क्रमानुपाती होता है। नमी या आर्द्रता की मात्रा बढ़ने के साथ वायु की मात्रा कम होती जाती है। मृदा वायु में नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड और जल वाष्प जैसी कई गैसें होती हैं। मृदा वायु में कार्बन डाइऑक्साइड का अनुपात अधिक होता है और वायुमंडलीय वायु की तुलना में ऑक्सीजन का अनुपात कम होता है। मृदा वायु में वातावरण की तुलना में नमी की मात्रा अधिक होती है।

प्राकृतिक वनस्पतिः

प्राकृतिक वनस्पति से तात्पर्य वनस्पति आवरण से है जो बिना किसी मानवीय हस्तक्षेप के भू–जलवायु कारकों के साथ स्वाभाविक रूप से वृद्धि करता है।

भारत में विविध जलवायु और भूआकृति के साथ विविध प्राकृतिक वनस्पति भी पाई जाती है। भारत विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक वनस्पतियों का देश है। हिमालय की ऊँचाइयाँ समशीतोष्ण वनस्पतियों, पश्चिमी घाट और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में उष्णकटिबंधीय वर्षा वन, डेल्टा क्षेत्रों में उष्णकटिबंधीय और गरान वन, राजस्थान के मरुस्थल और अर्ध–मरुस्थल इलाके कैक्टि, भिन्न प्रकार की झाड़ियों और कंटीली वनस्पतियों के लिए जाने जाते हैं।

जलवायु और मृदा में भिन्नता के आधार पर, भारत की वनस्पति एक दूसरे क्षेत्र से भिन्न होती है। भारत की प्राकृतिक वनस्पति उच्चावच और जलवायु दशाओं के साथ पूर्ण सामंजस्य स्थापित करती है। सिंधु–गंगा के मैदानों और थार मरुस्थल में विदेशज प्रजातियां हैं और तिब्बत और चीन के ट्रांस–हिमालयी क्षेत्रों से प्रवासित हुई हैं। उच्चभूमि की इस प्राकृतिक वनस्पति को बोरियल वनस्पति आवरण के रूप में वर्गीकृत किया गया है। अफ्रीका से आए विदेशज पादप प्रकारों ने थार जैसे शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों तथा भारत के विशाल मैदानों की वनस्पतियों को प्रभावित किया है। भारत–मलेशिया से अप्रवासीत प्रजातियों ने उत्तर–पूर्वी भारत के पहाड़ी क्षेत्रों के वनस्पति आवरण को प्रभावित किया है। प्रजातियों के अप्रवासन की प्रक्रिया न केवल निरंतर है, बल्कि समुद्र और वायु दोनों के माध्यम से अन्य भूमि के साथ संचार में वृद्धि के कारण इसमें महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। हालाँकि, कुछ विदेशज प्रजातियों के आने से भारत में

स्थिति अधिकांश स्थानिक प्रजातियों के लिए प्रतिकूल रही है। सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण लैंटाना झाड़ी और जलकुंभी का है, जो भूमि पर फैलते हैं और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पौधों के विकास को रोकते हैं।

भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से लगभग 6,75,500 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वनों के अंतर्गत आता है। भारत में वन हिमालय पर्वत, भाभर और तराई, पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट, बुंदेलखंड, उत्तर–पूर्वी पहाड़ियों, नीलगिरी, छोटानागपुर पठार और प्रायद्वीपीय भारत की अन्य पहाड़ियों पर फैले हुए हैं। राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार लगभग 33 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र वनाच्छादित होना चाहिए। हालाँकि, भारत में लगभग 22.50% वन क्षेत्र हैं, जो दुनिया के कई अन्य देशों में प्रतिशत आवरण के मामले में बहुत नीचे हैं।

भारत की प्राकृतिक वनस्पति को प्रभावित करने वाले कारक

प्राकृतिक वनस्पति के वितरण को प्रभावित करने वाले भौगोलिक कारकों में जलवायु, मृदा और स्थलाकृति शामिल हैं। वर्षा, तापमान और जलवायु में मौसमी भिन्नता भी प्राकृतिक वनस्पति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। वर्षा की मात्रा का वनस्पति के प्रकार पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। प्रति वर्ष 200 सेंटीमीटर (सेमी) या अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सदाबहार वर्षा वन होते हैं जबकि मानसूनी पर्णपाती वन 100 और 200 सेमी वर्षा वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। 50 से 100 सेंटीमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों में शुष्क पर्णपाती या उष्णकटिबंधीय सवाना जिसमे कांटेदार झाड़ियाँ हैं, जबकि 50 सेमी से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में केवल सूखी कांटेदार झाड़ियाँ होती हैं और कम खुली झाड़ियाँ अर्ध–रेगिस्तान में परिवर्तित हो जाती हैं।

समुद्र तल से 900 मीटर से अधिक की ऊँचाई जैसे हिमालय और प्रायद्वीपीय भारत की पहाड़ियों में, ऊँचाई के साथ तापमान में गिरावट आती है। इसके कारण, वनस्पति आवरण उष्णकटिबंधीय से उपोष्णकटिबंधीय से समशीतोष्ण और अंत में उच्चपर्वतीय प्रकार में परिवर्तित हो जाता है। भारत में बदलती विविध मृदा दशाएँ विविध प्रकार की वनस्पतियों जैसे गरान वन, दलदली वन, समुद्र तट और रेतीले तटीय वन आदि को जन्म देती है।

बोध प्रश्न 1

a) कार्बनिक पदार्थ और मृदा गठन या बनावट को परिभाषित करें।

b) भारत की प्राकृतिक वनस्पति को प्रभावित करने वाले कारकों की चर्चा कीजिए।

5.3 वर्गीकरण और वितरण

मृदा

मृदा सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों में से एक है। अतः मृदा को व्यवस्थित क्रम में वर्गीकृत करना आवश्यक है जैसा कि नीचे दिया गया हैः

A. भूवैज्ञानिक वर्गीकरण : यह एक प्राचीन वर्गीकरण पद्धति है जहां मिट्टी को भूगर्भीय सामग्री या चट्टानों के आधार पर विभिन्न समूहों में विभाजित किया गया था, जहां से मिट्टी की उत्पत्ति हुई थी। इस प्रणाली के अनुसार, मृदा को दो व्यापक समूहों में

विभाजित किया जा सकता हैः (1) गतिरहित या गतिहीन और (2) गतिशील या परिवहन। लाल मृदा, काली मृदा (रेगुर), लेटराइट मृदाएँ, डेल्टा मृदा, मरुस्थली और तराई मिट्टी जैसे अन्य मृदा समूहों को शामिल करने के लिए वर्गीकरण में सुधार किया गया था।

B. भौतिक वर्गीकरणः मृदा को कई समूहों या वर्गों में विभाजित किया जाता है जैसे कि बलुई, मृण्मय और दोमट आदि। इसमें मृदा की ऊपरी 6 से 7 इंच परत की यांत्रिक संरचना को ध्यान में रखते है। यह वर्गीकरण कृषि उद्देश्यों के लिए अधिक उपयोगी है।

C. जननिक या आनुवंशिक वर्गीकरणः यह मृदा की उत्पत्ति और उसके विकास पर आधारित है। यह वर्गीकरण प्रणाली मृदा परिच्छेदिका के अध्ययन पर आधारित है जो कि सभी मृदा निर्माण के कारकों और प्रक्रियाओं का प्रतिबिंब और परिणाम है। मृदा को स्पष्ट श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। उच्च श्रेणियों को क्रम, उप–क्रम, बड़े मृदा समूह और उप–समूहों के अंतर्गत रखा जाता है। क्रम स्तर पर, मिट्टी को कटिबंधीय (जोनल), अकटिबंधीय या अप्रादेशिक (एजोनल) और अंतःस्तर या कटिबंधातरिक (इंट्राजोनल) समूहों में वर्गीकृत किया जाता है। (a) कटिबंधीय (जोनल) मृदा कमोबेश परिपक्व होती है, उसमें विकसित संस्तर, रंग और संरचना हैं। कटिबंधीय (जोनल) मृदा जलवायु और वनस्पति के प्रभाव में विकसित होती है। (b) अकटिबंधीय या अप्रादेशिक मिट्टी अपरिपक्व होती है जिसमें परिच्छेदिका का कोई विकास नहीं होता है। अकटिबंधीय या अप्रादेशिक मृदा खड़ी चट्टानी ढलानों और ताजा जलोढ़ निक्षेपों पर मिलती है। इस मृदा में विकसित संस्तर का अभाव है। (c) मिट्टी की एक अलग परिच्छेदिका होती है जो जलवायु और वनस्पति के सामान्य प्रभावों की तुलना में उच्चावच की स्थानिक (स्थलाकृति) या मूल सामग्री से अधिक प्रभावित होती हैं।

सारणी 5.1ः प्रमुख मृदा समूह

क्रम	मृदा समूह
कटिबंधीय	1. मरुस्थली मृदा 2. धूसर मृदा 3. चेस्टनट 4. चर्नोज़ेम (काली मृदा) 5. लैटेराइट या मखरला मृदा 6. पॉडसॉल 7. भूरी मृदा 8. टुन्ड्रा मृदा
अंतःस्तर या कटिबंधांतरिक	1. लवणीय एवं क्षारीय मृदा 2. रेडजिना मृदा 3. पंक एवं दलदली मृदा
अकटिबंधीय या अप्रादेशिक	1. लिथोसोल या अधकचरी मृदा 2. रेगोसोल (सूखी रेत) 3. जलोढ़ मृदा

सारणी 5.2: मृदा के प्रकार और वितरण

क्रम स	मृदा प्रकार	स्थानीय वितरण
1.	जलोढ़ मृदा	उत्तरी विशाल मैदान (राजस्थान के अतिरिक्त) – पश्चिम बंगाल, असम, उड़ीसा, हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र, पश्चिमी मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र–कोंकण (तटीय जलोढ़ के रूप में)
2.	काली मृदा	डेक्कन लावा ट्रैक्ट (डेक्कन ट्रैप) जिसमें महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात और आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु, नर्मदा की नदी घाटियाँ, तापी, गोदावरी और कृष्णा शामिल हैं।
3.	लाल मृदा	छोटानागपुर पठार, मालवा पठार, तेलंगाना, नीलगिरी, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, दक्षिण–पूर्वी महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश के पूर्वी हिस्से, उड़ीसा के कुछ हिस्से, बुंदेलखंड, और दक्कन पठार के परिधि क्षेत्र, झारखंड, मेघालय, मिजोरम, मणिपुर और नागालैंड
4.	लैटेराइट या मखरला मृदा	कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु और असम के पहाड़ी क्षेत्रों, राजमहल पहाड़ियों और छोटानागपुर पठार, (बीरभूम, बांकुरा, मेदिनीपुर) पश्चिम बंगाल, मेघालय की गारो पहाड़ियाँ
5.	वन और पर्वतीय मृदा	असम, दार्जिलिंग, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और कश्मीर
6.	शुष्क और मरुस्थली मृदा	राजस्थान, सौराष्ट्र, कच्छ, हरियाणा और दक्षिण पंजाब
7.	लवणीय और क्षारीय मृदा	राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, पंजाब और महाराष्ट्र
8.	पीटमय और जैविक मृदा	केरल के पश्चिमी कोट्टायम और अलापुझा जिले, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य और उत्तरी बिहार और उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले

प्राकृतिक वनस्पति

एच. जी. चेम्पियन (1936) ने भारत में 116 प्रकार की वनस्पतियों की पहचान की है। बाद में, कई विद्वानों ने वनस्पति की उनकी विस्तृत वर्गीकरण योजना को सरल बनाने का प्रयास किया। कुछ उल्लेखनीय विद्वानों में जी. एस. पुरी (1960 में), लेग्रिस (1963 में), चेम्पियन और सेठ (1968 में) और एस.एस. नेगी (1990 में) शामिल हैं। इसलिए, उनकी सरलीकृत योजना के आधार पर, भारत की वनस्पतियों को 5 प्रमुख प्रकारों और 16 उप–प्रकारों में विभाजित किया गया है (चित्र 5.1)। इनकी चर्चा नीचे की गई है:

सारणी 5.3: वनस्पति के प्रकार

क्रम सं	वनस्पति के प्रमुख प्रकार	उप–प्रकार / अवप्ररूप

1	आर्द्र उष्णकटिबंधीय	1) उष्णकटिबंधीय आर्द्र–सदाबहार 2) उष्णकटिबंधीय अर्ध–सदाबहार 3) उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती 4) वेलांचली व अनूप
2	शुष्क उष्णकटिबंधीय	1) उष्णकटिबंधीय शुष्क सदाबहार 2) उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती 3) उष्णकटिबंधीय काँटेदार
3	पर्वतीय उपोष्ण कटिबंधीय	1) उपोष्ण कटिबंधीय चौड़ी पत्तियां पहाड़ी 2) उपोष्ण कटिबंधीय आद्र पहाड़ी (चीड़) 3) उपोष्ण कटिबंधीय शुष्क सदाबहार
4	पर्वतीय शीतोष्ण	1) पर्वतीय आर्द्र शीतोष्ण 2) हिमालय आर्द्र शीतोष्ण
5	अल्पाइन	1) उप–अल्पाइन 2) आर्द्रअल्पाइन झाड़ियाँ 3) सूखी अल्पाइन झाड़ियाँ

A. आर्द्र उष्णकटिबंधीय वनस्पति

1. **उष्णकटिबंधीय आर्द्र सदाबहार** : ये उन प्रदेशो में पाए जाते हैं जहां वार्षिक वर्षा 250 से.मी., वार्षिक तापमान 25°– 27°C तथा औसत सापेक्ष आर्द्रता 77% से अधिक होती है। अल्प शुष्क मौसम इसकी मुख्य विशेषता है। इस प्रकार की वनस्पतियों की प्रमुख विशेषता यह है कि उच्च गर्मी और उच्च आर्द्रता के कारण वृक्षों के पत्ते एक साथ नहीं झड़ते हैं और एक सदाबहार वन बनाते हैं। इस वनस्पति में समोद्भिदिय सदाबहार के साथ ऊंचे और बहुत घने बहुस्तरीय वन शामिल हैं जो न तो बहुत शुष्क और न ही बहुत आद्र जलवायु के अनुकूल हैं। इन वनों के पेड़ 45 मीटर ऊँचे तथा 60 मीटर से कम होते हैं। ये घने वितान वाले होते हैं और ऊपर से पत्ते की घनी वितान के साथ उष्णकटिबंधीय वर्षा वन की तरह दिखाई देते हैं। घने छत्र के कारण सूर्य का प्रकाश जमीन तक नहीं पहुंचने के कारण निचले हिस्से में वृद्धि कम हो पाती है। झाड़ झंखाड़ मुख्य रूप से फर्न, आरोही पादप, बांस और ऑर्चिडस का होता है। ये पश्चिमी घाट के पश्चिमी किनारे पर समुद्र तल से 500 से 1370 मीटर की ऊंचाई पर मुंबई के दक्षिण में पूर्वांचल पहाड़ियों और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में भी पाए जाते हैं।

   उष्णकटिबंधीय आर्द्र सदाबहार वनस्पति की लकड़ी सुक्ष्म, कठोर और टिकाऊ होती है। इन दृढ़ लकड़ी का उच्च व्यावसायिक मूल्य है लेकिन घने विकास, शुद्ध स्टैंड की अनुपस्थिति और परिवहन सुविधाओं की कमी के कारण इसका दोहन

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

करना बेहद चुनौतीपूर्ण कार्य है। महत्वपूर्ण प्रजातियों में महोगनी, मेसुआ, सफेद देवदार, जामुन, बेंत, धूप और बांस आदि शामिल हैं।

2. **उष्णकटिबंधीय अर्ध–सदाबहार**: ये उष्णकटिबंधीय आर्द्र सदाबहार और उष्णकटिबंधीय पर्णपाती के बीच माध्यमिक या संक्रमणकालीन वनस्पति आवरण हैं। ये आद्र उष्णकटिबंधीय सदाबहार प्रकार की तुलना में कम शुष्क होते हैं। ये उन प्रदेशों में पाए जाते है जहां वार्षिक वर्षा 200–250 से.मी., औसत वार्षिक तापमान 24 डिग्री से 27 डिग्री सेल्सियस और सापेक्षिक आर्द्रता लगभग 75% होती है। ये ज्यादातर असम, पश्चिमी तट, पूर्वी हिमालय के निचले ढलान, उड़ीसा और अंडमान में पाए जाते हैं।

   अर्ध–सदाबहार वनस्पति कम घनी होती है। ये झुंड में अधिक एकत्रित पाए जाते हैं और इनमें कई प्रजातियाँ मिलती है। पेड़ों में आमतौर पर प्रचुर मात्रा में एपिफाइट्स के साथ मजबूत तना होती है। इनमें खुरदरी और मोटी छाल, भारी आरोही पादप और कम बांस शामिल हैं।

   पश्चिमी घाट पर पाए जाने वाले लॉरेल, रोजवुड, मेसुआ, कांटेदार बांस, केंजू, कुसुम, मुंडानी, सेमुल, होपिया, कदम, इरुल आदि महत्वपूर्ण प्रजातियाँ हैं। जबकि हिमालय क्षेत्र में सफेद देवदार, भारतीय चेस्टनट या शाहबलूत और चंपा आदि पेड़ पाए जाते हैं।

3. **उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती**: इस प्रकार के वनस्पति में पेड़ों और घासों का मिश्रण मिलता है और उस क्षेत्र में पाए जाते हैं जहां वार्षिक वर्षा 100 से 200 से.मी., औसत वार्षिक तापमान लगभग 27 डिग्री सेल्सियस, तथा औसत सापेक्ष आर्द्रता 60 से 75% के बीच होती है।

   उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वनस्पति वृक्ष अनियमित होते हैं जिसकी ऊंचाई लगभग 25 से 60 मीटर है। इनमें बहुत अधिक दबे हुए पेड़ होते हैं और इनमें काफी झाड़–झंखाड़ यानी अववृद्धि होती है। ये सदाबहार प्रकार की वनस्पतियों की तुलना में बहुत बड़े क्षेत्र पर फैले होते हैं, लेकिन कृषि हेतु इसके बड़े भूभाग को साफ कर दिया गया है। ये मुख्य रूप से पश्चिमी घाट के सदाबहार वन आवरण के आसपास क्षेत्र में पाए जाते हैं। ये 77°E से 88°E देशांतर तक तराई और भाबर सहित शिवालिक श्रेणी के किनारे फैले हुए हैं। ये पूर्वी मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ की पहाड़ियों, छोटा नागपुर पठार, उड़ीसा के अधिकांश हिस्सों, पश्चिम बंगाल के कुछ हिस्सों और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में भी मौजूद हैं। ये मूल्यवान लकड़ी और अन्य उत्पाद जैसे सागौन, साल, लॉरेल, लेंडी, सेमुल, इरुल, रोजवुड, आंवला, कुसुम, जामुन और बांस आदि प्रदान करते हैं।

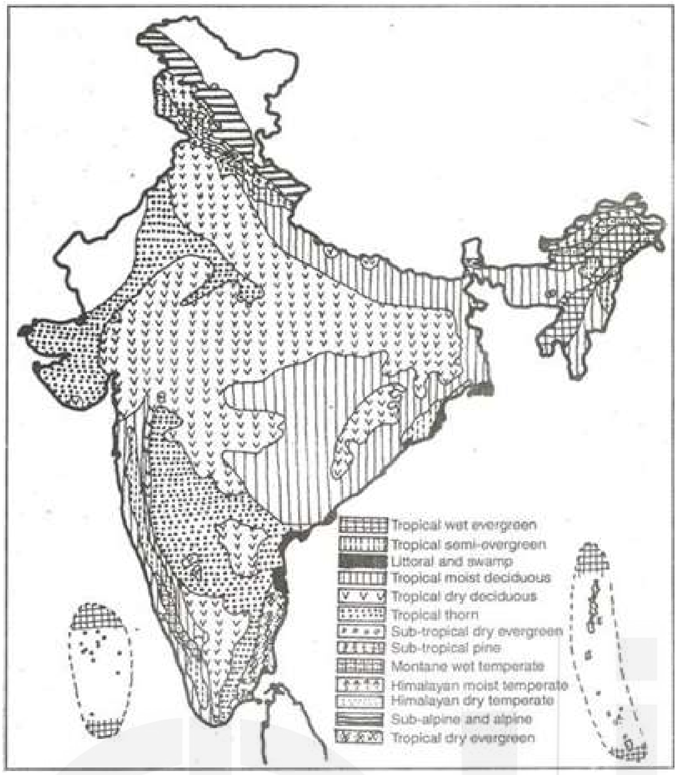

चित्र 5.1: भारत की वनस्पति
स्रोतः प्राकृतिक वनस्पति का वर्गीकरण, चेम्पियन और सेठ 1968

4. **वेलांचली और अनूप वन (तटीय और दलदल)**: यह वनस्पति प्रकार अलवणजल और लवणजल दोनों में पनपता है जो समुद्री जल और मीठे पानी का मिश्रण है। लवणता 0.5 से 35 ग्राम/किलोग्राम के बीच होती है। ये मुख्य रूप से डेल्टा के मुहानों और खाड़ियों के आसपास होते हैं जो ज्वार से प्रभावित होते हैं। ये मुख्य रूप से अंडमान और निकोबार के भीतर गंगा, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी के डेल्टा में पाए जाते हैं।

इनमें लगभग 30 मीटर ऊंचाई के गरान वृक्ष मिलते हैं जिसका उपयोग ईंधन के लिए किया जाता है। एपिफाइट्स पूरे वन में प्रमुख हैं, उच्च भूमि में स्क्रू पाइन्स (screw pines), जबकि निप्पा फ्रिटिकन्स (nippa friticans) दलदल और कोल या खाड़ियों में मिलती है। यहाँ सुंदरवन डेल्टा में सुंदरी (हेरिटेरा माइनर) नामक वृक्ष भी मिलते हैं जिससे यह आच्छादित है।

B. शुष्क उष्णकटिबंधीय वनस्पति

1. **उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती**: यह आर्द्र पर्णपाती और उष्णकटिबंधीय कांटेदार प्रकार के बीच एक संक्रमणकालीन वनस्पति आवरण है। वर्षा की मात्रा 70 से 100 समी, और औसत वार्षिक तापमान 15 से 22 डिग्री सेल्सियस के बीच रहता है। सापेक्षिक आर्द्रता 63 से 77 प्रतिशत रहती है। ये एक बड़े क्षेत्र को आवृत करते हैं और उत्तर–दक्षिण में हिमालय की तलहटी से कन्याकुमारी तक राजस्थान और पश्चिमी घाट और गुजरात के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और कर्नाटक को आवृत करते हैं। यहाँ की महत्वपूर्ण वृक्ष प्रजातियों में सागौन, लॉरेल, खैर, हर्रा, बेल, रोजवुड, सैटिनवुड, अंजैर, पलास, अमलतास और बिजसाल आदि शामिल हैं। इन वनों के बड़े हिस्से को कृषि के लिए साफ कर दिया गया है।

2. **उष्ण कटिबंधीय कांटेदार वन** : यह वनस्पति प्रकार बहुत कम वर्षा वाले क्षेत्रों में लगभग 50 से 70 सेमी और औसत वार्षिक तापमान 25 डिग्री सेल्सियस से 27 डिग्री के बीच पाया जाता है। सापेक्ष आर्द्रता 47% से कम होती है। ये मुख्य रूप से पश्चिमी हरियाणा, दक्षिण–पश्चिमी पंजाब, मध्य और पूर्वी राजस्थान, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पश्चिमी मध्य प्रदेश, कच्छ, और सौराष्ट्र के आसपास के क्षेत्र और सह्याद्रि के अनुवात दिशा ढलान (हवा की दिशा में) में पाए जाते हैं। यहां पाए जाने वाले वृक्ष 6–9 मीटर ऊंचे होते हैं तथा बड़े भाग में अविकसित मोटे घासस्थल पाए जाते हैं। वनस्पति के प्रजातियों में भारतीय खजूर, बबूल, कैक्टि, पलास, जंगली ताड़, झंड, कोक्को, कांजू और खेजरा आदि शामिल हैं।

3. **उष्णकटिबंधीय शुष्क सदाबहार** ये अक्टूबर से दिसंबर के महीनों तक लगभग 100 सेमी वर्षा वाले क्षेत्र में पाए जाते हैं। वे मुख्य रूप से कोरोमंडल तट के किनारे पाए जाते हैं। वार्षिक औसत तापमान 28 डिग्री सेल्सियस और सापेक्षिक आर्द्रता 74% है। इन वन में कम उँचाई वाले वनस्पति मिलती है जिसकी वितान (कैनोपी) 9–12 मीटर होती हैं। यहाँ की महत्वपूर्ण वृक्ष प्रजातियाँ टोडी पाम, कोक्को, जामुन, रीठा, खिरनी, इमली और नीम आदि हैं।

C. पर्वतीय उपोष्ण–कटिबंधीय वनस्पति

1. **आद्र उपोष्ण–कटिबंधीय (चीड़):** इस प्रकार की वनस्पति उत्तर–पश्चिमी हिमालय (कश्मीर के अतिरिक्त), खासी पहाड़ियों, नागालैंड और मणिपुर में पाई जाती हैं। ये 1000–1800 मीटर की ऊँचाई पर होते हैं। यहां, वार्षिक वर्षा 100–200 से.मी. के बीच, औसत तापमान 15 से 22 डिग्री सेल्सियस और सापेक्षिक आर्द्रता 63 से 77% के बीच होती है। चीड़ मुख्य वृक्ष है जो उच्च आर्द्रता वाले क्षेत्र में पाया जाता है। उपोष्णकटिबंधीय आर्द्र वनस्पतियों की अन्य महत्वपूर्ण प्रजातियाँ में बरसात के मौसम में घने घास के आवरण के साथ, जामुन, बांज और रोडोडेंड्रोन हैं।

2. **उपोष्णकटिबंधीय शुष्क सदाबहार**: यह भाभर, शिवालिक और पश्चिमी हिमालय में समुद्र तल से लगभग 1000 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है। यह पंजाब में हिमालय गिरिपाद क्षेत्र, हरियाणा और कश्मीर पहाड़ियों के कुछ हिस्सों में फैला है। वे 450 से 1500 मीटर की ऊंचाई पर पाए जाते हैं। औसत वार्षिक तापमान 20 डिग्री सेल्सियस है, वर्षा 50 से 100 से.मी. के बीच होती है और वर्षा दिनों की संख्या लगभग 26–38 दिनों की होती है। इसमें जैतून, बबूल, मोडेस्टा और पिस्ता आदि जैसे पेड़ों के साथ बबूल की विभिन्न प्रजातियां शामिल हैं। बारिश के मौसम में यहां घास उगती है।

3. **उपोष्ण–कटिबंधीय नम पहाड़ी:** यह वनस्पति विशेष रूप से असम और खासी पहाड़ियों के आसपास पूर्वी हिमालयी क्षेत्र में 900–1050 मीटर की ऊंचाई वाली पर्वत श्रृंखलाओं पर अपेक्षाकृत कम ऊंचाई वाले नम क्षेत्रों में पाई जाती है। ये पंचमढ़ी, नीलगिरि और महाबलेश्वर की पहाड़ियों में भी पाए जाते हैं। यहां वार्षिक वर्षा 78–146 वर्षा दिनों के साथ 150 सेमी से अधिक है। औसत वार्षिक तापमान 18 से 24 डिग्री सेल्सियस और सापेक्ष आर्द्रता 51–81% के बीच रहता है। ये उष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण आर्द्र या नम सदाबहार वृक्षों के मिश्रण हैं। कम घनी वितान (कैनोपी) और झाड़ियाँ के साथ वृक्षों की औसत ऊँचाई 15 से 30

मीटर होती हैं। पूर्वी हिमालय में पाए जाने वाले, प्रमुख वृक्ष प्रजातियाँ जामुन, माचिलस, एलियोकार्पस, कोलाइटिस और बांज और चेस्टनट हैं।

D. पर्वतीय शीतोष्ण वनस्पति

1. **आर्द्र शीतोष्ण:** ये समुद्र तल से 1800 से 3000 मीटर की ऊंचाई पर पाए जाते हैं। ये नीलगिरी, अन्नामलाई, पलनीशिल (1500 मीटर से ऊपर), हिमालय और असम पहाड़ियों (1800–2900 मीटर) के ढलान के किनारे पर मिलते हैं। यहाँ औसत वार्षिक वर्षा 150–300 सेमी, औसत वार्षिक तापमान 11–18 डिग्री सेल्सियस और सर्दियों के महीनों (दिसंबर–फरवरी) के दौरान हिमांक और घना कोहरा होता है। औसत सापेक्षिक आर्द्रता 80% से अधिक होती है। वृक्षों की ऊँचाई 15–18 मीटर होती है, जिन्हें दक्षिण भारत में शोला कहा जाता है। इस वनस्पति प्रकार की विशेषता घने अववृद्धि और कई एपिफाइट्स, काई और फर्न हैं। यहाँ पाए जाने वाली महत्वपूर्ण वृक्ष प्रजातियाँ मैगनोलिया, लॉरेल, रोडोडेंड्रोन, एल्म, प्रूनस और प्लम हैं। बांज, चेस्टनट और लॉरेल भारत के उत्तरी भाग में पाई जाने वाली सामान्य प्रजातियाँ हैं।

2. **हिमालय आर्द्र शीतोष्णः** ये हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, दार्जिलिंग, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश के साथ कश्मीर में हिमालय पर्वत श्रृंखला की पूरी लंबाई को आवृत करते हैं। ये 1500 मीटर – 3300 मीटर की ऊँचाई पर पाए जाते हैं। वार्षिक वर्षा 150 से.मी. से 250 से.मी. के बीच होती है। औसत वार्षिक तापमान 12 से 13 डिग्री सेल्सियस रहता है। वनस्पति में बांज, फर, स्प्रूस (Picea), देवदार (सेड्रसदेवारा), सेल्टिस, चेस्टनट, सेदार (Chamaecyparis) मेपल, सिल्वर फर कैल, यू, बर्च, की चौड़ी पत्ती वाले सदाबहार और शंकुधारी प्रजातियों की मिश्रित प्रजातियाँ शामिल हैं। वे बांज, रोडोडेंड्रोन और कुछ बांस सहित झाड़ीदार अवृद्धि के साथ उच्च और खुले वृक्ष के आवरण बनाते हैं।

3. **हिमालयी शुष्क शीतोष्णः** यह वनस्पति लद्दाख, चंबा, लाहौल, गढ़वाल और सिक्किम में पाई जाती है जहां वर्षा 100 से.मी. से कम होती है और ज्यादातर हिम के रूप में होती है। ये 1500 मीटर से अधिक की ऊँचाई पर पाए जाते हैं। ऐसा वनस्पति आवरण हिमालय के आंतरिक शुष्क श्रेणियों में पाया जाता है जहां दक्षिण–पश्चिम मानसून की नमी की मात्रा में कमी आती है। इस प्रकार के वन में जेरोफाइटिक झाड़ियाँ और वृक्ष मिलते हैं। कुछ महत्वपूर्ण और प्रमुख वृक्ष प्रजातियों में देवदार, जुनिपर, चिलगोजा (नियोजा), मेपल, ऐश सेल्टिस, जैतून और बांज आदि शामिल हैं।

E. उच्चपर्वतीय वनस्पति

उच्चपर्वतीय वनस्पति हिमालय पर्वतमाला में 3,000 मीटर से 4000 मीटर ऊँचाई के बीच घने वनस्पति आवरण के रूप में पाई जाती है। उच्चपर्वतीय वनस्पति हिमालय के दक्षिणी ढलानों पर एक कम सदाबहार झाड़ी और उत्तरी ढलानों पर शुष्क मरूद्भिदि वनस्पतियों के रूप में दिखाई देती है। पीर पंजाल में लगभग 2250 मीटर और 2750 मीटर की ऊँचाई पर नीचे ठूंठदार शंकुवृक्ष और ऊपर बर्फ के मैदान के साथ उच्चपर्वतीय चरागाह मिलते है जो ऋतु–प्रवासी गुर्जर खानाबदोशों द्वारा चराई के मैदान के रूप में उपयोग किया जाता है। पश्चिमी हिमालय में उच्चपर्वतीय प्रजाति के सफेद फूल जिन्हें 'ब्रह्मकमल' और 'कुठ' कहा जाता है, का उपयोग इत्र में किया जाता है।

उच्चपर्वतीय वनस्पति की महत्वपूर्ण वृक्ष किस्मों में सिल्वर फर, जुनिपर, चीड़ और बर्च शामिल हैं।

बोध प्रश्न 2

भारत की प्राकृतिक वनस्पति की वर्गीकरण योजना पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

5.4 भारत के मृदा और वनस्पति प्रदेश या क्षेत्र

भारत भूआकृति, उच्चावच, वनस्पति और जलवायु की विभिन्न दशाओं के साथ विशाल आयामों का देश है। इसलिए, भारत में मृदा समूहों की एक विशाल विविधता है, जो एक दूसरे से स्पष्ट रूप से भिन्न है। भारतीय मृदा को वर्गीकृत करने के लिए विभिन्न मानदंड अपनाये गए हैं जिसमें भूविज्ञान, उच्चावच, उर्वरता, रासायनिक संगठन और भौतिक संरचना आदि महत्वपूर्ण हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) ने भारतीय मृदा को आठ प्रमुख समूहों में विभाजित किया है। वे हैं (1) जलोढ़ मृदाएँ (2) काली मृदाएँ (3) लाल मृदाएँ (4) लैटेराइट मृदाएँ (5) वन और पर्वतीय मृदाएँ (6) शुष्क और मरुस्थली मृदाएँ (7) लवणीय और क्षारीय मृदाएँ और (8) पीटमय और जैविक मृदाएँ। इन आठ समूहों में से, कुल भूमि का लगभग 80% और लगभग सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र ,जलोढ़, काली, लाल और लेटराइट मिट्टी के क्षेत्रों में स्थित है।

जलोढ़ मृदाएँ: जलोढ़ मृदाएँ भारत की सर्वाधिक बृहत् और महत्वपूर्ण मृदा समूह है। देश के कुल भूमि क्षेत्र का लगभग 15 लाख वर्ग कि.मी. या लगभग 45.6% को आवृत करते हुए, ये मृदाएँ हमारी कृषि संपदा का सबसे बड़ा हिस्सा है और भारत की अधिकांश आबादी के भरण–पोषण में योगदान करती हैं। अधिकांश जलोढ़ मृदाएँ नदियों के अवसादों या तलछट के निक्षेपण से प्राप्त होती हैं जैसेकि सिंधु–गंगा के मैदान, हालांकि तटीय क्षेत्रों में कुछ जलोढ़ मृदाओं का सागरीय लहरों द्वारा विकास किया गया है। इस प्रकार, इन मृदाओं की जनक या मूल सामग्री की उत्पत्ति परिवहन से होती हैं।

जलोढ़ मृदाएँ पश्चिम में पंजाब से लेकर पूर्व में पश्चिम बंगाल और असम तक विशाल उत्तरी मैदानों में पाई जाती हैं। वे महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी के डेल्टा में भी पाए जाते हैं, जहां उन्हें डेल्टाई जलोढ़ कहा जाता है। तट के साथ, उन्हें तटीय जलोढ़ के रूप में जाना जाता है। कुछ जलोढ़ मृदाएँ नर्मदा और तापी घाटियों में भी पाई जाती हैं। पश्चिमी तट के साथ, जलोढ़ मृदाएँ केरल तट और गुजरात के मैदानों में पाई जाती है। प्रायद्वीपीय पठार की बड़ी घाटियों में जलोढ़ मिट्टी के संकरे पैबंद भी पाए जाते हैं।

भूगर्भीय रूप से, भारत के विशाल मैदान के जलोढ़ को नई या तरुण 'खादर' तथा पुरानी 'बांगर' मृदा में विभाजित किया जाता है। खादर मृदा घाटी के निचले इलाकों में पाई जाती है, जहां लगभग प्रति वर्ष बाढ़ आती है। वे पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार में होते हैं जहां बाढ़ सामान्य परिघटना है। वे हल्के भूरे, बलुई, मृण्मय, दोमट, सूखे और निक्षालित, कम कैल्शियमयुक्त और कार्बनयुक्त होते हैं। जबकि बांगर बाढ़ के स्तर से लगभग 30 मीटर की ऊँचाई पर पाए जाते हैं। इन मृदाओं का रंग गहरा होता है क्योंकि इनमें अधिक मृण्मय या चिकनी मिट्टी होती है। नरम परत और उर्वरता के कारण, जलोढ़ मृदा सिंचाई के लिए सबसे उपयुक्त होती है और नहर और नलकूप

सिंचाई से अच्छा परिणाम मिलता है। बेहतर जलोढ़ मृदा में चावल, गेहूं, गन्ना, तंबाकू, कपास, जूट, मक्का, तिलहन, सब्जियां और फलों की शानदार फसलें पैदा होती हैं।

काली मृदाएँः काली मृदा को रेगुर और काली कपास मिट्टी भी कहा जाता है क्योंकि कपास इस मृदा में उगाई जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण फसल है। भौगोलिक रूप से, काली मृदा 5.46 लाख वर्ग कि.मी. में फैली हुई है, यानी देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 16.6% हिस्सा जो 15°N से 25°N अक्षांश और 72°E से 82°E देशांतर के बीच है। यह उच्च तापमान और वर्षा का क्षेत्र है। इसलिए, यह प्रायद्वीप के शुष्क और गर्म क्षेत्रों का मृदा समूह है। यह मृदा मुख्य रूप से महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक के कुछ हिस्सों, आंध्र प्रदेश, गुजरात और तमिलनाडु में पाई जाती है। टाइटेनिफेरस मैग्नेटाइट या लोहे और मूल चट्टान के काले घटक, क्रिस्टलीय शिस्ट और मूल नाइस (gneisses) से इस मृदा का रंग काला होता है।

इस मृदा समूह में काले रंग के विभिन्न वर्ण जैसे गहरा काला, उथला काला, मध्यम काला और यहां तक कि काले और लाल रंग का मिश्रण भी होता है। बजरी और मोटे दाने रेत के गैरमौजुदगी में, लगभग 62% या उससे अधिक के बड़े मृण्मय के कारण विशिष्ट काली मिट्टी अत्यधिक कठोर होती है। इसमें 10% एल्यूमिना, 9–10% आयरन ऑक्साइड और 6–8% चूना और मैग्नीशियम कार्बोनेट भी होता है। इस प्रकार के मृदा समूह में नमी होती है। बरसात के मौसम में यह मृदा गीले होने पर फूल जाती है और चिपचिपी हो जाती है जो इसे किसी भी खेती के लिए प्रतिकूल बना देता है। हालांकि, शुष्क मौसम के दौरान, नमी वाष्पित हो जाती है और मिट्टी के कण सिकुड़ जाते हैं जिससे लगभग 10–15 सेंटीमीटर चौड़ी और एक मीटर गहरी दरारें बन जाती हैं। यह मिट्टी के ऑक्सीजन को पर्याप्त गहराई तक ले जाने में सहायक होता है।

काली मृदा की उर्वरता उच्चभूमि में कम होती है, जबकि वे गहरी घाटियों में समृद्ध होती हैं। उच्च उर्वरता और नमी धारण करने की क्षमता के कारण, इस मृदा का उपयोग सदियों से उर्वरक या खाद के उपयोग के बिना विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाने के लिए किया जाता रहा है। काली मृदा में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलें कपास, गेहूं, ज्वार, अलसी, सूरजमुखी, बाजरा, अरंडी, तंबाकू आदि हैं। बेहतर सिंचाई सुविधा के साथ, चावल और गन्ना भी इस मृदा में उगाए जाते हैं। सब्जियां और फल भी काली मृदा में उगाए जाते हैं।

लाल मृदाएँ: लाल मृदाएँ भारत में सबसे बड़े मृदा समूह है जो लगभग 3.5 लाख वर्ग किलोमीटर के विशाल क्षेत्र में फैली हुई हैं और देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 10.6% है। ये मृदाएँ प्राचीन रवेदार या क्रिस्टलीय और कायांतरित चट्टानों के अपक्षय के कारण अस्तित्व में आई हैं। इस प्रकार की मृदाओं की मुख्य मूल चट्टान एसिड ग्रेनाइट और नाइस, क्वार्टज़ाइट और फेल्सपैथिक है। लाल मृदाओं में चूना, मैग्नेशिया, फॉस्फेट, नाइट्रोजन और ह्यूमस की कमी होती है, लेकिन पोटाश से भरपूर होती है। उनकी रासायनिक संगठन में मुख्य रूप से सिलिसियस और एल्युमिनस शामिल हैं। इसके गठन में बलुई के साथ मृण्मय की मात्रा होती है लेकिन अधिकांश दोमट किस्म की होती है।

ये मृदाएँ आम तौर पर लाल रंग की होती हैं लेकिन भूरे, चॉकलेट, पीले, भूरे और यहां तक कि काले रंग के अन्य रंगों में भी पाइ जाती हैं। लाल मृदाएँ लगभग पूरे तमिलनाडु, कर्नाटक के कुछ हिस्सों, महाराष्ट्र के दक्षिण पूर्व, आंध्र प्रदेश के पूर्वी हिस्से, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा और झारखंड में छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र में पाई

जाती है। जबकि, उत्तरी भारत में, लाल मृदाएँ दक्षिण बिहार के बड़े हिस्से, पश्चिम बंगाल के बीरभूम और बांकुरा जिलों, उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, झांसी, बांदा और हमीरपुर जिले, अरावली और राजस्थान के पूर्वी हिस्से, असम के कुछ हिस्सों, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा और मेघालय में फैली हुई हैं। लाल मृदाएँ ऊसर, पतली और बजरी, रेतीली या पथरीली और उच्च भूमि में झरझरा होती है, लेकिन तराई पर समृद्ध, गहरी भूरी और उपजाऊ होती हैं। बेहतर सिंचाई प्रबंधन और उर्वरकों के उचित उपयोग से लाल मृदाएँ कपास, चावल, बाजरा, गेहूं, दलहन, तिलहन, आलू, तंबाकू के साथ–साथ फलों और सब्जियों की उत्कृष्ट पैदावार मिलती है।

लैटेराइट या मखमला मृदाएँः लैटेराइट लैटिन शब्द से बना है जिसका अर्थ 'ईंट' होता है। इसे पहली बार बुकानन ने 1810 में एक मृण्मय चट्टान पर प्रयोग किया जो प्रकट हाने पर कठोर हो जाती है। लैटेराइट मृदा उच्च तापमान और भारी वर्षा वाले क्षेत्रो में परस्पर आर्द्र एवं शुष्क अवधि के साथ विकसित होती है। जॉर्ज कुरियन के अनुसार, ''यह संभवतः 200 से.मी. से अधिक भारी वर्षा वाले क्षेत्रों में अपघटन का परिणाम है।'' इस तरह की जलवायु दशा में मृदा निक्षालन होती है जिससे चूना और सिलिका निक्षालित हो जाते है तथा लोहे के ऑक्साइड और एल्यूमीनियम यौगिकों से भरपूर मृदाएँ शेष रह जाती है। लैटेराइट मृदा लगभग 2.48 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में मिलती है और मुख्य रूप से समुद्र तल से 1000 से 1500 मीटर ऊपर पश्चिमी घाट के शिखर पर स्पष्ट होती है। ये पूर्वी घाट, राजमहल की पहाड़ियों, मालवा पठार, विंध्य और सतपुड़ा में भी पाए जाते हैं, देश के दक्षिणी हिस्सों जैसे महाराष्ट्र और कर्नाटक के कुछ हिस्सों, आंध्र प्रदेश और केरल में भी इसका विकास हुआ है। पूर्वी भाग में, यह उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मेघालय और असम में पाया जाता है। लैटेराइट मृदा में नाइट्रोजन और पोटाश की कमी होती है और चूने और मैगनीसिया की बहुत अधिक कमी होती है। हालांकि, कभी–कभी आयरन फॉस्फेट के रूप में फॉस्फेट मिलती है। कुछ स्थानों पर ह्यूमस की मात्रा अधिक होती है। गहन निक्षालन के कारण लैटेराइट मिट्टी में उर्वरता की कमी होती है, लेकिन बेहतर सिंचाई और खाद सुविधा के साथ यह चाय, रबर, कॉफी, सिनकोना, सुपारी और नारियल आदि जैसे वृक्षारोपण फसलों को उगाने के लिए उपयुक्त होते हैं। निचले इलाकों में पाए जाने वाली लैटेराइट मृदा धान की खेती के लिए भी अनुकूल होती है। अपक्षय का परिणाम होने के कारण इसे और अधिक अपक्षयित नहीं किया जा सकता है जो मिट्टी को टिकाऊ बनाता है।

वन और पर्वतीय मृदाएँः यह देश में 2.85 लाख वर्ग किलोमीटर में फैली हुई है जो भारत के कुल भूमि क्षेत्र का लगभग 8.67% है। यह वनाआच्छादित पहाड़ियों की ढ़लानों पर पाई जाती है। इनका निर्माण मुख्यतः वनों से प्राप्त कार्बनिक पदार्थों के अभिलक्षणिक निक्षेपण द्वारा होता है। इनमें बड़ी मात्रा में अपघटित पत्ते, फूल और अन्य कार्बनिक पदार्थ होते हैं जिन्हें ह्यूमस कहा जाता है। हालांकि, इनमें पोटाश, फास्फोरस और चूने की कमी है। इसलिए, उच्च फसल पैदावार के लिए इसे अच्छी मात्रा में उर्वरकों की आवश्यकता होती है। ऐसी मिट्टियाँ विषमांगी होती हैं, उनके लक्षण मूल चट्टानों, भू–विन्यास और जलवायु के साथ बदलते हैं। हिमालय की अधिक ऊँचाई पर, ये मृदाएँ मुख्य रूप से घाटियों, गर्त और अल्प ढलानों में पाई जाती है जो पोडजोल हैं। सह्याद्री और पूर्वी घाट जैसे निचले इलाकों में, भूरी मृदा (ब्राउन अर्थ) आम होती है। इस वन मृदाओं का कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल में चाय, कॉफी, मसालों और फलों के बागानों के लिए कुशलतापूर्वक उपयोग किया जाता है जबकि जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में गेहूं, मक्का, जौ और समशीतोष्ण फल उगाए जाते हैं।

शुष्क और मरुस्थली मृदाएँः ये राजस्थान के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों और सिंधु और अरावली के बीच स्थित पंजाब और हरियाणा के आसपास के क्षेत्रों में फैली हुई है। ये 1.42 लाख वर्ग किलोमीटर पर फैले हैं जो कुल भूमि क्षेत्र का 4.32% है। इन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा 50 से.मी. से कम होती है और ये मरूस्थलीय दशाओं से प्रभावित होते हैं। गुजरात में कच्छ का रण इसी मरुस्थल का विस्तार है। ये बनावट में मुख्य रूप से बलुई (रेतीले) होते हैं और उप–मृदा के वाष्पीकरण से लवण की मात्रा होती है जो मृदा के विकास को रोकती है। रेत का निर्माण सतह चट्टानों के यांत्रिक विघटन से या सिंधु बेसिन और तट से प्रचलित दक्षिण–पश्चिम मानसूनी पवनों द्वारा उड़ा कर लाइ गई बालू से होता है। मरुस्थली मृदा में 90 से 95% वातोढ़ रेत और 5 से 10% चिकनी मिट्टी होती है। इनमें घुलनशील मृदाओं की उच्च प्रतिशता, कैल्शियम कार्बोनेट भिन्न मात्रा के साथ क्षारीय होती है, और मुख्य रूप से कार्बनिक पदार्थों की कमी होती है। इनमे नाइट्रोजन की मात्रा कम होती है। हालाँकि, नाइट्रेट्स के रूप में नाइट्रोजन की कुछ उपलब्धता होती है। इनमे फास्फोरस की मात्रा अनिवार्य रूप से अधिक होती है। इसलिए, फास्फोरस और नाइट्रेट्स इसे नमी उपलब्ध होने पर उपजाऊ बनाती है। हालांकि, मरुस्थली मृदा वाले बड़े क्षेत्रों में कपास, गेहूं, बाजरा, मक्का और दालें, जौ, आदि जैसे सूखा प्रतिरोधी और नमक सहिष्णु फसलों की खेती की जा सकती है।

लवणीय और क्षारीय मृदाएँः ये मुख्य रूप से राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और बिहार के शुष्क और अर्ध–शुष्क इलाकों में फैली हुई है, जो कुल भौगोलिक क्षेत्र के 68,000 वर्ग किलोमीटर है। ऐसी मिट्टी में सतह पर सोडियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम नमक और पर्पटन होता है। ये बंजर हैं और इन्हें रेह, कल्लार, उसर, थुर, राकर, कार्ल और चोपेन जैसे विभिन्न नामों से भी जाना जाता है। इनका निर्माण मुख्य रूप से विघटित चट्टान और खनिज टुकड़ों से होता है जो अपक्षय पर सोडियम, मैग्नीशियम और कैल्शियम लवण और सल्फ्यूरस एसिड मुक्त रहते हैं।

ये लवण घोल प्रक्रिया द्वारा नदियों में मिलते हैं और मैदानी इलाकों की उप–मृदा संस्तर में रिस जाता है। नहर सिंचाई और उच्च उप–मृदा जल स्तर क्षेत्रों में, ये हानिकारक लवण वाष्पीकरण द्वारा नीचे से ऊपर स्थानांतरित होते हैं, जिससे मिट्टी कृषि के लिए अनुपयुक्त हो जाती है। उत्तर प्रदेश में लगभग 1.25 मिलियन हेक्टेयर और पंजाब में 1.21 हेक्टेयर भूमि उसर है। गुजरात में खंभात की खाड़ी के आसपास के क्षेत्र ऐसी मृदा से प्रभावित हुए है।

पीटमय और जैविक मिट्टीः ये मृदा नम परिस्थितियों में बनती है और इसमें बड़ी मात्रा में कार्बनिक पदार्थ और घुलनशील लवण होते हैं। ये केरल के कोट्टायम और अलापुझा जिलों के पश्चिमी भाग में पाई जाती है। अधिक ह्यूमस युक्त दलदली मिट्टी पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और तमिलनाडु के तटीय क्षेत्रों और हिमालय के दलदली तराई क्षेत्र में पाई जाती है।

प्राकृतिक वनस्पतिः

भू–जलवायु दशाओं के आधार पर, 1937 में C-C Calder ने भारत में आठ निम्नलिखित वनस्पति प्रदेशों या क्षेत्रों की पहचान की है।

1. पूर्वी हिमालयी क्षेत्र
2. उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र
3. असम क्षेत्र

4. गंगा का मैदान

5. सिंधु का मैदान

6. दक्कन क्षेत्र

7. मालाबार क्षेत्र

8. अंडमान और निकोबार द्वीप समूह

1. पूर्वी हिमालयी क्षेत्र

यह वनस्पति क्षेत्र सिक्किम, पश्चिम बंगाल और अरुणाचल प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों तक फैला हुआ है। इस उबड़–खाबड़ और पहाड़ी क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा 200 से.मी. से अधिक होती है। इस क्षेत्र में पौधों की 4000 से अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं जो उष्णकटिबंधीय, समशीतोष्ण और उच्चपर्वतीय क्षेत्रो में भिन्न होती हैं। यहाँ की महत्वपूर्ण प्रजातियों में साल, बांज, चेस्टनट, मैगनोलिया, पाइरस, बांस, सिल्वर फर, चीड़, बर्च, रोडोडेंड्रॉन और उच्चपर्वतीय घास हैं।

2. उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र

यह क्षेत्र जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में फैला हुआ है। यह कम वर्षा और तापमान वाला क्षेत्र है। वनस्पति के प्रकारो में उपोष्णकटिबंधीय (1525 मीटर तक), समशीतोष्ण (1525 मीटर–3650 मीटर) और उच्चपर्वतीय वनस्पति (3650 मीटर–4575 मीटर) हैं। उप–पर्वतीय क्षेत्र की महत्वपूर्ण वनस्पति प्रजातियाँ साल, सेमुल और सवाना प्रकार हैं। समशीतोष्ण वनस्पतियों में चीड़, बांज, देवदार, एल्डर, बिर्च और शंकुधारी मुख्य प्रजातियाँ हैं। उच्च उच्चपर्वतीय क्षेत्र में वृक्षों की जगह उच्चपर्वतीय चरागाह, और जुनिपर (Juniper), सिल्वर फर, बिर्च और लर्च जैसे वृक्ष मिलते है।

3. असम क्षेत्र

असम क्षेत्र में असम, मेघालय, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम और त्रिपुरा सहित पूरे पूर्वोत्तर भारत शामिल है। इस क्षेत्र में उच्च ऊँचाई पर, नीलगिरी प्रकार के घास के मैदानों के साथ बांस और ताड़ की विभिन्न प्रजातियों की समृद्ध वनस्पति मिलती हैं।

4. गंगा का मैदान

इस क्षेत्र की वनस्पतियो में अरावली क्षेत्र के अर्ध–शुष्क झाड़ियों से लेकर सुंदरवन डेल्टा के सदाबहार गरान वन तक शामिल है। मानव गतिविधियों और फसलों की खेती से इस क्षेत्र की वनस्पति में बहुत बदलाव आया है। उत्तर प्रदेश की वनस्पति मुख्यतः शुष्क पर्णपाती प्रकार की है तथा बिहार और पश्चिम बंगाल में आर्द्र पर्णपाती प्रकार की वनस्पतियाँ मिलती है। शीशम, नीम, महुआ, जामुन, बबूल, बेर और बेल आदि इस क्षेत्र की प्रमुख वनस्पति प्रजातियाँ हैं। गंगा के मैदानों में अनेक प्रकार की घास भी पाई जाती हैं।

5. सिंधु का मैदान

यह क्षेत्र पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, अरावली के पश्चिम, कच्छ और गुजरात के उत्तर–पश्चिमी भाग में फैला हुआ है। इस क्षेत्र में वार्षिक वर्षा 75 से.मी. से भी कम होती है। परिणामस्वरूप, इस क्षेत्र की वनस्पति शुष्क और अति शुष्क दशाओं को सहन

कर सकती है। महत्वपूर्ण प्रजातियाँ बबूल, कैक्टि, जंगली ताड़, खेजरा और पलास आदि हैं। बरसात के मौसम में कई प्रकार के घास उगते हैं, जो सर्दियों के शुष्क मौसम में सूख जाती हैं।

6. दक्कन का क्षेत्र

यह क्षेत्र प्रायद्वीपीय भारत के बड़े हिस्से में फैला है। **जेरिक** डेक्कन कांटेदार वन, पश्चिम, दक्षिण और दक्षिण–पूर्व में मिलते हैं, जो पश्चिमी घाट के वृष्टि छाया क्षेत्र में पठार के सूखे हिस्से को आवृत करते हैं। आर्द्र पूर्वी उच्चभूमि में पर्णपाती वन अधिक मिलते हैं जो उत्तर–पूर्व और पूर्व में स्थित हैं। जबकि नर्मदा घाटियों में, शुष्क पर्णपाती वन सतपुड़ा के उत्तर–पश्चिम में पाए जाते हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख वनस्पति सागौन, तेंदु, साल, ताड़ और कांटेदार झाड़ियाँ हैं।

7. मालाबार का क्षेत्र

मालाबार क्षेत्र खंबात की खाड़ी से केप कोमोरिन (कन्याकुमारी) तक पश्चिमी तट पर फैला हुआ है। इस क्षेत्र की वनस्पतियों में आर्द्र उष्णकटिबंधीय सदाबहार से लेकर चौड़ी पत्ती मिश्रित और मानसूनी पर्णपाती प्रकार की है। नीलगिरि पहाड़ियों में अधिक ऊँचाई पर समशीतोष्ण वन पाए जाते हैं।

8. अंडमान और निकोबार

अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में तीव्र वर्षा और तड़ित् झंझा रहित उष्णकटिबंधीय जलवायु पाई जाती है। वर्षा सामान्य रूप से होती है इसलिए यह सदाबहार वनों के विकास के लिए अत्यधिक अनुकूल क्षेत्र है। यह क्षेत्र एपिफाइट वनस्पति के विकास में सहायक होती है। इसमें मुख्य रूप से फर्न और आर्चिड आदि शामिल हैं और यह द्वीप नारियल के पेड़ों से घिरा हुआ है।

बोध प्रश्न 3

भारत के किन्हीं तीन वनस्पति प्रदेशों या क्षेत्रों की चर्चा कीजिए।

5.5 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा :

- मृदा ढीली मूल सामग्री से बनी पृथ्वी की ऊपरी परत है। यह खनिजों की अनंत विविधता, पौधों और जानवरों के अवशेष, जल और वायु हवा सहित कई पदार्थों का मिश्रण है।

- मूल सामग्री, स्थानीय जलवायु, पादप, जंतु और उच्चावच के बीच निरंतर अन्योन्यक्रिया के परिणामस्वरूप इसका निर्माण होता है। मृदा हमारे पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

- मृदा अपरदन के प्रमुख रूप बीहड़, अवनालिका, भू–स्खलन और परत अपरदन हैं।

- मृदा की विशेषताओं में मृदा की मूल सामग्री, खनिज पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ, बनावट एवं संरचना, अम्लता, वायु, नमी, संस्तर और परिच्छेदिका शामिल हैं।

- भारत में छः मुख्य प्रकार की मृदा पाई जाती है, जलोढ़, काली, लाल, लैटेराइट, मरुस्थलीय या रेगिस्तानी और पर्वतीय मृदा।

- भौतिक और सामाजिक दोनों कारकों के कारण मृदा अपरदन होता है। भौतिक कारक में वर्षा की अपरदन शक्ति, मिट्टी की क्षरणशीलता, आवर्तो बाढ़ की गंभीरता और ढलान की लंबाई और प्रवणता शामिल हैं जबकि सामाजिक कारकों में वनोन्मूलन, अतिचारण, और भूमि उपयोग की प्रकृति और कृषि के तरीके हैं।

- प्राकृतिक वनस्पति से तात्पर्य पादप (पौधों) समुदाय से है। पौधों की प्रजातियों, जैसे, पेड़, झाड़ियाँ, घास, लताएँ आदि के संयोजन तथा पर्यावरण में एक दूसरे के साथ सामंजस्य को प्राकृतिक वनस्पति के रूप में जाना जाता है।

- इसके विपरीत, वन वृक्षों और झाड़ियों से आच्छादित एक बड़े भूभाग को कहते हैं जो मानव के लिए आर्थिक महत्व रखता है। इस प्रकार, प्राकृतिक वनस्पति की तुलना में वन का एक अलग अर्थ होता है।

- प्राकृतिक वनस्पति के वितरण को प्रभावित करने वाले भौगोलिक कारकों में जलवायु, मृदा, स्थलाकृति, वर्षा और तापमान शामिल हैं।

- मौसमी बदलाव और व्यवस्था भी प्राकृतिक वनस्पति पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। वर्षा की मात्रा का वनस्पति के प्रकार पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

- भारत की प्राकृतिक वनस्पति उच्चावच और जलवायु परिस्थितियों के साथ पूर्ण सामंजस्य स्थापित करता है।

- जलवायु परिस्थितियों में विभिन्नता के कारण भारत की विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक वनस्पतियां पाई जाती हैं।

- जलवायु और मृदा में भिन्नता के कारण भारत की वनस्पति में क्षेत्रीय भिन्नता पाई जाती हैं।

- भारत में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के वन उष्णकटिबंधीय सदाबहार वर्षा वन, पर्णपाती या मानसून प्रकार के वन, शुष्क पर्णपाती वन, पर्वतीय वन, ज्वार या गरान वन, अर्ध–मरुस्थलीय और मरुस्थलीय वनस्पति हैं।

- बढ़ती आबादी के कारण, मानव गतिविधियों और फसलों की खेती से कई प्रदेशो में वनस्पति क्षेत्रो में बड़ा परिवर्तन आया है।

5.6 अंतिम प्रश्न

1. भारत की प्रत्येक मृदा प्रकार की दो प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

2. भारत को प्रमुख मृदा क्षेत्रों में विभाजित करें और जलोढ़ मिट्टी का विस्तृत विवरण तथा इसकी कृषि क्षमता का उल्लेख करें।

3. भारत में मृदा निर्माण और वितरण को नियंत्रित करने वाले कारक कौन से हैं?

4. ज्वारीय वनस्पति और पर्वतीय वनस्पति में अंतर स्पष्ट कीजिए।

5. भारत में प्राकृतिक वनस्पति के वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों की चर्चा कीजिए।

6. भारत के प्रमुख वनस्पति क्षेत्रों की विस्तार से चर्चा कीजिए।

5.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1. a) कार्बनिक पदार्थ में आंशिक रूप से सड़े और विघटित पौधे और पशु अपशिष्ट हैं जबकि मिट्टी की बनावट से कणों के आकार का पता चलता हैं। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा 5% है। मृत कार्बनिक पदार्थों के विघटन से 'ह्यूमस' बनता है। यह संरचना रहित, गहरे भूरे या काले रंग की सड़ी गली मृदा सामग्री होती है जो मिट्टी की सतह में पाई जाती है तथा निचली संस्तर तुलना में ऊपरी मृदा गहरे काला बनती है। मृदा गठन में इसके कणों के आकार की विशेषता होती है। मृण्मय मृदा महीन और बलुई मृदा मोटे कण वाले जबकि गाद एक मध्यवर्ती होती है।

   b) प्राकृतिक वनस्पति को प्रभावित करने वाले कारक जलवायु, मृदा और स्थलाकृति हैं। इनके अलावा, वर्षा की मात्रा और प्रबलता भी प्राकृतिक वनस्पति के वितरण को प्रभावित करती है।

2. चेम्पियन और सेठ (1936) द्वारा 116 प्रकार की वनस्पतियों का वर्गीकरण सर्वाधिक मान्य है। भारत की वनस्पति को पांच प्रकार और 15 उप–प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है।

3. भारत के तीन वनस्पति क्षेत्र असम, गंगा और सिंधु क्षेत्र हैं, जिनमें विविध वनस्पति प्रजातियाँ पाई जाती है।

अंतिम प्रश्न

1. उपयुक्त उदाहरणों के साथ भारत के प्रत्येक मृदा प्रकार की दो मुख्य विशेषताओं का संक्षेप में उत्तर दें। अनुभाग 5.2 का संदर्भ लें।

2. इस प्रश्न का उत्तर देते समय, आप भारत के प्रमुख मृदा क्षेत्रों का उल्लेख करेंगे तथा जलोढ़ मृदा और उसकी कृषि संभावना या क्षमता पर भी प्रकाश डालेंगे। भाग 5.4 का संदर्भ लें।

3. अपने उत्तर में, आप भारत में मृदा निर्माण और वितरण को नियंत्रित करने वाले कारकों की चर्चा करेंगे। अनुभाग 5.3 का संदर्भ लें।

4. उपयुक्त उदाहरणों के साथ ज्वारीय वनस्पतियों और पर्वतीय वनस्पतियों के प्रकारों के बीच मुख्य अंतरों पर प्रकाश डालिए। अनुभाग 5.3 का संदर्भ लें।

5. भारत में प्राकृतिक वनस्पति के वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों की भूमिका पर प्रकाश डालिए। अनुभाग 5.3 का संदर्भ लें।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

6. आप अपने उत्तर में भारत के प्रमुख वनस्पति क्षेत्रों का संक्षिप्त विवरण देंगे। अनुभाग 5.4 का संदर्भ लें।

5.8 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

1. Tiwari R. C (2007): Geography of India. Prayag Pustak Bhawan, Allahabad
2. Tirtha, Ranjit (2002):
3. Singh R. L, 1971: India: A Regional Geography, National Geographical Society of India.
4. Deshpande C. D, 1992: India: A Regional Interpretation, ICSSR, New Delhi.
5. Johnson, B. L. C, ed. 2001. Geographical Dictionary of India. Vision Books, New Delhi.
6. Mandal R. B, ed. 1990: Patterns of Regional Geography – An International Perspective. Vol. 3-Indian Perspective.
7. Singh, Jagdish 2003: India; A Comprehensive & Systematic Geography, Gyanodaya Prakashan, Gorakhpur.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

शब्दावली

तलोच्चन मैदानः निक्षेपण मैदान

अंगारालैंडः टेथिस सागर के उत्तर में स्थित भूभाग को अंगारा भूमि कहा जाता था। इस प्राचीन महाद्वीपीय भाग में एशिया और यूरोप के आधुनिक महाद्वीप शामिल थे।

जल कृषिः यह अलवणजल और लवणजल में जलीय पौधों और जानवरों की खेती को अर्ध–प्राकृतिक और नियंत्रित परिस्थितियों में संदर्भित करता है। इस प्रक्रिया में प्रजनन, जलीय पौधों को उगाना और जानवरों को पालना और उनका सस्य कर्तन या संवहन सम्मिलित हैं।

भाबरः अमिश्रित मलबे का एक गिरिपद मैदान है।

भांगरः पुराना जलोढ़क

तटीय मैदानः तट से सटे मैदान को तटीय मैदान कहते हैं। पश्चिम भाग में अरब सागर के पूर्व में बंगाल की खाड़ी के साथ दक्षिणी प्रायद्वीप का हिस्सा संकीर्ण तटीय पट्टियों से घिरा हुआ है।

उपनिवेशनः यह बड़े पैमाने पर जनसंख्या गतिशीलता को संदर्भित करता है जहां प्रवासी अपने या अपने पूर्वजों के पूर्व देश के साथ मजबूत संबंध बनाए रखते हैं, इस तरह के संबंध द्वारा दूसरे क्षेत्र के निवासीयों की अपेक्षा महत्वपूर्ण सुविधा प्राप्त करते हैं। उदाहरण के लिए, भारत को अंग्रेजों द्वारा कभी उपनिवेश बनाया था।

संगमः एक संगम उस संयोजन को संदर्भित करता है जहां दो या दो से अधिक नदियां मिलती हैं, विलय होती हैं और साथ में बहती हैं।

प्रवाल भित्तियांः यह प्रवाल द्वारा स्रावित कैल्शियम और कार्बोनेट से बनी जल के नीचे की संरचना को दर्शाता है। प्रवाल एक जानवर है जो समुद्र के नीचे रहते हैं और एक कंकाल पर जीते हैं जो यह निर्मित करते हैं।

कोरोमंडल तटः यह भारतीय उपमहाद्वीप का दक्षिण–पूर्वी तटीय क्षेत्र है, जो उत्तर में उत्कल मैदान, पूर्व में बंगाल की खाड़ी, दक्षिण में कावेरी डेल्टा और पश्चिम में पूर्वी घाट से घिरा हुआ है। कोरोमंडल तट लगभग 22,800 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है।

सांस्कृतिक विविधताः शब्द सांस्कृतिक विविधता को किसी दिए गए भौगोलिक क्षेत्र के भीतर भिन्न संस्कृतियों के मौजूद होने के रूप में भी संदर्भित किया जा सकता है। इसमें विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के लोगों के बीच आपसी समझ और भावनाएं मौजूद होती हैं ।

डेक्कन ट्रैप्सः डेक्कन लावा पठार

डेल्टाः एक नदी का डेल्टा लगभग एक त्रिकोणीय निक्षेपण स्थल है जो नदी द्वारा लाए गए निक्षेपण तलछट द्वारा बनता है जो नदी के मुहाने पर जमा होता है।

दूरीक द्वीपः मुख्य भूमि से लगभग 5 किमी की दूरी पर स्थित होता है।

अपवाह तंत्र द्रोणीः एक अपवाह तंत्र द्रोणी ऐसे क्षेत्र को संदर्भित करता है जहां से सभी वर्षा का जल धाराओं या एकल धारा के एक समूह में बहता है और एक सामान्य निर्गम द्वार या बहिर्द्वार या निकास जैसे नदियाँ, धाराएँ और एक खाड़ी के मुहाने आदि में अपवाहित होती हैं।

द्रविड़ियनः द्रविड़ लोग, या द्रविड़ियन, एक मानवजाति–भाषाई समूह हैं जो दक्षिण एशिया में उत्पन्न हुए हैं और जो मुख्य रूप से कोई भी द्रविड़ भाषा बोलते हैं।

सूखाः यह उस अवधि को इंगित करता है जब किसी क्षेत्र या क्षेत्र में सामान्य वर्षा की तुलना में बहुत कम वर्षा होती है। पर्याप्त वर्षा की कमी, चाहे वर्षा हो या हिमपात, कम मिट्टी की नमी या भूजल, कम धारा प्रवाह, फसल की क्षति और कृषि में पानी की कमी हो सकती है।

दूनः हिमालय और शिवालिक के बीच स्थित अनुदैर्ध्य घाटी को दून के नाम से जाना जाता है। देहरादून, कोठी दून और पथी दून कुछ प्रसिद्ध दून हैं।

अल नीनो–दक्षिणी दोलनः यह एक उष्ण कटिबंधीय पूर्वी प्रशांत महासागर की सतह का तापमान हवाओं और समुद्र में एक अनियमित आवर्ती भिन्नता है, जो अधिकांश उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की जलवायु को प्रभावित करता है। समुद्र के तापमान के गर्म होने की अवस्था को अल नीनो और शीतलन की अवस्था को ला नीना के रूप में जाना जाता है।

जातीय समूहः एक जातीय समूह या जातीयता उन लोगों का समूह है जो सांझी विशेषताओं के आधार पर एक दूसरे के साथ पहचान करते हैं जो उन्हें अन्य समूहों की जैसे कि सामान्य समूह परंपराएं, भाषा, इतिहास, समाज, संस्कृति, राष्ट्र, धर्म, या उनके निवास क्षेत्र के भीतर सामाजिक व्यवहार से अलग करती है।

अग्र गभीरः एक महान अवसाद या भू–अभिनति

हिमानीः हिम और हिम की नदी

गोंडवानालैंडः टेथिस समुद्र के दक्षिण में स्थित भूभाग को गोंडवानालैंड कहा जाता था। प्राचीन महाद्वीपीय भूभाग में दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका, भारत, ऑस्ट्रेलिया और अंटार्कटिका शामिल थे।

महाखडड्ः महाखडड् एक संकरी और खड़ी घाटी को संदर्भित करता है जोकि नदियों के अपरदनकारी कार्य द्वारा बनाई गई है। इसमें बहुत खड़ी, संकरी और चट्टानी दीवारों की विशेषता होती है जो पर्वतों या पहाड़ियाँ के बीच में स्थित होते हैं।

हिमानीः हिम भूमि

आई सी ए आरः भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के तहत पूरे देश में कृषि में अनुसंधान और शिक्षा का समन्वय, मार्गदर्शन और प्रबंधन करने के लिए शीर्ष निकाय है।

आप्रवासनः भोजन, बेहतर जीवन और आजीविका के स्रोत की तलाश में लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर बड़े पैमाने पर आवागमन। अतीत में आप्रवासन अक्सर स्थायी होता था और लोग बड़े समूहों में दूर–दराज के स्थानों पर प्रवास करके उस क्षेत्र की जनसंख्या की जनसांख्यिकीय विशेषताओं में बदलाव करते थे।

जेट प्रवाहः यह वातावरण में एक संकीर्ण, तेज बहने वाली और विसर्पी वायु धाराओं को संदर्भित करता है। मुख्य जेट धाराएं क्षोभमंडल के आसपास के क्षेत्र में स्थित हैं और पछुआ हवाएं हैं (पश्चिम से पूर्व की ओर बहते हुए)। जेट धाराएँ शुरू और रुक सकती हैं, दो या दो से अधिक भागों में विभाजित हो सकती हैं, एक में मिल सकती हैं, या विभिन्न दिशाओं में प्रवाहित हो सकती हैं।

खादरः नई जलोढ़क

लैगूनः गोलाकार या वृत्तीय प्रवाल झीलें

लौरेशियाः लौरेशिया दो महाद्वीपों में सबसे उत्तरी था जो लगभग 200 मिलियन वर्ष पहले सुपरकॉन्टिनेंट पैंजिया का हिस्सा था। विश्व भू–आकृतियों की उत्पत्ति दो विशाल भूमि जैसे अंगारा भूमि (लौरसिया) और गोंडवानालैंड से हुई।

प्रतिपवनः हवा से आश्रय वाले पक्ष की ओर प्रतिपवन है।

लघु हिमालयः मध्य हिमालय

भाषाई विविधताः भाषा के आधार पर जनसंख्या विविधता। यह किसी भी भौगोलिक क्षेत्र की जातीय संरचना का एक महत्वपूर्ण घटक है।

निम्न दाब प्रणालीः मौसम विज्ञान में, एक निम्न दाब क्षेत्र, बार कम एक क्षेत्र है जहां वायुमंडलीय दबाव आसपास के स्थानों की तुलना में कम होता है। निम्न दाब प्रणाली हवा के अपसरण क्षेत्रों के तहत बनते हैं जोकि वायुमंडल के ऊपरी स्तरों में होते हैं। भीषण गर्मी के मौसम के दौरान भारतीय भूभाग पर एक निम्न दाब प्रणाली विकसित होती है।

खनिज पदार्थः परिवर्तनीय आकार के चट्टान के टुकड़े जो मिट्टी के गुणों को निर्धारित करते हैं।

आद्रर्ता युक्त हवाएँः अरब सागर और बंगाल की खाड़ी से भूमि की ओर चलने वाली हवाएं नमी अपने साथ ले जाती है। जब ये हवाएँ पर्वतीय बाधाओं से टकराती हैं, तो यह उस क्षेत्र में वर्षा का कारण बनता है।

एकविध मैदानः स्थलाकृति में एक समान।

अपतटीय द्वीप समूहः मुख्य भूमि की तटीय रेखा के पास या उसके किनारे स्थित द्वीप समूह।

जैव पदार्थः मिट्टी में जैव पदार्थ आंशिक रूप से क्षयित और आंशिक रूप से पौधे और पशु अपशिष्ट के अपघटित होने का प्रतिनिधित्व करता है।

बाहरी हिमालयः शिवालिक या उप–हिमालय

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

मूल सामग्रीः चट्टानों से प्राप्त मिट्टी के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री।

दर्राः दो पहाड़ियों के बीच एक संकरा दर्रा

प्रायद्वीपः एक प्रायद्वीप भूमि के एक खंड को संदर्भित करता है जो तीन तरफ जलाशय से आच्छादित या घिरा हुआ है और एक तरफ मुख्य भूमि से जुड़ा हुआ है।

प्रायद्वीपः एक स्थान जो तीन तरफ से जल से घिरा हुआ है और एक तरफ मुख्य भूमि से जुड़ा हुआ है। प्रायद्वीपीय पठार एक सपाट या टेबल भूमि है जो पुराने क्रिस्टलीय या रवेदार, आग्नेय और कायांतरित चट्टानों से निर्मित है।

बारहमासी नदियाँः बारहमासी नदियाँ वे नदियाँ हैं जो पिघलते हिमानी द्वारा पोषित होती हैं और किसी भी मौसम के अनपेक्ष पूरे वर्ष प्रवाहित होती है।

बारहमासीः पूरे साल एक धारा के रूप में प्रवाहित होती है।

भूआकृति विज्ञानः यह पृथ्वी की सतह की भौतिक विशेषताओं का अध्ययन करता है। यह भूगोल का उप–क्षेत्र है जो भौतिक प्रतिरूप और पृथ्वी की प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है।

कैम्ब्रियन पूर्वः यह आर्कियन चट्टानों को संदर्भित करता है।

पूर्वांचलः अरुणाचल प्रदेश में दिहांग घाटी से परे, हिमालय दक्षिण की ओर एक हेयरपिन मोड़ लेता है और भारत की पूर्वी सीमा के रूप में कार्य करता है और उत्तर–पूर्वी राज्यों से होकर गुजरता है। इन विभाजनों को पूर्वांचल के नाम से जाना जाता है।

कच्छ का रणः बलुआ और खारा या लवणीय मैदान।

रेहः यह उन बांगड़ क्षेत्रों में फैला हुआ है जहाँ सिंचाई का प्रभुत्व है। इसे कल्लर भी कहा जाता है। यह उत्तर प्रदेश और हरियाणा के शुष्क क्षेत्रों में व्यापक रूप से फैला हुआ है।

निवर्तनी मानसूनः निवर्तनी मानसून का मतलब है वापसी। अतः, दक्षिण–पश्चिम मानसून की वापसी अक्टूबर और नवंबर के महीनों के दौरान उत्तर भारत के आसमान से आने वाली निवर्तनी मानसून की हवाओं के रूप में जाना जाता है। निवर्तन की प्रक्रिया धीरे–धीरे होती है और इसमें लगभग तीन महीने लगते हैं।

रिफ्ट **घाटीः** दो ऊंचे भूभागों के बीच एक निमग्न घाटी

सह्याद्रिः पश्चिमी घाट

शिवालिकः हिमालय की सबसे दक्षिणी श्रेणी। यह बाहरी हिमालय की एक पर्वत श्रृंखला है।

सामाजिक असमानताः यह उन मामलों की स्थिति को संदर्भित करता है जिसमें एक विशिष्ट समाज के सभी व्यक्ति समान अधिकार, स्वतंत्रता और स्थिति संभवतः नागरिक अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सहित, स्वायत्तता, और कुछ सार्वजनिक वस्तुओं और सामाजिक सेवाओं तक समान पहुंच नहीं रखते हैं। सरल शब्दों में, जहाँ समाज में लोगों के बीच पदानुक्रम मौजूद होता है।

मृदा वायुः मृदा वायु मृदा के छिद्रों (अंतरालीय स्थानों) में मौजूद होती है।

मृदा का गठनः आमतौर पर यह इसके कणों के आकार की विशेषता होती है। एक मृण्मय मिट्टी इस प्रकार महीन और बलुआ मिट्टी मोटे कण के रूप में वर्णित है, जबकि गाद मिट्टी की एक मध्यवर्ती श्रेणी हो सकती है।

मृदा का पानीः यह मृदा के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण घटक है, जो मृदा के छिद्रों के भीतर होता है।

दक्षिण–पश्चिम मानसूनः दक्षिण–पश्चिम मानसून की अवधि भारतीय उपमहाद्वीप के लिए प्रमुख वर्षा ऋतु है। इस अवधि के दौरान पूरे देश में लगभग 75% वर्षा होती है। दक्षिण पश्चिम मानसून मई के अंत तक प्रायद्वीप के चरम दक्षिण–पश्चिमी सिरे पर पहुंच जाता है और मई–सितंबर से लेकर विशेष रूप से उत्तरी मैदानों और उत्तर पूर्व क्षेत्रों में वर्षा का कारण बनता है।

राज्य पुनर्गठनः भाषाई आधार पर भारत के राज्यों और क्षेत्रों की सीमा को व्यवस्थित करके पुनर्गठित करने के लिए राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956, एक प्रमुख सुधार था।

उष्णकटिबंधीय जलवायुः उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के आसपास जो जलवायु अनुभव की जाती है, अर्थात कर्क रेखा और मकर रेखा के आसपास के क्षेत्र में। उष्णकटिबंधीय जलवायु की विशेषता मासिक 18 अंश सेल्सियस या उससे अधिक औसत तापमान और उष्ण तापमान साल भर की विशेषता है। सामान्य रूप से उष्णकटिबंधीय जलवायु में वार्षिक तापमान की सीमा बहुत कम होती है।

उष्ण कटिबंधीय चक्रवातः उष्ण कटिबंधीय चक्रवात एक तेजी से घूमने वाला तूफान तंत्र है जिसकी केंद्र में एक कम दबाव विशेषता होती है, एक बंद निम्न–स्तरीय वायुमंडलीय परिसंचारण, तेज हवाएं और तड़ित झंझा की सर्पिल व्यवस्था जो भारी बारिश या अल्पकालिक झंझा पैदा करती है। इसके शक्ति और स्थान के आधार पर, एक उष्णकटिबंधीय चक्रवात को विभिन्न नामों से जाना जाता है, जैसे तूफान, टाइफूपन, उष्णकटिबंधीय तूफान, उष्णकटिबंधीय अवसाद, चक्रवाती तूफान या केवल चक्रवात।

वैदिक कालः वैदिक काल, या वैदिक युग, भारत के इतिहास में कांस्य युग के अंत और प्रारंभिक लौह युग के बीच की अवधि है। यह वह दौर था जब वेदों सहित वैदिक साहित्य (हिंदू धर्म के सबसे पुराने ग्रंथ) की रचना की गई थी। आमतौर पर इसे प्रारंभिक वैदिक और उत्तर वैदिक काल में विभाजित किया जाता है।

विंध्य स्टोनः लाल बलुआ पत्थर

जलविभाजकः दो नियमित नदियों के प्रवाह के बीच में जल–विभाजन।

पछुआ हवाएँ: पछुआ हवाएँ, व्यापार–विरोधी, या प्रचलित पछुआ हवाएँ, यहाँ मध्य अक्षांशों में 30 और 60 अंश अक्षांश के बीच पश्चिम से पूर्व की ओर की ओर प्रचलित हवाएँ हैं। वे हार्स अक्षांशों में उच्च दबाव वाले क्षेत्रों से उत्पन्न होते हैं और ध्रुवों की ओर रुझान करके सामान्य तरीके से अतिरिक्त उष्णकटिबंधीय चक्रवातों को संचालित करते हैं।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड

2

संसाधनों का आधार

इकाई 6
भूमि संसाधन

इकाई 7
जल संसाधन

इकाई 8
वन संसाधन

इकाई 9
खनिज संसाधन

इकाई 10
ऊर्जा संसाधन

शब्दावली

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड 1 भौतिक विन्यास

इकाई 1 उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

इकाई 2 भूआकृति

इकाई 3 अपवाह तंत्र

इकाई 4 जलवायु

इकाई 5 मृदा एवं वनस्पति

खंड 2 संसाधनों का आधार

इकाई 6 भूमि संसाधन

इकाई 7 जल संसाधन

इकाई 8 वन संसाधन

इकाई 9 खनिज संसाधन

इकाई 10 ऊर्जा संसाधन

खंड 3 अर्थव्यवस्था

इकाई 11 कृषि

इकाई 12 उद्योग

इकाई 13 परिवहन

खंड 4 जनसंख्या एवं बस्ती/अधिवास

इकाई 14 जनसंख्या

इकाई 15 बस्तीयाँ/अधिवास

खंड 5 भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

इकाई 16 भूआकृतिक उपगमन

इकाई 17 सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 18 आर्थिक उपगमन

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 2: संसाधनों का आधार

किसी भी देश अथवा क्षेत्र के वृद्धि एवं विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग आवश्यक है। भूमि एक सीमित संसाधन है और हम इसका उपयोग फसलों के उत्पादन, भवन संरचनाओं के निर्माण और कई अन्य आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए करते हैं। भूमि तथा जल संसाधन एक दूसरे से अत्यंत निकटता से जुड़े हुए हैं। जल मानव अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण है। सतही और उप–सतही जल स्रोतों में नदियाँ, जलाशय, झीलें, तालाब, महासागर आदि शामिल हैं, और इन्हें एक साथ जल संसाधनों के रूप में मान्यता प्राप्त है। वन संसाधन जीवित जीवों को ऊर्जा एवं पदार्थों की निरंतर आपूर्ति के माध्यम से पृथ्वी ग्रह के स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। किसी समाज अथवा देश के आर्थिक विकास को समग्र रूप से समझने के लिए उस क्षेत्र के संदर्भ में खनिज एवं ऊर्जा संसाधनों के महत्व का अध्ययन आवश्यक है। किसी क्षेत्र के संसाधनों की उपलब्धता तथा अर्थव्यवस्था के मध्य घनिष्ठ संबंध होता है क्योंकि यह प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग के आकलन और प्रबंधन में मदद करता है।

इस खण्ड में आपको पांच इकाइयों में वर्णित भूमि, जल, वन, खनिज और ऊर्जा संसाधनों से संबंधित संसाधन आधार से परिचित कराया गया है।

इकाई 6: भूमि संसाधन

यह इकाई भूमि संसाधनों पर केंद्रित है। भूमि का आर्थिक मूल्य होता है और यह किसी भी देश की विकासात्मक गतिविधियों में एक अनिवार्य भूमिका निभाता है। इस इकाई में आप भारत में भूमि संसाधनों के उपयोग के साथ–साथ भूमि उपयोग वर्गीकरण और वितरण का अध्ययन करेंगे। भारतीय अर्थव्यवस्था को समझने के लिए भूमि–मानव अनुपात और भूमि उपयोग क्षमता की समझ की आवश्यकता है। एक विशिष्ट क्षेत्र में भूमि की गुणवत्ता और उत्पादकता के संदर्भ में ज्ञान इंगित करता है कि आप भूमि क्षरण की अवधारणा और इसमें शामिल प्रमुख प्रक्रियाओं से परिचित हैं, जैसा कि इस इकाई में बताया गया है।

इकाई 7: जल संसाधन

पृथ्वी ग्रह पर, जीवित प्राणियों का अस्तित्व मुख्य रूप से जल पर निर्भर करता है। पृथ्वी की सतह के तीन–चौथाई हिस्से पर विभिन्न रूपों अर्थात ठोस तरल एवं गैसीय रूप में जल विद्यमान है। इस इकाई में, हमने जल संसाधनों के प्रकार और विशेषताओं एवं भारत में बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के महत्व का परिचय दिया है। भारत में पहली बहुउद्देशीय परियोजना, यानी दामोदर नदी घाटी परियोजना, को भारत में बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के महत्व को समझने के लिए विस्तार से समझाया गया है।

इकाई 8: वन संसाधन

यह इकाई वन संसाधनों की व्याख्या करती है क्योंकि इन्हें जैव विविधता का भंडार माना जाता है। वन पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यप्रणाली तथा जीवमंडल में इसकी सेवाओं के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इस इकाई में भारत में वन संसाधनों के प्रकार, विशेषताओं और वितरण की व्याख्या की गई है। हमने इस इकाई में भारतीय वनों से संबंधित महत्वपूर्ण मुद्दों, जैसे वनों की कटाई, वनीकरण, संरक्षण और प्रबंधन प्रथाओं आदि की भी व्याख्या की है।

इकाई 9: खनिज संसाधन

यह इकाई आपको खनिज संसाधनों से परिचित कराती है। हम खनिजों का उपयोग कई उद्देश्यों के लिए करते हैं जो प्रकृति में एक निश्चित रासायनिक संरचना तथा पहचानने योग्य भौतिक गुणों के साथ उपलब्ध हैं। इस इकाई में, हमने भारत में खनिज संसाधनों के वितरण और उपयोग के साथ–साथ खनिज संसाधनों के

वर्गीकरण की व्याख्या की है। क्षेत्र की संभावित संपत्ति खनिज संसाधनों की प्राकृतिक अक्षयनिधि पर निर्भर करती है। खनिज संसाधनों के संरक्षण के उपायों को जानना भी महत्वपूर्ण है, जिन्हें इस इकाई के अंत में वर्णित किया गया है।

इकाई 10: ऊर्जा संसाधन

इस इकाई में हमने ऊर्जा संसाधनों की व्याख्या की है। सामाजिक–आर्थिक विकास में ऊर्जा की भूमिका को समझना आवश्यक है क्योंकि यह किसी देश की अर्थव्यवस्था में औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने वाले महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। इस इकाई से आप भारत में ऊर्जा संसाधनों के वर्गीकरण और प्रमुख नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों के वितरण और उपयोग के संदर्भ में जानेंगे। हमने इस इकाई में विभिन्न ऊर्जा संरक्षण विधियों की भी व्याख्या की है।

हम आशा करते हैं कि इस खण्ड का अध्ययन करने के बाद, आप भूमि, जल, वन, खनिज और ऊर्जा के विभिन्न संसाधनों के साथ–साथ उनके महत्व को मुख्य रूप से भारत के विशेष संदर्भ में बेहतर ढंग से समझ पाएंगे।

इस प्रयास में हमारी शुभकामनाएं आपके साथ हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 6

भूमि संसाधन

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
अपेक्षित अध्ययन परिणाम
6.2 भूमि उपयोग वर्गीकरण
6.3 भूमि संसाधन वितरण और उपयोग
6.4 भूमि–मानव अनुपात
6.5 भू–उपयोग क्षमता
6.6 भूमि क्षरण
6.7 सारांश
6.8 अंत में कुछ प्रश्न
6.9 उत्तर
6.10 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

6.1 प्रस्तावना

आपने खंड 1 में भारत की भौगोलिक स्थिति का अध्ययन किया है। अब आप इस पाठ्यक्रम के खंड 2 की इकाई 6 से 10 में भूमि, जल, जंगल, खनिज और ऊर्जा सहित विभिन्न संसाधनों का अध्ययन करेंगे। वर्तमान इकाई 6 में आपको भूमि संसाधनों के बारे में बताया गया है। संसाधन के रूप में भूमि अपने आर्थिक मूल्य के कारण संसाधन अध्ययन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। देश की विकासात्मक गतिविधियों में भूमि संसाधनों के मूल्यांकन के लिए भूमि उपयोग वर्गीकरण विकसित किया गया है, जिसके बारे में आप भाग 6.2 में अध्ययन करेंगे। देश भर में भूमि संसाधनों के वितरण और उनके उपयोग की चर्चा भाग 6.3 में की गई है।

भाग 6.4 और 6.5 आपको भूमि–मानव अनुपात और भूमि उपयोग क्षमता के बारे में बताएंगे। विभिन्न प्राकृतिक और/या मानवीय गतिविधियाँ भूमि को प्रभावित कर सकती हैं, जिससे भूमि की गुणवत्ता और उत्पादकता में गिरावट आ सकती है। क्षमता के इस नुकसान को भूमि क्षरण कहा जा सकता है। हमने भूमि क्षरण और इसमें शामिल विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाओं और भूमि क्षरण को रोकने के लिए महत्वपूर्ण उपचारात्मक उपायों के बारे में बताया है जिसकी चर्चा भाग 6.6 में की गई है।

अपेक्षित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आपको:

- भूमि उपयोग को परिभाषित करने और भूमि उपयोग वर्गीकरण की व्याख्या करने में सक्षम होना चाहिए;

- भूमि वितरण और उसके उपयोग का वर्णन करने में सक्षम होना चाहिए;
- भूमि–मानव अनुपात पर प्रकाश डालने में सक्षम होना चाहिए; तथा
- भूमि उपयोग क्षमता और भूमि शरण की समस्याओं की व्याख्या करने में सक्षम होना चाहिए।

6.2 भूमि उपयोग वर्गीकरण

मनुष्य पृथ्वी की सतह के आवरण पर रहता है जिसे भूमि कहा जाता है। यह पृथ्वी की ठोस सतह है जो पानी में स्थायी रूप से नहीं डूबी है। हर दिन, हम भूमि को देखते हैं और इसका उपयोग कृषि और अन्य उत्पादक गतिविधियों के लिए करते हैं। भूमि एक संसाधन है। इसमें "एक प्राकृतिक भूमि इकाई के भौतिक, जैविक, पर्यावरणीय, बुनियादी और सामाजिक–आर्थिक घटक शामिल हैं, जिसमें सतह और सतह के निकट के – मीठे पानी के संसाधन भी शामिल हैं"। भूमि उपयोग शब्द का तात्पर्य आवासीय, कृषि, औद्योगिक, खनन, मनोरंजन आदि जैसी आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों से है, जो मानव उपयोग के लिए भूमि के एक टुकड़े पर की जाती हैं। भूमि उपयोग भूमि के आवरण से भिन्न होता है, जो जमीन पर सतह के आवरण की व्याख्या करता है, उदाहरण के लिए, वनस्पति, भवन, बुनियादी ढांचा, नग्न मिट्टी, आदि। भूमि का आवरण, आवरण के प्रकार के उपयोग का वर्णन नहीं करता है। उदाहरण के लिए, वन आवरण का उपयोग लकड़ी के उत्पादन के लिए किया जा सकता है और तालाबों या झीलों को मनोरंजक उद्देश्यों के लिए उपयोग की जाने वाली आंतरिक भूमि में पाया जा सकता है। अब आप भूमि उपयोग की व्याख्या कर सकते हैं, जिसका अर्थ है कि लोग भूमि का उपयोग कैसे कर रहे हैं। यहां हमें भूमि और पानी दोनों को समझना चाहिए जो एक दूसरे के बहुत करीब हैं। प्रमुख जलाशयों और नदी के पानी को "जल संसाधन" नामक एक अलग संसाधन के रूप में माना जा सकता है, जिसके बारे में आप अगली इकाई 7 में सीखेंगे।

आइए हम सोचें, क्या वास्तव में किसी देश के भौगोलिक क्षेत्र के लिए भूमि वर्गीकरण की आवश्यकता है? हां, यह महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भूमि के कुल मूल्य को निर्धारित करने में मदद करता है। वर्गीकरण एक देश से दूसरे देश में इसके मूल्य, कीमत और भूमि के विभिन्न उपप्रकारों और अंततः, सभी आर्थिक रूप से प्रासंगिक भूमि के आधार पर भिन्न हो सकता है। उदाहरण के लिए, निर्मित या आवास क्षेत्र में भूमि की कीमत खुले/कृषि भूमि क्षेत्र से भिन्न हो सकती है। इसलिए, देश की विकासात्मक गतिविधियों के लिए स्थान, आकार (वर्ग गज/वर्ग मीटर) और भूमि का उपयोग जानना महत्वपूर्ण है। भारत में, हम भूमि संसाधन के प्रबंधन के लिए भूमि उपयोग के "नौ–गुना" वर्गीकरण का उपयोग करते हैं। इन वर्गों को नीचे समझाया गया है (MOSPI 2021):

1. **वनः** वन भूमि को कानूनी रूप से वन के रूप में नामित किया जाता है या वनों के रूप में प्रशासित किया जाता है, चाहे वह राज्य के स्वामित्व में हो या निजी, और चाहे जंगली हो या संभावित वन भूमि के रूप में बनाए रखा गया हो। वन क्षेत्र में उगाई जाने वाली फसलों का क्षेत्र और चराई भूमि या जंगलों के भीतर चरने के लिए खुला क्षेत्र भी वन क्षेत्र के अंतर्गत शामिल हैं।

2. **गैर–कृषि उपयोग के तहत क्षेत्रः** इमारतों, सड़कों और रेलवे या जल निकायों के कब्जे वाली भूमि, जैसे नदियों और नहरों और अन्य भूमि का उपयोग कृषि के अलावा अन्य उपयोग किया जाता है।

3. **बंजर और गैर–कृषि योग्य भूमिः** वह भूमि जिसे अत्यधिक लागत के अलावा खेती के तहत नहीं लाया जा सकता है, गैर–कृषि योग्य भूमि कहलाती है। उदाहरण के लिए, पहाड़, रेगिस्तान, आदि। ये भूमि के टुकड़े अलग–थलग खंड या खेती की जोत के भीतर हो सकते हैं।

4. **स्थायी चरागाह और अन्य चराई भूमिः** सभी चराई भूमि जैसे स्थायी चरागाह, घास के मैदान, गांव की आम चराई भूमि, आदि इस श्रेणी के अंतर्गत शामिल हैं।

5. **विविध वृक्ष फसलों के तहत भूमिः** इसमें वह सभी कृषि योग्य भूमि शामिल है जो 'शुद्ध बोया गया क्षेत्र' में शामिल नहीं है, लेकिन कुछ कृषि उपयोगों के लिए उपयोग की जाती है। "बगीचे" के अलावा अन्य भूमि, जिसमें कैसुरिना के पेड़, छप्पर घास, बांस की झाड़ियाँ, और ईंधन के लिए अन्य उपवन आदि शामिल हैं, इस श्रेणी के अंतर्गत आते हैं।

6. **कृषि योग्य बंजर भूमिः** इसमें खेती के लिए उपलब्ध भूमि शामिल है, चाहे वह खेती के लिए न ली गई हो या एक बार खेती के लिए ली गई हो, लेकिन चालू वर्ष के दौरान और पिछले पांच वर्षों या उससे अधिक के दौरान किसी न किसी कारण से लगातार खेती नहीं की गई हो। ऐसी भूमि या तो परती हो सकती है या झाड़ियों और जंगलों से आच्छादित हो सकती है, जो किसी उपयोग में नहीं आती है। उनका मूल्यांकन किया जा सकता है या उनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है और वे अलग–थलग खंडों में या खेती की गई जोत के भीतर हो सकते हैं। एक बार खेती की गई लेकिन लगातार पांच साल तक खेती नहीं की गई भूमि को भी पांच साल के अंत में इस श्रेणी में शामिल किया जाना चाहिए।

7. **वर्तमान परती के अलावा अन्य परती भूमिः** इस भूमि को खेती के लिए लिया गया था लेकिन अस्थायी रूप से एक वर्ष से कम और पांच वर्ष से अधिक की अवधि के लिए खेती से बाहर नहीं है।

8. **वर्तमान परतीः** यह फसली क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है जिन्हें चालू वर्ष के दौरान परती रखा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी बोने वाले क्षेत्र में उसी वर्ष में फसल नहीं होती है, तो इसे वर्तमान परती के रूप में माना जा सकता है।

9. **शुद्ध बोया गया क्षेत्रः** यह फसलों और बागों के साथ बोए गए कुल क्षेत्रफल का प्रतिनिधित्व करता है। एक ही वर्ष में एक से अधिक बार बोए गए क्षेत्र की गणना केवल एक बार की जाती है।

जैसा कि हम जानते हैं कि पूरे विश्व में जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है। हम सभी को अनिवार्य रूप से जीवन के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। यह न केवल मनुष्य के लिए बल्कि जानवरों और अन्य जीवित प्राणियों के लिए भी आवश्यक है। भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन अब बहुत महत्वपूर्ण हैं। यदि आप अपने आस–पास के क्षेत्रों को ध्यान से देखें, तो समय के साथ आप उनमें बहुत से परिवर्तन पाएंगे। भूमि संसाधनों का इष्टतम उपयोग बहुत महत्वपूर्ण है। बढ़ती आबादी की भविष्य की जरूरतों को पूरा करने के लिए बेहतर उत्पादकता का उत्पादन करने के लिए इसे बनाए रखा

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

जाना चाहिए और सावधानी से उपयोग किया जाना चाहिए। हमें समृद्धि के लिए संसाधनों में बदलाव की निगरानी करनी चाहिए। आइए हम राष्ट्रीय स्तर पर इस महत्वपूर्ण संसाधन के परिदृश्य का अध्ययन करें।

6.3 भूमि संसाधन वितरण और उपयोग

6.3.1 भूमि संसाधन का वितरण

आप विभिन्न भूमि उपयोग श्रेणियों और उनके महत्व को समझ गए हैं। आप जानते होंगे कि भूमि की वे श्रेणियां हर जगह वितरित की जाती हैं लेकिन पूरे देश में समान नहीं हैं। हां, हमारे देश में विभिन्न उपयोगों के तहत भूमि का वितरण एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न होता है। पहली कृषि जनगणना 1970–71 में शुरू की गई थी, जिसमें भारत में क्रियाशील भूमि जोत की संख्या और क्षेत्र का वर्णन किया गया था। भूमि जोत के आकार के आधार पर क्रियाशील जोत के कुल पांच समूह हेक्टेयर (हे०) में प्रस्तावित हैं। इनमें (i) एक हेक्टेयर से कम की सीमांत भूमि, (ii) एक और दो हेक्टेयर के बीच की छोटी जोत, (iii) अर्ध–मध्यम (2–4 हेक्टेयर), (iv) मध्यम (4–10 हेक्टेयर), और (v) दस हेक्टेयर या उससे अधिक की बड़ी जोत।

तालिका 6.1 देश की विभिन्न अवधियों के दौरान, संख्या और क्षेत्रफल दोनों में, भूमि जोत की उपरोक्त पांच श्रेणियों की व्याख्या करती है। वर्ष 2015–16 के लिए उपलब्ध अल्पकालीन डेटा 10वीं कृषि जनगणना द्वारा प्रदान किया गया है। कुल मिलाकर, सभी श्रेणियों में जोत की संख्या 1970–71 में 71 मिलियन से बढ़कर 2015–16 में 146.4 मिलियन हो गई। जबकि, क्रियाशील क्षेत्र 162.2 मिलियन हेक्टेयर से घटकर 157.8 मिलियन हेक्टेयर रह गया है। अधिकांश भूमि जोतों को सीमांत समूहों के रूप में पहचाना जाता है, जिनका सभी जोत के लगभग 68.5% पर कब्जा हैं। सीमांत और छोटे आकार की जोत कुल खेती वाले क्षेत्र का लगभग 50% (क्रमशः 24% और 22.9%) है।

Table 6.1: Number and area of operational holdings by size group.

Size groups	Number of holdings (in ‘000)			Operated area (in ‘000 ha)			Average (in ‘000 ha)		
	1970-71	2005-06*	2015-16	1970-71	2005-06*	2015-16	1970-71	2005-06*	2015-16(P)
Marginal (Less than 1 hectare)	36200 (51)	83694 (64.8)	100251 (68.5)	14599 (9.0)	32026 (20.2)	37923 (24.0)	0.40	0.38	0.38
Small (1.0 to 2.0 hectares)	13432 (18.9)	23930 (18.5)	25809 (17.6)	19282 (11.9)	33101 (20.9)	36151 (22.9)	1.44	1.38	1.40
Semi-Medium (2.0 to 4.0 hectares)	10681 (15)	14127 (10.9)	13993 (9.6)	29999 (18.5)	37898 (23.9)	37619 (23.8)	2.81	2.68	2.69
Medium (4.0 to10.0 hectares)	7932 (11.2)	6375 (4.9)	5561 (3.8)	48234 (29.7)	36583 (23.1)	31810 (20.2)	6.08	5.74	5.72
Large (10.0 hectares and above)	2766 (3.9)	1096 (0.8)	838 (0.6)	50064 (30.9)	18715 (11.8)	14314 (9.1)	18.1	17.08	17.08

All Holdings	71011 (100)	129222 (100)	146454 (100)	162178 (100)	158323 (100)	157817 (100)	2.28	1.23	1.08

(Source: Department of Agriculture, Cooperation & Farmers Welfare (Agriculture Census 2015-16, Phase-I); *-Excluding Jharkhand; and Figures in parentheses indicate percentage share out of total holdings/area)

दूसरी ओर बड़ी जोत (10 हेक्टेयर और उससे अधिक), कुल जोत का केवल 0.6% और कुल खेती योग्य क्षेत्र का 9.1% है (2015–16)। 2015–16 में सीमांत किसानों द्वारा हेक्टेयर में सबसे अधिक क्रियाशील क्षेत्र 24% था, जो 9% से पर्याप्त वृद्धि थी, जबकि बड़े आकार की जोत 1970–71 में 30.9% से घटकर 9.1% हो गई। छोटे और अर्ध–मध्यम आकार के समूहों में सकारात्मक रूप से वृद्धि हुई थी और मध्यम समूहों में क्रियाशील क्षेत्र को संभालने में कमी आई थी (चित्र 6.1)। जोत की यह विशेषता सीधे भौतिक, आर्थिक और सामाजिक कारकों से संबंधित है। इनमें से कई कारक कृषि के आधुनिक तरीकों के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

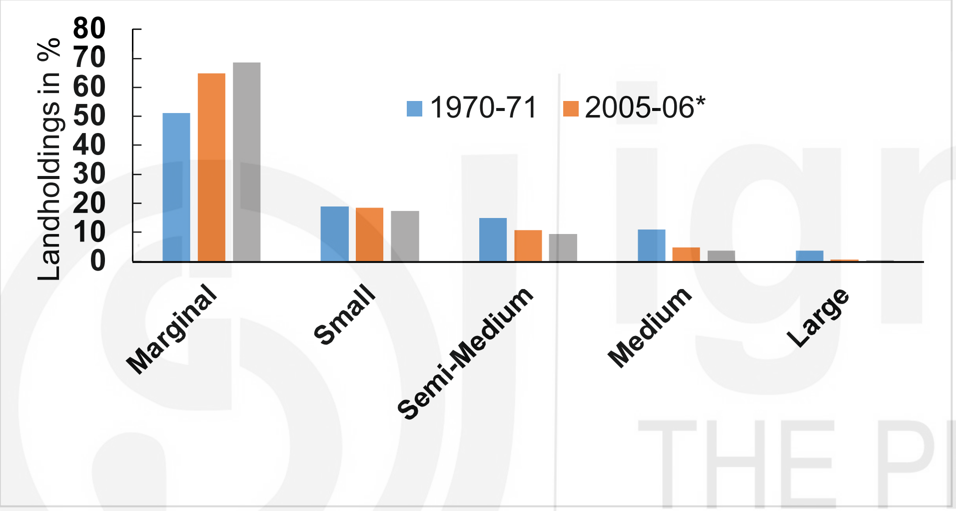

Fig. 6.1: Different types of land holdings occupied during 1970-2006.

राज्यों के बीच क्रियाशील जोत का वितरण तालिका 6.2 में दिया गया है। कुल मिलाकर, 2015–16 के दौरान लगभग 146 मिलियन जोत का संचालन किया गया था। उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश जैसे राज्य सभी समूहों में 10 मिलियन से अधिक जोत संचालित करते हैं, जबकि चंडीगढ़ और दमन और दीव 10,000 से कम जोत संचालित करते हैं।

राजस्थान एकमात्र ऐसा राज्य है जिसके पास बड़े आकार (> 10 हेक्टेयर) जोत हैं, जिनकी हिस्सेदारी 3.58 लाख है, इसके बाद महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब और कर्नाटक हैं। सीमांत क्रियाशील जोत उत्तर प्रदेश (लगभग 20 मिलियन) और बिहार (लगभग 15 मिलियन) में सबसे अधिक पाए जाते हैं, इसके बाद महाराष्ट्र, केरल, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश, प्रत्येक द्वारा 5 मिलियन से अधिक का योगदान होता है।

राज्यों के बीच भूमि के वितरण में बहुत भिन्नता है। मध्यम जोत पर राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात और कर्नाटक राज्यों का कब्जा है, जो काफी महत्वपूर्ण है। आंकड़ों के अनुसार, हम देख सकते हैं कि जोत बिखर गई है और मशीनीकरण और बड़े पैमाने पर सिंचाई गतिविधियों के लिए आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं है। अंतरराष्ट्रीय स्तर को

प्राप्त करने के लिए बेहतर कृषि उत्पादन और उत्पादकता के लिए उपयुक्त भूमि सुधार उपायों की आवश्यकता हो सकती है।

Table 6.2: Number of operational holdings by size group (Year 2015-2016)

State/UT	Marginal	Small	Semi-Medium	Medium	Large	All Holdings
Andaman & Nicobar Islands	5154	2533	2875	1364	28	11954
Andhra Pradesh	5904039	1646246	769843	189034	14748	8523910
Arunachal Pradesh	27161	24056	29018	26328	6690	113253
Assam	1868020	495313	295286	79262	3830	2741711
Bihar	14970585	943796	414015	81408	3089	16412893
Chandigarh	480	139	81	46	2	748
Chhattisgarh	2434321	879477	493056	180823	23095	4010772
Dadra & Nagar Haveli	8511	3829	1887	746	99	15072
Daman & Diu	7422	423	131	34	6	8016
Delhi	11489	5436	2587	1209	121	20842
Goa	59472	8083	4309	2092	607	74563
Gujarat	2018827	1615788	1150254	495869	39888	5320626
Haryana	802396	313937	277972	192327	41383	1628015
Himachal Pradesh	712204	173456	82265	25920	2964	996809
Jammu & Kashmir	1186887	159988	58102	10998	534	1416509
Jharkhand	1961615	418684	277306	125514	19827	2802946
Karnataka	4767132	2213732	1192724	451445	55706	8680739
Kerala	7333248	181372	55744	11274	1858	7583496
Lakshadweep	9562	281	135	31	8	10017
Madhya Pradesh	4834531	2724684	1674301	706734	62885	10003135
Maharashtra	7815823	4339259	2327023	733619	69715	15285439
Manipur	76705	48737	22269	2734	39	150484
Meghalaya	122748	60268	39863	9256	262	232397
Mizoram	44963	27483	13834	3209	285	89774
Nagaland	8211	29790	63332	73769	21430	196532
Odisha	3636658	887272	286735	51210	3975	4865850
Puducherry	28361	3385	1568	481	45	33840
Punjab	154412	207436	367938	305220	57707	1092713

Rajasthan	3070873	1677372	1416174	1131440	358757	7654616
Sikkim	44294	12767	10591	3513	367	71532
Tamil Nadu	6224319	1119229	452236	127650	14513	7937947
Telangana	3840131	1408979	563530	125630	9465	5947735
Tripura	504105	47987	18538	2491	73	573194
Uttar Pradesh	19099828	3008403	1313695	376790	22909	23821625
Uttarakhand	659064	148817	58040	14496	888	881305
West Bengal	5997758	970895	255957	17514	608	7242732
All India	100251309	25809332	13993214	5561480	838406	146453741

(Source: Department of Agriculture, Cooperation & Farmers Welfare, Agriculture Census 2015-16, Phase-I)

6.3.2 भूमि का उपयोग

आइए हम भूमि संसाधन उपयोग के बारे में कुछ दिलचस्प आंकड़ों का अध्ययन करें। आपने भाग 6.2 में देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का इसके विभिन्न उपयोगों में वितरण का अध्ययन किया है। नौ भूमि उपयोग श्रेणियों के तहत क्षेत्र कुल रिपोर्ट किए गए क्षेत्र में जुड़ जाता है, जो आम तौर पर कुल भौगोलिक क्षेत्र से कम होता है। जबकि कुल भौगोलिक क्षेत्र को भारतीय सर्वेक्षण द्वारा मापा जाता है और स्थिर रहता है, रिपोर्ट किया गया क्षेत्र स्थानीय निकायों के राजस्व रिकॉर्ड से प्राप्त होता है।

भूमि उपयोग के आँकड़े वह जानकारी प्रदान करते हैं जहाँ विभिन्न वर्गों के तहत भूमि के एक टुकड़े का उपयोग विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है। यह बताता है कि क्या भूमि पर खेती की जाती है, वह चराई के अंतर्गत है या वनों के, लेकिन यह भूमि के टुकड़े के संभावित उपयोग की व्याख्या नहीं करता है। आप तालिका 6.3 का अध्ययन करके 1970–2016 के दौरान भारत के भूमि उपयोग के आंकड़ों को समझेंगे। इसके अलावा, तालिका 6.4 आपको विभिन्न फसलों के अंतर्गत क्षेत्र से संबंधित जानकारी प्रदान करती है।

Table 6.3: Land use statistics of India (in Million Hectares).

S. No	Classification	1970-71	2000-01	2015-16(P)
I.	Geographical Area	328.73	328.73	328.73
II.	Reporting Area for Land Utilization Statistics	303.75	305.19	307.75
	1. Forest	63.83 (21.01%)	69.84 22.88	71.87 23.35
	2. Not Available for Cultivation (A+B)	44.61	41.23	44.02
	(A)AreaUnder Non-agricultural Uses	16.48 (5.42%)	23.75 7.78	27.08 8.80
	(B) Barren & Un-culturable Land	28.13 (9.26%)	17.48 5.73	16.94 5.51
	3. Other Uncultivated land excluding Fallow	35.13	27.74	25.64

		Land (A+B+C)			
		(A) Permanent Pasture & other Grazing Land	13.26 (4.37%)	10.66 (3.49%)	10.26 (3.33%)
		(B) Land under Miscellaneous Tree Crops & Groves not included in Net Area Sown	4.37 (1.44%)	3.44 1.13	3.09 1.01
		(C) Culturable Waste Land	17.50 (5.76%)	13.63 4.47	12.29 3.99
	4.	Fallow Lands(A+B)	19.33	25.04	26.72
		(A) Fallow Lands other than Current Fallows	8.73 (2.87%)	10.27 (3.36%)	11.31 (3.67%)
		(B) Current Fallows	10.60 (3.49%)	14.78 (4.84%)	15.41 (5.01%)
	5.	Net Area Sown (6-7)	140.86 (46.37%)	141.34 (46.31%)	139.51 (45.33%)
	6.	Total Cropped Area (Gross Cropped Area)	165.79	185.34	197.05
	7.	Area Sown more than once	24.93	44.00	57.55
	8.	Cropping Intensity*	117.70	131.13	141.25
III.	Net Irrigated Area		31.10	55.20	67.30
IV.	Gross Irrigated Area		38.20	76.19	96.62

(Source: Directorate of Economics & Statistics, DAC&FW; and Percentages worked out over Reported Area; P: Provisional; *Cropping Intensity is percentage of the gross cropped area to the net area sown)

Table 6.4: The percentage distribution of gross cropped are (GCA).

Crop	**Percentage Share of Area to Gross Cropped Area (GCA)**		
	2013-14(P)	2014-15(P)	2015-16(P)
Rice	22.13	22.30	22.01
Jowar	2.86	3.15	3.09
Bajra	4.03	3.96	3.61
Maize	4.49	4.43	4.30
Ragi	0.60	0.60	0.58
Wheat	15.61	16.18	15.72
Barley	0.34	0.37	0.28
Other Cereals & Millets	0.36	0.35	0.37
Coarse Cereals	12.69	12.85	12.24
Total Cereals	**50.43**	**51.33**	**49.97**
Gram	4.68	3.86	3.78
Tur	1.76	1.71	1.77

Other Pulses	5.40	5.37	6.04
Total Pulses	**11.83**	**10.94**	**11.59**
Total Food-grains	62.26	62.26	61.56
Sugarcane	2.75	2.81	2.66
Condiments & Spices	1.64	1.74	1.96
Total Fruits	**2.07**	**2.12**	**2.36**
Potatoes	0.84	0.89	0.98
Onions	0.30	0.33	0.57
Total Vegetables	**2.80**	**2.91**	**3.46**
Groundnut	2.70	2.57	2.27
Sesame	0.84	0.93	1.01
Rapeseed & Mustard	3.01	2.72	2.84
Linseed	0.11	0.11	0.09
Other Oil Seeds	8.31	7.99	8.15
Total Oil Seeds	**14.98**	**14.33**	**14.36**
Cotton	5.93	6.38	6.14
Jute	0.38	0.38	0.37
Mesta	0.03	0.04	0.04
Total Fibers	6.37	6.82	6.56
Tobacco	0.23	0.24	0.22
Other Crops	**6.89**	**6.76**	**6.85**
Gross Cropped Area	100.00	100.00	100.00

(Source: Directorate of Economics & Statistics, DAC & FWP; P: Provisional)

अनाज और दालें भारत में बड़े पैमाने पर उगाए जाने वाले खाद्यान्न हैं। भारत अनाज के उत्पादन में तीसरे और दलहन के उत्पादन में पहले स्थान पर है। हमारे देश में अनाज में चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का, रागी, गेहूं, जौ और अन्य की खेती की जाती है। ये खाद्यान्न सकल फसल क्षेत्र (GCA) के लगभग पचास प्रतिशत पर कब्जा करते हैं। चावल भारत में उगाई जाने वाली सबसे बड़ी फसल है जो भारत के GCA का 22% हिस्सा है। फसल उत्पादक का दूसरा सबसे बड़ा प्रतिशत गेहूं का है जो लगभग 16% का योगदान देता है। पश्चिम बंगाल, पंजाब और उत्तर प्रदेश राज्य देश में प्रमुख चावल उत्पादक राज्य हैं जबकि गेहूं उगाने वाले राज्य पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश आदि हैं। तिलहन जैसे मूंगफली, तिल, रेपसीड, सरसों, अलसी और अन्य तिलहन देश में उगाए जाने वाले कुल फसल क्षेत्र का लगभग 15% हिस्सा लेते हैं। आप विभिन्न फसलों के वितरण और उत्पादन के बारे में विस्तार से खंड 3–अर्थव्यवस्था के इकाई 11 कृषि में अध्ययन करेंगे।

बोध प्रश्न 1

भूमि उपयोग शब्द का वर्णन करें?

6.4 भूमि–मानव अनुपात

क्या आप जानते हैं कि अध्ययन के लिए भूमि–मानव अनुपात इतना महत्वपूर्ण क्यों है? हाँ, क्योंकि मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों जैसे भूमि, जल, खनिज और अन्य का उपयोग करते हैं। हम विकासात्मक गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आप देख सकते हैं कि किसी भी बस्ती या क्षेत्र की समृद्धि लोगों की भूमि संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने की क्षमता पर निर्भर करती है। **भूमि मानव अनुपात** जनसंख्या के स्थानिक वितरण के संबंध में सुराग प्रदान करता है जो ज्यादातर भूमि संसाधनों की क्षमताओं से संबंधित है। *भूमि मानव अनुपात किसी विशेष क्षेत्र के जनसंख्या घनत्व को दर्शाता है।* यह "प्रति इकाई क्षेत्र या आयतन में एक निश्चित स्थान पर रहने वाले लोगों की संख्या की गणना करने की एक विधि" को संदर्भित करता है। भूमि के प्रत्येक भाग में एक निश्चित संख्या में लोग हैं जो उस पर रह सकते हैं। परिणामस्वरूप, जनसंख्या–से–भूमि–क्षेत्र अनुपात को समझना आवश्यक है। इसे आम तौर पर प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के लोगों के रूप में व्यक्त किया जाता है:

भूमि–मानव अनुपात या जनसंख्या का घनत्व = क्षेत्र की कुल जनसंख्या / क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल।

आइए हम नीचे बताए गए सरल उदाहरण का अध्ययन करके समझते हैं:

उदाहरण: क्षेत्र 'ए' का क्षेत्रफल 100 वर्ग किमी है और उस क्षेत्र (ए) की कुल जनसंख्या 3,00,000 है। क्षेत्र ए के भूमि–से–मानव अनुपात की गणना करें।

इस मामले में, जनसंख्या का घनत्व या भूमि मानव अनुपात की गणना इस प्रकार की जा सकती है: 3,00,000 (कुल जनसंख्या) / 100 (क्षेत्रफल) = 3,000 लोग / वर्ग किमी।

6.4.1 जनसंख्या वितरण और घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक

किसी भी क्षेत्र के लिए जनसंख्या का स्थानिक वितरण समय और स्थान के साथ समान रूप से वितरित नहीं होता है। जनसंख्या वितरण और घनत्व को प्रभावित करने वाले कुछ कारकों को दो मुख्य समूहों में विभाजित किया जा सकता है: 1) भौतिक कारक और 2) सामाजिक–आर्थिक कारक।

1. **भौतिक कारक:** इन कारकों का जनसंख्या घनत्व और वितरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। स्थलाकृति, भू–आकृतियाँ, जलवायु और मिट्टी भौतिक कारकों के उदाहरण हैं। तकनीकी प्रगति के बावजूद, दुनिया भर में जनसंख्या वितरण के प्रतिरूप कई भौतिक कारणों के प्रभाव को दर्शाते हैं।

2. **सामाजिक–आर्थिक कारक:** सामाजिक–आर्थिक कारक भी भौतिक कारकों की तरह जनसंख्या घनत्व और वितरण पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। यह सर्वविदित है कि सामाजिक–आर्थिक (गैर–भौतिक) कारक सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनीतिक कारक की तरह अधिक महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं और प्राकृतिक संसाधन शोषण, कुछ सामाजिक आर्थिक तत्व हैं जिनका लोगों पर प्रभाव पड़ता है। हालाँकि, इन दो कारकों की सापेक्ष प्रासंगिकता पर पूरी तरह से सहमति नहीं

हो सकती है। कुछ स्थानों में भौतिक तत्व महत्वपूर्ण होते हैं, जबकि सामाजिक–आर्थिक तत्व अन्य में अधिक महत्वपूर्ण होते हैं।

उद्देश्य के आधार पर, जनसंख्या आंकड़े को विभिन्न तरीकों से प्लॉट, वर्णित या विश्लेषित किया जा सकता है। जनसंख्या के आंकड़े बड़ी इकाइयों जैसे राज्यों या छोटे डिवीजनों जैसे जिलों और यहां तक कि मंडल/तालुका और गांव के स्तर पर एकत्र और मैप किए जाते हैं। इन आँकड़ा सेट का उपयोग तब किया जाता है जब जनसंख्या को भूमि के प्रकार और अन्य संबंधित कारकों से जोड़ने के लिए अधिक सटीक जानकारी की आवश्यकता होती है।

6.5 भूमि उपयोग क्षमता

अब तक आप भारत की नौ गुना भूमि उपयोग वर्गीकरण प्रणाली और देश में भूमि संसाधनों के वितरण और उपयोग के बारे में समझ गए हैं। आपने भूमि–मानव अनुपात और भौतिक और सामाजिक जैसे कारकों के बारे में भी पढ़ा है जो जनसंख्या वितरण और घनत्व को प्रभावित कर रहे हैं। अब आप भूमि उपयोग क्षमता को जानेगें ।

भूमि उपयोग क्षमता या भूमि क्षमता बिना किसी नुकसान के एक विशिष्ट भूमि उपयोग का समर्थन करने के लिए भूमि की क्षमता है। प्राकृतिक पौधों की वृद्धि/पशु आवास या कृत्रिम फसल वृद्धि/मानव आवास को बनाए रखने के लिए भूमि की सतह की क्षमता को भूमि क्षमता के रूप में वर्णित किया जा सकता है। यह समझा जा सकता है कि किसी प्रकार का भूमि उपयोग जो एक विशिष्ट प्रकार की भूमि के लिए उपयुक्त है अर्थात मानव आवास, कृषि, घास के मैदान, जंगल, पशु आवास, आदि। ढलान, मिट्टी के प्रकार, मिट्टी की गहराई और कटाव की स्थिति आदि जैसी भू भाग की विशेषताओं के आधार पर, विभिन्न प्रकार की भूमि में अलग–अलग क्षमताएं होती हैं। यदि कुछ भूमि की विशेषताएं कृषि के साथ असंगत हैं, तो अन्य भूमि उपयोगों के लिए ऐसे क्षेत्र का उपयोग या निरंतरता बनाए रखना बेहतर है। भूमि क्षमता मूल्यांकन एक निश्चित उपयोग के लिए भूमि की उपयुक्तता निर्धारित करने का प्रारंभिक चरण है। भूमि की उपयुक्तता अन्य चरों को दर्शाती है जैसे कि अर्थशास्त्र, ढांचागत आवश्यकताएं, पानी और ऊर्जा की जरूरतें, चुनौतीपूर्ण और साथ में भूमि उपयोग सभी को ध्यान में रखा जाता है। आइए हम भूमि क्षमता के वर्गीकरण का अध्ययन करें।

6.5.1 भूमि क्षमता वर्गीकरण

भूमि क्षमता वर्गीकरण मिट्टी की विशेषताओं, भू भाग, जल निकासी और जलवायु द्वारा दीर्घकालिक उपयोग पर लगाए गए अंतर्निहित बाधाओं के आधार पर भूमि को वर्गीकृत करने की एक तकनीक है। यह एक मार्गदर्शक अवधारणा है जो भूमि का उसकी क्षमताओं के अनुसार उपयोग करती है और उसकी आवश्यकताओं के अनुसार उसका उपचार करती है। क्षमता वर्गों को दो समूहों में बांटा गया हैः समूह 1 में वे शामिल हैं जो खेती के लिए उपयुक्त हैं और समूह 2 में वे शामिल हैं जो खेती के लिए उपयुक्त नहीं हैं। समूह 1 में भूमि वर्ग I से IV है और समूह 2 में V से VIII है। भूमि उपयोग क्षमता के संदर्भ में प्रत्येक समूह की विशेषताओं पर नीचे चर्चा की गई है।

समूह 1ः खेती के लिए उपयुक्त

i) वर्ग I: इन भूमि में कम ढलान (0–1%) और उच्च कृषि योग्य क्षमता है। ये उत्कृष्ट भूमि हैं जिसमे सुरक्षित रूप से खेती की जा सकती है और किसी भी कृषि पद्धति का उपयोग करके किसी भी फसल के लिए उपयोग किया जा सकता है।

ii) वर्ग II: इस भूमि का हल्का ढलान (1–3%) है और ये समोच्च खेती और सीढ़ीदार जैसी कुछ संरक्षण तकनीकों के साथ खेती के लिए अच्छी है। इन भूमि में कुछ बाधाएँ हैं जैसे फसल की पसंद को सीमित करना, मध्यम गहरा होना और हवा और पानी के कटाव के प्रति संवेदनशील होना आदि।

iii) वर्ग III: इन भूमि में अक्सर मध्यम ढलान (3–5%) होते हैं, जो महत्वपूर्ण बाधाएं पैदा करते हैं जो फसल की पसंद को सीमित करते हैं या जिनके लिए विशिष्ट संरक्षण विधियों जैसे पट्टी फसल, बांध निर्माण आदि की आवश्यकता होती है। मिट्टी मध्यम उपजाऊ होती है और इसमें अधिक गंभीर क्षरण और गिरावट की संभावना होती है। हालाँकि, यदि पर्याप्त पौधों का आवरण बनाए रखा जाए तो उनका उपयोग कृषि के लिए किया जा सकता है।

iv) वर्ग IV: ये भूमि आमतौर पर उथली मिट्टी की गहराई और कम उर्वरता के साथ खड़ी ढलानों (5–8%) पर होती है। ये कटाव के लिए प्रवण होती हैं और इनमे नुकसान का एक उच्च जोखिम होता है, लेकिन कभी–कभी सावधानी से उपचार किए जाने पर इनमें खेती की जा सकती है।

समूह 2: खेती के लिए अनुपयुक्त

i) वर्ग V: इन भूमि में खड़ी ढलान (8–12%) है और खेती के लिए या तो गीली या पथरीली है। उनके पास आमतौर पर बहुत कम या कोई क्षरण जोखिम नहीं होता है। यदि अच्छी तरह से प्रबंधित किया जाता है, तो इनका उपयोग चरागाहों या वानिकी के लिए किया जा सकता है, और चराई को नियंत्रित करना संभव है।

ii) वर्ग VI: इन भूमि में खड़ी ढलान (18%) और चराई और वानिकी के लिए उपयोग की जाने वाली उथली मिट्टी है। पौधों के आवरण की रक्षा के लिए चराई को नियंत्रित किया जाना चाहिए, और उपयोग को तब तक प्रतिबंधित किया जाना चाहिए जब तक कि आवरण बहाल न हो जाए।

iii) वर्ग VII: इन भूमियों की विशेषता निम्नीकृत, ऊबड़–खाबड़ भूभाग, पतली मिट्टी की गहराई और 25% तक की खड़ी ढलान है। सभी प्रतिबंध जो अधिक हद तक लागू होते हैं मिट्टी दलदली या सूखा–प्रवण हो सकती है। यदि पर्याप्त वर्षा होती है तो उनका उपयोग पूर्ण हरे भरे आवरण, गली नियंत्रण संरचनाओं और गंभीर रूप से प्रतिबंधित चराई के साथ वानिकी के लिए किया जा सकता है।

iv) वर्ग VIII: कुछ सबसे खराब मिट्टी के प्रकार और संभवतः 25% से अधिक सबसे अधिक ढलानों के साथ ये भूमि कठिन भूभाग में है। इन्हें बंजर भूमि भी माना जा सकता है। यदि पेड़ विकास और वन्यजीवों के आवास के लिए परिस्थितियाँ अनुकूल हों, तो उनका उपयोग केवल अत्यधिक ठोस गली प्रबंधन विधियों के साथ जंगल में किया जा सकता है। जंगल में उपयोग के लिए या चरने के लिए सउपयुक्त नहीं है।

<u>6.5.2 उप–वर्ग स्तर पर भूमि क्षमता</u>

भूमि क्षमता वर्गीकरण में दूसरी श्रेणी उपवर्ग क्षमता है। भूमि क्षमता उपवर्गों को वर्ग कोड e, w, s और c द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। ये चार प्रमुख बाधाओं के आधार पर क्षमता वर्गों की उप–श्रेणियां हैंः (i) क्षरण जोखिम (e) (ii) गीलापन, जल निकासी, या अतिप्रवाह (w), (iii) रूटिंग क्षेत्र सीमाएं (s), और (iv) जलवायु बाधाएं (c)। उप–वर्गों की पहचान क्षमता वर्ग संख्या में सीमा चिन्ह जोड़कर की जाती है।

i) उपवर्ग–e: मिट्टी वे हैं जिनकी कटाव के प्रति संवेदनशीलता सबसे महत्वपूर्ण समस्या है या उनके उपयोग को सीमित करने वाला खतरा है। इस श्रेणी में मिट्टी को प्रभावित करने वाले मुख्य मृदा चर अपरदन की संवेदनशीलता और पिछले कटाव से हुई क्षति हैं।

ii) उपवर्ग–w: मिट्टी वे हैं जिनके लिए अतिरिक्त पानी उनके उपयोग के लिए प्राथमिक खतरा या बाधा है। इस श्रेणी की मिट्टी खराब जल निकासी, नमी, उच्च जल स्तर और अतिप्रवाह से प्रभावित होती है।

iii) उपवर्ग–s: जड़ क्षेत्र के अंदर बाधाओं वाली मिट्टी है, जैसे जड़ क्षेत्र उथलापन, पत्थर, सीमित नमी धारण क्षमता, कम उर्वरता जिसे सुधारना मुश्किल है, और नमक या सोडियम एकाग्रता।

iv) उपवर्ग–c: मिट्टी वे हैं जिनके लिए जलवायु (तापमान या नमी की अनुपस्थिति) उनके उपयोग के लिए सबसे महत्वपूर्ण खतरा या बाधा है।

क्षमता वर्ग प्रचलित सीमा द्वारा निर्धारित किया जाता है, जिसे उपवर्ग द्वारा दर्शाया जाता है। मूल रूप से समान प्रकार की सीमाओं वाले क्षमता वर्ग के भीतर, उप–वर्गों e, w, s, और c की निम्नलिखित प्राथमिकता हैः e, w, s, और c। क्षमता वर्ग I और VIII में, उपवर्गों को मिट्टी या विविध क्षेत्रों में आवंटित नहीं किया जाता है।

बोध प्रश्न 2

a) जनसंख्या घनत्व को प्रभावित करने वाले किन्हीं दो भौतिक और सामाजिक–आर्थिक कारकों के बारे में लिखिए।

b) भूमि–क्षमता वर्गीकरण में, कौन सी भूमि वर्ग– I द्वारा दर्शायी जाती है?

6.6 भूमि निम्नीकरण

भूमि निम्नीकरण को प्राकृतिक या मानवजनित गतिविधियों के परिणामस्वरूप भूमि की वर्तमान या संभावित उत्पादकता के नुकसान के रूप में परिभाषित किया गया है। यह अनिवार्य रूप से भूमि की गुणवत्ता और उत्पादकता में गिरावट है। कई परस्पर जुड़े कारणों के कारण निम्नीकरण होता है जो नीचे की ओर अनुक्रम का कारण बन सकता है, जिसके परिणामस्वरूप भूमि आर्थिक रूप से व्यवहार्य उपयोग के लिए उपयुक्त नहीं रह जाती है। लगातार बढ़ती वैश्विक आबादी और भूमि के विशाल पथों के निरंतर निम्नीकरण से पृथ्वी पर प्राकृतिक और कृषि पारिस्थितिक तंत्र की मूलभूत प्रक्रियाओं के साथ–साथ मानव जीवन की गुणवत्ता को भी खतरा है। कृषि संबंधी उत्पादकता, पर्यावरण, खाद्य सुरक्षा और जीवन की गुणवत्ता पर इसके नकारात्मक प्रभावों के कारण, इक्कीसवीं सदी में भूमि निम्नीकरण एक प्रमुख संकट बना रहेगा। भूमि निम्नीकरण का

उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि साइट पर भूमि की स्थिति खराब हो गई है। सार्वभौमिक खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय गुणवत्ता पर भूमि निम्नीकरण के प्रभाव ने वैश्विक चिंताओं के बीच भूमि निम्नीकरण की प्रमुखता को बढ़ा दिया है। गिरावट की सीमा भूमि के प्रति लोगों की गतिविधि से निर्धारित होती है, और वे नीचे की प्रवृत्ति को संशोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। भूमि और पर्यावरण के बिगड़ने को असतत कृषि पद्धतियों, गरीबी और निरक्षरता के साथ–साथ ग्लोबल वार्मिंग और 21वीं सदी के जलवायु परिवर्तन के कारण और भी बदतर किया जा सकता है।

6.6.1 भूमि निम्नीकरण के प्रकार

भूमि निम्नीकरण कई अलग–अलग घटकों और प्रक्रियाओं से बना है, जिनमें से प्रत्येक एक दूसरे से अविभाज्य रूप से संबंधित है। यद्यपि कई प्रकार की भूमि निम्नीकरण प्रक्रियाएं हैं, हम मुख्य रूप से भूमि निम्नीकरण के तीन प्रमुख घटकों, अर्थात् मिट्टी, पानी और जंगल पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

1. मृदा और भूमि निम्नीकरण

जैसा कि हम सभी जानते हैं, मृदा अपरदन भूमि निम्नीकरण के सबसे गंभीर और सार्वभौमिक प्रकारों में से एक है। मृदा अपरदन मिट्टी के आवरण के समाप्त होने और फिर धुल जाने की प्रक्रिया है। मिट्टी का विकास और कटाव एक ही समय में होता है, और आमतौर पर दोनों के बीच संतुलन होता है। वनों की कटाई, अत्यधिक चराई, खनन कार्यों आदि जैसी मानवीय गतिविधियाँ इस संतुलन को बाधित कर सकती हैं। हवा और पानी जैसे प्राकृतिक कारक भी मिट्टी के कटाव का कारण बन सकते हैं। ये कारक कृषि भूमि के उत्पादन को नुकसान पहुंचा सकते हैं, अंततः जमीन को खेती के लिए अनुपयुक्त बना सकते हैं।

बहता पानी चिकनी मिट्टी को बड़े चैनलों में काट देता है और इन्हें "गली' या "बैडलैंड्स" कहा जाता है, जो कृषि के लिए अनुपयुक्त हो सकता है। कभी–कभी पानी विशाल क्षेत्रों में चादर के रूप में बहता है और ऊपर की मिट्टी बह जाती है। इस प्रक्रिया को "शीट अपरदन' कहा जाता है। दूसरी ओर, वायु अपरदन एक प्राकृतिक घटना है जिसमें हवा जबरन मिट्टी को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में स्थानांतरित करती है। इसमें भारी आर्थिक और पर्यावरणीय नुकसान पैदा करने की क्षमता होती है। जबकि हवा का कटाव रेगिस्तान में और रेत के टीलों के पास और तटीय क्षेत्रों के समुद्र तटों में अधिक बार होता है। यह कुछ क्षेत्रों में विशिष्ट इलाके की विशेषताओं के कारण भी हो सकता है। मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में परिवर्तन से भूमि की उत्पादकता कम हो सकती है। मिट्टी के भौतिक गुणों जैसे संरचना और जल धारण क्षमता में परिवर्तन से भौतिक निम्नीकरण होता है, जबकि रासायनिक निम्नीकरण को अम्लीकरण और पौधों के पोषक तत्वों की हानि के माध्यम से पहचाना जा सकता है। मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों में कमी के कारण, जीवों की गतिविधि भी कम हो सकती है जिसे जैविक निम्नीकरण कहा जाता है।

लवणीकरण, एक और बड़ा खतरा जो मिट्टी में नमक के स्तर में वृद्धि और मुक्त लवणों के अत्यधिक संचय के कारण सभी प्रकार की मिट्टी के निम्नीकरण को संदर्भित करता है। यह खराब नहर आधारित सिंचाई परियोजना योजना और प्रबंधन के परिणामस्वरूप

होता है। संरचना के आधार पर, नमक प्रभावित भूमि को लवणीय, सोडिक या लवणीय–सोडिक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। पौधों के विकास पर मिट्टी की लवणता का मुख्य प्रभाव पानी के अवशोषण में कमी है। इन मिट्टी में, पर्याप्त नमी के साथ भी, पानी के अवशोषण की कमी के कारण फसलें आसानी से मर जाती हैं। खारी मिट्टी सफेद पपड़ी के रूप में दिखाई देती है और प्रतिबंधित फसल वृद्धि की एक बेल्ट से घिरी होती है, जिससे लंबे समय में जल जमाव होता है।

2. जल और भूमि निम्नीकरण

अब हम देश के कोने–कोने में, विशेष रूप से पीने और कृषि के लिए शुष्क क्षेत्रों में पानी की गंभीर कमी का सामना कर रहे हैं। औद्योगिक, निर्माण और कृषि गतिविधियों के बदलते प्रतिरूप के कारण सतही जल और भूजल संसाधन मात्रा के साथ–साथ गुणवत्ता के मामले में भी प्रभावित होते हैं। स्पष्ट परिवर्तनों में जल स्तर का कम होना, प्रदूषकों द्वारा संदूषण, नदियों में प्रवाह व्यवस्था में परिवर्तन और अवसादन आदि शामिल हैं। प्राकृतिक जल चक्र में भूजल शामिल होता है जहां जमीन की सतह पर गिरने वाली वर्षा कुछ हद तक उपसतह में घुसपैठ करती है। भूजल पुनर्भरण वह हिस्सा है जो मिट्टी के माध्यम से नीचे की ओर जाता है जब तक कि यह संतृप्त चट्टान सामग्री तक नहीं पहुंच जाता। संतृप्त भूजल धीरे–धीरे बहता है और अंततः नदियों, झीलों और समुद्रों में बह जाता है।

हर जगह अत्यधिक भूजल पंपिंग का, यहां तक कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में भी बदलते जल स्तर पर सबसे गंभीर प्रभाव पड़ता है। भूजल का कृषि रासायनिक संदूषण भी विश्व स्तर पर प्रमुख चुनौतियों में से एक है। सिंचित क्षेत्रों में नमक की लीचिंग से प्रेरित लवणीकरण, उष्ण कटिबंध में भूमि निम्नीकरण का सबसे आम प्रकार है। जैसे–जैसे नमक का स्तर बढ़ता है, पानी मानव उपभोग, पशुओं को पिलाने के लिए अनुपयुक्त हो जाता है, और अंततः सिंचाई में उपयोग के लिए भी खारा हो जाता है। नदी प्रवाह व्यवस्था में परिवर्तन और झीलों का सूखना सतही जल निम्नीकरण के सर्वोत्तम उदाहरण हैं। नदियों पर प्राथमिक नकारात्मक प्रभाव यह है कि प्रवाह कम सुसंगत हो जाता है। आप समाचार पत्रों से देख सकते हैं या पढ़ सकते हैं कि बारहमासी धाराएँ और नदियाँ भी विभिन्न कारणों से शुष्क मौसम के अंत तक धीरे–धीरे सूख रही हैं।

नदियों के जलग्रहण क्षेत्रों के वनों की कटाई प्रवाह व्यवस्था में बदलाव और बाद में भूमि निम्नीकरण का एक अन्य महत्वपूर्ण कारक है। वर्षा मिट्टी में रिसने के बजाय सतह से बहती है, जिससे तूफान के बाद बाढ़ आती है और भूजल प्रवाह कम हो जाता है। जब महत्वपूर्ण बारिश या हवा की घटनाएं होती हैं, या जब मानव गतिविधि से मिट्टी इधर उधर होती है, तो मिट्टी को दूर स्थान ले जाया जाता है और जमीन पर, झीलों, दलदल और धाराओं में जमा किया जाता है। अवसादन भी एक बड़ी समस्या है जिसमें अपरदित मिट्टी के ढलान के नीचे जमा होने की प्रक्रिया होती है। तलछट, एकल सबसे महत्वपूर्ण गैर–बिंदु स्रोत संदूषक, सतही जल की गुणवत्ता के गिरावट में योगदान देता है, जलीय जीवन को खतरे में डालता है, और धारा तट के क्षरण का कारण बनता है और अक्सर बाढ़ बढाता है।

3. वन और भूमि निम्नीकरण

आप शायद जानते होंगे कि वनों की कटाई के प्रभाव से प्राकृतिक वातावरण में समस्याएँ आती हैं। जब एक जंगल को कृषि, खनन या शहरी केंद्र के विकास या अन्य भूमि उपयोग से बदल दिया जाता है, तो उस क्षेत्र को वनों की कटाई कहा जाता है। दूसरी ओर, निम्नीकरण एक सतत प्रक्रिया है जिसमें वन का बायोमास, प्रजातियों की संरचना या मिट्टी की गुणवत्ता बिगड़ती है। वनों की कटाई अक्सर निम्नीकरण के साथ होती है। वनों का ह्रास और संसाधनों का ह्रास वन–निर्भर आबादी पर विशेष रूप से स्वदेशी प्रजातियों और सामान्य रूप से वैश्विक जलवायु पर पर्याप्त प्रभाव डालता है।

वनों की कटाई और वन क्षरण विभिन्न कारकों द्वारा संचालित होते हैं जो स्थान और देश के अनुसार भिन्न होते हैं। फसल उगाने या जानवरों को पालने के लिए भूमि की इच्छा उष्ण कटिबंध में वनों की कटाई का प्रमुख कारण है। वनों की कटाई के लिए खनन, ढांचागत विकास, शहरी विकास और लॉगिंग सभी प्रमुख योगदानकर्ता हैं। भोजन, चारे और ईंधन की बढ़ती मांग के कारण वनों की कटाई का प्राथमिक कारण कृषि है। अत्यधिक चराई, ईंधन की लकड़ी की मांग, अत्यधिक कटाई और मानव जनित आग भी कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं जो जंगलों के निम्नीकरण में योगदान करते हैं। वनों की कटाई और वनों के निम्नीकरण की रोकथाम कार्बन पृथक्करण को बढ़ा सकती है और जैव विविधता के संरक्षण और जलवायु परिवर्तन को सीमित करने में योगदान कर सकती है।

6.6.2 भूमि निम्नीकरण को कम करने के लिए उपचारात्मक उपाय

टिकाऊ कृषि तकनीकों और बेहतर भूमि प्रबंधन प्रथाओं के उपयोग के माध्यम से, भूमि निम्नीकरण के परिणामों को कम किया जा सकता है, रोका जा सकता है और यहां तक कि उलट भी किया जा सकता है। हवा और पानी के कारण होने वाले निम्नीकरण को सीमित करने के लिए कई तकनीकें हैं जो बदले में भूमि निम्नीकरण को रोक सकती हैं। भूमि निम्नीकरण की रोकथाम के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपचारात्मक उपाय नीचे दिए गए हैं।

i) वनरोपणः वनीकरण एक ऐसे क्षेत्र में एक जंगल की स्थापना या पेड़ों का खड़ा होना है जहां पहले कोई वृक्ष नहीं था या भूमि निम्नीकरण के कारण वृक्षों के आवरण का नुकसान हुआ था। मिट्टी के कटाव की संभावना वाले क्षेत्रों में पेड़ लगाए जा सकते हैं, विशेष रूप से ऐसे पेड़ जिनकी मिट्टी को बांधने की क्षमता अधिक होती है। निम्नीकृत भूमि में छोटे पौधे और पेड़ लगाकर सुधार किया जा सकता है जो स्थानीय रूप से अनुकूलनीय हैं।

ii) सीड़ीनुमा ढालः सीड़ीनुमा ढाल सतही जल अपवाह के प्रभाव को कम करती है और वर्षा जल के संरक्षण में मदद करती है।

iii) आश्रय पेटीः एक आश्रय पेटी अक्सर बाड़ की रेखाओं के साथ लगाए गए पेड़ों की एक पंक्ति होती है। फील्ड शेल्टर बेल्ट हवा के कटाव, मिट्टी की नमी संरक्षण और हवा से फसलों की क्षति को कम करते हैं। मिट्टी को संरक्षित करने के लिए, उनका उपयोग उचित कृषि अवशेष प्रबंधन और अन्य संरक्षण तकनीकों के संयोजन के साथ किया जाना चाहिए।

iv) टिब्बा वृक्षारोपण द्वारा रेत के टीलों का स्थिरीकरणः कंटीली झाड़ियाँ मिट्टी को रोककर या रेगिस्तानी क्षेत्रों में रेत के टीलों को स्थिर करके भूमि निम्नीकरण को रोकने

में सहायता करती हैं। इसी प्रकार तटीय क्षेत्र के साथ रेत के टीलों को टिब्बा वृक्षारोपण के माध्यम से स्थिर किया जा सकता है। ये भूमि निम्नीकरण पर कुछ प्रभावी जाँचें हैं।

v) स्ट्रिप क्रॉपिंग: स्ट्रिप क्रॉपिंग प्राकृतिक अवरोधों का निर्माण करके मिट्टी के कटाव को रोकने में मदद करती है, जो मिट्टी की मजबूती को बनाए रखने में मदद करती है। कुछ स्तरों के पौधे मिट्टी से पोषक तत्वों और पानी को दूसरों की तुलना में अधिक कुशलता से अवशोषित करते हैं।

vi) फसलों का चक्रण: फसल चक्रण एक ही स्थान पर कई मौसमों के दौरान विभिन्न प्रकार की फसलों की खेती करने की प्रथा है। फसल चक्रण से मिट्टी की संरचना और मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ में सुधार होता है, मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट कम होती है और कृषि उत्पादन में मजबूती आती है। यह प्रक्रिया परोक्ष रूप से भूमि निम्नीकरण की रोकथाम का कारण बनती है

vii) बंजर भूमि का पुनर्ग्रहण: बंजर, अनुपजाऊ भूमि को किसी प्रकार की उत्पादक भूमि में बदलने की प्रक्रिया को बंजर भूमि सुधार के रूप में जाना जाता है। यह मिट्टी के कटाव को रोकता है और भूमि के और निम्नीकरण को रोकने के लिए नमी का संरक्षण करता है।

अंत में, भूमि निम्नीकरण का पर्यावरण पर सीधा प्रभाव पड़ता है। बढ़ती जनसंख्या की वर्तमान प्रवृत्ति को ध्यान में रखते हुए हमें इस बारे में सोचना चाहिए कि भूमि निम्नीकरण को कैसे रोका जाए और भूमि संसाधनों का सतत विकास कैसे किया जाए। भूमि निम्नीकरण भूमि की उत्पादकता को खतरे में डालता है और दीर्घावधि में यह मरुस्थलीकरण को जन्म दे सकता है भूमि संसाधनों का सतत विकास सार्वजनिक ज्ञान और समस्या के बारे में जागरूकता बढ़ाने और उपयुक्त भूमि प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ावा देने के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

बोध प्रश्न 3

a) भूमि निम्नीकरण क्या है?
b) भूमि निम्नीकरण को रोकने के लिए दो महत्वपूर्ण उपचारात्मक उपाय लिखिए।

6.7 सारांश

इस इकाई में आपने अब तक पढ़ा है:

- हमारे देश में भूमि उपयोग का नौ गुना वर्गीकरण।
- भूमि जोत को पांच आकार समूहों जैसे सीमांत (<1 हेक्टेयर), छोटे (1–2 हेक्टेयर), अर्ध–मध्यम (2–4 हेक्टेयर), मध्यम (4–10 हेक्टेयर), और बड़े (10 हेक्टेयर और ऊपर)) में कैसे वर्गीकृत किया गया है।
- भारत के राज्यों के में भूमि संसाधनों का वितरण और उपयोग।
- भूमि–मानव अनुपात किसी विशेष क्षेत्र के जनसंख्या घनत्व की व्याख्या करता है जहां कई भौतिक और सामाजिक–आर्थिक कारक हैं जो जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करते हैं।

- भूमि क्षमता वर्गीकरण मुख्य रूप से बताता है कि भूमि खेती के लिए उपयुक्त है या नहीं। भूमि क्षमता के वर्गों और उनके उपवर्गों को भी समझाया गया है।
- मिट्टी, पानी और जंगलों से जुड़े तीन अलग–अलग प्रकार के भूमि निम्नीकरण पर चर्चा की गई है।
- आपने भूमि निम्नीकरण को कम करने के लिए कुछ उपचारात्मक उपायों का भी अध्ययन किया है।

6.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. नौ गुना भूमि उपयोग वर्गीकरण के बारे में बताएं।
2. भूमि क्षमता वर्गीकरण की विवेचना कीजिए।
3. भूमि निम्नीकरण को रोकने के लिए कौन से उपचारात्मक उपाय किए जाने चाहिए?

6.9 उत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्न (SAQ)

1. भूमि उपयोग शब्द को किसी विशेष उद्देश्य के लिए भूमि के उपयोग के रूप में समझाया जा सकता है।
2. a) भौतिक कारकः जलवायु और मिट्टी; सामाजिक–आर्थिक कारकः राजनीतिक और संसाधन शोषण।

   b) वर्ग I लगभग समतल ढलानों या समतल भूमि का प्रतिनिधित्व करता है और खेती के लिए बहुत अच्छा है।
3. a) विभिन्न कारणों से भूमि की गुणवत्ता और उत्पादकता में गिरावट को भूमि निम्नीकरण कहा जा सकता है।

   b) वनरोपण और फसलों का रोटेशन

अंत में कुछ प्रश्न

1. खंड 6.2 का संदर्भ लें।
2. खंड 6.5 का संदर्भ लें।
3. उप–धारा 6.6.2 का संदर्भ लें।

6.10 संदर्भ और अन्य पाठ्यसामग्री

1. Khullar, D. R. (2011): *India – A Comprehensive Geography*. Ludhiana: Kalyani Publishers.
2. Tiwari, R. C. (2008): *Geography of India*, Pryag Pustak Bhawan, Allahabad.

3. Singh, J. D.S. Sandhu & J. P. Gupta (1990): Dynamics of Agricultural Change, Oxford & IBH Pub. Co. Pvt. Ltd., New Delhi.

4. MOSPI 2021. Ministry of Statistics and Programme Implementation, Govt. of India. http://mospi.nic.in/45-nine-fold-classification-land-use accessed on 9.9.2021.

5. Klingbiel, A. A. And Montgomery, P. H. (1961). Land Capability Classification- Agriculture Handbook No. 210. Soil Conservation Service, US Department of Agriculture, Washington, DC, USA.

6. Directorate of Economics and Statistics (2020): *Agricultural Statistics at a Glance 2019*, Department of Agriculture, Cooperation and Farmers Welfare, Ministry of Agriculture and Farmers Welfare, Government of India, New Delhi.

7. Directorate of Economics and Statistics (2021): *Pocket Book of Agricultural Statistics 2020,* Department of Agriculture, Cooperation and Farmers Welfare, Ministry of Agriculture and Farmer's Welfare, Government of India, New Delhi.

8. http://agcensus.nic.in/document/analysis01natasg.htm

9. http://agcensus.nic.in/document/introagcen.htm

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7

जल संसाधन

संरचना

7.1 प्रस्तावना
संभावित अध्ययन परिणाम
7.2 जल संसाधन
जल संसाधन के प्रकार
भूजल संसाधन की विशेषताएं
जल संसाधनों का वितरण
जल संसाधनों का उपयोग
7.3 बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएं
दामोदर घाटी निगम–एक केस स्टडी
7.4 सारांश
7.5 अंत में कुछ प्रश्न
7.6 उत्तर
7.7 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

7.1 प्रस्तावना

आपने इस पाठ्यक्रम के खंड–1 में भारत के भू–भाग का विस्तार से अध्ययन किया है। खंड–2 संसाधन आधार की व्याख्या करता है, जिसमें आप पहले ही इकाई–6 में भूमि संसाधनों के वर्गीकरण, वितरण और उपयोग, भूमि–मानव अनुपात तथा भूमि क्षरण आदि से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों के संदर्भ में पढ़ चुके हैं। इस इकाई–7 से आप जल संसाधनों के संदर्भ में जानेंगे। हम सभी जानते हैं कि जल एक महत्वपूर्ण संसाधन है, जिसके बिना पृथ्वी ग्रह पर जीवन असंभव है। जल पृथ्वी की सतह का लगभग 71% भाग आच्छादित करता है, इसी कारण पृथ्वी को "नीला ग्रह" कहा जाता है। जल देश की सामाजिक–आर्थिक और विकासात्मक गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आप जानते ही होंगे कि जल पृथ्वी की सतह पर, भूमिगत रूप में और साथ ही वातावरण में विभिन्न रूपों में उपलब्ध है।

इस इकाई के तहत आप भाग 7.2 में जल संसाधनों के प्रकार तथा विशेषताओं से परिचित होंगे। वर्षा भारत में ताजे जल का मुख्य स्रोत है और इसकी अधिकतम मात्रा दक्षिण–पश्चिम मानसून से प्राप्त होती है। इस बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन के वितरण और उपयोग को भाग 7.2 में वर्णित किया गया है। भाग 7.3 में आप जानेंगे कि बहुउद्देशीय नदी परियोजना तथा इसका महत्व क्या है? भारत में बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं की अवधारणा को बेहतर ढंग से समझने के लिए दामोदर नदी घाटी परियोजना से संबंधित एक केस स्टडी का भी वर्णन किया गया है।

संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपः

- जल संसाधनों के विभिन्न प्रकारों और विशेषताओं को स्पष्ट कर सकेंगे;
- जल संसाधनों के वितरण और उनके उपयोग का वर्णन कर सकेंगे; तथा
- बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना और भारत में इसके महत्व का वर्णन कर सकेंगे।

7.2 जल संसाधन

हम सभी जानते हैं कि पृथ्वी ग्रह पर जीवन का अस्तित्व जल पर निर्भर करता है। जल मानव, पौधों और जीवों के अस्तित्व को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कृषि, अर्थव्यवस्था, स्वच्छ ऊर्जा और आजीविका सुरक्षा के लिए भी जल आवश्यक है। क्या आप जानते हैं कि हमें यह बहुमूल्य संसाधन कहाँ से प्राप्त हो रहा है? हां, ताजा जल हमें मूल रूप से वर्षा तथा पिघलने वाली बर्फ से प्राप्त होता है। जल पृथ्वी की सतह के साथ–साथ भूमिगत रूप में तथा वायुमंडल में भी निरंतर गतिमान रहता है। इस प्रक्रिया को जल चक्र के अध्ययन के माध्यम से समझा जा सकता है, जिसे आपने भौतिक भूगोल (बीजीजीसीटी 131) के पाठ्यक्रम में सीखा है। हम तीनों रूपों में जल की पहचान कर सकते हैं जिसमें ठोस, तरल और गैसीय रूप शामिल हैं। हालांकि, पृथ्वी पर मनुष्यों और अन्य जीवित जीवों के लिए स्वच्छ जल की उपलब्धता एक चिंतनीय मुद्दा है। आइए अब हम जल संसाधनों के प्रकार और उनकी महत्वपूर्ण विशेषताओं का अध्ययन करें।

7.2.1 जल संसाधन के प्रकार

अब आप मुख्य रूप से दो प्रकार के जल संसाधन को जानेंगे, अर्थात् सतही और भूजल संसाधन। हालांकि, वायुमंडलीय जल भी जल चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

1) सतही जल संसाधन

सतही जल से तात्पर्य उन जल निकायों से है जो पृथ्वी की सतह पर नदियों, नालों, झीलों, समुद्रों और महासागरों आदि के रूप में पाए जाते हैं। इनमें से समुद्र एवं महासागरों का जल अत्यधिक खारा होता है जबकि अन्य ताजे जल के स्रोत हैं। महासागर पृथ्वी की सतह तथा वायुमंडल में जल की गति के माध्यम से माध्यम से नियमित करते हैं। सतही जल के प्रवाह के अध्ययन के द्वारा हमें अपरदन, अवसादन एवं बाढ़ आदि की पहचान करने में मदद मिलती है; इसकी समझ को विकसित करके हम चरम स्थितियों में मानव जीवन और संपत्ति की रक्षा कर सकते हैं। स्ट्रीम गेज तथा उपग्रह चित्रों आदि का उपयोग करके सतही जल प्रवाह, अवसादन और जल की गुणवत्ता की प्रभावी ढंग से निगरानी की जा सकती है।

सतही जल संसाधनों को आगे चलकर दो मुख्य प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे कि अंतर्देशीय जल संसाधन और समुद्री जल संसाधन।

a) अंतर्देशीय जल संसाधनः नदियाँ, धाराएँ, नहरें, झीलें, तालाब, जलाशय, खाड़ियाँ, आर्द्रभूमि, दलदल और अन्य जल निकाय इस वर्ग में आते हैं। वर्ष भर उपलब्ध सतही जल को बारहमासी जल निकाय कहा जाता है, जबकि वर्ष के केवल एक भाग के लिए

बने रहने वाले जल को गैर–बारहमासी या अल्पकालिक जल निकायों के रूप में जाना जाता है। ये जल संसाधन सीधे मानव जीवन और जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करते हैं। ये घरेलू जल आपूर्ति, कृषि गतिविधियों, औद्योगिक ऊर्जा, जलविद्युत, भोजन, नौकायन एवं पर्यटन आदि सहित विभिन्न प्रकारों से सेवाएं प्रदान करते हैं।

b) महासागरीय जल संसाधनः आप जानते हैं कि महासागर पृथ्वी की सतह के लगभग 71% भाग पर स्थित हैं। महासागर जल के विशाल पिंड हैं जो कि आपस में जुड़े हुए हैं। प्रशांत, अटलांटिक, आर्कटिक और हिंद महासागर के साथ अन्य समुद्री क्षेत्र मानव की आर्थिक गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये वर्षा और तापमान के नियंत्रण के लिए आवश्यक आर्द्रता की आपूर्ति के मुख्य स्रोत माने जाते हैं, इस प्रकार ये जलवायु को प्रभावित करते हैं। महासागर विभिन्न प्रकार के खनिज एवं रासायनिक उत्पाद, मछलियाँ तथा अन्य खाद्य पदार्थों की आपूर्ति करते हैं। ये जल संसाधन जल आधारित खेलों एवं नौका मनोरंजन के अवसर प्रदान करते हैं तथा नौकायन आदि के माध्यम से आर्थिक गतिविधियों में योगदान करते हैं।

2) भूजल संसाधन

सतही जल का वह भाग जो भूमि द्वारा अवशोषित होकर गहराई में जाकर इकट्ठा हो जाता है, उसे भूजल कहा जाता है। भूजल पुनर्भरण में वर्षा का प्रमुख योगदान है। यह भूमिगत जल भूजल जलभृतों और झरनों का पुनर्भरण करने के साथ पौधों की वृद्धि में सहायक होता है। इसका उपयोग पेयजल, घरेलू कार्यों, सिंचाई एवं अन्य कृषि उपयोगों के साथ औद्योगिक गतिविधियों में एक स्रोत के रूप में किया जाता है। वर्षा जल का लगभग एक तिहाई भाग अपवाह के रूप में नदियों, झीलों आदि में एकत्र हो जाता है। भूजल और सतही जल दोनों एक दूसरे पर निर्भर करते हैं, क्योंकि सतही जल की प्राप्ति झीलों एवं झरनों से होती है।

7.2.2 भूजल संसाधन की विशेषताएं

आपको जल संसाधनों के प्रकारों से परिचित कराया गया है, जैसे सतही जल और भूजल। अब आप भूजल संसाधन की विशेषताओं को जानेंगे। भारत में भूजल विभिन्न भूगर्भिक संरचनाओं में पाया जाता है। आपको देश की इन भूगर्भिक संरचनाओं के संदर्भ में जानना होगा। मुख्य रूप से भूजल दो प्रकार की चट्टानी संरचनाओं जैसे कि मुलायम चट्टानी संरचनाओं/छिद्रित चट्टानी संरचनाओं तथा कठोर चट्टानी संरचनाओं/संहत चट्टानी संरचनाओं द्वारा प्राप्त होता है। इन चट्टानी संरचनाओं का संक्षेप में वर्णन इस प्रकार है।

1) मुलायम चट्टानी संरचना

मुलायम चट्टानी संरचनाओं को **छिद्रित चट्टानी संरचनाएं** भी कहा जाता है। इन संरचनाओं को गैर–संहत संरचनाओं और अर्ध–संहत संरचनाओं में विभाजित किया जा सकता है। नए जलोढ़, पुराने जलोढ़ और तटीय जलोढ़ से युक्त तलछट को असंगठित संरचनाओं के तहत वर्गीकृत किया जाता है तथा इनका निर्माण मुख्य रूप से मृदा, रेत, बजरी एवं बोल्डर, लोहमय शैल, कंकर, आदि से होता है। इन सामग्रियों के मिश्रण संभावित भूजल जलाशयों के रूप में कार्य करते हैं। आप सिंधु–गंगा–ब्रह्मपुत्र जलोढ़ (आईजीबीए) क्षेत्र, भाबर और तराई पट्टी, तटीय जलोढ़ क्षेत्र, गुजरात जलोढ़ मैदान, गंगा डेल्टा, अन्तर्पर्वतीय घाटियों और वायूढ़ रेत क्षेत्र आदि में गैर–संहत संरचनाएं प्राप्त कर

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

सकते हैं। उदाहरण के लिए, आईजीबीए क्षेत्र जम्मू (पश्चिमी सीमा) और असम (पूर्वी सीमा) के मध्य विस्तृत है, इस क्षेत्र में सतह से लगभग 600 मीटर नीचे व्यापक मात्रा में ताजे भूजल का भंडारण ज्ञात किया गया है। यह भी दर्ज किया गया है कि जलोढ़ की मोटाई कोलकाता के डेल्टाई मृदा क्षेत्र में 200 मीटर और बिहार के मध्य भाग में 1830 मीटर है।

दूसरी ओर, अर्ध–संहत संरचनाएं मुख्य रूप से शेल चट्टान, बलुआ पत्थर और चूना पत्थर द्वारा निर्मित होती हैं; गोंडवाना और तृतीयक संरचनाओं से संबंधित तलछटी जमाव भी इसी वर्ग में शामिल हैं। इन संरचनाओं में भूजल संसाधन हेतु धारण क्षमता मध्यम प्रकार की होती है। राजस्थान में लाठी और नागौर बलुआ पत्थर तथा त्रिपुरा में टीपम बलुआ पत्थर इस प्रकार की संरचनाओं के प्रमुख उदाहरण हैं।

2) कठोर चट्टानी संरचना

कठोर चट्टान की संरचनाएं संहत संरचनाएं होती हैं जिनमें जल तो उपलब्ध होता है किंतु, बहुत गहरे स्तर पर नहीं। इन चट्टानों में जल की उपलब्धता स्थानीय शैल संरचना और मूल चट्टान के जोड़ों तथा दरारों जैसी संरचनाओं पर निर्भर करती है। अपक्षय और भूगर्भीय संरचनाएं द्वितीयक सरंध्रता का निर्माण करती हैं, जो भूजल भंडार को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। कठोर चट्टानों में संरचनात्मक दरारों तथा कमजोर क्षेत्रों की पहचान करके जल प्राप्त करना आसान हो जाता है। संहत संरचनाओं को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

i. **आग्नेय और कायान्तरित चट्टानी संरचनाः** इनमें ग्रेनाइट, नीस, चार्नोकाइट्स, खोंडालाइट्स, क्वार्टजाइट्स, स्किस्ट और संबंधित फाइटाइट्स, स्लेट्स आदि शामिल हैं। कठोर क्रिस्टलीय और मेटा–तलछट चट्टानों के नीचे 100 मीटर की गहराई में भूजल प्राप्त होता है। हालांकि कभी–कभी जल लगभग 200 मीटर की गहराई पर उपलब्ध होता है।

ii. **ज्वालामुखीय चट्टानी संरचनाः** भारत में, बेसाल्ट सामान्य प्रकार की ज्वालामुखी चट्टानें हैं। उदाहरण के लिए, दक्कन ट्रैप, जिसमें भूजल की उपलब्धता प्राथमिक और द्वितीयक विशेषताओं पर निर्भर करती है। दक्कन ट्रैप बेसाल्ट महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में व्यापक रूप में पाई जाती हैं।

iii. **कार्बोनेट चट्टानी संरचनाः** इनमें चूना पत्थर, संगमरमर और डोलोमाइट शामिल हैं जो भूजल की कम मात्रा को धारित करते हैं। यही कारण है कि इस प्रकार की चट्टाने बृहद भूजल जलाशयों में शामिल नहीं की जाती हैं। मध्य प्रदेश में विंध्य चूना पत्थर (राजस्थान), पाखल चूना पत्थर (तेलंगाना) और मध्य प्रदेश के चूना पत्थर के कुछ क्षेत्रों में इस प्रकार के जलभृत देखने को मिलते हैं। हिमालयी क्षेत्र में, चूना पत्थर की संरचनाएं अनेक झरनों का स्रोत हैं।

बोध प्रश्न 1

a) बारहमासी नदी क्या है?

b) कठोर चट्टानी क्षेत्रों में भूजल उपलब्धता के प्रमुख स्रोत कौन से हैं?

7.2.3 जल संसाधनों का वितरण

यूनेस्को के आकलन के अनुसार लगभग 1.4 बिलियन क्यूबिक किलोमीटर (बीसीएम) जल पृथ्वी ग्रह पर उपलब्ध है। इसमें से केवल 35 मिलियन क्यूबिक किलोमीटर (कुल मात्रा का 2.5%) ताजे पानी के रूप में पाया जाता है, जिसका 68.9% भाग हिम तथा स्थाई हिम (पहाड़ों, अंटार्कटिक और आर्कटिक क्षेत्रों में विस्तृत) के रूप में तथा 29.9% भाग भूजल (2000 मीटर की गहराई तक) के रूप में उपलब्ध है। शेष जल का 0.3% भाग झीलों और नदियों में तथा 0.9% भाग मृदा की नमी दलदली क्षेत्रों एवं पर्माफ्रॉस्ट वाले क्षेत्रों में उपलब्ध है। अब आप भारत में सतही जल और भूजल के वितरण का अध्ययन करेंगे।

1. सतही जल संसाधनों का वितरण

यदि आप भारत के जल संसाधनों के संदर्भ में देखें, तो वर्षा, विशेषकर मानसूनी वर्षा, ताजे जल का मुख्य स्रोत है। राष्ट्रीय एकीकृत जल संसाधन विकास आयोग (NCIWRD) की रिपोर्ट के अनुसार, देश में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 4000 BCM प्राप्त होती है, जिसमें से लगभग 3000 BCM वर्षा मानसून के महीनों में जून से सितंबर तक होती है। कुल वार्षिक उपयोग योग्य जल संसाधन का आकलन 1123 बीसीएम के रूप में किया गया है, जिसमें से सतही और भूजल का योगदान क्रमशः 690 बीसीएम और 433 बीसीएम है। तालिका 7.1 भारत में नदियों के संभावित जल स्रोतों को प्रदर्शित करती है। हम तालिका से देख सकते हैं कि औसत वार्षिक जल संसाधन क्षमता 1869 बीसीएम है। चूंकि, भारत की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर करती है, यह क्षेत्र लगभग 80% जल संसाधनों का उपयोग करता है, इसके बाद घरेलू क्षेत्र (6%) तथा औद्योगिक क्षेत्र (5%) का स्थान आता है।

भारत में, **अंतर्देशीय जल स्रोतों** को नदियों, नहरों, जलाशयों, टैंकों, तालाबों, बाढ़ क्षेत्रों, मैदानी झीलों, परित्यक्त जल निकायों तथा खारे पानी के क्षेत्रों रूप में वर्गीकृत किया गया है। आप तालिका 7.2 में अंतर्देशीय जल संसाधनों का वितरण देख सकते हैं। तालिका से देखा जा सकता है कि नदियों और नहरों को छोड़कर कुल जल निकाय लगभग 7.4 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर पाए जाते हैं जिनमें से "जलाशय" अधिकतम 2.9 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र को आच्छादित करते हैं।

आप नीचे दी गई तालिका 7.1 का अध्ययन करके भारत की सतही जल क्षमता को भी जान सकते हैं। यह तालिका भारत में नदी घाटियों के क्षेत्रफल के वितरण का वर्णन करती है। एक नदी बेसिन भूमि का वह क्षेत्र होता है जिस पर एक नदी और उसकी सभी सहायक नदियों द्वारा सतही जल प्रवाहित किया जाता है। नदी और उसके बेसिन का जल अंततः समुद्रों अथवा झीलों में प्रवाहित हो जाता है। देश में बीस महत्वपूर्ण नदी बेसिन/नदी घाटियों के समूह हैं। इनमें से बारह प्रमुख नदी बेसिन हैं जबकि आठ मिश्रित नदी बेसिन के उदाहरण हैं। बारह प्रमुख नदी बेसिन हैं (1) सिंधु, (2) गंगा–ब्रह्मपुत्र–मेघना, (3) गोदावरी, (4) कृष्णा, (5) कावेरी, (6) महानदी, (7) पेन्नार, (8) ब्राह्मणी– बैतरणी, (9) साबरमती, (10) माही, (11) नर्मदा और (12) तापी। ये बेसिन कुल क्षेत्रफल के लगभग 43% भाग पर विस्तृत हैं। प्रमुख नदियाँ और उनकी सहायक नदियाँ बारहमासी और मौसमी प्रवाह के रूप में लगभग 277 मिलियन हेक्टेयर जल ग्रहण क्षेत्र को आच्छादित करती हैं। अब आप भारत की नदी प्रणालियों को समझ गए

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

होंगे, जो देश की जल संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक विशाल सतही जल क्षमता का निर्माण करती हैं।

भारत में नदी प्रणालियाँः भारत में, नदी प्रणालियों को मुख्य रूप में चार प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है, (i) हिमालयी नदियाँ, (ii) दक्कन नदियाँ, (iii) तटीय नदियाँ और (iv) अंतर्देशीय जल निकासी बेसिन की नदियाँ।

हिमालय की नदियाँ अधिकांशतः बारहमासी नदियाँ हैं जो हिम तथा हिमनदों के पिघलने से निर्मित हुई हैं। इन नदियों में उच्च सतही जल क्षमता विद्यमान है क्योंकि इन्हें मानसूनी वर्षा से व्यापक मात्रा में जल प्राप्त होता है। महत्वपूर्ण हिमालयी नदी प्रणालियों में सिंधु तथा गंगा–ब्रह्मपुत्र–मेघना प्रणाली शामिल हैं। सिंधु नदी तंत्र 3,21,289 वर्ग किमी क्षेत्र में विस्तृत है जबकि गंगा–ब्रह्मपुत्र–मेघना प्रणाली लगभग 1,097,588 वर्ग किमी को आच्छादित करती है। सिंधु नदी तिब्बत में मानसरोवर के पास से निकलती है, भारत और पाकिस्तान से होकर प्रवाहित होती है तथा कराची के पास अरब सागर में मिल जाती है। सिंधु की प्रमुख सहायक नदियाँ सतलुज, ब्यास, रावी, चिनाब और झेलम हैं। गंगा नदी उत्तराखंड राज्य में गंगोत्री के पास से निकलती है और भागीरथी और अलकनंदा उप–घाटियों का जल लेकर आगे प्रवाहित होती है। यमुना, रामगंगा, घाघरा, गंडक, कोसी, महानंदा और सोन गंगा नदी की महत्वपूर्ण सहायक नदियाँ हैं। चंबल और बेतवा महत्वपूर्ण उप–सहायक नदियाँ हैं जो गंगा में प्रवाहित होने से पूर्व यमुना की सहायक नदियों के रूप में प्रवाहित होती हैं।

तालिका 7.1: भारत में नदी घाटियों की सतही जल क्षमता।

क्र. सं.	नदी बेसिन का नाम	नदी की उत्पत्ति	लंबाई (किमी)	कैचमेंट (वर्ग किमी)	एएडब्ल्यू आरपी (बीसीएम)	यूएसडब्ल्यूआर (बीसीएम)
1.	सिंधु (सीमा तक)	मानसरोवर (तिब्बत)	1114 (2880)	321289 (1165500)	73.31	46.0
2.	गंगा	गंगोत्री (उत्तरांचल)	2525	861452 (1186000)	525.02	250.0
	ब्रह्मपुत्र	कैलाश श्रेणी (तिब्बत)	916 (2900)	194413 (580000)	537.24	24.0
	मेघना में प्रवाहित होने वाली बराक और अन्य नदिया	मणिपुर पहाड़ियां (मणिपुर)	-	41723	48.36	-
3.	गोदावरी	नासिक (महाराष्ट्र)	1465	312812	110.54	76.3
4.	कृष्णा	महाबलेश्वर (महाराष्ट्र)	1401	258948	78.12	58.0

5.	कावेरी	कूर्ग (कर्नाटक)	800	81155	21.36	19.0
6.	सुवर्णरेखा	नागरी (रांची, झारखंड)	559	29196	12.37	6.8
7.	ब्राह्मणी और बैतरनी	रांची (झारखंड)	799	39033	28.48	18.3
8.	महानदी	नज़री टाउन (मध्य प्रदेश)	851	141589	66.88	50.0
9.	पेन्नार	कोलार (कर्नाटक)	597	55213	6.32	6.9
10.	माही	धार (मध्य प्रदेश)	583	34842	11.02	3.1
11.	साबरमती	अरावली पहाड़ियां (राजस्थान)	371	21674	3.81	1.9
12.	नर्मदा	अमरकंटक (मध्य प्रदेश)	1312	98796	45.64	34.5
13.	तापी	बैतूल (मध्य प्रदेश)	724	65145	14.88	14.5
14.	तापी से तद्री तक पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ			55940	87.41	11.9
15.	तदरी से कन्याकुमारी तक पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ			56177	113.53	24.3
16.	महानदी और पेन्नार के बीच पूर्व की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ			86643	22.52	13.1
17.	पेन्नार और कन्याकुमारी के बीच पूर्व की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ			100139	16.46	16.5
18.	लूणी सहित कच्छ और सौराष्ट्र की पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली नदियाँ			321851	15.10	15.0
19.	राजस्थान में अंतर्देशीय जल निकासी का क्षेत्र			नगण्य		
20.	म्यांमार तथा बांग्लादेश में प्रवाहित छोटी नदियां			36302	31.00	-
कुल					1869.37	690.1

(Note: USWR: Utilizable Surface Water Resources (BCM); AAWRP: Average Annual Water Resources Potential (BCM) and Figures within bracket indicate the total river basin in India and neighbouring countries)
(Source: Ministry of Water Resource, CWC)

तालिका 7.2: भारत के अंतर्देशीय जल संसाधनों का वितरण।

नदियाँ और नहरें	1,95,210 (किमी)
जलाशय	2.91 (मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र)
टैंक और तालाब	2.41 (मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र)
बाढ़कृत मैदानी झीलें और परित्यक्त क्षेत्र	0.8 (मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र)
खारा जल	1.24 (मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र)

ब्रह्मपुत्र नदी तिब्बत से निकलती है और भारत के अरुणाचल प्रदेश और असम राज्यों से होकर प्रवाहित होती है। आगे चलकर बांग्लादेश में प्रवाहित होने के बाद यह नदी बंगाल की खाड़ी में मिल जाती है। ब्रह्मपुत्र नदी को तिब्बत में सांगपो और अरुणाचल प्रदेश में दिहांग कहा जाता है। देबांग, लोहित, सुबनसिरी, जिया भरेली, धनसिरी, पुथिमारी, पगलाडिया और मानस भारत में ब्रह्मपुत्र की प्रमुख सहायक नदियाँ हैं। तीस्ता नदी बांग्लादेश में प्रवाहित होते हुए ब्रह्मपुत्र में मिल जाती है। इसी प्रकार, बांग्लादेश में पद्मा नदी ब्रह्मपुत्र से मिलती है और यह बंगाल की खाड़ी तक पद्मा नदी अथवा गंगा के रूप में प्रवाहित होती है।

बराक नदी मेघना नदी प्रणाली की मुख्य धारा है। यह मणिपुर की पहाड़ियों से निकलती है। इस नदी की प्रमुख सहायक नदियाँ मक्कू, ट्रांग, तुइवई, जिरी, सोनाई, रुक्नी, कटखल, धलेश्वरी, लंगाचिनी, मडुवा और जैतंगा हैं। मेघना चांदपुर जिले में अपनी प्रमुख सहायक नदी पद्मा से मिलती है। मेघना की अन्य प्रमुख सहायक नदियों में ढालेश्वरी, गोमती और फेनी शामिल हैं। मेघना बांग्लादेश के भोला जिले में बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

दक्कन की नदियाँ मूल रूप से वर्षा पर निर्भर करती हैं, इसलिए उन्हें वर्षा आधारित और गैर–बारहमासी नदियाँ कहा जाता है। गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, महानदी आदि नदी प्रणालियां पूर्व दिशा में बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। नर्मदा और ताप्ती पश्चिम की ओर अरब सागर में प्रवाहित होने वाली प्रमुख नदियाँ हैं। दक्षिण के तटीय क्षेत्रों में अनेक छोटी नदियां धाराओं के रूप में प्रवाहित होती हैं। इनमें से अनेक नदियां गैर–बारहमासी हैं तथा कम दूरी तय करके समुद्र में मिल जाती हैं। इन नदियों का जलग्रहण क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित है।

पश्चिमी राजस्थान के अंतर्देशीय जल प्रणाली वाली नदियों की संख्या अत्यंत कम है तथा ये नदियाँ अल्पकालिक चरित्र की हैं और इनमें वर्ष के एक निश्चित समय में ही जल उपलब्ध होता है। अधिकांश मरुस्थलीय नदियां खारे पानी वाली झीलों में गिरती हैं तथा ये समुद्र तक नहीं पहुंच पाती हैं। सरस्वती, लूनी, माचू, बनास, रूपेन और घग्गर रेगिस्तानी नदियों के कुछ उदाहरण हैं।

2. भूजल संसाधनों का वितरण

भूजल संसाधन ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में पेयजल की आपूर्ति में प्रमुख भूमिका निभाता है। देश के संहत/अर्ध–संहत तथा गैर–संहत संरचना वाले क्षेत्रों की भूजल क्षमता को चित्र 7.1 में प्रदर्शित किया गया है।

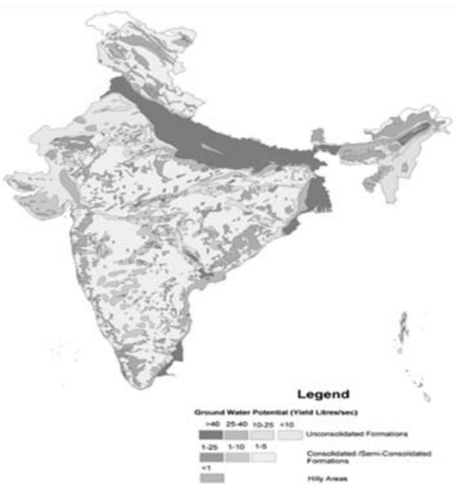

चित्र 7.1: भारत का भूजल संभावित मानचित्र।

(**स्रोत:** Groundwater Year Book-India 2019-2020, CGWB, Govt. of India, http://cgwb.gov.in)

भूजल के माध्यम से भारतीय जनसंख्या की घरेलू आवश्यकताओं का लगभग 80% भाग पूरा किया जाता है। भूजल की प्रकृति मुख्य रूप से वर्षा पर निर्भर करती है और भूजल पुनर्भरण का अधिकांश हिस्सा (लगभग 73%) दक्षिण–पश्चिम मानसून के मौसम द्वारा प्राप्त होता है। भूजल की वार्षिक पुनःपूर्ति 431.2 बिलियन क्यूबिक मीटर (बीसीएम) होने का अनुमान है। प्राकृतिक निर्वहन के लिए 39.2 बीसीएम को अलग रखते हुए, पूरे देश के लिए शुद्ध वार्षिक भूजल संसाधन उपलब्धता 392.7 बीसीएम है। देश में वर्तमान शुद्ध वार्षिक भूजल निकासी 248.7 बीसीएम अनुमानित है। इसमें से लगभग 90% भाग का सिंचाई कार्यों में उपयोग किया जाता है और शेष जल संसाधन का उपयोग घरेलू और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए किया जाता है। तालिका 7.3 भारत के विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों (यूटी) में उपलब्ध वार्षिक पुनःपूर्ति योग्य भूजल संसाधनों को प्रदर्शित करती है। भविष्य के उपयोग के लिए एक वर्ष में उच्चतम शुद्ध भूजल उपलब्धता (बीसीएम/वर्ष) असम (21.4), उत्तर प्रदेश (20.4), बिहार (15.8), मध्य प्रदेश (15.8) राज्यों में दर्ज की गई है, इसके बाद पश्चिम बंगाल (14.2), महाराष्ट्र (12.9), और आंध्र प्रदेश (12.3) राज्य हैं। दूसरी ओर दिल्ली (0.02), गोवा (0.1), हिमाचल प्रदेश (0.2), मिजोरम (0.2), मणिपुर (0.3), हरियाणा (0.9), राजस्थान (0.9), और पंजाब (1.1) में यह उपलब्धता सबसे कम है।

संपूर्ण देश के लिए भूजल निकासी की औसत स्थिति लगभग 63% है। वार्षिक भूजल खपत पंजाब (165.8%), राजस्थान (139.9%), हरियाणा (136.9%), और दिल्ली (119. 6%) राज्यों में अत्यधिक है, जो कि राष्ट्रीय औसत से भी अधिक है। चंडीगढ़, हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, पुडुचेरी, उत्तर प्रदेश और कर्नाटक राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में भूजल निष्कासन की स्थित 70–100% के मध्य दर्ज की गई है। महत्वपूर्ण बात यह है कि, सभी उत्तर–पूर्वी राज्य 10% की सीमा के अंदर बेहतर स्थिति का प्रदर्शन कर रहे हैं।

केंद्रीय भूजल बोर्ड (सीजीडब्ल्यूबी) एक सरकारी संगठन है जो देश में भूजल संसाधनों के प्रबंधन, अन्वेषण, निगरानी, मूल्यांकन, वृद्धि और विनियमन के लिए वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है। सीजीडब्ल्यूबी ने विकासखंडों/मंडलों/तालुकाओं/तहसीलों आदि के संदर्भ में भारत में भूजल के उपयोग एवं निष्कर्षण की स्थिति का आकलन किया था

(तालिका 7.4)। आगे चलकर इन इकाइयों को सुरक्षित, अर्ध–संकटपूर्ण और अति–शोषित भूजल संसाधनों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। मूल्यांकन की गई इकाइयों की कुल संख्या (6881) में से लगभग 17% को 'अति–शोषित' के रूप में वर्गीकृत किया गया है, जो यह प्रदर्शित करता है कि भूजल निष्कर्षण कुल वार्षिक भूजल पुनर्भरण से अधिक है। कुल इकाइयों में से लगभग 5% इकाइयां 'संकटपूर्ण', 14% 'अर्ध–संकटपूर्ण' और 63% 'सुरक्षित' पाई गई हैं। शेष 1% (100 मूल्यांकन इकाइयां) को 'लवणीय' इकाइयों के रूप में वर्गीकृत की गई हैं। लवणीय इकाइयों के जलभृतों में भूजल का एक बड़ा हिस्सा खारा है। पंजाब में सर्वाधिक अति–शोषण वाली इकाइयां हैं, इसके बाद दिल्ली, राजस्थान और हरियाणा राज्यों के नाम हैं। केंद्र शासित प्रदेश पुडुचेरी और आंध्र प्रदेश और गुजरात राज्यों में लवणता का प्रभाव देखने को मिल रहा है (चित्र 7.2)।

राजीव गांधी राष्ट्रीय भूजल प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थान (RGNGWTRI) नामक एक अन्य सरकारी संगठन, जो छत्तीसगढ़ राज्य के रायपुर में स्थित है, भूजल बोर्डों के हितधारकों और राज्य सरकार के लिए विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। संगठन, शैक्षणिक संस्थान और गैर–सरकारी संगठन इत्यादि संबंधी अधिक जानकारी के लिए आप वेबसाइट http://ngwtri.org/ पर भी जा सकते हैं।

तालिका 7.3: भारत में राज्यवार भूजल संसाधन, 2017 (बीसीएम में)।

क्र. सं.	राज्य / केंद्र शासित प्रदेश	AGWR	ND	GWR	वर्तमान वार्षिक भूजल निष्कासन				NGWA	GWE (%)
					सिंचाई	औद्योगिक	घरेलू	कुल		
1	आंध्र प्रदेश	21.2	1.1	20.2	7.9	0.1	0.9	8.9	12.3	44.2
2	अरुणाचल प्रदेश	3.0	0.4	2.7	0.0	0.0	0.0	0.0	2.6	0.3
3	असम	28.7	4.4	24.3	2.0	0.1	0.7	2.7	21.4	11.3
4	बिहार	31.4	2.4	29.0	10.8	0.7	1.8	13.2	15.8	45.8
5	छत्तीसगढ़	11.6	1.0	10.6	4.0	0.1	0.7	4.7	5.8	44.4
6	दिल्ली	0.3	0.0	0.3	0.1	0.0	0.2	0.4	0.0	119.6
7	गोवा	0.3	0.1	0.2	0.0	*	0.0	0.1	0.1	33.5
8	गुजरात	22.4	1.1	21.3	12.8	0.1	0.6	13.5	8.0	63.9
9	हरियाणा	10.1	1.0	9.1	11.5	0.3	0.6	12.5	0.9	136.9
10	हिमाचल प्रदेश	0.5	0.1	0.5	0.2	0.0	0.2	0.4	0.2	86.4
11	जम्मू और कश्मीर	2.9	0.3	2.6	0.2	0.1	0.5	0.8	1.8	29.5
12	झारखंड	6.2	0.5	5.7	0.8	0.2	0.6	1.6	4.1	27.7
13	कर्नाटक	16.8	2.1	14.8	9.4	*	1.0	10.3	5.4	69.9
14	केरल	5.8	0.6	5.2	1.2	0.0	1.4	2.7	2.4	51.3
15	मध्य प्रदेश	36.4	2.0	34.5	17.4	0.2	1.2	18.9	15.8	54.8
16	महाराष्ट्र	31.6	1.7	29.9	15.1	0.0	1.2	16.3	12.9	54.6
17	मणिपुर	0.4	0.0	0.4	0.0	0.0	0.0	0.0	0.3	1.4
18	मेघालय	1.8	0.2	1.6	0.0	0.0	0.0	0.0	1.6	2.3

19	मिजोरम	0.2	0.0	0.2	0.0	0.0	0.0	0.0	0.2	3.8
20	नागालैंड	2.2	0.2	2.0	0.0	0.0	0.0	0.0	2.0	1.0
21	उड़ीसा	16.7	1.2	15.6	5.3	0.1	1.2	6.6	8.9	42.2
22	पंजाब	23.9	2.4	21.6	34.6	0.2	1.0	35.8	1.1	165.8
23	राजस्थान	13.2	1.2	12.0	14.9	0.0	1.9	16.8	0.9	139.9
24	सिक्किम	5.6	4.1	1.5	0.0	0.0	0.0	0.0	1.5	0.1
25	तमिलनाडु	20.2	2.0	18.2	13.1	0.0	1.7	14.7	5.7	80.9
26	तेलंगाना	13.6	1.3	12.4	7.1	*	1.0	8.1	4.3	65.5
27	त्रिपुरा	1.5	0.3	1.2	0.0	0.0	0.1	0.1	1.1	7.9
28	उत्तर प्रदेश	69.9	4.6	65.3	40.9	*	5.0	45.8	20.4	70.2
29	उत्तराखंड	3.0	0.2	2.9	1.3	0.1	0.2	1.6	1.3	56.8
30	पश्चिम बंगाल **	29.3	2.8	26.6	10.8	*	1.0	11.8	14.2	44.6
कुल राज्य		431.2	39.1	392.0	221.3	2.4	24.8	248.5	172.8	63.4
1	अंडमान एवं निकोबार	0.4	0.0	0.3	0.0	0.0	0.0	0.0	0.3	2.7
2	चंडीगढ़	0.0	0.0	0.0	0.0	*	0.0	0.0	0.0	89.0
3	दादरा एवं नगर हवेली	0.1	0.0	0.1	0.0	*	0.0	0.0	0.0	31.3
4	दमन एवं दीव	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	61.4
5	लक्ष्यद्वीप	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	0.0	66.0
6	पुडुचेरी	0.2	0.0	0.2	0.1	*	0.0	0.2	0.1	74.3
कुल केंद्र शासित प्रदेश		0.7	0.1	0.7	0.1	0.0	0.1	0.2	0.4	34.5
कुल योग		431.9	39.2	392.7	221.5	2.4	24.9	248.7	173.3	63.3

नोटः ’गोवा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, चंडीगढ़, दादरा और नगर हवेली और पुडुचेरी में औद्योगिक और घरेलू मसौदे का अलग–अलग अनुमान नहीं लगाया गया है।

** पश्चिम बंगाल–2013 के आंकड़ों पर विचार किया गया।

AGWR: वार्षिक भूजल पुनर्भरण; ND: वार्षिक प्राकृतिक निर्वहन; GWR: वार्षिक निकालने योग्य भूजल संसाधन; NGWA: भविष्य में उपयोग के लिए शुद्ध भूजल उपलब्धता; GWE: भूजल निष्कर्षण की स्थिति

(स्रोतः Groundwater Year Book-India 2019-2020, CGWB, Govt. of India, http://cgwb.gov.in)

तालिका 7.4. भारत के विभिन्न राज्यों में भूजल महत्वपूर्ण क्षेत्रों के आकलन के लिए मूल्यांकन की गई इकाइयों की संख्या और उनका वर्गीकरण।

राज्य / केंद्र शासित प्रदेश	कुल इकाइयां	सुरक्षित		अर्ध–संकटपूर्ण		संकट–पूर्ण		अति–शोषित		लवणीय	
		No.	%	No.	%	No.	%	No.	%	No.	%
आंध्र प्रदेश	670	501	75	60	9	24	4	45	7	40	6
अरुणाचल प्रदेश	11	11	100	0	0	0	0	0	0	0	0
असम	28	28	100	0	0	0	0	0	0	0	0
बिहार	534	432	81	72	13	18	3	12	2	0	0
छत्तीसगढ़	146	122	84	22	15	2	1	0	0	0	0
दिल्ली	34	3	9	7	21	2	1	0	0	0	0
गोवा	12	12	100	0	0	0	0	0	0	0	0
गुजरात	248	194	78	11	4	5	2	25	19	13	5
हरियाणा	128	26	20	21	16	3	2	78	61	0	0
हिमाचल प्रदेश	8	3	28	1	13	0	0	4	50	0	0
जम्मू एवं कश्मीर	22	22	100	0	0	0	0	0	0	0	0
झारखंड	260	245	94	10	4	2	1	3	1	0	0
कर्नाटक	176	97	55	26	15	8	5	45	26	0	0
केरल	152	119	78	30	20	2	1	1	1	0	0
मध्य प्रदेश	313	240	77	44	14	7	2	22	7	0	0
महाराष्ट्र	353	271	77	61	17	9	3	11	3	1	0
मणिपुर	9	9	100	0	0	0	0	0	0	0	0
मेघालय	11	11	100	0	0	0	0	0	0	0	0
मिजोरम	26	26	100	0	0	0	0	0	0	0	0
नागालैंड	11	11	100	0	0	0	0	0	0	0	0
ओडिशा	314	303	96	5	2	0	0	0	0	6	2
पंजाब	138	22	16	5	4	2	1	109	79	0	0
राजस्थान	295	45	15	29	10	33	11	185	63	3	1
सिक्किम	4	4	100	0	0	0	0	0	0	0	0
तमिलनाडु	1166	427	37	163	14	79	7	462	40	35	0
तेलंगाना	584	278	48	169	29	67	11	70	12	0	0
त्रिपुरा	59	59	100	0	0	0	0	0	0	0	0
उत्तर प्रदेश *	830	540	65	151	18	48	6	91	11	0	0
उत्तराखंड	18	13	72	5	28	0	0	0	0	0	0
पश्चिम बंगाल **	268	191	71	76	28	1	0	0	0	0	0
कुल राज्य	6828	4265	62	968	14	312	5	1185	17	98	1
अंडमान एवं निकोबार	36	35	97	0	0	0	0	0	0	1	3
चंडीगढ़	1	0	0	1	100	0	0	0	0	0	0
दादरा एवं	1	1	100	0	0	0	0	0	0	0	0

नगर हवेली											
दमन एवं दीव	2	1	50	0	0	1	50	0	0	0	0
लक्षद्वीप	9	6	67	3	33	0	0	0	0	0	0
पुडुचेरी	4	2	50	0	0	0	0	1	25	1	25
कुल केंद्र शासित प्रदेश	53	45	85	4	8	1	2	1	2	2	4
कुल योग	6881	4310	63	972	14	313	5	1186	17	100	1

नोटः विकासखंडः बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, झारखंड, केरल, मध्य प्रदेश, मणिपुर, मिजोरम, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश; तहसीलः एनसीटी दिल्ली
तालुकः गोवा, कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र; मंडलः आंध्र प्रदेश, तेलंगाना;
फ़िरकाः तमिलनाडु; क्षेत्रः पुडुचेरी; द्वीप समूहः लक्षद्वीप, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह
जिला/घाटीः अरुणाचल प्रदेश, असम, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड; केंद्र शासित प्रदेशः चंडीगढ़, दादरा और नगर हवेली, दमन और दीव
*उत्तर प्रदेशः कुल 820 ब्लॉक और शहर हैं
**पश्चिम बंगाल–2013 के आंकड़ों पर विचार किया गया।

(स्रोतःGroundwater Year Book-India 2019-2020, CGWB, Govt. of India, http://cgwb.gov.in)

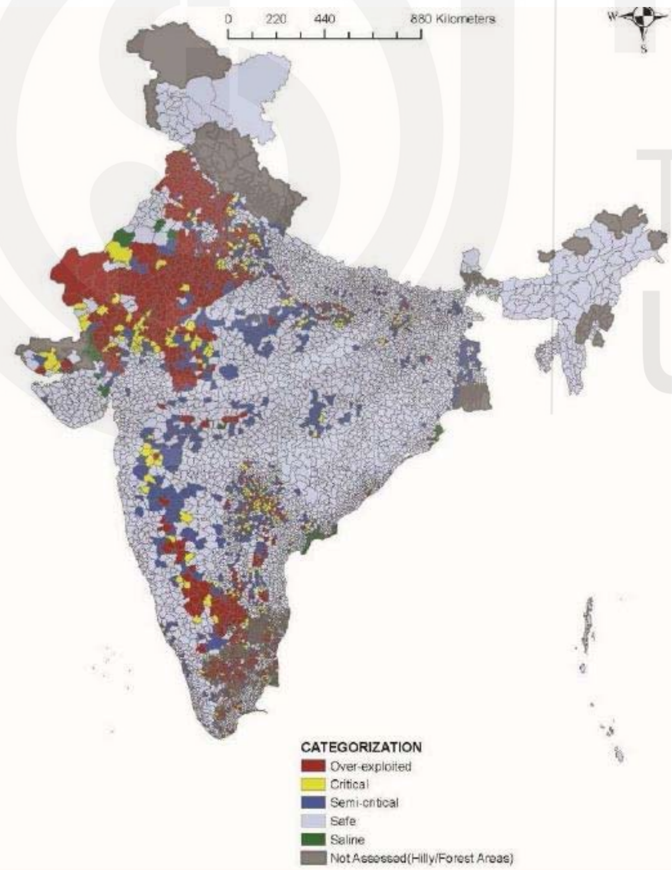

चित्र 7.2: भारत में भूजल की गंभीर स्थिति।

(स्रोतःGroundwater Year Book-India 2019-2020, CGWB, Govt. of India, http://cgwb.gov.in)

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

7.2.4 जल संसाधन का उपयोग

जल संसाधनों की, विशेषकर मानवीय दृष्टिकोण से अनेक उपयोगिताएँ हैं। इस बहुमूल्य संसाधन के कुछ महत्वपूर्ण उपयोगों की व्याख्या नीचे की गई है:

1. **घरेलू जल आपूर्तिः** मनुष्य मुख्य रूप से पीने, खाना पकाने, नहाने और सफाई के लिए जल का उपयोग करता है। हम जल का उपयोग फसलों और पौधों को उगाने तथा पशुधन पालन आदि के लिए भी करते हैं। विश्व भर में अनेक शहर एवं शहरी केंद्र नदियों, भूमिगत जल जलाशयों तथा झीलों आदि से होने वाली जल की आपूर्ति पर निर्भर करते हैं। हालांकि, पृथ्वी पर उपलब्ध इस नवीकरणीय संसाधन का उपयोग सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिए क्योंकि मानवीय गतिविधियों के कारण विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों द्वारा जल प्रदूषण की समस्या में वृद्धि हो रही है।

2. **औद्योगिक उपयोगः** औद्योगिक उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाने वाला अधिकांश जल नदियों और भूमिगत स्रोतों से प्राप्त किया जाता है। संपूर्ण विश्व में, उद्योगों को घरेलू आवश्यकताओं से अधिक मात्रा में जल की आवश्यकता होने के कारण अनेक उद्योगों और संबद्ध निर्माण इकाइयों को नदियों द्वारा जल की आपूर्ति की जा रही है। कुछ उद्योगों, उदाहरण के लिए कपड़ा, लुगदी, पेय पदार्थ, रसायन और फार्मास्यूटिकल्स में एक प्रकार के शीतल जल की आवश्यकता होती है।

3. **सिंचाईः** नहरों, बोरवेलों, नलकूपों, टैंकों / तालाबों, जलाशयों, झीलों अथवा अन्य जल निकायों के जल का उपयोग प्रत्येक स्थान पर फसल उगाने और कृषि गतिविधियों के लिए किया जाता है। बारिश अथवा अन्य स्रोतों से प्राप्त जल की उपलब्धता के आधार पर, चावल, गन्ना, गेहूं, मक्का, दालें, तिलहन आदि जैसी विभिन्न फसलों को किसी भी क्षेत्र में सफलतापूर्वक उगाने और बेहतर उत्पादकता के लिए चुना जाना चाहिए।

4. **ऊर्जा एवं नौकायनः** जल संसाधनों का उपयोग जल–विद्युत के उत्पादन के लिए भी किया जाता है जो कि सबसे स्वच्छ और सस्ते ऊर्जा स्रोतों में से एक है। लोकोमोटिव सहित मशीनों को चलाने के लिए भाप ऊर्जा का उपयोग किया जाता है, साथ ही इसका उपयोग जल विद्युत के उत्पादन में भी किया जाता है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि जल परिवहन प्रणाली भूमि परिवहन की तुलना में सस्ती है। जल परिवहन नहरों, नदियों और झीलों के माध्यम से किया जा सकता है। अधिकांश जल निकायों की लंबाई एवं चौड़ाई अधिक विस्तृत हैं। कुछ नदियाँ अनेक देशों में प्रवाहित होती हैं, उदाहरण के लिए यूरोप में राइन नदी। इसी प्रकार, अनेक झीलें भी अपनी अधिक लंबाई, चौड़ाई तथा गहराई वाली विशेषताओं के लिए जानी जाती हैं तथा विस्तृत क्षेत्रों पर स्थित हैं।

5. **अन्य उपयोगः** मत्स्य पालन आजीविका सुरक्षा का सबसे बड़ा स्रोत है। नदियाँ, नहरें, झीलें, तालाब, टैंक और अन्य जल निकाय विश्व में लोगों और स्थानीय समुदायों के लिए मछली और भोजन के अतिरिक्त स्रोत प्रदान करते हैं। जल निकायों का उपयोग प्रमुख मनोरंजक गतिविधियों जैसे तैराकी, नौका विहार और मनोरंजन आदि के रूप में भी किया जाता है।

आप चित्र 7.3 से विश्व के जल दबाव क्षेत्रों को देखेंगे। मानचित्र से यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि अधिकांश जल तनाव वाले क्षेत्रों के अंतर्गत अधिक आबादी वाले

देश शामिल हैं इनमें एशियाई देशों की संख्या अधिक है। भारत उच्चतम श्रेणी के जल तनाव क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इन क्षेत्रों में यह पाया गया है कि, व्यापक पैमाने पर भूजल दोहन के साथ मानवीय गतिविधियाँ भूजल की गुणवत्ता के साथ—साथ इसकी मात्रा को भी प्रभावित कर सकती हैं, इसलिए भूजल संसाधन का उपयोग तर्कसंगत विधि एवं सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

नोटः बेसलाइन जल दबाव के अंतर्गत कुल जल निकासी और उपलब्ध अक्षय जल आपूर्ति के अनुपात का मापन किया जाता है। जल निकासी के अंतर्गत घरेलू, औद्योगिक, सिंचाई और पशुधन उपभोग और गैर—उपभोग संबंधी उपयोग शामिल रहते हैं। उपलब्ध नवीकरणीय जल आपूर्ति में सतही एवं भूजल आपूर्ति को शामिल किया जाता है तथा इसके अंतर्गत नदियों के ऊपरी जल प्रवाह वाले क्षेत्रों के उपयोगकर्ताओं तथा बड़े बांधों के निचले बेसिन में स्थित क्षेत्रों की जल उपलब्धता पर पड़ने वाले प्रभाव पर विचार किया जाता है। उच्च मूल्य उपयोगकर्ताओं के मध्य अधिक प्रतिस्पर्धा का संकेत देते हैं।

चित्र 7.3ः विश्व के जल संकट वाले क्षेत्र।
(स्रोतः WRI (2019). Attribution 4.0 International (CC BY 4.0)

बोध प्रश्न 2

विभिन्न क्षेत्रों में जल की प्रमुख उपयोगिताओं की सूची बनाइए।

7.3 बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएं

अब तक आपने विभिन्न प्रकार के जल संसाधनों की विशेषताओं का अध्ययन किया है। आपको जल संसाधनों के वितरण और उपयोग के कुछ महत्वपूर्ण आंकड़ों से भी परिचित कराया गया है। इससे आपको जल संसाधनों के महत्व को समझने में मदद मिली। आइए अब हम बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के संदर्भ में अध्ययन करें। भारत में बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनाओं के विकास का मुख्य उद्देश्य क्या है? आरंभिक समय में, देश के विभिन्न भागों में भारी वर्षा होने के कारण सामना की जाने वाली बाढ़ की समस्या से निपटने के लिए अनेक प्रमुख बांधों का निर्माण किया गया था। इसी संदर्भ में, **बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाएं** महत्वपूर्ण एवं आवश्यक मानी गईं क्योंकि ये परियोजनाएं सिंचाई, बिजली उत्पादन, नेविगेशन, मछली पकड़ने, पर्यटन तथा

जलापूर्ति संबंधी अनेक लाभ प्रदान करती हैं। यही कारण है कि इन्हें बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं के रूप में जाना जाता है।

जल के भंडारण के लिए बांधों और जलाशयों का निर्माण कोई नई संकल्पना नहीं है; बल्कि, मनुष्य लंबे समय से इस पद्धति का प्रयोग कर रहा है। बहुउद्देशीय परियोजनाओं ने शुष्क अवधि में मनुष्य की जल उपयोग संबंधी आवश्यकताएं पूरी करने में मदद की है और उन्हें उपयुक्त सिंचाई पद्धतियों के माध्यम से कृषि के उत्पादन को बढ़ाने में सक्षम बनाया है। इन परियोजनाओं के माध्यम से बाढ़ के नियंत्रण एवं प्रबंधन, संपत्ति के नुकसान की रोकथाम, उद्योगों के विकास, जल–विद्युत उत्पादन, नदी नेविगेशन, मनोरंजन के अवसरों में सुधार आदि को संभव बनाया गया है। अनेक उपयोग होने के बावजूद बहुद्देशीय परियोजनाएं अनेक नकारात्मक पहलुओं के लिए भी जानी जाती हैं इनमें आश्रय स्थलों का विनाश, वन क्षेत्र का नुकसान, भूमि का जलमग्न होना, बस्तियों का विस्थापन, विशाल बाढ़ के मैदानी क्षेत्रों का निर्माण आदि शामिल हैं।

भारत में निर्मित बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के कुछ उदाहरण नीचे संक्षेप में बताए गए हैं। हमने इस संदर्भ में आगामी उप–भाग में एक विशेष परियोजना– दामोदर घाटी नदी परियोजना से संबंधित एक केस स्टडी का भी वर्णन किया है।

1) भाखड़ा–नागल परियोजना

इस परियोजना का निर्माण पंजाब, हरियाणा और राजस्थान राज्यों द्वारा 1948–1963 के दौरान संयुक्त रूप से पूरा किया गया था। भाखड़ा बांध की लंबाई 520 मीटर और ऊंचाई 226 मीटर है, जिसका निर्माण भाखड़ा (हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर जिले) में सतलुज नदी पर 9.34 बीसीएम पानी की भंडारण क्षमता के साथ किया गया है। भाखड़ा बांध एक ठोस गुरुत्वाकर्षण बांध है जो लगभग 168.3 वर्ग किमी क्षेत्र पर विस्तृत है तथा 'गोबिंद सागर' नामक एक जलाशय का निर्माण करता है।

नागल बांध पंजाब में भाखड़ा बांध से 10 किमी नीचे की ओर निर्मित एक और बांध है। हालांकि, सामान्य रूप से दोनों बांध एक साथ भाखड़ा–नागल बांध कहलाते हैं। भाखड़ा जल प्रवाह मार्ग तथा आनंदपुर साहिब जल प्रवाह मार्ग लगभग 14.8 लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचाई की सुविधा प्रदान करते हैं। इसी परियोजना पर गंगुवाल और कोटला में 1204 मेगावाट क्षमता के दो मुख्य बिजली उत्पादन संयंत्र निर्मित किए गए हैं।

2) हीराकुंड परियोजना

1947–1957 की अवधि में ओडिशा के संबलपुर के पास महानदी नदी पर 4.8 किमी लंबाई और 61 मीटर ऊंचाई के साथ हीराकुंड बांध का निर्माण किया गया था। इसे विश्व के सबसे लंबे बांध के रूप में दर्ज किया गया है। यह परियोजना तीन मुख्य नहरों अर्थात् बरगढ़ मुख्य नहर, सासन नहर और संबलपुर नहर के माध्यम से लगभग 11.98 लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचित करती है। जलाशय का पानी लगभग 743 वर्ग किमी में विस्तृत है जिसकी भंडारण क्षमता 8136 एमसीएम है। बुर्ला और चिपलीमा में दो जल विद्युत ऊर्जा संयंत्र निर्मित किए गए हैं जो 307.5 मेगावाट तक बिजली पैदा करते हैं।

3) चंबल घाटी परियोजना

यह बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजना 1960–1972 के दौरान राजस्थान और मध्य प्रदेश द्वारा संयुक्त रूप से यमुना नदी की एक सहायक नदी चंबल नदी पर निर्मित की गई

थी। गांधी सागर बांध (जीएसडी), को वर्ष 1960 में 64 मीटर ऊंचाई के साथ 6,920 एमसीएम की जल धारण क्षमता के साथ निर्मित किया गया था। राणा प्रताप सागर बांध ऊंचाई 54 मीटर है तथा इसका निर्माण वर्ष 1970 में गांधी सागर बांध के निचले क्षेत्र में किया गया था। लाइव स्टोरेज क्षमता 1,566 एमसीएम है। जवाहर सागर बांध चंबल घाटी परियोजनाओं की श्रृंखला में तीसरा बांध है, और एक ठोस गुरुत्वाकर्षण बांध है, जो 45 मीटर ऊंचा और 393 मीटर लंबा है, जिसे 1972 में पूरा किया गया था। राजस्थान में कोटा बैराज राजस्थान और मध्य प्रदेश में सिंचाई के लिए समर्पित है। गांधी सागर बांध, राणा प्रताप सागर बांध और जवाहर सागर बांध से पानी छोड़ने के बाद नदी के बाएं और दाएं किनारे पर नहरें। इसे 1960 में 99 एमसीएम की लाइव स्टोरेज क्षमता के साथ पूरा किया गया था। यह एक कंक्रीट स्पिलवे के साथ एक पृथ्वी भरण बांध का उदाहरण है।

4) नागार्जुन सागर परियोजना

नागार्जुन सागर बांध को तत्कालीन आंध्र प्रदेश राज्य में वर्ष 1955 एवं 1967 के मध्य कृष्णा नदी पर 150 मीटर ऊंचाई तथा 1.6 किलोमीटर लंबाई के साथ निर्मित किया गया था। यह बांध अब आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्यों की सीमा पर स्थित है। भारत की बिजली उत्पादन में इस बांध का प्रमुख योगदान है तथा इसकी बिजली उत्पादन की क्षमता 816 मेगावाट है। इस बांध से निकलने वाली नदियों द्वारा लगभ 8600 वर्ग किमी से अधिक भूमि की सिंचाई की जाती है।

चित्र 7.4: भारत की प्रमुख नदियाँ और बाँध।

7.3.1 दामोदर घाटी नदी परियोजना– एक केस स्टडी

A. दामोदर घाटी निगम (डीवीसी)

दामोदर घाटी निगम (डीवीसी) भारत में पहली बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना है, जिसे 1948 में आरंभ किया गया था। यह परियोजना वास्तव में दामोदर बाढ़ जांच

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

समिति की सिफारिशों के आधार पर तत्कालीन बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों के साथ भारत सरकार द्वारा आरंभ की गई थी। दामोदर नदी पर अय्यर और पंचेत पहाड़ी सहित कुल 07 प्रमुख बांधों का निर्माण करने का सुझाव दिया गया था; बराकर नदी पर कैथन, बेलपहेरी और तिलैया; कोनार नदी पर कोनार, बोकारो नदी पर बोकारो; और कोनार नदी के निचले सिरे पर एक बैराज इनमें से कुछ प्रमुख बांध हैं। तदनुसार, दामोदर घाटी नदी परियोजना को क्रियान्वित करने के लिए 1948 में दामोदर घाटी निगम (डीवीसी) का गठन किया गया।

वर्तमान में, डीवीसी ताप विद्युत क्षेत्र के साथ–साथ जल विद्युत की भी निगरानी कर रहा है। इसके माध्यम से कोयले की उपलब्धता के आधार पर ताप विद्युत स्टेशनों तथा जल विद्युत परियोजनाओं के निर्माण को प्रोत्साहित किया गया है। बिजली प्रबंधन की कुल क्षमता 7237.2 मेगावाट है, जिसमें से 7090 मेगावाट ऊर्जा 07 ताप विद्युत स्टेशनों से और 147.2 मेगावाट ऊर्जा 03 जल विद्युत स्टेशनों से प्राप्त की जाती है।

इस परियोजना की जलविद्युत शक्ति का उपयोग करने वाले कुछ प्रमुख उद्योग और संगठन भारतीय रेलवे, सेल, सीआईएल, आईआईएससीओ, सीएलडब्ल्यू, ईसीआर जीओएमओएच, गैरीसन इंजीनियर्स, टिस्को, जुस्को, इंडिया पावर आदि हैं। इनके साथ, पश्चिम बंगाल राज्य विद्युत वितरण कंपनी लिमिटेड (WBSEDCL) और झारखंड बिजली वितरण निगम लिमिटेड (JBVNL) जैसे राज्य बिजली बोर्डों को भी विद्युत का वितरण किया जाता है। डीवीसी की कुल सिंचाई क्षमता लगभग 3.64 लाख हेक्टेयर है, जिसमें 1172 एमसीएम की बाढ़ आरक्षित क्षमता भी शामिल है। इस नहर प्रणाली की कुल लंबाई लगभग 2494 किमी है। इस परियोजना के माध्यम से लगभग 4 लाख हेक्टेयर भूमि पर वनों, कृषि भूमि तथा मृदा विकास और रखरखाव के को प्रोत्साहित किया गया है।

B. दामोदर नदी बेसिन

दामोदर नदी झारखंड राज्य में लगभग 610 मीटर की ऊंचाई पर छोटा नागपुर पठार की पलामू पहाड़ियों से निकलती है, और यह समुद्र में विलय होने से पहले झारखंड के पहाड़ी तथा पश्चिम बंगाल के मैदानी क्षेत्रों में मुख्य नदी इन हुगली के साथ लगभग 547 किमी की लंबाई में प्रवाहित होती है। इस क्षेत्र में सामान्य सर्दियाँ तथा गर्म–आर्द्र ग्रीष्मकाल जलवायु पाई जाती है। यहां मानसून का आगमन सामान्य रूप से जून के महीने में होता है जो कि अक्टूबर तक बना रहता है। यहां मानसून द्वारा प्राप्त की जाने वाली वर्षा की मात्रा लगभग 1,250 है जो कि यहां की औसत वार्षिक वर्षा का लगभग 90% भाग है। नवंबर से मई के महीनों में शुष्क मौसम देखने को मिलता है तथा विशेष रूप से अप्रैल और मई मौसम के महीने गरम होते हैं क्योंकि इस समय वर्षा अत्यंत कम होती है।

दामोदर नदी का जलग्रहण क्षेत्र 22,005 वर्ग किमी है। दामोदर नदी की मुख्य सहायक नदियाँ बराकर, बोकारो और कोनार हैं। नदी को शोक की नदी अथवा बंगाल के शोक के रूप में जाना जाता था। दामोदर नदी को तत्कालीन बिहार और पश्चिम बंगाल में आने वाली अनवरत बाढ़ की समस्या के लिए जाना जाता है। इसका बेसिन क्षेत्र झारखंड राज्य के धनबाद, बोकारो, हजारीबाग, कोडरमा, चतरा, पलामू, रांची, रेवंत लोहरडगा, गिरिडीह, और दुमका नामक 10 जिलों तथा पश्चिम बंगाल के 6 जिलों

अर्थात पूर्वी बर्धमान, पश्चिमी बर्धमान, हुगली, हावड़ा, बांकुरा और पुरुलिया के क्षेत्रों में विस्तृत है।

बेसिन क्षेत्र में बाढ़ की स्थिति को कम करने के लिए, भारत सरकार ने संयुक्त राज्य अमेरिका में टेनेसी घाटी विकास परियोजना के आधार पर बांधों की एक श्रृंखला को निर्मित करने का निर्णय लिया है। तदनुसार, 1948–1959 की अवधि के दौरान डीवीसी द्वारा निर्मित मुख्य 4 बांधों का निर्माण किया गया जिनमें तिलैया बांध, कोनार बांध, मैथन बांध और पंचेत बांध शामिल हैं। हम संक्षेप में इन बांधों और दुर्गापुर बैराज नामक एक अन्य बैराज का वर्णन करेंगे।

C. बहुउद्देशीय बांध और बैराज

1. **तिलैया बांधः** यह 1950–1953 की अवधि के दौरान झारखंड के कोडरमा जिले में 1200 फीट की लंबाई और 99 फीट की ऊंचाई के साथ बराकर नदी पर बना एक कंक्रीट बांध है। यह लगभग 36 वर्ग किमी क्षेत्र में विस्तृत है तथा एक जलाशय का निर्माण करता है। इस बांध के माध्यम से 395 एमसीएम की सकल भंडारण क्षमता के साथ पनबिजली स्टेशन 4 मेगावाट बिजली का उत्पादन किया जाता है तथा लगभग 40,000 हेक्टेयर भूमि सिंचित की जाती है। तिलैया बांध का जलग्रहण क्षेत्र लगभग 984 वर्ग किमी है, जो मुख्य रूप से पहाड़ी जंगलों, चरागाहों और कृषि योग्य भूमि पर विस्तृत है। बराकर नदी झारखंड के हजारीबाग जिले की पहाड़ियों में 610 मीटर की ऊंचाई पर निकलती है।

2. **कोनार बांधः** यह 1950–1955 की अवधि के दौरान 3682 मीटर लंबा और 49 मीटर ऊंचा कोनार नदी पर बनाया गया एक मिट्टी का बांध (कंक्रीट स्पिलवे के साथ) है। बांध दामोदर नदी के संगम से 30 किमी की दूरी पर ऊपरी धारा पर हजारीबाग जिले में स्थित है। यह डीवीसी की चार बहुउद्देशीय बांध परियोजनाओं में से दूसरा है। बांध 10 मेगावाट बिजली उत्पादन प्रदान करता है और यह 337 एमसीएम जल संग्रहित करने में सक्षम है। इसका जलाशय लगभग 27.9 वर्ग किमी के क्षेत्र पर विस्तृत है और लगभग 45,000 हेक्टेयर भूमि के लिए सिंचाई की सुविधा प्रदान करता है। कोनार नदी हजारीबाग शहर के पश्चिम में निकलती है, जो छोटा नागपुर पठार का एक हिस्सा है।

3. **मैथन बांधः** इसका निर्माण धनबाद शहर से लगभग 50 किमी दूर स्थित बराकर नदी पर किया गया है। बांध लगभग 994 मीटर लंबा और 49 मीटर ऊंचा है। निर्माण 1951–1958 की अवधि के दौरान 1357 एमसीएम की सकल भंडारण क्षमता के साथ पूरा किया गया था। इस बांध का जलाशय लगभग 65 वर्ग किमी क्षेत्र में विस्तृत है। यह भूमिगत ऊर्जा स्टेशन वाला बांध लगभग 60 मेगावाट बिजली उत्पादित करता है।

4. **पंचेत बांधः** यह आसनसोल से लगभग 20 किमी दूर स्थित दामोदर नदी पर बना है। बांध की लंबाई 2545 मीटर और ऊंचाई 49 मीटर है और यह 27.9 वर्ग किमी के क्षेत्र के साथ एक जलाशय का निर्माण करता है। जलाशय का कुल जलग्रहण क्षेत्र 10,961 वर्ग किमी में है। यह बांध 40 मेगावाट बिजली उत्पादित करता है तथा साथ ही इसके द्वारा लगभग 28 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है। इस बांध की सकल भंडारण क्षमता 1497 एमसीएम है।

5. **दुर्गापुर बैराजः** उपरोक्त 04 बांधों से निकलने वाले जल के प्रबंधन के लिए 1955 में दुर्गापुर में दामोदर नदी पर इस बैराज का निर्माण किया गया है। यह रानीगंज से 23 किमी दूर स्थित है और सिंचाई के जल के लिए नहरों के एक नेटवर्क के माध्यम से नियंत्रित किया जाता है। इस जल का उपयोग पश्चिम बंगाल के बांकुरा, बर्धमान, हुगली और हावड़ा जिलों द्वारा किया जा रहा है। यह बैराज 692 मीटर लंबा और 12 मीटर ऊंचा है। दुर्गापुर बैराज से दो सिंचाई नहरें निकलती हैं जिन्हें लेफ्ट बैंक मेन कैनाल और राइट बैंक मेन कैनाल के नाम से जाना जाता है। लेफ्ट बैंक मेन कैनाल की लंबाई लगभग 136.8 किमी है और मुख्य स्थल पर इसके द्वारा निष्कासित किए जाने वाले जल की मात्रा लगभग 260 घन मीटर है। जबकि, राइट बैंक मेन कैनाल की लंबाई 88.5 किमी है जिसकी निष्कासन क्षमता 64.3 घन मीटर है। इस बैराज की मुख्य और सहायक नहरों की कुल लंबाई 2,500 किमी है, जो लगभग 4,20,000 हेक्टेयर भूमि पर विस्तृत हैं।

D. दामोदर नदी घाटी परियोजना की उपयोगिताएँ

आइए अब डोमोदर नदी घाटी परियोजना की प्रमुख उपयोगिताओं को समझते हैं।

1. बाढ़ की निगरानी

संपूर्ण दामोदर नदी घाटी परियोजना क्षेत्र में दक्षिण–पश्चिम मानसून द्वारा वर्षा प्राप्त की जाती है। मानसून का आरंभ सामान्य रूप से जून के महीने में होती है तथा या अक्टूबर के महीने तक बना रहता है। व्यापक वर्षा तथा जलाशयों में भारी प्रवाह के आधार पर इस क्षेत्र में समय–समय पर बाढ़ की चेतावनी जारी की जाती है जिसे आम जनता के लिए इसे डीवीसी की वेबसाइट पर उपलब्ध कराया जाता है। बाढ़ की बेहतर तैयारी और आवश्यक उपायों को ध्यान में रखते हुए समय–समय पर श्रेणी–वार–बहिर्वाह सूचना विभिन्न रंग कोडों के साथ तथा जल के आगमन के संभावित समय तथा जल की मात्रा संबंधी आंकड़ों का भी रखरखाव किया जाता है।

2. सिंचाई हेतु जल की आपूर्ति

डीवीसी के तहत दुर्गापुर बैराज से विभिन्न उद्देश्यों के लिए जल छोड़ा जाता है। इस बैराज और सिंचाई प्रणाली का संचालन और रखरखाव पश्चिम बंगाल की सरकार के पास है। निचली घाटी में खरीफ और रबी फसलों की खेती के लिए पश्चिम बंगाल सरकार के अनुरोध पर डीवीसी केवल मैथन और पंचेत जलाशयों से सिंचाई के लिए जल छोड़ सकता है। जलाशयों में अतिरिक्त जल उपलब्ध होने पर बोरो सिंचाई में उपयोग के लिए भी जल छोड़ा जाता है। वर्ष 2019–20 में खरीफ की 10 लाख एकड़, रबी की 70,000 एकड़ तथा बोरो फसल की 4,88,000 एकड़ भूमि को जल आवंटित किया गया था।

3. नगर और औद्योगिक जल आपूर्ति

इस परियोजना की एक अन्य प्रमुख उपयोगिता झारखंड और पश्चिम बंगाल राज्यों में नगर पालिकाओं और औद्योगिक आवश्यकताओं के लिए जल की आपूर्ति है। झारखंड तथा पश्चिम बंगाल में नगरपालिका और औद्योगिक उपयोग के लिए आवंटित मात्रा क्रमशः 376 मिलियन गैलन प्रति दिन तथा 413 मिलियन गैलन प्रतिदिन है।

E. बहाली और संरक्षण गतिविधियां

क्षेत्र के अधिकांश पर्वतीय इलाके ऊपरी जलग्रहण क्षेत्र में जंगल एवं वन क्षेत्रों में स्थित हैं, जबकि निचले क्षेत्र जलग्रहण, गाद तथा दोमट से ढके हुए हैं। बेसिन क्षेत्र का अधिकांश ऊपरी भाग कृषि कार्यों के लिए वर्षा पर निर्भर है। प्राकृतिक संसाधनों विशेष रूप से जल और वन संसाधनों को बनाए रखने के लिए नदी बेसिन क्षेत्र में डीवीसी के मृदा संरक्षण, मत्स्यपालन और पर्यावरण विभाग द्वारा निम्नलिखित गतिविधियां संचालित की गई हैं।

1. प्रभावी मृदा एवं जल संरक्षण के लिए जल निकायों के जीर्णोद्धार का कार्य।
2. क्षेत्र में भूजल क्षमता को बढ़ाने के लिए चेक डैम जैसी वर्षा जल संचयन संरचनाओं का निर्माण। ये संरचनाएं मृदा के कटाव को भी रोक सकती हैं। अतिरिक्त जल का उपयोग सूक्ष्म सिंचाई एवं बहु फसल प्रणाली जैसी कृषि गतिविधियों के साथ–साथ घरेलू उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।
3. नदी बेसिन के समग्र विकास के लिए विशेष रूप से अवक्रमित वन क्षेत्रों में आयोजित वनीकरण गतिविधियाँ।
4. इस बेसिन क्षेत्र में रहने वाली आबादी की आजीविका में सुधार के लिए मछली पालन, बागवानी और अन्य प्रथाओं को प्रोत्साहित किया जाता है।
5. जलवायु और जल तीव्रता संबंधी विशेषताओं की देखरेख हेतु जल निगरानी निगरानी संयंत्र तथा गाद मूल्यांकन स्टेशन स्थापित किए गए हैं।
6. स्थानीय स्तर पर एकीकृत वाटर सेट प्रबंधन प्रणालियों के माध्यम से वृक्षारोपण, मत्स्य पालन तथा हैचरी विकास ऐसी गतिविधियों को प्रोत्साहित किया जाता है।
7. राष्ट्रीय कृषि जीविका मिशन के दिशा–निर्देशों के तहत विभिन्न सरकारी योजनाओं को संचालित करने के लिए समय–समय पर प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।
8. भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के निर्देशानुसार विद्युत परियोजना क्षेत्रों में संचालित बहुस्तरीय हरित विकास कार्यों में वृक्षारोपण, तालाबों का निर्माण तथा भूमि संरक्षण जैसे कार्य शामिल हैं।
9. मछलियों के अंडों के उत्पादन को बढ़ावा देने, छोटी मछलियों की संख्या में वृद्धि करने तथा जल संरक्षण एवं सजावटी मत्स्य पालन पर प्रशिक्षण एवं हैचरी के रखरखाव आदि के माध्यम से मौजूदा जलीय संसाधनों के संवर्धन को बढ़ावा दिया जाता है।

बोध प्रश्न 3

a) बहुउद्देशीय नदी परियोजनाओं के क्या लाभ हैं? उदाहरण भी दीजिए।

b) दामोदर घाटी नदी परियोजना के भाग के रूप में निर्मित प्रमुख बांध कौन से हैं?

7.4 सारांश

इस इकाई में आपने अब तक पढ़ा हैः

- सतही जल और भूजल दो महत्वपूर्ण प्रकार के जल संसाधन हैं। भारत में उपलब्ध भूजल मुख्य रूप से दो प्रकार की संरचनाओं में पाया जाता है जिनमें संहत तथा गैर–संहत संरचनाएं शामिल हैं।
- पृथ्वी पर जल के कुल आयतन का केवल 2.5 प्रतिशत भाग ही ताजे जल के रूप में उपलब्ध है।
- भारत की नदी घाटियों को मुख्य रूप से चार प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है, अर्थात् हिमालयी नदियाँ, दक्कन की नदियाँ, तटीय नदियाँ और अंतर्देशीय जल निकासी बेसिन वाली नदियाँ।
- भारत में भूजल निष्कर्षण में वृद्धिशील प्रवृत्ति देखने को मिल रही है तथा यह देश में कई स्थानों पर कुल वार्षिक भूजल पुनर्भरण से अधिक है।
- घरेलू, उद्योग, सिंचाई, ऊर्जा, मनोरंजन, खेल और नौवहन आदि सहित अनेक क्षेत्रों में जल संसाधनों की व्यापक उपयोगिता है।
- जल के भंडारण के लिए बनाए गए बांधों और जलाशयों ने आर्थिक विकास में मदद की है और लोगों को सिंचाई पद्धतियों के माध्यम से अधिक मात्रा में फसलों को उगाने में सक्षम बनाया है।
- बाढ़ नियंत्रण एवं प्रबंधन तथा सूखे की रोकथाम भी बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के प्रमुख लाभ हैं।
- दामोदर नदी घाटी परियोजना 1948 में आरंभ की गई पहली भारतीय बहुउद्देशीय परियोजना है। जिसके तहत बाढ़ के पानी को नियंत्रित करने और सिंचाई की सुविधा और जलविद्युत उत्पादन प्रदान करने के लिए 04 बांध और 01 बैराज का निर्माण किया गया था।

7.5 अंत में कुछ प्रश्न

1. भारत की कठोर चट्टानों एवं कोमल चट्टानों की संरचनाओं की चर्चा कीजिए।

2. भारत के सतही जल संसाधनों के वितरण की व्याख्या करें?

3. जल संसाधनों के उपयोग का वर्णन कीजिए।

4. दामोदर नदी घाटी परियोजना पर एक टिप्पणी लिखिए।

7.6 उत्तर

<u>बोध प्रश्न</u>

1. a) जी नदियों में वर्ष भर जल उपलब्ध रहता है उन्हे बारहमासी नदियां कहा जाता है।
   b) जोड़, भ्रंश, दरारें और अपक्षय क्षेत्र।

2. पेयजल, कृषि, उद्योग, पर्यटन आदि।

3. a) बहुउद्देशीय नदी परियोजनाएं सिंचाई, बिजली उत्पादन, नौवहन, मछली पकड़ने, पर्यटन और पेयजल संबंधित सुविधाएं प्रदान करती हैं। उदाहरण नागार्जुन सागर, दामोदर घाटी नदी परियोजनाएं आदि।
   b) तिलैया बांध, कोनार बांध, मैथन बांध और पंचेत बांध।

अंत में कुछ प्रश्न

1. उप–खण्ड 7.2.2 का संदर्भ लें।
2. उप–खण्ड 7.2.3 का संदर्भ लें।
3. उप–खण्ड 7.2.4 का संदर्भ लें।
4. खण्ड 7.3 का संदर्भ लें।

7.7 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

1. Sharad K. Jain, Pushpendra K. Agarwal, and Vijay P. Singh. 2007. *Hydrology and Water Resources of India*. The Netherlands: Springer.
2. Khullar, D. R. (2011): *India-A Comprehensive Geography*. Ludhiana: Kalyani Publishers.
3. Tiwari, R. C. (2008): *Geography of India*. Allahabad: Pryag Pustak Bhawan.
4. CGWB 2021. ANNUAL REPORT 2019-20, , Bhujal Bhawan, NH-4, Faridabad, Haryana.
5. Groundwater Year Book-India 2019-2020, Central Ground Water Board (CGWB), Ministry of Jal Sakthi, (MoJS), Department of Water Resource (DoWR), Govt. of India. http://cgwb.gov.in
6. Igor A. Shiklomanov, State Hydrological Institute (SHL. St. Petersburg) and United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation (UNESCO, Paris), 1999.
7. ANNUAL REPORT 2019-20, Damodar Valley Corporation, Kolkata. www.dvc.gov.in
8. http://www.cwc.gov.in/river-basin-planning
9. http://jalshakti-dowr.gov.in/annual-report
10. https://wbiwd.gov.in/index.php/applications
11. https://www.dvc.gov.in/dvcwebsite_new1/
12. https://www.usgs.gov/special-topic/water-science-school/science/water-cycle-adults-and-advanced-students?qt-science_center_objects=0#qt-science_center_objects
13. https://www.usgs.gov/mission-areas/water-resources/science/types-water

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

14. https://pubs.usgs.gov/circ/circ1139/pdf/circ1139.pdf

15. WRI (2019). Attribution 4.0 International (CC BY 4.0).

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8

वन संसाधन

इकाई की रुपरेखा

8.1 प्रस्तावना
सभावित अध्ययन परिणाम
8.2 वन संसाधनः विशेषताएँ और वितरण
8.3 वनों के प्रकार
8.4 भारतीय वनों से संबंधित मुद्दे
वन–कटाई/निर्वनीकरण
वृक्षारोपण/वनीकरण
संरक्षण
8.5 सारांश
8.6 अंत में कुछ प्रश्न
8.7 उत्तर
8.8 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

8.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई 6 और 7 में आपने भारत के भूमि संसाधनों और जल संसाधनों का अध्ययन किया। आप इन महत्वपूर्ण संसाधनों की उपलब्धता, प्रकार, वितरण और उपयोग के बारे में जाने। इस इकाई 8 में आप सीखेंगे कि, वन संसाधनों को जैव विविधता का भंडार माना जाता है जो जीवमंडल में असंख्य पारिस्थितिक तंत्रों और संबंधित कार्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में भी वृक्षों और वन संसाधनों के महत्व का उल्लेख किया गया है जिसमें कहा गया है कि एक वृक्ष दस पुत्रों के बराबर होता है और न केवल मानव जाति और ग्रह पृथ्वी के कल्याण के लिए बल्कि इसे एक जैविक और मानव समान जैविक जीव के रूप में भी मानता है। इसके अतिरिक्त, यह जीवन रूपों के लिए ऊर्जा और पदार्थ की निरंतर आपूर्ति के लिए पृथ्वी ग्रह के समग्र विकास के लिए भी प्रासंगिक है। वन संसाधन कार्बन सिंक के लिए एक माध्यम के रूप में भी कार्य करते हैं जो जैव विविधता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। आप सीखेंगे कि आम तौर पर वन संसाधन जलवायु परिस्थितियों और मृदा प्रकार पर निर्भर ग्रह पृथ्वी पर लगभग सभी भौगोलिक क्षेत्रों पर फैला हैं। हालाँकि, कुछ क्षेत्रों में विषम जलवायु स्थिति जैसे अत्यधिक ठंड और गर्म स्थितियाँ किसी भी प्रकार के वनों के विकास में सहयक नहीं होती हैं। मोटे तौर पर, भारत उष्णकटिबंधीय मानसून प्रकार की जलवायु और संबंधित जलवायु परिस्थितियों (जो उष्ण से आर्कटिक तक भिन्न होता है) से संपन्न है, जो स्थानिक और विदेशज दोनों प्रजातियों सहित पौधों की विविध किस्मों के विकास में सहयक होती है। विश्व के कुछ ही देशों में ऐसी विविध पौधों की किस्में पाए जाते हैं जिनका भौगोलिक क्षेत्रफल भारत के बराबर है। इसमें उष्णकटिबंधीय आद्र

सदाबहार, अर्ध–सदाबहार, पर्णपाती, कांटे, उपोष्णकटिबंधीय, उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती, मैंग्रोव और शुष्क अल्पाइन स्क्रब आदि है।

इस इकाई भारत के वन संसाधनों के विभिन्न पहलुओं से संबंधित विभिन्न भागो में वर्णित किया गया है। आप वन संसाधनों, इसकी विशेषताओं और वितरण का भाग 8.2 से अध्ययन करेंगे। इस भाग को पढ़ने के बाद आप भारत के वन संसाधनों की विशेषताओं और वितरण को समझने में सक्षम होंगे। भाग 8.3 में, आप भारत में आमतौर पर पाए जाने वाले वनों के प्रकारों के बारे में अध्ययन करेंगे। यह शिक्षार्थियों को न केवल वनों के प्रकारों और उनकी विविधता को समझने में मदद करेगा बल्कि मुद्दों, समस्या क्षेत्र और चुनौतियों के बारे में भी एक उपयुक्त तरीके से संवेदनशील बनाएगा। भाग 8.4 के अध्ययन निश्चित रूप से आपको चुनौतियों और बाधाओं के साथ–साथ भारतीय वनों से संबंधित सामयिक मुद्दों की प्रकृति और प्रकार की परिकल्पना करने में मदद करेगा।

संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप :

- भारत के वन संसाधनों के बारे में जानेगे ;
- भारत के वन संसाधनों की विशेषताओं और वितरण का वर्णन कर सकेंगे;
- भारत में वनों और वन संसाधनों के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे; तथा
- वन संसाधनों अर्थात निर्वनीकरण, वनरोपण और संरक्षण से संबंधित मुद्दों को समझ सकेंगे।

8.2 वन संसाधनः विशेषताएँ और वितरण

सामान्य तौर पर आप सभी वन और वन संसाधनों के अर्थ को जानते होंगे। हालांकि, कुछ विशिष्ट विशेषताएं और वितरण प्रारूप हैं जो पृथ्वी के सतह पर भौगोलिक क्षेत्रों के प्रकार के अनुरूप होते हैं। वन, जल के साथ पर्यावरण सुविधाओं के प्रमुख भागों में से एक है। इसलिए, दोनों ही पृथ्वी पर पादप और जीवों की प्रजातियों के अस्तित्व और जीविका के लिए अत्यंत मूल्यवान संसाधन हैं। प्राचीन काल से ही वन मानव को कई प्रकार की पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं प्रदान करता हैं। आप लकड़ी (उपलब्धता के आधार पर) जैसी कुछ सेवाओं के बारे में अच्छी तरह से जानते हैं, जिनका घरेलू और व्यावसायिक दोनों उद्देश्यों के लिए ईंधन के रूप में बहुमुखी उपयोग होता है।

आप जानते हैं कि वन दुनिया के किसी भी भौगोलिक क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से उगने वाले पेड़ों (किस्मों की प्रजातियों) की मात्रा को दर्शाता है। यह विशेष रूप से टुंड्रा और स्थायी रूप से जमे हुए क्षेत्रों जैसे अत्यधिक शुष्क और ठंडी जलवायु परिस्थितियों में नहीं पाए जा सकते है। आप सभी ऐसे विषम क्षेत्रों के वितरण और भौगोलिक स्थिति से परिचित होंगे। वन भी बड़ी संख्या में आर्द्रभूमियों का भंडार हैं। हम मानते हैं कि आप आर्द्रभूमि से परिचित हैं जिसे हम जल निकाय के रूप में जानते हैं जिसमें विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्र होता है जो स्थायी या मौसमी रूप से जल से भरा रहता है। हमारे देश भारत में उत्तराखंड राज्य के देहरादून में स्थित वन संसाधनों, नीतियों और दिशा–निर्देशों, वन आवरण मानचित्रण और नियंत्रण आदि से संबंधित सभी पहलुओं पर ध्यान देने के लिए 'भारतीय वन सर्वेक्षण' (FSI) नामक एक शीर्ष संस्था है। संस्थान का

मुख्य कार्य दो वर्ष के अंतराल पर नवीनतम दूर–संवेदी उपग्रह डेटा का उपयोग करते हुए देश के वन क्षेत्र का आकलन और मानचित्रण करना है। वे राज्य और जिला स्तर पर पूरे देश के लिए ऐसा करते हैं और 1:50,000 के पैमाने पर वन आवरण मानचित्र भी तैयार करते हैं। वन मानचित्रण 1987 में किए गए पहले आकलन के साथ शुरू हुई। अब तक, सोलह आकलन पहले ही सफलतापूर्वक किए जा चुके हैं। पिछले तीन दशकों से, वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के अनुरूप भारत में वन आवरण मानचित्रण की पद्धति में लगातार सुधार हो रहा है। वन आवरण पर वास्तविक समय की आधारभूत जानकारी दूर संवेदी उपग्रह चित्रों से प्राप्त की जाती है। निश्चित रूप से, रिमोट सेंसिंग ने एक बेहतर कवरेज दिया है जो दृश्य व्याख्या तकनीकों की तुलना में पृथ्वी की सतह पर सूक्ष्म विवरणों को भी कैप्चर और कवर कर सकता है, जिसमें वन आवरण से संबंधित डेटा को समान तरीके से व्याख्या करने के लिए उपयोग किया जाता है। आप इस बात से सहमत होंगे कि आदर्श या घने वन क्षेत्र देश के नागरिकों की अनेक समस्याओं का समाधान है। वनों के क्षरण के दुष्परिणाम अवांछित विष्णु विषाणु और जीवाणु रोगों के फैलाव के रूप में देखा जा सकता हैं। इस तरह के नकारात्मक प्रभावों का फैलाव स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं तक होने लगा हैं और बड़े पैमाने पर जीवन की दैनिक गतिविधियों को बाधित करना शुरू कर दिया है।

आप कह सकते हैं कि वन संसाधनों का विकाश और वृद्धि सीधे तौर पर जलवायु के साथ स्थलाकृतिक, एडैफिक और अन्य कारकों पर निर्भर करती है। इस प्रकार, प्राकृ तिक पर्यावरण के सभी बड़े और छोटे बायोम के अबाध एवं प्रभावी संचालन के लिए बढ़ा या क्षरण मुक्त वन आवरण अत्यंत अनिवार्य है।

8.2.1 वन संसाधनों के विशेषताएं

आप जानते हैं कि वन को एक क्षेत्र के हरे फेफड़े के रूप में माना जाता है क्योंकि उनमें समृद्ध वनस्पति और जीव होते हैं। वे विभिन्न प्रकार के कीड़ों और मधुमक्खियों के माध्यम से परागण सेवाएं प्रदान करने में भी बहुत मदद करते हैं जो विविध वनस्पतियों पर पनपते हैं, जो विभिन्न प्रकार के वातावरण में अपने नवोदित चरण के दौरान उष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण फलों की विकास में मदद करते हैं। मानव अनादि काल से वन से अपनी आजीविका चलाने के लिए विभिन्न प्रकार के संसाधनों को प्राप्त करता है। वन मृदा की उचित वृद्धि के लिए स्वच्छ वायु जल, धरण सहित विभिन्न पारिस्थितिक सेवाएं प्रदान करने के लिए जाने जाते हैं जिसके फलस्वरूप विभिन्न खाद्यान्न और गैर–खाद्यान्न फसलों को उगाने, मृदा–नमी संतुलन को बनाए रखने और मृदा अपरदन को नियंत्रित करने में मदद करते हैं। इसके अलावा, सबसे महत्वपूर्ण भूमिका में कार्बन पृथक्करण की प्रक्रिया के माध्यम से कार्बन सिंक के भंडार के रूप में कार्य करके जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के नियमन से संबंधित है। पर्यावरण स्थिरता और पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने और संरक्षित करने के लिए वन एकमात्र और अपरिहार्य माध्यम (जिसके लिए कोई विकल्प नहीं है) के रूप में भी कार्य करते हैं। प्राकृतिक वनों के विशाल भूभाग वाले पृथ्वी के सतह क्षेत्र में असंख्य वनस्पतियों और जीव पाए जाते हैं जिन्हें जैव विविधता के केंद्र के रूप में जाना जाता है। विशेष रूप से मरुस्थलीय वातावरण में पर्याप्त वन आवरण रेत की मात्रा के विस्तार को रोकने बहुत मदद करता है जिससे मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया को रोकने में मदद मिलती है। राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार, भूमि क्षरण को रोकने के लिए पर्याप्त वन आवरण बहुत आवश्यक है। वन प्रकृति की वहुमूल्य निधि है जो प्राकृतिक या

होमोस्टैटिक संतुलन के तहत प्रत्येक पारिस्थितिकी तंत्र के प्रबंधन में अत्यधिक योगदान देता है। यह विभिन्न प्रकार के वनस्पतियों और जीवों की समेकित वृद्धि और विकास में भी मदद करता है जो मानव समाज को उनके स्वास्थ्य और एक सामंजस्यपूर्ण तरीके से जीवन स्तर को बनाए रखने में मदद करता है। विशेषताओं के अंतर्गत, हम वन संसाधन को कई मायनो में महत्वपूर्ण बनाने वाले घटको पर संक्षेप में चर्चा करेंगे। इनमें प्राकृतिक या पारिस्थितिक मूल्य, आर्थिक मूल्य, व्यक्तिगत और सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्य आदि शामिल हो सकते हैं। हम कह सकते हैं कि वन संसाधन प्रकृति के वहुमल्य उपहार या अधिक उपयुक्त चमत्कारी चमत्कार हैं जो मनुष्य को असंख्य उपयोगों के लिए दिए गए हैं। सामान्य तौर पर, वनों की मुख्य विशेषताओं को विभिन्न सेवाओं जो वे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रदान करते हैं, के आधार पर तीन मुख्य प्रकारों और उनके उप–प्रकारों के अंतर्गत रखा जा सकता है जिसकी की चर्चा इस प्रकार है।

1. प्राकृतिक सुविधाएं या सेवाएंः इसके अंतर्गत कुछ विशिष्ट कार्य और सेवाएं हैं, जिनमें निम्नलिखित शामिल हैंः

यदि किसी भौगोलिक क्षेत्र में पर्याप्त वन आच्छादन है, तो यह वैश्विक जलवायु (कार्बन और जल चक्र आदि जैसे प्राकृतिक चक्रों को प्रभावित करके) को स्थिर करने में मदद करता है, पारिस्थितिक जैव विविधता और भू–विविधता के विविध और महत्वपूर्ण जीवन को बनाए रखने वाले तत्वों की रक्षा करता है और प्राकृतिक पारिस्थितिक और उनसे जुड़ी प्रक्रियाएं को संतुलित बनाये रखने में सहायक होता है। इसके अलावा, वन मृदा अपरदन को रोकने, भूस्खलन, चक्रवात, बाढ़, जल निकायों के गाद के प्रभाव को कम करने तथा वायु गुणवत्ता और नमी आपूर्ति आदि की उपलब्धता में सुधार करने में भी मदद करता है। हालांकि, उनकी अनुपस्थिति में, ये महत्वपूर्ण प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र अपने उप–प्रणालियों के साथ आने वाली समस्या अंततः मानव–पर्यावरण संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। इसलिए, वन संसाधनों की भूमिका और पृथ्वी पर सभी प्रकार के निवासियों के लिए इसके महत्व का कोई विकल्प नहीं है। पृथ्वी की विशाल प्रणालियों और उनकी प्रक्रियाओं के संदर्भ में भी, वन अनिवार्य रूप से अल्प और दीर्घावधि दोनों में उनकी निरंतर और अदृश्य कार्यक्षमता और जीवन शक्ति के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

2. आर्थिक सुविधाएं या सेवाएंः यह प्रकृति के सबसे बड़े नवीकरणीय संसाधनों में से एक है जैसे वायु, सौर, भू–तापीय ऊर्जा इत्यादि। हालांकि, क्षय के तुरंत बाद अन्य नवीकरणीय संसाधनों की तुलना में इसे पुनः उत्पन्न करने में काफी समय लगता है। आप वन संसाधनों से प्राप्त उत्पादों और सेवाओं की श्रृंखला के बारे में अच्छी तरह जानते हैं। यह मानव समाज को अनादि काल से सांस लेने के लिए ऑक्सीजन प्रदान करने के अलावा, विभिन्न प्रकार के फल और सब्जियां, मूल्यवान वस्तुएं (शहद, हाथी दांत, मोम आदि), ईंधन, लकड़ी, तेल, रेजिन, टैनिन और डाई, गोंद, कथा, तेंदू के पत्ते, घास, बाँस, बेंत, औषधीय जड़ी–बूटियाँ और पौधों के साथ–साथ खुले चरागाह क्षेत्रों में पालतू पशुओं को चराने के लिए भूमि प्रदान करते है। क्षय के बाद भी, वृक्षों के ढेर से जीवाश्म ईंधन के निर्माण के लिए एक स्रोत सामग्री प्रदान करता है जो परिवहन और औद्योगिक क्षेत्र सहित आर्थिक गतिविधियों को चलाने के लिए बहुत आवश्यक है। वे जीवाश्म ईंधन पर पनपते हैं और इसका उपयोग ऊर्जा के प्रमुख स्रोत के रूप में करते हैं। आपने वन आधारित उद्योगों के प्रकार के बारे में अध्ययन किया है। इसके अलावा, यह फार्मास्युटिकल क्षेत्र में दवाओं के उत्पादन के लिए विभिन्न प्रकार के जीवन रक्षक

पदार्थ, कृषि और इसकी संबद्ध गतिविधियों में उपयोग के लिए कीटनाशक और शाकनाशी प्रदान करने के लिए भी जाना जाता है। संक्षेप में, वन संसाधन राष्ट्र के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में अत्यधिक योगदान देता है और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं और कार्य करने वाली आबादी को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के अवसर प्रदान करता है।

3. सामाजिक–सांस्कृतिक सुविधाएं या सेवाएंः जैसा कि आप पहले से ही इस तथ्य से परिचित हैं कि वन भी मानव सभ्यता की शुरुआत से ही सामाजिक–सांस्कृतिक प्रथाओं का एकजुट हिस्सा हैं। भारत में प्राचीन काल से ही भारत और अन्य जगहों के कई आदिवासी समुदाय वनों की पूजा करते हैं। समुदाय में से एक अर्थात् राजस्थान के बिश्नोई 'खेजरी' (स्थानीय नाम) वृक्ष की पूजा करते हैं। वे पूरे देश में अपने संरक्षण प्रयासों के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। पवित्र खांचे का महत्व सर्वविदित है। भारत में दो प्रकार के पवित्र वृक्ष राष्ट्रीय महत्व के हैं, अर्थात् पीपल और बरगद (राष्ट्रीय वृक्ष), जिनकी पूरे देश में पूजा की जाती है। समग्र रूप से, वनों को सौंदर्य, मनोरंजन, आध्यात्मिक और धार्मिक सेवाएं प्रदान करने के लिए सार्वभौमिक रूप से जाना जाता है।

हमें उम्मीद हैं कि आपने वन की विभिन्न विशेषताओं और जीवन की दैनिक कार्य और आर्थिक गतिविधियों में उनके महत्व को संक्षेप में सीखा है।

8.2.2 वन संसाधनों का वितरण

भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल ̧32 लाख वर्ग किलोमीटर है। इसमें से अधिकांश क्षेत्र किसी न किसी प्रकार के वन संसाधनों के अंतर्गत आता है। भारतीय वन सर्वेक्षण की रिपोर्ट (2019) के अनुसार, यह अंतर–राज्य स्तर की विविधताओं के साथ 23.34% है। यह भारत की राष्ट्रीय वन नीति में निर्धारित मानदंडों से काफी कम है, जिसमें कुल भौगोलिक क्षेत्र का 33% वन आवरण के अंतर्गत होने चाहिए। इस राष्ट्रीय नीति के अंतर्गत वन संसाधनों के तहत 33ः क्षेत्र को लाने के लिए वनावरण और वृक्षावरण को संयुक्त रूप से एक मानदंड के रूप में लिया जाता है। वृक्षावरण वृक्षों के सभी भाग (01 हेक्टेयर से कम आकार) को संदर्भित करता है, जिसमें आरक्षित वन क्षेत्र (आरएफए) के बाहर बिखरे हुए वृक्षों के कवर शामिल हैं। सरणी 8.1 भारत के विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में दर्ज वन क्षेत्रों की कुलः दर्शाती है। आप देख सकते हैं कि प्रमुख राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में राष्ट्रीय औसत से अधिक वन कवर में ग्यारह राज्य और दो केंद्र शासित प्रदेश शामिल हैं। राज्यों में, अधिकतम अनुपात 82.31 प्रतिशत के साथ सिक्किम राज्य द्वारा और न्यूनतम 33.09% के साथ गोवा द्वारा दर्ज किया गया था। दो केंद्र शासित प्रदेशों में, अंडमान और निकोबार में उच्चतम अनुपात 86.93% दर्ज किया गया, जबकि दादर और नगर हवेली के केंद्र शासित प्रदेश में 41.55% दर्ज किया गया। शेष राज्य और केंद्र शासित प्रदेश विभिन्न अनुपातों के साथ वन आच्छादन के तहत कुल भौगोलिक क्षेत्र के राष्ट्रीय औसत मूल्य के 33% से कम हैं। छह राज्यों और एक केंद्र शासित प्रदेश ने वनावरण के अंतर्गत कुल भौगोलिक क्षेत्र के 10% से कम अनुपात दर्ज किया जिसमे अवरोही क्रम में राजस्थान, जम्मू और कश्मीर, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और दमन और दीव सहित चिंताजनक स्थिति में है। हालांकि, केंद्र शासित प्रदेश लक्षद्वीप ने शून्य वन क्षेत्र दर्ज किया जो चिंताजनक स्थिति की ओर इशारा करता है। सामान्य तौर पर, सघन वन आवरण हिमालय (अत्यंत उत्तर में पामीर गाँठ से लेकर पूर्व में अरुणाचल प्रदेश तक फैला हुआ) और पश्चिमी और पूर्वी घाटों की

पहाड़ी श्रृंखला, उत्तर–पूर्वी पहाड़ी श्रृंखला, मध्य भारत में प्रायद्वीपीय भारत की पहाड़ियों आदि के साथ बुंदेलखंड के पठारी क्षेत्र और बघेलखंड में पाया जाता है।

सरणी 8.1: राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में विभिन्न वर्गों के अंतर्गत अभिलेखित वन क्षेत्र (RFA)

क्र.सं	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	कुल भौगोलिक क्षेत्र	कुल अभिलेखित वन क्षेत्र	कुल भौगोलिक क्षेत्र का प्रतिशत (%)
1.	आंध्र प्रदेश	162,968	37,258	22.86
2.	अरुणाचल प्रदेश	83,743	51,407	61.39
3.	असम	78,438	26,832	34.21
4.	बिहार	94,163	6,877	7.30
5.	छत्तीसगढ	135,192	59,772	44.21
6.	दिल्ली	1,483	102	6.88
7.	गोवा	3,702	1,225	33.09
8.	गुजरात	196,244	21,647	11.03
9.	हरियाणा	44,212	1,559	3.53
10.	हिमाचल प्रदेश	55,673	37,033	66.52
11.	जम्मू और कश्मीर	222,236	20,230	9.10
12.	झारखंड	79,716	23,605	29.61
13.	कर्नाटक	191,791	38,284	19.96
14.	केरल	38,852	11,309	29.11
15.	मध्य प्रदेश	308,252	94,689	30.72
16.	महाराष्ट्र	307,713	61,579	20.01
17.	मणिपुर	22,327	17,418	78.01
18.	मेघालय	22,429	9,496	42.34
19.	मिजोरम	21,081	5,641	26.76
20.	नगालैंड	16,579	8,623	52.01
21.	उड़ीसा	155,707	61,204	39.31
22.	पंजाब	50,362	3,084	6.12
23.	राजस्थान	342,239	32,737	9.57
24.	सिक्किम	7,096	5,841	82.31
25.	तमिलनाडु	130,060	22,877	17.59
26.	तेलंगाना	112,077	26,904	24.00
27.	त्रिपुरा	10,486	6,294	60.02
28.	उत्तर प्रदेश	240,928	16,582	6.88
29.	उत्तराखंड	53,483	38,000	71.05
30.	पश्चिम बंगाल	88,752	11,879	13.38
31.	अं एवं नि द्वीप समूह	8,249	7,171	86.93
32.	चंडीगढ़	114	35	30.70
33.	दादरा और नगर हवेली	491	204	41.55

34.	दमन और दीव	111	8	7.21
35.	लक्षद्वीप	30	0	0
36.	पुडुचेरी	490	13	2.65
कुल		**3,287,469**	**767,419**	**23.34**

(स्रोतः भारत वन स्थिति रिपोर्ट, राज्य वन 2019)

यदि हम अपने राष्ट्रीय औसत अन्य देशों की तुलना काफी कम है। कुछ देश निर्धारित मानदंड से कहीं अधिक हैं जैसे कि कांगो लोकतांत्रिक गणराज्य (65%), ब्राजील और पेरू (58% प्रत्येक), इंडोनेशिया (50%), रूसी संघ (48%) और कनाडा (35%)।

बोध प्रश्न 1

वन संसाधनों की किसी एक विशेषता की विवेचना कीजिए।

8.3 वनों के प्रकार

आप यदि देश भर में पठार, रेगिस्तान, तटीय और पहाड़ी क्षेत्रों के विभिन्न वातावरणों में यात्रा करते हैं तो आपने देखा होगा कि वन भी विभिन्न प्रकार के होते हैं। आप इस बात से सहमत होंगे कि कुछ अपवादों को छोड़कर प्रत्येक पर्यावरण में पर्यावरण की अनुकूल परिस्थितियों के साथ निश्चित रूप से विभिन्न प्रकार के वृक्ष पाए जाते हैं। हालांकि, प्रत्येक वातावरण स्वाभाविक रूप से वृक्षों के प्रकार एवं कुछ भिन्न प्रजातियों के विकास में सहयक होते है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र में उगने वाले वनों के प्रकार के निर्धारण में वर्षा सबसे महत्वपूर्ण और निर्णायक कारक है। वन का प्रकार लगभग सीधे भारत में वर्षा क्षेत्रों से मेल खाता है। अपवादों में एक ओर पहाड़ी और पहाड़ी क्षेत्र में ऊंचाई और दूसरी ओर तटीय क्षेत्रों में लवणता के कारण मामूली क्षेत्रीय भिन्नताओं को देखा जा सकता है। ऊपर वर्णित इन कारकों के अलावा कई कारक हैं जो वनों के प्रकार में योगदान करते हैं।

भारत में, भारतीय वन सर्वेक्षण ने व्यापक रूप से वृक्ष वितान घनत्व (छत्र घनत्व) के अलग–अलग अनुपात के आधार पर वन आवरण को चार मुख्य वर्गों में वर्गीकृत किया है। इन्हें अति सघन वन, मध्यम सघन वन, खुले वन और मैंग्रोव के रूप में जाना जाता है। घने और खुले वनों में वन आवरण की वर्गीकरण योजना को वन वर्गीकरण योजनाओं के अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनाए गए मानदंडों से लिया गया है और, मैंग्रोव को चौथे वर्ग को अद्वितीय पारिस्थितिक कार्यों और इसकी विशिष्ट बनावट के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। इन चार मुख्य वर्गों के अलावा, एक और वर्ग को स्क्रब के रूप में भी जाना जाता है और शेष क्षेत्र गैर–वन के अंतर्गत आता है।

सरणी 8.1: वर्गीकरण योजना

क्र.सं	प्रकार	विशेषताए / विवरण	क्षेत्र	
			वर्ग किमी	%

1.	अति सघन वन	सभी भूमि क्षेत्र (मैंग्रोव कवर सहित) जहाँ वृक्ष वितान घनत्व (Canopy Density) 70% और उससे अधिक है।	99, 278	3.02
2.	मध्यम सघन वन	सभी भूमि क्षेत्र (मैंग्रोव कवर सहित) जहाँ वृक्ष वितान घनत्व 40% और उससे अधिक लेकिन 70% से कम है।	3,08,472	9.39
3.	खुले वन	सभी भूमि क्षेत्र (मैंग्रोव कवर सहित) जहाँ वृक्ष वितान घनत्व 10% और उससे अधिक लेकिन 40% से कम है।	3,04,499	9.26
Total			7,12,249	21.67
4.	झाड़ी	सभी अपर्याप्त वृक्ष वृद्धि मुख्य रूप से छोटे या कमजोर पेड़ों वाले वन भूमि क्षेत्र जहाँ वृक्ष वितान घनत्व 10% से कम है।	46,297	1.41
5.	गैर–वन	कोई भी क्षेत्र जो उपरोक्त वर्गों में शामिल नहीं है	25,28,923	76.92
कुल भौगोलिक क्षेत्र			32,87,469	100.00

(स्रोतः Indian State of Forest Report, 2019)

आप सरणी 8.1 से अध्ययन कर सकते हैं कि मध्यम सघन वन में क्षेत्रफल का सबसे बड़ा अनुपात 9.39% है, इसके बाद 9.29% क्षेत्र के साथ खुले वन और केवल 3.02% क्षेत्र के साथ अति सघन वन हैं। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि तीन–चौथाई से अधिक क्षेत्र गैर–वनाच्छादित है अर्थात किसी भी वन आवरण से रहित है। स्क्रब कुल भौगोलिक क्षेत्र के 2% से भी कम पर है। यह स्वयं इंगित करता है कि भारत की राष्ट्रीय वन नीति द्वारा अनिवार्य वन के तहत कुल भौगोलिक क्षेत्र का 33% न्यूनतम सीमा देश के कई हिस्सों में नहीं पाई जाती है।

कई विद्वान ने भारतीय वनों को वर्गीकृत किया है। इनमें प्रमुख हैं एचजी चौंपियन और सेठ, कार्ल ट्रोल, पुरी और अन्य। कार्ल ट्रोल ने सात प्राकृतिक प्रकारों में हिमालयी वनस्पति क्षेत्र की एक अलग वर्गीकरण योजना भी तैयार की है। आपने चौम्पियन और सेठ द्वारा तैयार की गई योजना के अनुसार वनस्पति का अध्ययन (वन प्रकारों के लिए एक मानक वर्गीकरण योजना जैसा कि चित्र 8.1 में भी दिखाया गया है) उसी पाठ्यक्रम की इकाई 5, खंड 1 में किया। चौंपियन और सेठ (1968) की भारत में वन प्रकारों के वर्गीकरण की संशोधित योजना जलवायु मापदंडों पर आधारित एक त्रि–स्तरीय मौलिक योजना है। इसके अलावा, फ्लोरिस्टिक, एडैफिक और फिजियोग्राफिक पैरामीटर्स को भी ध्यान में रखा गया था।

इन विद्वानों के अलावा, एक प्रसिद्ध ब्रिटिश भूगोलवेत्ता एल.डी. स्टाम्प ने वर्षा की औसत वार्षिक मात्रा के आधार पर भारतीय वनों को चार प्रकारों में वर्गीकृत किया। ये चार श्रेणियां हैं 1) आर्द्र क्षेत्र में 200 सेंटीमीटर से अधिक वर्षा वाले सदाबहार वन, 2) अर्ध–आर्द्र क्षेत्र में 100 से 200 सेंटीमीटर वर्षा वाले मानसून वन, 3)शुष्क क्षेत्र में 50 से

100 सेंटीमीटर वर्षा वाले शुष्क वन और, 4) 50 सेंटीमीटर से कम वर्षा वाले मरुस्थलीय वन अति शुष्क क्षेत्र में आते हैं।

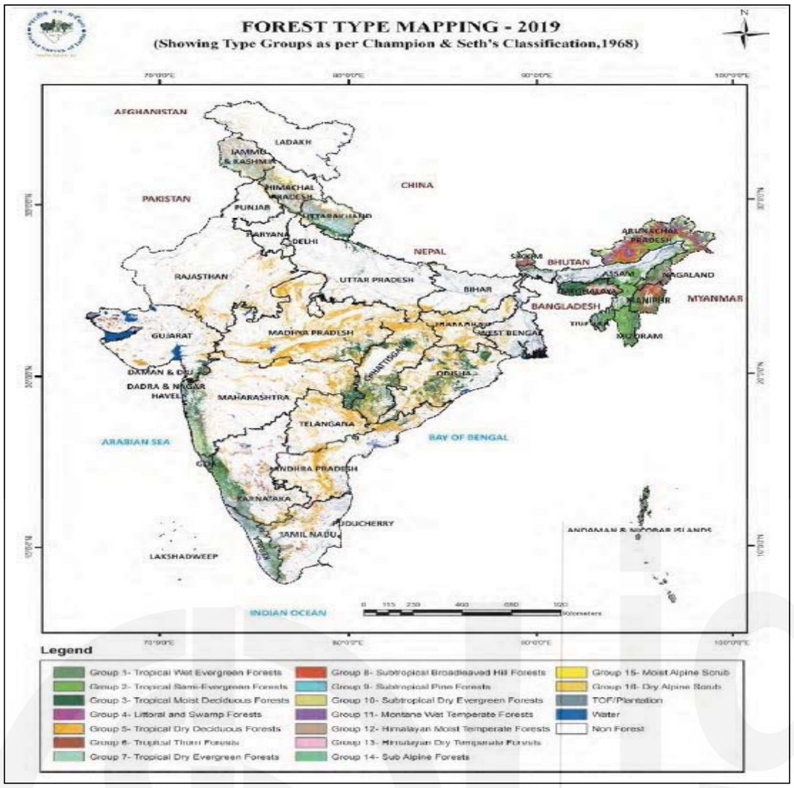

चित्र 8.1: भारत के वन प्रकार।

(स्रोत: Indian State of Forest Report, 2019)

चित्र 8.2। भारत में कुछ प्रकार के वनों को दर्शाता है। उपरोक्त योजनाओं के अलावा, हम इस इकाई में भारत में प्रचलित लघु वर्गीकरण योजनाओं के बारे में चर्चा करेंगे। ये प्रशासनिक, स्वामित्व की स्थिति, संरचना और उपयोग (दोहन) आदि पर आधारित हैं।

1. वैधानिक आधारित वर्गीकरण: तीन श्रेणियां हैं अर्थात् i) राज्य वन (राज्य/संघ राज्य क्षेत्रों की सरकारों के पूर्ण नियंत्रण में), ii) वाणिज्यिक वन (बड़े स्तर के स्थानीय प्राधिकरण जैसे नगर निगम और बोर्ड, नगर क्षेत्र, जिला बोर्ड और ग्राम पंचायत आदि के स्वामित्व और प्रबंधन) और iii) निजी वन (निजी स्वामित्व के तहत)। पहला प्रकार सबसे बड़ा है और देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र के लगभग तीन–चौथाई से अधिक भाग को कवर करता है। दूसरा और तीसरा प्रकार एक साथ देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र के लगभग 10% से कम को कवर करता है।

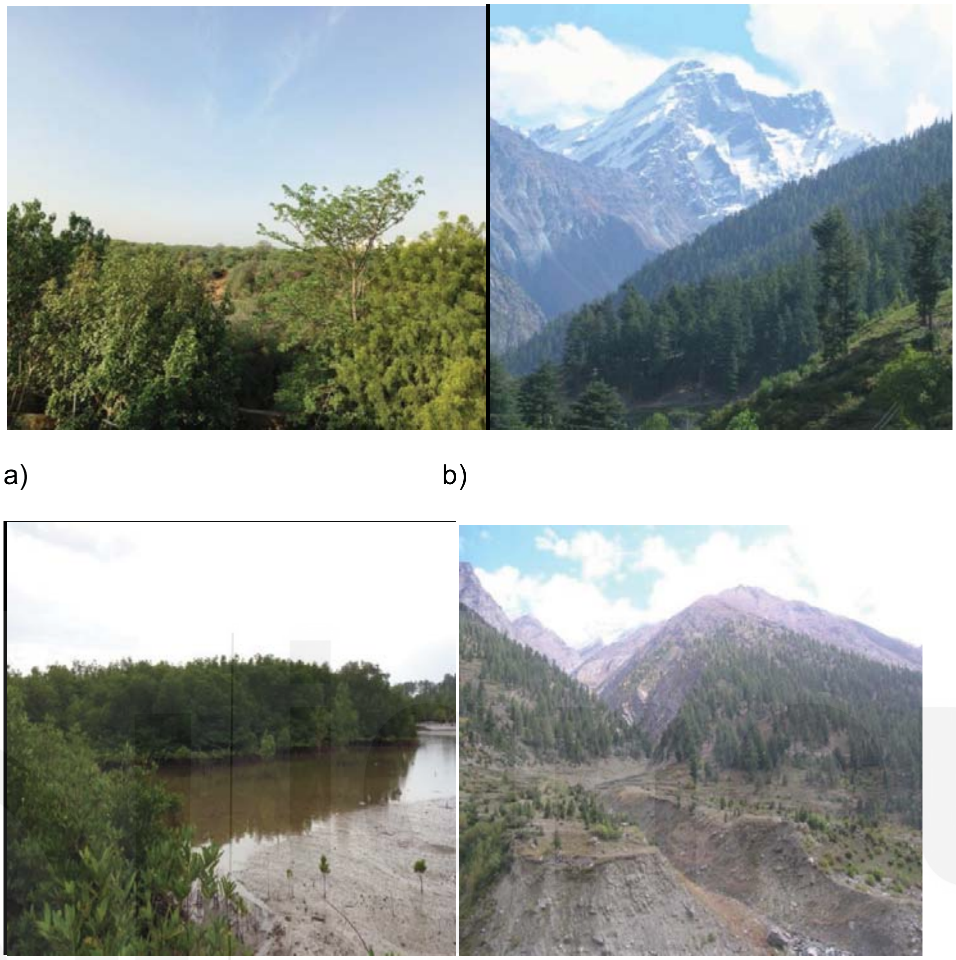

a) b)

चित्र 8.2: कुछ वन प्रकार) उष्णकटिबंधीय पर्णपाती, इ) शुष्क शीतोष्ण, ब) मैंग्रोव और क) शुष्क अल्पाइन।

2. प्रशासन आधारित वर्गीकरण: प्रशासन के आधार पर वर्गीकृत वन क्षेत्र के प्रकार का मुख्य उद्देश्य वृक्षों और वनों के अंधाधुंध विनाश को रोकना है। इन्हें तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है 1) आरक्षित 2) संरक्षित और 3) अवर्गीकृत वन। पहले दो प्रकार के वन स्थायी वनों का हिस्सा हैं जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 54% और 19% है, जबकि अंतिम श्रेणी में लगभग 15% क्षेत्र है। यह वर्गीकरण योजना भारत की राष्ट्रीय वन नीति 1988 में परिकल्पित कुल भौगोलिक क्षेत्र का एक तिहाई वन कवर के अंतर्गत क्षेत्र के वांछित अनुपात को लाने के लिए एक वैधानिक प्रावधान भी प्रदान करती है। कुल भौगोलिक क्षेत्र के अनुपात के रूप में इन तीन विभिन्न श्रेणियों के वनों का राज्यवार और केंद्र शासित प्रदेशवार वितरण तालिका 8.2 में दिखाया गया है।

सरणी में आप देख सकते है कि आरक्षित वन के अंतर्गत सिक्किम 76% के साथ पहला स्थान है। इसके बाद अंडमान और निकोबार द्वीप समूह (68.04%), उत्तराखंड (49.64%), दादरा और नगर हवेली (40.53%) और त्रिपुरा (39.81%) हैं। केवल तीन राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में वृहद मात्रा में आरक्षित वन हैं, जो कुल भौगोलिक क्षेत्र के 33% से अधिक को वन कवर के तहत लाने के राष्ट्रीय सीमा मानदंड को पूरा करते हैं। शेष राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों का दर्ज क्षेत्र इस सीमा से कम है। हालाँकि, नागालैंड राज्य और चंडीगढ़, दमन और दीव, लक्षद्वीप और पुडुचेरी जैसे कुछ केंद्र शासित प्रदेशों ने आरक्षित वनों की श्रेणी के अंतर्गत कोई क्षेत्र नहीं हैं। संरक्षित वनों की दूसरी श्रेणी

में, केवल एक राज्य अर्थात् हिमाचल प्रदेश ने सबसे बड़ा अनुपात यानी राष्ट्रीय सीमा मूल्य से अधिक 59.51 प्रतिशत दर्ज किया। शेष राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों ने अलग–अलग अनुपात में इस सिमा से कम दर्ज किया है। अवर्गीकृत वनों की अंतिम श्रेणी में, मणिपुर ने अधिकतम अनुपात (50.60%) दर्ज किया, इसके बाद नागालैंड (50. 60%), अरुणाचल प्रदेश (37.06%) और मेघालय (37.32%) का स्थान रहा। शेष राज्यों में क्षेत्रफल का अनुपात राष्ट्रीय औसत से कम दर्ज किया गया है। कुछ राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों ने अवर्गीकृत वनों के अंतर्गत कोई क्षेत्र नहीं हैं।

सरणी 8.2: वनों के विभिन्न वर्गों के अंतर्गत क्षेत्रफल का अनुपात

क्र. सं	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	भौगोलिक क्षेत्र	वनों की विभिन्न श्रेणियां			आरक्षित वन का प्रतिशत	संरक्षित वन का प्रतिशत	अवर्गीकृत वन का प्रतिशत
			आरक्षित वन	संरक्षित वन	अवर्गीकृत वन			
1.	आंध्र प्रदेश	1,62,968	31,959	5,069	230	19.61	3.11	0.14
2.	अरुणाचल प्रदेश	83,743	10,589	9,779	31,039	12.64	11.68	37.06
3.	असम	78,438	17,864	0	8,968	22.77	0.00	11.43
4.	बिहार	94,163	693	6,183	1	0.74	6.57	0.00
5.	छत्तीसगढ	1,35,192	25,782	24,036	9,954	19.07	17.78	7.36
6.	दिल्ली	1,483	78	24	0	5.26	1.62	0.00
7.	गोवा	3,702	253	0	972	6.83	0.00	26.26
8.	गुजरात	1,96,244	14,373	2,886	4,388	7.32	1.47	2.24
9.	हरियाणा	44,212	249	1,158	152	0.56	2.62	0.34
10.	हिमाचल प्रदेश	55,673	1,898	33,130	2,005	3.41	59.51	3.60
11.	जम्मू और कश्मीर	2,22,236	17,643	2,551	36	7.94	1.15	0.02
12.	झारखंड	79,716	4,387	19,185	33	5.50	24.07	0.04
13.	कर्नाटक	1,91,791	28,690	3,931	5,663	14.96	2.05	2.95
14.	केरल	38,852	11,309	0	0	29.11	0.00	0.00
15.	मध्य प्रदेश	3,08,252	61,886	31,098	1,705	20.08	10.09	0.55
16.	महाराष्ट्र	3,07,713	49,546	6,733	5,300	16.10	2.19	1.72
17.	मणिपुर	22,327	1,467	4,171	11,780	6.57	18.68	52.76
18.	मेघालय	22,429	1,113	12	8,371	4.96	0.05	37.32
19.	मिजोरम	21,081	4,483	0	1,158	21.27	0.00	5.49
20.	नगालैंड	16,579	234	0	8,389	1.41	0.00	50.60
21.	उड़ीसा	1,55,707	36,049	25,133	22	23.15	16.14	0.01
22.	पंजाब	50,362	44	1,137	1,903	0.09	2.26	3.78

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

23.	राजस्थान	3,42,239	12,475	18,217	2,045	3.65	5.32	0.60
24.	सिक्किम	7,096	5,452	389	0	76.83	5.48	0.00
25.	तमिल नाडु	1,30,060	20,293	1,782	802	15.60	1.37	0.62
26.	तेलंगाना	1,12,077	20,353	5,939	612	18.16	5.30	0.55
27.	त्रिपुरा	10,486	4,175	2	2,117	39.81	0.02	20.19
28.	उत्तर प्रदेश	2,40,928	12,071	1,157	3,354	5.01	0.48	1.39
29.	उत्तराखंड	53,483	26,547	9,885	1,568	49.64	18.48	2.93
30.	पश्चिम बंगाल	88,752	7,054	3,772	1,053	7.95	4.25	1.19
31.	अं एवं नि द्वीप समूह	8,249	5,613	1,558	0	68.04	18.89	0.00
32.	चंडीगढ़	114	32	0	3	28.07	0.00	2.63
33.	दादरा और नगर हवेली	491	199	5	0	40.53	1.02	0.00
34.	दमन और दीव	111	0	0	8	0.00	0.00	7.21
35.	लक्षद्वीप	30	0	0	0	0.00	0.00	0.00
36.	पुडुचेरी	490	0	2	11	0.00	0.41	2.24
कुल		**32,87,469**	**4,34,853**	**2,18,924**	**1,13,642**	**13.23**	**6.66**	**3.46**

(स्रोतः Computed from India State of Forest Report, 2019)

3. स्वामित्व आधारित वर्गीकरणः देश भर में राज्य और केंद्र शासित प्रदेश के वन विभागों के माध्यम से वनों को नियंत्रित किया जाता है। कुछ अलग उदाहरणों में, वनों का एक छोटा अनुपात उद्यमियों या कॉर्पोरेट घरानों के स्वामित्व में होता है जो वन आधारित उद्योगों जैसे लकड़ी और लुगदी, राल और अन्य आदि में लगे होते हैं। इसके अलावा, भारत के कुछ राज्यों वन का एक छोटा अनुपात लगभग एक : से कम निजी तौर पर व्यक्तियों के स्वामित्व में हैं।

4. संरचना आधारित वर्गीकरणः यह योजना वन की आनुवंशिक संरचना पर आधारित है। दो मुख्य प्रकारों की पहचान की जाती है जैसे 1) शंकुधारी और 2) चौड़ी पत्ती। आप पहले ही खंड 1 की इकाई 5 में इन दो प्रकार के वनों के साथ–साथ उनकी विशिष्ट विशेषताओं के बारे में विस्तार से पढ़ चुके हैं।

5. उपयोग आधारित वर्गीकरणः इस योजना के आधार पर वनों को तीन व्यापक वर्गों में वर्गीकृत किया गया है। ये हैं उपयोगी वन, संभावित उपयोग वाले वन और अन्य वन हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि हमारे वन संसाधनों का पचास प्रतिशत से अधिक मुख्य रूप से गैर–लकड़ी संसाधनों के लिए उपयोग योग्य है। सम्पूर्ण का लगभग एक–चौथाई अनुपात में उपयोग की संभावना होती है। पहले दो प्रकार के उपयोगी और संभावित रूप से उपयोगी वन क्षेत्र उत्तर–पूर्व में अरुणाचल प्रदेश, असम और त्रिपुरा राज्यों में फैले हुए हैं।

इसके अलावा, वन के अन्य रूपों में से एक 'मैंग्रोव' भी भारत में पाया जाता है। यह उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय अंतर–ज्वारीय क्षेत्रों में पाए जाने वाले लवण सहिष्णु किस्म के पौधे समुदाय में है जो तीव्र वायु वेग, उच्च तापमान और दलदली अवायवीय मृदा का सामना कर सकता है। अन्य पादप समुदायों के मामले में ऐसी सभी स्थितियाँ प्रतिकूल हैं। मैंग्रोव जैव विविधता में बहुत समृद्ध है और कार्बन सिंक के प्राकृतिक तंत्र के रूप में कार्य करता है। यह मैंग्रोव वन क्षेत्रों के पास रहने वाले कई आदिवासी और गैर–आदिवासी समुदायों के लिए आजीविका का एक बहुत अच्छा स्रोत है। समशीतोष्ण पौधों के विपरीत उनके पास एक विशिष्ट जटिल जड़ प्रणाली है जो तटों से सटे भूमि को तूफान, सुनामी और मृदा कटाव से बचाने में मदद करती है। वे स्थलीय समुद्री पारिस्थितिक तंत्र के बीच एक प्रकार के सेतु के रूप में कार्य करते हैं। मैंग्रोव वन देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 0.15%, वैश्विक और एशिया के मैंग्रोव का लगभग 3 और 8% भाग पर है। यह मुख्य रूप से 9 राज्यों और 3 केंद्र शासित प्रदेशों तक सीमित है, जिनकी पश्चिमी और पूर्वी घाट के दोनों ओर समुद्र तट है। ये राज्य हैं आंध्र प्रदेश, गोवा, गुजरात, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, ओडिशा, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और केंद्र शासित प्रदेशों में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दमन और दीव और पुडुचेरी आदि शामिल हैं। पश्चिम बंगाल में गुजरात और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के बाद सबसे बड़ा अनुपात है। समय के साथ जनसंख्या विस्फोट, औद्योगीकरण और नगरीकरण की तिहरी घटनाओं और 1990 के दशक के बाद एलपीजी ड्राइव की शुरुआत के साथ, बढ़ती मानवजनित हस्तक्षेपों के कारण मैंग्रोव वन दबाव और खतरे में आ गया। लकड़ी, ईंधन की लकड़ी, चारा और कई प्रकार की उपज (मोम, शहद, टैनिन और मछली आदि) को नाजुक पारिस्थितिक संतुलन, जल विज्ञान और जलवायु संबंधी विषयो के बारे में व्यापक सोचे के वगैर बड़ी मात्रा में निकाला जाता है।

बोध प्रश्न 2

वनों के प्रशासन आधारित वर्गीकरण की संक्षेप में चर्चा कीजिए।

8.4 भारतीय वनों से संबंधित मुद्दे

अठारहवीं शताब्दी के दौरान औद्योगिक क्रांति के समय से, मानवजनित गतिविधियों में तीव्र गति से विस्तार होने लगा है। जनसंख्या वृद्धि या जनसंख्या विस्फोट के अनुरूप, मानव को विभिन्न घरेलू और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए अधिक से अधिक भूमि की आवश्यकता होती है। इस प्रकार भूमि की लगातार बढ़ती हुई आवश्यकता और मांग ने भौगोलिक क्षेत्रों में कुछ भौतिक और प्राकृतिक बाधाओं (जैसे नदियों और पहाड़ों आदि) के अलावा वृहद् पैमाने पर फैले वनों और वन संसाधनों को तेजी से साफ करना आवश्यक बना दिया। पहले, इसमें मानव समाजों तथा राष्ट्रों की घरेलू, कृषि और औद्योगिक जरूरतों को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार के पेड़ों को जलाना, काटना और साफ करना शामिल था। इस प्रक्रिया में औद्योगिक क्रांति के बाद मांग बढ़ने और जीवन जीने के आधुनिक तरीके की आवश्यकता पूर्ति के कारण तीव्र वृद्धी आई। तकनीकी नवाचारों, पूंजी निवेश तथा बढ़ती आबादी के साथ पेड़ों और वन संसाधनों के बड़े पैमाने पर दोहन के लिए दो कारकों ने प्रमुख भूमिका निभाई और जोर दिया। वन भूमि को आश्रय के लिए, अनाज और गैर–अनाज खाद्य पदार्थ उगाने के लिए,

कारखानों, औद्योगिक इकाइयों की स्थापना और विभिन्न बुनियादी सुविधाओं (सड़कों, रेलवे, सरकारी कार्यालयों, बाजारों और कई अन्य) के निर्माण के लिए साफ किया गया। मानव की ऐसी सभी आवश्यकताओं ने विश्व के अन्य भागों की तरह भारत में वन संसाधनों के बड़े पैमाने पर दोहन का रास्ता तैयार किया। दुनिया में कुछ ही देश हैं जो प्रचलित राष्ट्रीय मानदंडों के अनुसार आदर्श वन आवरण बनाए रखते हैं। कुछ देश अपने नागरिकों को विशेष रूप से किसानों को अपनी कृषि भूमि (संभवतः कृषि योग्य अपशिष्ट और ढलान वाली भूमि) को वन आच्छादन के तहत लाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। ऐसे कुछ देश स्कैंडिनेवियाई क्षेत्र में स्थित हैं।

अब तक आप समझ ही गए होंगे कि मानवजनित गतिविधियों ने वन संसाधनों का भारी मात्रा में क्षरण हुआ है। अब, हम निम्नलिखित उप–भागों में भारतीय वनों और वन संसाधनों से संबंधित कुछ प्रासंगिक मुद्दों पर चर्चा करेंगे।

8.4.1 निर्वनीकरण

यह विभिन्न प्रयोजनों के लिए वृक्षों कटाई या अंधाधुंध कटाई को संदर्भित करता है। 1850 में औद्योगिक क्रांति के प्रारम्भ के साथ, वन–कटाई का मुद्दा पर्यावरण के लिए एक बड़े खतरे के रूप में सामने आने लगा है। इससे तापमान वृद्धि के कारण भौगोलिक, जलीय तथा जलवायु संबंधी प्रारूप को नुकशान पहुंचा जिसके परिणामस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन हुआ है। निर्वनीकरण उपनिवेश युग से चली आ रही है जब गंतव्य और उपनिवेशवादी ताकतों की उत्पत्ति दोनों स्तर पर अर्थव्यवस्था की विभिन्न जरूरतों को पूरा करने के लिए प्राकृतिक वनों के विशाल इलाकों को बड़े पैमाने पर काट दिया गया था। हिमालय के ऊंचाई वाले पहाड़ी ढलानों, विशेष रूप से उत्तरी भागों और अन्य जगहों पर प्राकृतिक वन आवरण कम होने लगा, परिणामस्वरूप लगभग हर साल कई बारहमासी हिमालयी नदियों में बाढ़ आ गई। इस तरह की बड़े पैमाने पर अप्राकृतिक निर्वनीकरण प्रक्रिया न केवल फूलों और जीवों की प्रजातियों के अपरिवर्तनीय क्षति को बढ़ाती है बल्कि ग्रह पृथ्वी की प्रमुख प्रणालियों (जैसे कार्बन चक्र, नाइट्रोजन चक्र, हाइड्रोलॉजिकल चक्र, आदि) में चक्रीय प्रक्रियाओं में भी बाधा पहुँचती है। उदाहरण के लिए, यह न केवल कई पक्षियों और कीड़ों के प्राकृतिक आवास को छीन लेता है बल्कि कई जंगली जानवरों को भी बेघर कर देता है। इसके कारण, हाल के दिनों में ग्रामीण और शहरी दोनों अधिवासों में मानव–पशु संघर्ष भी देखने को मिला है। घर निर्माण, रेलवे लाइन, फर्नीचर बनाने, बांध निर्माण और अन्य विकास परियोजनाओं के लिए लकड़ी की मांगों को पूरा करने के लिए भी वृहद् पैमाने पर वनों की कटाई हुई। इनके अलावा, कुछ अन्य प्रमुख कारणों में स्थानांतरित खेती, अवैध अतिक्रमण, पेड़ों की अवैध कटाई, जंगल की आग और अतिचारण आदि शामिल हैं। वृक्षों की कटाई रोकने के लिए कई सामाजिक सामुदायिक स्तर के आंदोलनों किया गया था जिसमे चिपको और अपिको आंदोलन प्रमुख हैं।

8.4.2 वनरोपण

यह वृक्षों के रोपण को संदर्भित करता है जिसका उद्देश्य परित्यक्त और निम्नीकृत कृषि और अन्य भूमि को वनो के अंतर्गत पुनः लाने और परिवर्तित करना है। इसमें प्राकृतिक या कृत्रिम दोनों माध्यमों को अपनाकर गैर–वन क्षेत्रों में वृक्षारोपण भी शामिल है। वनीकरण की प्रक्रिया में वन के एक हिस्से में अवक्रमित वन आवरण को पुनः जीवंत

करने के लिए पुनर्वनीकरण प्रक्रिया के माध्यम से किए गए वृक्षारोपण को भी शामिल किया जा सकता है।

भारत में वनीकरण की कई सफल दृष्टांत हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, भारत में बिश्नोई समुदाय द्वारा वनीकरण की सामाजिक–सांस्कृतिक रूप से समृद्ध भक्ति प्रथाओं में से एक का अभ्यास किया जा रहा है। राजस्थान राज्य के राजसमंद जिले में स्थित पिपलांत्री के ग्रामीणों ने 2006 से प्रत्येक नवजात कन्या के जन्म उत्सव में 111 पेड़ लगाने की अनूठी प्रथा शुरू की है। इस महान परोपकारी कार्य की शुरुआत एक प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता श्री श्याम सुंदर पालीवाल (ग्राम पंचायत के सरपंच के रूप में) ने की जिसके लिए उन्हें 2021 में चौथे सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'पद्मश्री' से सम्मानित किया गया है। इनकी रचनात्मकता ने सामुदायिक भागीदारी की मदद से लगातार प्रयासों के साथ अग्रणी अभियान को उत्प्रेरित करने में मदद की, जो जल संरक्षण के साथ बालिकाओं के संरक्षण और उनके सशक्तिकरण, वानिकी के महत्वपूर्ण मुद्दों से संबंधित है। इसने एक तरफ रेगिस्तानी परिदृश्य पर हरियाली बढ़ाने और साथ ही भूजल जलभृत को रिचार्ज करने में भी मदद की है जिससे चारागाहों में वृद्धि हुई है।

वनीकरण के एक घटक के साथ प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन का एक और सफल उदाहरण (खैर पेड़ों की तेजी से बढ़ती व्यावसायिक किस्म के बड़े पैमाने पर रोपण के माध्यम से) 1976 में शुरू किए गए संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम के अंतर्गत हरियाणा राज्य के अंबाला जिले में शिवालिक पहाड़ियों की तलहटी में स्थित 'सुखोमाजरी' गाँव से संबंधित है। पूरे देश में, संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम सामुदायिक भागीदारी के साथ हरित आवरण को बढ़ाने में मदद कर रहे हैं। राष्ट्रीय वन अधिनियमों और नीतियों में वनरोपण एक बहुत ही आवश्यक घटक है जिसे राष्ट्रीय वानिकी कार्यक्रमों के माध्यम से अवक्रमित वन संसाधनों के नवीनीकरण के लिए अधिनियमित किया गया है। इस तरह के कार्यक्रमों में तीव्र गति से बढ़ने वाली किस्मों के वृक्षारोपण पर जोर दिया गया जो आर्थिक और औद्योगिक मूल्य वाले वन (लकड़ी) आधारित उद्योगों की जरूरतों को पूरा कर सके। इसके अलावा, देश भर में वन विभागों द्वारा हरित आवरण को पर्याप्त रूप से बढ़ाने के लिए कई वनरोपण कार्यक्रम शुरू किए गए हैं।

सरकार के राष्ट्रीय वनरोपण कार्यक्रम के अंतर्गत वृक्षरोपण के प्रयास चल रहे हैं। भारत सरकार वन क्षेत्र को बढ़ाने में भी मदद कर रही है।

8.4.3 संरक्षण

सामान्य बोलचाल की भाषा में, संरक्षण का अर्थ पृथ्वी पर पाए जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने के लिए एक व्यक्ति, समाज और संस्थानों (सरकारी और गैर–सरकारी दोनों) द्वारा किए गए जागरूक एवं सार्थक प्रयासों से है। दूसरे शब्दों में, संरक्षण प्राकृतिक पर्यावरण के धारणीयता के लिए पर्यावरण तथा और भू–विविधता को संरक्षित करने के लिए अप्राकृतिक और अवैज्ञानिक विनाश को कम करने के लिए एक प्रकार का प्रबंधन तंत्र है। इस सन्दर्भ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा गढ़े गए सबसे प्रसिद्ध सिद्धांतों में से एक को उद्धृत किया जाता है, जिसमें कहा गया है कि धरती माता के पास प्रत्येक व्यक्ति की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त है, लेकिन लालच को नहीं। सरल शब्दों में, यह ब्रुंटलैंड आयोग (संयुक्त राष्ट्र की) की परिभाषा के अनुरूप है, *जिसे बाद में सतत विकास की अवधारणा के साथ विकसित किया गया है*

जिसमे 'विकास को वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता किये बिना पूरा करना' है।

जनसंख्या में तीव्र वृद्धि, चक्रीय रूप में कृषि भूमि के विस्तार, औद्योगीकरण और शहरीकरण के लिए बहुआयामी मांग उत्पन्न करता है। अवैज्ञानिक औद्योगिक और शहरी विकास गतिविधियों के साथ बड़ी आबादी के कारण पर्यावरणीय समस्याओं की एक श्रृंखला उत्पन्न हुई है जिसमें घटते वन्यजीव (कुछ प्रजातियों को विलुप्तता जो पारिस्थितिकी तंत्र के निर्वाह में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं), वायु और जल प्रदूषण, वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधन (कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस) और अन्य का अत्यधिक उपयोग शामिल हैं। परिणामस्वरूप, इस तरह की अनियंत्रित गतिविधियाँ स्थानिक और वैश्विक स्तर पर पारिस्थितिक तंत्र से जुड़े मुद्दों और समस्याओं को उत्पन्न कर रही हैं जिनमें मरुस्थलीकरण, समृद्ध प्राकृतिक जैव विविधता व्यवस्था की तबाही, जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग और ओजोन परत की कमी आदि शामिल हैं।

वन और वन संसाधनों के संरक्षण के लिए FSI तथा अन्य एजेंसियों द्वारा कई नीतियां और कार्यक्रम तैयार की गई हैं। इन कार्यक्रमों को पारिस्थितिकी तंत्र के प्रकार और इसकी पारिस्थितिक संवेदनशीलता को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया है। भारत में, एक जातीय समुदाय 'बिश्नोई', वृक्षों के संरक्षण तथा अन्य जातीय जनजातीय समूहों के साथ इसकी पूजा भी करते हैं। वृक्षों और वनों का उनके जीवन में एक विशेष स्थान है। इसके अलावा, व्यक्तिगत स्तर पर तथा और गैर–सरकारी संगठनों द्वारा कई सामाजिक वनरोपण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

भारत सरकार ने राष्ट्रीय वन नीति में परिकल्पित कुल भौगोलिक क्षेत्र के न्यूनतम एक–तिहाई हिस्से को हरित आवरण के अंतर्गत लाने के उदेश्य से देश में वन संसाधनों के संरक्षण के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए हैं। इन पर संक्षेप में चर्चा की गई है:

वन संरक्षण : यह वनाग्नि के प्रतिकूल प्रभावों से निपटने के लिए एक केंद्र प्रायोजित योजना है। इस योजना ने 'जंगल की आग की रोकथाम और प्रबंधन' शीर्षक से एक और व्यापक योजना तैयार की।

राष्ट्रीय वनरोपण कार्यक्रम योजना : इसका प्रमुख उद्देश्य सक्रिय सामुदायिक भागीदारी के साथ प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा और संरक्षण करना, भूमि क्षरण, वनों की कटाई और जैव विविधता के नुकसान को रोकना है।

राष्ट्रीय ग्रीन इंडिया मिशन : यह जलवायु परिवर्तन के मुद्दे से निपटने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना के आठ मिशनों में से एक का हिस्सा है। जलवायु परिवर्तन के सामना करने के लिए न्यून (हल्के) आवरण का संरक्षण एवं वृद्धि करना इसका मुख्य उद्देश्य है।

वानिकी अनुसंधान: यह भारत सरकार के समर्पित अनुसंधान संस्थान हैं। कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं:

भारतीय वानिकी अनुसंधान और शिक्षा परिषद (ICFRE) : यह देहरादून में स्थित, वानिकी के सभी घटकों से संबंधित वानिकी अनुसंधान, शिक्षा और विस्तार सेवाओं के समग्र विकास के लिए 1987 में बनाई गई एक स्वायत्त शीर्ष निकाय है। विभिन्न वन क्षेत्रों और वातावरण में वनों के असंख्य पहलुओं के अध्ययन के लिए, आईसीएफआरई के अंतर्गत नौ अनुसंधान संस्थान और चार केंद्र हैं। ये इस प्रकार हैं:

1. वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

2. उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

3. शुष्क वन अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

4. हिमालय वन अनुसंधान संस्थान, शिमला।

5. वन उत्पादकता संस्थान, रांची

6. वन जैव विविधता संस्थान, हैदराबाद

7. वन आनुवंशिकी और वृक्ष प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर

8. वर्षा वन अनुसंधान संस्थान, जोरहाट

9. काष्ठ विज्ञान और प्रौद्योगिकी संस्थान, बेंगलुरु

10. कौशल विकास वन अनुसंधान केंद्र, छिंदवाड़ा

11. बांस एवं रतन वन अनुसंधान केंद्र, आइजोल

12. पारिस्थितिकी–पुनर्वास वन अनुसंधान केंद्र, प्रयागराज

13. आजीविका विस्तार वन अनुसंधान केंद्र, अगरतला

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी (IGNFA) : यह वन प्रबंधन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित वन कर्मियों को पेशेवर प्रशिक्षण प्रदान करती है।

भारतीय वन संसाधनों के संरक्षण से संबंधित कुछ प्रमुख नीतियां और अधिनियमः

1. भारतीय वन अधिनियम 1927ः यह अधिनियम वनों से संबंधित कानून के समेकन के रु में बनाया गया है। यह लकड़ी और अन्य वन उत्पादों पर लगने वाले शुल्क के साथ वन उत्पादों के पारगमन से संबंधित है।

2. वन संरक्षण अधिनियम, 1980ः यह अधिनियम राष्ट्र के वन संसाधनों के संरक्षण के उद्देश्य से बनाया गया था। इसके द्वारा वन भूमि को गैर–वानिकी उपयोग में बदलने के लिए केंद्र सरकार की पूर्व अनुमति आवश्यक है। इसका मूल उद्देश्य गैर वानिकी उपयोगों के लिए वन भूमि के अंधाधुंध मोड़ को विनियमित करना तथा देश की विकासात्मक आवश्यकताओं और प्राकृतिक विरासत के संरक्षण के बीच एक तार्किक संतुलन बनाए रखना है। इस अधिनियम के लागु होने के बाद भूमि परिवर्तन दर में अधिनियम पूर्व प्रति वर्ष 1.43 लाख हेक्टेयर से वर्तमान समय में 15000 हेक्टेयर प्रति वर्ष हो गई है। विकासात्मक कार्य जिसमे भूमि परिवर्तन की जरुरत है उनमे मुख्य रूप से पेयजल परियोजनाएं, सिंचाई परियोजनाएं, पारेषण लाइनें, रेलवे लाइनें, सड़कें, बिजली परियोजनाएं, रक्षा संबंधी परियोजनाएं, खनन आदि शामिल हैं। यह अधिनियम प्रतिपूरक वनीकरण, जलग्रहण क्षेत्र प्रशोधन योजना, वन्यजीव आवास सुधार योजना और पुनर्वास योजना आदि के प्रावधान के कार्यान्वयन को भी अनिवार्य करता है। यह मुख्य रूप से वन के गैर–वानिकी उद्देश्यों में विपथन (परिवर्तन) के दुष्प्रभावों को कम करने के लिए लाया गया है। इसके अलावा, क्षतिपूर्ति वनरोपण कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन की संपूर्ण निगरानी के लिए एक राष्ट्रीय स्तर का प्राधिकरण भी गठित किया गया है जिसे

'क्षतिपूरक वनीकरण कोष प्रबंधन एवं योजना प्राधिकरण (CAMPA)' के रूप में जाना जाता हैं।

3. राष्ट्रीय वन नीति, 1988: इसका मुख्य उद्देश्य देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र के कम से कम एक तिहाई भाग को वनों या वृक्षों से आच्छादित करके पर्यावरणीय स्थिरता और पारिस्थितिक संतुलन के रखरखाव को सुनिश्चित करना है। इसके व्यापक कवरेज और प्रशोधन या प्रबंध के लिए, महत्व वाले समकालीन विषयगत मुद्दों को शामिल करने के लिए इसे संशोधित किया जा रहा है। इसके अलावा, यह वनों के संरक्षण और विकास के उद्देश्य से वन क्षेत्रों में और उसके आसपास रहने वाले स्थानीय समुदाय की आवश्यक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए भी अनिवार्य है।

इस नीति के कार्यान्वयन ने स्थानीय समुदायों और स्वयंसेवी संगठनों की मदद से राज्य वन विभागों (SFDs) की अधीन निम्नीकृत वन भूमि के प्रबंधन के लिए एक स्पष्ट रोडमैप विकसित करना अनिवार्य किया है। तदनुसार, राज्यों ने अपने राज्यों में संयुक्त वन प्रबंधन (JFM) के मुद्दों पर चर्चा के लिए प्रस्तावों के रूप में अपने स्वयं के दिशानिर्देश विकसित किए।

4. अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 : यह अधिनियम भारत के वन–निवासी अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों के अधिकारों को मान्यता प्रदान करने के लिए बनाया गया है।

ऊपर वर्णित अधिनियमों और नीतियों के अलावा, भारत सरकार ने 2010 में एक विशेष संस्था के रूप में **राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण** (नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल, NGT)' नामक एक अलग निकाय भी स्थापित किया गया था। आप इसके बारे में जानते होंगे। यह पर्यावरण संरक्षण, वनों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के मुद्दों से संबंधित है।

इसके अलावा, भारत वन्य जीवन और पर्यावरण के साथ–साथ वन के संरक्षण और सतत विकास से संबंधित कई अंतरराष्ट्रीय शिखर सम्मेलनों और सम्मेलनों में भी सक्रिय रूप से भाग लेता है। वानिकी के लिए प्रमुख मंचों (forum) में शामिल हैं:

- संयुक्त राष्ट्र फोरम फॉर फॉरेस्ट (UN Forum on Forest, UNFF) ;
- संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) की वानिकी समिति (COFO);
- खाद्य और कृषि संगठन (FAO) का एशिया प्रशांत वानिकी आयोग (APFC);
- अंतरराष्ट्रीय वानिकी अनुसंधान केंद्र (CIFOR);
- एशिया प्रशांत वन आक्रमणकारी प्रजाति नेटवर्क (APFISN);
- खाद्य और कृषि संगठन के अंतर्राष्ट्रीय पोप्लर आयोग (FAO);
- जलवायु परिवर्तन आदि पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन का यूएन–आरईडीडी (UN&REDD)।

वैश्विक समुदाय के साथ मिलकर इस तरह के सभी ठोस प्रयासों का उद्देश्य वन क्षेत्र को बढ़ाने के साथ जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभावों को कम करना तथा रोकना भी है।

बोध प्रश्न 3

भारत के वनों और वन संसाधनों से संबंधित किन्हीं एक प्रमुख मुद्दों पर प्रकाश डालिए?

8.5 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा :

- वन संसाधनों की विशेषताएं और भारत में उनका वितरण।
- बड़े पैमाने पर मानव समाज और राष्ट्र के लिए विभिन्न प्रकार के वन, उनकी विशिष्ट विशेषताएं, महत्व और अन्य संबद्ध पहलू।
- आपने भारतीय वनों से संबंधित विभिन्न प्रकार के समसामयिक मुद्दों का अध्ययन किया , जिसमें वन–कटाई या निर्वनीकरण, वनरोपण या वनीकरण और संरक्षण आदि शामिल हैं।
- अंत में, संक्षेप में, आपने भारत में वन संसाधनों से प्रभावित तथा इसको प्रभावित करने वाले विभिन्न पहलुओं और कारकों के बारे में जाना।

8.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. उपयुक्त उदाहरणों के साथ वन की प्रमुख विशेषताओं के बारे में चर्चा करें।
2. भारत में वनों के स्थानिक वितरण की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. भारत में वनों की विभिन्न कार्यात्मक वर्गीकरण योजनाओं की विस्तार से चर्चा कीजिए।
4. वन–कटाई प्राकृतिक पर्यावरण और मनुष्य दोनों के लिए एक गंभीर खतरा है। उपयुक्त केश अध्ययन के साथ विस्तार से बताये।

8.7 उत्तर

<u>बोध प्रश्न</u>

1. वन संसाधनों से संबंधित तीन प्रमुख विशेषताएँ या सेवाएँ हैं। ये प्राकृतिक या पारिस्थितिक, आर्थिक और सामाजिक–सांस्कृतिक आदि हैं। आर्थिक विशेषताएं या सेवाएं वन आधारित उद्योगों को उत्पाद प्रदान करती हैं, जिसमें कई महत्वपूर्ण जीवन निर्वाह उत्पाद और सेवाएं शामिल है।

2. प्रशासन आधारित वर्गीकरण मुख्य रूप से वृक्षों और वनों के अंधाधुंध और अनियंत्रित विनाश को रोकने के लिए किया जाता है। यह तीन प्रकार का होता है आरक्षित, संरक्षित और अवर्गीकृत वन।

3. वन–कटाई से तात्पर्य विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से है। इनमें कृषि, औद्योगिक, टाउनशिप, नगरीकरण और सड़कों, बांधों तथा पुलों आदि सहित कई विकासात्मक परियोजनाएं शामिल हो सकती हैं।

<u>अंत में कुछ प्रश्न</u>

1. आपके उत्तर में वन संसाधनों की प्रमुख विशेषताएं शामिल होनी चाहिए। आप भाग 8.2 का संदर्भ ले सकते हैं।

2. प्रश्न का उत्तर देते समय, स्थानिक वितरण प्रारूप पर प्रकाश डाले और अधिशेष और घाटे के संदर्भ में राष्ट्रीय औसत के साथ तुलना करें। आप भाग 8.3 का संदर्भ ले सकते हैं।

3. वनों की मुख्य श्रेणी तथा प्रत्येक वर्गीकरण योजना की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालिए। आप भाग 8.3 का संदर्भ ले सकते हैं।

4. आपके उत्तर में उपयुक्त उदाहरणों के साथ वन संसाधनों की संवदेनशील हाइड्रोलॉजिकल और भू–पारिस्थितिकी प्रणाली में हस्तक्षेप करने वाले महत्वपूर्ण और चुनौतीपूर्ण पर्यावरणीय मुद्दों को व्यापक रूप से शामिल करना चाहिए। इसमें आप किसी भी केस अध्ययन को शामिल कर सकते हैं जिससे आप अच्छी तरह परिचित हैं। आप भाग 8.4 का संदर्भ ले सकते हैं।

8.8 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

1. Tiwari R. C (2007): *Geography of India*. Allahabad: Prayag Pustak Bhawan.

2. Tirtha, Ranjit (2002): *Geography of India.* New Delhi: Rawat Publishers.

3. Hussain, M (2013): *Geography of India.* New Delhi: Tata McGraw.

4. Khullar D.R, (2000): *Geography of India*. New Delhi: Kalyani Publishers.

5. Nag, Pritvish and Sengupta, S. (2002): *Geography of India.* New Delhi: Concept Publishing Company.

6. India 2020: A Reference Annual, Publication Division, Ministry of Information and Broadcasting, Govt. of India.

7. Deshpande C.D (1992): *India: A Regional Interpretation*. New Delhi: ICSSR.

8. https://moef.gov.in/en/service/forest-wildlife/forest-3/

इकाई 9

खनिज संसाधन

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

अपेक्षित अध्ययन परिणाम

9.2 खनिज और उनकी विशेषताएं

9.3 खनिज संसाधनों का वर्गीकरण

9.4 भारत में खनिज संसाधनों का वितरण और उपयोग

खनिज संसाधनों के वितरण का स्थानिक प्रतिरूप

धात्विक खनिज संसाधनों का वितरण और उपयोग (लौह)

धात्विक खनिज संसाधनों का वितरण और उपयोग (अलौह)

अधात्विक खनिजों का वितरण और उपयोग

9.5 खनिज संसाधनों का संरक्षण

9.6 सारांश

9.7 अंत में कुछ प्रश्न

9.8 उत्तर

9.9 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

9.1 प्रस्तावना

"संसाधन आधार" के इस खंड में अब तक आपने भारत की भूमि, जल और वन संसाधनों के बारे में अध्ययन किया है। अब आप भूमि–मानव अनुपात, भूमि उपयोग क्षमता और भूमि निम्नीकरण जैसे शब्दों से परिचित हो गए हैं। आप भारत के जल संसाधनों और यहां कार्यरत कई बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं से भी अवगत हैं जो देश के जल संसाधनों का प्रबंधन करती हैं। आप वन संसाधनों और वनों से संबंधित विभिन्न मुद्दों जैसे वनों की कटाई और इसके संरक्षण से भी परिचित हो चुके हैं।

इस इकाई में आप खनिज संसाधनों के बारे में जानेंगे। 'खनिज' शब्द से परिचय आपके भूगोल की कक्षाओं में तब हुआ होगा जब आप स्कूल स्तर पर थे। तो अब आप याद कर सकते हैं कि खनिज एक निश्चित रासायनिक संरचना और पहचानने योग्य भौतिक गुणों के साथ प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला पदार्थ है। खनिजों को ईंधन, धात्विक और अधात्विक में वर्गीकृत किया गया है। ईंधन या बिजली संसाधनों पर अगली इकाई में चर्चा की जाएगी। इस इकाई में, भाग 9.2 आपको खनिजों और उनकी विशेषताओं का संक्षिप्त परिचय देगा। चूंकि खनिजों को भौतिक और रासायनिक गुणों के आधार पर विभिन्न समूहों में वर्गीकृत किया जाता है, इसलिए खंड 9.3 आपको खनिज संसाधनों के विभिन्न वर्गों से परिचित कराएगा। मानव गतिविधि के लगभग सभी क्षेत्रों में खनिजों का उपयोग किया जाता है। किसी भी देश की सम्भावित संपत्ति खनिज संसाधनों की प्राकृ

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

तिक निधि पर निर्भर करती है। इसलिए, आपके लिए खनिज संसाधनों और उनके वितरण और उपयोग के बारे में अध्ययन करना महत्वपूर्ण है। खंड 9.4 भारत में विभिन्न खनिज संसाधनों के वितरण का विस्तृत विवरण देता है। अधिकांश खनिज संसाधन भूमि के नीचे पाए जाते हैं। इन संसाधनों के निष्कर्षण के लिए उचित उपयोग के लिए उच्च स्तर की सुस्पष्टता की आवश्यकता होती है। यह खंड आपको खनिज संसाधनों के उपयोग से भी परिचित कराता है। आपको यह भी पता होना चाहिए कि खनिज सीमित और अनवीकरणीय संसाधन हैं। इसलिए हमें इसके विवेकपूर्ण उपयोग और आने वाली पीढ़ियों के लिए इसे संरक्षित करने के उपायों पर भी ध्यान देना चाहिए। अंत में, खंड 9.5 खनिज संसाधनों के संरक्षण पर चर्चा कर रहा है।

अपेक्षित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आपः

- खनिजों को परिभाषित और उनकी विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे;
- खनिजों को वर्गीकृत और उनके बीच अंतर कर सकेंगे;
- भारत में खनिजों के वितरण का वर्णन कर सकेंगे;
- इन खनिज संसाधनों के निष्कर्षण और उपयोग की विभिन्न विधियों का विश्लेषण कर सकेंगे; तथा
- मौजूदा संरक्षण उपायों का आकलन और साथ ही इन मूल्यवान गैर–नवीकरणीय संसाधनों के भविष्य के संरक्षण के लिए संभावित विकल्प दे सकेंगे।

9.2 खनिज और उनकी विशेषताएं

खनिज एक निश्चित रासायनिक संरचना और पहचानने योग्य भौतिक गुणों के साथ प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थ हैं। हम सभी अपने दैनिक जीवन में खनिजों का उपयोग करते हैं। सुबह–सुबह हम जिस टूथपेस्ट का इस्तेमाल करते हैं उसमें मिनरल्स होते हैं, हम जो कॉस्मेटिक्स इस्तेमाल करते हैं वे कई तरह के मिनरल्स से बने होते हैं। हम जो खाना खाते हैं, जो रत्न पहनते हैं, जिस घर में हम रहते हैं, जिस ऑटोमोबाइल में हम यात्रा करते हैं, और यहां तक कि सेल फोन जो हम अक्सर इस्तेमाल करते हैं, वे खनिजों से बने होते हैं। हमारा पूरा शरीर इतने सारे खनिजों से बना है। यह इस हद तक है कि हम खनिजों पर निर्भर हैं। खनिजों की कुछ विशिष्ट विशेषताएं होती हैं जिनके बारे में हमें पता होना चाहिए। यद्यपि पृथ्वी पर हजारों खनिजों की पहचान की गई है, उनमें से केवल कुछ का ही पृथ्वी के अधिकांश क्षेत्र पर कब्जा हैं। आइए पहले हम खनिज की कुछ मूलभूत विशेषताओं के बारे में जानें।

एक खनिज के लिए आवश्यक शर्तों को पूरा करने के लिए, किसी भी पदार्थ में पांच बुनियादी विशेषताएं होनी चाहिए। ये हैं i) स्वाभाविक रूप से होने वाली ii) अकार्बनिक iii) ठोस iv) निश्चित रासायनिक संरचना और v) क्रिस्टलीय संरचना। आइए अब उनमें से प्रत्येक पर संक्षेप में चर्चा करें।

i. प्राकृतिक रूप से घटित

खनिज प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थ हैं और मनुष्यों द्वारा नहीं बनाए जाते हैं। कुछ पदार्थ जो प्रयोगशाला में तैयार किए जाते हैं वे खनिजों की तरह लग सकते हैं,

लेकिन वे खनिज नहीं हैं। इसी तरह कुछ प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थ खनिज होने की पुष्टि नहीं करते हैं क्योंकि उनमें खनिजों की एक या दो विशेषताएं हो सकती हैं लेकिन उनमें खनिजों की अन्य बुनियादी विशेषताओं की कमी होती है।

ii. अकार्बनिक

खनिज अकार्बनिक होते हैं, अर्थात वे किसी भी जीवित जीव से नहीं बने होते हैं और न ही वे किसी भी वर्ग के कार्बनिक यौगिकों जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा से संबंधित होते हैं जो जीवित प्राणियों द्वारा बनाए जाते हैं। इसलिए उनमें कार्बन हो सकता है लेकिन खनिजों में कार्बन हाइड्रोजन के साथ लंबी श्रृंखला बनाने के लिए बंधन नहीं करता है जैसे कि जीवित जीवों में कार्बोहाइड्रेट और वसा में होता है ।

iii. ठोस

खनिज मानक तापमान और दबाव पर ठोस होते हैं। उनके पास उच्च मात्रा में क्रम होता है, अर्थात परमाणु घनिष्ठ रूप से बंधे होते हैं जो उन्हें एक निश्चित आयतन और आकार और एक ठोस की कठोर संरचना देता है। इसका मतलब यह है कि एक खनिज में बंधन इतना मजबूत होता है कि कण तरल और गैसीय पदार्थों की तरह गति करने के लिए स्वतंत्र नहीं होते हैं। ठोस क्रिस्टलीय या अनाकार हो सकते हैं लेकिन खनिज क्रिस्टलीय होते हैं जो खनिजों की एक और महत्वपूर्ण विशेषता है और हम इस पर अलग से चर्चा करेंगे।

iv. क्रिस्टलीय संरचना

एक खनिज में परमाणुओं को एक व्यवस्थित और दोहराव प्रतिरूप में व्यवस्थित किया जाता है। क्रिस्टल का यह दोहराव वाला भाग एक इकाई है और एक विशेष खनिज में परमाणुओं की व्यवस्था समान होती है। क्रिस्टलीय आकार छह प्रकार के होते हैं, हालांकि अधिकांश खनिज क्रिस्टल में घन और चतुष्फलकीय आकार होते हैं। क्रिस्टल बनने के दो प्रमुख तरीके हैं। मैग्मा या लावा के रूप में पिघली हुई चट्टानें क्रिस्टल बनाने के लिए जम जाती हैं। क्या आप जानते हैं कि कुछ सबसे कीमती धातुएँ जैसे हीरे आदि ज्वालामुखी के छिद्रों में तीव्र गर्मी और दबाव के तहत बनते हैं। महासागरों में भी खनिज क्रिस्टल बनते हैं क्योंकि पानी में भारी मात्रा में विलेय जमा होते हैं जो पानी के वाष्पित होने के बाद क्रिस्टल बन जाते हैं। क्रिस्टलीय संरचना के अलावा, खनिजों की एक निश्चित रासायनिक संरचना भी होती है जिसे आपको जानना चाहिए।

v. निश्चित रासायनिक संरचना

प्रत्येक खनिज में परमाणुओं का एक निश्चित संयोजन होता है जो एक निश्चित क्रिस्टलीय संरचना में एक साथ बंधे होते हैं। यह एक विशेष खनिज के लिए विशिष्ट माना जाता है। उदाहरण के लिए खनिज "हलाइट" या सामान्य नमक में सोडियम क्लोराइड (NaCl) की रासायनिक संरचना होती है। इस प्रकार यह सोडियम और क्लोरीन परमाणुओं की समान संख्या से बना है जो इलेक्ट्रॉनिक रूप से आवेशित आयन हैं (इस मामले में) सभी दिशाओं में एक दोहराव प्रतिरूप में एक साथ बंधे हैं जो वास्तव में NaCl के मामले में घन है। हैलाइट में सोडियम और क्लोराइड आयनों की व्यवस्था देखने के लिए चित्र 9.1 देखें।

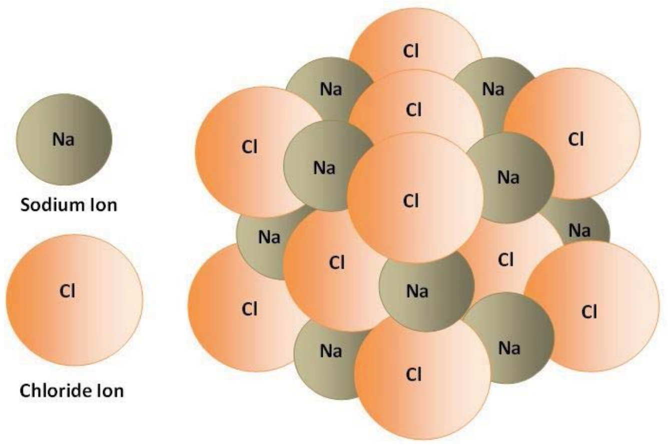

Fig. 9.1: Arrangement of Sodium and Chloride ions in Halite.

बोध प्रश्न 1

खनिजों की पाँच मूलभूत विशेषताओं की सूची बनाइए। क्या लकड़ी एक खनिज है?

9.3 खनिज संसाधनों का वर्गीकरण

रासायनिक और भौतिक गुणों के आधार पर, खनिजों को दो मुख्य उप–शीर्षों के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता हैः धात्विक और अधात्विक।

A. धात्विक खनिज

धात्विक खनिज, जैसा कि नाम से पता चलता है कि इसमें धातु होता है और इसी तरह धातुओं का स्रोत भी होता है। लौह अयस्क, तांबा, मैंगनीज, सोना आदि सभी धातु का उत्पादन करते हैं और इसलिए इस श्रेणी में आते हैं। धात्विक खनिजों को आगे लौह और अलौह खनिजों में विभाजित किया गया है। "लौह" शब्द लोहे को संदर्भित करता है। वे सभी खनिज जिनमें लौह तत्व होता है, लौह खनिज कहलाते हैं। लौह खनिजों के कुछ महत्वपूर्ण उदाहरण लौह अयस्क, मैंगनीज, टंगस्टन, निकल, कोबाल्ट आदि हैं। बिना लौह तत्व वाले धात्विक खनिजों को अलौह धातु खनिजों के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है। सोना, चांदी, तांबा, सीसा, बॉक्साइट, टिन, मैग्नीशियम इसी श्रेणी के हैं

B. अधात्विक खनिज

अधात्विक खनिज वे खनिज हैं जिनमें कोई धातु नहीं होती है। उदाहरण जीवाश्म ईंधन, अभ्रक, चूना पत्थर आदि हैं। अधात्विक खनिजों को कार्बनिक और अकार्बनिक खनिजों में भी विभाजित किया गया है। कार्बनिक खनिज वे खनिज हैं जिनमें कार्बनिक पदार्थ होते हैं। इस प्रकार के उदाहरणों में जीवाश्म ईंधन शामिल हैं क्योंकि वे पौधों और जानवरों के कार्बनिक अवशेषों से प्राप्त होते हैं। इसलिए कोयला, पेट्रोलियम आदि जैसे जीवाश्म ईंधन इस श्रेणी में आते हैं। अकार्बनिक खनिज वे खनिज हैं जिनमें कोई कार्बनिक पदार्थ नहीं होता है, उदाहरण के लिए अभ्रक, चूना पत्थर, ग्रेफाइट, आदि।

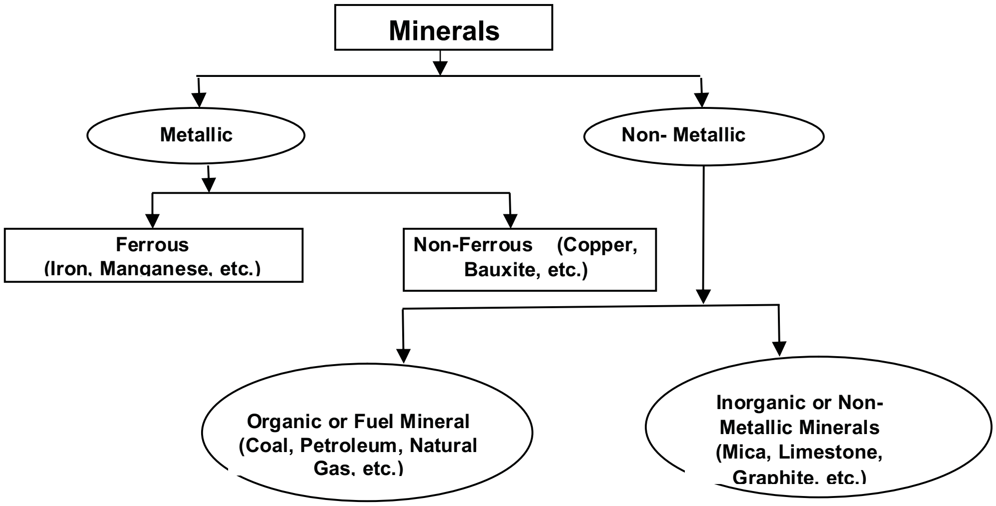

Fig. 9.2: Classification of Minerals.

आर्थिक दृष्टिकोण से, खनिजों को कीमती और अर्ध–कीमती खनिजों (हीरा, पन्ना, गार्नेट, सोना आदि), रणनीतिक खनिजों (कोबाल्ट, मोलिब्डेनम, निकल, रेअर अर्थ आदि), उर्वरक खनिजों (रॉक फॉस्फेट, पोटाश, सल्फर आदि), दुर्दम्य खनिज (अंडालुसाइट, ग्रेफाइट, कायनाइट आदि), सिरेमिक और कांच खनिज (वोलास्टोनाइट), अन्य औद्योगिक खनिज (एस्बेस्टस, बोरेक्स आदि) और लघु खनिज (बैराइट्स, बेंटोनाइट, कैल्साइट, चाक, चाइना क्ले आदि) के रूप में भी वर्गीकृत किया जाता है।।

अब क्या आप अयस्क के बारे में जानते हैं? आपके लिए अयस्क के बारे में जानना जरूरी है। अयस्क चट्टानों में खनिजों की सांद्रता है जो उपयोग के लिए आर्थिक रूप से निकाले जाने के लिए पर्याप्त हैं। एक अयस्क चट्टान या तलछट की एक घटना है जिसमें आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण तत्वों, विशेष रूप से धातुओं के साथ पर्याप्त खनिज होते हैं, जिन्हें भंडार से आर्थिक रूप से निकाला जा सकता है।

जीवाश्म ऊर्जा और खनिज भंडार और संसाधनों के लिए **संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क वर्गीकरण (UNFC)** तीन मूलभूत मानदंडों, अर्थात् आर्थिक व्यवहार्यता, व्यवहार्यता मूल्यांकन और भूवैज्ञानिक मूल्यांकन के आधार पर एक मानक खनिज वर्गीकरण निर्धारित करता है। इस प्रकार यह इन तीन अक्षों के आधार पर वर्गीकरण की त्रि–आयामी प्रणाली का अनुसरण करता है। इसका स्पष्ट अंदाजा लगाने के लिए चित्र 9.3 (ए) का संदर्भ लें।

अतः UNFC के अनुसार, कुल खनिज संसाधन = भंडार + अतिरिक्त या शेष संसाधन

इन तीन मूलभूत मानदंडों या अक्षों की सहायता से किसी भी देश के लिए खनिजों की राष्ट्रीय सूची तैयार की जाती है। एक तीन अंकों का कोड उत्पन्न होता है जिसमें पहला अंक आर्थिक व्यवहार्यता अक्ष को दर्शाता है, दूसरा अंक व्यवहार्यता अक्ष को दर्शाता है, और तीसरा अंक भूगर्भिक अक्ष को दर्शाता है। आर्थिक व्यवहार्यता की डिग्री कोड 1, 2 और 3 में दी गई है जिसमें कोड 1 उन संसाधनों का प्रतिनिधित्व करता है जो आर्थिक रूप से खनन योग्य हैं, '2' उन संसाधनों का प्रतिनिधित्व करता है जो संभवतः आर्थिक रूप से व्यवहार्य हैं जो कुछ स्थितियों में परिवर्तन के विषय हैं और '3' शेष संसाधनों का प्रतिनिधित्व करते हैं, व्यवहार्यता अध्ययन/खनन रिपोर्ट का वर्णन UNFC में क्रमशः कोड 3, 2 और 1 द्वारा किया गया है। UNFC के अनुसार भूवैज्ञानिक मूल्यांकन श्रेणियों को 4 कोड, यानी 1 (विस्तृत अन्वेषण), 2 (सामान्य अन्वेषण), 3

(पूर्वेक्षण) और 4 (आवीक्षण) द्वारा दर्शाया जाता है। इस प्रकार UNFC वर्गीकरण के अनुसार संसाधनों की उच्चतम श्रेणी में कोड (111) और निम्नतम श्रेणी, कोड (334) होगा। इसे समझने के लिए चित्र 9.3 (b) का संदर्भ लें।

अब जब आप अगले भाग में भारत में विभिन्न खनिजों के वितरण का अध्ययन करेंगे, तो आपको भारत में विभिन्न खनिजों के भंडार और शेष संसाधनों के बारे में जानकारी मिलेगी।

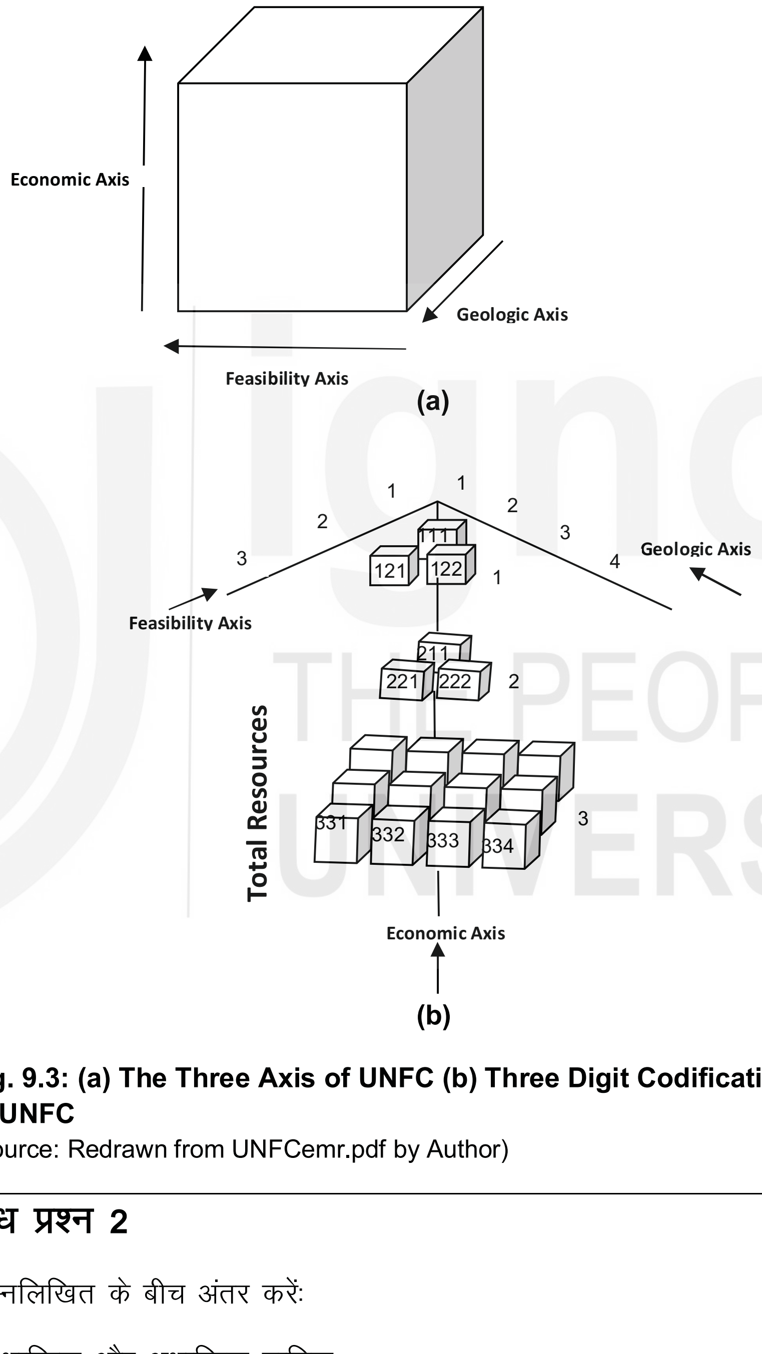

Fig. 9.3: (a) The Three Axis of UNFC (b) Three Digit Codification System of UNFC
(Source: Redrawn from UNFCemr.pdf by Author)

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित के बीच अंतर करें:

(i) धात्विक और अधात्विक खनिज

(ii) लौह और अलौह खनिज

(iii) कार्बनिक और अकार्बनिक खनिज

9.4 खनिज संसाधनों का वितरण और उपयोग

भारत खनिज संसाधनों की एक विस्तृत विविधता के साथ समृद्ध रूप से संपन्न है। इसलिए खनन भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण खंड है। खान मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2017–18 के अनुसार, देश में लगभग 95 खनिजों का उत्पादन होता है जिसमें 4 ईंधन, 10 धातु, 23 गैर–धातु, 3 परमाणु और 55 लघु खनिज (भवन और अन्य सामग्री सहित) शामिल हैं। भारत दुनिया भर में कई खनिजों के उत्पादन में एक प्रमुख स्थान रखता है। प्रमुख खनिजों के स्वदेशी और विश्व उत्पादन के आंकड़े जानने के लिए कृपया तालिका 9.1 देखें।

Table 9.1: Contribution and Rank of India in World Production of Principal Minerals and Metals (2018)

Sector	Unit of Commodity	Production Quantity		Contribution (percentage)	India's rank in World order $
		World	India*		
Metallic Minerals					
Bauxite	'000 tonnes	326000	23688	7.27	5th
Chromite	'000 tonnes	40800	3971	9.23	4th
Iron ore	million tonnes	2923	206	7.05	4th
Manganese ore	'000 tonnes	53000	2820	5.32	7th
Industrial Minerals					
Magnesite	'000 tonnes	29500	147	0.50	15th
Apatite & rock phosphate	'000 tonnes	232000	1285	0.55	16th
Metals					
Aluminium (Primary	'000 tonnes	62700	3936	5.89	4th
Copper (refined)	'000 tonnes	23900	454	1.90	11th
Steel (crude/liquid)	million tonnes	1812	110.92	6.12	2nd
Lead (refined)	'000 tonnes	12000 ##	620 #	5.17	4th
Zinc (slab)	'000 tonnes	13300	696	5.23	3rd

(Source: World mineral production data compiled from World Mineral Production, 2014-2018, British Geological Survey, * Figures relate to 2018-19)

आइए अब हम भारत में खनिजों के वितरण के स्थानिक प्रतिरूप को समझते हैं।

भू–आकृति विज्ञान की दृष्टि से भारत को तीन भागों में बांटा गया हैः

• प्रायद्वीपीय भारत

• अतिरिक्त प्रायद्वीपीय (हिमालय और नागा लुशाई बेल्ट) और

• इंडो–गंगा ब्रह्मपुत्र जलोढ़ (रेगिस्तान सहित)।

देश का कुल क्षेत्रफल 3.287 मिलियन किमी 2 है। इसमें से 2.386 मिलियन किमी2 (प्रायद्वीपीय और हिमालयी क्षेत्र) में कठोर चट्टानें शामिल हैं, जबकि 0.901 मिलियन किमी 2 में दस लाख वर्ष से कम पुरानी चतुष्कोणीय संरचनाएं शामिल हैं। अतः देश में आर्कियन (पूर्व 2500 मिलियन वर्ष) से लेकर हाल तक की चट्टानें हैं। खनिज पृथ्वी की पपड़ी में लाखों वर्षों की अवधि में बनते हैं। इसलिए आर्कियन प्रोटेरोज़ोइक चट्टानें भारत में अधिकांश धात्विक और अधात्विक खनिजों की मेज़बानी करती हैं। सरल शब्दों में, आप समझ सकते हैं कि प्रायद्वीपीय पठारी क्षेत्र की पुरानी शैल संरचनाओं में खनिज समाहित हैं। चतुष्कोणीय संरचनाओं वाले उत्तरी जलोढ़ मैदानों में दुर्लभ खनिज संसाधन हैं। दूसरी ओर हिमालय में जटिल चट्टान संरचना है जो खनिज संसाधनों के निष्कर्षण को बहुत कठिन बना देती है। अतः भूगर्भीय संरचना ही भारत में खनिज संसाधनों के असमान वितरण के लिए जिम्मेदार है।

9.4.1 खनिज वितरण का स्थानिक प्रतिरूप

भारत में खनिज चार पेटियों में केंद्रित हैं। आइए जानें उन पेटियों के बारे में। वे हैं :

- उत्तर–पूर्वी पठारी क्षेत्र
- दक्षिण–पश्चिमी पठारी क्षेत्र
- उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र
- हिमालयी क्षेत्र

आइए अब हम इन खनिज समृद्ध पेटियों या क्षेत्रों के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त करें।

i. उत्तर–पूर्वी पठारी क्षेत्र

ऊपर वर्णित चार क्षेत्रों में से यह सबसे समृद्ध खनिज बेल्ट है और इसमें छोटानागपुर (झारखंड), ओडिशा पठार, पश्चिम बंगाल और छत्तीसगढ़ के कुछ हिस्से शामिल हैं। इसके पास लौह अयस्क, कोयला, मैंगनीज, बॉक्साइट, अभ्रक आदि के लिए अच्छा भंडार है। अब आप तर्क कर सकते हैं कि कुछ प्रमुख लौह और इस्पात उद्योग इस क्षेत्र में स्थानीयकृत क्यों हैं।

ii. दक्षिण–पश्चिमी पठारी क्षेत्र

यह क्षेत्र कर्नाटक, गोवा और तमिलनाडु और केरल के पड़ोसी ऊपरी इलाकों में फैला हुआ है। यह कुछ अच्छी गुणवत्ता या उच्च ग्रेड लौह अयस्क के लिए जिम्मेदार है। उत्तर पूर्वी खनिज पेटी की तुलना में इस क्षेत्र में विविध खनिज भंडार नहीं हैं। हालांकि, इसके कुछ अपवाद हैं, जैसे केरल में मोनाजाइट और थोरियम के भंडार हैं, बॉक्साइट मिट्टी और गोवा में लौह अयस्क के भंडार हैं। इस क्षेत्र में कोयले और अन्य बिजली भंडार की भी कमी है। लिग्नाइट के निक्षेप केवल नेयवेली में पाए जाते हैं। आपको एक

महत्वपूर्ण बात याद रखनी चाहिए कि यह क्षेत्र भारत के तीनों स्वर्ण क्षेत्रों की मेजबानी करता है।

iii. उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र

यह पेटी गुजरात के कुछ हिस्सों और राजस्थान में अरावली पर्वतमाला को अपनी चपेट में लेती है। इसके पास पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस का अच्छा भंडार है जो गुजरात तट के किनारे पाया जाता है। राजस्थान का हिस्सा पत्थरों यानी बलुआ पत्थर, ग्रेनाइट, संगमरमर के निर्माण में समृद्ध है। डोलोमाइट और चूना पत्थर सीमेंट उद्योग के लिए आधार प्रदान करते हैं। जिप्सम और फुलर की मिट्टी भी इस क्षेत्र में बहुतायत में पाई जाती है। इस क्षेत्र में सेंधा नमक के भी समृद्ध स्रोत हैं।

iv. हिमालयी क्षेत्र

यह एक और बेल्ट है जो तांबा, सीसा, जस्ता, कोबाल्ट और टंगस्टन में समृद्ध है। इस क्षेत्र में असम घाटी के साथ खनिज तेल के भंडार भी हैं।

इससे पहले कि हम भारत में कुछ प्रमुख खनिजों के वितरण, उत्पादन और उपयोग के सन्दर्भ में अगले उप–भाग पर जाएँ, एक बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास करें।

बोध प्रश्न 3

सूची 1 को सूची 1 के साथ सुमेलित करें

	सूची 1	सूची 2
a.	छोटानागपुर	लिग्नाइट कोयला
b.	नेवेली	चूना पत्थर
c.	अरावली	खनिज तेल
d.	असम	लौह अयस्क

9.4.2 धात्विक खनिजों (लौह) का वितरण और उपयोग

आपको याद होगा कि लौह तत्व वाले खनिजों को लौह खनिज कहा जाता है। आइए इस श्रेणी के अंतर्गत लौह अयस्क, मैंगनीज, निकल, क्रोमाइट और टंगस्टन के वितरण का अध्ययन करें।

A. लौह अयस्क

वितरण: सल्फर और फॉस्फोरस जैसी अशुद्धियों से मुक्त होने के कारण भारत उच्च ग्रेड और आसानी से सुलभ लौह अयस्क के साथ समृद्ध है। हेमेटाइट (Fe2O3 55% की लौह सामग्री के साथ) और मैग्नेटाइट (Fe3O4 25–62% की लौह सामग्री विस्तार के साथ) भारत में पाए जाने वाले लौह के दो महत्वपूर्ण अयस्क हैं। भारत के पास एशिया में सबसे बड़ा भंडार है और वह दुनिया में 5वें स्थान पर है। लौह अयस्क भंडार 450

मीटर से कम ऊंचाई की पहाड़ी श्रृंखला के रूप में होता है। अयस्क का खनन ओपन कास्ट विधि द्वारा किया जाता है। UNFC प्रणाली के अनुसार, 2015 में भारत में हेमेटाइट के कुल संसाधन 22,487 मिलियन टन होने का अनुमान है, जिसमें से 5,442 मिलियन टन आरक्षित श्रेणी के अंतर्गत हैं जबकि 17,045 मिलियन टन शेष संसाधनों के अंतर्गत रखे गए हैं। UNFC प्रणाली के अनुसार, 2015 में भारत में मैग्नेटाइट के कुल संसाधन 10,789 मिलियन टन होने का अनुमान है, जिसमें से भंडार केवल 53 मिलियन टन है जबकि 10,736 मिलियन टन शेष संसाधनों के तहत रखा गया है। मैग्नेटाइट के प्रमुख संसाधन भारत के चार राज्यों में पाए जाते हैं इसमें कर्नाटक (72%), इसके बाद आंध्र प्रदेश (13%), राजस्थान (6%) और तमिलनाडु (5%) का स्थान आता है। हेमेटाइट भंडार के प्रमुख संसाधन ओडिशा (34%), झारखंड (24%), छत्तीसगढ़ (22%), कर्नाटक (11%) और गोवा (5%) में पाए जाते हैं। झारखंड के सिंहभूमि जिले और ओडिशा के क्योंझर, मयूरभंज और सुंदरगढ़ के आसपास के जिले उच्च ग्रेड हेमेटाइट के सबसे अमीर भंडार बनाते हैं। हेमेटाइट के ये भंडार प्री–कैम्ब्रियम लौह अयस्क श्रृंखला से संबंधित हैं। लौह अयस्क के प्रमुख खनन केंद्र सिंहभूम जिले में स्थित नोवामुंडी, गुआ और मनोहरपुर और मयूरभंज जिले में बादामपहाड़ और सुलैपत, दुर्ग में धाली और राजहरा पहाड़, बस्तर जिले में बैलाडीला और रावघाट, चंद्रपुर (चंदा) जिलों में पीपलगांव और लोहारा, केम्मनगुंडी कर्नाटक के चिकमगलूर जिले के बाबाबुदन पहाड़ियों में हैं। लौह अयस्क के भंडार में समृद्ध अन्य क्षेत्रों में चिक्कमगलुरु जिले (कर्नाटक) में कुद्रेमुख, बेल्लारी–होस्पेट क्षेत्र (कर्नाटक) में संदूर पर्वतमाला और सलेम और रत्नागिरी जिले हैं। भारत में लौह अयस्क के भंडारों की स्थिति का अंदाजा लगाने के लिए चित्र 9.4 देखें।

भारत ने 2019–20 में 246 मिलियन टन लौह अयस्क का उत्पादन किया जिसमें लुम्प, फाइन और कंसंट्रेट शामिल हैं। लौह अयस्क के उत्पादन में ओडिशा देश के कुल उत्पादन का 59.64% है, इसके बाद छत्तीसगढ़ (14.11%), कर्नाटक (12.76%), झारखंड (10.93%) और शेष (2.56%) उत्पादन आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान से सूचित किया गया था।

उपयोगः लौह अयस्क कच्चा लोहा, स्पंज आयरन, स्टील और मिश्र धातु बनाने में उपयोग किया जाने वाला मूल कच्चा माल है। अन्य महत्वपूर्ण लौह अयस्क खपत करने वाले उद्योग सीमेंट, कोयला वाशरी और लौह–मिश्र धातु उद्योग हैं। झारखंड और ओडिशा की खदानों से लौह अयस्क की आपूर्ति जमशेदपुर, आसनसोल, दुर्गापुर और राउरकेला में लौह और इस्पात कार्यों के लिए की जाती है। भिलाई इस्पात संयंत्र भी धाली और राजहरा पहाड़ियों के आसपास स्थित है जहां से अच्छी गुणवत्ता वाले लौह अयस्क की भरपूर आपूर्ति होती है। इसी तरह कर्नाटक के चिकमंगलूर जिले के बाबाबुदन पहाड़ियों में केम्मनगुंडी भद्रावती स्थित इस्पात संयंत्र को लौह अयस्क की आपूर्ति करती है। गोवा में पाया जाने वाला लौह अयस्क भी नौगम्य नदियों के आसपास स्थित है जहां से यह निर्यात के लिए मुरमागाओ बंदरगाह तक पहुंचता है। कटक (ओडिशा) में दैत्री लौह अयस्क खदान भी निर्यात उन्मुख है और इसके लिए पारादीप में बंदरगाह सुविधाओं का उपयोग करता है। कुंद्रेमुख खदान भी मंगलुरु बंदरगाह से लौह अयस्क छर्रों के निर्यात के लिए है। लौह अयस्क का निर्यात करने वाले बंदरगाहों को देखने के लिए चित्र 9.4 देखें।

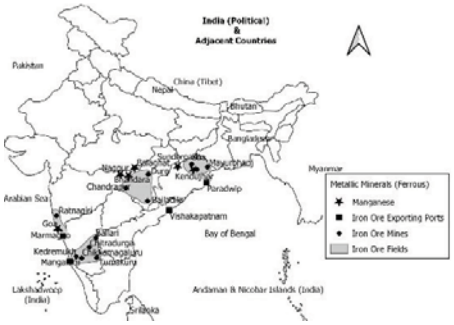

Fig. 9.4: Distribution of Metallic Minerals (Ferrous) in India

B. मैंगनीज

वितरणः UNFC प्रणाली के अनुसार, 2015 में भारत में मैंगनीज अयस्क का कुल भंडार 496 मिलियन टन है। इनमें से 94 मिलियन टन को भंडार के रूप में वर्गीकृत किया गया है और शेष 402 मिलियन टन शेष संसाधन श्रेणी में हैं। मैंगनीज भंडार मुख्य रूप से धारवाड़ संरचनाओं से जुड़े हुए हैं, हालांकि वे सभी भूवैज्ञानिक संरचनाओं में पाए जाते हैं। देश में मैंगनीज के कुल भंडार का 44% के साथ ओडिशा सूची में सबसे ऊपर है। इसकी खदानें लौह अयस्क खदानों के आसपास स्थित हैं। ओडिशा में मैंगनीज के लिए महत्वपूर्ण खदानें बोनाई, केंदुझार, सुंदरगढ़, गंगपुर, कोरापुट, कालाहांडी और बोलांगीर हैं। कर्नाटक में मैंगनीज अयस्क का 22% भण्डार है। कर्नाटक में मैंगनीज के खनन क्षेत्र धारवाड़, बल्लारी, बेलगावी, उत्तरी केनरा, चिक्कमगलुरु, शिवमोग्गा, चित्रदुर्ग और तुमकुरु हैं। मैंगनीज के भंडार वाले अन्य क्षेत्रों में महाराष्ट्र के नागपुर, भंडारा और रत्नागिरी जिले और मध्य प्रदेश के बालाघाट–छिंदवाड़ा–निमाड़–मंडला और झाबुआ जिले हैं। तेलंगाना, गोवा और झारखंड भी मैंगनीज का उत्पादन करते हैं लेकिन कुछ हद तक। भारत में मैंगनीज खनन क्षेत्रों के वितरण के बारे में संक्षिप्त जानकारी के लिए चित्र 9.3 देखें। भारत ने 2019–20 में 2,904 हजार टन मैंगनीज अयस्क का उत्पादन किया। देश के कुल उत्पादन में 32.99% योगदान करने वाला मध्य प्रदेश मैंगनीज अयस्क का सबसे बड़ा उत्पादक बना रहा।

उपयोगः मैंगनीज एक महत्वपूर्ण खनिज है जिसका उपयोग लोहे को गलाने और लौह मिश्र धातुओं के निर्माण में किया जाता है जिसके कारण हाल के वर्षों में इसकी खपत में वृद्धि हुई है। यह पेंट और कांच उद्योगों का एक घटक भी है। शुष्क सेल बैटरी में मैंगनीज डाइऑक्साइड का उपयोग किया जाता है।

C. निकेल

वितरणः UNFC के 2015 के अनुमान के अनुसार, निकल अयस्क के कुल अस्थायी संसाधन 189 मिलियन टन होने का अनुमान लगाया गया है। लगभग 92% संसाधन; यानी 175 मिलियन टन ओडिशा में हैं। शेष 8% भंडार झारखंड (9 मिलियन टन), नागालैंड (5 मिलियन टन) और कर्नाटक (0.23 मिलियन टन) में वितरित किया जाता है।

उपयोगः निकेल, जब लोहे में थोड़ी मात्रा में मिलाया जाता है, तो इसकी गुणवत्ता में सुधार होता है और उत्पाद कठोर और स्टेनलेस हो जाता है। पूरी दुनिया में 66% प्राथमिक निकेल की मांग के पीछे स्टेनलेस स्टील का उत्पादन है। इसका उपयोग परत

चढ़ाने में भी किया जाता है जिसके कारण सतह धूमिल–प्रतिरोधी हो जाती है और पॉलिश की हुई दिखती है।

D. क्रोमाइट

वितरणः 2015 तक UNFC प्रणाली के अनुसार भारत में क्रोमाइट के कुल संसाधन 344 मिलियन टन होने का अनुमान है, जिसमें 102 मिलियन टन भंडार (30%) और 242 मिलियन टन शेष संसाधन (70 प्रतिशत) शामिल हैं। भारत में 96 प्रतिशत क्रोमाइट भंडार ओडिशा में स्थित हैं, ज्यादातर जाजपुर और क्योंझर जिलों में सुकिंडा घाटी में और शेष 5% संसाधन मणिपुर, नागालैंड, कर्नाटक, झारखंड, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में वितरित किए जाते हैं। भारत ने 2019–20 में 3,929 हजार टन क्रोमाइट का उत्पादन किया। ओडिशा ने क्रोमाइट के लगभग पूरे उत्पादन की सूचना दी।

उपयोगः क्रोमाइट क्रोमियम का एक अयस्क है। इस धातु का उपयोग स्टेनलेस स्टील बनाने, नाइक्रोम और क्रोम चढ़ाने में किया जाता है। जब इसे लौह और निकल के साथ मिश्रित किया जाता है, तो यह "निक्रोम" नामक मिश्र धातु का उत्पादन करता है जो उच्च तापमान सहन कर सकता है। इस प्रकार इसका उपयोग हीटिंग यूनिट, ओवन और अन्य उपकरण बनाने में किया जाता है। क्रोमियम मिश्र धातुओं के पतले कोटिंग्स का उपयोग ऑटो पार्टस, उपकरणों और अन्य उत्पादों पर चढ़ाने के लिए भी किया जाता है। इस प्रकार इन्हें "क्रोम प्लेटेड" नाम दिया गया है।

E. टंगस्टन

वितरणः 2015 UNFC प्रणाली के अनुसार देश में टंगस्टन अयस्क का कुल भंडार 87.4 मिलियन टन अनुमानित है जिसमें 1,42,094 टन W03 सामग्री है। इन सभी संसाधनों को 'शेष संसाधन' श्रेणी में रखा गया है। टंगस्टन के भंडार मुख्य रूप से कर्नाटक (42%), राजस्थान (27%), आंध्र प्रदेश (17%) और महाराष्ट्र (9%) में वितरित किए जाते हैं। शेष 5% संसाधन हरियाणा, तमिलनाडु, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल में हैं।

उपयोगः टंगस्टन बहुत अधिक तापमान को सहन करने में सक्षम है और इसमें बहुत कम वाष्प दबाव होता है, जिसके कारण इसका उपयोग प्रकाश बल्ब फिलामेंट्स में किया जाता है। टंगस्टन में सभी धातुओं का उच्चतम गलनांक होता है और इसलिए इसे अतिरिक्त मजबूती और स्थायित्व प्रदान करने के लिए अन्य धातुओं के साथ मिश्रित किया जाता है। टंगस्टन स्टील की कठोरता और काटने की क्षमता को बढ़ाता है। टंगस्टन का उपयोग आर्क–वेल्डिंग इलेक्ट्रोड और उच्च तापमान भट्टियों में हीटिंग तत्वों के रूप में किया जाता है। यह जैव रासायनिक विश्लेषण में उच्च शुद्धता वाले सोडियम टंगस्टेट के रूप में एक अभिकर्मक के रूप में भी कार्य करता है।

9.4.3 धात्विक खनिजों का वितरण और उपयोग (अलौह)

आपको याद होगा कि बिना लौह तत्व वाले खनिजों को अलौह खनिजों के अंतर्गत वर्गीकृत किया जाता है। इस प्रकार के खनिजों के उदाहरण बॉक्साइट, तांबा और कुछ कीमती और अर्ध–कीमती खनिज जैसे सोना, चांदी आदि हैं जिनमें भारत कम संपन्न है। आइए इस श्रेणी के अंतर्गत बॉक्साइट, तांबा और कुछ कीमती खनिजों के वितरण का अध्ययन करें।

A. बॉक्साइट

वितरणः भारत में UNFC के अनुसार बॉक्साइट के कुल संसाधन 3897 मिलियन टन हैं, जिसमें से 656 मिलियन टन आरक्षित हैं जबकि 3240 मिलियन टन शेष संसाधन हैं। बॉक्साइट मुख्य रूप से तृतीयक गठन से संबंधित लेटराइट चट्टानों से जुड़ा है। ओडिशा राज्य बॉक्साइट के उत्पादन में सबसे आगे है जहां कालाहांडी, संबलपुर बोलांगीर और कोरापुट महत्वपूर्ण उत्पादक क्षेत्र हैं। लोहरदग्गा के पास झारखंड के पठारी क्षेत्र भी बॉक्साइट का उत्पादन करते हैं। बॉक्साइट का उत्पादन करने वाले अन्य क्षेत्र गुजरात में भावनगर, और जामनगर, छत्तीसगढ़ में अमरकंटक पठार, मध्य प्रदेश में कटनी–जबलपुर क्षेत्र और बालाघाट, महाराष्ट्र में कोलाबा, ठाणे, रत्नागिरी, सतारा, पुणे और कोल्हापुर महत्वपूर्ण उत्पादक हैं। कुछ राज्य जैसे तमिलनाडु, कर्नाटक और गोवा भी मामूली मात्रा में बॉक्साइट का उत्पादन करते हैं। भारत में बॉक्साइट उत्पादक क्षेत्रों से परिचित होने के लिए चित्र 9.4 देखें।

भारत ने 2019–20 के दौरान 21,824 हजार टन बॉक्साइट का उत्पादन किया। 70.95% योगदान के साथ ओडिशा बॉक्साइट का अग्रणी उत्पादक था, इसके बाद गुजरात (9. 50%), छत्तीसगढ़ (7.18%), झारखंड (6.50%), मध्य प्रदेश (3.14%) और महाराष्ट्र (2. 73%) का स्थान आता है।

उपयोगः बॉक्साइट वह अयस्क है, जिसका उपयोग एल्युमीनियम के उत्पादन में किया जाता है। इसका उपयोग बिजली के तारों, एल्यूमीनियम पाउडर (पेंट में प्रयुक्त), विशेष मिश्र धातु और बर्तनों के निर्माण में किया जाता है। आप जानते होंगे कि हल्के और सख्त होने के कारण एल्युमीनियम का उपयोग हवाई जहाज और ऑटोमोबाइल इंजन और अन्य वाहनों जैसे बसों, रेलवे डिब्बों आदि के निर्माण में भी किया जाता है। बॉक्साइट का उपयोग रेफ्रेक्ट्रीज, सीमेंट और रसायनों के निर्माण में भी किया जाता है।

B. कॉपर

वितरणः 2015 में भारत में तांबे के अयस्क का कुल भंडार 1511.50 मिलियन टन अनुमानित है, जिसमें लगभग 12.16 मिलियन टन तांबा धातु है। इनमें से केवल 207.77 मिलियन टन आरक्षित श्रेणी में आते हैं, जबकि 1303.73 मिलियन टन शेष संसाधन हैं। प्रमुख तांबा उत्पादक जिले झारखंड में सिंहभूम जिले, मध्य प्रदेश में बालाघाट जिले और राजस्थान में झुंझुनू और अलवर जिले हैं। हालाँकि यह गुंटूर जिले (आंध्र प्रदेश), चित्रदुर्ग और हसन जिलों (कर्नाटक) और दक्षिण आरकोट जिले (तमिलनाडु) में अग्निगुंडाला में भी होता है, जो धातु के छोटे उत्पादक होते हैं। भारत में तांबा उत्पादक क्षेत्रों का अंदाजा लगाने के लिए चित्र 9.5 का संदर्भ लें। वर्ष 2019–20 में भारत ने 3,952 हजार टन तांबे के अयस्क का उत्पादन किया।

उपयोगः विद्युत का सुचालक होने और तन्य होने के कारण विद्युत उद्योग में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। आपने देखा होगा कि बिजली के तार तांबे के बने होते हैं। इसका उपयोग अन्य विद्युत वस्तुओं जैसे इलेक्ट्रिक मोटर्स, ट्रांसफार्मर और जनरेटर में भी किया जाता है। इसे मजबूती प्रदान करने के लिए रत्नों में कीमती खनिजों के साथ भी मिलाया जाता है।

C. लेड–जिंक

वितरणः UNFC प्रणाली के अनुसार 2015 में भारत में सीसा और जस्ता अयस्क का कुल भंडार 749.46 मिलियन टन अनुमानित है। इनमें से 106.12 मिलियन टन (14%) भंडार के अंतर्गत आते हैं जबकि 643.34 मिलियन टन (86%) को शेष संसाधनों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। सीसा–जस्ता संसाधन राजस्थान, बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, गुजरात, उत्तराखंड, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, सिक्किम, तमिलनाडु और मेघालय में स्थित हैं। राजस्थान में सीसा–जस्ता का सबसे बड़ा भंडार है, इसके बाद आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और महाराष्ट्र हैं। भारत ने 2019–20 में 14.48 मिलियन टन सीसा और जस्ता अयस्क का उत्पादन किया। राजस्थान सीसा और जस्ता अयस्क और इसके सांद्रण का एकमात्र उत्पादक राज्य था।

उपयोगः लेड का उपयोग स्टोरेज बैटरी, सोल्डरिंग और पेंट की प्लेटों के निर्माण में किया जाता है। जिंक जंग का प्रतिरोध करता है और इसलिए इसका उपयोग लोहे की चादरों में कलई चढ़ाने के लिए किया जाता है। यह तांबे के साथ आसानी से मिश्रित हो जाता है और इसके परिणामस्वरूप पीतल का निर्माण होता है जिसका उपयोग बर्तन, घड़ियां और ऑटोमोबाइल पार्टस को बनाने में किया जाता है। जिंक का उपयोग डाई–कास्टिंग, ड्राई सेल बैटरी आदि में भी किया जाता है।

D. गोल्ड

वितरणः UNFC प्रणाली के अनुसार 2015 में भारत में स्वर्ण अयस्क का कुल संसाधन 527.96 मिलियन टन अनुमानित है। इनमें से 17.23 मिलियन टन को आरक्षित श्रेणी में रखा गया था जबकि शेष 510.73 मिलियन टन को शेष संसाधनों के रूप में वर्गीकृत किया गया था। स्वर्ण अयस्क (प्राथमिक) का सबसे बड़ा भंडार बिहार (44%) में स्थित है, इसके बाद राजस्थान (25%) और कर्नाटक (21%), पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश (3%), तेलंगाना और मध्य प्रदेश (2%) का स्थान है। यह छत्तीसगढ़, झारखंड, केरल, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में भी अल्प मात्रा में पाया जाता है।

भारत ने वर्ष 2019–20 में 591 हजार टन सोने के अयस्क का उत्पादन किया। कर्नाटक से सोने के अयस्क और सराफा का लगभग पूरा उत्पादन बताया गया।

उपयोगः चूंकि सोना दिखने में सुखद और काम करने योग्य होता है और यह खराब या खराब नहीं होता है, यह मानव का ध्यान आकर्षित करने वाली पहली धातुओं में से एक है और इसका उपयोग आभूषण और गहनों के निर्माण में किया जाता है। इसमें उच्च विद्युत चालकता (तांबे का 71 प्रतिशत) और जड़ता है जिसके कारण इसका उपयोग विद्युत और इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योग में संपर्कों, टर्मिनलों, मुद्रित सर्किट और अर्धचालक प्रणालियों पर चढ़ाने के लिए भी किया जाता है। सोने की पतली फिल्में जो 98 प्रतिशत तक अवरक्त विकिरण को दर्शाती हैं, उन्हें उपग्रहों पर तापमान को नियंत्रित करने के लिए और स्पेस–सूट विज़र्स पर सुरक्षा के लिए नियोजित किया गया है।

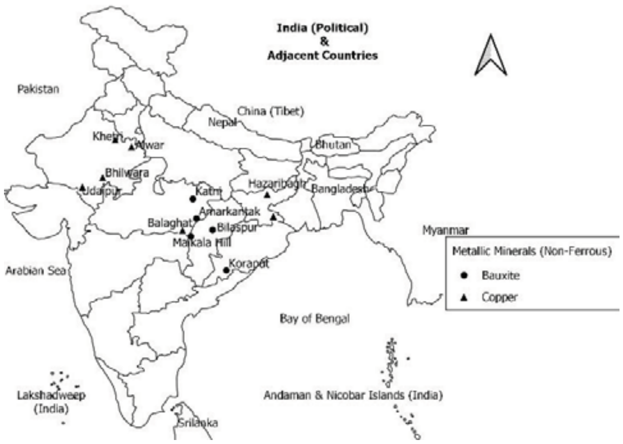

Fig. 9.5: Distribution of Metallic Minerals (Non-Ferrous) in India.

9.4.4 अधातु खनिजों का वितरण और उपयोग

चूंकि हम अगली इकाई में कार्बनिक या ईंधन खनिजों के बारे में बात कर रहे हैं, आइए इस उप–भाग के तहत कुछ अकार्बनिक गैर–धातु खनिजों के बारे में जानें।

A. अभ्रक

वितरणः महत्वपूर्ण अभ्रक युक्त पेगमेटाइट आंध्र प्रदेश, बिहार, झारखंड, महाराष्ट्र, बिहार और राजस्थान में पाया जाता है। 2015 में UNFC प्रणाली के अनुसार भारत में अभ्रक के कुल संसाधन 635,302 टन होने का अनुमान है। आंध्र प्रदेश देश के 40% संसाधनों के साथ सबसे आगे है, इसके बाद राजस्थान में लगभग 28 प्रतिशत संसाधन हैं, ओडिशा (16%), महाराष्ट्र (13%), बिहार (2%), झारखंड और तेलंगाना में 1% से कम हैं। अभ्रक मुख्य रूप से कायांतरित चट्टानों की शिराओं विशेष रूप से अभ्रक शीस्ट में पाया जाता है।

उपयोगः अभ्रक का उपयोग अभ्रक पाउडर, अभ्रक ईंटों और माइकानाइट के उत्पादन में किया जाता है। अभ्रक पाउडर का उपयोग पेंट और रबर के सामान के निर्माण में किया जाता है। चूंकि अभ्रक बिजली का कुचालक है और उच्च तापमान का सामना कर सकता है इसलिए अभ्रक ईंटों का उपयोग स्टील और थर्मल पावर प्लांट और पेट्रोलियम रिफाइनरियों में इन्सुलेट सामग्री के रूप में किया जाता है। माइकानाइट का उपयोग बिजली के उपकरणों के निर्माण में किया जाता है और यह अभ्रक को इन्सुलेट सीमेंट के साथ विभाजित करके बनाया जाता है।

B. जिप्सम

वितरणः UNFC प्रणाली के अनुसार, 2015 में भारत में खनिज जिप्सम के कुल संसाधनों का अनुमान 1,330 मिलियन टन है, जिसमें से 37 मिलियन टन को 'भंडार' और 1,293 मिलियन टन को 'शेष संसाधन' श्रेणी के तहत रखा गया है। अकेले राजस्थान में 81 प्रतिशत संसाधन हैं। यहाँ यह सूखी खारी झीलों में लैक्स्ट्रिन भंडार के रूप में होता है। तत्कालीन जम्मू और कश्मीर राज्य के पास 14 प्रतिशत संसाधन हैं। शेष 5 प्रतिशत संसाधन तमिलनाडु, गुजरात, हिमाचल प्रदेश (सिरमूर), कर्नाटक, उत्तराखंड, आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश में हैं।

उपयोगः जिप्सम का उपयोग मुख्य रूप से सीमेंट उद्योग में और प्लास्टर ऑफ पेरिस के निर्माण में भी किया जाता है।

C. चूना पत्थर

वितरणः 2015 में UNFC प्रणाली के अनुसार सभी श्रेणियों और ग्रेड के चूना पत्थर के कुल संसाधन 203,225 मिलियन टन अनुमानित हैं। कर्नाटक देश का 27% संसाधन वाला अग्रणी राज्य है, इसके बाद आंध्र प्रदेश (12%), राजस्थान (12%), गुजरात (10%), मेघालय (9%), तेलंगाना (8%), छत्तीसगढ़ (5%) का स्थान है। भारत ने 2019–20 के दौरान 359 मिलियन टन चूना पत्थर का उत्पादन किया।

उपयोगः चूना पत्थर का उपयोग भवन और निर्माण उद्योग में किया जाता है जहाँ चट्टान को स्लैब या ब्लॉक में काटा जाता है। मजबूत दांतों और हड्डियों के लिए कैल्शियम आयन प्रदान करने के लिए चूना पत्थर का उपयोग खाद्य योज्य के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग रासायनिक उद्योग में, कांच और प्लास्टिक उत्पादन में कच्चे माल के रूप में भी किया जाता है। इसका उपयोग कृषि में अम्लीय मिट्टी को बेअसर करने के लिए किया जाता है। चूना पत्थर चूने (कैल्शियम ऑक्साइड) का एक स्रोत है, जिसका उपयोग इस्पात निर्माण, खनन, जल उपचार और शुद्धिकरण में किया जाता है।

D. डोलोमाइट

वितरणः UNFC प्रणाली के अनुसार 2015 में डोलोमाइट का कुल संसाधन 8415 मिलियन टन रखा गया है, जिसमें से भंडार 679 मिलियन टन है। डोलोमाइट संसाधनों का 88% मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा, कर्नाटक, गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र राज्यों में वितरित किया जाता है।

उपयोगः डोलोमाइट एक कैल्शियम मैग्नीशियम कार्बोनेट और एक चट्टान बनाने वाला खनिज है। यह अवसादी चट्टान का प्राथमिक घटक है जिसे डोलोस्टोन के रूप में जाना जाता है और रूपांतरित चट्टान को डोलोमिटिक संगमरमर के रूप में जाना जाता है। चूना पत्थर जिसमें कुछ डोलोमाइट होता है उसे डोलोमाइटिक चूना पत्थर के रूप में जाना जाता है। डोलोस्टोन का सबसे आम उपयोग सीमेंट और निर्माण उद्योग में होता है। डोलोमाइट का उपयोग मैग्नेशिया (MgO) के स्रोत के रूप में, पशुधन के लिए एक फ़ीड योजक, एक सिन्टरिंग एजेंट और धातु प्रसंस्करण में प्रवाह और कांच, ईंटों और सिरेमिक के उत्पादन में एक घटक के रूप में किया जाता है। डोलोमाइट कई सीसा, जस्ता और तांबे के भंडार के लिए मेजबान चट्टान के रूप में कार्य करता है। डोलोमाइट एक तेल और गैस जलाशय चट्टान के रूप में भी कार्य करता है

E. हीरा

वितरणः UNFC प्रणाली के अनुसार 2015 में हीरे लगभग 31.84 मिलियन कैरेट में रखे गए थे, जिनमें से लगभग 0.96 मिलियन कैरेट आरक्षित श्रेणी के अंतर्गत हैं और शेष 30.87 मिलियन कैरेट शेष संसाधन श्रेणी के अंतर्गत हैं। हीरा भंडार तीन प्रकार की भूगर्भीय विन्यास में होता है जैसे किम्बरलाइट पाइप, समूह संस्तर और जलोढ़ बजरी। भारत में मुख्य हीरा वहन करने वाले क्षेत्र मध्य प्रदेश में पन्ना बेल्ट, कुरनूल जिले में मुनीमाडुगु–बंगानापली समूह, अनंतपुर जिले में वज्रकरूर किम्बरलाइट पाइप, आंध्र प्रदेश में कृष्णा नदी बेसिन की बजरी और छत्तीसगढ़ में रायपुर, बस्तर और रायगढ़ जिलों में

डायमंड किम्बरलाइट हैं। भंडार का अनुमान मध्य प्रदेश के पन्ना बेल्ट में, आंध्र प्रदेश के कृष्णा ग्रेवल्स और छत्तीसगढ़ के रायपुर जिले में लगाया गया है।

उपयोगः जब हम हीरे के बारे में सोचते हैं, तो हमारे दिमाग में एक बात आती है, वह है आभूषण। हीरे की चमकदार चमक और स्थायित्व के कारण गहनों में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इसके अलावा हीरे अपनी कठोरता के लिए जाने जाते हैं। इसके कारण हीरे की नोक वाले औजारों का उपयोग काटने, ड्रिलिंग और पॉलिश करने के लिए किया जाता है। इनका उपयोग राजमार्ग निर्माण और मरम्मत में भी किया जाता है। त्वचा को एक्सफोलिएट करने और झुर्रियों को कम करने के लिए फेशिअल के रूप में सौंदर्य उत्पादों में भी हीरे का उपयोग किया जाता है। कई उद्योग – जिनमें ऑटोमोटिव, खनन और सैन्य शामिल हैं – हीरे की आरी और ड्रिल का उपयोग करते हैं। ऑटोमोबाइल उद्योग में भी हीरे का उपयोग किया जाता है। आजकल हर हाई–टेक कार में 1.5 कैरेट के हीरे मौजूद होते हैं।

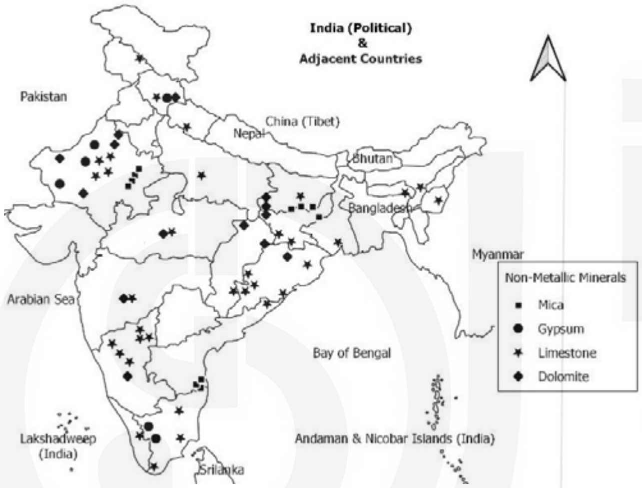

Fig. 9.6: Distribution of Non-Metallic Minerals in India.

9.5 खनिज संसाधनों का संरक्षण

अर्थव्यवस्था के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रों के लिए खनिज प्रमुख संसाधन हैं। तेजी से हो रहे शहरीकरण और विनिर्माण क्षेत्र में अनुमानित वृद्धि को देखते हुए खनिजों की भारी मांग है। चूंकि खनिज संसाधन सीमित और गैर–नवीकरणीय हैं, इसलिए भविष्य की पीढ़ियों के लिए खनिज संसाधनों के संरक्षण की तत्काल आवश्यकता है। खनन के पारंपरिक तरीके बहुत सारे अपशिष्ट उत्पन्न करते हैं। इसलिए राष्ट्रीय खनिज नीति 2019 का उद्देश्य उप–इष्टतम और अवैज्ञानिक खनन को रोकने के लिए शून्य–अपशिष्ट खनन को बढ़ावा देना है। खनिजों का पुनः उपयोग, पुनः प्राप्त और पुनर्चक्रण विधियों द्वारा नियोजित और टिकाऊ तरीके से उपयोग किया जाना चाहिए। धातु खनिजों के मामले में, स्क्रैप धातुओं का उपयोग धातुओं के पुनर्चक्रण को सक्षम करेगा। तांबा, सीसा और जस्ता जैसी धातुओं में स्क्रैप का उपयोग विशेष रूप से महत्वपूर्ण है जिसमें भारत का भंडार अल्प है। कई मामलों में, खनिजों के ताजा निष्कर्षण और प्रसंस्करण की तुलना में पुनः प्राप्त और पुनर्चक्रण की लागत बहुत अधिक है। विकल्पों और नवीकरणीय विकल्पों का उपयोग खनिजों के संरक्षण में मदद कर सकता है और उनकी खपत और कमी को भी कम कर सकता है। सामरिक और दुर्लभ खनिजों के निर्यात को

कम किया जाना चाहिए, ताकि मौजूदा भंडार का उपयोग लंबी अवधि के लिए किया जा सके। दुर्लभ खनिजों के विकल्प जो प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, उनका उपयोग दुर्लभ खनिजों के संरक्षण के बजाय किया जा सकता है।

यद्यपि भारत खनिजों के पर्याप्त संसाधनों से संपन्न है, फिर भी पूरे भूवैज्ञानिक रूप से अनुकूल खनिज क्षेत्र में क्षेत्रीय और विस्तृत अन्वेषण को व्यवस्थित, वैज्ञानिक और गहन रूप से किया जाना है। भारत की नई खनिज नीति में उन खनिजों की खोज पर जोर दिया गया है जिसमें बड़े संसाधनों के लिए भूवैज्ञानिक क्षमता होने के बावजूद देश का संसाधन–सह–भंडार आधार खराब है।

खनिजों के निष्कर्षण का पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए, विकास की जरूरतों के साथ–साथ जंगलों, पर्यावरण और पारिस्थितिकी की रक्षा और खनन क्षेत्रों की जैव विविधता के संरक्षण की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए एक व्यापक सतत विकास ढांचे के मानकों के भीतर खनन किया चाहिए।

आइए अब हम इस इकाई में अब तक सीखी गई बातों की पुनरावृति करें।

9.6 सारांश

इस इकाई में आपने अब तक पढ़ा हैः

- खनिज एक निश्चित रासायनिक संरचना और पहचानने योग्य भौतिक गुणों के साथ प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थ हैं।
- खनिज मानक तापमान पर ठोस होते हैं और एक व्यवस्थित और दोहराव पैटर्न में व्यवस्थित होते हैं, यानी उनकी एक निश्चित क्रिस्टलीय संरचना होती है।
- खनिजों में धातु की मात्रा की उपस्थिति और अनुपस्थिति के आधार पर खनिजों को धात्विक और अधात्विक खनिज के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।
- धात्विक खनिजों को क्रमशः लौह तत्व की उपस्थिति और अनुपस्थिति के आधार पर लौह और अलौह खनिजों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।
- गैर–धातु खनिजों को क्रमशः कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति या कार्बनिक पदार्थों से व्युत्पन्न और उनमें कार्बनिक पदार्थों की अनुपस्थिति के आधार पर कार्बनिक और अकार्बनिक खनिजों में विभाजित किया जाता है।
- जीवाश्म ऊर्जा और खनिज भंडार और संसाधनों के लिए संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क वर्गीकरण (UNFC) तीन मूलभूत मानदंडों, अर्थात् आर्थिक व्यवहार्यता, व्यवहार्यता मूल्यांकन और भूवैज्ञानिक मूल्यांकन के आधार पर एक मानक खनिज वर्गीकरण निर्धारित करता है।
- चूंकि खनिज असमान रूप से वितरित और गैर–नवीकरणीय संसाधन हैं, इसलिए इसे आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित किया जाना चाहिए।

9.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. खनिजों की बुनियादी विशेषताओं की व्याख्या करें।
2. भारत में लौह अयस्क और मैंगनीज के वितरण और उपयोग को एक उपयुक्त आंकड़े के साथ चित्रित करें।

3. हम किन तरीकों से अपनी खनिज संपदा का संरक्षण कर सकते हैं? संक्षेप में बताएं।

9.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. खनिज प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले, अकार्बनिक पदार्थ ठोस अवस्था में क्रिस्टलीय संरचना वाले और एक निश्चित रासायनिक संघटन वाले होते हैं।

   लकड़ी खनिज नहीं है क्योंकि यह जैविक है।

2. धात्विक खनिज वे खनिज हैं जिनमें धातु होती है उदाहरण के लिए लौह अयस्क, तांबा, मैंगनीज, सोना आदि। दूसरी ओर गैर–धातु खनिज वे खनिज हैं जिनमें कोई धातु नहीं होती है, उदाहरण के लिए जीवाश्म ईंधन, अभ्रक, चूना पत्थर आदि। लौह खनिज वे धात्विक खनिज हैं जिनमें लोहे की मात्रा होती है जैसे लौह अयस्क, मैंगनीज, टंगस्टन, निकल, कोबाल्ट, आदि, जबकि धात्विक खनिज जिनमें लौह की मात्रा नहीं होती है, अलौह धातु खनिज कहलाते हैं। सोना, चांदी, तांबा, सीसा, बॉक्साइट, टिन, मैग्नीशियम आदि।

   कार्बनिक खनिज वे अधात्विक खनिज हैं जिनमें कार्बनिक पदार्थ होते हैं। इस प्रकार के उदाहरणों में कोयला, पेट्रोलियम आदि जैसे जीवाश्म ईंधन शामिल हैं। अकार्बनिक खनिज वे गैर–धातु खनिज हैं जिनमें कोई कार्बनिक पदार्थ नहीं होता है, उदाहरण के लिए अभ्रक, चूना पत्थर, ग्रेफाइट आदि।

3. छोटानागपुर– लौह अयस्क

   नेवेली– लिग्नाइट कोयला

   अरावली– चूना पत्थर

   असम–खनिज तेल

अंत में कुछ प्रश्न

1. सबसे पहले खनिजों की सभी महत्वपूर्ण विशेषताओं की सूची बनाएं। फिर उन्हें समझाएं और जहां कहीं आवश्यक हो, आंकड़े या रेखाचित्र बनाएं। इस इकाई की धारा 9.2 का संदर्भ लें।

2. भारत के रफ रेखा–चित्र पर उन क्षेत्रों को चिह्नित करें जहां लौह अयस्क और मैंगनीज पाए जाते हैं और उनके वितरण का वर्णन करें। साथ ही लौह अयस्क और मैंगनीज के उपयोग के संदर्भ में उनके महत्व की व्याख्या करें। उप–भाग 9. 4.2 का संदर्भ लें।

3. पुनः उपयोग, पुनः प्राप्ति और पुनर्चक्रण विधियों पर ध्यान दें। शून्य–अपशिष्ट खनन आदि को बढ़ावा देने का भी उल्लेख करें। भाग 9.5 का संदर्भ लें।

9.9 संदर्भ और अन्य पाठ्यसामग्री

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

1) Singh, Gopal. (2010). *A Geography of India.* New Delhi: Atma Ram and Sons.

2) Industry, India Year Book 2021, Publications Division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India.

3) Annual Report 2021, Ministry of Mines, Government of India.

4) Mineral and Energy Resources, https://ncert.nic.in/textbook/pdf/legy207.pdf

5) http://www.mmmut.ac.in/News_content/40152tpnews_10312020.pdf

6) https://www.tutorialspoint.com/geography/geography_india_mineral_resources.htm

7) https://ibm.gov.in/writereaddata/files/09182018162439Mineral%20Scenario%20pdf.pdf

8) http://ismenvis.nic.in/KidsCentre/Mineral_Distribution_in_India_13948.aspx

9) http://mospi.nic.in/sites/default/files/reports_and_publication/statistical_publication/EnviStats/6_Chater%204%20-%20Mineral.pdf

10) http://mospi.nic.in/sites/default/files/Statistical_year_book_india_chapters/ch15.pdf

11) https://mines.gov.in/writereaddata/UploadFile/GSI_PDAC_2013.pdf

12) https://www.jagranjosh.com/general-knowledge/list-of-indian-states-in-mineral-wealth-1474863637-1

13) https://www.britannica.com/place/India/Resources-and-power

14) https://isgs.illinois.edu/outreach/geology-resources/using-characteristics-minerals-identify-them

15) https://courses.lumenlearning.com/geo/chapter/reading-physical-characteristics-of-minerals/

16) https://sciencing.com/five-characteristics-mineral-23695.html

17) https://geology.com/minerals/

18) https://geology.com/minerals/what-is-a-mineral.shtml

19) https://www.msnucleus.org/membership/html/k-6/rc/minerals/4/rcm4_2a.html

20) https://unece.org/fileadmin/DAM/ie/se/pdfs/UNFC/UNFCemr.pdf

21) https://unece.org/fileadmin/DAM/energy/se/pdfs/UNFC/UNFC.pdf

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 10

ऊर्जा संसाधन

संरचना

10.1 प्रस्तावना
संभावित अध्ययन परिणाम
10.2 ऊर्जा संसाधनों की विशेषताएं
10.3 ऊर्जा संसाधनों का वर्गीकरण
10.4 ऊर्जा संसाधनों का वितरण एवं उपयोग
परंपरागत संसाधन
गैर–परंपरागत संसाधन
10.5 ऊर्जा संसाधनों का संरक्षण
10.6 सारांश
10.7 अंत में कुछ प्रश्न
10.8 उत्तर
10.9 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

10.1 प्रस्तावना

क्या आप अपने जीवन में एक दिन भी बिजली के बिना अथवा ऊर्जा के अन्य स्रोतों जैसे खाना पकाने और परिवहन के लिए प्रयोग किए जाने वाले ईंधन के बिना सोच सकते हैं? मानव जीवन के सभी पहलुओं में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। आधुनिक समय में हम ऊर्जा संसाधनों के बिना मानव प्रगति और विकास के बारे में नहीं सोच सकते हैं। किसी भी देश में ऊर्जा खपत तथा आर्थिक विकास जिसे सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में वृद्धि के रूप में मापा जाता है, में घनिष्ठ संबंध होता है। सामान्य रूप से यह तर्क दिया जाता है कि किसी समाज अथवा देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में ऊर्जा की लागत तथा उपलब्धता दो प्रमुख कारक होते हैं। हालांकि, जैसे–जैसे ऊर्जा गहन औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं का विस्तार हुआ है, पर्यावरण पर उनके प्रतिकूल प्रभाव में वृद्धि हुई है। पिछले कुछ दशकों से इस पहलू पर व्यापक विचार विमर्श किया जा रहा है। आर्थिक और सामाजिक विकास में ऊर्जा की भूमिका की समझ होने से हमें पर्यावरण के अनुकूल और सतत उपयोग के मॉडलों को विकसित करने में मदद मिलेगी।

अतः, हम खंड 10.2 में आर्थिक और सामाजिक विकास में ऊर्जा संसाधनों की बहुआयामी भूमिका की समझ में वृद्धि के साथ अपनी चर्चा शुरू करेंगे। तत्पश्चात, विभिन्न ऊर्जा संसाधनों के वितरण एवं उपयोग पर चर्चा करने से पूर्व, हमने खंड 10.3 में ऊर्जा संसाधनों के वर्गीकरण पर चर्चा की है। खंड 10.4 में, हमने प्रमुख नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों के वितरण और उपयोग का वर्णन किया है। अंत में, खंड 10.5 में विभिन्न ऊर्जा संरक्षण विधियों की व्याख्या की गई है।

संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

- ऊर्जा संसाधनों की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- विभिन्न आधारों पर ऊर्जा संसाधनों का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- भारत में ऊर्जा संसाधनों के वितरण और उपयोग का वर्णन कर सकेंगे; तथा
- ऊर्जा संरक्षण की विभिन्न विधियों की व्याख्या कर सकेंगे।

10.2 ऊर्जा संसाधनों की विशेषताएं

ऊर्जा की मांग प्रत्येक 14 साल में दोगुनी हो जाती है और इसे देश के विकास के प्रमुख संकेतकों में से एक माना जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में विश्व की आबादी का 6.25% भाग निवास करता है और यहां वैश्विक स्तर पर उत्पादित होने वाली ऊर्जा का 30% भाग उपयोग किया जाता है। इसकी तुलना में, भारत में विश्व की लगभग 16% आबादी निवास करती है और यहां विश्व में उत्पादित कुल ऊर्जा का लगभग 3% भाग ही उपयोग किया जाता है। ऊर्जा के उपयोग में निरंतर वृद्धि के बावजूद, अन्य देशों की तुलना में भारत में प्रति व्यक्ति ऊर्जा खपत अभी भी अत्यंत कम है। आज भी, हमारी आबादी का एक बड़ा हिस्सा अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए ईंधन की लकड़ी, गोबर और कृषि अपशिष्ट पर निर्भर है। हम जानते हैं कि ऊर्जा के गैर–नवीकरणीय स्रोत जैसे जीवाश्म ईंधन, कोयला और पेट्रोलियम, दीर्घकाल तक चलने वाले नहीं हैं। इसलिए, ऊर्जा के वैकल्पिक, गैर–पारंपरिक स्रोतों के संदर्भ में सोचना आवश्यक हो गया है।

आइए अब हम उपलब्ध ऊर्जा संसाधनों की विशेषताओं का अध्ययन करें।

(i) उपलब्धता की प्रकृतिः आप जानते हैं कि कुछ ऊर्जा संसाधन प्रकृति में सीमित हैं। इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि ये एक निश्चित मात्रा में ही उपलब्ध हैं। इनका अंधाधुंध तरीके से इस्तेमाल करने पर इनके जल्द ही समाप्त होने की संभावना है। दूसरे, ये संसाधन प्रकृति में सर्वव्यापी नहीं हैं अर्थात ये स्थान विशिष्ट हैं और पृथ्वी के सभी स्थानों पर समान मात्रा में उपलब्ध नहीं है। आप सोच रहे होंगे कि यह किस प्रकार मायने रखता है? यह बहुत मायने रखता है क्योंकि विश्व के जिन देशों अथवा क्षेत्रों में संसाधन उपलब्ध है वे क्षेत्र संसाधन अनुपलब्धता वाले क्षेत्रों अथवा सीमित उपलब्धता वाले क्षेत्रों की तुलना में लाभप्रद स्थिति में हैं।

(ii) पर्यावरणीय प्रभावः इन ऊर्जा संसाधनों की खोज आर्थिक लाभ प्रदान करती है और आर्थिक विकास में मदद करती है किंतु, इसके साथ अनेक हानिकारक प्रभाव भी जुड़े हुए हैं। पेड़ों की अंधाधुंध कटाई के कारण वनों की उपस्थिति में तीव्र गति से कमी हो रही है।

(iii) ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों में अपार संभावनाएं हैं किंतु इनकी खोज कम हुई हैः ऊर्जा के अधिकांश नवीकरणीय स्रोत स्वच्छ और हरित ऊर्जा आधारित हैं। क्या आप जानते हैं स्वच्छ ऊर्जा क्या है? सरल शब्दों में स्वच्छ और हरित ऊर्जा से तात्पर्य ऐसी ऊर्जा से है जो सामान्यतः प्रदूषण रहित और पर्यावरण के अनुकूल होती है। आप खंड 1

में पहले ही पढ़ चुके हैं कि भारत विविधताओं का देश है। यह विविधता अक्षय ऊर्जा जैसे सौर, पवन और ज्वार–भाटा के विकास के लिए वरदान के रूप में कार्य करती है।

10.3 ऊर्जा संसाधनों का वर्गीकरण

ऊर्जा संसाधनों को व्यापक रूप से पारंपरिक उपयोग तथा उपलब्धता के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। पारंपरिक उपयोग के आधार पर ऊर्जा संसाधनों को पारंपरिक और गैर–पारंपरिक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है जबकि उपलब्धता के आधार पर इसे नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है (चित्र 10.1)। इस इकाई में हमने पारंपरिक उपयोग के आधार पर वर्गीकरण का उपयोग किया है। ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोतों में सौर, पवन, बायोमास और भू–तापीय ऊर्जा शामिल है। जबकि, पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के अंतर्गत पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, कोयला और जल विद्युत ऊर्जा को रखा जाता है।

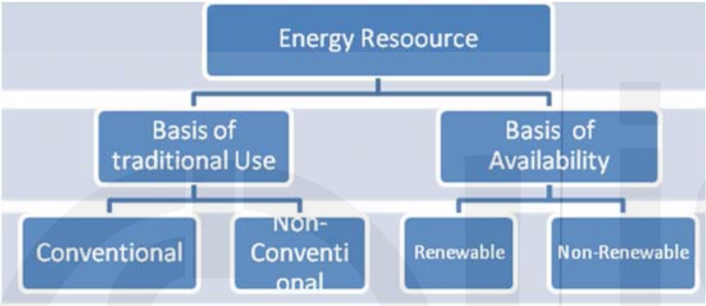

चित्र 10.1: ऊर्जा संसाधनों का वर्गीकरण

आइए हम उपर्युक्त वर्गीकरण पर संक्षेप में चर्चा करें।

A. पारंपरिक उपयोग के आधार पर वर्गीकरणः इस आधार पर ऊर्जा संसाधनों को पारंपरिक और गैर–पारंपरिक रूप से दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है।

(i) ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत: कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों के उदाहरण हैं। ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत गैर–नवीकरणीय होते हैं। ये संसाधन सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं। ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों को पुनः वाणिज्यिक और गैर–वाणिज्यिक ऊर्जा संसाधनों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(ii) ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोतः सौर, पवन, जैव–ईंधन, जैव–द्रव्यमान, ज्वार, महासागर ऊर्जा गैर–पारंपरिक ऊर्जा संसाधनों के उदाहरण हैं। वे प्रकृति में नवीकरणीय और पर्यावरण के अनुकूल हैं। ये संसाधन असीमित मात्रा में उपलब्ध हैं और इन्हें स्वच्छ ईंधन माना जाता है।

B. उपलब्धता के आधार पर वर्गीकरणः इस आधार पर ऊर्जा संसाधनों को दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है अर्थात् नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय।

(i) ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतः ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोत वे ऊर्जा संसाधन हैं जिन्हें उपयोग के बाद पुनः प्राप्त किया जा सकता है। नवीकरणीय संसाधनों के उदाहरणों में पवन, सौर, ज्वारीय और भू–तापीय ऊर्जा स्रोत शामिल हैं।

(ii) ऊर्जा के गैर–नवीकरणीय स्रोतः गैर–नवीकरणीय संसाधन की उपलब्धता सीमित है। क्योंकि ये संसाधन प्रकृति में सीमित मात्रा में पाए जाते हैं। गैर–नवीकरणीय संसाधनों में कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस शामिल हैं।

आपको याद रखना चाहिए कि वर्गीकरण के विभिन्न आधारों के आधार पर किसी विशेष संसाधन को विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। आइए एक उदाहरण पर चर्चा करें। कोयले को पारंपरिक उपयोग के आधार पर ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत के रूप में वर्गीकृत किया गया है जबकि उपलब्धता के आधार पर इसे ऊर्जा के गैर–नवीकरणीय स्रोत के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

बोध प्रश्न 1

उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

(i) उपलब्धता के आधार पर, ऊर्जा संसाधनों को –––––––––– और –––––– में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(ii) सौर ऊर्जा पारंपरिक उपयोग पर आधारित ऊर्जा का एक ––––––––– स्रोत है।

(iii) पेट्रोलियम उपलब्धता के आधार पर ऊर्जा का एक ––––––––––––– स्रोत है।

(iv) अधिकांश नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत ––––––––––– और –––––––– हैं।

10.4 ऊर्जा संसाधनों का वितरण एवं उपयोग

इस खंड में, हम ऊर्जा संसाधनों के कुछ पारंपरिक और गैर–पारंपरिक स्रोतों के वितरण और उपयोग पर चर्चा करेंगे। ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों में, हम कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस और जल–विद्युत के संदर्भ में चर्चा की जाएगी। गैर–पारंपरिक स्रोतों के तहत हम सौर, पवन, ज्वार, भू–तापीय, बायोमास और बायो–गैस का वर्णन करेंगे।

10.4.1 परंपरागत संसाधन

कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस और जल जैसे पारंपरिक स्रोतों के माध्यम से बिजली उत्पादन की मात्रा कृषि, उद्योग तथा जनसंख्या वृद्धि से प्रेरित वर्तमान मांग की तुलना में अत्यंत कम है। दूसरी ओर, हम गैर–पारंपरिक स्रोतों से अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की अतिरिक्त मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं हैं। जिसके परिणामस्वरूप हम अन्य देशों से ऊर्जा संसाधनों जैसे पेट्रोलियम, अच्छी गुणवत्ता वाला कोयला तथा प्राकृतिक गैस आदि का आयात कर रहे हैं।

(i) कोयला

कोयले को उत्पत्ति, कार्बन सामग्री और अन्य विशेषताओं के आधार पर मुख्य रूप से चार प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है। इनमें पीट, लिग्नाइट, बिटुमिनस और एन्थ्रेसाइट शामिल हैं। आइए उन पर संक्षेप में चर्चा करें।

(a) पीटः जहां तक कार्बन की मात्रा के दृष्टिकोण से इसे निम्नतम ग्रेड का कोयला माना जाता है। क्योंकि, इसमें केवल 30% तक कार्बन तत्व होता है। इस प्रकार का कोयला भारत में बहुत कम पाया जाता है।

(b) लिग्नाइटः इसे भूरे रंग के कोयले के रूप में भी जाना जाता है। इस कोयले का निर्माण पीट के बाद द्वितीय चरण में होता है। इसमें कार्बन की मात्रा 35% एवं नवी अथवा आर्द्रता अधिक पाई जाती है। इसलिए, इसको जलाने पर धुआं अधिक जबकि ऊष्मा का मात्रा में पैदा होती है। वितरण के दृष्टिकोण से देखा जाए तो लिग्नाइट के भंडार सामान्यतः तमिलनाडु, राजस्थान और गुजरात राज्य में पाए जाते हैं।

(c) बिटुमिनसः इस कोयले में कार्बन सामग्री उपर्युक्त अन्य दो प्रकारों की तुलना में अधिक है। इसमें कार्बन की मात्रा 40% से 80% के मध्य पाई जाती है। इस कोयले में नमी अथवा आर्द्रता एवं वाष्पशील सामग्री 15% से 40% के मध्य होती है। बिटुमिनस कोयले को आगे दो अन्य प्रकारों में विभाजित किया जा सकता हैः उप–बिटुमिनस तथा बिटुमिनस।

(d) एन्थ्रेसाइटः यह सर्वोत्तम प्रकार का कोयला होता है। कार्बन की मात्रा सर्वाधिक होने के कारण इसे अच्छी गुणवत्ता वाला कोयला माना जाता है। इसका उपयोग अधिकतर ताप विद्युत संयंत्रों और उद्योगों द्वारा किया जाता है।

भारत अपनी कुल ऊर्जा आवश्यकताओं के आधे से अधिक भाग के लिए कोयले पर निर्भर है। देश की लगभग तीन चौथाई बिजली और 63% वाणिज्यिक ऊर्जा कोयले से प्राप्त की जाती है। भारत के पास विश्व के कुल कोयला भंडार का 8% भाग पाया जाता है। भारत चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद दुनिया में तीसरा प्रमुख कोयला उत्पादक देश है। भारत की कोयले की अधिकांश मांग घरेलू उत्पादन के माध्यम से पूरी होती है, केवल कोकिंग कोयला ही अपवाद है जो सीमित मात्रा में उपलब्ध है। कोयले के विशाल भंडार के बावजूद भारत में 3% ही कोकिंग कोयला उपलब्ध है, यही कारण है कि भारत का इस्पात उद्योग अपनी वार्षिक आवश्यकताओं के लगभग 25% भाग को पूरा करने के लिए कोकिंग कोल का आयात करता है।

भारत में कोयले का वितरणः वितरण के दृष्टिकोण से देखने पर हम पाते हैं कि भारत में कोयले का वितरण प्रायद्वीपीय भागों के साथ कुछ अन्य क्षेत्रों में संकेंद्रित है। प्रायद्वीपीय क्षेत्र में कोयले का उत्पादन गोंडवाना चट्टानी तंत्र की दामुडा श्रृंखला में होता है जबकि अन्य क्षेत्रों में यह इओसीन–ओलिगोसीन भूवैज्ञानिक युग की तृतीयक चट्टानों में पाया जाता है। गोंडवाना चट्टानों के वितरण का विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि, इन चट्टानों का विकास प्रायद्वीपीय क्षेत्र में त्रिकोणीय संरचना में हुआ है। इसका उत्तरी भाग मुख्य रूप से नर्मदा और सोन नदियों की सीमा द्वारा निर्धारित है जबकि पूर्व–पश्चिम दिशा में इसकी सीमा नर्मदा नदी की घाटी के साथ अग्रसर होती है। इस त्रिकोणीय क्षेत्र की दक्षिणी सीमा गोदावरी घाटी के साथ उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व दिशा में विस्तृत है। अंतिम, तीसरी भुजा का निर्माण गोदावरी घाटी एवं राजमहल की पहाड़ियों द्वारा प्रायद्वीप के पूर्वी तट तक किया गया है। त्रिकोणीय क्षेत्र के आंतरिक भाग में महानदी घाटी के साथ कोयले की एक सहायक पेटी पाई जाती है। आइए अब हम गोंडवाना और तृतीयक कोयले के वितरण पर विस्तार से चर्चा करें।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

गोंडवाना कोयलाः गोंडवाना प्रकार के कोयला क्षेत्रों का संबंध नदी घाटियों से है। इस प्रकार की नदी घाटियां विभिन्न राज्यों में पाई जाती हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं:

(a) दामोदर – झारखंड और पश्चिम बंगाल
(b) सोन – बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश
(c) महानदी – छत्तीसगढ़ और ओडिशा
(d) गोदावरी–वर्धा – महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना
(e) पेंच – कान्हा–तवा – मध्य प्रदेश (चित्र 10.2)

तृतीयक कोयलाः जैसा कि इस खंड क्या आरंभ में उल्लेख किया गया है, इस प्रकार का कोयला मुख्य रूप से इओसीन–ओलिगोसीन भूवैज्ञानिक युग की तृतीयक चट्टानों में पाया जाता है। इस प्रकार की चट्टाने सामान्यतः उत्तर–पूर्वी राज्यों असम, मेघालय, नागालैंड, अरुणाचल प्रदेश और जम्मू और कश्मीर में पाई जाती हैं।

लिग्नाइटः 90% से अधिक लिग्नाइट भंडार तमिलनाडु राज्य में पाए जाते हैं। तमिलनाडु राज्य में, कुड्डालोर जिले के नेवेली क्षेत्रों में पाए जाने वाले भंडार इस प्रकार के कोयले के लिए प्रसिद्ध हैं। राज्य में अन्य महत्वपूर्ण खनन क्षेत्र त्रिची जिले के जयमकोंडाचोलपुरम, मनारगुडी और वीरनाम के पूर्व में स्थित हैं। तमिलनाडु के अलावा राजस्थान, गुजरात, जम्मू और कश्मीर और केरल राज्यों में भी लिग्नाइट कोयला पाया जाता है।

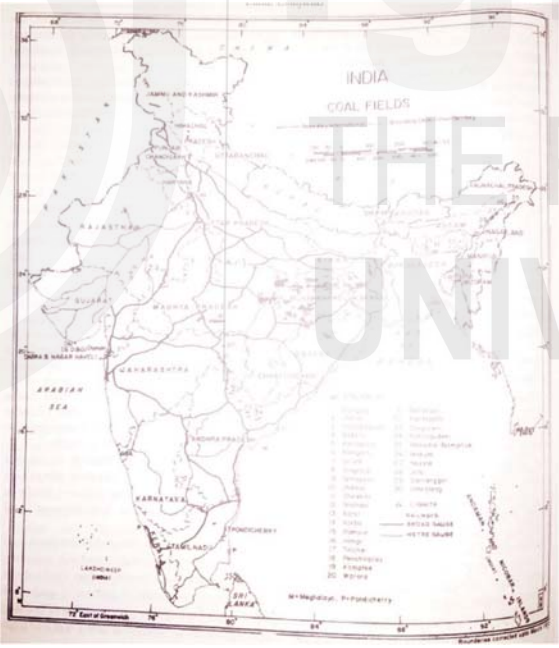

चित्र 10.2: भारत में कोयले का वितरण

(ii) पेट्रोलियम

यह ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है तथा आर्थिक विकास को तीव्र करने के लिए इसकी अत्यधिक मांग है। जैसा कि आप जानते हैं कि पेट्रोलियम एक महत्वपूर्ण ऊर्जा संसाधन होने के साथ कई रासायनिक उद्योगों के लिए स्नेहक और कच्चा माल प्रदान करता है। इसमें विविध उत्पाद शामिल हैं, जैसे मिट्टी का तेल, डीजल, पेट्रोल, विमानन

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ईंधन, सिंथेटिक रबर, सिंथेटिक–फाइबर, थर्मोप्लास्टिक रेजिन, बेंजीन–मेथनसोल, पॉलीस्ट्रीन, एक्रिलेट्स, डिटर्जेंट, एरोमेटिक्स, गैसोलीन, कार्बन–ब्लैक, डाई, रंग, खाद्य रंग, पिगमेंट, विस्फोटक, मुद्रण स्याही, फिल्म–फोटोग्राफी, ग्रीस, सौंदर्य प्रसाधन, पेंट, स्नेहक तेल, पैराफिन और मोम।

पेट्रोलियम एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला ज्वलनशील द्रव है। यह तरल और गैसीय हाइड्रोकार्बन का मिश्रण है। इसमें घुलनशील अवस्था में ठोस बिटुमेन, ऑक्सीजन, सल्फर और नाइट्रोजन के कार्बनिक यौगिक मिश्रित रूप में पाए जाते हैं। पेट्रोलियम में पाए जाने वाले हाइड्रोकार्बन मीथेन, नैप्थीन और एरोमैटिक श्रेणी के होते हैं। क्या आप जानते हैं कि इसकी उत्पत्ति कैसे हुई? अब इस बात पर आम सहमति है कि इसकी उत्पत्ति उथले पानी के प्लवक और डायटम से जुड़ी हुई है और संबंधित चट्टानें मेसोज़ोइक और तृतीयक काल के शैल, सिल्ट और चूना पत्थर जैसे समुद्री तलछट हैं।

वितरणः भारत में पेट्रोलियम सामान्यतः तटवर्ती और अपतटीय क्षेत्रों में पाया जाता है। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के उत्पादन के लिए लिए भारत में बॉम्बे हाई, खंभात, ऊपरी असम, कृष्णा–गोदावरी, असम–अराकान और कावेरी बेसिन हैं प्रसिद्ध हैं (चित्र 10.3)। क्या आप जानते हैं कि पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस इन्हीं क्षेत्रों में क्यों पाई जाती है? इसका कारण यह है कि पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के निर्माण की अधिकांश घटनाएँ निचले और मध्य तृतीयक काल के चट्टानों अपनति और भ्रंशन से संबंधित हैं।

भारत के कुल ऊर्जा उत्पादन में पेट्रोलियम का योगदान लगभग 30% है। 1999 में देश में तेल की खपत लगभग 1.93 मिलियन बैरल प्रति दिन (bpd–बीपीडी) थी और 2017 में लगभग 4.7 मिलियन बीपीडी थी। वर्ष 2017 में, भारत द्वारा लगभग 198 मिलियन टन कच्चे तेल और उसके उत्पादों का आयात किया गया। भारत में तेल भंडार लगभग 4.7 अरब बैरल अनुमानित हैं। बॉम्बे हाई फील्ड भारत का सबसे बड़ा उत्पादक क्षेत्र है। यहां से 1998 में 250,000 बैरल प्रति दिन और 1999 में 210,000 बैरल प्रति दिन उत्पादन किया गया। हालांकि, अगर हम खपत के साथ उत्पादन की तुलना करते हैं, तो यह देखा गया है कि भारत में उत्पादन और खपत के बीच एक बड़ा अंतर है। पेट्रोलियम उत्पादों की खपत 1991–1992 में 57 मिलियन टन से बढ़कर 2016 में 196 मिलियन टन हो गई। भारत हाइड्रोकार्बन विजन 2025 रिपोर्ट का अनुमान है कि 2025 तक भविष्य में रिफाइनरी उत्पादों की मांग लगभग 368 मिलियन टन हो जाएगी। इस प्रकार, भारत पेट्रोलियम उत्पादों के लिए एक प्रमुख वैश्विक बाजार बन रहा है।

(iii) प्राकृतिक गैस

प्राकृतिक गैस सामान्यतः पेट्रोलियम के साथ पाई जाती है। जब भी पेट्रोलियम को प्राप्त करने के लिए खनन कार्य किया जाता है तब इसी प्रक्रिया के तहत प्राकृतिक गैस भी उपलब्ध होती है। हम पिछले भाग में भारत में तेल के वितरण के संदर्भ में पहले ही चर्चा कर चुके हैं। इसलिए आप भारत में प्राकृतिक गैस के वितरण का अनुमान लगा सकते हैं। भारत ने वर्ष 1985 के बाद नए गैस क्षेत्रों की खोज की दिशा में तेजी से प्रगति की है। इन्हीं प्रयासों के परिणामस्वरूप गैस देश की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं का लगभग 7% भाग प्राकृतिक गैस से पूरा किया जाता है।

वितरणः भारत में कुल गैस का लगभग तीन–चौथाई हिस्सा मुंबई हाई से प्राप्त किया जाता है। साथ ही, कुल गैस का 11 प्रतिशत से अधिक भाग अंकलेश्वर और गुजरात में खंभात की खाड़ी से आता है। शेष भाग आंध्र प्रदेश में गोदावरी और कृष्णा बेसिन, राजस्थान के बाड़मेर जिले, तमिलनाडु के तंजावुर और शिंगलपुट, असम और त्रिपुरा से प्राप्त किया जाता है। प्राकृतिक गैस का मुख्य रूप से बिजली उत्पादन, उर्वरक और पेट्रोकेमिकल उत्पादन में उपयोग किया जाता है। प्राकृतिक गैस विदेशी तेल पर निर्भरता को कम करने में मदद कर सकती है। प्राकृतिक गैस के पर्यावरणीय लाभों में सल्फर डाइऑक्साइड की अनुपस्थिति तथा कार्बन डाइऑक्साइड एवं नाइट्रोजन ऑक्साइड के कम स्तर शामिल हैं। वर्तमान में, भारत की प्राकृतिक गैस की खपत 50 बिलियन क्यूबिक मीटर (बीसीएम) है और इसका अधिकांश भाग घरेलू उत्पादन से पूरा किया जाता है। 2017 में, भारत ने 27,570 मिलियन क्यूबिक मीटर प्राकृतिक गैस का आयात किया था।

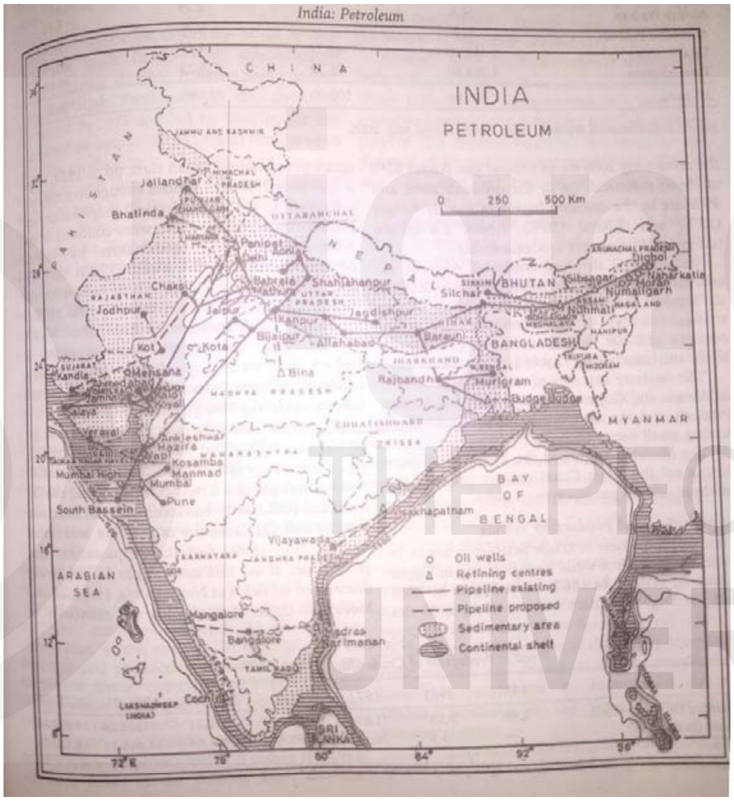

चित्र 10.3: भारत में तेल और प्राकृतिक गैस का वितरण

(iv) जल विद्युत ऊर्जा

जल विद्युत ऊर्जा के सस्ते एवं स्वच्छ होने के कारण इसे ऊर्जा का सबसे अच्छा स्रोत माना जाता है (चित्र 10.4)। आजादी से पहले भारत में बहुत कम संख्या में जलविद्युत परियोजनाएं थीं। स्वतंत्रता के बाद जल विद्युत परियोजनाओं में वृद्धि और विकास तीव्र गति से हुआ है।

जल–विद्युत विद्युत परियोजना की अवस्थिति को निर्धारित करने वाले कारकः क्या आप जल–विद्युत परियोजना के विकास के लिए उत्तरदायी कारकों के नाम बता सकते हैं? इसके लिए उत्तरदाई प्रमुख कारकों में नदियों में वर्ष भर जल की उपलब्धता और क्षेत्र

विशेष की मौसमी दशाएं, तरंगित स्थलाकृति, बांध के निर्माण के लिए उपयुक्त चट्टानी संरचना और ऊर्जा की मांग शामिल हैं। आइए इन कारकों को विस्तार से जानेः

(i) नदियों के प्रवाह की वार्षिक एवं मौसमी दशाएं तथा उनकी मासिक स्थितिः जल विद्युत के उत्पादन के लिए नदियों में वर्ष भर जल की उपयुक्त मात्रा एवं प्रवाह का रहना आवश्यक होता है। यह वर्षा की मात्रा (बारिश वाले क्षेत्रों में) अथवा हिमनदों के पिघलने की प्रक्रिया, जिससे नदियों को जल की प्राप्ति होती है पर निर्भर करता है।

(ii) प्राकृतिक जलप्रपात के लिए पर्याप्त ऊँचाईः जल विद्युत उत्पादन के लिए आवश्यक है कि जलप्रपात की ऊंचाई अधिक हो जिससे तीव्र गति से जल को छोड़ा जा सके। यह ऊँचाई प्राकृतिक जलप्रपात के रूप में हो सकती है अथवा नदी पर बांध बनाकर प्राप्त की जा सकती है। किस प्रकार की दशाओं को जल को एक नदी बेसिन से दूसरी नदी में मोड़कर भी प्राप्त किया जा सकता है।

(iii) बाजार की उपलब्धताः जल विद्युत ऊर्जा के उत्पादन के बाद निकट बाजार की उपलब्धता एक अन्य प्रमुख कारक हैअ क्योंकि बिजली का भंडारण नहीं किया जा सकता है।

(iv) विशाल पूंजी निवेशः पूंजी गहन क्रिया होने के कारण जल विद्युत ऊर्जा के उत्पादन के लिए भारी मात्रा में पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है।

(v) तकनीकी प्रगतिः इसके लिए उन्नत तकनीकी की भी आवश्यकता होती है क्योंकि उत्पादन, वितरण और उपयोग को कुशलता पूर्वक संपन्न करने के लिए उच्च तकनीकी होना अत्यंत आवश्यक है।

क्षेत्रीय प्रतिरूपः उपर्युक्त कारकों में भिन्नता के कारण किसी भी देश में पनबिजली परियोजनाओं का वितरण असमान रूप से पाया जाता है। भारत में जलविद्युत परियोजनाओं का स्थानिक विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि अधिकांश जल विद्युत परियोजनाएं आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र, ओडिशा, पंजाब, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में स्थित हैं। हालाँकि, जलविद्युत परियोजनाएँ पूरे देश में वितरित हैं। भारत के विभिन्न राज्यों में स्थित कुछ प्रमुख जलविद्युत परियोजनाओं की सूची नीचे तालिका 10.1 में दी गई है। हालांकि, हाल के दिनों में बिजली उत्पादन के लिए बड़े बांधों का निर्माण करने के कारण अनेक विवाद उत्पन्न हुए हैं। यही कारण है कि, छोटे जल विद्युत संयंत्र व्यवहार्य विकल्प के रूप में उभर रहे हैं। ये संयंत्र दूरदराज और ग्रामीण क्षेत्रों की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करते हैं जहां ग्रिड द्वारा बिजली की आपूर्ति उपलब्ध नहीं है।

तालिका 10.1: भारत के विभिन्न राज्यों में महत्वपूर्ण जल विद्युत संयंत्र

राज्य	जलविद्युत संयंत्रों के नाम
आंध्र प्रदेश	लोअर सिलेरू, अपर सिलेरू, मचकुंड, श्रीशैलम (कृष्णा)।
बिहार	कोसी।
गुजरात	उकाई (तापी), कड़ाना (माही), सरदार सरोवर
जम्मू और कश्मीर	लोअर झेलम, चिनाब पर सलाल, दूल हस्ती, कर्राह और

	बनिहार।
झारखंड	सुवर्णरेखा, मैथन, पंचेत, तिलैया
कर्नाटक	तुंगभद्रा, सरावती, कालिंदी, महात्मा गांधी (जोग फॉल), भद्रा, शिवसमुद्रम (कावेरी), शिमासापुरा, मुनीराबाद, लुंगनामक्की।
केरल	इद्दीकी (पेरियार), सबरीगिरी, कुट्टियाडी, शोलायर, सेनगुलम, पल्लीवासल, कल्दा, नेरियामंगलम, परम्बिकुलम अलीयार, पोरिंगल, पोन्नियर।
मध्य प्रदेश	चंबल पर गांधी सागर, नर्मदा पर पेंच, बरगी, बाणसागर–टोंस।
महाराष्ट्र	कोयाना, भिवपुरी, खोपोली, भोला, भीरा, पूर्णा, वैतेर्ना, पैठों, भटनागर बीड
उत्तर–पूर्वी राज्य	दिखू, नागालैंड में दोयांग, त्रिपुरा में गोमुती, मणिपुर में लोकतक, असम में कोपिली, मेघालय में खोंडोंग और किर्डेमकुलई, मिजोरम में सेरलुई और बाराबी, अरुणाचल प्रदेश में रंगनाडी
ओडिशा	हीराकुंड (महानदी), बालीमेला, रेंगाली (ब्राह्मणी), इंद्रावती
पंजाब और हिमाचल प्रदेश	सतलुज पर भाखड़ा–नंगल, ब्यास पर देहर, गिरि बाटा, आंध्र, बिनवा, रुकती, रोंगटोंग, भाभानगर, बस्सी, बैरा सिउल, चमेरा, सतलुज पर नाथपा–झाकरी
राजस्थान	चंबल पर राणाप्रताप सागर और जवाहर सागर।
तमिलनाडु	पायकारा, मेट्टूर, कोडयार, शोलायर, अलियार, सकरपति, मोयार, सुरुलियार, पापनासम।
तेलंगाना	कृष्णा पर निजाम सागर और नागार्जुन सागर
उत्तराखंड	भागीरथी पर टिहरी बांध
उत्तर प्रदेश	रिहंद, खोदरी, टोंस पर चिब्रो
पश्चिम बंगाल	पंचेत

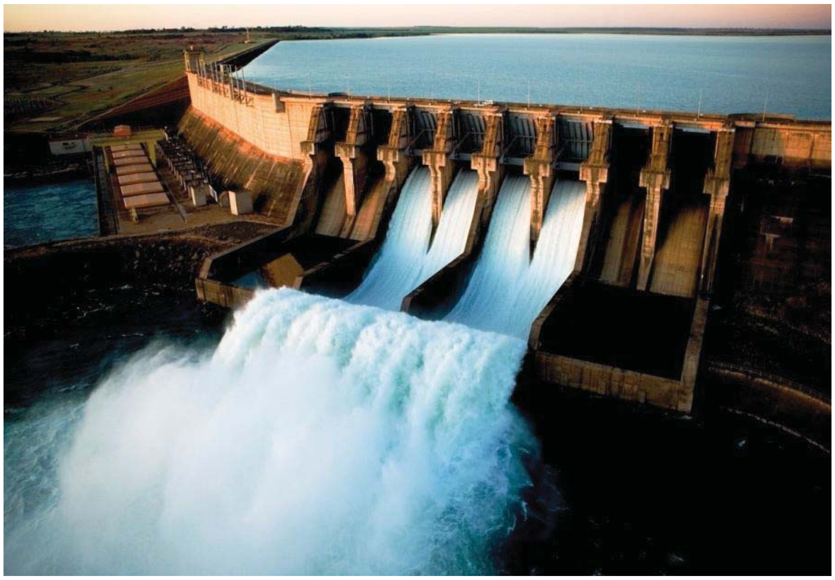

चित्र 10.4: भारत में प्रमुख जल विद्युत परियोजनाएं।
(**स्रोत**: http://www2.emersonprocess.com/SiteCollectionImages
/News%20Images/Agua%20Verm080.jpg)

(v) परमाणु ऊर्जा: जैसा कि नाम से पता चलता है, परमाणु खनिजों से प्राप्त ऊर्जा को परमाणु ऊर्जा के रूप में जाना जाता है। क्या आप उन परमाणु खनिजों के बारे में जानते हैं जिनसे हम परमाणु ऊर्जा प्राप्त करते हैं? कुछ महत्वपूर्ण परमाणु खनिज यूरेनियम और थोरियम हैं। अन्य परमाणु खनिज बेरिलियम, लिथियम और जिरकोनियम हैं। परमाणु खनिजों के अधिक संख्या में उपलब्ध होने के बावजूद परमाणु ऊर्जा के उत्पादन के लिए यूरेनियम का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यूरेनियम परमाणु अपेक्षाकृत आसानी से अलग हो जाते हैं।

नियंत्रित तरीके से परमाणु विखंडन से निकलने वाली ऊर्जा का उपयोग बिजली उत्पादन के लिए किया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए प्रयुक्त उपकरण को परमाणु रिएक्टर कहा जाता है (चित्र 10.3)। परमाणु रिएक्टर गर्मी पैदा करते हैं, जिसका उपयोग बिजली पैदा करने हेतु टर्बाइनों को घुमाकर भाप उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। यह अनुमान लगाया गया है कि 1 किलो प्राकृतिक यूरेनियम (जिसे 235 U लिखा जाता है), 35,000 किलो कोयले से उत्पादित ऊर्जा के बराबर ऊर्जा उत्पन्न करता है।

यूरेनियम जैसे परमाणु ईंधन से ऊर्जा उत्पादन अपेक्षाकृत स्वच्छ एवं कुशल है और कोयले तथा पेट्रोलियम के विकल्प के रूप में कार्य कर सकता है। हालाँकि, परमाणु रिएक्टरों को मानव बस्तियों से दूर स्थानों पर निर्मित करने की आवश्यकता होती है। रेडियोधर्मी सामग्री के किसी भी आकस्मिक रिसाव को रोकने के लिए, उन्हें सख्त सुरक्षा नियंत्रण के तहत संचालित किया जाता है। साथ ही, रेडियोधर्मी कचरे का सावधानीपूर्वक निपटान किया जाना चाहिए। वर्तमान में, न्यूक्लियर पावर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (एनपीसीआईएल) सात अलग–अलग स्थलों पर 5780 मेगावाट की स्थापित क्षमता वाले 21 परमाणु ऊर्जा रिएक्टर आरंभ कर रहा है। ये संयंत्र महाराष्ट्र के तारापुर, तमिलनाडु के कलपकम और कुडनकुलम, राजस्थान के रावतभट्टा, उत्तर प्रदेश के नरोरा, कर्नाटक के कैगा और गुजरात के काकरापार में स्थित हैं।

चित्र 10.5: भारत में प्रमुख परमाणु ऊर्जा संयंत्र।

(Source: http://www.power-eng. com/content/dam/Pennenergy/onlinearticles/ 2013/February /Sequoyah-Nuclear-Plant.jpg & http://seco.cpa.state.tx.us/images/manure-biogas.gif)

बोध प्रश्न 2

a) उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

(i) 90% से अधिक लिग्नाइट भंडार ———————— राज्य में पाए जाते हैं।

(ii) भारत में कुल गैस का लगभग तीन–चौथाई ——————— से आता है।

(iii) दक्षिणी भारत में, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के लिए अत्यधिक संभावित बेसिन ——————————— और ——————————— हैं।

b) निम्नलिखित का मिलान करें

जल विद्युत विद्युत परियोजना	नदी
(a) हीराकुंड	(i) कृष्णा
(b) भाखड़ा–नंगल	(ii) महानदी
(c) नागार्जुन सागर	(iii) चंबल
(d) गांधी सागर	(iv) सतलुज

10.4.2 गैर–परंपरागत संसाधन

भारत में गैर–पारंपरिक ऊर्जा के विभिन्न स्रोत हैं जिनकी चर्चा हम इस भाग में करेंगे। जैसा कि खंड 10.3 में उल्लेख किया गया है, हमने उन स्रोतों पर संक्षेप में चर्चा की है जिनमें भारत में नवीकरणीय ऊर्जा के उत्पादन की उच्च क्षमता है, जैसे सौर, पवन, लघु–पनबिजली, बायोमास, गन्ने के अवशिष्ट पदार्थ आधारित उत्पादन तथा अपशिष्ट से ऊर्जा। भारत सरकार के सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के राष्ट्रीय

सांख्यिकी कार्यालय द्वारा "ऊर्जा सांख्यिकी 2020" में दिए गए आंकड़ों के अनुसार, 31.03.2019 को देश में अक्षय ऊर्जा उत्पादन की कुल क्षमता 1097465 मेगावाट अनुमानित है। इसमें 748990 मेगावाट (68.25%) की सौर ऊर्जा क्षमता, 302251 मेगावाट (27.54%) की पवन ऊर्जा क्षमता, 21134 मेगावाट (1.93%) की लघु–जल विद्युत (लघु जल विद्युत ऊर्जा) क्षमता, 17,536 मेगावाट (1.60%) की बायोमास ऊर्जा शामिल है। गन्ने के अवशिष्ट पदार्थ आधारित सह–उत्पादन से 5000 मेगावाट (0.46%) और अपशिष्ट से 2554 मेगावाट (0.23%) ऊर्जा अनुमानित है।

31 मार्च 2019 को अक्षय ऊर्जा की अनुमानित क्षमता के भौगोलिक वितरण से पता चलता है कि राजस्थान में लगभग 15% (162223 मेगावाट) की सबसे अधिक हिस्सेदारी है, इसके बाद गुजरात में 11% हिस्सेदारी (122086 मेगावाट) और महाराष्ट्र और जम्मू और कश्मीर में 10% हिस्सेदारी है। (क्रमशः 113925 MW और 112800 MW)। इसमें मुख्य रूप से सौर ऊर्जा का योगदान है, हालांकि गुजरात में पवन ऊर्जा का हिस्सा सबसे अधिक है। इसलिए, आइए भारत में उज्ज्वल भविष्य की संभावनाओं वाले कुछ महत्वपूर्ण गैर–पारंपरिक ऊर्जा संसाधनों पर चर्चा करें। ये संसाधन हैं–सौर, पवन, लघु–पनबिजली, बायोमास, गन्ने के अवशिष्ट पदार्थ आधारित उत्पादन तथा अपशिष्ट से ऊर्जा।

(i) सौर ऊर्जा

सौर ऊर्जा ऊर्जा का सर्वाधिक आसान एवं प्रचुर मात्रा में उपलब्ध स्रोत है। आप जानते होंगे कि यह गैर–प्रदूषणकारी भी है। वर्तमान में, हमारे पास विभिन्न उद्देश्यों हेतु सौर ऊर्जा का उपयोग करने के लिए तकनीकी ज्ञान उपलब्ध है। क्या आप कुछ ऐसे क्षेत्रों के नाम बता सकते हैं जिनमें हम सौर ऊर्जा का उपयोग कर रहे हैं? सौर ऊर्जा का प्रत्यक्ष उपयोग सर्दियों में पानी को गर्म करने तथा ठंडे क्षेत्रों में कमरे के तापमान को बढ़ाने के लिए किया जाता है (चित्र 10.6)। हमारे पास सोलर कुकर उपलब्ध हैं जिनका उपयोग कई घरों में खाना पकाने के लिए किया जा रहा है। इसका उपयोग रेफ्रिजरेटर चलाने के लिए भी किया जाता है (चित्र 10.7)। "फोटो वोल्टाइक सेल" की सहायता से वाहनों को चलाने के लिए, रोशनी के लिए तथा जैसा कि उपर्युक्त पिछले पैराग्राफ में चर्चा की गई है, अनेक अन्य उद्देश्यों के लिए बिजली का उत्पादन किया जा रहा है। चूंकि यह ऊर्जा का एक सतत स्रोत है, इसलिए सौर ऊर्जा का उपयोग करने के लिए सस्ते और कुशल फोटोसेल अथवा फोटोवोल्टिक उपकरणों को विकसित करने से व्यापक लाभ प्राप्त होगा।

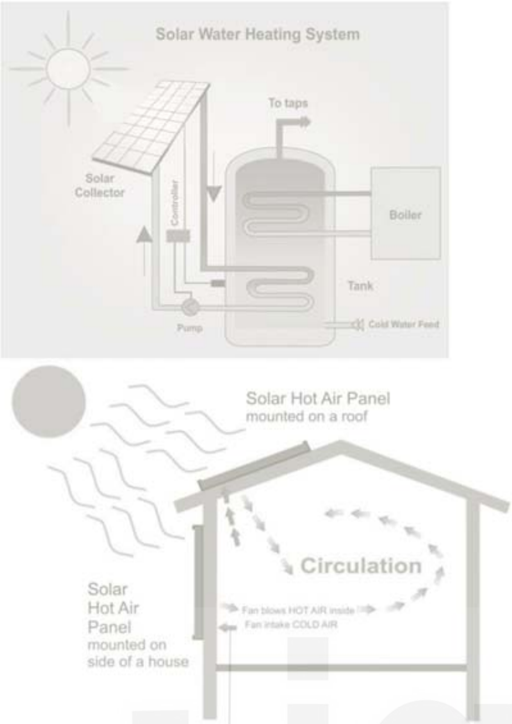

चित्र.10.6: सौर ऊर्जा का उपयोग पानी और कमरे को गर्म करने के लिए किया जा रहा है।

औसतन, 60 मिलियन वर्ग किमी उष्णकटिबंधीय समुद्र 245 बिलियन बैरल तेल की ऊष्मा के बराबर सौर विकिरण को अवशोषित करते हैं। इमारतों अथवा खुले स्थानों में स्थापित सौर फोटोवोल्टिक (एसपीवी) पैनलों में सौर विकिरण सीधे बिजली में परिवर्तित हो जाता है। इस बिजली को सीधे इस्तेमाल करने के साथ घरेलू प्रकाश, स्ट्रीट लाइटिंग, ग्रामीण विद्युतीकरण, पानी के पंपिंग, लवणीय जल के विलवणीकरण, दूरस्थ दूरसंचार स्टेशनों और रेलवे सिग्नल की शक्ति के लिए उपयोग की जाने वाली बैटरी में संग्रहीत किया जा सकता है। सौर निष्क्रिय इमारतों की डिजाइन एवं निर्माण में सौर ऊर्जा का उपयोग किया जा रहा है जिससे हीटिंग और कूलिंग के लिए ऊर्जा की खपत में कटौती हो रही है। यह तकनीक शहरी क्षेत्रों में तेजी से स्वीकृति प्राप्त कर रही है।

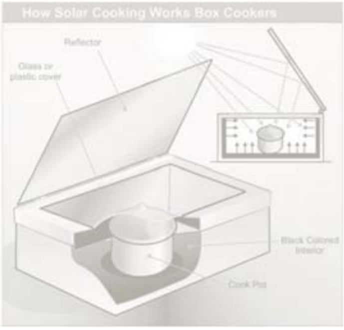

चित्र 10.7: सौर ऊर्जा आधारित रेफ्रिजरेटर और कुकर।

जहां तक भारत का संबंध है, सौर ऊर्जा संभावित ऊर्जा स्रोतों में से एक है तथा सौर ऊर्जा उद्योग यहां में तीव्र गति से बढ़ रहा है। देश की सौर स्थापित क्षमता 31.03.2018 को 21.65 GW की तुलना में 31.03.2019 को 28.18 GW तक पहुंच गई है। राजस्थान,

जम्मू और कश्मीर, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र राज्य सौर ऊर्जा उत्पादन के सर्वाधिक संभाव्य राज्यों में शामिल हैं।

(ii) पवन ऊर्जा

पवन ऊर्जा का उपयोग अनेक वर्षों से नौकायन, अनाज पीसने और सिंचाई के लिए किया जाता रहा है। पवन ऊर्जा प्रणालियाँ पवन की गति से संबंधित गतिज ऊर्जा को ऊर्जा के अधिक उपयोगी रूपों में परिवर्तित करती हैं। पवन टर्बाइन पवन की ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देती हैं, जिसका उपयोग सीधे तौर पर अनाज पीसने, पानी उठाने या बिजली उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है। पवन टर्बाइनों का उपयोग एकल रूप में अथवा समूहों में किया जाता है जिन्हें 'विंड फ़ार्म' कहा जाता है। कई देशों में पवन चक्कियों का उपयोग बहुत पहले से किया जाता रहा है, किंतु भारत में इनका उपयोग हाल में ही आरंभ किया गया है (चित्र 10.8)।

चित्र 10.8: पवन पंप।
(Source: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Turbines-thar-india.jpg)

(iii) ज्वारीय ऊर्जा

ऊर्जा समुद्री तरंगों और ज्वार से भी प्राप्त की जा सकती है। ये तरंगे और ज्वार–भाटा ऊर्जा के अन्य स्रोत हैं जो शाश्वत रूप से उपलब्ध हैं तथा इनका उपयोग बिजली उत्पादन के लिए किया जा सकता है (चित्र 10.7)। समुद्रिक कंदराओं विशेष रूप से ऐसे तटीय संकीर्ण क्षेत्र जिनमें जल तीव्र गति से प्रवेश कर जाता है तथा जहां नदियां ऐस्चुरी के रूप में समुद्र में मिल जाती हैं, ऐसे क्षेत्र ज्वारीय ऊर्जा उत्पादन के लिए उपयुक्त दशाएं प्रदान करते हैं। तटीय क्षेत्रों में ज्वार एवं भाटा द्वारा अंदर आने एवं बाहर जाने वाले जल को बांध द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इस प्रकार दोनों स्थितियों में बिजली उत्पन्न की जाती है। जल ऊर्जा का भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में भी व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है, क्योंकि क्षेत्रों में तेज गति से प्रवाहित होने वाली नदियों में पैडल वाले पहिये को बिजली उत्पन्न की जा सकती है। इस सिद्धांत पर बनी छोटी आकार की आटा मिलों का उपयोग कश्मीर में लंबे समय तक किया जाता रहा है। वास्तव में, बृहद जल विद्युत स्टेशन भी समान सिद्धांत पर कार्य करते हैं। इनमें एक आधुनिक प्रकार के पेडल व्हील को घुमाने के लिए एक प्राकृतिक या कृत्रिम जलप्रपात का निर्माण किया जाता, जिसे टर्बाइन कहा जाता है तथा इसके घूमने पर बिजली उत्पन्न होती है। भारत में, 150 मेगावाट की क्षमता वाली प्रथम तरंग ऊर्जा परियोजना तिरुवनंतपुरम के निकट विझिंजम में स्थापित की गई है। 5000 करोड़ रुपये की लागत वाली एक प्रमुख ज्वारीय तरंग विद्युत परियोजना को हंथल क्रीक, कच्छ की खाड़ी (गुजरात राज्य) में स्थापित करने का प्रस्ताव है।

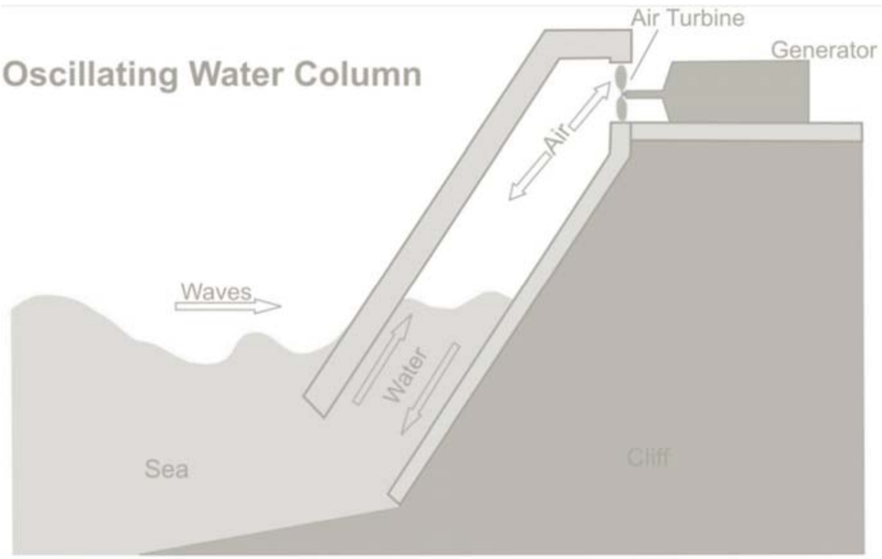

चित्र.10.9: ज्वारीय ऊर्जा स्टेशन।

(iv) भूतापीय ऊर्जा

ज्वालामुखी, गर्म झरने, गीजर तथा समुद्री जल में मीथेन भूतापीय ऊर्जा के प्रमुख स्रोत हैं। जियोथर्मल का अर्थ है पृथ्वी से निकलने वाली ऊष्मा। कुछ देशों में, जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में भूमिगत रूप में पाए जाने वाले गर्म जल के भंडार से जल को पंप किया जाता है और लोगों के घरों को गर्म करने के लिए उपयोग किया जाता है। बिजली उत्पन्न करने के लिए गर्म जल और गर्म झरनों के की भाप का उपयोग किया जा सकता है (चित्र 10.10)। हमारे देश में लगभग 46 जलतापीय क्षेत्र हैं जहाँ झरने के पानी का तापमान 150°C से अधिक है। गर्म झरनों की तापीय ऊर्जा का उपयोग बिजली पैदा करने, ठंडे क्षेत्रों में इमारतों को गर्म करने और कांच–घरों में सब्जियां उगाने के लिए किया जा सकता है।

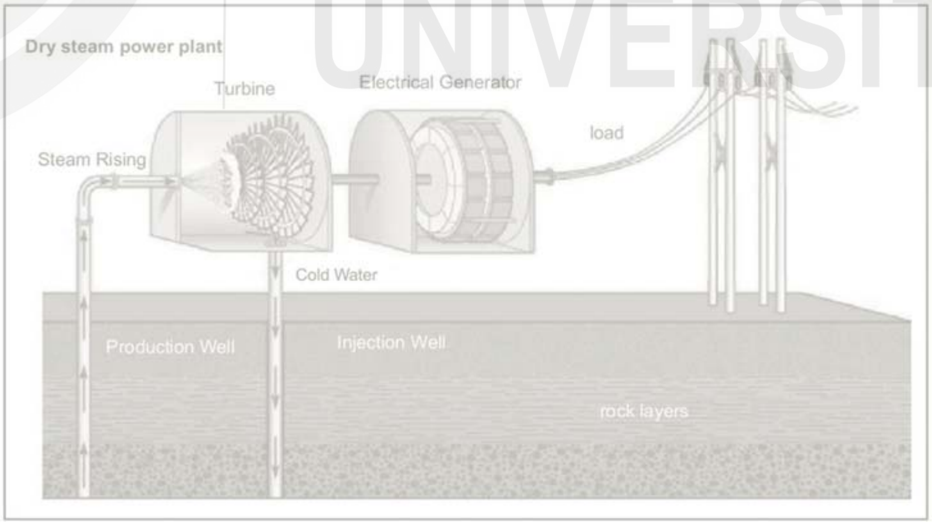

चित्र.10.10: गीजर भूतापीय विद्युत द्वारा प्रत्यक्ष रूप से भाप से ऊर्जा उत्पन्न करता है।

भारत में, उत्तर–पश्चिमी हिमालय और पश्चिमी तट को भू–तापीय क्षेत्र माना जाता है। IRS–1 जैसे उपग्रहों ने पृथ्वी की अवरक्त तस्वीरों के माध्यम से भू–तापीय क्षेत्रों का

पता लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण द्वारा पहले ही 350 से अधिक गर्म जल के झरने वाले स्थलों की खोज की जा चुकी है, जिनकी पहचान भू–तापीय ऊर्जा के दोहन क्षेत्रों के रूप में की जा सकती है। लद्दाख क्षेत्र की पुगा घाटी में प्रयोगात्मक स्तर पर 1 किलोवाट की परियोजना का संचालन किया जा रहा है, जिससे उत्पन्न होने वाली ऊर्जा को उच्च तापमान की आवश्यकता वाले क्षेत्रों जैसे मुर्गी पालन, मशरूम की खेती और पश्मीना–ऊन प्रसंस्करण के लिए किया जा रहा है।

(v) बायोमास ऊर्जा: यह एक अक्षय ऊर्जा स्रोत है जिसे पौधों के उत्पादों, पशु अपशिष्ट और विभिन्न मानव गतिविधियों के अपशिष्ट से प्राप्त क्या जाता है। इसे लकड़ी उद्योग, कृषि फसलों, जंगल से प्राप्त कच्चे माल तथा घरेलू कचरे द्वारा भी प्राप्त किया जाता है। बायोमास ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है जो कोयले, तेल और प्राकृतिक गैस के बाद विश्व भर में महत्वपूर्ण ईंधन के रूप में प्रसिद्ध है। बायोमास द्वारा पर्यावरण में कार्बन डाइऑक्साइड की शुद्ध मात्रा नहीं जोड़ी जाती है क्योंकि यह उतनी ही कार्बन की मात्रा को अवशोषित कर लेता है जितनी इसके ईंधन के रूप में उपयोग किए जाने पर पर्यावरण में मुक्त होती है। इसका लाभ यह है कि बायोमास का उपयोग उन्हीं उपकरणों अथवा बिजली संयंत्रों से बिजली उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है जो वर्तमान में बिजली उत्पादन के लिए जीवाश्म ईंधन का उपयोग कर रहे हैं। भारत में उपयोग की जाने वाली बायोमास ऊर्जा देश में उपयोग किए जाने वाले कुल ऊर्जा का लगभग एक तिहाई है। 90% से अधिक ग्रामीण परिवार और लगभग 15% शहरी परिवार बायोमास ईंधन (जैसे लकड़ी, गोबर के उपले तथा फसल के अवशेष आदि) का उपयोग करते हैं। पारंपरिक चूल्हों में इस तरह के ईंधन को अकुशल रूप से जलाने से घरों में वायु प्रदूषण की गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं जिससे मानवीय स्वास्थ्य नकारात्मक रूप से प्रभावित हो रहा है। इसके अलावा, ईंधन की लकड़ी की निरंतर खपत के कारण वनों की कटाई होने से मरुस्थलीकरण एवं पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि हो रही है। इस प्रकार एक संसाधन के रूप में बायोमास का उचित प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है।

इस संदर्भ में, बायोमास का उपयोग करते हुए सस्ती एवं स्वच्छ ऊर्जा प्रणालियों और सेवाओं को सुनिश्चित करने के लिए तकनीकी समाधान, संस्थागत व्यवस्था, वित्तीय सहायता और प्रशिक्षण योजनाओं का व्यापक महत्व है। इस दिशा में गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय (एमएनईएस) द्वारा महत्वपूर्ण प्रयास किया गया है। मंत्रालय द्वारा एक पहल के माध्यम से अधिक ऊर्जा की प्राप्ति, जलाऊ लकड़ी की घरेलू खपत में कमी, रोजगार सृजन तथा ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर में सुधार के साथ बायोमास ईंधन के कुशल उपयोग के लिए स्वदेशी प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा दिया जा रहा है।

चित्र 10.11: बायोमास गैसीफायर।
(Source: https://i.ytimg.com/vi/837XxbF4_ss/hqdefault.jpg)

(vi) बायोगैस

आपने पशुओं के गोबर से बायोगैस के उत्पादन के संदर्भ में सुना होगा जो खाना पकाने के लिए उपयोग की जाने वाली ऊर्जा का एक स्रोत है (चित्र 7.11)। एक सरल प्रक्रिया के माध्यम से मवेशियों के गोबर का उपयोग गैस बनाने के लिए किया जाता है जिसमें 55–70% ज्वलनशील मीथेन गैस होती है। इसे ग्रामीण क्षेत्रों में उपयोग के लिए एक स्वच्छ और कुशल ईंधन माना जाता है। इसमें जलकुंभी, जल लेट्यूस, साल्विनिया, हाइड्रिला, खरपतवार, शैवाल तथा मवेशियों का गोबर पूरक ईंधन का कार्य करता है। बायोगैस का उपयोग भाप के निर्माण के लिए भी किया जा सकता है, जिसे कारखानों में इंजन अथवा मशीन चलाने तथा बिजली उत्पन्न करने में प्रयोग की जाने वाली टर्बाइन को चलाने के लिए प्रयोग किया जाता है। यह पाया गया है कि बड़े बायोगैस संयंत्र कई परिवारों तथा यहां तक कि छोटे गांवों की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं। बायोगैस उत्पन्न करने के बाद बचा हुआ गोबर अथवा घोल कृषि प्रयोजनों के लिए खाद के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। यह जैविक कचरे से ऊर्जा प्राप्त करने का एक किफायती तरीका है। चीन तथा भारत जैसे देशों के ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक बायोगैस संयंत्र स्थापित करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

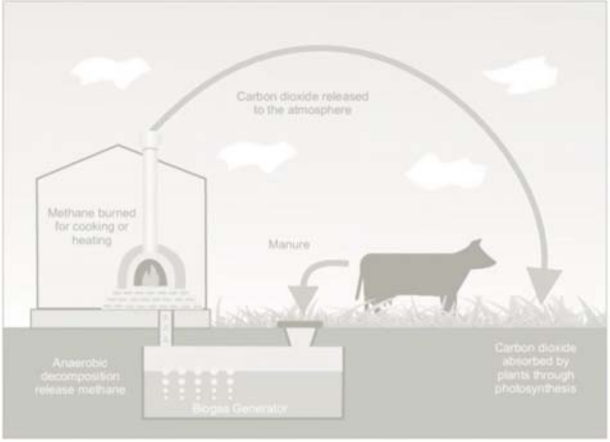

चित्र 10.12: बायोगैस संयंत्र।

भारत में ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोतों के विकास की अपार संभावनाएं हैं। हमारे देश की भौगोलिक विविधता गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर, पवन और ज्वार से ऊर्जा प्राप्त करने में मदद करती है। सौर द्वारा ऊर्जा उत्पादन हेतु भविष्य की संभावनाओं को देखते हुए वर्ष 2015 में अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की स्थापना की गई थी।

इस गठबंधन की स्थापना में भारत ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इससे स्वच्छ और हरित ऊर्जा विकसित करने में मदद मिलेगी जो ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों जैसे कोयला, पेट्रोलियम और रेडियो–सक्रिय खनिजों के उपयोग के कारण उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान करेगी। अतः यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोत भविष्य के ऊर्जा ईंधन हैं। किंतु वर्तमान में हमारे प्रमुख ऊर्जा स्रोत कोयला, जीवाश्म ईंधन, प्राकृतिक गैस, पनबिजली और परमाणु ऊर्जा हैं। ऊर्जा के इन स्रोतों को ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों के रूप में जाना जाता है।

बोध प्रश्न 3

सही विकल्पों को चिह्नित करें।

i. बायोमास ऊर्जा किस स्रोत से प्राप्त नहीं की जा सकती है?

a) वन संसाधन
b) पशु अपशिष्ट
c) कृषि फसलें
d) पवन

ii. निम्नलिखित में से कौन भूतापीय ऊर्जा का स्रोत नहीं है?

a) ज्वालामुखी
b) कार्बन डाइऑक्साइड
c) मीथेन
d) गीजर

iii. रिएक्टर उत्पन्न करता है

a) बायोगैस
b) भूतापीय ऊर्जा
c) परमाणु ऊर्जा
d) पवन ऊर्जा

10.5 ऊर्जा संसाधनों का संरक्षण

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर अब तक आपने यह महसूस किया होगा कि ऊर्जा संरक्षण समय की आवश्यकता है। ऊर्जा में कमी तथा पर्यावरणीय प्रदूषण से संबंधित समस्याएं मानव द्वारा ऊर्जा के गैर–नवीकरणीय स्रोतों के अति–दोहन के कारण उत्पन्न हुई हैं। बिजली उत्पादन के लिए कोयले तथा तेल के अत्यधिक उपयोग से कई

समस्याएं होती हैं, इनमें अम्लीय वर्षा एवं कार्बन डाइऑक्साइड की अधिक मात्रा से वायुमंडलीय प्रदूषण तथा ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याएं शामिल हैं। बड़े बांधों के निर्माण से भारत जैसे विकासशील देशों में बिजली की उपलब्धता तथा आर्थिक विकास को सुनिश्चित करने में मदद मिलती है। हालाँकि, बांध एवं जलाशय जंगलों, कृषि भूमि और वन्यजीवों के आवासों को नष्ट कर देते हैं; साथ ही इससे स्थानीय समुदाय को विस्थापन जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। देश की ऊर्जा आवश्यकताओं का उत्तर ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोतों को अपनाने से ही प्राप्त किया जा सकता है। भारत सरकार द्वारा ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों को विकसित करने के लिए उसी प्रकार का समर्थन एवं प्रयास किया जा रहा है जैसा प्रयास अब तक ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों को बढ़ावा देने के लिए किया जा रहा था।

ऊर्जा के संरक्षण के लिए लागू किए गए कुछ उपाय निम्नलिखित हैं। आइए इन पर संक्षेप में चर्चा करें।

(i) ऊर्जा संसाधनों की दक्षता में सुधारः विभिन्न ऊर्जा संसाधनों जैसे कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, परमाणु खनिज आदि की सीमित प्रकृति को देखते हुए इन संसाधनों की दक्षता में वृद्धि करना अत्यंत आवश्यक है जिससे ये निश्चित मात्रा द्वारा अधिक लाभ प्रदान कर सकें। हम यह कैसे कर सकते हैं? कुछ तकनीकी उन्नयन किस दिशा में मदद कर सकते हैं। इस संदर्भ में कुछ उपाय निम्नलिखित हैंः

- अधिक प्रकाशमान रोशनी के उपकरणों के स्थान पर एलईडी रोशनी का उपयोग करना। ऐसा इसलिए, क्योंकि प्रकाशमान रोशनी के उपकरणों द्वारा केवल 10% ऊर्जा बचत की होती है जबकि एलईडी उपकरण 25% ऊर्जा बचत करते हैं।
- वायु प्रदूषण से बचने के लिए सीएनजी युक्त वाहनों का उपयोग करना।
- पारंपरिक कोयला संयंत्रों को सुपर क्रिटिकल संयंत्रों से स्थानांतरित करना, क्योंकि सुपर क्रिटिकल संयंत्र अपने मूल समकक्षों की तुलना में 45% अधिक कुशल होते हैं।

(ii) अपव्यय की रोकथामः विद्युत के अपव्यय की रोकथाम करना समय की सर्वाधिक आवश्यकता है। भारत उन कुछ देशों में से एक है जहां विद्युत पारेषण के समय पर्याप्त मात्रा में बिजली नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार, ऊर्जा संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग नहीं करने से भी अनेक समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। अतः बिजली बचत के संदर्भ में लोगों को पर्याप्त रूप से जागरूक करने के साथ जीवन में इससे संबंधित उपायों के अभ्यास की आवश्यकता है। इस संदर्भ में कुछ सुझावात्मक उपाय इस प्रकार हैंः

- उपयोग में न होने पर बिजली उपकरणों को बंद कर देना।
- पुराने सॉकेट को नए सॉकेट से बदलना।
- स्मार्ट ग्रिड प्रौद्योगिकियों का उपयोग करना।
- सार्वजनिक परिवहन के माध्यम से आने–जाने को प्राथमिकता देना तथा वायु प्रदूषण को कम करने के लिए कारपूलिंग के विकल्प का चयन करना।

(iii) ऊर्जा संसाधनों का इष्टतम उपयोगः ऊर्जा संरक्षण का यह एक और प्रभावी उपाय है। इसके अंतर्गत किए जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण उपाय इस प्रकार हैंः

- औद्योगिक, कार्यालय या निजी भवनों के निर्माण के समय ऊर्जा बचत संबंधी उपयुक्त अवसंरचना को अपनाना।
- उचित निर्माण सामग्री का चयन करना।
- आवासीय क्षेत्रों तथा पर्यावरण परिवेश को बनाए रखने के लिए हरित भवनों का निर्माण करना।
- हरित भवनों को अपनाकर ऊर्जा और जल के उपयोग में कमी लाना।

(iv) स्वच्छ प्रौद्योगिकियों का उपयोगः ऊर्जा संरक्षण को अनेक तकनीकी प्रगति के माध्यम से बढ़ावा दिया जा सकता है, जैसे सह–उत्पादन, ऑफ–ग्रिड अक्षय ऊर्जा और प्रदर्शन, उपलब्धि और व्यापार (पीएटी)। आइए इन तकनीकों पर संक्षेप में चर्चा करेंः

- सह–उत्पादन विद्युत उत्पादन संयंत्रों से प्रसंस्कृत भाप के उपयोग की औद्योगिक प्रक्रिया को संदर्भित करता है। इस भाप का उपयोग हीटिंग उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।
- ऑफ–ग्रिड अक्षय ऊर्जाः यह संरक्षण के लिए पवन, बायोमास और जल विद्युत ऊर्जा के उपयोग को संदर्भित करता है।
- प्रदर्शन, उपलब्धि और व्यापार (पीएटी) वित्तीय सेवा को संदर्भित करता है जो उद्योगों को ऊर्जा बचत प्रमाणपत्रों का व्यापार करने और उनकी लागत–प्रभावशीलता को बढ़ाने की अनुमति देता है।

(v) ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों का उपयोगः ऊर्जा के संरक्षण के लिए नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों का उपयोग करना सबसे बेहतर माना जाता है क्योंकि इनकी पुनः–पूर्ति की जा सकती है। भारत सरकार द्वारा जारी किए गए ऊर्जा सांख्यिकी के अनुसार (ऊर्जा सांख्यिकी 2020, सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय) भारत ने देश में 175 गीगावॉट अक्षय ऊर्जा स्थापित करने की योजना बनाई है; जिसमें 100 गीगावॉट सौर ऊर्जा संयंत्र, 60 गीगावॉट पवन ऊर्जा संयंत्र, 10 गीगावॉट बायोमास ऊर्जा तथा 5 गीगावॉट ऊर्जा छोटे जल विद्युत संयंत्रों द्वारा प्राप्त किया जाना है ।

ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोतों के संदर्भ में आपने क्या समझा है, यह देखने के लिए निम्नलिखित बोध प्रश्नों को हल करें। अपने उत्तरों की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से करें।

बोध प्रश्न 4

बताएं कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।

i) पारंपरिक कोयला संयंत्रों को सुपरक्रिटिकल संयंत्रों से स्थानांतरित करना क्योंकि सुपरक्रिटिकल संयंत्र अपने मूल समकक्षों की तुलना में 45% अधिक कुशल होते हैं।

ii) प्रदर्शन, उपलब्धि और व्यापार (पीएटी) स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के उपयोग की रणनीतियों में से एक नहीं है।

iii) पुराने सॉकेट को नए सॉकेट से बदलना और स्मार्ट ग्रिड प्रौद्योगिकियों का उपयोग करना ऊर्जा संसाधनों के इष्टतम उपयोग की रणनीतियाँ हैं।

10.6 सारांश

आइए अब तक हमने जो कुछ सीखा है उसे संक्षेप में देखें:

- वर्तमान आधुनिक औद्योगिक समाजों को ऊर्जा के गहन उपयोग की आवश्यकता है। आप बिजली अथवा ऊर्जा के अन्य स्रोतों के विकास के बिना जीवन के बारे में नहीं सोच सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रति वर्ष उपयोग की जाने वाली ऊर्जा की मात्रा जीवन स्तर का एक उपयोगी माप है। भारत विश्व की कुल ऊर्जा का लगभग 3% खपत करता है।
- ऊर्जा संसाधनों को व्यापक रूप से पारंपरिक उपयोग और उपलब्धता के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। पारंपरिक उपयोग के आधार पर ऊर्जा संसाधनों को पारंपरिक और गैर–पारंपरिक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है जबकि उपलब्धता के आधार पर इसे नवीकरणीय और गैर–नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।
- इस इकाई में हमने पारंपरिक उपयोग के आधार पर वर्गीकरण का उपयोग किया है। इसके अनुसार ऊर्जा के मुख्य रूप से दो स्रोत हैं– i) गैर–पारंपरिक स्रोत जैसे बायोमास, सौर, भूतापीय और पवन ऊर्जा, ii) ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत जैसे पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, कोयला और जल विद्युत ऊर्जा।
- अक्षय ऊर्जा स्रोत प्रकृति में सतत होते हैं। वे न्यूनतम प्रदूषण के साथ उत्पन्न करते हैं। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की कोई भी लागत नहीं होती है और वे स्वतंत्र रूप से उपलब्ध हैं। स्वच्छ तथा नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों को अपनाकर हम स्वच्छ वायु और जल प्राप्त कर सकते हैं जिससे मानव स्वास्थ्य में सुधार तथा ऊर्जा सुरक्षा में वृद्धि होगी।
- ऊर्जा स्रोतों के संरक्षण की तत्काल आवश्यकता है क्योंकि इसकी अत्यधिक खपत महंगी होने के साथ कई समस्याओं को भी जन्म देती है। संरक्षण के कुछ उपायों में ऊर्जा संसाधनों की दक्षता में सुधार, अपव्यय की रोकथाम, ऊर्जा संसाधनों का इष्टतम उपयोग, स्वच्छ प्रौद्योगिकियों का उपयोग और ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों का उपयोग शामिल हैं।

10.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. उपयुक्त उदाहरणों के साथ ऊर्जा के पारंपरिक और गैर–पारंपरिक स्रोतों के मध्य अंतर स्पष्ट करें।
2. ऊर्जा संसाधनों की प्रकृति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
3. भारत में कोयले के वितरण, उत्पादन और उपयोग के संदर्भ में विस्तार से बताएं।

4. भारत में सौर और पवन ऊर्जा के वितरण और उपयोग का वर्णन कीजिए।

5. भारत में लागू विभिन्न ऊर्जा संरक्षण उपायों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

10.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. (i) नवीकरणीय, गैर–नवीकरणीय; (ii) गैर–पारंपरिक; (iii) गैर–नवीकरणीय; (iv) स्वच्छ, हरित
2. (i) तमिलनाडु (ii) मुंबई हाई; (iii) कृष्णा–गोदावरी और कावेरी
3. a – (ii); b – (iv); c – (i); d – (iii)
4. i–(d); (ii)–b; (iii)–c
5. (i) सही; (ii) गलत; (iii) सही

अंत में कुछ प्रश्न

1. ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत जैसे कोयला, पेट्रोलियम गैर–नवीकरणीय हैं; इनके माध्यम से ऊर्जा उत्पादन के लिए पुरानी तकनीकों का उपयोग किया जाता है जिससे पर्यावरण को नुकसान पहुंचता है। ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोत जैसे सौर ऊर्जा तथा बायोमास नवीकरणीय संसाधन हैं; वे तुलनात्मक रूप से नवीन प्रौद्योगिकियों का उपयोग करते हैं तथा पर्यावरण को न्यूनतम हानि पहुंचाते हैं।

2. ऊर्जा संसाधनों की प्रकृति के अंतर्गत संसाधनों की उपलब्धता तथा उनके पर्यावरणीय प्रभाव को शामिल किया जाना चाहिए। ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों में अत्यधिक संभावनाएं हैं किंतु इनकी खोज कम हुई है। खंड 10.2 का संदर्भ लें।

3. खंड 10.4.1 (i) का संदर्भ लें।

4. खंड 10.4.2 (i) और (ii) का संदर्भ लें।

5. ऊर्जा संसाधनों की दक्षता में सुधार, अपव्यय की रोकथाम, ऊर्जा संसाधनों का इष्टतम उपयोग, स्वच्छ प्रौद्योगिकियों का उपयोग और ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों का उपयोग भारत में अपनाए गए प्रमुख ऊर्जा संरक्षण उपाय हैं। खंड 10.5 का संदर्भ लें।

10.9 संदर्भ एवं अन्य पाठ्य सामग्री

1. Khullar, D. R. (2009). *India: A Comprehensive Geography*. Ludhiana: Kalyani Publisher

2. Rajagopalan, R. 3rdEd. (2015) Environmental Studies, New Delhi: OxfordUniversity Press.

3. Sharma, T. C. (2013). *Economic Geography of India*. Jaipur: Rawat Publications.

4. Government of India (2020). *Energy Statistics 2020*. New Delhi: National Statistical Office, Ministry of Statistics and Programme Implementation.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

शब्दावली

उद्योग	: उद्योग कच्चे माल के रूपांतरण और कारखानों में तैयार माल के निर्माण से संबंधित है।
औद्योगिक गलियारा	: यह एक गलियारा है जो बहु–मोडल परिवहन सेवाओं वाले राज्यों से होकर गुजरता है।
सहकारी क्षेत्र	: सहकारी उद्योग कच्चे माल के उत्पादकों और आपूर्तिकर्ताओं या श्रमिकों द्वारा संचालित और स्वमित्व वाले होते हैं।
खनिज आधारित उद्योग	: खनिज अयस्क का उपयोग करने वाले उद्योग कच्चे माल के रूप में उपयोग किए जाते हैं।
समुद्री आधारित उद्योग	: उद्योग जो समुद्र या महासागर से कच्चे माल पर आधारित होते हैं।
वन आधारित उद्योग	: इन उद्योगों में कच्चा माल वन उत्पादों से प्राप्त होता है।
परिवहन	: परिवहन, माल या उत्पाद, जानवरों या मानव के एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवागमन या आवाजाही है।
रैपिड मास ट्रांजिट	: यह शहरी परिवहन की एक प्रणाली है जिसमे बड़ी संख्या में यात्री एक स्थान से दूसरे स्थान पर शीघ्रता से जा सकते है।
डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर	: यह एक तीव्र गति और उच्च क्षमता वाला रेलवे कॉरिडोर है जो विशेष रूप से माल ढुलाई के लिए प्रयोग में आता है।

शब्दावली

वन–रोपण / वृक्ष–रोपण : यह भूमि के साफ या खुली जगह में वृक्षारोपण को संदर्भित करता है जो भौगोलिक, जलवायु, एडैफिक और अन्य कारणों से वृक्षों आवरण रहित रहा है। इसका उद्देश्य पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने के लिए हरित आवरण को बढ़ाने के लिए परित्यक्त और निम्नीकृत कृषि तथा अन्य भूमि का पुनः उपयोग एवं वनों में बदलना है।

गैर–कृषि उपयोग क्षेत्र : इमारतों, सड़कों और रेलवे या जल निकायों के अधीन भूमि जैसे नदियों और नहरों और अन्य भूमि का उपयोग गैर –कृषि उपयोग के लिए किया जाता है।

बंजर भूमि : इसे गैर–कृषि योग्य भूमि के रूप में भी जाना जाता है जिसे कृषि के अंतर्गत नहीं लाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, पहाड़, रेगिस्तान, आदि।

CGWB : केंद्रीय भूजल बोर्ड एक सरकारी संगठन है जो भारत में भूजल संसाधनों के प्रबंधन, अन्वेषण, निगरानी, मूल्यांकन, वृद्धि और विनियमन के लिए वैज्ञानिक इनपुट प्रदान करता है। http://cgwb-gov-in/

संरक्षण : यह जल, मृदा, खनिज, वन और वन्य जीव जैसे प्राकृतिक पर्यावरण के बहुमूल्य उपहारों का विवेकपूर्ण उपयोग हैं। यह हमें बहुमूल्य संसाधनों को संरक्षित और प्रबंधित करने में मदद करता है इस निवास योग्य ग्रह पृथ्वी पर मनुष्यों के साथ–साथ वनस्पतियों और जीवों दोनों के अस्तित्व के लिए बहुत आवश्यक हैं।

ऊर्जा के पारंपरिक स्रोत : ये किसी भी प्राकृतिक प्रक्रिया द्वारा गैर–नवीकरणीय हैं। उदाहरण कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस हैं। ये संसाधन सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं।

कृषि योग्य व्यर्थ भूमि : इसमें कृषि हेतु उपलब्ध भूमि शामिल है जिसमे चालू वर्ष के दौरान और पिछले पांच वर्षों या उससे अधिक किसी न किसी कारण से कृषि नहीं की गई हो। उदाहरण के लिए परती या झाड़ियों और जंगलों से आच्छादित।

वर्तमान परती : वर्तमान परती भूमि वो होती हैं जिसे चालू वर्ष के दौरान कृ षीरहित रखा जाता है।

दामोदर घाटी निगम (DVC) : यह भारत में पहली बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना है, जिसे 1948 में तत्कालीन बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों के साथ भारत सरकार द्वारा शुरू किया गया था, जिसके तहत दामोदर, बराकर, कोनार और बोकारो नदियों पर कुल 07 प्रमुख बांध हैंय और कोनार नदी के निचले सिरे पर एक बैराज को विभिन्न उद्देश्यों के लिए निर्माण के लिए सुझाया गया था।

निर्वनीकरण : यह विभिन्न प्रयोजनों के लिए वृक्षों की अंधाधुंध कटाई को

संदर्भित करता है। इसमें कृषि, नगरीकरण, औद्योगीकरण, परिवहन और संचार लाइनों, बांधों और पुलों आदि के लिए वन भूमि की सफाई शामिल हो सकती है।

परती भूमि : सभी भूमि जो कृषि योग्य थी, लेकिन अस्थायी रूप से कम से कम एक वर्ष की अवधि और पांच वर्षो से कम समय तक कृषीरहित रहती है।

लौह खनिज : वे खनिज जिनमें लौह तत्व होता है।

वन भूमि : इन्हें वैध रूप से वनों के रूप में नामित या प्रबधित किया जाता है, ये राज्य या निजी स्वमित्व में हो सकते है तथा जंगल युक्त या संभावित वन भूमि के रूप में बनाए रखा गया हो।

वन संसाधन : यह घरेलू उपयोग हेतु लकड़ी, ईंधन की लकड़ी, आदि सहित सेवाओं को संदर्भित करता है, जो यह सामान्य रूप से मानव समाज को प्रदान करता है और पृथ्वी पर किसी भी भौगोलिक क्षेत्र की जलवायु को विनियमित करने में भी मदद करता है।

FSI : भारतीय वन सर्वेक्षण जो वन संसाधनों, नीतियों और दिशानिर्देशों, वन आवरण मानचित्रण और नियंत्रण आदि से संबंधित सभी पहलुओं से संबंधित है। यह भारत के उत्तराखंड राज्य में देहरादून में स्थित है। https://www-fsi-nic-in /

हरित ऊर्जा : इसे स्वच्छ ऊर्जा भी कहते हैं। यह उन ऊर्जा को संदर्भित करता है जो अधिकांशतः गैर–प्रदूषणकारी और पर्यावरण के अनुकूल है।

भूजल : सतही जल जो कुछ गहराई पर जमीन में रिसता है, भूजल के रूप में जाना जाता है।

अवनालिका (Gullies) गुल्ली : इन्हें बैडलैंड या रवाईंन लैंड भी कहा जाता है। बहते हुए जल बड़े चौनलों के रूप में बनने से अवनालिका बनती हैं।

हार्ड रॉक फॉर्मेशन : ये समेकित संरचनाएं हैं जो कम गहराई स्तर तक जल को रोक रखते है।

अकार्बनिक खनिज : ये अधात्विक खनिज हैं जिनमें कोई कार्बनिक पदार्थ नहीं होता है।

भूमि आवरण : यह जमीन पर सतह का आवरण, उदाहरण के लिए, वनस्पति, भवन आदि को संदर्भित करता है।

भूमि क्षरण : यह भूमि की गुणवत्ता और उत्पादकता में गिरावट की व्याख्या करता है।

भूमि मानव अनुपात : यह किसी विशेष क्षेत्र के जनसंख्या घनत्व को दर्शाता है।

भूमि संसाधन : इसमें प्राकृतिक भूमि इकाई के भौतिक, जैविक, पर्यावरणीय, ढांचागत और सामाजिक–आर्थिक घटक के साथ सतह और

निकट–सतह मीठे पानी के संसाधन शामिल हैं।

भू–उपयोग : यह मानव उपयोग के लिए भूमि पर की जाने वाली आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों को संदर्भित करता है।

भू–उपयोग क्षमता : इसे भू–क्षमता भी कहा जाता है। यह बिना किसी हानि के एक विशिष्ट भूमि उपयोग का दर्शाता एवं भूमि की क्षमता को संदर्भित करता है।

धात्विक खनिज : ये ऐसे खनिज हैं जिनमें धातु होती है।

खनिज : एक निश्चित रासायनिक संरचना और पहचानने योग्य भौतिक गुणों के साथ प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला पदार्थ।

बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना : एक परियोजना जो सिंचाई, विद्युत उत्पादन, नौपरिवहन, मत्स्य–पालन, पर्यटन और जल कमी वाले क्षेत्रों के लिए जल आपूर्ति जैसे कई लाभ प्रदान करती है, को बहुउद्देशीय परियोजना के रूप में जाना जाता है।

शुद्ध बोया गया क्षेत्र : यह फसलों और बागों के साथ बोए गए कुल क्षेत्र है।

अधात्विक खनिज : ये ऐसे खनिज हैं जिनमें कोई धातु नहीं होती है।

ऊर्जा के गैर–पारंपरिक स्रोत : ये प्रकृति में अक्षय और पर्यावरण के अनुकूल हैं। ये संसाधन असीमित मात्रा में उपलब्ध हैं और इन्हें स्वच्छ ईंधन माना जाता है। उदाहरण के लिए सौर, पवन, जैव–ईंधन, बायोमास, ज्वार–भाटा, महासागरीय ऊर्जा।

अलौह धात्विक खनिज : ये ऐसे धात्विक खनिज हैं जिनमें लौह तत्व नहीं होता है।

गैर–बारहमासी या अल्पकालिक जल निकाय (Non-Perennial) : जल निकाय में वर्ष में कुछ समय के लिए ही जल उपलब्ध होता है।

ऊर्जा के गैर–नवीकरणीय स्रोत : गैर–नवीकरणीय संसाधन की सीमित आपूर्ति होती है। ये संसाधन प्रकृति में सीमित हैं। इसके उदाहरण में कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस हैं।

ऑपरेशनल होल्डिंग्स परिचालन जोत : इन्हें सीमांत भूमि जोत (<1 हेक्टेयर), छोटी (1 और 2 हेक्टेयर के बीच, अर्ध–मध्यम (2–4 हेक्टेयर), मध्यम (4–10 हेक्टेयर), और (अ) बड़ी जोत (10 हेक्टेयर या अधिक) के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

कार्बनिक खनिज : ये अधात्विक खनिज हैं जिनमें कार्बनिक पदार्थ होते हैं।

बारहमासी (Perennial) जल निकाय : जल, एक जलाशय में वर्ष भर उपलब्ध रहता है।

स्थायी चरागाह : सभी चराई भूमि जैसे स्थायी चरागाह, घास के मैदान, गांव की आम चराई भूमि, आदि।

ऊर्जा का नवीकरणीय : इस ऊर्जा संसाधन का उन संसाधनों के उपयोग की दर से

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

स्रोत पुनः पूर्ति हो सकती हैं। उदाहरणों में पवन, सौर, ज्वारीय और भू–तापीय शामिल हैं।

नदी बेसिन : यह भूमि का वह क्षेत्र है जिससे नदी और उसकी सभी सहायक नदियों का सतही जल प्रवाहित होता है। भारत में, बीस महत्वपूर्ण नदी घाटियोंध्नदी घाटियों के समूह है।

लवणीकरण : यह मिट्टी में लवण के स्तर में वृद्धि के कारण होने वाले सभी प्रकार के मृदा क्षरण को संदर्भित करता है।

सॉफ्ट रॉक फॉर्मेशन : ये भी छिद्रयुक्त रॉक फॉर्मेशन हैं। इनमें असंगठित संरचनाएं और अर्ध–संगठित संरचनाएं शामिल हैं।

सतही जल : यह पृथ्वी की सतह पर पाए जाने वाले जल निकायों को संदर्भित करता है, उदाहरण के लिए, नदियाँ, नदियाँ, झीलें, समुद्र और महासागर।

असंगठित संरचनाएं : नई जलोढ़, पुरानी जलोढ़ और तटीय जलोढ़ युक्त तलछट को असंगठित संरचनाओं में वर्गीकृत किया गया है। ये मिट्टी, रेत, बजरी और शिलाखंड, लौह गांठ, कंकर आदि से बने हैं।

यूनेस्को : पूर्ण रूप संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन का गठन 16 नवंबर 1945 को हुआ था। इसका मुख्यालय पेरिस, फ्रांस में स्थित है। https://www-unesco-org/hi

UNFC : यह संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क वर्गीकरण को संक्षिप्त करता है। https://unece-org/

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड

3

अर्थव्यवस्था

इकाई 11

कृषि

इकाई 12

उद्योग

इकाई 13

परिवहन

शब्दावली

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड 1 भौतिक विन्यास

इकाई 1 उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

इकाई 2 भूआकृति

इकाई 3 अपवाह तंत्र

इकाई 4 जलवायु

इकाई 5 मृदा एवं वनस्पति

खंड 2 संसाधनों का आधार

इकाई 6 भूमि संसाधन

इकाई 7 जल संसाधन

इकाई 8 वन संसाधन

इकाई 9 खनिज संसाधन

इकाई 10 ऊर्जा संसाधन

खंड 3 अर्थव्यवस्था

इकाई 11 कृषि

इकाई 12 उद्योग

इकाई 13 परिवहन

खंड 4 जनसंख्या एवं बस्ती/अधिवास

इकाई 14 जनसंख्या

इकाई 15 बस्तीयाँ/अधिवास

खंड 5 भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

इकाई 16 भूआकृतिक उपगमन

इकाई 17 सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 18 आर्थिक उपगमन

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 3: अर्थव्यवस्था

भारत विश्व में सबसे तेज गति से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। भारतीय अर्थव्यवस्था के निर्धारकों और विशेषताओं को समझने के लिए, अर्थव्यवस्था के तीन मुख्य क्षेत्रों, कृषि, उद्योग और परिवहन की चर्चा की गई है। भारत में कृषि की अपार संभावनाएं हैं और इसे भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। उपजाऊ डेल्टा और नदी घाटियाँ देश में कृषि विकास के कई अवसर प्रदान करती हैं।

इस खंड के तीन इकाइयों में आप कृषि, उद्योगों और परिवहन क्षेत्रों से संबंधित अर्थव्यवस्था का अध्ययन करेंगे।

इकाई 11: कृषि

इस इकाई में भारतीय कृषि से संबंधित वर्तमान परिस्थितियों पर चर्चा की गई है। यह भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व को समझने में मदद करेगी। भारतीय अर्थव्यवस्था की बेहतर समझ के लिए, भारतीय कृषि, कृषि भू–उपयोग और शस्य प्रारूप की विशेषताओं का अध्ययन आवश्यक है। इस इकाई में हरित क्रांति और उसके निहितार्थों को भी समझाया गया है।

इकाई 12: उद्योग

किसी देश में कच्चे माल की उपलब्धता से माल या उत्पाद निर्माण, उस क्षेत्र के विकास और वृद्धी के आकलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कच्चे माल, श्रम, जलवायु, बाजार, परिवहन, पूंजी, बैंकिंग सुविधाओं आदि सहित कई कारक उद्योगों की स्थिति या अवस्थिति को प्रभावित करते हैं। इस इकाई में, औद्योगिक विकास के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य, भारत में औद्योगिक गलियारों तथा उद्योगों के वर्गीकरण के बारे में बताया गया हैं।

इकाई 13: परिवहन

यह इकाई परिवहन पर केंद्रित है। परिवहन लोगों और वस्तुओ को स्थानांतरित करने का एक साधन है। इस इकाई में परिवहन नेटवर्क के विकास, परिवहन के विभिन्न साधनों, डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर, रैपिड मास ट्रांसपोर्ट सिस्टम (जन परिवहन प्रणाली) और नगरीय परिवहन के बारे में बताया गया है।

हमें उम्मीद है कि इस खंड का अध्ययन करने के बाद, आप भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि, उद्योग और परिवहन की भूमिका और महत्व को बेहतर ढंग से समझ पाएंगे।

इस प्रयास में हमारी शुभकामनाएं आपके साथ हैं।

THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 11

कृषि

इकाई की रुपरेखा

11.1 प्रस्तावना
संभावित अध्ययन परिणाम
11.2 भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व
11.3 कृषि की विशेषताएं
11.4 कृषि भूमि उपयोग और शस्य–प्रारूप
11.5 हरित क्रांति
11.6 भारतीय कृषि की समस्याएं
11.7 सारांश
11.8 अंत में कुछ प्रश्न
11.9 उत्तर
11.10 संदर्भ और अन्य पथ्य सामग्री

11.1 प्रस्तावना

आपने खंड 2 में भूमि, जल, वन, खनिज और ऊर्जा जैसे संसाधनों के बारे में अध्ययन किया। अब आप खंड 3 के इस इकाई 11 में, भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका और इसके महत्व के बारे में जानेंगे। प्राचीन काल से ही, भारतीय उपमहाद्वीप अपनी अद्वितीय कृषि क्षमता के लिए जाना जाता है। बड़े पैमाने पर कृषि महान सभ्यताओं की अर्थव्यवस्था की रीढ़ थी। किसी क्षेत्र की अत्यधिक उपजाऊ नदी घाटियाँ, डेल्टाऐं और पहाड़ी ढलान, विभिन्न प्रकार की फसलों को उपज के लिए अनुकूल दशा प्रदान करत हैं। इस उपमहाद्वीप के इतिहास में ऐसे साक्ष्य भी हैं जो इस क्षेत्र का अफ्रीका, मध्य–पूर्व, यूरोप, चीन और पूर्व और दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ कृषि वस्तुओं से जुड़े एक समृद्ध व्यापार संबंध का बताते हैं। ब्रिटिश शासन के दौरान, भारतीय कृषि ने दो विशिष्ट विशेषताएं हासिल कीं। एक नई वाणिज्यिक फसलों की शुरूआत थी, भारतीय कृषि में रोपण फसल को बढ़ावा देना। आजादी के बाद हरित क्रांति के दौरान इसे और संरक्षण मिला। दूसरी विशेषता एक विषम भूमि वितरण थी, जिसमें लगभग 95% कृषि योग्य भूमि केवल लगभग पाँच प्रतिशत जमींदारों के अधिग्रहण में थी। स्वतंत्रता के बाद लैंड सीलिंग एक्ट, भूमि चकबंदी अधिनियम और आचार्य विनोबा भाबे के भूदान आंदोलन के माध्यम से सरकार द्वारा विषम भूमि वितरण के मुद्दे पर ध्यान दिया गया।

20वीं शताब्दी की अंतिम तिमाही के बाद से, देश में व्यावसायिक संरचना और भूमि उपयोग प्रारूप में अभूतपूर्व परिवर्तन हो रहे हैं। बदलते व्यावसायिक ढांचे के साथ प्राथमिक क्षेत्र के श्रमिकों, विशेष रूप से कृषि कार्यबल का अनुपात लगातार कम हो रहा है। भूमि उपयोग के प्रॉप में बदलाव के साथ कृषि भूमि पर अतिक्रमण करके,

शहरी–औद्योगिक उपयोग और ढांचागत परियोजनाओं के तहत भूमि का विस्तार हो रहा है। इसी तरह, प्राथमिक क्षेत्र से श्रमिकों के बाहर निकलने को कृषि कार्यों से घटते आर्थिक लाभ, मौसम के प्रकृति में अनिश्चितता औरध्या इसके बढ़ते मशीनीकरण के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। व्यथित औरध्या अधिशेष कृषि कार्यबल, दूसरी ओर अर्थव्यवस्था के द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों में रास्ते खोजने की कोशिश कर रहा है।

भारतीय कृषि से संबंधित वर्तमान परिदृश्य के बारे में अपनी समझ विकसित करना हमारे लिए प्रासंगिक है। इस इकाई में, भाग 11.2 में भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व और भाग 11.3 में भारतीय कृषि की विशेषताओं को अध्ययन या समझने का प्रयास करेंगे। इसके बाद, हम क्रमशः कृषि भूमि उपयोग और फसल प्रारूप, हरित क्रांति और भारतीय कृषि की समस्याओं का अध्ययन, भाग 1.4, 11.5 और 11.6 में करेंगे।

संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई के अध्ययन को पूरा करने के बाद, आप :

- भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे ;
- भारतीय कृषि की विशिष्ट विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे ;
- कृषि भूमि उपयोग और फसल प्रारूप को विस्तृत रूप से बता सकेंगे ;
- हरित क्रांति के बारे में समझा सकेंगे तथा
- भारतीय कृषि की समस्याओं को स्पष्ट कर सकेंगे।

11.2 भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व

आप शायद जानते होंगे कि कृषि प्रारम्भ से ही भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ रही है। आज भी, कृषि न केवल श्रमिकों के अधिकतम अनुपात को समायोजित करती है बल्कि देश में सबसे बड़ा भूमि उपयोग भी है। यद्यपि भारतीय अर्थव्यवस्था तेजी से विविधीकृत होती जा रही है और श्रमिकों का एक महत्वपूर्ण अनुपात औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों में स्थानांतरित हो रहा है, 2011 की जनगणना के रिकॉर्ड के अनुसार, देश की कामकाजी आबादी / कार्य बल का लगभग 55 प्रतिशत (54.6%) अभी भी कृषि में लगा हुआ है। स्वतंत्रता के समय यह बहुत अधिक (69.7%) था। आपके लिए यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि कृषि में न केवल फसलों की खेती शामिल है, बल्कि पशुपालन, बागवानी, मछली पालन, रेशम उत्पादन, सिल्वीकल्चर और संबद्ध गतिविधियां भी शामिल हैं। कुल मिलाकर, ये सभी गतिविधियाँ देश के आलेखित क्षेत्र के लगभग 50 प्रतिशत भाग पर फैली हैं।

हालांकि, इन सभी गतिविधियों में, क्षेत्र आवरण (coverage) के अनुसार फसलों की खेती सर्वाधिक प्रमुख है, जिसे आमतौर पर शुद्ध बोया गया क्षेत्र (कुल बुवाई क्षेत्र) कहा जाता है। 328.73 मिलियन हेक्टेयर के कुल भौगोलिक क्षेत्र में से, देश में भूमि उपयोग के लिए 307.8 मिलियन हेक्टेयर का एक प्रतिवेदित (रिपोर्टेड) क्षेत्र है। नवीनतम जानकारी (2015–16) के अनुसार, देश का शुद्ध बुवाई क्षेत्र 139.51 मिलियन हेक्टेयर या कुल रिपोर्ट क्षेत्र का 45.33% और सकल फसल क्षेत्र 197.06 मिलियन हेक्टेयर अनुमानित है।

देश की अर्थव्यवस्था के संदर्भ में, आप कृषि के महत्व को समझने के लिए निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान दे सकते हैं।

I. सर्वाधिक महत्वपूर्ण, हाल के वर्षों में देश के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में भारतीय कृषि का योगदान लगभग 17–18% रहा है, जो दुनिया में सबसे अधिक है।

II. देश का कृषि क्षेत्र रोजगार के अवसरों का सर्वाधिक अनुपात पैदा करता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के क्रमिक विविधीकरण ने, निश्चित रूप से, कृषि क्षेत्र से श्रमिकों को औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों में स्थानांतरित कर दिया है। विकसित देशों के तुलना में कृषि गतिविधियों में श्रमिकों के हिस्सेदारी में आप देखेंगे कि भारत में अभी भी कृषि श्रमिकों का एक बहुत अधिक हिस्सा (50% से अधिक) है।

III. कृषि खाद्यान्न का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। जनसंख्या में वृद्धि के कारण भोजन की बढ़ती मांग फसल उत्पादन में वृद्धि से पूर्ण होती है। यद्यपि, अधिकांश मामलों में खेती के तहत भूमि के क्षैतिज विस्तार से उत्पादन के स्तर में वृद्धि हासिल नहीं की जा सकती है, आधुनिक कृषि तकनीकों ने ऊर्ध्वाधर विस्तार को संभव किया है, यानी प्रति इकाई क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाकर।

IV. पूंजी निर्माण में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भारत जैसे विकासशील देश में कृषि कार्य पूंजी निर्माण की ओर उन्मुख होना चाहिए। ऐसा नहीं करने की स्थिति यह न केवल कृषि विकास को बाधित करती है, बल्कि सामान्य रूप से अर्थव्यवस्था को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

V. आप इस तथ्य से अवगत हैं कि कई उद्योग जैसे कि चीनी, जूट, कपास और तेल उद्योग आदि, कृषि उत्पादों का उपयोग करते हैं। खाद्य प्रसंस्करण और कृषि आधारित उद्योग कृषि के बिना नहीं पनप सकते हैं।

VI. आप जानते होंगे कि कई कृषि कार्य औद्योगिक उत्पादों पर निर्भर करते हैं। इस तरह कृषि, औद्योगिक उत्पादों के लिए एक बहुत बड़ा बाजार बन जाता है। निहितार्थ यह है कि कृषि की प्रगति के साथ, कृषि कार्यों में उपयोग होने वाले औजारों और उपकरणों की मांग भी बढ़ जाती है, जिससे औद्योगिक क्षेत्र के विकास को गति मिलती है।

VII. इसके अलावा, कच्चे और प्रसंस्कृत कृषि उत्पाद आंतरिक व्यापार के साथ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को भी बढ़ावा देते हैं। परिणाम स्वरुप, देश के सेवा क्षेत्र का विस्तार होता है। भारत के विदेशी व्यापार में भी कृषि का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है। भारत चाय, कॉफी, रबर, जूट, कपास, चीनी और डेयरी उत्पादों आदि जैसे उत्पादों के निर्यात से अधिक मात्रा में विदेशी मुद्रा अर्जित करता है।

VIII. देश की अर्थव्यवस्था का एक बड़ा क्षेत्र होने के कारन, कृषि क्षेत्र का सरकारी खजाने में महत्वपूर्ण योगदान है। परिवहन क्षेत्र, विशेष रूप से भारतीय रेल, कच्चे, अर्ध–प्रसंस्कृत और प्रसंस्कृत कृषि उत्पादों को देश के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में ले जाकर भारी शुल्क अर्जित करता है। डेयरी फार्मिंग, मत्स्य पालन (Fishing) और पोल्ट्री फार्मिंग जैसी संबद्ध गतिविधियों के उत्पाद भी राजकोष में भारी मात्रा में राजस्व का योगदान करते हैं।

IX. आप जानते होंगे की देश के बड़े हिस्से में किसान, विशेष रूप से जहां वर्षा पर लगभग पूर्ण निर्भरता एक वर्ष में केवल एक फसल की खेती कर पाते है, या कृषि में संलग्नता केवल वर्ष के एक हिस्से के लिए होती है, कृषि से शहरी असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों के मौसमी और आकुल प्रवास होता हैं। परिणामस्वरूप, कृषि क्षेत्र शहरी–औद्योगिक क्षेत्र के लिए श्रम के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में कार्य करता है।

उपरोक्त बिन्दुओं से आप अब तक समझ चुके होंगे कि देश की अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। आइए अब हम भारतीय कृषि की महत्वपूर्ण विशेषताओं का अध्ययन करें।

बोध प्रश्न 1

भारत में आज भी कुल कार्यबल में कृषि श्रमिकों की हिस्सेदारी बहुत अधिक क्यों है?

11.3 कृषि की विशेषताएं

पारिस्थितिक और सांस्कृतिक रूप से विषम समाज की अर्थव्यवस्था की रीढ़ होने के नाते, भारतीय कृषि विशेषताओं की एक विस्तृत श्रृंखला द्वारा चिह्नित है। आप नीचे दी गई भारतीय कृषि की कुछ व्यापक विशेषताओं का अध्ययन करके समझेंगे:

1. किसानों का एक बड़ा वर्ग गहन निर्वाह कृषि करते है। अधिकांश किसान बाजार के लिए उत्पादन करने के बजाय अपनी जरूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से फसलों को उगाते हैं। हाल के कुछ वर्षों में बड़ी जोत वाले कुछ किसानों ने वाणिज्यिक कृषि को अपनाया है, जिससे देश को कृषि उत्पाद निर्यातक देशों के बीच एक स्थान बनाने में सफलता मिली है।

2. अब आप समझ सकते हैं कि खाद्यान्न उत्पादन भारतीय कृषि की एक प्रमुख प्रक्रिया है। विभिन्न प्रकार के अनाज और दालें, जिन्हें एक साथ खाद्यान्न कहा जाता है, देश के कृषि क्षेत्र का लगभग 65% हिस्सा हैं। हरित क्रांति की शुरुआत के बाद देश में खाद्यान्न का कुल उत्पादन 1966–67 में 74.23 मिलियन टन से बढ़कर 2018–19 में 284.95 मिलियन टन हो गया है।

3. लगभग दो–तिहाई कामकाजी आबादी कृषि और संबद्ध गतिविधियों में लगी हुई है। यह देश के भूमि संसाधनों पर जनसंख्या के भारी दबाव को दर्शाता है। भारत में प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता 0.12 हेक्टेयर है, जो विश्व औसत 0.29 हेक्टेयर से काफी कम है। भूमि संसाधनों पर वहन क्षमता से अधिक भारी दबाव देश में भूमि क्षरण का कारण बन रहा है।

4. बहु/मिश्रित कृषि भारतीय कृषि की एक अन्य विशेषता है। किसान, मानसून की वर्षा पर निर्भर करते हैं और बिना किसी सुनिश्चित सिंचाई सुविधा के आमतौर पर प्रतिकूल मौसम की स्थिति में कम से कम कुछ फसलों के सफल उत्पादन के लिए एक ही खेत में एक से अधिक फसल बोते हैं। हालाँकि, आपको ध्यान देना चाहिए कि इस प्रक्रिया से उत्पादन और उपज कम होती है।

5. भारत में क्षेत्रफल का एक बहुत बड़ा अनुपात (46.26%) कृषि के अंतर्गत है। इस संदर्भ में भारत की तुलना में अन्य देशों में बांग्लादेश, यूक्रेन, हंगरी और डेनमार्क आदि शामिल हैं। मानसून जलवायु और तापमान की स्थिति लम्बी उपज अवधी में मदद करती है। जनसंख्या दबाव से निपटने के लिए भूमि सुधार और भूमि संरक्षण के माध्यम से देश के विशाल मैदानी इलाकों और साफ जंगलों के विशाल इलाकों को कृषि (खेती) योग्य बनाया गया है।

6. देश में जोत (भूमिधारण) आम तौर पर छोटी होती है और धीरे–धीरे संख्या के साथ–साथ क्षेत्र आवरण (कवरेज) में भी बढ़ रही है। 85% से अधिक जोत सीमांत और छोटे आकार के जोत है। जोत की यह विशेषता सीधे भौतिक, आर्थिक और सामाजिक कारकों से संबंधित है। इनमें से कई कारक कृषि के आधुनिक तरीकों के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

7. कृषको या खेतिहरों का एक बड़ा वर्ग गहन निर्वाह या खेती के पारंपरिक तरीकों का अपनाता है। परिणामस्वरूप, विभिन्न फसलों की प्रति हेक्टेयर पैदावार अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है, और कुल उत्पादन भी कम रहता है। कृषि के सभी संभावित क्षेत्रों में नवाचारों के कार्यान्वयन के बाद, गेहूं जैसी फसलों की उत्पादकता में वृद्धि हुई है (1950–51 में 663 kg/ha से 2017–18 के दौरान औसतन 3096 kg/ha), चावल 1950–51 में 668 kg/ha से 2017–18 के दौरान औसतन 2455 kg/ha), मक्का (1950–51 में 547 kg/ha से 2017–18 के दौरान औसतन 2727 kg/ha) और मूंगफली (1950–51 में 775 से kg/ha से 2017–18 के दौरान 1616 kg/ha)।

8. देश में कृषि कार्यों में बैल, भैंस और ऊंट आदि जैसे भारोत्तोलक जानवरों का उपयोग काफी अधिक होता हैं। इसका मुख्या कारन कृषि कार्य जैसे जुताई, बुवाई, निराई, कीटनाशकों का छिड़काव, कटाई और थ्रेसिंग आदि हाँथ (mannually) से किया जाना हैं। लेकिन, समय के साथ, पशु और मानव शक्ति के उपयोग को मशीनी शक्ति द्वारा प्रतिस्थापित किया जा रहा है।

9. भारतीय कृषि मुख्यत वर्षा पर निर्भर होती है। लगभग कृषि योग्य आधी भूमि पर सिंचाई की सुविधा होने के बावजूद, मानसून की अनिश्चितता कृषि उत्पादन को काफी हद तक प्रभावित करती है। फिर भी, देश में वर्षा आधारित कृषि के क्षेत्रों में सिंचाई सुविधाओं का निर्माण कर कृषि उत्पादन बढ़ाने की पर्याप्त गुंजाइश है।

10. देश के भौतिक कारक, विशेष रूप से जलवायु और मृदा, विभिन्न प्रकार की फसलों की खेती के लिए काफी हद तक अनुकूल हैं। परिणामस्वरूप, पर्याप्त जल (नमी) वाले क्षेत्रों में, वर्षा या सिंचाई के माध्यम से वर्ष में तीन से चार बार फसलों की खेती की जाती है। निःसंदेह, मानसून की अनिश्चितताएं एक निर्णायक कारक हैं। मानसून की अनिश्चितता या विफलता के परिणामस्वरूप उत्पादन में कमी या फसलों के नस्ट होने का खतरा होता है।अपर्याप्त जल वाले या सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्रों में एक भी फसल की उपज मुश्किल हो जाता है।

11. भारत में मवेशियों की दूसरी सर्वाधिक संख्या (ब्राजील के बाद) है और दुनिया में भैंसों का सबसे बड़ा हिस्सा है। लेकिन देश में चारा फसल की खेती को बहुत कम महत्व दिया जाता है, इसके अंतर्गत फसल क्षेत्र का केवल चार प्रतिशत ही

है। यह, पर्याप्त चारागाह भूमि के अभाव के साथ, देश में डेयरी फार्मिंग पर हानिकारक प्रभाव डालता है।

12. भारत में, विकासशील देशों के विपरीत, किसानों को प्रोत्साहन या सुविधाये जैसे कृषि उत्पादों के लिए पार्यप्त मूल्य, आर्थिक सहायता (सब्सिडी), भूमि पर किसानों के अधिकार बहाल करना, और बीमा योजनाएं, अन्य सुविधाओं के अलावा, अपर्याप्त रही हैं। शहरी–औद्योगिक विकास क्षेत्र से संबंधित क्षेत्रों तुलना में कृषि क्षेत्र से जुड़े लोगों को दिए गए सुविधा और प्रोत्साहन अपर्याप्त रही है।

13. देश की कृषि अर्थव्यवस्था अत्यधिक संरचनात्मक है। यह आज भी मूख्य रुप से पारंपरिक है और जमींदारों के पास अधिक भूमि, कृषि आधुनिकीकरण की संभावनाओं को प्रभावित करती है।

14. छोटी जोत, खेती के पारंपरिक तरीकों, अपर्याप्त सिंचाई सुविधाओं, रासायनिक, जैव और प्राकृतिक उर्वरकों का कम उपयोग, कीटों और बीमारियों से असुरक्षित, कृषि उत्पादों के लिए अपर्याप्त मूल्य, किसानों की गरीबी और उचित ढांचागत सुविधाओं के अभाव के कारण, भारतीय कृषि अन्य विकसित देशों के बीच अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुंच पाई है।

बोध प्रश्न 2

सुनिश्चित सिंचाई सुविधा के बिना किसान बहुधमिश्रित फसल क्यों पसंद करते हैं?

11.4 कृषि भूमि उपयोग और शस्य–प्रारूप

आपने खंड 2 की इकाई 6 में देश में नौ प्रकार के भू–उपयोग वर्गीकरण के बारे में अध्ययन किया है। इन नौ भू–उपयोग श्रेणियों के अन्तगर्त क्षेत्र कुल प्रतिवेदित (रिपोर्टेड) क्षेत्र में शामिल होता है, जो आम तौर पर कुल भौगोलिक क्षेत्र से कम होता है। जबकि कुल भौगोलिक क्षेत्र स्थाई है, प्रतिवेदित क्षेत्र, राजस्व अभिलेख (रिकॉर्ड) से प्राप्त होता है तथा क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियों में परिवर्तन के साथ बदलता रहता है। यहां यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि आर्थिक गतिविधियों के परिवर्तन कारण होता हैः

(i) अर्थव्यवस्था का आकार, अर्थव्यवस्था में उत्पादित सभी वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य के संदर्भ में मापा जाता है, जो जनसंख्या बढ़ने, आय के स्तर में वृद्धि और नई तकनीक के प्रयोग के साथ बढ़ती हैय

(ii) भूमि उपयोग में प्राथमिक, विशेष रूप से कृषि से द्वितीयक और तृतीयक गतिविधियों में बदलाव के परिणामस्वरूप आर्थिक संरचना में परिवर्तन तथा

(iii) भूमि पर दबाव, जो जनसंख्या वृद्धि के साथ बढ़ता है।

11.4.1 कृषि भूमि उपयोग

उपरोक्त अध्ययन से, आपको यह स्पस्ट होना चाहिए कि कृषि भू–उपयोग में परिवर्तन भी ऐसे परिवर्तनों से प्रभावित होंगे। सबसे पहले, आपको जानना चाहिए कि कृषि भूमि, या कुल कृषि योग्य भूमि में शामिल हैं,

(i) शुद्ध (निवल) बोया गया क्षेत्र,

(ii) कृषि योग्य बंजर भूमि,

(iii) वर्तमान परती भूमि या चालू परती और

(iv) पुरातन परती भूमि या अन्य परती भूमि ।

कृषि भूमि उपयोग में भी अन्य भू–उपयोग की तरह, व्यापक क्षेत्रीय भिन्नता मिलती है। ये भिन्नताएं का मुख्य कारण भू–भाग की स्थिति, वर्षा की मात्रा में अंतर और मृदा में नमी की मात्रा एवं इसकी विशेषताएं और सिचाई व्यवस्था/क्षमता, कृषि भूमि उपयोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अलावा, मानव और आर्थिक कारक कृषि भू–उपयोग के विभिन्न प्रारूप उत्पन्न करते हैं क्योंकि यह मुख्य रूप से मानव निर्णयों की उपज है। फिर भी, अर्थव्यवस्था के अन्य इकाइयों के विपरीत, भूमि की उपलब्धता और गुणवत्ता कृषि क्षेत्र के लिए सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता बनी हुई है। भूमि गुणवत्ता से पहले आप देश में कृषि भूमि की उपलब्धता और इसकी गतिशीलता को समझने का प्रयास कर सकते हैं। इससे भारत में कृषि की भविष्य की संभावनाओं की संकल्पना करने में आपको मदद मिलेगी।

यदि आप सारणी 11.1 में प्रस्तुत कालिक आंकड़ों का विश्लेषण करते हैं, तो आप कृषि योग्य बंजर भूमि क्षेत्र में कमी के बावजूद, कुल कृषि क्षेत्र में विशेष रूप से नब्बे के दशक की शुरुआत से स्पष्ट गिरावट देख सकते हैं। कृषि योग्य बंजर भूमि में क्रमशः कमी यह दर्शाता है कि अधिक भूमि को कृषि के अंतर्गत लाने की संभावना कम हो रही है। आप पिछले ढाई दशकों में शुद्ध बुवाई क्षेत्र में भी कमी देख सकते हैं। कुल कृषि भूमि, कृषि योग्य बंजर भूमि और शुद्ध बोए गए क्षेत्र में कमी की इस प्रवृत्ति को देखकर आप इसे देश की अर्थव्यवस्था के क्रमिक विविधीकरण और इसके परिणाम स्वरूप अन्य उद्देश्यों, विशेष रूप से शहरी–औद्योगिक विकास के लिए कृषि योग्य भूमि के अधिग्रहण एवं रूपांतरण से जोड़ सकते है। इसलिए, प्रति इकाई क्षेत्र और समय में फसल उत्पादन को बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीकों के प्रयोग की तत्काल आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में, कृषि में आधुनिकीकरण को अपनाकर प्रचुर मात्रा में खाद्य उत्पादन प्राप्त की जा सकती है, जिसमे (i) बहु–फसलीकरण में सुधार, यानी, शुद्ध बोए गए क्षेत्र का ऊर्ध्वाधर विस्तार, और (ii) अधिक उपज वाली फसलों के साथ–साथ फसल–अनुक्रमों को समृद्ध करने वाली मृदा को अपनाना।

सारणी 11.1: भारत में कृषि भू–उपयोग

कृषि भू–उपयोग श्रेणी	प्रतिवेदित क्षेत्र का प्रतिशत				कुल कृषि योग्य भूमि का प्रतिशत			
	1960-61	1990-91	2005-06	2015-16	1960-61	1990-91	2005-06	2015-16
कृषि योग्य व्यर्थ भूमि	6.23	4.92	4.31	3.99	10.61	8.28	7.37	6.88
पुरातन परति भूमि	3.50	3.17	3.49	3.67	5.96	5.33	5.97	6.33
वर्तमान परति	3.73	4.49	4.63	5.01	6.35	7.56	7.93	8.33

भूमि								
शुद्ध (निवल) बोया क्षेत्र	45.26	46.86	46.00	45.33	77.08	78.83	78.73	78.15
कुल कृषि भूमि	58.72	59.45	58.54	58.00	100.00	100.00	100.00	100.00

(स्रोतः कृषि सांख्यिकी एक नजर 2019 में, अर्थशास्त्र और सांख्यिकी निदेशालय, भारत सरकार)

दूसरी ओर, दिए गए अवधि के दौरान दोनों प्रकार की परती भूमि के अनुपात में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है। परती भूमि से हमारा तात्पर्य उस भूमि से है जो कृषि के अंतर्गत थी लेकिन बिना खेती के छोड़ दी जाती है या कुछ अवधि के लिए कृषिरहित रहती है। आपके लिए दो प्रकार की परती भूमि के बीच अंतर को समझना आवश्यक है। सभी भूमि जो कृषि योग्य थी, लेकिन अस्थायी रूप से कम से कम एक वर्ष की अवधि और पांच वर्षो से कम समय तक कृषीरहित रहती है, उसे 'पुरातन परति भूमि या अन्य परती भूमि' कहा जाता है, 'वर्तमान परती' भूमि वो होती हैं जिसे चालू वर्ष के दौरान कृषीरहित रखा जाता है।

11.4.2 शस्य प्रारूप

आइए हम भारतीय कृषि के **शस्य प्रारूप** (cropping pattern) का अध्ययन करें। शस्य प्रारूप एक निश्चित समय में किसी क्षेत्र में विभिन्न फसलों के अनतर्गत क्षेत्र के अनुपात को संदर्भित करता है। किसी क्षेत्र में खेती की जाने वाली फसलों के प्रकार उस क्षेत्र के भौगोलिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थितियो से संबंधित होता है। शस्य प्रारूप भी समय और स्थान के साथ बदलता रहता है।

भारत में तीन मुख्य शस्य ऋतुएँ देख सकते हैं। इनमें **खरीफ, रबी** और **जायद** ऋतु शामिल हैं। तीन कृषि ऋतुएँ के दौरान विभिन्न प्रकार की फसलों की कृषि की जाती है। खरीफ फसल का मौसम दक्षिण–पश्चिम मानसून के अनुरूप होता है या मेल खाता है, रबी फसल का मौसम सर्दियों के मौसम (अक्टूबर–नवंबर से मार्च–अप्रैल) के अनुरूप होता है या मेल खाता है, और जायद फसल रबी और खरीफ ऋतु के बीच संक्षिप्त गर्मी के मौसम में होता है। ये विशिष्ट शस्य ऋतुएँ उत्तरी और आंतरिक भागों के लिए निश्चित या विशिष्ट होते हैं, जबकि देश के दक्षिणी हिस्सों में, वर्ष भर उच्च तापमान रहता है। इस प्रकार, देश के दक्षिणी भाग में किसान आम तौर पर मृदा नमी के आधार पर एक ही उष्णकटिबंधीय फसल साल में तीन बार उगाते हैं। उत्तरी और आंतरिक भागों में फसल अनुक्रमण किया जाता है, जहां किसान चावल, कपास, जूट, ज्वार (sorghum), बाजरा (bulrush or pearl millet), रागी (finger millet) और टूर या अरहर (split pigeon or cajan peas) जैसी उष्णकटिबंधीय फसलों की खेती करते हैं। खरीफ ऋतु में, उपोष्णकटिबंधीय फसलें जैसे रबी ऋतु में गेहूं, चना और सरसों, और जायद मौसम में तरबूज, ककड़ी, सब्जियां और चारा की खेती होती है। सिंचाई वर्षा जल के पूरक स्रोत के अलावा किसी क्षेत्र के गैर पारंपरिक फसलों के कृषि में भी मदद करते हैं। पंजाब–हरियाणा क्षेत्र में चावल की खेती एक उपयुक्त उदाहरण है। अब हम तीन मुख्य श्रेणियों जैसे अनाज, दलहन और तिलहन के अन्तर्गत देश के विभिन्न हिस्सों में उगाई जाने वाली फसलों का अध्ययन करें।

(A) अनाज

भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में खाद्यान्न का बहुत महत्व है और इस पर जोर दिया जाता है जिसमे अन्नाज और दालें दोनों शामिल हैं। जैसा कि आप जानते हैं, विश्व में, भारत चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद अनाज के उत्पादन में तीसरे स्थान पर है, और दालों के उत्पादन में पहले स्थान पर है। भारत में कुल बोये गए क्षेत्र के 50% से अधिक पर अनाज बोये जाते है, जो विश्व के कुल अनाज उत्पादन का लगभग 11% है। देश में विभिन्न प्रकार के अनाज की खेती की जाती है, जिनमे चावल और गेहूं जैसे उत्तम अनाज और मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का और रागी प्रमुख है।

(i) चावलः चावल मूलतः उष्णकटिबंधीय आर्द्र क्षेत्रों की फसल है। विभिन्न कृषि–जलवायु प्रदेशो में चावल की 3,000 से अधिक किस्मों उगाई जाती है। चावल का पारम्परिक क्षेत्र देश के पूर्वी और दक्षिणी राज्यों में स्थित है, जहां कृषि–जलवायु के अनुकूल परिस्थितियों के कारण एक वर्ष में दो से तीन बार चावल की खेती की जाती है। हिमालयी राज्यों में चावल की खेती केवल खरीफ ऋतू में की जाती है। हालांकि, सिंचाई सुविधाओं के विकास के फलस्वरूप पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और उत्तरी राजस्थान में कृषि क्षेत्र के एक बड़े हिस्से में चावल उगाया जाता है।

भारत विश्व में चीन के बाद चावल का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है, जहां देश के कुल बोये गए क्षेत्र के लगभग एक–चौथाई (22.3%) भाग पर चावल बोया जाता है। भारत ने 2017 में विश्व का लगभग 22% चावल उत्पादन किया। बोए गए क्षेत्र (34.13 मिलियन से 43.77 मिलियन टन), उत्पादन (34.58 मिलियन टन से 112,76 मिलियन टन), उपज (1013 से) तथा वर्ष 1960–61 और 2017–18 के बीच फसल के अंतर्गत सिंचित क्षेत्र (37% से 60% से अधिक) में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई। पश्चिम बंगाल, पंजाब और उत्तर प्रदेश देश के प्रमुख चावल उत्पादक राज्य थे, जिनका कुल उत्पादन में क्रमशः 13.27, 11.87 और 11.77 प्रतिशत योगदान रहा। चावल की पैदावार, पंजाब (4366 kg/ht), आंध्र प्रदेश (3788 kg/ht), तमिलनाडु (3630 kg/ht), तेलंगाना (3192 kg/ht), हरियाणा (3181 kg/ht) पश्चिम बंगाल (2926 kg/ht) में अधिक बना रहा। सिंचाई की मदद से पंजाब और हरियाणा के गैर–पारंपरिक चावल क्षेत्रों के साथ–साथ अन्य राज्यों के आंतरिक हिस्सों में चावल की खेती संभव हो गई है। बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, असम और ओडिशा राज्यों में चावल की पैदावार (2500 kg/ht) कम बनी हुई है।

(ii) गेहूं: भारत गेहूं उत्पादन में दुनिया में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है और पुए विश्व का 13% गेहूं उत्पादन करता है। यह चावल के बाद देश में दूसरी सबसे महत्वपूर्ण फसल है, जो कुल फसल क्षेत्र का 16.2 प्रतिशत है। यह एक समशीतोष्ण और रबी फसल है, जिसकी खेती मुख्य रूप से उत्तर और मध्य राज्यों, हिमालयी राज्यों के कुछ हिस्सों में 2,700 मीटर ऊंचाई तक केंद्रित है। सर्दियों की फसल होने के कारण, इसकी कृषि मुख्य रूप से सिंचाई की मदद से की जाती है लेकिन हिमालयी राज्यों और मालवा पठार के कुछ हिस्सों में यह वर्षा पर निर्भर फसल है। हरित क्रांति के अन्तर्गत पहली फसल, गेहूं की खेती ने रिकॉर्ड प्रगति प्रदर्शित की है। 1960–61 के कृषि वर्ष के दौरान, गेहूँ की खेती 12.93 ऊी से अधिक पर की गई थी, जो केवल 851 kg/ht पैदावार के साथ केवल 11 मिलियन टन का उत्पादन करती थी। केवल एक तिहाई (32.74%) गेहूँ क्षेत्र सिंचित था। 2017–18 के दौरान यह आंकड़े बढ़कर 29.65 mh, 99.87 mt और 3368 kg/ht हो गए। आज, लगभग पूरे गेहूं क्षेत्र (95% से अधिक) में सिंचाई की सुविधा है।

हालांकि चावल के बाद, सकल बोये गए क्षेत्र में गेहूं अनुपात कम है लेकिन गेहूं की उपज का स्तर बहुत अधिक है (4,000 kg/ht से अधिक), विशेष रूप से पंजाब के मुख्य गेहूं उगाने वाले राज्यों (5,077 kg/ht) में और हरियाणा (4,412 kg/ht)। जबकि पड़ोसी राज्य में जैसे राजस्थान (3,334 kg/ht), उत्तर प्रदेश (3,269 kg/ht), मध्य प्रदेश (2,993 kg/ht), बिहार (2,905 kg/ht), गुजरात (2,898 kg/ht), और उत्तराखंड (2,749 kg/ht) की उपज का स्तर मध्यम होता है। यह महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश और अन्य राज्यों में 2,000 kg/ht से कम रहता है।

(iii) ज्वार (Sorghum): 1960–61 में, क्षेत्रफल (18.41 mh) और उत्पादन (9.81 मिलियन टन) के अनुसार ज्वार भारत में तीसरी सबसे महत्वपूर्ण फसल थी। दुर्भाग्य से, चावल और गेहूं के विपरीत, ज्वार फसल क्षेत्र घटकर 5.02 mh हो गया है, और उत्पदान घटकर 4.80 mt हो गया है जबकि दो संदर्भ अवधियों के दौरान सिंचित क्षेत्र में 3.55 से 10.26% और पैदावार में 533 से 956 kg/ht की वृद्धि दर्ज की गई है। कुल मिलाकर, ज्वार के क्षेत्र में 1960–61 में 12.1% से 2017–18 में 5.02% तक पर्याप्त कमी आई है। ज्वार एक मोटे अनाज की किस्म है, जो प्रायद्वीपीय भारत के आंतरिक अर्ध–शुष्क भागों में वर्षा आधारित कृषि हैं जो खरीफ और रबी दोनों ऋतुओं में उगाई जाती है। प्रायद्वीपीय राज्यों जैसे, महाराष्ट्र (33.45%), कर्नाटक (23.74%), मध्य प्रदेश (11.87%), तमिलनाडु (8.96%), राजस्थान और आंध्र प्रदेश (6.26%) का ज्वार उत्पादन में मुख्य योगदान हैं। उत्तर भारत में अधिकतर चारे की फसल के रूप में, ज्वार केवल खरीफ मौसम में उगाया जाता है।

(iv) बाजरा (Bulrush Millet): हाल के दशकों में ज्वार के समान बाजरा फसल क्षेत्र में भी अन्य खाद्यान्नों के कारण कमी आई है। भारत ने 1960–61 के दौरान 11.47 mh क्षेत्र के साथ, केवल 3.28 मिलियन टन बाजरा का उत्पादन किया। बुआई क्षेत्र में 7.48 mh की गिरावट के बावजूद, 2017–18 में बाजरा का उत्पादन लगभग तीन गुना बढ़कर 9.21 मिलियन टन हो गया। दो संदर्भ वर्षों के बीच सिंचित क्षेत्र में 2.79% से 10.54% की वृद्धि के परिणामस्वरूप बाजरे की पैदावार में 286 kg/ht से 1231 kg/ht तक लगभग चार गुना वृद्धि हुई है। राजस्थान के सूखा प्रवण क्षेत्र (40.76%), उत्तर प्रदेश (19.49%), गुजरात (10.48%), हरियाणा (7.83%) और महाराष्ट्र (7.28%) का बाजरे के उत्पादन में प्रमुख योगदान हैं। इसे वर्षा आधारित फसल है क्योंकि यह क्षेत्र के शुष्क दौर तथा सूखा सहन करने में समर्थ होता हैं।

(v) मक्का: ज्वार और बाजरा के विपरीत, मक्का क्षेत्र पिछले पांच दशकों में 4.41 mh (2.9%) से बढ़कर 9.38 mh (4.4%) हो गया है। इसके क्षेत्र में वृद्धि के अलावा, सिंचित क्षेत्र में 12.63 से 26.73% की वृद्धि तथा उन्नत किस्मों की खेती से देश में मक्का उत्पादन में पांच गुना से अधिक वृद्धि हुई है, जो इसी संदर्भ अवधि के दौरान 4.08 मिलियन टन से 28.75 मिलियन टन तक है। राष्ट्रीय औसत पैदावार 926 किग्रा/एचटी से लगभग तीन गुना बढ़कर 3065 kg/ht हो गई है। मक्का की कृषि किसी विशेष क्षेत्र में केंद्रित नहीं है। पूर्वी और उत्तर–पूर्वी क्षेत्रों को छोड़कर पूरे देश में इसकी खेती की जाती है। हालांकि, सबसे प्रमुख मक्का उत्पादक राज्य कर्नाटक (13.40%), मध्य प्रदेश (12.30%), महाराष्ट्र (10.61%), तमिलनाडु (9.01%), तेलंगाना (8.89%), आंध्र प्रदेश (8. 08%) राजस्थान (6.24%), उत्तर प्रदेश (5.56%) और पश्चिम बंगाल (3.95%) है। इसकी खेती अर्ध–शुष्क जलवायु परिस्थितियों में और निम्न गुणवत्ता वाले मृदा क्षेत्रों में भोजन के साथ–साथ चारे की फसल के लिए की जाती है।

(B) दालें

दालें अत्यंत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इससे मानव शरीर को प्रोटीन प्राप्त होता है और नाइट्रोजन स्थिरीकरण के माध्यम से मिट्टी की प्राकृतिक उर्वरता में सुधार होता है। भारत में कई प्रकार की दालें उगाई जाती हैं। भारत दलहन उत्पादन में प्रथम स्थान पर है, जो विश्व की लगभग 24.2% दालें उत्पन्न करता है। भारत में चावल और गेहूँ के बाद दालों का तीसरा सबसे बड़ा क्षेत्र है। दलहन क्षेत्र 1960–61 में 23.56 mh से बढ़कर 2017–18 में 29.81 mh हो गया है, जो कुल कृषि क्षेत्र का लगभग 15% है। देश में दलहन की खेती के मुख्य क्षेत्र दक्कन की शुष्क भूमि, मध्य पठार और उत्तर पश्चिम है। शुष्क भूमि की वर्षा आधारित फसल होने और केवल 20% सिंचित क्षेत्र के कारण, दालों की पैदावार कम रही है जो पिछले 65 वर्षों में 539 मिलियन टन और 853 mt/h के बीच रही है। भारत में उगाई जाने वाली दालों की विभिन्न किस्मों में चना (Bengal Gram/Desi Chick Pea), तूर (Pigeon Peas), मूंग (Green Beans), काबुली चना (Chick Peas), उड़द (Black Gram), राजमा (Red Kidney Beans), लोबिया (Black Eyed Peas), मसूर (Black Eyed Peas) और मटर (White Peas) शामिल हैं। चना और तूर सबसे महत्वपूर्ण हैं।

(i) चना (Bengal Gram): यह रबी ऋतू में उगाई जाने वाली एक उपोष्णकटिबंधीय फसल है जिसके लिए बहुत कम या किसी सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। यह मध्य और उत्तर–पश्चिमी राज्यों तक केंद्रित है और प्रमुख उत्पादक राज्यों में मध्य प्रदेश (40.38%), महाराष्ट्र (16.12%), राजस्थान (14.84%), कर्नाटक (6.88%), आंध्र प्रदेश (5. 17%), उत्तर प्रदेश (5.09%), गुजरात (3.31%), छत्तीसगढ़ (2.82%) और झारखंड (2. 51%) हैं। इसके अंतर्गत लगभग 40% सिंचित क्षेत्र होने के बाद भी, चने का उत्पादन 1960–61 में 674 kg/ht से मामूली रूप से बढ़कर 2017–18 में 1078 kg/ht हो गई है। अन्य फसलों, विशेष रूप से हरित क्रांति के शुरुआत से इसके क्षेत्र में कमी आई है, और 1960–61 में 9.28 mh और 2017–18 में 10.56 mh के बीच रहा है। देश में चना के अन्तर्गत लगभग 67.8% क्षेत्र के साथ, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और राजस्थान ने वर्ष 2017–18 में देश के कुल चना उत्पादन का लगभग तीन–चौथाई (71.34%) उत्पादन किया।

(ii) तुर : यह महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश, झारखंड, तेलंगाना, ओडिशा, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश के शुष्क क्षेत्रों में वर्षा पर आधारित फसल है। अकेले महाराष्ट्र देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 28% के बराबर (26.29%) फसल का उत्पादन करता है। तीन प्रमुख तुर उत्पादक राज्य महाराष्ट्र, कर्नाटक (19.94%) और मध्य प्रदेश (14.58%) के पास 62.47% तुर क्षेत्र हैं जो भारत में फसल के कुल उत्पादन का 63.6% उगाते हैं। चना की तरह, तुर की पैदावार भी कम रही है और पिछले कुछ वर्षों में इसमें उतार–चढ़ाव रहा है। हालाँकि 1960–61 और 2017–18 के बीच तुर के अन्तर्गत क्षेत्र 2.43 mh से 4.44 mh तक लगभग दोगुना हो गया है, लेकिन इसी अवधि के दौरान इसकी पैदावार केवल 849 kg/ht से बढ़कर 967 kg/ht हो गई है।

(C) तिलहन

भारत में किसान मुख्य रूप से नौ प्रकार के तिलहन उगाते हैं जिनका उपयोग देश में वनस्पति तेल के प्रमुख स्रोत के रूप में किया जाता है। तिलहन के ये नौ प्राथमिक

स्रोत, मूंगफली, सोयाबीन, तोरिया–सरसों, तिल, सूरजमुखी, कुसुम, अरंडी और अलसी, खाद्य वनस्पति तेल के घरेलू आवश्यकता का 70% से अधिक पूरा करते हैं। शेष 30% वनस्पति तेलों को द्वितीयक स्रोतों जैसे ताड़, नारियल, कपास के बीज, चावल की भूसी, वृक्ष जनित तिलहन से निकाला जाता है। भारत ने पिछले दशकों में तिलहन कृषि में पर्याप्त वृद्धि किया है। तिलहन क्षेत्र 1960–61 में 13.77 mh से बढ़कर 2017–18 में 24.51 mh हो गया है। 1960–2018 के दौरान सिंचित क्षेत्र भी लगभग 3% से लगभग 30% हो गया है, साथ ही पैदावार में 507 kg/ht से 1284 kg/ht और उत्पादन में 6.98 mt से 31.46 mt की वृद्धि हुई है। कुल मिलाकर, देश के कुल शस्य क्षेत्र के लगभग 14% भाग पर तिलहन फैसले बोई जाती हैं। तिलहन की खेती के मुख्य क्षेत्र में मालवा पठार, मराठवाड़ा, गुजरात, राजस्थान, तेलंगाना, रायलसीमा और कर्नाटक पठार की शुष्क भूमि शामिल है। देश में खाद्य तेल के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत मूंगफली, रेपसीड–सरसों, तिल और सोयाबीन हैं।

(i) मूंगफलीः भारत,चीन के बाद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मूंगफली का उत्पादक है, जो 2017 में कुल वैश्विक उत्पादन का 19.49% है। यह मुख्यतः शुष्क प्रदेशो की वर्षा आधारित खरीफ फसल है। परन्तु दक्षिण भारत में यह रबी ऋतू में भी बोई जाती है। मूंगफली देश के कुल खेती वाले क्षेत्र का लगभग 5% है। मूंगफली क्षेत्र 1960–61 में 6.46 mh से घटकर 2017–18 में 4.89 mh हो गया है। इसके बावजूद, इस अवधि के दौरान उपज में पर्याप्त वृद्धि के साथ फसल का कुल उत्पादन 4.81 mt से बढ़कर 9.25 mt हो गया है, जो 745 kg/ht से 1893 kg/ht हो गया है। इसकी कृषि वर्षा आधारित फसल के रूप में केवल 3.02% सिंचित क्षेत्र के साथ की जाती थी। आज फसल के अंतर्गत लगभग 30 प्रतिशत (28.9%) क्षेत्र सिंचित है। मूंगफली के प्रमुख उत्पादक गुजरात (42.55%), राजस्थान (13.61%), आंध्र प्रदेश (11.33%), तमिलनाडु (10.89%), कर्नाटक (5.97%), तेलंगाना (4.02%), मध्य प्रदेश (3.77%) हैं। महाराष्ट्र (3. 72%) और पश्चिम बंगाल (1.79%) राज्य हैं।

(ii) तोरिया और सरसों : तोरिया और सरसों को राई, सरसों, तोरिया और तारामीरा के रूप में वर्गीकृत किया गया है। ये उपोष्णकटिबंधीय फसलें हैं जिनकी खेती रबी ऋतू में की जाती है। भारत तोरिया उत्पादन में कनाडा और चीन के बाद विश्व के कुल उत्पादन का 10.38 प्रतिशत के साथ तीसरे स्थान पर है। इन फसलों का क्षेत्र 1960–61 में 2.88 mh से बढ़कर 2017–18 में 5.88 mh हो गया है, जो देश के कुल फसली क्षेत्र का लगभग 6% है और उत्पादन 1.35 मिलियन टन से बढ़कर 8.43 मिलियन टन हो गया है, इस दो अवधि के दौरान पैदावार में 467 kg/ht से 1,410 kg/ht तक की वृद्धि हुई है। सिंचाई क्षेत्र के विस्तार 12% से लगभग 80% तक और उन्नत बीजों के उपयोग ने इस संदर्भ में सकारात्मक भूमिका निभाई है। राजस्थान (42. 01%), हरियाणा (13.14%), मध्य प्रदेश (11.58%), उत्तर प्रदेश (11.21%), पश्चिम बंगाल (8.57%), गुजरात (4.74%), झारखंड (2.59%), असम (2.22%) बिहार (1.17%) और पंजाब (0.54:) इन फसलों के प्रमुख उत्पादक प्रदेश हैं। भारत में तोरिया और सरसों क्षेत्र में (37%) और उत्पादन (42%) के साथ राजस्थान का सबसे महत्वपूर्ण योगदान है। 80.32 प्रतिशत तोरिया और सरसों के क्षेत्र आवरण के साथ पांच राज्य, राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल देश के कुल उत्पादन का 86.51% उत्पादन करते हैं।

(iii) सोयाबीनः 1960 के दशक में, सोयाबीन एक बहुत ही छोटी फसल थी। वर्तमान समय में इसका महत्व बढ़ गया है और इसकी खेती लगभग 10.33 mh में की जाती है। भारत 1098 kg/ht की उपज के साथ लगभग 10.98 mt सोयाबीन (2017–18) का उत्पादन करता है। सोयाबीन के प्रमुख उत्पादक राज्यों में मध्य प्रदेश (48.67%) और महाराष्ट्र (38.8%) हैं। दोनों राज्यों में इस फसल का कुल क्षेत्र 84.27% है और देश के 83.47% सोयाबीन का उत्पादन करते है। राजस्थान में भी इसके अनतर्गत 8.58% क्षेत्र है तथा 9.79% सोयाबीन उत्पादन होता है। सोयाबीन का उत्पादन कर्नाटक (2.31%), तेलंगाना (2.26%) और गुजरात (1.06%) राज्यों में भी किया जाता है।

(iv) सूरजमुखीः सूरजमुखी देश में 0.25 mh भूमि क्षेत्र में उगाया जाता है, 0.22 mt उपज के साथ 782 782 kg/ht उत्पादन होता है। पिछले कुछ वर्षों में सूरजमुखी की उपज में कोई खास बदलाव नहीं आया है, और इसके क्षेत्र और उत्पादन में उतार–चढ़ाव आया है। 1990 के दशक और वर्तमान शताब्दी के पहले दशक के दौरान ही सूरजमुखी का क्षेत्र 2 mh और उत्पादन 1 mt के स्तर को पार कर गया था। फसल मुख्य रूप से कर्नाटक में केंद्रित है, जो देश में 61% क्षेत्र और 48.24 प्रतिशत सूरजमुखी के उत्पादन करता है। इसे ओडिशा, हरियाणा, बिहार और आंध्र प्रदेश में भी उगाई जाती है। पांच राज्य साथ मिलकर देश में क्षेत्रफल का 70.7% और सूरजमुखी के उत्पादन का 73.63% हिस्सा आवरण करते है।

(D) रेशेदार फसलें

जैसा कि नाम से पता चलता है, ये फसलें रेशा प्रदान करती हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण कपास और जूट हैं। मेस्टा, जूट से अलग पूरे देश में उगाई जाने वाली एक अन्य रेशेदार फसल है, जो पूर्वी और पूर्वोत्तर राज्यों में केंद्रित है। इन फसलों से उत्पन्न रेशों का उपयोग कपड़े, बैग, बोरे आदि बनाने में किया जाता है।

(i) कपासः भारत, चीन के पश्चात विश्व में कपास का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। यह विश्व के समस्त कपास उत्पादन का लगभग एक–चौथाई (24.43%) उत्पादन करता है। कपास की कृषि में 1960 से 2018 तक काफी वृद्धी हुई है। जबकि इसके अन्तर्गत क्षेत्र 7.61 mh से बढ़कर 12.59 mh हो गया है, उपज स्तर 125 kg/ht से बढ़कर 443 kg/ht हो गया है, साथ ही उत्पादन में 5.60 mb से 32.81mb तक की वृद्धि हुई है। सिंचित प्रणाली व्यवस्था के कारण कपास की कृषि लगभग 13% से बढ़कर 33% हो गई है। यद्यपि गुजरात क्षेत्रफल के मामले में महाराष्ट्र के बाद दूसरे स्थान पर है (क्रमशः 20.85 प्रतिशत और 34.57 प्रतिशत), यह कपास उत्पादन में देश में पहले स्थान पर है, जो कुल उत्पादन का लगभग एक तिहाई (31%) उगाता है। महाराष्ट्र (18.58%) और तेलंगाना (15.84%) भी फसल के उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। ये तीनों राज्य मिलकर देश के कुल कपास उत्पादन का लगभग दो–तिहाई (65.5%) उत्पादन करते हैं। यह आंध्र प्रदेश (6.36%), राजस्थान (5.77%), कर्नाटक (5.62%), हरियाणा (4.96%), मध्य प्रदेश (4.94%), और पंजाब (3.91%) में एक छोटी फसल के रूप में उगाई जाती है।

(ii) जूट और मेस्टाः बड़े जूट–उत्पादक क्षेत्रों के बांग्लादेश में मिलने के बाद भी, भारत सबसे प्रमुख जूट उत्पादक है, जो दुनिया में कुल जूट का 55.6% उत्पादन करता है। हालांकि जूट और मेस्टा के तहत क्षेत्र 1960–61 में 0.9 mh से घटकर 2017–18 में 0. 73 mh हो गया है, इस अवधि में कुल उत्पादन 5.26 mb से 10.03 mb तक लगभग

दोगुना हो गया है क्योंकि पैदावार में 1049 kg/ht से 2435 kg/ht तक पर्याप्त वृद्धि हुई है। जूट ज्यादातर तीन पूर्वी राज्यों पश्चिम बंगाल, बिहार और असम तक केंद्रित है, जिसमें क्रमशः 70,84, 14.05, और 9.89 प्रतिशत क्षेत्र और 76.13, 12.76 और 8.59 प्रतिशत उत्पादन होता है। ये फसलें देश के कुल फसली क्षेत्र का केवल 0.38% पर बोई जाती है।

(E) अन्य फसलें

(i) गन्ना: यह एक उष्णकटिबंधीय फसल है जो आर्द्र व उपाद्र जलवायु में बोई जाती है। ब्राजील और भारत में विश्व के गन्ना उत्पादन का लगभग 60% उत्पादन करते है। ब्राजील के बाद भारत दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। 2017 में विश्व के कुल गन्ना उत्पादन में भारत का योगदान 16.6 फीसदी था, जो ब्राजील के 41.2 फीसदी की तुलना में बहुत कम है। भारत के कुल शस्य (फसल) क्षेत्र के केवल 2.4% भाग पर ही इसकी कृषि की जाती है। भारत में 1960–61 से गन्ने कृषि के क्षेत्र (2.42 mh से 4.74 mh), उत्पादन (110 mt से 379.90 mt) और उपज (45,549 kg/ht से 80,198 kg/ht) में महत्वपूर्ण वृद्धी हुई है। यह उन्नत कृषि पद्धतियों के कारण संभव हुआ है, जिसमें सिंचाई सुविधाओं का विस्तार शामिल है। गन्ने के उत्पादन में प्रमुख योगदान उत्तर प्रदेश (46.6%) और महाराष्ट्र (21.8%) का है, जिनके पास देश में समान अनुपात में (क्रमशः 47.2 और 19%) गन्ना क्षेत्र हैं। कर्नाटक (8.2%), तमिलनाडु (4.52%), बिहार (3.64%), गुजरात (3.18%), हरियाणा (2.54%), पंजाब (2.11%), आंध्र प्रदेश (2.04%), उत्तराखंड (1.85%), मध्य प्रदेश (1.43%) और तेलंगाना (0.89%) अन्य प्रमुख उत्पादक प्रदेश हैं। यह ध्यान रखना जरुरी है कि गन्ने की उपज का स्तर, तमिलनाडु (99,814 kg/ht), महाराष्ट्र (92,000 kg/ht), हरियाणा (84,499 kg/ht) में है। कर्नाटक (84,081 kg/ht), और पंजाब (83,580 kg/ht) राज्यों में, सबसे बड़े उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश के (79,245 kg/ht) की तुलना में काफी अधिक है।

(ii) चाय: भारत में चाय की खेती अंग्रेजों द्वारा 1840 के दशक में रोपण कृषि के रूप में शुरू की गई थी। मूल रूप से, चाय उत्तरी चीन की एक देशी फसल थी। भारत का श्रीलंका और चीन के बाद दुनिया में तीसरा स्थान है,जो विश्व के कुल चाय उत्पादन में लगभग 28% का योगदान देता है। यह आर्द्र, उपार्द्र, उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु वाले तरंगित भागो में अच्छे अपवाह वाली मिट्टी में बोई जाती है। प्रारंभ में असम की ब्रह्मपुत्र घाटी से शुरू हुई चाय अब पश्चिम बंगाल, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, नागालैंड, हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, त्रिपुरा, उत्तराखंड, बिहार, कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु के पहाड़ी जिलों में उगाई जा रही है। 2017–18 में भारत में चाय का कुल उत्पादन 1,325 mkg था। असम क्षेत्रफल (53.2%) के साथ–साथ उत्पादन (51%) के मामले में देश में पहले स्थान पर है। असम, पश्चिम बंगाल (29.3%) और तमिलनाडु (12.4%) के साथ मिलकर देश में लगभग 93% चाय का उत्पादन करता है।

(ii) कॉफी: कॉफी एक उष्ण कटिबंधीय रोपण कृषि है। कॉफी के उत्पादन के लिए कॉफी के बीजों को भुना और पीसा जाता है। अरेबिका, रोबस्टा और लाइबेरिका की तीन किस्मों में से केवल पहली दो किस्में ही भारत में उगाई जाती हैं। ब्राजील, वियतनाम, कोलंबिया, इंडोनेशिया, इथोपिया और मैक्सिको के बाद भारत 3.2% उत्पादन के साथ विश्व में सातवें स्थान पर है। कॉफी के पारम्परिक क्षेत्र जैसे कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु में पश्चिमी घाट के उच्च भूमि पर इसकी कृषि की जाती है। लगभग

55% क्षेत्र के साथ कर्नाटक अग्रणी है, इन तीन राज्यों का भारत में कॉफी के कुल क्षेत्रफल का 83.5% हिस्सा है। गैर–पारंपरिक क्षेत्रों में आंध्र प्रदेश, ओडिशा और पूर्वोत्तर के कुछ क्षेत्र शामिल हैं। आंध्र प्रदेश में देश के कुल कॉफी क्षेत्र का पर्याप्त (14.85%) अनुपात शामिल है। भारत के कॉफी उत्पादन का 70% भाग अकेले कर्नाटक राज्य से आता है। तीनों कॉफी उगाने वाले राज्य मिलकर भारत की 96.7% कॉफी का उत्पादन करते हैं।

बोध प्रश्न 3

a) किस प्रकार के भूमि उपयोग के क्षेत्र पर विचार करके कृषि भूमि क्षेत्र या कुल कृषि योग्य भूमि क्षेत्र का अनुमान लगाया जाता है?

b) निम्नलिखित का मिलान करें:

1. गेहूँ उत्पादक का उच्च उत्पादन	a) उत्तर प्रदेश
2. सबसे बड़ा चावल उत्पादक	b) पश्चिम बंगाल
3. ज्वार का प्रमुख उत्पादक	c) गुजरात
4. बंगाल चना का सबसे बड़ा उत्पादक	d) महाराष्ट्र
5. मूंगफली का सबसे बड़ा उत्पादक	e) राजस्थान
6. सरसों का प्रमुख उत्पादक	f) मध्य प्रदेश
7. गन्ना का प्रमुख उत्पादक	g) पंजाब

11.5 हरित क्रांति

हालाँकि हरित क्रांति शब्द की शुरुआत 1968 में विलियम एस. गड्ड ने की थी, लेकिन फसल उत्पादकता के स्तर को बढ़ाने की दिशा में कदम बहुत पहले मेक्सिको में 1950 के दशक में शुरू हो गए थे। यह 'हरित क्रांति के पिता', डॉ नॉर्मन अर्नेस्ट बोरलॉग द्वारा विकसित गेहूं के ड्वार्फ (dwarf) किस्म के उच्च उत्पादकता वाली बीज के शुरुआत के साथ शुरू हुआ, जो मेक्सिको के गेहूं विकास कार्यक्रम के प्रभारी थे। 1961 के गहन कृषि विकास कार्यक्रम (IADP) के तत्वावधान में, डॉ एम एस स्वामीनाथन के नेतृत्व में भारतीय वैज्ञानिकों ने 1963 में HYV (उच्च उत्पादकता किस्म) के बीज और हरित क्रांति के अन्य घटकों की शुरुआत की। चावल का पहला क्षेत्र परीक्षण और गेहूँ का संचालन 1963–64 के दौरान किया गया। इस कार्यक्रम के शुरुआत में सात अलग–अलग राज्यों के सात जिलों में एक पायलट प्रोजेक्ट शुरू किया गया था। इनमें से चार चावल, दो गेहूं और एक बाजरा उत्पादक जिले थे। ये बिहार के शाहाबाद, तमिलनाडु के तंजावुर, उत्तर प्रदेश के अलीगढ़, आंध्र प्रदेश के पश्चिम गोदावरी, पंजाब के लुधियाना, छत्तीसगढ़ के रायपुर और राजस्थान के पाली जिले थे। बाद में, कार्यक्रम के अंतर्गत आठ और जिलों का चयन किया गया। इन प्रयोगों की सफलता के बाद, लगभग चार लाख हेक्टेयर भूमि की खेती के लिए 16,000 टन बीजों के आयात के साथ हरित क्रांति की रणनीति को सही मायने में पेश किया गया था। आज, जैसा कि आप जानते हैं, भारत ने न केवल एक अधिशेष खाद्यान्न उत्पादक बल्कि खाद्यान्न निर्यातक देश का दर्जा हासिल कर लिया है। आप यह जानने के लिए उत्सुक होंगे कि भारत को हरित क्रांति तकनीक क्यों शुरू करनी पड़ी। 1951 की पहली स्वतंत्र भारतीय जनगणना के अनुसार 361 मिलियन की कुल आबादी को देश के 50 मिलियन टन के

अल्प खाद्यान्न उत्पादन के साथ ठीक से भरण पोषण नहीं जा सका। देश को अपने वित्तीय संसाधनों के एक बड़े हिस्से को खर्च कर आयात पर बहुत अधिक निर्भर रहना पड़ा। (i) 1960 में बदलते राजनीतिक समीकरणों विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ, ने खाद्यान्न आयात को प्रभावित किया; और (ii) अन्य विकासात्मक उद्देश्यों के लिए राष्ट्रीय वित्तीय संसाधनों का उपयोग करने के लक्ष्य के साथ, भारत सरकार ने खाद्य संसाधनों में आत्मनिर्भर बनने के लिए ठोस प्रयास किए। इसलिए, ये दोनों देश में हरित क्रांति की शुरुआत के लिए सबसे महत्वपूर्ण आधार बन गए। देश में 2019–20 के दौरान खाद्यान्न उत्पादन का अनुमान 305 मिलियन टन है। इससे न केवल कई फसलों के उत्पादकता को बढ़ाने में मदद मिली, बल्कि भारत को कुछ महत्वपूर्ण फसलों के उत्पादन के मामले में दुनिया में एक प्रतिष्ठित स्थान हासिल करने में सक्षम बनाया है।

हरित क्रांति के मुख्य उद्देश्य थे:

(i) भारत के भूख संकट को दूर करने के लिए;

(ii) ग्रामीण विकास, औद्योगिक विकास, बुनियादी ढांचे के विकास, कच्चे माल और अन्य साधनों के माध्यम से भारतीय कृषि का आधुनिकीकरण;

(iii) देश के कृषि और औद्योगिक क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा करना;

(iv) वैज्ञानिक अनुसंधान के माध्यम से ऐसे मजबूत पौधों की किस्मों का विकास करना जो अत्यधिक जलवायु और बीमारियों का सामना कर सकें; तथा

(v) आधुनिक तकनीक को अपनाकर और विभिन्न निगमों की स्थापना के माध्यम से कृषि का वैश्वीकरण करना।

अपनाए गए आधुनिक तरीकों और प्रौद्योगिकी के प्रमुख पहलू जैसे HYV बीज, ट्रैक्टर, सिंचाई सुविधाएं, कीटनाशक और उर्वरक थे, जिसने भारतीय कृषि को एक औद्योगिक प्रणाली में बदल दिया। इसे अमेरिका, भारत सरकार और फोर्ड और रॉकफेलर फाउंडेशन द्वारा वित्त पोषित किया गया था। भारत में हरित क्रांति मोटे तौर पर गेहूं क्रांति थी क्योंकि 1967–68 और 2003–04 के बीच गेहूं के उत्पादन में तीन गुना से अधिक की वृद्धि हुई, जबकि अनाज उत्पादन में वृद्धि केवल दो गुना थी।

देश में कृषि के कई घटकों को ध्यान में रख कर हरित क्रांति हासिल की जा सकती है। इनमें उच्च उत्पादकता वाली किस्मों (HYV) के बीज, दोनों सतही और भूमिगत सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों का उपयोग, कीटनाशकों का उपयोग, कमांड क्षेत्र का विकास, जोतों का समेकन, भूमि सुधार, कृषि ऋण की आपूर्ति, ग्रामीण विद्युतीकरण, ग्रामीण सड़कें, विपणन, कृषि मशीनीकरण, कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना आदि शामिल हैं।।

आइए अब हम नीचे संक्षेप में हरित क्रांति के कुछ सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों का अध्ययन करें।

a) हरित क्रांति के सकारात्मक प्रभाव

i. इससे फसल उत्पादन में बहुत महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। गेहूं और चावल की अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत फसल क्षेत्र में वृद्धि के परिणामस्वरूप

1978–1979 के दौरान यानी हरित क्रांति की शुरुआत के दस वर्षों के भीतर 131 मिलियन टन अनाज का रिकॉर्ड उत्पादन हुआ।

ii. देश खाद्यान्न में आत्मनिर्भर हो गया, प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की शुद्ध उपलब्धता में वृद्धि हुई, खाद्यान्नों का आयात कम हो गया, पर्याप्त अधिशेष स्टॉक का भंडारण किया जा सकता हैं और देश खाद्यान्न निर्यातक देशो के बीच स्थान प्राप्त करने में सक्षम बना।

iii. हरित क्रांति से किसानों की आय में वृद्धि हुई विशेष रूप से, 10 हेक्टेयर से अधिक भूमि वाले बड़े किसान HYV बीज, उर्वरक, मशीनों जैसे विभिन्न इकाइयों में बड़ी मात्रा में धन का निवेश कर सकते हैं और पूंजी आधारित कृषि शुरू कर सकते हैं।

iv. हरित क्रांति ने देश में कृषि के लिए मशीन निर्माण उद्योगों, उर्वरक, कीटनाशक, और खरपतवारनाशी उद्योगों के साथ–साथ खाद्य प्रसंस्करण और कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया।

v. कृषि क्षेत्र के साथ–साथ औद्योगिक और ऊर्जा क्षेत्रों में भी रोजगार के अवसरों में समग्र वृद्धि हुई।

b) हरित क्रांति के नकारात्मक प्रभाव

i. उच्च उत्पादकता किस्म कार्यक्रम (HYVP) ने केवल गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा और मक्का के पांच खाद्यान्नों को लक्षित किया। अन्य मोटे अनाज, दालें, और तिलहन, साथ ही कपास, चाय और गन्ना जैसी व्यावसायिक फसलों को कार्यक्रम के तहत शामिल नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप उनके उत्पादन के स्तर में स्थिरता आई।

ii. हरित क्रांति की रणनीतियों से अधिकांश बड़े किसानों को लाभ हुआ जबकि छोटे और सीमांत किसानों की अनदेखी की गई।

iii. उत्तर में पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश और दक्षिण में आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु को छोड़कर, शेष राज्य अछूते रहे जिसने कृषि विकास के स्तरों में बड़े पैमाने पर क्षेत्रीय असमानताओं को जन्म दिया। इससे कुल फसली क्षेत्र का केवल 40% प्रभावित हुआ है और 60% अभी भी इससे अछूता है।

iv. किसानों द्वारा उचित प्रशिक्षण के अभाव में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और कीटनाशकों के उपयोग से फसलों, पर्यावरण, विशेष रूप से मृदा और मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

v. कार्यक्रम के दौरान शुरू की गई HYV फसलें जल–गहन थीं। परिणामस्वरूप, सिंचाई के लिए जल के अत्यधिक उपयोग वाले क्षेत्रों में मिट्टी क्षारीय हो गई।

vi. जिन क्षेत्रों में भूजल को सोखने के लिए सिंचाई पंपों का उपयोग किया गया था, वहां भूमिगत जल में कमी आई।

vii. फसल उत्पादन में वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए बार–बार फसल चक्र, मिट्टी की पोषक तत्वों को खत्म कर देता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

viii. खेती में मशीनीकरण ने खेतिहर मजदूरों में व्यापक बेरोजगारी पैदा कर दी है। सबसे ज्यादा प्रभावित गरीब और भूमिहीन मजदूर थे।

फिर भी, हरित क्रांति देश के लिए एक बड़ी उपलब्धि थी, जिससे यह भोजन की कमी और गरीबी से बाहर आ सकती थी। अब अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के विकास पर उचित ध्यान दिया जा सकता है। निश्चित रूप से, हालांकि, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के अलावा अन्य कारकों जैसे प्राकृतिक पर्यावरण, खेती की आधुनिक तकनीकों को अपनाने से संबंधित किसान की शिक्षा पर बहुत कम ध्यान दिया गया था। भारत में हरित क्रांति के जनक, डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन ने ''सदाबहार क्रांति'' की कल्पना की, जिसमे समग्र रूप से कृषि उत्पादकता, पर्यावरण सुरक्षा, आर्थिक व्यवहारिता और सामाजिक धारणीयता शामिल थी। इसमें सामाजिक–स्थानिक असमानताओं में कमी की भी परिकल्पना की गई है जो हरित क्रांति की शुरुआत के कारण बढ़ गई है। सदाबहार क्रांति में प्रौद्योगिकी विकास और प्रसार में पारिस्थितिक सिद्धांतों का एकीकरण शामिल है। हरित क्रांति के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए भारत सरकार द्वारा कई कदम उठाए गए हैं। उनमें से सबसे महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए 2005 में हरित क्रांति कृष्णनति योजना की शुरूआत है। इस योजना के माध्यम से, सरकार ने किसानों की आय बढ़ाने के लिए कृषि और संबंधित क्षेत्रों को समग्र और वैज्ञानिक तरीके से विकसित करने की योजना बनाई है।

इस एकल छादन योजना में 11 योजनाएं और मिशन शामिल हैं, जो हैं; बागवानी के एकीकृत विकास के लिए मिशन (MIDH), राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (NFSM), राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (NMSA), कृषि विस्तार (SMAE) पर उप–मिशन, बीज और रोपण सामग्री (SMSP) पर उप–मिशन, कृषि मशीनीकरण (SMAM) पर उप–मिशन, पादप संरक्षण और स्पर्शवर्जन योजना (SMPPQ) पर उप–मिशन, कृषि जनगणना, अर्थशास्त्र और सांख्यिकी पर एकीकृत योजना (ISACES), कृषि सहयोग पर एकीकृत योजना (ISAC), कृषि विपणन पर एकीकृत योजना (ISAM), कृषि में राष्ट्रीय ई–गवर्नेंस योजना (NeGP-A)।

बोध प्रश्न 4

a) भारत में हरित क्रांति की रणनीतियां शुरू करने का श्रेय किसे और कब दिया जाता है?

b) हरित क्रांति के सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों में से एक के बारे में लिखिए।

11.6 भारतीय कृषि की समस्याएं

निम्नलिखित महत्वपूर्ण मुद्दे पर उनके लिए सुझाए गए समाधानों के साथ इस भाग में विचार किया गया है। भारतीय कृषि दोनों प्राकृतिक एवं मानव निर्मित कारकों से उत्पन्न समस्याओं का सामना करता है।

1. छोटी और विखंडित भूमि जोत

देश में फसल की खेती के लिए उपयुक्त व्यापक क्षेत्र हैं। इसके बावजूद, यह फसल उत्पादन के वांछित स्तर को नहीं प्राप्त कर सका है। विखंडित भूमि जोत को इसके लिए मुख्य कारणों में से एक माना जाता है। 1970–71 के दौरान, औसत जोत आकार

2.28 हेक्टेयर था, जो 2015–16 में घट कर 1.08 हेक्टेयर हो गया। भूमि जोत के असीमित उपखंड के साथ, जोतों का आकार और भी कम हो जाएगा। इसके अलावा, कुल जोतों में छोटे आकार की जोतों का अनुपात हमेशा अधिक रहा है और धीरे–धीरे बढ़ रहा है। अपर्याप्त/कम कृषि उत्पादन और पिछड़ेपन की स्थिति का एक प्रमुख कारण जोतों का उपखंड और विखंडन है। भूमि के एक टुकड़े से दूसरे भाग में बीज, खाद, औजार और जानवरों को ले जाना संभव है, लेकिन अधिक समय और प्रयास के कारण यह खर्चीला और अलाभकारी है। ऐसे छोटे और विखंडित जोतों में सिंचाई करना बहुत कठिन होता है। इस विकट स्थिति से निपटने के लिए जोतों को जोड़ना या अकार बड़ा करना जरुरी है, जिसके लिए विखंडित जोतों के पुनः आवंटन और कृषि भूमि के कई भाग के बजाय केवल एक या कुछ खंड को विकसित करने की आवश्यकता है।

2. उत्तम गुणवत्ता के बीज

फसल की पैदावार बढ़ाने और कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए बीज एक प्रमुख और बुनियादी सामग्री/अवयव है। उच्च गुणवत्ता वाले बीज के उत्पादन के साथ इसका वितरण भी महत्वपूर्ण है। दुर्भाग्य से, अधिकांश किसान, विशेष रूप से सीमांत और छोटे किसान, अत्यधिक लागत के कारण अच्छी गुणवत्ता के बीज नहीं खरीद पाते। इस समस्या से निपटने के लिए, भारत सरकार ने 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम (NSC) और 1969 में भारतीय राज्य किसान निगम (SFCI) की स्थापना की। किसानों को HYV बीज की आपूर्ति के लिए देश के विभिन्न हिस्सों में तेरह राज्य बीज निगम (SSCs) भी स्थापित किए गए। इसके अलावा, सरकार द्वारा समय–समय पर उचित नीतियां तैयार की जाती हैं जिससे खाद्य और पोषण सुरक्षा लक्ष्यों को पूरा करने के लिए भारतीय किसानों को उचित मूल्य पर पर्याप्त मात्रा में उत्तम गुणवत्ता वाले बीज उपलब्ध हो सकें।

3. खाद, उर्वरक और जैवनाशकों के मुद्दे

हजारों वर्षों से, भारतीय मृदा के पुनः पूर्ति के उपायों के बगैर फसलों की खेती के लिए उपयोग किया जाता रहा है। परिणामस्वरूप, मृदा और उसकी उर्वरकता निम्न (कम) और समाप्त हो गई है तथा उत्पादकता में कमी आई है। देश में उगाई जाने वाली लगभग सभी फसलों की औसत पैदावार विश्व में सबसे कम होती है। यह एक गंभीर समस्या है जिसका समाधान खाद और उर्वरक के उपयोग को बढ़ाकर किया जा सकता है। उर्वरकों के उपयोग से कृषि उत्पादन में लगभग 70% वृद्धि हुई। हालांकि, सभी हिस्सों में पर्याप्त खाद और उर्वरक उपलब्ध कराने में व्यावहारिक कठिनाइयां हैं। सरकार ने रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष रूप से भारी परिदानी प्रदान किया है। स्वतंत्रता के समय, रासायनिक उर्वरकों का उपयोग लगभग नहीं किया गया था लेकिन सरकार की पहल और कुछ बड़े और प्रगतिशील किसानों की मानसिकता में बदलाव के परिणामस्वरूप उर्वरकों की उपयोग एवं खपत में वृद्धि हुई है।

4. सिंचाई

भारत चीन के बाद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा सिंचित देश है, परन्तु इसके रोपण क्षेत्र का केवल एक तिहाई भाग ही सिंचित है। भारत जैसे उष्णकटिबंधीय देश में, जहां वर्षा अनियमित और अनिश्चित होती है, सिंचाई सबसे महत्वपूर्ण कृषि की जरुरत है।

भारत तब तक कृषि में निरंतर प्रगति नहीं कर पाएगा जब तक कि आधे से अधिक रोपित क्षेत्र को सिंचित नहीं किया जाता है। यह पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग में कृषि प्रगति से प्रमाणित होता है, जहां आधे से अधिक फसल क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा है।

हालांकि, अति–सिंचाई (Over Irrigation) के नकारात्मक प्रभावों से बचने के लिए विशेष रूप से नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्रों में, अत्यधिक सावधानी की जरुरत है। दोषपूर्ण सिंचाई ने पंजाब और हरियाणा के कई कृषि क्षेत्रों को अनुपयोगी बना दिया है। इंदिरा गांधी नहर कमांड क्षेत्र में गहन सिंचाई के परिणामस्वरूप उप–मृदा जल स्तर में काफी वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप जल–जमाव, मिट्टी की लवणता और क्षारीयता की समस्या उत्पन्न हुई है।

5. मृदा अपरदन

भारत में जलाशयों में अवसादन की उच्च दर और मिट्टी की उर्वरता में कमी और अत्यधिक मृदा अपरदन के कारण गंभीर पर्यावरणीय समस्याएं पैदा हुई हैं। लगभग 29% अपरदित मृदा समुद्र में मिल जाती है, जबकि लगभग 61% केवल द्वारा स्थानांतरित हो जाती है। भारत में सिंचित और वर्षा सिंचित दोनों क्षेत्रों में मृदा अपरदन एक बड़ी समस्या है।

6. कृषि विपणन

ग्रामीण भारत में, किसान अधिकतर अपने कृषि उत्पादों के बिक्री के लिए स्थानीय व्यापारियों और बिचौलियों पर निर्भर रहते हैं, जो पर्याप्त विपणन सुविधाओं के अभाव में कम कीमत पर बेचा जाता है। इन किसानों को अपनी उपज की बिक्री के लिए मजबूर होना पड़ता है। अधिकांश गांवों में, किसान अपनी उपज साहूकार को बेचते हैं, जिनसे वे आमतौर पर पैसे उधार लेते हैं। किसानों को साहूकारों और बिचौलियों से बचाने के लिए सरकार ने विनियमित बाजार बनाए हैं। ये बाजार आम तौर पर एक प्रतिस्पर्धी खरीद प्रणाली स्थापित करते हैं, अव्यवस्था उन्मूलन में सहायता करते हैं, मानकीकृत वजन और उपायों के उपयोग को बढ़ावा देते हैं, विवाद समाधान के लिए उपयुक्त प्रणाली विकसित करते हैं, और यह सुनिश्चित करते हैं कि उत्पादन कर्ता अनुचित प्रतिस्पर्धा के अधीन नहीं हैं।

7. कृषि में निवेश की कमी

कृषि क्षेत्र में नए निवेश की कमी है। कई अर्थशास्त्रियों का मानना है कि आसमान भूमि वितरण कृषि स्थिरता का मूल कारण है। यह तर्क दिया जाता है कि जमींदार–कृषक (पट्टेदार) व्यवस्था के तहत, सभी उत्पादन खर्च पट्टेदार अपनी पट्टेदारी बचाने के लिए वहन करता हैं, जिसके कारण उसके पास बहुत कम या कोई निवेश योग्य संसाधन नहीं बच पता है, परिणामस्वरूप कृषि उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। दूसरी ओर, जमींदार जो कृषि में निवेश करने के बजाए, सूदखोरी जैसे अन्य उच्च–लाभ वाले उद्यमों में संलग्न होना पसंद करता है, जो निश्चित लाभ प्रदान करता है। नतीजतन, देश में कृषि क्षेत्र में निवेश बहुत कम रहता है, जिसके कारण इसके समग्र प्रगति बाधित होती है।

ऊपर चर्चा किए गए मुद्दों के अलावा, भारत में कृषि को प्रभावित करने वाली कई अन्य समस्याएं भी हैं, जिनमें प्राकृतिक संसाधनों के अनुचित प्रबंधन, वर्षा पर अधिक निर्भरता,

अस्थिर कीमतों के कारण वाणिज्यिक जोखिम और कृषि उपज की बहार विक्री पर प्रतिबंध, मशीनीकरण, सस्ते और कुशल परिवहन की कमी, और वैश्विक बाजारों तक पहुंच की कमी शामिल हैं, जिसे सुधारात्मक उपायों के साथ ठीक करने की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न 5

भारतीय कृषि की प्रमुख समस्याओं की सूची बनाइए।

11.7 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा है:

- भारत प्राचीन काल से कृषि प्रधान देश रहा है। भारतीय कृषि में रोपण फसलों (कृषि) और अन्य खाद्य फसलों की शुरूआत के साथ एक परिवर्तन देखा गया। अब, भारत कृषि उपज के साथ अंतरराष्ट्रीय बाजार में प्रवेश कर चुका है।

- कृषि प्रारम्भ से ही भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ रही है। आज भी, कृषि न केवल श्रमिकों के अधिकतम अनुपात को समायोजित करती है (श्रमिकों का एक बड़ा हिस्सा शामिल है), बल्कि सबसे बड़ा भू–उपयोग भी है।

- भारतीय कृषि में उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद, देश के बड़े हिस्से में सीमांत और छोटे किसान हैं, जो आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने में कई सामाजिक और आर्थिक बाधाओं का सामना करते हैं।

- अर्थव्यवस्था के क्रमिक विविधीकरण के कारण भारत में कृषि भू–उपयोग में तीव्र बदलाव हुआ है। आधुनिक कृषि तकनीकों, बुनियादी सुविधाओं के विकास और बाजार के प्रभाव ने व्यावसायिक फसलों के उत्पादन (पक्ष) में देश के शस्य प्रारूप को बदला है।

- हरित क्रांति ने देश को भोजन की कमी और गरीबी के चंगुल से बाहर निकालने में मदद की है। हालांकि, हरित क्रांति ने गहन खेती वाले क्षेत्रों में प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को डाला है।

- भारतीय कृषि के कुछ प्रमुख मुद्दे जैसे भूमि जोत आकार का काम होना, छोटे किसानों और भूमि मालिकों के सामने आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाने में आने वाली कठिनाइयाँ, मानसून पर अत्यधिक निर्भरता और उचित परिवहन सुविधाओं की कमी हैं। यद्यपि इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए समेकित एवं संस्थागत नियोजन उपाय किए जा रहे हैं, अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

11.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व की व्याख्या कीजिए।

2. भारतीय कृषि की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3. भारतीय कृषि के शस्य प्रारूप की व्याख्या कीजिए।

4. हरित क्रांति के सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव क्या हैं?

5. भारतीय कृषि की किन्हीं चार समस्याओं का वर्णन कीजिए।

11.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1. जबकि, भारतीय अर्थव्यवस्था में विविधता आने लगी है, लेकिन अन्य आर्थिक गतिविधिया या अन्य क्षेत्र, देश में बढ़ती श्रमिक आबादी के लिए रोजगार के अधिक अवसर को पैदा करने में विफल रहे हैं।

2. प्रतिकूल मौसम की स्थिति में कुछ फसलों के उत्पादन में सफलता सुनिश्चित करना।

3. a) कृषि भूमि या कुल खेती योग्य भूमि में शामिल है, (i) शुद्ध बोया गया क्षेत्र, (ii) कृषि योग्य बंजर भूमि, (iii) चालू परती, और (iv) परती भूमि का योग है।

   b) 1–g, 2–d, 3–d, 4–f, 5–c, 6–e, 7–a

4. a) 1961 के गहन कृषि विकास कार्यक्रम (IADP) के तत्वावधान में भारतीय वैज्ञानिकों ने एम.एस. स्वामीनाथन के नेतृत्व में 1963 में उच्च उपज देने वाली किस्म (HYV) के बीज और हरित क्रांति के अन्य घटकों की शुरुआत की।

   b) सकारात्मक प्रभाव फसल उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि है; जबकि उर्वरकों और कीटनाशकों की वृद्धि मृदा की उर्वरकता/क्षमता (स्वास्थ्य) को प्रभावित किया।

5. समस्याओं में छोटे आकार की भूमि जोत, बीजों की गुणवत्ता, मृदा अपरदन, सिंचाई, वर्षा पर अधिक निर्भरता, मशीनीकरण की कमी, वैश्विक बाजारों तक पहुंच की कमी इत्यादि हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1. भाग 11.2 का संदर्भ लें
2. भाग 11.3 का संदर्भ लें
3. उप–भाग 11.4.2 का संदर्भ लें
4. भाग 11.5 का संदर्भ लें
5. भाग 11.6 का संदर्भ लें

11.10 संदर्भ और अन्य पाठ्य/पठन सामग्री

1. Khullar, D. R. (2011): *India – A Comprehensive Geography*. Ludhiana: Kalyani Publishers.

2. Tiwari, R. C. (2008): *Geography of India.* Allahabad: Pryag Pustak Bhawan.

3. Singh, J., D.S. Sandhu & J. P. Gupta (1990): *Dynamics of Agricultural Change.* New Delhi: Oxford & IBH Pub. Co. Pvt. Ltd.

4. Directorate of Economics and Statistics (2020): *Agricultural Statistics at a Glance 2019*, Department of Agriculture, Cooperation and Farmers Welfare, Ministry of Agriculture and Farmers Welfare, Government of India, New Delhi.

5. Directorate of Economics and Statistics (2021): *Pocket Book of Agricultural Statistics 2020,* Department of Agriculture, Cooperation and Farmers Welfare, Ministry of Agriculture and Farmer's Welfare, Government of India, New Delhi.

6. Directorate of Economics and Statistics (2021): *Monthly Bulletin May, 2021,* Department of Agriculture, Cooperation and Farmers Welfare, Ministry of Agriculture and Farmer's Welfare, Government of India, New Delhi.

7. https://www.economicsdiscussion.net/agriculture/agriculture-and-the-development-of-indian-economy/14174 (09.07.2021)

8. *Agricultural Statistics - 2017*. Retrieved from: *https://agricoop.nic.in/sites/default/files/pocketbook_0.pdf*

9. https://www.economicsdiscussion.net/articles/importance-of-agriculture-in-indian-economy/2088 (09.07.2021).

10. Singh, Jasbir (2005): "Can the Indian States Achieve A Future of the Sustainable Agricultural Development and Face Challenges to Agriculture During the 21stCentury?" Punjab Geographers, Vol. I (1).

11. Singh, Tranjeet (2017). Issues and challenges of Indian agriculture. International Journal of Research in Social Sciences, Vol. VII (9).

इकाई 12

उद्योग

इकाई की रुपरेखा

12.1 प्रस्तावना
संभावित अध्ययन परिणाम
12.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
12.3 उद्योगों की स्थिति को प्रभावित करने वाले कारक
12.4 उद्योगों का वर्गीकरण
12.5 भारत के औद्योगिक प्रदेश और औद्योगिक गलियारे
12.6 सारांश
12.7 अंत में कुछ प्रश्न
12.8 उत्तर
12.9 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

12.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका के बारे में अध्ययन किया था। इस इकाई में, हम मुख्य रूप से निर्माण उद्योगों पर ध्यान केंद्रित करेंगे जो द्वितीयक क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। इस इकाई में हम भारत में विभिन्न प्रकार के उद्योगों, उनके वर्गीकरण और स्थानिक वितरण के बारे में अध्ययन करेंगे।

निर्माण या विनिर्माण वह प्रक्रिया है जिसमें कच्चे माल को बहुमूल्य उत्पादों में संसाधित करके वस्तुओ का उत्पादन किया जाता है। किसी भी देश के विकास को निर्माण उद्योगों के विकास से समझा जा सकता है। निर्माण प्रक्रिया में, प्राकृतिक संसाधनों को अधिक उपयोगी वस्तुओं या तैयार उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है। आप अनुभाग 12.2 में औद्योगिक विकास के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यों के बारे में अध्ययन करेंगे। कच्चे माल, श्रम, जलवायु, बाजार, परिवहन, पूंजी, बैंकिंग सुविधाओं आदि सहित कई कारक उद्योगों की स्थिति को निर्धारित करते हैं। इन सभी जानकारियो को आप अनुभाग 12.3 में प्राप्त करेंगे। कच्चे माल की उपलब्धता, पूंजी निवेश की मात्रा, कार्य और स्वामित्व के आधार पर उद्योगों को विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है। अनुभाग 12.4 में उद्योगों के वर्गीकरण की व्याख्या तथा 12.5 में भारत के औद्योगिक गलियारों का अध्ययन करेंगे। इसके अलावा, आप भारतीय अर्थव्यवस्था में परिवहन सुविधाओं के महत्व और विकास के बारे में अगली इकाई 13 में सीखेंगे।

संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन पूरा करने के बाद, आप :

- भारत में उद्योगों के ऐतिहासिक विकास को समझ सकेंगे;
- उद्योगों की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकेंगे;
- विभिन्न मानदंडों के आधार पर उद्योगों को वर्गीकृत कर सकेंगे; तथा
- भारत के औद्योगिक क्षेत्रों और औद्योगिक गलियारों की व्याख्या कर सकेंगे।

12.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

जैसा कि हम जानते हैं कि भारत में उद्योग के इतिहास को मानव जाति के इतिहास से जाना जा सकता है। भारत के हस्तशिल्प विदेशों के लिए बहुमूल्य थे। ग्रामीण शिल्पकार स्थानीय रूप से उपलब्ध कच्चे माल और अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित कौशल के साथ उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों का उत्पादन करते थे। इस दिशा में भारत का सूती वस्त्र उद्योग भारत और विश्व के लिए प्रमुख महत्व रखता है।

भारत में आधुनिक उद्योग की शुरुआत 1830 में कहा जा सकता है जब तमिलनाडु में पहली बार चारकोल से लोहा बनाने का प्रयास किया गया था और जो 1866 में ध्वस्त हो गया। इसलिए, भारत में आधुनिक उद्योग की वास्तविक शुरुआत सूती वस्त्र उद्योग की स्थापना से होती है। पहली कपास मिल 1807 में कोलकाता में तथा 1854 में मुंबई में स्थापित की गई थी। पहली जूट मिल 1855 में कोलकाता के निकट रिशरा में स्थापित की गई थी। जूट उद्योग अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों के कारण हुगली बेसिन में फला–फूला।

पश्चिम बंगाल के रानीगंज में 1772 में कोयले का खनन शुरू किया गया था। रेलवे की शुरुआत 1854 में की गई थी। अधिकांश उद्योग अहमदाबाद, कोलकाता और मुंबई क्षेत्र तक केंद्रित थे। पश्चिम बंगाल के कुल्टी में 1874 में लोहे का उत्पादन किया जाता था। टाटा आयरन एंड स्टील प्लांट की स्थापना 1907 में तत्कालीन बिहार के जमशेदपुर में हुई थी, जो भारत में बड़े पैमाने पर स्टील का उत्पादक बना। देश के कुछ हिस्सों में कई प्रकार के मध्यम और लघु उद्योग जैसे सीमेंट, कांच, जूट, चीनी और कागज की स्थापना की गई। स्वतंत्रता पूर्व काल दौरान उद्योगों में विविधता नहीं थी।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान इस्पात, रसायन, सीमेंट, प्लास्टिक, चाय, कपास, बिजली के उपकरण और कागज जैसे उद्योग फले–फूले, जबकि जूट और चीनी उद्योगों में गिरावट हुई। विभाजन के दौरान तथा द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, भारत में सूती वस्त्र, चीनी, सीमेंट और इस्पात उद्योगों में गिरावट आई है। जूट और कपास सर्वाधिक प्रभावित उद्योग थे। कुशल श्रमिक विभाजन के बाद पाकिस्तान चले गए। औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना के बाद भारत में उद्योगों की स्थिति में सुधार हुआ।

12.2.1 योजना काल में औद्योगिक विकास

निर्माण क्षेत्र को भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। यह कृषि पर निर्भरता को कम करके द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्र में रोजगार सुनिश्चित करता है। इसका उद्देश्य पिछड़े क्षेत्रों में उद्योग स्थापित करके क्षेत्रीय असंतुलन को कम करना है। यह गरीबी को कम करने तथा बेरोजगारी को खत्म करने में मदद करता है। वस्तुओं तथा मूल्य वर्धित उत्पादों के उत्पादन में शामिल उद्योग, निर्माण या विनिर्माण उद्योग हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि उद्योग का विकास मुख्य रूप से कच्चे माल पर निर्भर करता है। कच्चा

माल प्राकृतिक रूप में जैसे कपास, लोहा, आदि या अर्ध संसाधित रूप में जैसे पिग आयरन आदि में हो सकता है, जो वहुमूल्य वस्तु निर्माण में उपयोगी होते हैं। किसी देश के औद्योगिक विकास के स्तर और आर्थिक समृद्धि के बीच सीधा संबंध होता है। अपने औद्योगिक क्षेत्र को विकसित करके ही आर्थिक विकास प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि यह दूसरे उद्योग के लिए एक इनपुट सामग्री के रूप में कार्य करता है। आर्थिक रूप से कमजोर देश उच्च कीमतों पर तैयार माल का आयात करते हैं और अपने देश से कच्चे माल का निर्यात करते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस और जापान जैसे विकसित देश मुख्य रूप से उद्योगों के विकास पर ध्यान केंद्रित करते हैं। भारत में उद्योग लगभग 28 मिलियन लोगों के लिए रोजगार का एक प्रमुख स्रोत है। यह सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में लगभग 29% का योगदान देता है।

अब हम विभिन्न कालखंडों में भारत के औद्योगिक विकास की चर्चा करेंगे। इन्हें नीचे समझाया गया हैः

1. प्रथम चरण (1951–65)

प्रारंभ में, लोहा और इस्पात, जीवाश्म ईंधन, उर्वरक उद्योग, भारी इंजीनियरिंग, कपास, जूट, ऊन, सीमेंट, कागज, दवाएं, पेंट आदि जैसे उद्योगों में निवेश पर ध्यान केंद्रित किया गया था। इस चरण को ठोस औद्योगिक आधार माना जाता है क्योंकि भारत में औद्योगिक उत्पादन की वार्षिक वृद्धि दर 5.7% से बढ़कर 9.0% हो गई है। औद्योगिक नीति संकल्प, 1956 को ''भारत का आर्थिक संविधान'' या ''राज्य पूंजीवाद की बाइबिल'' के रूप में माना जाता था, जिसने सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तार तथा सहकारी क्षेत्र के विकास के प्रोत्साहन पर बल दिया। इसका उद्देश्य अधिक छोटे औद्योगीकृत क्षेत्रों के ढांचागत विकास द्वारा क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करना था।

2. द्वितीय चरण (1965–80)

इस अवधि के दौरान, औद्योगिक उत्पादन की वार्षिक वृद्धि दर तीसरी योजना में 1965 में 9.0% से घटकर 1976 में 4.1% तक रह गई। 1976–77 में वार्षिक वृद्धि दर 6.1% और 1979–80 में (–) 1.6% थी। 1962, 1965 और 1971 के युद्धों, 1965–67 और 1971–73 में सूखा, 1973 का तेल संकट आदि के कारण औद्योगिक विकास में गिरावट आई। दूसरे चरण के दौरान अधिक लौह धातु, मैकेनिकल इंजीनियरिंग सामान और निर्माण सामग्री के उत्पादन के कारण विकास दर में गिरावट आई। इसके अलावा, 1973 की औद्योगिक नीति ने विदेशी कंपनियों को बड़े पैमाने पर उपभोग वाले उत्पादों के उत्पादन की नई क्षमता स्थापित करने पर जोर दिया।

3. तृतीय चरण (1981–91)

1981–85 के दौरान, वार्षिक वृद्धि दर 7.0% थी, जो 1985–90 में बढ़कर 8.6% हो गई। इसमें छठी और सातवीं पंचवर्षीय योजनाओं को शामिल किया गया। 1990–91 में औद्योगिक क्षेत्र की वार्षिक वृद्धि दर 9.0% थी। रसायन, पेट्रोरसायन और संबद्ध उद्योगों का उत्पादन में तीव्र गति से वृद्धि हुई। इस चरण में इलेक्ट्रॉनिक उद्योग, फार्मास्युटिकल ड्रग्स, टेलीविजन और इलेक्ट्रॉनिक्स, ऑटोमोबाइल, जूट, रेलवे वैगन, चीनी उद्योग, स्वरोजगार और स्थानीय संसाधनों के दोहन पर ध्यान केंद्रित किया गया।

लौह और इस्पात उद्योग में 5.15% और धातु में 4.94% की वृद्धि दर्ज की गई। इस प्रकार, अस्सी के दशक के दौरान औद्योगिक विकास के प्रारूप में पहले दो चरणों की

तुलना में बदलाव हुआ। इस चरण में औद्योगिक विकास मुख्य रूप से 1980 की नई औद्योगिक नीति के कारण पुनर्जीवित हुआ, जिसमें निवेश सीमा बढ़ाने, नवीकरणीय और धारणीय प्रक्रियाओं में निवेश और सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों (पीएसयू) की दक्षता पर ध्यान केंद्रित किया गया था।

4. चौथा चरण (1991–98)

इस अवधि के दौरान, 1991–92 से 1997–98 तक एक तीव्र औद्योगिक परिवर्तन (पहले जैसे स्थिति) हुआ, जिसके बाद देश में अचानक औद्योगिक विकास हुआ है। 1990–91 में यह 8.5% थी जबकि 1991–92 में (–) 0.10% की वृद्धि दर्ज की गई थी। 1996–97 में यह बढ़कर 7.1% तथा 1997–98 में 8.6% हो गई। 1991 की औद्योगिक नीति लाइसेंस को समाप्त करने, विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने, सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के विनिवेश और सीमा शुल्क को कम करने पर केंद्रित थी।

5. वर्ष 2000 के बाद की अवधि

संरचनात्मक और आवर्ती कारकों के कारण, 2000–02 के दौरान औद्योगिक क्षेत्र की विकास दर सबसे कम थी। परिणामस्वरुप, इस अवधि के दौरान विनिर्माण, बिजली और खनन क्षेत्रो में गिरावट आई। वर्ष 2003 को औद्योगिक क्षेत्र के पुनउद्धार वर्ष कहा जा सकता है। प्रारंभ में, दसवीं योजना के दौरान, औद्योगिक विकास दर 5% थी जो 2003–04 में 7%, 2004–05 में 8% तथा 2006–07 में 11% को पार कर गई थी। इस अवधि के दौरान औद्योगिक विकास में विनिर्माण क्षेत्र का योगदान रहा। देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान पूंजीगत वस्तु क्षेत्र का है। ग्यारहवीं योजना के दौरान, 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के कारण 2008–08 में औद्योगिक विकास गिरकर 2.8% हो गया। औद्योगिक विकास 2009–10 में फिर से प्रारंभ हुआ और 10% तक पहुंचा और 2010–11 में 8.2% तक पहुंच गया। उपभोक्ता वस्तुओं, बिजली, रिफाइनरी, सीमेंट, कोयला, कच्चे तेल और ढांचागत विकास पर ध्यान केंद्रित किया गया। इस अवधि में उद्योग, ढांचागत विकास और रोजगार सृजन पर जोर दिया गया। औद्योगिक विकास की प्रक्रिया 2011 के बाद निम्नलिखित कारणों से धीमी हो गईः

- घरेलू मांग में कमी।
- उच्च मुद्रास्फीति।
- वैश्विक वित्तीय संकट।
- विभिन्न निजी क्षेत्र की परियोजनाओं की विफलता।
- यूरोपीय ऋण संकट।
- विदेशी बाजार में वस्तुओं की कीमतों में कमी।

12.2.2 औद्योगिक क्षेत्र में नवीन प्रवृत्ति रुझान

आप निम्नलिखित का अध्ययन करके औद्योगिक क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों को समझेंगेः

a) **क्लाउड कंप्यूटिंग**ः यह इंटरनेट के माध्यम से विभिन्न सेवाएं प्रदान करता है, जिसमें डेटा स्टोरेज, सर्वर, डेटाबेस, नेटवर्किंग और सॉफ्टवेयर जैसे टूल (उपकरण) और एप्लिकेशन शामिल हैं। यह किफायती होते हैं, उत्पादकता, गति, प्रदर्शन और सुरक्षा को

बढ़ाता है। इसके अलावा, यह प्रदर्शन मानदंड (performance benchmarking), दूरस्थ सेवाओं आदि जैसे क्लाउड सोलूशन्स (समाधानों) का उपयोग करता है।

b) **इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT):** इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) परस्पर संबंधित कंप्यूटिंग उपकरणों, सॉफ्टवेयर, संवेदक और अन्य तकनीकों का नेटवर्क है जो मानव–से–मानव या मानव–से–कंप्यूटर के संपर्क के बगैर, इंटरनेट पर अन्य उपकरणों और प्रणालियों के साथ आँकड़ों को जोड़ने और आदान–प्रदान करने के लिए होता है।

c) साइबर सुरक्षाः साइबर सुरक्षा या सूचना प्रौद्योगिकी सुरक्षा कंप्यूटर, सर्वर, प्रोग्राम, डिवाइस और डेटा को दुर्भावनापूर्ण प्रहारों से बचाती है। इसका उद्देश्य साइबर हमलों के जोखिम को कम करना तथा अनाधिकृत प्रणाली, नेटवर्क और प्रौद्योगिकियों से बचाव करना है।

d) इंडस्ट्रियल इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IIOT)ः इसके द्वारा कई उपकरण, लोग, आँकड़ों और मशीनों को मशीन–टू–मशीन और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) के संदर्भ में तीसरे प्लेटफॉर्म तकनीकों के माध्यम से जुड़ी और संकालित (सिंक्रोनाइज) की जाती हैं।

12.2.3 औद्योगिक क्षेत्र में नवीन विकास

औद्योगिक विकास की दिशा में कुछ विकासात्मक कार्यक्रम की चर्चा की गई।

1. मेक इन इंडिया

भारत को वैश्विक डिजाइन और विनिर्माण केंद्र में बदलने के उद्देश्य से सितंबर 2014 में, मेक इन इंडिया की शुरुआत की गई थी। यह देश में नवीनतम प्रौद्योगिकी, अनुसंधान और विकास को प्रोत्साहित करता है। इसके अतिरिक्त, इसका उद्देश्य देश के बुनियादी ढांचे में निवेश के लिये विदेशी कंपनियों और संकट के बीच कारखाने स्थापित करने के लिए आकर्षित करना है।

2. कौशल भारत (स्किल इंडिया)

विश्व युवा कौशल दिवस के अवसर पर कौशल विकास और उद्यमिता मंत्रालय द्वारा 2015 में इस कार्यक्रम की शुरुआत की गई। इसका उद्देश्य 2022 तक 40 करोड़ से अधिक युवाओं को बाजार संबंधित कौशल प्रशिक्षण प्रदान करना है।

3. डिजिटल इंडिया

यह भारत को एक ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था और डिजिटल रूप से सशक्त समाज में बदलने के लिए इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग (डीईआईटीवाई) द्वारा कार्यान्वित एक प्रमुख कार्यक्रम है। यह सभी नागरिकों को अवसर प्रदान करके व्यावहारिक समाधान और नवीन विचार प्रदान करता है।

4. स्टार्टअप इंडिया

स्टार्टअप इंडिया मिशन को उद्योग और आंतरिक व्यापार संवर्धन विभाग (DPIIT) द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा है। इसका उद्देश्य देश में स्टार्टअप्स और नवाचार के लिए एक तंत्र विकसित करना है जिससे बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर पैदा हों।

5. स्टार्टअप इंडिया सीड फंड योजना

यह स्टार्टअप को वित्तीय संस्थानों से निवेश जुटाने के लिए फंड (धन) प्रदान कर सक्षम बनाता है। यह प्रोटोटाइप (मूल) विकास, बाजार में प्रवेश और व्यावसायीकरण में भी सहायता करेगा।

6. कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योग या लघु उद्योग (SSIs) एक असंगठित क्षेत्र है जहां 1 करोड़ रुपये की निश्चित पूंजी को संयंत्र और मशीनरी में निवेश के साथ श्रमिकों के रूप में कम लोगों को शामिल करके घरों में माल का उत्पादन होता है और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने वाले रोजगार प्रदान करता है।

7. सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम (एमएसएमई)

सूक्ष्म लघु और मध्यम उद्यम (MSMEs) या लघु उद्योग या SSIs अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं, क्योंकि यह लगभग 120 मिलियन व्यक्तियों (CDA, 2020) को रोजगार देने के साथ कृषि के बाद दूसरा सर्वाधिक रोजगार पैदा करने वाला क्षेत्र है। कौशल भारत, स्टार्टअप इंडिया, डिजिटल इंडिया और मेक इन इंडिया जैसे अभियानों का उद्देश्य एमएसएमई (MSMEs) उद्द्मियों को समान अवसर प्रदान करके उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में अंतिम प्रयास करना है।

8. SFURTI (Scheme of Fund for Regeneration of Traditional Industries) पारंपरिक उद्योगों के पुनर्जनन के लिए निधि योजना)

क्लस्टर विकास को बढ़ावा देने के लिए एमएसएमई मंत्रालय द्वारा 2005 में पारंपरिक उद्योगों के उत्थान हेतु फंड (निधि) की योजना (SFURTI) शुरू की गई थी। इस योजना का उद्देश्य पारंपरिक भारतीय उद्योगों और कारीगरों को निरंतर रोजगार के अवसरों के लिए समूहों में संगठित करना है।

- **उद्यमी मित्र' पोर्टल**

उद्यमी मित्र पोर्टल एमएसएमई (MSMEs) को विभिन्न वित्तीय और गैर–वित्तीय सेवाओं तक आसान पहुंच प्रदान करने के लिए सिडबी (SIDBI) द्वारा शुरू किया गया एक सार्वभौमिक पोर्टल है।

- **ग्रामोद्योग विकास योजना**

ग्रामोद्योग विकास योजना का उद्देश्य घरेलू अगरबत्ती उत्पादन को बढ़ाकर प्रवासी श्रमिकों और बेरोजगारों के लिए रोजगार का अवसर पैदा करना है। इसके अलावा, केंद्र ने 'खादी अगरबत्ती आत्म निर्भर मिशन' शुरू किया है।

- **हनी मिशन**

ग्रामीण और शहरी बेरोजगार युवाओं को रोजगार देने वाली मधुमक्खी पालन गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए हनी मिशन शुरू किया गया था। इसके अलावा, यह किसानों, आदिवासियों आदि के बीच स्व–रोजगार या आत्मनिर्भर रोजगार के अवसरों को प्रोत्साहित करता है।

बोध प्रश्न 1

औद्योगिक विकास के प्रारंभिक चरण के दौरान मुख्य रूप से किस निर्माण उद्योग पर ध्यान दिया गया?

12.3 उद्योगों की स्थिति को प्रभावित करने वाले कारक

उद्योग की स्थिति या स्थान को प्रभावित करने वाले कारकों को मुख्य रूप से दो प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे भौगोलिक कारक और गैर–भौगोलिक कारक।

1) भौगोलिक कारकः उद्योगों की स्थिति को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण भौगोलिक कारक निम्नलिखित हैं।

i. कच्चा मालः प्रारंभिक समय में, भारत में उद्योग कच्चे माल के स्रोत के पास स्थित थे। आधुनिक समय में उद्योगों के विकास, अंतर्राष्ट्रीय स्तर के उत्पादन के लिए विविध प्रकार के कच्चे माल की आवश्यकता होती है। कभी–कभी, एक उद्योग का तैयार माल दूसरे उद्योग के लिए कच्चा माल होता है। (weight loosing industries) वजन कम होने वाले उद्योग मुख्य रूप से कच्चे माल के क्षेत्रों में स्थित हैं। कच्चे माल के स्रोतों के नजदीक स्थित उद्योग में महाराष्ट्र और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के चीनी मिलें हैं; पश्चिम बंगाल–बिहार–उड़ीसा क्षेत्र में लोहा और इस्पात उद्योग; हुगली क्षेत्र में जूट मिलें; बम्बई में कपड़ा मिलें हैं। बंबई में कपास की आपूर्ति गुजरात और विदर्भ क्षेत्र से होती थी; लुगदी उद्योग और तांबा गलाने वाले उद्योग कच्चे माल के स्रोत के पास स्थित हैं। अधिकांश लौह और इस्पात उद्योग कच्चे माल के स्रोत के पास स्थित हैं क्योंकि लौह अयस्क और कोयला दोनों ही वजन कम होने उद्योग हैं। इसलिए, अधिकांश लौह और इस्पात उद्योग या तो लौह अयस्क के स्रोत (जैसे भिलाई, राउरकेला) के पास या कोयला क्षेत्रों (जैसे बोकारो, दुर्गापुर) के पास स्थित हैं।

ii. श्रमः भारत में श्रम काफी गतिशील और आसानी से उपलब्ध है। जनसंख्या के बड़े आकार के कारण भारत में श्रम बल आसानी से उपलब्ध है। श्रम की विशेषताओं में से एक गतिशीलता है। मशीनीकरण के बावजूद उद्योगों को अभी भी बड़ी संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता है। कृषि आधारित उद्योगों और हल्के उपभोक्ता उद्योगों को अपने संचालन के लिए श्रम शक्ति की आवश्यकता होती है। दिल्ली, मुंबई और कोलकाता के आसपास के औद्योगिक क्षेत्र देश के विभिन्न हिस्सों से श्रमिकों को आकर्षित करते हैं।

iii. ऊर्जाः औद्योगिक विकास तभी संभव है जब ऊर्जा उपलब्ध हो। लोहा–इस्पात, इलेक्ट्रो–केमिकल और इलेक्ट्रो–मेटलर्जिकल जैसे उद्योगों को बिजली की आवश्यकता होती है। एल्युमीनियम उद्योग जैसे भारत एल्युमिनियम कंपनी लिमिटेड (BALCOs), कोरबा (छ.ग.) में तथा हिंडाल्को एल्युमिना रिफाइनरी उत्तर प्रदेश में रेणुकूट में विद्युत शक्ति के स्रोत के पास स्थित है।

iv. जलः उद्योगों की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले कारको में जल महत्वपूर्ण कारक है। लोहा–इस्पात, कपड़ा और रासायनिक उद्योगों जैसे उद्योगों के लिए अधिक मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। इसलिए, कई उद्योग जल स्रोतों जैसे नदियों, झीलों, नहरों या तटीय क्षेत्रों आदि के पास स्थित हैं।

v. जलवायुः उद्योगों की स्थिति के लिए महत्वपूर्ण कारकों में से एक जलवायु है क्योंकि उद्योग अतिविषम जलवायु क्षेत्रों में विकसित नहीं हो सकते हैं। तापमान और आर्द्रता

श्रमिकों के काम करने की दशा, मशीनरी और उपकरण आदि के प्रदर्शन को प्रभावित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, सूती वस्त्र उद्योग महाराष्ट्र—गुजरात क्षेत्र में स्थित हैं क्योंकि इसके लिए आर्द्र जलवायु परिस्थितियों की आवश्यकता होती है।

vi. बाजारः यह तैयार माल की बिक्री के लिए आवश्यक है। बाजार के निकट स्थित उद्योग परिवहन की लागत और उत्पाद की कीमत को कम करते हैं। उदाहरण के लिए, कच्चे तेल के आसान परिवहन के लिए पेट्रोलियम रिफाइनरी बाजार के पास स्थित हैं।

vii. परिवहनः तैयार माल के विपणन के लिए स्थल या जल परिवहन आवश्यक है। मुंबई, कोलकाता, दिल्ली और चेन्नई जैसे नोडीय परिवहन संपर्क के पास स्थित उद्योग कस्बों और बंदरगाहों को भीतरी इलाकों से जोड़ते हैं। स्वतंत्रता के बाद परिवहन में बुनियादी ढांचे का विकास हुआ और उद्योगों में विविधता आई और इसे देश के आंतरिक हिस्सों तक फैलने में मदद मिली।

2. गैर—भौगोलिक कारकः उद्योगों के स्थान के लिए गैर—भौगोलिक कारक आर्थिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक प्रकृति के हैं। उद्योगों की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले गैर—भौगोलिक कारक मुख्य रूप से हैंः

i. पूंजीः उद्योगों को भारी पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है जो दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, चेन्नई, बैंगलोर आदि जैसे प्रमुख शहरों में उपलब्ध है। आधुनिक उद्योग पूंजी प्रधान हैं जो शहरी केंद्रों में आसानी से उपलब्ध हैं।

ii. बैंकिंग सुविधाएंः उद्योग उन क्षेत्रों में स्थापित होते हैं जहां बैंकिंग सुविधाएं आसानी से उपलब्ध होती हैं।

iii. सरकारी नीतियांः उद्योगों की स्थापना के लिए सरकारी नीतियां आवश्यक हैं जो विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहनों और सब्सिडी के माध्यम से इनकी अवस्थिति को सुविधाजनक बनाती हैं। ये नीतियां क्षेत्रीय असंतुलन को कम करने, बड़े शहरों की भीड़भाड़ कम करने और किसी भी क्षेत्र में प्रदूषण के स्तर को कम करने में भी मदद करती हैं। सरकारी नीतियों के आधार पर स्थित उद्योगों के उदाहरण उत्तर प्रदेश के मथुरा में तेल रिफाइनरी, जगदीशपुर (उत्तर प्रदेश) में उर्वरक संयंत्र आदि हैं।

बोध प्रश्न 2

किसी उद्योग की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले भौगोलिक कारक कौन—से हैं?

12.4 उद्योगों का वर्गीकरण

उद्योगों का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। उद्योग आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी भी देश का आर्थिक विकास औद्योगीकरण पर निर्भर करता है। आर्थिक गतिविधियाँ जो वस्तुओं और सेवाओं के निर्माण, उत्पादन और प्रसंस्करण की प्रक्रिया में शामिल हैं, निर्माण या विनिर्माण उद्योग कहलाते हैं। उद्योग रोजगार प्रदान करने, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, और ढांचागत सुविधाएं प्रदान करने में मदद करते हैं।

उद्योगों को कच्चे माल, आकार, कार्य, स्वामित्व और सामग्री के वज़न के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। इन्हें नीचे समझाया गया हैः

1. कच्चा माल

प्रयुक्त कच्चे माल के आधार पर उद्योगों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता हैः

a) कृषि आधारित उद्योगः इन उद्योगों में पौधों और पशु–आधारित उत्पादों को कच्चे माल के रूप में उपयोग किया जाता है। कृषि आधारित उद्योगों के उदाहरण सूती वस्त्र, ऊनी, जूट, चाय, कॉफी, चीनी, रबर, खाद्य प्रसंस्करण, कागज, डेयरी उत्पाद और चमड़ा उद्योग हैं।

b) खनिज आधारित उद्योगः खनिज आधारित उद्योगों में खनिज अयस्क का उपयोग कच्चे माल के रूप में किया जाता है। खनिज धात्विक और अधात्विक हो सकते हैं। धातु को लौह (लौह–इस्पात) और अलौह (तांबा, एल्यूमीनियम और रत्न) में विभाजित किया जा सकता है। ये उद्योग अन्य उद्योगों के लिए आधार का काम करते हैं। खनिजों का उपयोग भारी मशीनरी और निर्माण सामग्री के लिए किया जाता है। खनिज आधारित उद्योगों के उदाहरण लोहा–इस्पात, सीमेंट, एल्यूमीनियम, पेट्रोकेमिकल, ऑटोमोबाइल, जहाज निर्माण, रासायनिक उर्वरक आदि हैं।

c) समुद्र आधारित उद्योगः इस प्रकार के उद्योग समुद्र या महासागर से कच्चे माल पर निर्भर या आधारित होते हैं। इसका एक उदाहरण मछली का तेल है। इसमें नौसैनिक जहाज निर्माण, वाणिज्यिक बंदरगाह, जलीय कृषि और ऊर्जा भी शामिल हो सकते हैं।

d) वन आधारित उद्योगः इन उद्योगों में कच्चा माल लकड़ी और अन्य वन उत्पादों से प्राप्त होता है। वन आधारित उद्योगों के उदाहरण लाख, लकड़ी, कागज, दवा और फर्नीचर हैं।

2. आकार

आकार के आधार पर उद्योगों को छोटे, बड़े और घरेलू या कुटीर उद्योगों में विभाजित किया जा सकता है। ये पूंजी निवेश की मात्रा, कामगारों की संख्या और माल उत्पादन की मात्रा पर आधारित होते हैं।

a) कुटीर उद्योगः ये सबसे छोटी विनिर्माण इकाइयाँ हैं जो स्थानीय बाजारों या स्व–उपभोग के लिए माल का उत्पादन करती हैं। ये परिवार के सदस्यों के स्वामित्व में होते हैं और कारीगर अपने घरों में साधारण उपकरणों से वस्तु या उत्पाद का उत्पादन करते हैं। चमड़ा उत्पाद, मिट्टी के बर्तन, फर्नीचर, कपड़े, चटाई, उपकरण, खाद्य पदार्थ, गहने आदि कुटीर उद्योगों के उदाहरण हैं।

b) लघु उद्योगः लघु उद्योग में स्थानीय कच्चे माल, अर्ध–कुशल श्रम और साधारण विद्युत चालित मशीनों का उपयोग होता है। ये चीन, भारत, इंडोनेशिया, ब्राजील आदि जैसे बड़े आबादी वाले देशों में प्रचलित हैं। लघु उद्योगों को किसी भी देश या क्षेत्र की अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा माना जाता है। ये श्रम प्रधान उद्योग हैं लेकिन इन्हें कम पूंजी निवेश के साथ स्थापित किया जा सकता है। इसलिए, वे ज्यादा रोजगार पैदा कर सकते हैं। टोकरी बुनाई, मिट्टी के बर्तन, बेकरी, पेपर बैग, छपाई, पानी की बोतलें और हस्तशिल्प इसके उदाहरण हैं।

c) वृहद् उद्योगः इस प्रकार के उद्योगों में भारी पूंजी निवेश, कुशल श्रम, उन्नत तकनीक, बड़े पैमाने पर उत्पादन और बड़े बाजार शामिल होते हैं। इसके उदाहरण, ऑटोमोबाइल निर्माण, उपकरण, रसायन, भारी मशीनरी, सूचना और प्रौद्योगिकी (आईटी) आदि हैं। ये बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर प्रदान करते हैं।

3. कार्य / भूमिका

a) बुनियादी या प्रमुख उद्योगः ये उद्योग वे हैं जो अन्य वस्तुओं के निर्माण के लिए तैयार उत्पादों को कच्चे माल के रूप में आपूर्ति करते हैं। लोहा और इस्पात गलाने, तांबा गलाने, एल्यूमीनियम गलाने वाले उद्योग आदि इसके उदाहरण हैं।

b) उपभोक्ता उद्योगः उपभोक्ता उद्योग वे हैं जो उपभोक्ताओं के सीधे उपयोग में आने वाले पदार्थ जैसे टूथपेस्ट, कागज, साबुन, चीनी, घरेलू उपकरण, सौंदर्य प्रसाधन, खाद्य और पेय पदार्थ आदि का उत्पादन करते हैं।

4. स्वामित्व

a) सार्वजनिक क्षेत्रः राष्ट्रीय और सामरिक महत्व के उद्योग जो मुख्य रूप से सरकारी एजेंसियों के स्वामित्व और प्रबंधन में होते हैं। उदाहरण के रूप में हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड (HAL), भेल (भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड), सेल (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड), आदि।

b) निजी क्षेत्रः निजी उद्योग ऐसे व्यवसाय हैं जिनका स्वामित्व और संचालन किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह द्वारा किया जाता है। निजी क्षेत्र को एक महत्वपूर्ण क्षेत्र माना जाता है जो नगरीय और आर्थिक विकास दोनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह रोजगार प्रदान करने के साथ आय के स्तर को बढ़ाकर राष्ट्रीय विकास में योगदान देता है। उदाहरण के लिए, बजाज ऑटो लिमिटेड, डाबर इंडस्ट्रीज, रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड, टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज (टीसीएस), हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड आदि।

c) संयुक्त क्षेत्रः ये उद्योग राज्य और व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूह में संयुक्त रूप से स्वामित्व में होते है और उनके द्वारा संचालित किये जाते हैं। उदाहरण के तौर पर, मारुति उद्योग और ऑयल इंडिया लिमिटेड, संयुक्त रूप से सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के स्वामित्व में है।

d) सहकारी क्षेत्रः सहकारी उद्योग कच्चे माल के उत्पादकों और आपूर्तिकर्ताओं या श्रमिकों के स्वामित्व और संचालन में होते हैं। इसके सदस्य कच्चे माल के उत्पादक होते हैं। उदाहरण के लिए, महाराष्ट्र में चीनी उद्योग, केरल में कॉयर (coir) उद्योग, गुजरात में आनंद मिल्क यूनियन लिमिटेड आदि।

5. कच्चे माल का वजन

a) भारी उद्योगः भारी उद्योग बड़े पैमाने के व्यवसाय हैं जिसमें बड़े भूमि क्षेत्र और भारी पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है। लोहा–इस्पात, जहाज निर्माण आदि भारी उद्योगों के उदाहरण हैं।

b) हल्के उद्योगः हल्के उद्योग वे हैं जो हल्के कच्चे माल का उपयोग करते हैं तथा हल्के माल का उत्पादन करते हैं। ये लघु पैमाने पर होते हैं और इनमें कम पूंजी निवेश

की आवश्यकता होती है। इनका उपभोग ज्यादातर ग्राहकों या व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। उदाहरण के लिए, बिजली के सामान।

बोध प्रश्न 3

उद्योगों के वर्गीकरण के लिए पाँच मानदंड बताइए।

12.5 भारत के औद्योगिक प्रदेश और औद्योगिक गलियारे

अब तक आपने भारत में औद्योगिक विकास के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, उद्योगों की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों तथा कच्चे माल, आकार, कार्य, स्वामित्व और सामग्री स्रोत के आधार पर वर्गीकृत उद्योगों का अध्ययन किया है। अब आप उन महत्वपूर्ण औद्योगिक प्रदेशो और औद्योगिक गलियारों को जानेंगे जो भारत में आर्थिक विकास के लिए स्थापित किए गए हैं।

12.5.1 भारत के औद्योगिक प्रदेश

किसी क्षेत्र में अनुकूल भू–आर्थिक परिस्थितियों के कारण उद्योगों के संकेन्द्रण से औद्योगिक प्रदेश का विकास होता है। उद्योगों के आसपास स्थित होने से दूसरे उद्योगों को लाभ मिलता है। इन उद्योगों में निर्माण अपेक्षाकृत बड़े पैमाने पर किया जाता है। औद्योगिक प्रदेश विकसित परिवहन और संचार प्रणालियों से जुड़े होते हैं। खनिजों की उपलब्धता, विशेष रूप से कोयला और लौह अयस्क, कच्चा माल, अनुकूल जलवायु, समतल भूमि, परिवहन सुविधाएं, मशीनों का उपयोग और मानव कौशल कुछ ऐसे मूल कारक हैं जो औद्योगिक प्रदेशों के विकास में मदद करते हैं।

ऐसे व्यापक औद्योगिक प्रदेशों या अन्य जगहों के भीतर, कभी–कभी तुलनात्मक रूप से छोटे लेकिन अधिक सीमित और सघन औद्योगिक प्रदेश विकसित होते हैं, जहां कारखानों और शहरीकरण बिना किसी रुकावट के मीलों तक चलते रहते हैं। ऐसे छोटे क्षेत्रों को औद्योगिक जिले कहा जाता है। औद्योगिक प्रदेशों का परिसीमन कुछ कारकों पर आधारित होता है। इसलिए औद्योगिक प्रदेशों का वर्गीकरण निम्नलिखित कारकों पर आधारित है:

- कारखानों की संख्या
- नियोजित व्यक्तियों की संख्या
- शक्ति का उपयोग
- उत्पादन में लगे श्रमिकों की संख्या
- उद्योग में शामिल कामकाजी आबादी का प्रतिशत

प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र

बीएन सिन्हा के वर्गीकरण के अनुसार प्रमुख औद्योगिक प्रदेशों को उन क्षेत्रों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनमें न्यूनतम 1,50,000 श्रमिक लगे हुए हैं। प्रमुख औद्योगिक प्रदेश इस प्रकार हैं:

भारत में आठ प्रमुख औद्योगिक प्रदेश हैं:

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

1. मुंबई–पुणे प्रदेश
2. बैंगलोर–तमिलनाडु प्रदेश
3. हुगली प्रदेश
4. अहमदाबाद–बड़ौदा प्रदेश
5. छोटानागपुर औद्योगिक प्रदेश
6. विशाखापटनम–गुंटूर प्रदेश
7. कोलम–तिरुवनंतपुरम औद्योगिक प्रदेश
8. गुड़गांव–दिल्ली–मेरठ प्रदेश

1. मुंबई–पुणे औद्योगिक प्रदेश

मुंबई–पुणे औद्योगिक प्रदेश मुंबई–ठाणे से पुणे और आसपास के जिलों नासिक और शोलापुर तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र का उद्भव भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान हुआ और सांगली, सतारा, अहमदनगर, कोलाबा और जलगाँव जिलों में तीव्र गति से इसका विकास हुआ। मुंबई को 'भारत का कटोनोपॉलिस (Cottonopolis of India) भी कहा जाता है। मुंबई क्षेत्र का विकास भारत में सूती वस्त्र उद्योग से संबंधित है। इसके लिए अनुकूल दशा के मुख्य कारण इस प्रकार हैं:

- पश्चिमी घाट से जल विद्युत की आसान पहुंच;
- आंतरिक इलाकों से सस्ते श्रम बल की उपलब्धता;
- आयात–निर्यात के लिए पश्चिमी तट पर बंदरगाह सुविधाएं;
- कपास की खेती के लिए नर्मदा और तापी बेसिन की काली कपास मिट्टी;
- बुनाई और कताई के लिए आदर्श तटीय आर्द्र जलवायु।

ठाणे, नासिक, पुणे, शोलापुर, अहमदनगर, सतारा, सांगली, पिंपरी, कोलाबा, विले पार्ले, घाटकोपर, कुर्ला, कल्याण, भांडुप, जोगेश्वरी और अंधेरी जैसे औद्योगिक केंद्र इस क्षेत्र के अन्तर्गत विकसित हुए हैं। सूती वस्त्र उद्योग के अलावा इंजीनियरिंग सामान, तेल रिफाइनरी, पेट्रोकेमिकल, सिंथेटिक और प्लास्टिक के सामान, परिवहन और खाद्य उद्योग, इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक्स, जहाज निर्माण, सॉफ्टवेयर और दवाओं का भी विकास हुआ है। 1947 में देश के विभाजन के बाद कुल सिंचित कपास क्षेत्र का लगभग 81% पाकिस्तान में चला गया। हाल के वर्षों में, मुंबई प्रदेश को विस्तारित उद्योगों के साथ जगह की कमी का सामना करना पड़ा है।

1774 में अंग्रेजों द्वारा मुंबई के द्वीप अधिग्रहण और 1853 में भोरघाट और थाल घाट से मार्ग खुलने के बाद भारत के अन्य क्षेत्रों के साथ इसका संपर्क और 1869 में स्वेज नहर के खुलने से यूरोप के साथ संबंध, इस औद्योगिक क्षेत्र के प्रारंभिक विकास में सहायक साबित हुए।

2. बैंगलोर–तमिलनाडु औद्योगिक क्षेत्र

यह प्रदेश कर्नाटक और तमिलनाडु राज्यों में फैला हुआ है। विल्लुपुरम को छोड़कर, उद्योग तमिलनाडु और कर्नाटक के सभी जिलों तक फैला हैं। मदुरै सूती वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध है। सूती वस्त्र उद्योग सर्वप्रथम इस क्षेत्र में स्थापित किया गया था और इसमें अधिकतर कपास उगाने वाले क्षेत्र शामिल हैं। अन्य महत्वपूर्ण उद्योगों में रेशम–निर्माण इकाइयाँ, चीनी मिलें, चमड़ा उद्योग, रसायन, रेडियो, दवाएं, एल्यूमीनियम, कांच, कागज,

मशीन टूल्स, सिगरेट, रबर उत्पाद, हल्के इंजीनियरिंग सामान, डीजल इंजन और रेल वैगन हैं।

शिवकाशी, तिरुचिरापल्ली, मदुकोट्टई, मेट्टूर, मैसूर और मैंडी इस प्रदेश के कुछ महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र हैं। सेलम के लौह–इस्पात संयंत्र, भद्रावती के विश्वेश्वरैया आयरन एंड स्टील वर्क्स, और चेन्नई और नरीमनम की पेट्रोलियम रिफाइनरी इस प्रदेश के कुछ महत्वपूर्ण उद्योग हैं।

इस प्रदेश में मेट्टूर, शिवसमुद्रम, पापनासम, पायकारा और शरवती बांधों से पनबिजली आसानी से उपलब्ध है। सस्ते और कुशल श्रम, अच्छी जलवायु और स्थानीय बाजार से निकटता जैसे कारक इस औद्योगिक क्षेत्र में उद्योगों के संकेन्द्रण में सहायक बने हैं। पाइकारा हाइड्रो इलेक्ट्रिकल पावर प्लांट, स्थानीय कपास, कॉफी मिलों, तेल मिलों और सीमेंट उद्योग के कारण कोयंबटूर एक औद्योगिक केंद्र के रूप में विकसित हुआ। कोयंबटूर को तमिलनाडु के मैनचेस्टर के रूप में जाना जाता है क्योंकि इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में सूती वस्त्र उद्योग हैं। इस प्रदेश के विकास का श्रेय बैंगलोर में सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों जैसे हिंदुस्तान एयरोनॉटिकल्स, हिंदुस्तान मशीन टूल्स, भारतीय टेलीफोन उद्योग और भारत इलेक्ट्रॉनिक्स आदि को दिया जाता है।

3. हुगली औद्योगिक प्रदेश

हुगली औद्योगिक प्रदेश उत्तर में बांसबेरिया से लेकर दक्षिण में बिरलानगर तक फैला हुआ है और हुगली नदी के किनारे स्थित है। यह कोलकाता और हावड़ा शहर के आसपास विकसित हुआ। हुगली नदी के मुहाने पर एक बंदरगाह विकसित किया गया है और यह देश के अन्य हिस्सों के साथ रेल और सड़क नेटवर्क से अच्छी तरह जुड़ा हुआ है।

इस प्रदेश का औद्योगीकरण मुख्यतः निम्नलिखित कारणों से हुआः

- 1773 से 1911 तक, कोलकाता ब्रिटिश भारत की राजधानी थी, जहाँ नियमित रूप से पूंजी निवेश हुआ।
- छोटा नागपुर पठार में लौह अयस्क और कोयले की निकट उपलब्धता, असम में चाय बागानों और बंगाल क्षेत्र में स्थित जूट उद्योगों के कारण हुगली औद्योगिक क्षेत्र विकसित हुआ।
- बिहार, उड़ीसा और पूर्वी उत्तर प्रदेश के आसपास के क्षेत्र से सस्ते श्रम की आसान पहुंच के कारण इस क्षेत्र का विकास हुआ।

इस प्रदेश में जूट, वस्त्र मशीनरी, बिजली, रसायन, तेल शोधन, उपभोक्ता सामान, भारी इंजीनियरिंग, लोहा और इस्पात, उर्वरक, पेट्रोकेमिकल, इंजीनियरिंग, कागज के उद्योग विकसित हुए हैं। महत्वपूर्ण औद्योगिक इकाइयाँ जैसे कि कोन्नगर में हिंदुस्तान मोटर्स लिमिटेड और चित्तरंजन में डीजल इंजन का कारखाना यहाँ स्थित है। इस प्रदेश के कुछ महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र, कोलकाता, नैहाटी, काकीनारा, बांसबेरिया, बेलघरिया, बज बज, रिशरा, सेरामपुर, त्रिवेणी, हुगली, बेलूर, शिबपुर एवं टीटागढ़ आदि हैं।

स्वतंत्रता बाद इस प्रदेश की कुछ प्रमुख समस्याएं इस प्रकार हैं।

i. विभाजन के बाद, जूट उत्पादक उद्योग का अस्सी प्रतिशत भाग बांग्लादेश में चला गया और बाकी हुगली के तट पर स्थित थे।

ii. कोलकाता बंदरगाह की गाद एक प्रमुख चिंता का विषय है, इसलिए इस भार या दबाव को दूर करने के लिए हल्दिया बंदरगाह बनाया गया है।

iii. जूट उत्पादक क्षेत्रों की गिरावट भी एक प्रमुख मुद्दा है।

iv. बांग्लादेश के विभाजन के बाद असम के साथ सीधा अंतर्देशीय संपर्क खत्म हो गया था।

4. अहमदाबाद–वड़ोदरा औद्योगिक प्रदेश

इस प्रदेश का केंद्र अहमदाबाद और वड़ोदरा के बीच स्थित है और यह दक्षिण में वलसाड और सूरत और पश्चिम में जामनगर तक फैला हुआ है।

इस प्रदेश के औद्योगिक केंद्र अहमदाबाद, वड़ोदरा, कोयली, सूरत, राजकोट, सुरेंद्रनगर, खेड़ा, आनंद, जामनगर एवं वलसा आदि हैं। पेट्रोकेमिकल, भारी और बुनियादी रसायन, चीनी, डेरी उत्पाद, खाद्य प्रसंस्करण, मोटर और ट्रैक्टर निर्माण जैसे महत्वपूर्ण उद्योग इस प्रदेश आदि में स्थित हैं।

निम्नलिखित कारकों के कारण यह क्षेत्र एक महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र बन गयाः

i. कांडला बंदरगाह की समीपता से प्रत्यक्ष लाभ।

ii. नजदीकी घनी आबादी वाले उत्तरी मैदानी क्षेत्र में बाजार तक आसान पहुंच।

iii. कोयाली पेट्रोलियम रिफाइनरी से कई पेट्रोकेमिकल उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध होना।

iv. मुंबई के सूती वस्त्र उद्योग के पतन के साथ, यह प्रदेश काफी महत्वपूर्ण हो गया क्योंकि कच्चे माल और बाजार एक दूसरे के करीब स्थित थे।

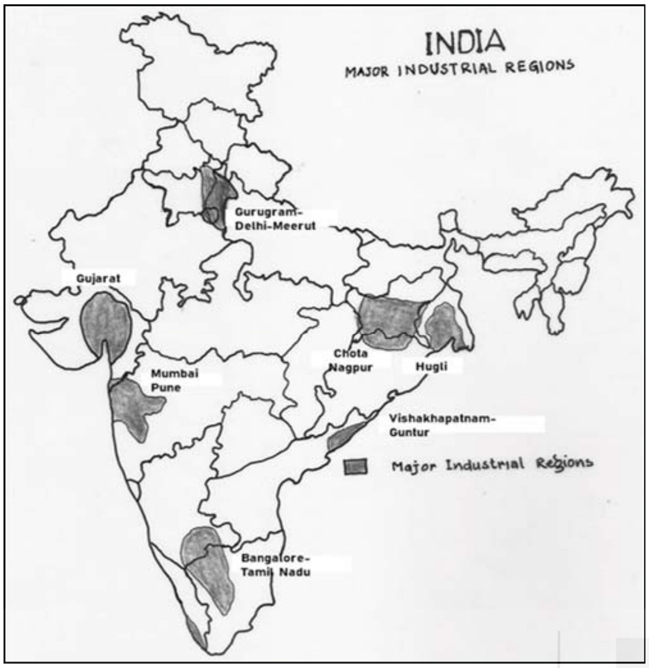

चित्र 12.2: भारत के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र।

5. छोटा नागपुर पठारी प्रदेशः

यह प्रदेश 'भारत के रूर' के रूप में प्रसिद्ध है और छोटानागपुर पठार में स्थित है तथा झारखंड, उत्तरी उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के पश्चिमी भाग में फैला हुआ है। झारखंड–ओडिशा से लौह अयस्क और दामोदर घाटी से कोयले के कारण इस क्षेत्र का विकास हुआ है। यह प्रदेश भारी धातुकर्म उद्योगों के लिए जाना जाता है। लोहा–इस्पात, भारी इंजीनियरिंग, उर्वरक, सीमेंट, कागज, इंजन, भारी बिजली जैसे उद्योग यहां पाए जाते हैं। जमशेदपुर, बर्नपुर–कुल्टी, दुर्गापुर, बोकारो और राउरकेला में छह एकीकृत लौह और इस्पात संयंत्र इस क्षेत्र में स्थित हैं। इस प्रदेश के कुछ महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र, रांची, धनबाद, चाईबासा, सिंदरी, हजारीबाग, जमशेदपुर, बोकारो, रूकेला, दुर्गापुर, आसनसोल और डालमिया नगर हैं।

इस क्षेत्र में उद्योगों का स्थानीयकरण मुख्यतः निम्नलिखित कारणों से हुआ हैः

i. दामोदर घाटी परियोजना और ताप विद्युत संयंत्रों से बिजली की आसान उपलब्धता।

ii. घनी आबादी वाले आसपास के क्षेत्रों से सस्ता श्रम।

iii. समीप के क्षेत्र में बंदरगाह और बाजार की सुविधा।

iv. बिहार–ओडिशा बेल्ट से कोयला और लौह अयस्क की उपलब्धता।

6. विशाखापटनम–गुंटूर औद्योगिक प्रदेश

उत्तर–पूर्वी भाग में विशाखापटनम से लेकर आंध्र प्रदेश राज्य के दक्षिण में कुरनूल और प्रकाशम जिलों तक इस औद्योगिक प्रदेश का विस्तार मिलता है। विशाखापटनम, काकीनाडा, मछलीपट्टनम और कृष्णापट्टनम में बंदरगाह सुविधाएं इस प्रदेश के औद्योगिक विकास के लिए अनुकूल रही हैं।

गोदावरी बेसिन से प्राप्त कोयला इस प्रदेश को ऊर्जा प्रदान करता है तथा औद्योगिक विकास में सहायक रहा है। 1941 में, जहाज निर्माण के लिए विशाखापटनम में हिंदुस्तान शिपयार्ड लिमिटेड की स्थापना की गई थी। इस प्रदेश में औद्योगिक विकास बंदरगाहों के आंतरिक भाग में कृषि और खनिज संसाधनों के विकास पर भी निर्भर रहा है। गुंटूर में सीसा–जस्ता प्रगालक (smelter); विशाखापटनम में पेट्रोलियम रिफाइनरी ने इस प्रदेश में पेट्रोकेमिकल उद्योगों के विकास के लिए उपयुक्त दशा प्रदान की। छत्तीसगढ़ के बैलाडीला क्षेत्र के उच्च गुणवत्ता वाले लौह अयस्क, विशाखापटनम के लौह–इस्पात संयंत्र के विकास में सहायक बना है।

इस प्रदेश में चीनी, कपड़ा, कागज, सीमेंट, एल्यूमीनियम, उर्वरक और हल्के इंजीनियरिंग सामान और जल संबंधित प्रसंस्करण इकाइयों सहित अन्य प्रकार के उद्योग स्थापित हैं। विशाखापटनम, विजयनगरम, राजमुंदरी, काकीनाडा, एलुरु, विजयवाड़ा, गुंटूर और कुरनूल आदि महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र हैं। कृष्णा–गोदावरी बेसिन में प्राकृतिक गैस की खोज भी इस औद्योगिक प्रदेश की वृद्धि में सहायक रही है।

7. गुड़गांव–दिल्ली–मेरठ औद्योगिक प्रदेश

स्वतंत्रता बाद, यह प्रदेश भारत के सर्वाधिक तीव्रता से बढ़ते औद्योगिक प्रदेशों में से एक बन गया है। इस औद्योगिक प्रदेश में बहुत सारे छोटे और बाजारोन्मुखी उद्योग हैं। यह खनिज और विद्युत संसाधनों से बहुत दूर स्थित है, परन्तु भाखड़ा–नांगल से जलविद्युत की उपलब्धता और प्रारम्भ में हरदुआगंज, फरीदाबाद और पानीपत से थर्मल पावर की उपलब्धता इसके विकास में सहायक रहा है।

चीनी, कृषि उपकरण, वनस्पति, कपड़ा, रसायन, इंजीनियरिंग, कागज, इलेक्ट्रॉनिक्स, कांच के बने पदार्थ और साइकिल इस औद्योगिक प्रदेश के महत्वपूर्ण उद्योग हैं। सूचना और प्रौद्योगिकी उद्योग हाल ही में इस प्रदेश तथा इसके आसपास के क्षेत्रों में विकसित हुए हैं। मथुरा और पानीपत की तेल शोधक कारखाना विभिन्न प्रकार के पेट्रोकेमिकल उत्पादों का संकुल है।

गाजियाबाद के कृषि उद्योग; सहारनपुर और यमुनानगर की पेपर मिलें; फरीदाबाद का इंजीनियरिंग और इलेक्ट्रॉनिक उद्योग; और गुड़गांव में कार कारखाने ने इस औद्योगिक प्रदेश के औद्योगिक विकास को बढ़ावा दिया। कुछ महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र मेरठ, मोदीनगर, सोनीपत, पानीपत, फरीदाबाद और बल्लभगढ़ हैं।

8. कोलम–तिरुवनंतपुरम औद्योगिक प्रदेश

कोल्लम–तिरुवनंतपुरम औद्योगिक प्रदेश छोटा है और यह केरल के कोल्लम, अलवे, अलाप्पुझा, एर्नाकुलम और तिरुवनंतपुरम जिलों में फैला हुआ है। इस प्रदेश के उद्योग कृषि उत्पादों और बाजार उन्मुख हल्के उद्योगों पर आधारित हैं। बागान कृषि, जलविद्युत और तेल शोधक कारखाने (रिफाइनरियां) इस प्रदेश को औद्योगिक आधार प्रदान करती हैं। कपड़ा, चीनी, रबड़, कांच, खाद्य और मछली प्रसंस्करण, रासायनिक उर्वरक, कागज, नारियल कॉयर उत्पाद, एल्यूमीनियम और सीमेंट इस औद्योगिक प्रदेश के मुख्य उद्योग हैं। महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र कोल्लम, अल्लुवा, कोच्चि, अलाप्पुझा, तिरुवनंतपुरम और पुनालुर हैं।

आपको लघु औद्योगिक क्षेत्रों की सूची चित्र 12.3 से मिलेगी। लघु औद्योगिक प्रदेश वे हैं जो प्रतिदिन कम से कम 25,000 श्रमिकों को रोजगार प्रदान करते हैं। इन सभी औद्योगिक प्रदेशों के अलावा, कुछ लघु औद्योगिक प्रदेश इस प्रकार हैं:

1. हरियाणा–पंजाब में अंबाला–अमृतसर।
2. उत्तर प्रदेश में सहारनपुर–मुजफ्फरनगर–बिजनौर।
3. मध्य प्रदेश में इंदौर–देवास–उज्जैन।
4. राजस्थान में जयपुर–अजमेर।
5. कोल्हापुर–दक्षिण कन्नड़ महाराष्ट्र–कर्नाटक में।
6. केरल में उत्तरी मालाबार।
7. केरल में मध्य मालाबार।
8. तेलंगाना में आदिलाबाद–निजामाबाद।
9. उत्तर प्रदेश में इलाहाबाद–वाराणसी–मिर्जापुर।
10. बिहार में भोजपुर–मुंगेर।
11. छत्तीसगढ़ में दुर्ग–रायपुर।
12. छत्तीसगढ़ में बिलासपुर–कोरबा।
13. असम में ब्रह्मपुत्र घाटी।

चित्र 12.3: भारत के लघु औद्योगिक प्रदेश

12.5.2 भारत के औद्योगिक गलियारे

आइए अब समझते हैं कि औद्योगिक गलियारा क्या है? औद्योगिक गलियारा एक गलियारा है जो बहु–मोडल परिवहन सेवाओं वाले राज्यों से होकर गुजरता है। यह उन क्षेत्रों में निर्मित विनिर्माण उद्योगों का एक समूह है, जिनके पास पूर्व विकसित बुनियादी ढाँचा जैसे बंदरगाह, राजमार्ग और रेलमार्ग हैं। इसका उद्देश्य किसी भी भौगोलिक क्षेत्र में औद्योगिक विकास और रसद की कम लागत को प्रोत्साहित करना है। यह शहरी विकास, निर्यात में वृद्धि, रोजगार के अवसर, सामाजिक–आर्थिक विकास आदि में

सहायक होता है। औद्योगिक गलियारा देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण सरकारी नीतिगत पहल है। देशों में छह महत्वपूर्ण औद्योगिक गलियारों की पहचान की गई है जो इस प्रकार हैं:

1. दिल्ली–मुंबई औद्योगिक गलियारा (DMIC)
2. अमृतसर–दिल्ली–कोलकाता औद्योगिक गलियारा (ADKIC)
3. चेन्नई–बेंगलुरु औद्योगिक गलियारा (CBIC)
4. बेंगलुरु–मुंबई औद्योगिक गलियारा (BMIC)
5. हैदराबाद–बेंगलुरु औद्योगिक गलियारा (HBIC)
6. विजाग–चेन्नई औद्योगिक गलियारा (VCIC)

1. दिल्ली मुंबई औद्योगिक गलियारा (DMIC)

दिल्ली मुंबई औद्योगिक गलियारा (DMIC) दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान और हरियाणा के राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को कवर करता है (चित्र 12.4)। इसे वेस्टर्न डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर (DFC) द्वारा प्रदान की गई 'हाई स्पीड–हाई कैपेसिटी' कनेक्टिविटी का लाभ उठाकर निर्माण क्षेत्र में भारत की प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाने के उद्देश्य से जापान सरकार के समर्थन से 2006 में शुरुआत किया गया था। गलियारा (कॉरिडोर) की कुल लंबाई दिल्ली और मुंबई के बीच लगभग 1504 किमी है। इस परियोजना का उद्देश्य ऐसे स्मार्ट शहरों का विकास करना है जो सर्वोत्तम अंतर्राष्ट्रीय विनिर्माण और औद्योगिक क्षेत्रों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकें।

इस परियोजना का कुल क्षेत्रफल लगभग 4,36,486 वर्ग किलोमीटर है जो भूमि का लगभग 13.8% है। फ्रेट कॉरिडोर की कुल लंबाई में राजस्थान और गुजरात का 77%, हरियाणा और महाराष्ट्र का (10%), उत्तर प्रदेश और एनसीटी दिल्ली का (15%) हिस्सा है। इस कॉरिडोर में मेरठ–मुजफ्फरनगर (उत्तर प्रदेश), फरीदाबाद–पलवल (हरियाणा), जयपुर–दौसा (राजस्थान), वड़ोदरा–अंकलेश्वर (गुजरात), और अलेवारी–दिघी पोर्ट (महाराष्ट्र) औद्योगिक क्षेत्र हैं।

2. अमृतसर–दिल्ली–कोलकाता औद्योगिक गलियारा (ADKIC)

इसे 2014 में भारत सरकार द्वारा अनुमोदित किया गया था। यह 1839 किमी की कुल लंबाई के साथ पंजाब के अमृतसर से पश्चिम बंगाल के दानकुनी तक फैला हुआ है। ईस्टर्न डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर (EDFC) आर्थिक गलियारे की रीढ़ है और इसे अमृतसर–कोलकाता औद्योगिक कॉरिडोर (AKIC) के साथ विकसित किया जा रहा है। इसमें पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्य शामिल हैं। यह सबसे घनी आबादी वाले क्षेत्रो में से एक है जिसमें अमृतसर, जालंधर, लुधियाना, अंबाला, दिल्ली, रुड़की, मुरादाबाद, बरेली, सहारनपुर, अलीगढ़, कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद, वाराणसी, पटना, हजारीबाग, धनबाद, आसनसोल, दुर्गापुर, और कोलकाता जैसे प्रमुख शहर शामिल हैं।

3. चेन्नई–बेंगलुरु औद्योगिक गलियारा (CBIC)

चेन्नई–बैंगलोर औद्योगिक गलियारा (CBIC) तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक राज्यों को कवर करता है और इसे जापान अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एजेंसी (JICA) द्वारा वित्त पोषित किया जा रहा है। यह चेन्नई–बेंगलुरु–चित्रदुर्ग के बीच 560 किलोमीटर लंबा कॉरिडोर है। यह पूर्वी और पश्चिमी देशों के साथ व्यापार को बढ़ावा देगा। इस कॉरिडोर से स्टील, सीमेंट, फूड प्रोसेसिंग, ऑटोमोबाइल, पेट्रोलियम, केमिकल्स, पेट्रोकेमिकल्स और रेडीमेड गारमेंट्स जैसे उद्योगों को फायदा होगा। यह देश के कुल जनसंख्या की 3.7 प्रतिशत आबादी को सेवा प्रदान करता है।

4. बेंगलुरु–मुंबई औद्योगिक गलियारा (BMIC)

इसे बेंगलुरु और मुंबई के बीच विकसित किया जा रहा है, यह महाराष्ट्र और कर्नाटक राज्य को प्रभावित करेगा। यह 2013 में शुरू किया गया था और इसे यूनाइटेड किंगडम की मदद से विकसित किया जा रहा है। इसका उद्देश्य इन राज्यों में गलियारों के साथ विश्व स्तर के बुनियादी ढांचे के विकास को सुनिश्चित करना है, जिसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय विकास में वृद्धि और स्थानीय निर्माताओं की वैश्विक प्रतिस्पर्धा बढ़ सकती है। इसका उद्देश्य नवाचार, रोजगार सृजन और स्थायी संपर्क अवसंरचना को लाना है।

5. हैदराबाद बेंगलुरु औद्योगिक गलियारा (HBIC)

हैदराबाद बेंगलुरु औद्योगिक गलियारा (HBIC) तेलंगाना, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक राज्यों को कवर करता है। यह हैदराबाद नागपुर औद्योगिक गलियारे के विस्तार के रूप में कार्य करेगा जिसे हैदराबाद और बेंगलुरु के बीच विकसित किया जाएगा। यह देश के मध्य दक्षिणी भागों को जोड़ेगा।

6. विजाग–चेन्नई औद्योगिक गलियारा (VCIC)

विशाखापटनम–चेन्नई औद्योगिक गलियारा (VCIC), पूर्वी तट आर्थिक गलियारे (East Coast Economic Corridor, ECEC) का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह भारत का पहला तटीय आर्थिक गलियारा है जो 2500 किमी के समुद्र तट को कवर करता है। इसे एशियाई विकास बैंक (ADB) द्वारा पश्चिम बंगाल, ओडिशा, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु राज्यों के बीच विकसित किया जा रहा है। इस गलियारे का चरण 1, विशाखापटनम–चेन्नई औद्योगिक गलियारा (VCIC) है जो भारत के पूर्वी तट के साथ कोलकाता से कन्याकुमारी तक है। यह पिछड़े क्षेत्रों को जोड़ेगा और गरीब आबादी के लिए रोजगार के अवसर पैदा करेगा। यह भारत सरकार द्वारा शुरू की गई मेक इन इंडिया और सागर माला पहल को भी मजबूत करेगा। यह भारत की ''एक्ट ईस्ट पॉलिसी'' में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। ओडिशा आर्थिक गलियारे को भी पूर्वी तट आर्थिक गलियारे के हिस्से के रूप में विकसित किया जा रहा है।

चित्र 12.4: भारत के औद्योगिक गलियारे

7. राष्ट्रीय औद्योगिक गलियारा विकास कार्यक्रम

यह कार्यक्रम नए ''स्मार्ट सिटी'' विकसित करने पर केंद्रित है और इसे महत्वाकांक्षी बुनियादी ढांचा परियोजनाओं में से एक माना जाता है। यह भारत में आगामी औद्योगिक नगरों का विकास करेगा, रोजगार के अवसर और आर्थिक विकास पैदा करेगा। इनमें से कुछ हैं:

1. **एकीकृत औद्योगिक टाउनशिप– ग्रेटर नोएडा (इंटीग्रेटेड इंडस्ट्रियल टाउनशिप– ग्रेटर नोएडा):** यह दिल्ली मुंबई इंडस्ट्रियल कॉरिडोर के लिए एक प्रमुख परियोजना है, जिसे एक स्थायी और स्मार्ट समूह के रूप में विश्व स्तरीय मानकों के साथ डिजाइन किया गया है।

2. **एकीकृत औद्योगिक टाउनशिप– विक्रम उद्योगपुरी (इंटीग्रेटेड इंडस्ट्रियल टाउनशिप– विक्रम उद्योगपुरी):** प्रस्तावित परियोजना ''विक्रम उद्योगपुरी'' का साइट, उज्जैन से लगभग 8 किमी और देवास से 12 किमी दूर नरवर गांव में स्थित है, इसका कुल क्षेत्रफल 442.3 हेक्टेयर (1,096 एकड़) है। विक्रम उद्योगपुरी (V.U) परियोजना का एक सतत आर्थिक आधार होगा जो मुख्य रूप से उत्पाद मिश्रण और संस्थागत (सार्वजनिक और अर्ध–सार्वजनिक भू–उपयोग) निर्माण द्वारा संचालित होगा एवं आवासीय और वाणिज्यिक गतिविधियों द्वारा सहयोग प्राप्त करेगा।

3. **अहमदाबाद धोलेरा विशेष निवेश क्षेत्र:** धोलेरा विशेष निवेश क्षेत्र (DSIR) की योजना 920 वर्ग किमी के क्षेत्र में बनाई गई है। यह एक नियोजित, नवाचार या नवोन्मेषी, टिकाऊ समूह है जिसकी परिकल्पना निर्माण इकाइयों की स्थापना के लिए कुशल बुनियादी ढांचे के अवसरों के साथ एक विश्व स्तरीय गंतव्य के रूप में की गई है, जो देश के औद्योगिक उत्पादन को बढ़ाने में मदद करेगा।

4. **शेंद्रा बिडकिन औद्योगिक क्षेत्र (SBIA):** एसबीआईए (SBIA) औरंगाबाद शहर से लगभग 15 किमी दूर और औरंगाबाद हवाई अड्डे से 8 किमी पूर्व में स्थित है। इसे मौजूदा महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम (MIDC) के शेंद्रा औद्योगिक पार्क से बिडकिन शहर तक विस्तारित कर एक नए औद्योगिक गलियारे के रूप में योजनाकृत किया गया है। SBIA का कुल क्षेत्रफल 84.17 वर्ग किमी है।

अगस्त 2021 में दर्ज भारतीय अर्थव्यवस्था के औद्योगिक क्षेत्र में हाल के घटनाक्रमों में कुल जीएसटी (वस्तु और सेवा कर) लगभग 112,020 करोड़ रुपये, विनिर्माण क्रय प्रबंधक सूचकांक (PMI) 52.3%, उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (CPI) 5.30, उपभोक्ता खाद्य मूल्य सूचकांक (CFPI) 3.11% था तथा विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (FPI) द्वारा भारत में 2.5 बिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश भी किया गया है।

बोध प्रश्न 4

भारत के विभिन्न औद्योगिक गलियारों की सूची बनाइए।

12.6 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा :

- निर्माण या विनिर्माण वह प्रक्रिया है जिसमें कच्चे माल को बहुमूल्य उत्पादों में संसाधित करके माल का उत्पादन किया जाता है।
- किसी भी देश के औद्योगिक विकास के स्तर और आर्थिक समृद्धि के बीच सीधा संबंध होता है।
- औद्योगिक अवस्थिति को प्रभावित करने वाले भौगोलिक कारकों में कच्चे माल, श्रम, ऊर्जा, जल, जलवायु, बाजार और परिवहन हैं। गैर–भौगोलिक कारकों में सरकारी नीतियां, पूंजी और बैंकिंग सुविधाएं हैं।
- भारत मुख्य रूप से, विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में व्यवस्थित औद्योगिक योजना के कारण विभिन्न देशों को माल निर्यात कर रहा है, जो क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने पर केंद्रित है।
- औद्योगिक क्षेत्रों को एक विशिष्ट क्षेत्र में निर्माण इकाइयों के स्थानिक वितरण के रूप में संदर्भित किया जा सकता है।
- औद्योगिक गलियारा उन क्षेत्रों में निर्मित निर्माण उद्योगों का एक समूह है, जिनके पास बुनियादी ढाँचा जैसे कि बंदरगाह, राजमार्ग और रेलमार्ग मौजूद हैं।
- देश के आर्थिक विकास के लिए विभिन्न औद्योगिक गलियारे स्थापित किये जाते हैं।

12.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक विकास की व्याख्या कीजिए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2. किसी क्षेत्र में उद्योगों की अवस्थिति को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का वर्णन कीजिए।
3. कच्चे माल और आकार के आधार पर उद्योगों के वर्गीकरण की व्याख्या कीजिए।
4. औद्योगिक गलियारा क्या है? भारत की कोई तीन औद्योगिक गलियारा परियोजनाओं के बारे में लिखिए।
5. उपयुक्त उदाहरणों के साथ औद्योगिक क्षेत्रों और औद्योगिक गलियारों में अंतर स्पष्ट कीजिए।

12.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. लोहा, इस्पात और भारी इंजीनियरिंग मशीनें।
2. कच्चा माल, श्रम, बिजली, परिवहन, बाजार आदि।
3. उद्योगों को कच्चे माल, आकार, कार्य, स्वामित्व और सामग्री के वजन के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है
4. DMIC, ADKIC, CBIC, BMIC, HBIC, and VCIC

अंत में कुछ प्रश्न

1. 12.2 का संदर्भ लें
2. 12.3 का संदर्भ लें
3. 12.4 का संदर्भ लें
4. 12.5 का संदर्भ लें
5. 12.5 का संदर्भ लें

12.9 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

1. Deshpande, C.D. (1992) *India: A Regional Interpretation. New Delhi*: ICSSR.
2. Khullar, D.R. (2014) *India: A Comprehensive Geography. New Delhi*: Kalyani Publishers.
3. Singh Jagdish (2003) *India: A Comprehensive & Systematic Geography*. Gorakhpur: Gyanodaya Prakashan.
4. Tiwari, R.C. (2007) *Geography of India*. Allahabad: Prayag Pustak Bhawan.
5. SAMARTH Udyog Bharat 4.0. (A Industry 4.0 initiative of DHI, Ministry of H.I. & P.E., Government of India). Extracted from (https://www.samarthudyog-i40.in).

6. https://www.nicdc.in/projects.aspx?mpgid=15&pgidtrail=15&Projid=16
7. https://www.digitalindia.gov.in/content/programme-pillars
8. https://www.iitgnl.com/gnl-content/iit
9. http://www.vikramudyogpuriujjain.com
10. https://en.wikipedia.org/wiki/Industrial_corridor
11. https://dipp.gov.in/programmes-and-schemes/infrastructure/industrial-corridors
12. https://www.makeinindia.com/about
13. https://vikaspedia.in/social-welfare/entrepreneurship/startup-india-1/startup-india
14. https://www.india.gov.in/spotlight/scheme-fund-regeneration-traditional-industries-sfurti
15. https://www.pib.gov.in/
16. https://www.msde.gov.in/en/reports-documents/policies/NSDM
17. https://dipp.gov.in/sites/default/files/NICDC-BriefNote-14Decemmber2020.pdf
18. https://dipp.gov.in/programmes-and-schemes/infrastructure/industrial-corridors
19. https://pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=1592382
20. https://www.nicdc.in/about-DMICDC

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 13

परिवहन

इकाई की रुपरेखा

13.1 प्रस्तावना
अपेक्षित सीखने के परिणाम
13.2 परिवहन जाल का विकास
13.3 परिवहन के साधन
सड़क
रेल
वायु
जल
13.4 समर्पित भार यातायात मार्ग
13.5 रैपिड मास ट्रांसपोर्ट सिस्टम
13.6 नगरीय परिवहन
13.7 सारांश
13.8 अंत में कुछ प्रश्न
13.9 उत्तर
13.10 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

13.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने औद्योगिक विकास और औद्योगिक प्रदेशों की स्थापना के साथ भारत के औद्योगिक मार्गों के बारे में अध्ययन किया था। यह इकाई आर्थिक विकास की नींव के रूप में परिवहन और इसके महत्व पर केंद्रित है। परिवहन लोगों और सामानों के स्थानांतरण का एक माध्यम है।

आप भाग 13.2 में परिवहन जाल (नेटवर्क) के विकास के तथा भाग 13.3 में परिवहन के विभिन्न साधनों जैसे सड़क मार्ग, रेलवे, वायुमार्ग और जलमार्ग का अध्ययन करेंगे। समर्पित भार यातायात मार्ग, रैपिड मास ट्रांसपोर्ट सिस्टम और शहरी परिवहन को क्रमशः खंड 13.4, 13.5 और 13.6 में समझाया गया है।

संभावित अध्ययन परिणाम

इस इकाई का अध्ययन पूरा करने के बाद, आपः

- परिवहन प्रणाली के विकास का वर्णन कर सकेंगे;
- परिवहन के विभिन्न साधनों का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- समर्पित भार यातायात मार्ग और इसके महत्व की व्याख्या कर सकेंगे; तथा
- भारत की नगरीय परिवहन व्यवस्था को समझ सकेंगे।

13.2 परिवहन जाल का विकास

आप किसी देश के आर्थिक विकास में संसाधनों के महत्व से अवगत होंगे। जैसा कि हम जानते हैं कि संसाधनों को स्थानिक रूप से असमान रूप से वितरण मिलता है। प्रत्येक स्थानिक इकाई को सभी प्रकार के संसाधन उपलब्ध नहीं है। कुछ क्षेत्र संसाधन संपन्न हैं जबकि कुछ नहीं हैं। वस्तुओं और सेवाओं की परिवहन के लिए मानव को विभिन्न प्रकार के विनिमय की आवश्यकता होती है। ये विनिमय या आदान–प्रदान परिवहन द्वारा पूरे किए जाते हैं। यह उत्पादन और खपत क्षेत्रों के बीच कड़ी के रूप में कार्य करता है। वस्तुओं और सेवाओं के आसान विनिमय या आदान–प्रदान के लिए परिवहन और संचार महत्वपूर्ण है। वैश्वीकरण के इस युग में परिवहन, एक क्षेत्र में जीवन स्तर और जीवन गुणवत्ता को प्रभावित करता है। यह एक कड़ी के रूप में कार्य करता है जिसके माध्यम से व्यापार और संचार होता है।

परिवहन स्थानिक बाधाओं और दो क्षेत्रों के बीच मूल, गंतव्य और मार्गों की विशेषताओं से संबंधित है। देश का विकास केवल कृषि, उद्योगों या खानों पर ही नहीं बल्कि परिवहन और इसके विभिन्न साधनों के विकास पर भी निर्भर करता है। अब आप परिवहन के महत्व और भूमिका को समझ गए होंगे। **परिवहन प्रणाली** का तात्पर्य मानव और सामग्री को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के विभिन्न तरीकों से है। यह आर्थिक बुनियादी ढांचे का आधार है। यह एक क्षेत्र के विकास में मदद करता है और क्षेत्रीय असमानताओं को कम करता है। यह अर्थव्यवस्था के विकास में तंत्रिका और शिरा की तरह कार्य करता है, इस प्रकार इसे सभ्यता का प्रतीक कहा जाता है। अब आप परिवहन प्रणाली के कुछ लाभों के बारे में जानेंगे, जिनका उल्लेख नीचे किया गया है:

परिवहन के लाभ:

- यह कृषि और औद्योगिक क्षेत्र में बेहतर उत्पादन में मदद करता है।
- यह उत्पादन की लागत को कम करता है।
- परिवहन किसी क्षेत्र में अभाव को कम करता है।
- यह व्यापार और पर्यटन को बढ़ावा देता है।
- परिवहन बाजार और इसके ग्रहण क्षेत्रों के साथ–साथ बंदरगाहों और इसके भीतरी इलाकों के बीच संपर्क या संयोजन बढ़ाने में मदद करता है।
- यह संसाधनों और श्रम के परियोजन या संघटन को प्रोत्साहित करता है।
- परिवहन प्रणाली, एक क्षेत्र में रोजगार के अवसर पैदा करती है।
- यह एक क्षेत्र के क्रोड और परिधि (केन्द्र सीमावर्ती क्षेत्र) के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य करता है।
- परिवहन विभिन्न क्षेत्रों के बीच सामाजिक और सांस्कृतिक संबंधों के प्रसार और आदान–प्रदान में भी मदद करता है।

आइए अब अध्ययन करें कि भारत में समय के साथ परिवहन प्रणाली कैसे विकसित हुई है? किसी भी क्षेत्र की वृद्धि और विकास में परिवहन प्रणाली महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों जैसे कृषि, उद्योग, प्रशासन, व्यापार, वाणिज्य, संचार और शिक्षा आदि के विकास में मदद करता है। **परिवहन जाल** एक स्थानिक

नेटवर्क है जो वस्तु, सेवाओं और माल की परिवहन में मदद करता है। यह लोगों और माल ढुलाई के साथ–साथ परिवहन के बुनियादी ढांचे और टर्मिनलों की स्थानिक संरचना एवं संगठन में भी मदद करता है।
भारत में सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्तर पर अधिक विविधता है। इस विविध देश के एकीकरण के लिए एक विकसित परिवहन जाल महत्वपूर्ण है। आइए, हम भारत में सामयिक रूप से विकसित विभिन्न प्रकार के परिवहन जाल के विकास का संक्षेप में अध्ययन करें।

a) सड़क परिवहन का विकासः भारत में सड़क जाल को विकसित करने का सबसे पहला प्रयास 1943 की नागपुर योजना में किया गया था, जिसे रियासतों में आपसी समन्वय की कमी के कारण लागू नहीं किया जा सका। 1961 मे राज्यों के पुनर्गठन के बाद लक्ष्य हासिल किए गए। स्वतंत्रता के बाद, पहली पंचवर्षीय योजना (1951–56) में सड़कों को राष्ट्रीय राजमार्गों, राज्य राजमार्गों, जिला सड़कों और ग्रामीण सड़कों में वर्गीकृत किया गया था। 1961 में, बीस वर्षीय सड़क योजना (बॉम्बे योजना) का उद्देश्य सड़क की लंबाई को 6.56 लाख किलोमीटर से बढ़ाकर 10.60 लाख किलोमीटर करना था। इंडियन रोड्स कांग्रेस (1984) ने एक सड़क वर्गीकरण प्रणाली का सुझाव दिया जिसमें (1) प्राथमिक प्रणाली, जिसमें एक्सप्रेसवे और राष्ट्रीय राजमार्ग शामिल हैं; (2) माध्यमिक प्रणाली, जिसमें राज्य राजमार्ग और प्रमुख जिला सड़कें शामिल हैं; और (3) तृतीयक प्रणाली (ग्रामीण सड़कें), जिसमें अन्य जिला सड़कें और ग्राम सड़कें शामिल हैं।

b) रेल परिवहन का विकासः भारतीय रेलवे के इतिहास में पहली यात्री रेल 16 अप्रैल 1853 को बॉम्बे से ठाणे (34 किमी) के बीच चली। इस ट्रेन में तीन लोकोमोटिव शामिल थे; साहिब, सुल्तान और सिंध और उनके पास तेरह गाड़ियाँ थीं। 1862 में, बिहार के मुंगेर के पास जमालपुर में पहली रेलवे वर्कशॉप स्थापित की गई थी। यह लोहा–इस्पात ढलाईखाना (फाउंड्री), रोलिंग मिल आदि के साथ क्रमशः भारत की प्रमुख औद्योगिक इकाइयों में से एक बन गया। 1880 में, दार्जिलिंग स्टीम ट्रामवे (बाद में दार्जिलिंग हिमालयन रेलवे) ने सिलीगुड़ी से कुर्सेओंग तक अपना पहला खंड शुरू किया, जिसे 1881 में आगे दार्जिलिंग तक बढ़ा दिया गया। कालका–शिमला रेलवे (KSR), 2276 मीटर पर चंडीगढ़ के तलहटी शहर कालका से शिमला तक जुड़ा। नीलगिरि माउंटेन रेलवे जिसकी शुरुआत 1899 हुई, हिल पैसेंजर रेलवे के उत्कृष्ट उदाहरणों में से एक है, जिसे 1903 में ऊटी तक बढ़ाया गया।

c) जल परिवहन का विकासः स्वतंत्रता से पहले कई निजी शिपिंग कंपनियां थीं। हालाँकि, पूर्वी और पश्चिमी शिपिंग निगम को क्रमशः 1950 और 1956 में स्थापित किया गया। 1961 में इन दोनों निगमों का विलय होने के बाद भारतीय नौवहन निगम की स्थापना की गई। पहली पंचवर्षीय योजना (1951–56) के दौरान, गंगा–ब्रह्मपुत्र जल परिवहन बोर्ड की स्थापना, केंद्र सरकार और उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और असम की राज्य सरकारों के संयुक्त उद्यम के रूप में की गई थी। इसके बाद, भारत सरकार ने 1965 में शिपिंग और परिवहन मंत्रालय के तहत अंतर्देशीय जल परिवहन निदेशालय की स्थापना की। अंततः राष्ट्रीय परिवहन नीति समिति (एनटीपीसी) के अनुशंसा पर 27 अक्टूबर 1986 को भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण (IWAI) की स्थापना की गई। देश में शिपिंग और नौवहन के लिए राष्ट्रीय जलमार्गों के विकास, रखरखाव और विनियमन हेतु भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण अधिनियम को 1985 में पारित किया गया।

d) वायु परिवहन का विकास: पहला परिचालित हवाई मेल 1911 में उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद (प्रयागराज) और नैनी के बीच 10 किमी की दूरी पर शुरू हुआ। कालांतर में, इंडियन स्टेट एयर सर्विसेज ने इंपीरियल एयरवेज (यूके) के साथ 1912 में कराची और दिल्ली के बीच पहला घरेलू हवाई मार्ग खोला। दमदम (कोलकाता), बमरौली (इलाहाबाद) और गिल्बर्ट हिल (मुंबई) में 1924 में,नागरिक हवाई अड्डों का निर्माण शुरू हुआ। टाटा एयर सर्विसेज ने अक्टूबर 1932 में कराची से बॉम्बे (मुंबई) के लिए अपनी पहली उड़ान भरी। स्वतंत्रता के बाद, भारत सरकार ने टाटा एयरवेज का नाम बदलकर एयर इंडिया कर दिया और इसने 1948 में मुंबई से लंदन के लिए अपनी पहली अंतरराष्ट्रीय उड़ान शुरू की। वर्ष 1953 में, वायु परिवहन का राष्ट्रीयकरण किया गया तथा दो निगम, एयर इंडिया इंटरनेशनल और इंडियन एयरलाइंस को क्रमशः अंतरराष्ट्रीय और घरेलू वायु परिवहन के लिए स्थापित किया गया। बाद के वर्षो में सिविल (नागरिक) हेलीकॉप्टर सेवाएं शुरू की गई।

निजी एयरलाइनों के प्रवेश के साथ भारतीय हवाई यात्रा में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। वायु निगम (उपक्रम का स्थानांतरण और निरसन) अधिनियम,1994, ने निजी एयरलाइनों को अनुसूचित सेवाओं को संचालित करने और घरेलू परिचालन शुरू करने का अधिकार प्रदान किया। इनमें जेट एयरवेज, एयर सहारा, मोडिलुफ्ट एयरलाइंस, दमानिया एयरवेज, एनईपीसी और ईस्ट–वेस्ट एयरलाइंस शामिल हैं, जो वर्तमान भारतीय विमानन क्षेत्र की नींव कहे जा सकते हैं। 2000 के दशक में भारत के विमानन क्षेत्र में उछाल आया। इंडिगो, स्पाइस जेट, गो एयर और एयर एशिया इंडिया जैसी कम लागत वाली एयरलाइनों ने एयर इंडिया और जेट एयरवेज जैसे पूर्ण–सेवा वाहकों को बड़ी चुनौती दी। पवन हंस पहाड़ी क्षेत्रों में संचालित हेलीकॉप्टर सेवा है और उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में पर्यटकों द्वारा इसका व्यापक उपयोग किया जाता है।

13.2.1 भारत में परिवहन जाल के विकास को प्रभावित करने वाले कारक

परिवहन जाल के विकास में विभिन्न प्रकार के बल और कारक कार्य करते हैं। परिवहन जाल के विकास को प्रभावित करने वाले कारक इस प्रकार हैं:

(i) ऐतिहासिक: ऐतिहासिक कारकों में अधिवास या स्थान और प्रणाली, तकनीकी विकास, संस्थागत विकास और बंदोबस्त, और भू–उपयोग प्रारूप शामिल हैं। उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद ने उपनिवेशों में विकास प्रक्रिया को आकार दिया है।

(ii) पर्यावरणीय: स्थानीय स्तर पर जलविज्ञान संबंधी और भूआकृतिक जैसे पर्यावरणीय कारक तथा क्षेत्रीय स्तर पर जलवायु कारक, परिवहन निर्माण और संचालन के लिए आवश्यक दशाएं हैं।

(iii) आर्थिक: आर्थिक प्रक्रियाएं परिवहन जाल को आकार देती हैं, आर्थिक गतिविधियों और अंतःक्रियाओं में सहायक होती हैं। रोजगार और वितरण (स्थानीय स्तर पर) और बाजार (अंतरराष्ट्रीय स्तर) के लिए समन्वित आपूर्ति रणनीतियों की आवश्यकता होती है। वैश्विक स्तर पर, तुलनात्मक लाभ और अंर्तनिर्भरता प्रमुख माल प्रवाह को प्रभावित करती है।

(iv) भौतिक: परिवहन सुविधाओं के भौतिक कारको में मार्ग चयन और भूवैज्ञानिक और जलवायु प्रभाव शामिल हैं।

(v) राजनैतिक : वैश्विक स्तर पर परिवहन सुविधाओं के राजनैतिक प्रभाव या कारकों में बहुपक्षीय समझौते, पूंजी में सरकार की भागीदारी, एकाधिकार, प्रतिस्पर्धा, सुरक्षा, कार्य दशाएं और साधनों के बीच समन्वय, एक नियोक्ता के रूप में परिवहन तथा इसके विकास के सामाजिक परिणाम हैं। व्यापार समझौते तथा कराधान और नियामक क्रमशः राष्ट्रीय स्तर एवं प्रादेशिक स्तर पर, परिवहन जाल को प्रभावित करने वाले कारक हैं।

बोध प्रश्न 1

a) परिवहन के क्या लाभ हैं?
b) भारत के परिवहन जाल के विकास को प्रभावित करने वाले किन्हीं चार महत्वपूर्ण कारकों की सूची बनाइए।

13.3 परिवहन के साधन

अब तक आपने भारत में परिवहन जाल के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन किया है। अब आप परिवहन के विभिन्न साधनों का अध्ययन करेंगे जो देश के बुनियादी ढांचे और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

परिवहन के विभिन्न साधनों को यात्रियों या माल ढुलाई के लिए डिजाइन किया गया है। ये सड़क मार्ग, रेल, वायुमार्ग, जलमार्ग आदि हैं। परिवहन के साधन के निर्धारण में लागत, माल का मूल्य, माल का वजन एवं आकार आवश्यक होते हैं। दुनिया भर में अलग–अलग भौगोलिक भू–भाग के कारण, माल और सेवाओं के कुशल परिवहन के लिए परिवहन के विभिन्न साधनों की आवश्यकता होती है। भारत में, पत्तन, पोत परिवहन और जलमार्ग मंत्रालय तथा सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय, परिवहन के विकास एवं नियमों के निर्माण और प्रबंधन के लिए जिम्मेदार हैं। आइए हम निम्नलिखित उप–भागों में परिवहन के विभिन्न साधनों का अध्ययन करें।

13.3.1 सड़क परिवहन

हम सभी ग्रामीण,शहरी,पहाड़ी या मैदानी क्षेत्रो में सड़क परिवहन के महत्व को जानते है। लंबी, छोटी और मध्यम दूरी के लिए माल और सेवाओं के परिवहन के लिए सड़क मार्ग एक आदर्श साधन है। भारत के पास 59 लाख किमी के साथ संयुक्त राज्य अमेरिका के 66.5 लाख किमी के बाद विश्व का दूसरा सबसे बड़ा सड़क जाल है। रेलवे की तुलना में सड़कों का निर्माण और रखरखाव आसान है। यह दरवाजे से दरवाजे तक सेवा प्रदान करता है और आर्थिक रूप से व्यवहार्य हैं। भारतीय सड़कें मुख्य रूप से कंक्रीट की हैं जो टिकाऊ और मौसमरोधी होते हैं। सरकारी कार्यक्रमों में से एक भारतमाला परियोजना का उद्देश्य बुनियादी ढांचे और सड़क यातायात प्रबंधन के अंतर को कम करना है। सड़कों के निर्माण और रखरखाव का प्रबंधन राज्य और केंद्र सरकारों के विभिन्न विभागों द्वारा किया जाता है। मुख्य विभागों में राज्य लोक निर्माण विभाग, भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण, राज्य वन विभाग, रेलवे, नगर निगम, सार्वजनिक क्षेत्रीय उपक्रम, सीमा सड़क संगठन, राष्ट्रीय राजमार्ग अवसंरचना विकास निगम आदि हैं।

सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय राष्ट्रीय राजमार्गों के विकास और रखरखाव के लिए जिम्मेदार है। भारत में राष्ट्रीय राजमार्ग 2010–11 में 70,934 किमी से बढ़कर

2017 में 1,14,158 किमी हो गई है (सरणी 1)। आप सरणी 2 से सड़क परिवहन द्वारा माल और यात्री परिवहन को देखेंगे। माल ढुलाई परिवहन 2010–2011 में लगभग 1287 बिलियन टन/किमी से 2016–2017 में बढ़कर 2260 बिलियन टन/किमी हो गया। साथ ही सड़क परिवहन से यात्रियों की आवाजाही 8409 से बढ़कर 17,832 अरब यात्री/किमी हो गई। भारत में सड़कों के विकास को निम्नलिखित श्रेणी में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

i. **राष्ट्रीय राजमार्ग**: इनका रखरखाव केंद्र सरकार द्वारा किया जाता है, जो प्रमुख शहरों, बंदरगाहों, रेलवे जंक्शनों आदि को जोड़ता है। इनका रखरखाव, विकास और संचालन भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (NHAI) द्वारा किया जाता है। NHAI सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के प्रशासनिक नियंत्रण में होता है। कुछ प्रमुख राष्ट्रीय राजमार्गों में स्वर्णिम चतुर्भुज, उत्तर–दक्षिण मार्गों और पूर्व–पश्चिम मार्ग शामिल हैं।

ii. **राज्य राजमार्ग**: इनका प्रबंधन राज्य सरकार द्वारा किया जाता है और यह राज्य की राजधानियों, महत्वपूर्ण स्थानों और कस्बों को जोड़ने वाले राष्ट्रीय राजमार्गों को जोड़ता है।

iii. **जिला सड़कें**: ये सड़कें जिला मुख्यालयों और राज्य राजमार्गों को जोड़ती हैं। इनका रखरखाव जिला परिषद (जिला परिषद) द्वारा किया जाता है।

iv. **सीमा सड़कें**: सीमा सड़क संगठन (बीआरओ) की स्थापना 1960 में की गई थी जो इन सड़कों का निर्माण और रखरखाव करता है। इनका सामरिक महत्व है जो देश की रक्षा और अर्थव्यवस्था को मजबूत करती हैं। बीआरओ ने लद्दाख में चंडीगढ़ और लेह को जोड़ने वाली दुनिया की सबसे ऊंची सड़क का निर्माण किया है।

v. **ग्रामीण सड़कें** : सड़कें देश के ग्रामीण हिस्सों को जोड़ती हैं जहां स्थलाकृति और भू–भागीय संरचना के कारण बड़े राजमार्गों का निर्माण सम्भव नहीं होता है। यह पड़ोसी क्षेत्र के प्रमुख कस्बों और शहरों को जोड़ता है।

सरणी 13.1ः भारत में श्रेणीवार सड़क की लंबाई (2017)।

श्रेणीवार सड़कें	सड़क लम्बाई (किमी)	कुल सड़क का प्रतिशत
राष्ट्रीय राजमार्ग	1,14,158	1.94
राज्य राजमार्ग	1,75,036	2.97
जिला सड़कें	5,86,181	9.94
ग्रामीण सड़कें	41,66,916	70.65
नगरीय सड़कें	5,26,483	8.93
परियोजना सड़कें	3,28,897	5.58
कुल	58,97,671	100

(स्रोतः सड़क परिवहन वार्षिक बुक –2016–17; परिवहन अनुसंधान विंग, सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय, नई दिल्ली)

सरणी 13.2: सड़क परिवहन द्वारा माल और यात्रियों का आवागमन (2010-2017)

वर्ष	माल (अरब टन/किमी)	यात्री (अरब यात्री /किमी)
2010-11	1,287.3	8,409
2011-12	1,407.8	9,478
2012-13	1,516.2	10,469
2013-14	1,652.1	11,742
2014-15	1,823.2	13,393
2015-16	2,027.4	15,428
2016-17	2,260.2	17,832

(स्रोतः सड़क परिवहन वार्षिक बुक –2016–17; परिवहन अनुसंधान विंग, सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय, नई दिल्ली)

महत्वपूर्ण राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजनाओं को नीचे सूचीबद्ध किया गया है।

a) **स्वर्णिम चतुर्भुज राष्ट्रीय राजमार्गः** यह भारत के शीर्ष चार महानगरों अर्थात् दिल्ली, कोलकाता, मुंबई और चेन्नई को जोड़ता है, जिससे एक चतुर्भुज आकृति बनती है। 2001 में, इसे राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना (NHDP) के एक भाग के रूप में प्रारंभ किया गया था।

b) **उत्तर–दक्षिण मार्गः** इसका उद्देश्य जम्मू और कश्मीर में श्रीनगर को तमिलनाडु में कन्याकुमारी से जोड़ना है, जिसकी लंबाई 4,076 किमी है।

c) **पूर्व–पश्चिम मार्ग** : यह असम में सिलचर को गुजरात के बंदरगाह शहर पोरबंदर से जोड़ता है, जिसकी लंबाई 3,640 किमी है।

d) **तटीय राजमार्गः** ओडिशा सरकार द्वारा प्रस्तावित 382 किलोमीटर की तटीय राजमार्ग परियोजना खुर्दा के तांगी से शुरू होकर चिल्का झील को उपमार्ग करते हुए, ब्रह्मगिरी, पुरी, कोणार्क, अस्टारंग, नौगांव, पारादीप बंदरगाह, रतनपुर, सतभाया, धामरा, बासुदेवपुर, तलपाड़ा, चांदीपुर और चंदनेश्वर को छूते हुए दीघा में समाप्त होगी। यह केंद्र की भारतमाला परियोजना का हिस्सा थी।

e) **राष्ट्रीय राजमार्ग 66:** यह एक चार–लेन 1,608 किमी लंबा राजमार्ग है जो पश्चिमी घाट के लगभग समानांतर है और पनवेल (मुंबई के दक्षिण में एक शहर) तथा केप कोमोरिन (कन्याकुमारी) को जोड़त है। यह महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु राज्यों से होकर गुजरता है।

f) **भारतमाला परियोजनाः** यह 2016 में शुरू की गई भारत सरकार की एक प्रतिष्ठित योजना है, जिसका उद्देश्य बुनियादी ढांचे में कमियों को दूर कर देश भर में सड़क यातायात परिवहन क्षमता को अनुकूल बनाना है। इसका उद्देश्य हैः

- पिछड़े क्षेत्रों में संपर्क विकसित करना,
- मल्टी–मोडल लॉजिस्टिक्स पार्क विकसित करना,
- चोक पॉइंट को खत्म करने के लिए पहल करना,
- वैज्ञानिक और तकनीकी योजना का उपयोग,

- विशेष रूप से भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में कनेक्टिविटी में सुधार और देश के सभी हिस्सों में सड़कों की गुणवत्ता में सुधार करना।

g) **राष्ट्रीय राजमार्ग जिला संज्योक्ता परियोजना**: देश भर में 100 जिला मुख्यालयों को जोड़ने के लिए कुल 6,600 किलोमीटर राजमार्ग सड़कों का विकास किया जाएगा।

h) **सेतु भारतम**: इस परियोजना का उद्देश्य राष्ट्रीय राजमार्गों पर सुगम यात्रा के लिए पुलों का निर्माण करना है। इस कार्यक्रम तहत सभी राष्ट्रीय राजमार्गों को रेलवे लेवल क्रॉसिंग तक पहुंच योग्य बनाना और नए तथा मौजूदा ''ओवर ब्रिज/अंडर ब्रिज'' सड़कों का निर्माण और चौड़ीकरण करना है।

i) **चार धाम परियोजना**: यह उत्तराखंड में केदारनाथ, बद्रीनाथ, यमुनोत्री और गंगोत्री को जोड़ती है, जो चारधाम परियोजना के तहत 889 किमी की पूरी लंबाई को आवृत्त करती है।

j) **प्रधान मंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY)**: इस योजना का उदेश्य गरीबी कम करने की रणनीति के रूप में असंबद्ध बस्तियों को कनेक्टिविटी प्रदान करना है। इस योजना के तहत सभी अधिवासों का हर मौसम में ग्रामीण सड़क से सम्पर्क रहता है।

13.3.2 रेल परिवहन

भारत के पास संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस और चीन के बाद दुनिया का चौथा सबसे बड़ा रेलवे जाल (नेटवर्क) है। रेल नेटवर्क 1,19,630 किलोमीटर लंबाई में फैला हुआ है। यह कम लागत पर लंबी दूरी के लिए परिवहन का सबसे महत्वपूर्ण एवं आम साधन है। यह देश के एकीकरण तथा युद्ध, प्राकृतिक आपदाओं और महामारी के दौरान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जैसा कि हम जानते हैं कि रेल परिवहन आबादी की आसान आवागमन और सस्ती दरों पर माल ढुलाई में भी मदद करता है। भारतीय रेलवे चार अलग–अलग गेज में काम कर रहा है। इनमें 1.676 मीटर चौड़ा बड़ी लाइन, मीटर गेज (चौड़ाई 1 मीटर), छोटी लाइन –0.762 मीटर और 0.610 मीटर चौड़ा लिफ्ट गेज हैं।

भारत में रेल परिवहन का स्थलाकृति, इलाके, जनसंख्या घनत्व और क्षेत्र की उत्पादकता के कारण असमान वितरण मिलता है। यह देखा गया है कि देश के अन्य भागों की तुलना में उत्तरी मैदानी भागों में इसकी स्थलाकृति के कारण रेल परिवहन का अधिक घनत्व मिलता है। भारत के शीर्ष पांच राज्यों में रेलवे की लंबाई इस प्रकार हैः

सरणी 13.3: भारत में रेल की लंबाई

राज्य	**लंबाई (किमी में)**
उत्तर प्रदेश	9,077
राजस्थान	5,893
महाराष्ट	5,745
गुजरात	5,259
मध्य प्रदेश	5,000

भारतीय रेलवे जोन

2010 तक भारत में 17 रेलवे जोन हैं जिनका प्रबंधन रेलवे बोर्ड द्वारा किया जाता है। रेलवे जोन और उनके मुख्यालय नीचे दिए गए हैं:

जोन	**मुख्यालय**
उत्तर	दिल्ली
उत्तर मध्य	प्रयागराज
उत्तर– पूर्व	गोरखपुर
पूर्वोत्तर सीमांत	गुवाहाटी
उत्तर पश्चिम	जयपुर
मध्य (सेंट्रल)	मुंबई
पूर्व मध्य	हाजीपुर
पूर्व तटीय	भुवनेश्वर
पूर्व	कोलकाता
दक्षिण मध्य	सिकंदराबाद
दक्षिण पूर्व मध्य	बिलासपुर
दक्षिण–पूर्व	कोलकाता
दक्षिण पश्चिम	हुबली
पश्चिमी	मुंबई
दक्षिणी	चेन्नई
पश्चिम मध्य	जबलपुर
कोलकाता मेट्रो	कोलकाता

आपको जानकर हैरानी होगी कि भारतीय रेल के पास यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त दो विश्व धरोहर स्थल हैं। इसमें शामिल हैं :

1. भारत के पर्वतीय रेलवे (दार्जिलिंग हिमालय रेलवे; कालका–शिमला रेलवे; और नीलगिरि माउंटेन रेलवे)

2. छत्रपति शिवाजी टर्मिनल, मुंबई

इनके अलावा भारतीय रेल पैलेस ऑन व्हील्स, डेक्कन ओडिसी, थार एक्सप्रेस, फेयरी क्वीन, मुंबई–पुणे डेक्कन क्वीन, हिमसागर एक्सप्रेस, गतिमान एक्सप्रेस, राजधानी एक्सप्रेस, शताब्दी एक्सप्रेस, डिबरूगढ़–कन्याकुमारी विवेक एक्सप्रेस, लाइफलाइन एक्सप्रेस, समझौता एक्सप्रेस, भोपाल शताब्दी एक्सप्रेस, दुरंतो एक्सप्रेस और हमसफर एक्सप्रेस सहित कई महत्वपूर्ण रेल का संचालन एवं रखरखाव करती है।

रेल परिवहन का मुख्य लाभ इसका सबसे सस्ता और तीव्र गति का परिवहन साधन होना है। यह भीतरी इलाकों को बंदरगाहों से जोड़ता है और परिधीय क्षेत्रों, कृषि क्षेत्र को विकसित करने में मदद करता है। यह देश के एकीकरण के साथ कानून और व्यवस्था बनाए रखने में भी मदद करता है। जबकि यात्रियों का भारी दबाव, दुर्घटनाएं, राजस्व और लागत की समस्या, सामाजिक बोझ, सड़क परिवहन के साथ प्रतिस्पर्धा, उच्च ऊर्जा लागत, अपूर्ण योजना और धीमी निर्णय लेने की प्रक्रिया इसकी असुविधाएं हैं।

सरकारी पहल

सरकार ने हाल ही में निम्नलिखित पहल की हैः

- केंद्र सरकार ने जून 2021 में महाराष्ट्र में पुणे और नासिक के बीच 235 किलोमीटर के सेमी हाई–स्पीड रेल कॉरिडोर के कार्यान्वयन को मंजूरी दी है। इस परियोजना की लागत 16,039 करोड़ रुपये (2.20 बिलियन अमेरिकी डॉलर) होने का अनुमान है।
- अप्रैल 2021 में, भारतीय रेलवे ने निर्माणाधीन चिनाब ब्रिज (1315 मीटर लंबी) का आर्च अथवा छोटा घेरा क्लोजर पूरा किया, जो दुनिया का सबसे ऊंचा रेलवे ब्रिज है और पेरिस में एफिल टॉवर से लगभग 35 मीटर लंबा है।
- सरकार एक राष्ट्रीय रेल योजना विकसित करेगी ताकि देश अपने रेल जाल को परिवहन के अन्य साधनों के साथ जुड़ाव और एक बहु–मोडल परिवहन जाल तैयार कर सके।

13.3.3 वायु परिवहन

वायु मार्ग परिवहन का सर्वाधिक तीव्र और महंगा साधन है। यह विमान, हेलीकॉप्टर आदि के माध्यम से माल और यात्रियों को हवाई मार्ग से ले जाता है। यह युद्ध, आपदाओं जैसे आपातकाल की स्थिति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह बहुत कम समय में दुनिया के सबसे दूरस्थ, दुर्गम और प्रतिकूल दशा वाले हिस्सों को जोड़ता है। यह कम वजन के बहुमूल्य माल ले जाने में सक्षम है। यह पर्यटन क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में वायु परिवहन की शुरुआत 1911 में इलाहाबाद और नैनी के बीच हुई थी। भारत में 486 विमान पत्तन या हवाई अड्डे हैं, जिनमें से 34 अंतरराष्ट्रीय हैं और 123 वाणिज्यिक प्रकृति के हैं। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण को 1 अप्रैल, 1995 को स्थापित किया गया था, सुरक्षित, कुशल अंतरराष्ट्रीय और घरेलू वायु परिवहन के लिए उत्तरदायी है। यह नागरिक उड्डयन मंत्रालय के अधीन कार्य करता है। भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा घरेलू नागरिक उड्डयन बाजार है जिसमे पिछले दशक के दौरान सालाना 16% दर से वृद्धी हुई है।

घरेलू वायु परिवहन देश के भीतर वास्तु और माल के आवागमन में मदद करता है, जबकि अंतरराष्ट्रीय परिवहन दो देशों के बीच माल और यात्रियों को ले जाता है। भारत में अंतर्राष्ट्रीय विमान पत्तन या हवाई अड्डे जयपुर, हैदराबाद, गुवाहाटी, वाराणसी, पोर्ट ब्लेयर, भुवनेश्वर, इंफाल, दिल्ली, वास्को डी गामा, अहमदाबाद, बैंगलोर, मैंगलोर, कोच्चि, कोझीकोड, मुंबई, तिरुवनंतपुरम, तिरुचिरापल्ली, लखनऊ, नागपुर, अमृतसर, कोलकाता, कोयंबटूर और चेन्नई में हैं। भारत के प्रमुख एयरलाइंस में एयर इंडिया, जेट एयरवेज, विस्तारा, इंडिगो, गो एयर, स्पाइस जेट, एयर डेक्कन आदि हैं। दिल्ली में इंदिरा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा, मुंबई में छत्रपति शिवाजी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा और बेंगलुरु अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे से देश में आधे से अधिक वायु यातायात का संचालन होता है।

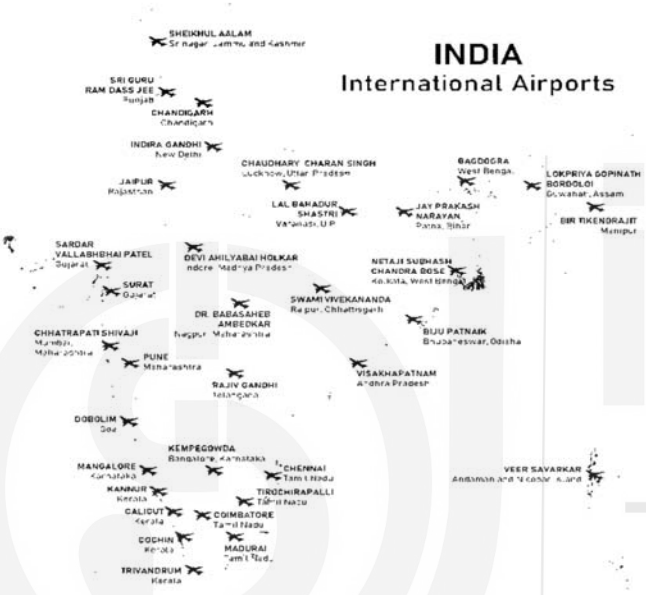

चित्र 13.1: भारत के प्रमुख अंतरराष्ट्रीय विमान पत्तन या हवाई अड्डे

वायु परिवहन के कई फायदे और नुकसान भी हैं। हवाई परिवहन के लाभ हैं: यह परिवहन का सर्वाधिक तीव्र साधन है। यह देश के दूरस्थ हिस्सों को जोड़ता है तथा देश को दुनिया के अन्य हिस्सों से जोड़ता है, युद्धों और प्राकृतिक आपदाओं के दौरान सहायक होता है। इसके दोष में खराब बुनियादी ढांचा, परिवहन का महंगा साधन, मौसमी दशा से प्रभावित होना, ईंधन की बढ़ती कीमतें, खराब प्रबंधन और श्रमिकों द्वारा प्रायः हड़ताल इत्यादि शामिल हैं।

13.3.4 जल परिवहन

जल परिवहन यात्रियों और नौभार, दोनों के लिए छोटी एवं लंबी दूरी के लिए परिवहन का एक महत्वपूर्ण और सस्ता साधन है। यह भारी और वजनदार सामग्री ढोने के लिए परिवहन का उपयुक्त साधन है। परिवहन का यह तरीका पर्यावरण–अनुकूल और ईंधन–कुशल होता है। भारत में लंबी तटरेखा है और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का एक बड़ा हिस्सा जहाजों द्वारा होता है जो देश के व्यापार की मात्रा का 95% हिस्सा है। विभिन्न प्रकार के जलमार्गों को नीचे समझाया गया है:

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

1. **अन्तःस्थलीय जलमार्ग** : भारत में नदियों, नहरों और पश्चजल में माल और यात्रियों के परिवहन के लिए नावों, बड़ी मोटर बोट, स्ट्रीमर आदि के रूप में अन्तःस्थलीय जल परिवहन का एक व्यापक जाल है। भारत में नौगम्य नदी की कुल लंबाई 14,544 किलोमीटर है, जिसमें से 5,200 किलोमीटर नदी और 4,000 किलोमीटर नहरों की है। अन्तःस्थलीय जल परिवहन मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, असम, केरल, कर्नाटक, आदि राज्यों में उपलब्ध है। गंगा, ब्रह्मपुत्र, गोदावरी, कृष्णा नदियाँ प्रकृति में नौगम्य हैं। हमारे देश में अन्तःस्थलीय जल परिवहन का प्रबंधन भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण (IWAI) द्वारा किया जाता है जिसे 1986 में स्थापित किया गया था। राष्ट्रीय जलमार्ग कम दर पर नौभार ढोते हैं। भारत के राष्ट्रीय जलमार्ग निम्नलिखित हैंः

सरणी 13.4ः भारत के राष्ट्रीय जलमार्ग

जलमार्ग	विस्तार	विशिष्टता	वर्ष
NW1	प्रयागराज–हल्दिया विस्तार (1,620 किमी)	• भारत में महत्वपूर्ण जलमार्गों में से एक। • यह पटना तक मोटर चालित नावों और हरिद्वार तक साधारण नावों द्वारा नौगम्य है। • विकासात्मक उद्देश्यों के लिए इसे तीन भागों में बांटा गया हैः हल्दिया – फरक्का (560 किमी) फरक्का – पटना (460 किमी) पटना – प्रयागराज (600 किमी)	1986
NW2	सादिया–धुबरी विस्तार (891 किमी)	ब्रह्मपुत्र नदी डिब्रूगढ़ (1384 किमी) तक स्ट्रीमर्स द्वारा नौगम्य या नौकायान योग्य है।	1988
NW3	कोट्टापुरम–कोल्लम विस्तार (205 किमी)	इसमें चंपकारा नहर (23 किमी) और उद्योगमंडल नहर (14 किमी) के साथ 168 किमी पश्चिमी तट नहर भी शामिल है।	1991
NW4	काकीनाडा–पुदुचेरी विस्तार (1,095 किमी)	कालुवेली टैंक और नहर का विस्तार, गोदावरी और कृष्णा नदी का विस्तार।	2008
NW5	तालचेर–धामरा (623 किमी)	पूर्वी तट नहर और मताई नदियों का विस्तार; ब्राह्मणी–खरसिया–धामरा नदियाँ; और महानदी डेल्टा नदियाँ (हंसुआ नदी, नुनानाला, गोब्रिनाला, खरनासी नदी और महानदी नदी से मिलकर)	2008

NW8	अलाप्पुझा–चंगनास्सेरी नहर	कुट्टनाड नदी	2016

सरणी 13.5 : राष्ट्रीय जलमार्गों पर कार्गो का परिवहन

वर्ष	टन किलोमीटर (लाख)
2014-15	28,468
2015-16	34,597
2016-17	39,522
2017-18	42,549.56

(स्रोतः स्टेटिस्टिक्स ऑफ इनलैंड वाटर ट्रांसपोर्ट : 2017–18)

2. **समुद्री परिवहनः** यह समुद्र या महासागर से जहाजों द्वारा माल और यात्रियों के आवागमन का परिवहन है। भारत का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार समुद्री परिवहन के माध्यम से किया जाता है। भारत में 12 बड़े और 200 छोटे बंदरगाह हैं। भारत का 95% विदेशी व्यापार और 70% वाणिज्य मूल्य समुद्री परिवहन के माध्यम से किया जाता है। भारत सुलभ विदेशी व्यापार,आयात और निर्यात के लिए शिपिंग (जहाजरानी) क्षेत्र और जहाज निर्माण उद्योग के विकास पर ध्यान केंद्रित कर रहा है।

3. **तटीय परिवहनः** तटीय परिवहन में, देश के तटीय क्षेत्रों के साथ बंदरगाहों के बीच जहाजों का आवागमन होता है। भारत की 7,516 किमी लंबी तटरेखा है। इसलिए, यह तटीय क्षेत्रों में कार्गो और यात्रियों के लिए परिवहन का सबसे कुशल साधन है। बारह प्रमुख बंदरगाह गुजरात में कांडला बंदरगाह, महाराष्ट्र में मुंबई बंदरगाह, महाराष्ट्र में जवाहरलाल नेहरू बंदरगाह, गोवा में मोरमुगाओ बंदरगाह, ओडिशा में पारादीप बंदरगाह, कर्नाटक में न्यू मैंगलोर बंदरगाह, केरल में कोच्चि बंदरगाह, आंध्र प्रदेश में विशाखापत्तनम बंदरगाह, कोलकाता बंदरगाह पश्चिम बंगाल में, तमिलनाडु में चेन्नई बंदरगाह और एन्नोर बंदरगाह हैं।

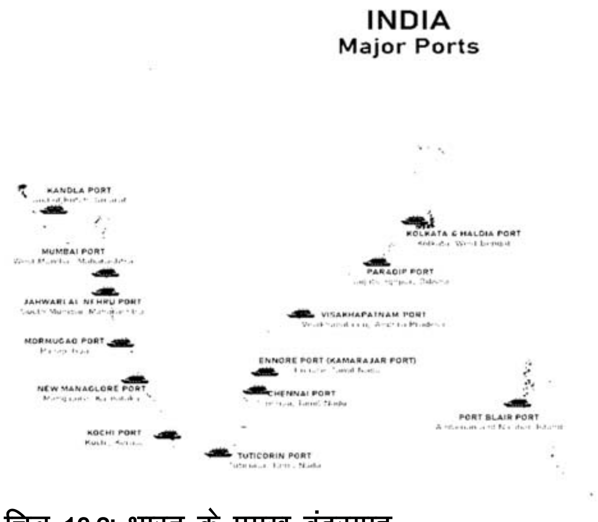

चित्र 13.2: भारत के प्रमुख बंदरगाह

भारत सरकार ने देश के विभिन्न हिस्सों में जलमार्ग विकसित करने के लिए कई पहल की हैं। तीन महत्वपूर्ण परियोजनाओं को नीचे बताया गया हैः

1. **सागरमाला परियोजनाः** यह भारत की 7,500 किलोमीटर लंबी तटरेखा तथा 14,500 किलोमीटर संभावित जलमार्गों के व्यापक विकास के उद्देश्य से 2015 में शुरू की गई। यह बंदरगाह आधारित विकास की अवधारणा की प्रमुख शुरुआत है। पोर्ट–आधारित विकास रसद–गहन उद्योगों पर केंद्रित होता है जहां परिवहन उच्च लागत वाला और समयबद्ध होता है।

2. **सेतु–समुद्रम परियोजनाः** यह भारत की सबसे महत्वाकांक्षी समुद्री परियोजना है। यह पाक जलडमरूमध्य और पाक खाड़ी द्वारा मन्नार की खाड़ी और बंगाल की खाड़ी को जोड़ने वाली एक नई शिपिंग लेन बनाता है। परियोजना को सेतुसमुद्रम कॉरपोरेशन लिमिटेड सहित राज्य द्वारा संचालित फर्मों के माध्यम से वित्तपोषित किया गया था। यह जो एडम्स ब्रिज से 10,000–12,000 सकल टन भार वाले जहाजों के पार करने का 167 किमी लंबा, 300 मीटर चौड़ा और 12 मीटर गहरा एक कृत्रिम चैनल है। इस परियोजना को 2005 में सरकार द्वारा घोषित सेतुसमुद्रम नहर परियोजना के रूप में जाना जाता है।

3. **जल मार्ग विकास परियोजनाः** गंगा नदी पर एक परियोजना को जल मार्ग विकास परियोजना (जेएमवीपी) कहा जाता है। परियोजना पूर्ण होने की समय सीमा मार्च 2023 है। इस परियोजना की मुख्य विशेषताओं में वाराणसी, साहिबगंज और हल्दिया में बहु–मॉडल टर्मिनलों का निर्माण, रो–रो टर्मिनल, फरक्का में नौसंचालन अवरोध जैसे विभिन्न बुनियादी ढांचे का विकास हैं।

जल परिवहन के मुख्य लाभ ऊर्जा दक्षता, परिवहन के सस्ते साधन, विदेशी व्यापार में योगदान, भारी और वजनदार सामग्री का सुलभ एवं आसान परिवहन, कम रखरखाव लागत और प्राकृतिक आपदाओं के दौरान इसका उपयोग हैं। पर्यावरण पर इस परिवहन का प्रभाव अन्य परिवहन की अपेक्षा कम है। जल परिवहन केवल सीमित क्षेत्र को कवर करने में सक्षम है, इसलिए यह मुख्य नुकसान है।

बोध प्रश्न 2

भारत में विभिन्न प्रकार के जलमार्गों के नाम लिखिए।

13.4 समर्पित भार यातायात मार्ग

आप भारत में सामयिक रूप से विकसित और उपयोग किए जाने वाले परिवहन के विभिन्न प्रकार के साधन के बारे में जान चुके हैं। अब आप डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर के बारे में अध्ययन करेंगे। **समर्पित भार यातायात मार्ग (DFCs)** माल ढुलाई के लिए उच्च गति और क्षमता वाले रेलवे कॉरिडोर हैं। यह बेहतर बुनियादी ढांचे और अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का एकीकरण है। यह माल या उत्पाद को एक स्थान से दूसरे स्थान पर तीव्र गति से ले जाने में मदद करता है।

इसका प्रबंधन रेल मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा किया जाता है। डीएफसी का मुख्य उद्देश्य एक कुशल माल परिवहन प्रणाली प्रदान करना है। इन्हें माल ढुलाई की बढ़ती

जरूरतों को पूरा करने के लिए विकसित किया गया है। डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया (DFCCIL), डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर की निगरानी करता है। इसे आम तौर पर दो प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है, ईस्टर्न डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर और 2) वेस्टर्न डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर। डीएफसी के पास हर 2 किलोमीटर के लिए एक स्वचालित सिग्नलिंग प्रक्रिया है, सिंगल लाइन पर डबल लाइन और पूर्ण ब्लॉक सिस्टम की व्यवस्था है।

1. **ईस्टर्न समर्पित भार यातायात मार्गः** यह पंजाब में साहनेवाल (लुधियाना) को पश्चिम बंगाल के दानकुनी से जोड़ता है, जिसकी लंबाई 1839 किमी है। इसे विश्व बैंक द्वारा वित्त पोषित किया जा रहा है और इसमें पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल राज्य शामिल हैं। इसमें कोयला खदानें, तापीय ऊर्जा प्लांट और उनके आसपास के औद्योगिक शहर होने के कारण इसके मार्ग आपस में जुड़े हैं। इसके मार्ग के प्रमुख शहर दानकुनी, गोमोह, सोननगर, मुगलसराय, कानपुर, खुर्जा, लुधियाना हैं।

2. **वेस्टर्न समर्पित भार यातायात मार्गः** यह रास्ते में सभी प्रमुख बंदरगाहों को कवर करते हुए, उत्तर प्रदेश के दादरी से मुंबई के जवाहरलाल नेहरू पोर्ट ट्रस्ट तक 1,500 किलोमीटर लंबा है। यह हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश राज्यों से होकर गुजरती है। इसे जापान इंटरनेशनल कोऑपरेशन एजेंसी द्वारा वित्त पोषित किया जा रहा है। इस कॉरिडोर की कुल लंबाई लगभग 1516 किमी है जो जवाहरलाल नेहरू पोर्ट ट्रस्ट–अहमदाबाद–पालनपुर–रेवाड़ी–तुगलकाबाद–दादरी शहरी केंद्रों को जोड़ती है।

इसके अलावा चार अन्य मार्ग, उत्तर–दक्षिण, पूर्व–पश्चिम, दक्षिण–दक्षिण और पूर्व–दक्षिण की निर्माण की योजना हैं (चित्र 13.3)। डीएफसी की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं :

- भीड़भाड़ कम करनाः यह भीड़–भाड़ के साथ यातायात और परिवहन दबाव को कम करके सुलभ एवं तीव्र परिवहन में मदद करता है।
- समयनिष्ठाः यात्री ट्रेनों को माल मार्गों से अलग करने से माल ढुलाई सेवाएं पहले की तुलना में ज्यादा समयनिष्ठ होगी जिससे माल और सेवाओं की बेहतर परिवहन सुविधा उपलब्ध होगी।
- क्षमता वृद्धिः डीएफसी माल ढुलाई की व्यवस्था में परिवर्तन होगी जो यात्री रेल के आवागमन से प्रभावित होती है। माल ढुलाई कम समय में अबाध गति से ले जाया जाएगा।
- व्यापार सृजनः डीएफसी अलग माल ढुलाई व्यवसाय उत्पन्न करने में सक्षम होगा क्योंकि उन्हें भारतीय रेलवे की तुलना में अधिक भार ढोने के लिए बनाया गया है।
- राजस्व सृजनः इन मार्गों से राजस्व और रोजगार का सृजन होगा। डीएफसी में निवेश से मार्ग के आसपास ढांचागत विकास जैसे संभार तंत्र आदि की अनुमति मिलेगी।

चित्र 13.3 :भारत के समर्पित भार यातायात मार्ग

बोध प्रश्न 3

समर्पित भार यातायात मार्ग क्या है?

13.5 रैपिड मास ट्रांसपोर्ट सिस्टम

तीव्र जन परिवहन प्रणाली और रैपिड मास ट्रांसपोर्ट सिस्टम (RMTS) पर्यावरणीय रूप से धारणीय और सुलभ परिवहन प्रणालियों जैसे व्यक्तिगत रैपिड ट्रांजिट, मेट्रो रेल, मोनोरेल, बस रैपिड ट्रांजिट सिस्टम आदि के उपयोग द्वारा आबादी या लोगो का आवागमन हैं। यह अधिक सुलभ, कुशल और लागत प्रभावी परिवहन है क्योंकि यह त्वरित गति से लोगों के आवागमन में मदद करता है। ये मार्ग नगरीय गतिशीलता के साधन हैं जो नगरों के समावेशी विकास में मदद कर सकते हैं। यह परिधीय क्षेत्रों या परिवहन प्रणाली के प्रभाव क्षेत्र को जोड़ता है। नगर या शहरी केंद्र आर्थिक क्षेत्र होते हैं, इनमे याम्योत्तर गमन प्रणाली में बड़े पैमाने पर निवेश की आवश्यकता होती है क्योंकि उनका क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर की विकास प्रक्रिया पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। भारत में, RMTS में निवेश काफी कम है, जिससे देश के सतत पर्यावरणीय और आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है।

रैपिड मास ट्रांजिट सिस्टम को निम्नलिखित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

- बस–वे और बस रैपिड ट्रांजिट सिस्टम (BRTS): ये बसों की आवाजाही के लिए समर्पित बस लेन हैं। यह बसवे का एक उन्नत रूप है जिसमें परिवहन के अन्य साधनों पर बसों को प्राथमिकता दी जाती है।
- लाइट रेल ट्रांजिट (LRT): LRT एक शहरी रेल ट्रांजिट सिस्टम है जो शहरी क्षेत्रों में मध्यम क्षमता के स्थानीय परिवहन पर केंद्रित है।

- ट्रामवेः यह कुछ शहरों में पर्यावरण अनुकूल और विश्वसनीय परिवहन साधन है, प्रायः मिश्रित यातायात स्थितियों में प्रयोग होता है। इसमें सड़क सुरक्षा और यात्रियों की सुरक्षा पर ध्यान दिया गया है।
- मेट्रो रेलः ये बहुत उच्च क्षमता वाली परिवहन प्रणालियाँ हैं जो एक महानगरीय क्षेत्र में विद्युत रूप से चलाई जाती हैं। मेट्रो रेल उँचाई पर या भूमिगत हो सकते है जो एक दिन में लगभग 10 से 40 लाख यात्रि यात्रा करते हैं। हालांकि, मेट्रो रेल में इसकी तुलना में उच्च रखरखाव लागत और कम क्षमता वाले मोनोरेल भी शामिल हैं।
- क्षेत्रीय रेलः यह शहरी क्षेत्र के परिधीय क्षेत्र को जोड़ती है। यह शहर के भीतर और महानगरीय क्षेत्र के बाहरी इलाके में यात्रियों को सेवा प्रदान करता है। यह छोटे पड़ावों के साथ लंबी दूरी तय करता है। क्षेत्रीय रेल की गति अन्य MRTS की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक होती है।

रैपिड मास ट्रांजिट सिस्टम के मुख्य लाभों में भीड़भाड़ में कमी, समय की बचत, लागत प्रभावी, आर्थिक और व्यवहार्य, कम पर्यावरणीय प्रभाव और सामाजिक प्रभाव शामिल हैं, जबकि उच्च लागत, श्रमिक हड़ताल इसके परिवहन में बाधा बन सकते हैं, सुरक्षा मुद्दा, रोग का तेजी से फैलना और दुर्घटनाओं से हताहत इसकी कमियाँ हैं।

बोध प्रश्न 4

रैपिड मास ट्रांजिट सिस्टम के क्या फायदे हैं?

13.6 नगरीय परिवहन

जैसा कि आप जानते हैं कि नगरीकरण बेहतर सुविधाएं प्रदान करता है। लेकिन साथ ही, इसके परिणामस्वरूप कई समस्याओं को भी देखा है। नगरीकरण प्रक्रिया में नगरों के कई मुद्दे विशेषकर परिवहन शामिल है। आबादी के अधिक प्रवास और नगरों में निवास के कारण परिवहन का महत्व अधिक हो जाता है जिससे सुलभ एवं कुशल नगरीय परिवहन सुविधाओं की मांग में वृद्धि होती है। नगरीय परिवहन जटिल है क्योंकि इसमें तरीके और बुनियादी ढांचे और विभिन्न प्रकार के यातायात का मिश्रण है। वस्तुओं और सेवाओं के उपभोग और उत्पादन, वाणिज्यिक गतिविधियों और अवकाश/सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए शहर और शहरी केंद्र आवश्यक हैं। हम नगरीय परिवहन की स्थानिक बाधाओं और इसकी चुनौतियों का अध्ययन करेंगे।

13.6.1 नगरीय परिवहन की स्थानिक बाधाएं

ऑटोमोबाइल से पूर्व युग में, लगभग 10% नगरीय भूमि परिवहन के लिए थी। तब आबादी द्वार प्रवास प्रारंभ हुआ और लोगों ने नगरीय परिवहन के बुनियादी ढांचे के वृद्धि में योगदान दिया। ट्रांजिट सिस्टम के प्रकार और मात्रा नगरों में भिन्न हो सकते हैं। नगरीय परिवहन की स्थानिक बाधाओं का प्रमुख घटक इस प्रकार हैः

1. **पैदल यात्री क्षेत्रः** नगर केंद्र में पैदल चलने का स्थान केंद्र से बाहर की अपेक्षा अधिक होता है।

2. **सड़कें और पार्किंग क्षेत्रः** इसमें चालित सड़क परिवहन और पार्किंग सड़क शामिल हैं। कई शहरों में, सड़कें और पार्किंग क्षेत्र के अन्तर्गत शहरी परिवहन क्षेत्र की कुल स्थान का 30 से 60% हिस्सा हैं।
3. **साइकिलिंग क्षेत्रः** साइकिलिंग क्षेत्र शहरी क्षेत्रों में पैदल यात्री और सड़क की जगह ग्रहण कर लेते हैं। साइकिल और पार्किंग की सुविधा के लिए अलग–अलग लेन बनाने के लिए कई कार्यान्वयन किए गए हैं।
4. **याम्योत्तर गमन प्रणालीः** नगरीय परिवहन प्रणाली की दक्षता ट्रांजिट प्रणाली की विविधता के कारण प्रभावित होती है। कई बुनियादी ढांचागत विकास, जैसे कि सबवे (भूमिगत पथ), ट्रामवे, रोड लेन आदि, व्यस्ततम समय में भीड़भाड़ कम करने के लिए किए गए हैं।
5. **परिवहन टर्मिनलः** यह बंदरगाहों, हवाई अड्डों, रेल यार्ड आदि जैसी टर्मिनल सुविधाओं के लिए आवंटित शहरी स्थान है। दुनिया भर में सीमाओं के खुलने के साथ, गतिशीलता कई गुना बढ़ गई है। वैश्वीकरण युग में माल और यात्रियों की गतिशीलता ने परिवहन भूमि के शहरी हिस्से को प्रभावित किया है।

13.6.2 नगरीय परिवहन चुनौतियां

अधिकांश शहरों में परिवहन सुविधाएं एक अनुपयुक्त तस्वीर पेश करती हैं क्योंकि वे विषम आर्थिक गतिविधियों में लगे हुए हैं। नगरीय क्षेत्र में जटिल परिवहन प्रणाली और आधारभूत संरचना होते हैं जो इसके विस्तार में एक मुख्य मुद्दा है। जटिलता के साथ कई अन्य समस्याएं भी आती हैं। नगरीय क्षेत्रों और इसके आबादी की जरूरतों को पूरा करने के लिए एक बेहतर सुविधाजनक और सुलभ नगरीय परिवहन प्रणाली होना चाहिए। कुछ नगरीय परिवहन चुनौतियां नीचे सूचीबद्ध की गई हैं:

- यातायात की भीड़ से दुर्घटनाएं हो सकती हैं।
- सड़कों पर अनियंत्रित हॉकिंग (फेरी,माल बेचना)।
- अवैध अतिक्रमण से सार्वजनिक स्थानों में कमी।
- वाहनों के अधिकता से पार्किंग की कठिनाई।
- सार्वजनिक परिवहन की अपर्याप्तता और आवागमन की लम्बी अवधि।
- पैदल यात्रा में कठिनाइयाँ।
- उच्च ऊर्जा खपत और पर्यावरण प्रदूषण।
- गैर–मोटर चालित परिवहन अवसंरचना।
- मोटरीकरण में वृद्धि और परिवहन के बुनियादी ढांचे की उच्च रखरखाव लागत।

बोध प्रश्न 5

किसी भी देश में आम / सामान्य नगरीय परिवहन चुनौतियां क्या हैं?

13.7 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा हैः

- परिवहन वस्तुओं और सेवाओं का एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवागमन है और यह किसी देश के सतत और कुशल आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- कई कारक संयुक्त रूप से एक क्षेत्र में परिवहन जाल के विकास को प्रभावित करते हैं।
- भारत में परिवहन के विभिन्न साधन सड़कपरिवहन, रेल परिवहन, वायु परिवहन और जल परिवहन हैं।
- सड़क मार्ग कम दूरी के परिवहन का सबसे सस्ता और सबसे तेज साधन है।
- रेलवे कम लागत पर लंबी दूरी के परिवहन का सबसे सस्ता और तेज साधन है।
- वायु परिवहन कम समय में दुनिया के सबसे दूरस्थ और दुर्गम हिस्सों को जोड़ता है। यह परिवहन का सबसे तेज और महंगा साधन है।
- जल परिवहन यात्रियों तथा कार्गो यातायात के परिवहन और छोटी और लंबी दूरी के लिए उपयुक्त साधन हैं। यह ईंधन कुशल होते है।
- समर्पित भार यातायात मार्ग उच्च गति और क्षमता के साथ माल ढुलाई के लिए हैं। यह माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर तीव्र गति से ले जाने में मदद करता है।
- भारत में नगरीय परिवहन प्रणाली के सामने कई चुनौतियाँ हैं।

13.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. परिवहन क्या है? भारत में परिवहन जाल के विकास की व्याख्या कीजिए।
2. भारत में परिवहन के विभिन्न साधन क्या हैं? उनमें से प्रत्येक के लाभ बताइए।
3. किसी भी क्षेत्र में स्थानिक बाधाएं और आम नगरीय परिवहन चुनौतियां क्या हैं?

13.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1. a) ऐतिहासिक, पर्यावरण, आर्थिक, भौतिक और राजनैतिक।

   b) यह कृषि और औद्योगिक क्षेत्र में बेहतर उत्पादन में मदद करता है, उत्पादन की लागत को कम करता है और व्यापार और पर्यटन को प्रोत्साहित करता है।
2. सड़क मार्ग, रेलवे, जलमार्ग और वायुमार्ग।
3. समर्पित भार यातायात मार्ग उच्च गति और क्षमता वाले रेलवे कॉरिडोर हैं जिन्हें माल ढुलाई के लिए डिजाइन किया गया है।
4. यह परिवहन को अधिक कुशल और लागत प्रभावी बनाता है।
5. यातायात की भीड़, सड़कों पर अनियंत्रित फेरी लगाना और अवैध अतिक्रमण आदि।

अंत में कुछ प्रश्न

1. भाग 13.2 का संदर्भ लें।
2. भाग 13.3 का संदर्भ लें।
3. भाग 13.6 का संदर्भ लें।

13.10 संदर्भ और अन्य पाठ्यसामग्री

1. Singh, Sanjay. (2012). *Urban transport in India: Issues, challenges, and the way forward*. European Transport - Trasporti Europei.

2. Dimitriou, H. (1993) *Urban Transport Planning, New York: Routledge*.

3. UN-HABITAT (2009) Planning Sustainable Cities. Global Report on Human Settlements 2009, United Nations Human Settlements Programme, London: Earthscan.

4. Khullar, D.R. (2014) *India: A Comprehensive Geography*. New Delhi: Kalyani Publishers.

5. Singh Jagdish (2003) *India: A Comprehensive & Systematic Geography*. Gorakhpur: Gyanodaya Prakashan.

6. Tiwari, R.C. (2007) *Geography of India*. Prayag Pustak Bhawan, Allahabad

7. Ahluwalia, I.J., et al. (2011). Report on Indian Urban Infrastructure and Services. Ministry of Urban Development, Government of India, New Delhi. http://niua.org/projects/hpec/finalreport-hpec.pdf

8. Ranjan.R., (2018). *Mass Rapid Transportation in India*. Background Paper for the Lead-up Event on 'Mass Rapid Transport Systems for Urban Areas: Opportunities and Challenges'. Extracted from (http://www.ris.org.in/sites/default/files/AIIB%20MRTS%20Meeting%20Background%20Note.pdf)

9. https://transportgeography.org/contents/chapter8/urban-transport-challenges/

10. https://indianrailways.gov.in/

11. Ministry of Road Transport and Highways. Basic Roads Statistics of India (2016-2017). Extracted from (https://morth.nic.in/sites/default/files/Basic%20Road%20Statics%20of%20India%20CTCcompressed1.pdf)

शब्दावली

उद्योग : उद्योग कच्चे माल के रूपांतरण और कारखानों में तैयार माल के निर्माण से संबंधित है।

औद्योगिक गलियारा : यह एक गलियारा है जो बहु–मोडल परिवहन सेवाओं वाले राज्यों से होकर गुजरता है।

सहकारी क्षेत्र : सहकारी उद्योग कच्चे माल के उत्पादकों और आपूर्तिकर्ताओं या श्रमिकों द्वारा संचालित और स्वमित्व वाले होते हैं।

खनिज आधारित उद्योग : खनिज अयस्क का उपयोग करने वाले उद्योग कच्चे माल के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

समुद्री आधारित उद्योग : उद्योग जो समुद्र या महासागर से कच्चे माल पर आधारित होते हैं।

वन आधारित उद्योग : इन उद्योगों में कच्चा माल वन उत्पादों से प्राप्त होता है।

परिवहन : परिवहन, माल या उत्पाद, जानवरों या मानव के एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवागमन या आवाजाही है।

रैपिड मास ट्रांजिट : यह शहरी परिवहन की एक प्रणाली है जिसमे बड़ी संख्या में यात्री एक स्थान से दूसरे स्थान पर शीघ्रता से जा सकते है।

डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर : यह एक तीव्र गति और उच्च क्षमता वाला रेलवे कॉरिडोर है जो विशेष रूप से माल ढुलाई के लिए प्रयोग में आता है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड

4

जनसंख्या एवं बस्तीयाँ/अधिवास

इकाई 14
जनसंख्या

इकाई 15
बस्तीयाँ/अधिवास

शब्दावली

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड 1 भौतिक विन्यास

इकाई 1 उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

इकाई 2 भूआकृति विज्ञान

इकाई 3 अपवाह तंत्र

इकाई 4 जलवायु

इकाई 5 मृदा एवं वनस्पति

खंड 2 संसाधनों का आधार

इकाई 6 भूमि संसाधन

इकाई 7 जल संसाधन

इकाई 8 वन संसाधन

इकाई 9 खनिज संसाधन

इकाई 10 ऊर्जा संसाधन

खंड 3 अर्थव्यवस्था

इकाई 11 कृषि

इकाई 12 उद्योग

इकाई 13 परिवहन

खंड 4 जनसंख्या एवं बस्तीयाँ/अधिवास

इकाई 14 जनसंख्या

इकाई 15 बस्तीयाँ/अधिवास

खंड 5 भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

इकाई 16 भूआकृतिक उपगमन

इकाई 17 सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 18 आर्थिक उपगमन

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 4: जनसंख्या एवं बस्तीयाँ/अधिवास

इस पाठ्यक्रम के पहले तीन खंडों में, आपने सीखा कि भूगोल ज्ञान का एक बहुआयामी क्षेत्र है जो पृथ्वी की सतह पर भौतिक और मानवीय विशेषताओं से जुड़े असंख्य घटकों से संबंधित है। भूगोल की एक शाखा भौतिक विशेषताओं से संबंधित है और एक अन्य मानवीय विशेषताओं से संबंधित है। इंसान अपने जीवन और आजीविका के लिए संसाधनों के उत्पादक और उपभोक्ता दोनों हैं। उनकी संख्या और विशेषताओं को मानव–संसाधन संबंधों का भौगोलिक क्षेत्र में आकलन करने के लिए देखने की आवश्यकता है, जो स्थान और समय के अनुसार बदलता रहता है। तीन महत्वपूर्ण कारक अर्थात् जन्म, मृत्यु और प्रवास मानव जनसंख्या में परिवर्तन लाते हैं। जनसंख्या में प्राकृतिक वृद्धि जन्म दर और मृत्यु दर के बीच अंतर को दर्शाती है। मनुष्य ने कुछ धार्मिक प्रथाओं को विकसित किया है और विभिन्न भाषाओं को अलग–अलग रूप में बोलते हैं जो एक भौगोलिक क्षेत्र में एक प्राकृतिक सरिता या नदी के मार्ग की छोटी सीमाओं के पार भी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न होती है।

जैसाकि आप जानते हैं कि भोजन और वस्त्र के अलावा, आश्रय मनुष्यों और उनके समुदायों की तीसरी सबसे महत्वपूर्ण बुनियादी आवश्यकता है। मानव सभ्यता के आरंभिक भागों में, मनुष्य जंगलों और प्राकृतिक गुफाओं में रहने के लिए अभ्यस्त था। समय बीतने के साथ–साथ, जब मनुष्य ने पौधों और जानवरों को पालतू बनाया, तो वे फूस की झोपड़ियों और छोटे–छोटे अल्पविकसित घरों में रहने लगे। बाद में, घरों एवं इमारतों के आकार और डिजाइन में ज्ञान, पूंजी और तकनीकी इनपुट में विस्तार के साथ एक महत्वपूर्ण परिवर्तन देखा गया। इसे बस्ती के रूप में जाना जाने लगा जहां मनुष्य सामाजिक समूहों और समुदायों में रहते हैं। अधिवास रहने की जगह के रूप में निश्चित भौगोलिक निर्देशांक के साथ एक स्थायी निवास को दर्शाता है। इसमें ग्रामीण और शहरी दोनों अधिवास अथवा बस्तियां शामिल होती हैं। अधिवास का आकार भी एक छोटे से उपग्राम अथवा पुरवा से महानगरीय शहर के आकार में भिन्न होता है। औद्योगीकरण और आर्थिक उदारीकरण के परिणाम के तौर पर, भारत में शहरीकरण की दर में पिछले दो दशकों से तीव्र गति से प्रगति हो रही है।

खंड 4 में, हम आपको जनसंख्या और अधिवासों से परिचित कराएंगे जो दो इकाइयों में विस्तृत रूप से वर्णित हैं।

इकाई 14: जनसंख्या

इकाई 14 को जनसंख्या के अध्ययन के लिए समर्पित किया गया है। यह आपको मानव जनसंख्या के अध्ययन में प्रयुक्त विभिन्न संकल्पनाओं के बारे में एक विचार प्रदान करेगा। आप जनसंख्या के आकार और वृद्धि के साथ–साथ जनसंख्या के वितरण और घनत्व के बारे में जानेंगे। आप आगे भारत की आयु और लिंगानुपात से संबंधित कई पहलुओं को जानेंगे। आप जातियों और जनजातियों के साथ–साथ, भारत की धार्मिक और भाषाई संरचना के बारे में भी सीखेंगे। यह इकाई आपको भारत की जनसंख्या के असंख्य पहलुओं और राष्ट्र के कल्याण के लिए मानव संसाधन के संदर्भ में उनके महत्व को समझने में मदद करेगी।

इकाई 15: बस्तीयाँ/अधिवास

इकाई 15 को बस्तियों के अध्ययन के लिए समर्पित किया गया है। शुरुआत में, आपको भारत में बस्तियों की संकल्पनाओं और वर्गीकरण योजनाओं के बारे में एक विचार मिलेगा। आप भारत की ग्रामीण और शहरी दोनों बस्तियों की विशेषताओं के बारे में सीखेंगे। आप भारत के शहरीकरण की प्रक्रिया के बारे में भी सीखेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप इस योग्य हो जाएँगे कि भारत के शहरीकरण की प्रक्रिया के बारे में आप प्रमुख विशेषताओं के साथ उनके महत्व को व्यापक रूप से समझेंगे।

हम आशा करते हैं कि खंड 4 का अध्ययन करने के बाद, आप जनसंख्या और बस्तियों को एक बेहतर और अधिक तार्किक तरीके से समझने में सक्षम होंगे।

इस प्रयास में हमारी शुभकामनाएं हमेशा आपके साथ हैं।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 14

जनसँख्या

संरचना

14.1 प्रस्तावना
अपेक्षित सीखने के परिणाम
14.2 आकार और वृद्धि
14.3 वितरण
14.4 घनत्व
14.5 आयु और लिंग संरचना
14.6 धार्मिक और भाषाई संरचना
14.7 जाति और जनजाति
14.8 सारांश
14.9 अंतिम प्रश्न
14.10 उत्तर
14.11 संदर्भ/अन्य पाठ्य सामग्री

14.1 प्रस्तावना

भूगोल मानव के निवास के रूप में पृथ्वी का वर्णन है। इस प्रकार, मानव का अध्ययन भूगोल के विषय का एक अनिवार्य हिस्सा बन जाता है। इसे देखते हुए जी.टी. ट्रीवार्था ने 1953 में एसोसिएशन ऑफ अमेरिकन भूगोलवेत्ता के अपने अध्यक्षीय भाषण में भूगोल की व्यवस्थित शाखा के एक उपखंड के रूप में जनसंख्या भूगोल के विकास के लिए अनुरोध किया। 1954 में उन्होंने विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में स्नातक स्तर पर जनसंख्या भूगोल पर एक पूर्ण पाठ्यक्रम की पेशकश की। भारत में, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ में स्थित भूगोल विभाग, प्रोफेसर जी. एस. गोसल के मार्गदर्शन और नेतृत्व में साठ के दशक की शुरुआत में स्नातकोत्तर स्तर पर जनसंख्या भूगोल में शिक्षण और अनुसंधान शुरू करने वाला पहला विश्वविद्यालय था। प्रो. जी.एस. गोसल, प्रो. जी.टी. ट्रीवार्था के प्रथम छात्र थे। जिन्होंने अपनी पी.एच.डी. जनसंख्या भूगोल में की थी।

मनुष्य संसाधनों का उपभोक्ता और उत्पादक है। इस प्रकार, मानव–संसाधन संबंध का आकलन करने के लिए उनकी संख्या और विशेषताओं का अध्ययन करना बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। मानव जनसंख्या में परिवर्तन मुख्यतः तीन कारकों जन्म, मृत्यु और प्रवास से प्रभावित होता है। जन्म दर और मृत्यु दर के बीच के अंतर को जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि के रूप में जाना जाता है। जनसंख्या आँकड़ों के स्रोत उपयोग के आधार पर भिन्न होते हैं, लेकिन आमतौर पर उपयोग किए जाने वाले कुछ आँकड़े जनगणना, सर्वेक्षण, पंजीकरण, प्रवास रिपोर्ट, अनुमान और प्रक्षेपण हैं। विश्व में बड़ी संख्या में देशों ने नियमित रूप से जनगणना को अपनाया है जो जनसंख्या आँकड़ा प्रदान करता है। संयुक्त राष्ट्र भी विभिन्न जनसांख्यिकीय विशेषताओं के लिए जनसंख्या आँकड़ा उत्पन्न करता है। इस इकाई में, हम आपको भारत की जनसंख्या के आकार और वृद्धि, वितरण, घनत्व, आयु और लिंग संरचना, धार्मिक और भाषाई संरचना, जाति

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

और जनजाति जैसे पहलुओं से परिचित कराएंगे, जिन्हें खंड 14.2 से 14.7 तक विस्तार से समझाया गया है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आपः

- उन्नीसवीं सदी की शुरुआत से जनसंख्या के आकार और वृद्धि को समझ सकेंगे;
- जनसंख्या के वितरण और घनत्व प्रतिरूप को परिभाषित कर सकेंगे;
- भारत की आयु और लिंग संरचना की व्याख्या कर सकेंगे;
- धार्मिक और भाषाई संरचना पर चर्चा कर सकेंगे; तथा
- भारत की जातियों और जनजातियों का वर्णन कर सकेंगे।

4.2 आकार और वृद्धि

2011 में 1210.08 मिलियन लोगों के साथ, भारत विश्व का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश है। यहाँ विश्व की आबादी का 17 प्रतिशत (%) से अधिक है और विश्व के सतही क्षेत्र का केवल 2.4% है। भारत की जनसंख्या संयुक्त राज्य अमेरिका, इंडोनेशिया, ब्राजील, पाकिस्तान, बांग्लादेश और जापान की संयुक्त जनसंख्या से थोड़ी कम थी। 135.79 मिलियन वर्ग किलोमीटर (वर्ग कि.मी.) के विश्व के सतही क्षेत्र का भारत में 2. 4% छोटा सा हिस्सा है। दूसरी ओर, यह दुनिया की आबादी के 17.5% को आश्रय देता है और उसका भरण–पोषण करता है। इसके विपरीत, संयुक्त राज्य अमेरिका में विश्व की आबादी का केवल 4.5% के साथ सतही क्षेत्र का 7.2% हिस्सा है। भारत की कुल जनसंख्या का 51% से थोड़ा अधिक पुरुष और 49% महिलाएं हैं। इस आबादी का एक बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों (69%) में जबकि 31% शहरी क्षेत्रों में रह रहे थे।

जनसंख्या वृद्धि एक विशेष क्षेत्र में दो समय के बीच रहने वाले लोगों की संख्या में परिवर्तन है। इसकी दर प्रतिशत में व्यक्त की जाती है। जनसंख्या वृद्धि के दो घटक हैं जिनके नाम हैं; प्राकृतिक और जनित। जबकि प्राकृतिक विकास का विश्लेषण अशोधित जन्म और मृत्यु दर का आकलन करके किया जाता है, जनित घटकों को किसी भी क्षेत्र में लोगों के अन्तर्गामी और बहिर्गामी आवागमन की मात्रा द्वारा समझाया जाता है। जनसंख्या वृद्धि को पूर्ण संख्या और प्रतिशत में मापा जाता है। गणना के लिए बुनियादी आँकड़ा जनगणना से लिया गया है। इसलिए, जनसंख्या वृद्धि वास्तव में क्षेत्र की जनसंख्या में अंतर–जनगणना परिवर्तन है।

जनसंख्या की वृद्धि इसके तीन घटकों का कार्य है। ये प्रजनन क्षमता, मृत्यु दर और प्रवासन हैं। प्रजनन क्षमता जन्म की घटना को संदर्भित करती है, आमतौर पर प्रति हजार जनसंख्या पर गणना की जाती है। मृत्यु दर को जन्म के बाद किसी भी समय जीवन के सभी साक्ष्यों के स्थायी रूप से गायब होने के रूप में परिभाषित किया गया है (संयुक्त राष्ट्र, 1953, पृष्ठ 48)। प्रवासन से तात्पर्य व्यक्ति के निवास में स्थायी या अर्ध–स्थायी परिवर्तन से है, जिसमें व्यक्ति के सामुदायिक संबद्धता का पूर्ण परिवर्तन और पुनः समायोजन शामिल है। जनसंख्या वृद्धि की गणना = प्रजनन शक्ति – मृत्यु दर + (आप्रवास–उत्प्रवास) के रूप में की जाती है। जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि की गणना प्रजनन शक्ति–मृत्यु दर के रूप में की जाती है। प्रतिशत या वृद्धि दर में

जनसंख्या वृद्धि की गणना प्राप्त मूल्य को मध्य–अवधि की जनसंख्या से विभाजित करके और इसे 100 से गुणा करके की जाती है। चूंकि, मध्य–अवधि की जनसंख्या आमतौर पर उपलब्ध नहीं होती है; इसलिए, प्रारंभिक बिंदु पर जनसंख्या के वास्तविक आकार का उपयोग किया जाता है। इसलिए, जनसंख्या वृद्धि की गणना दो जनगणनाओं की जनसंख्या के बीच अंतर के रूप में भी की जा सकती है।

जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक

जनसंख्या परिवर्तन लाने के लिए प्रजनन क्षमता, मृत्यु दर और प्रवास को प्रभावित करने वाले कारक जिम्मेदार हैं। ये कारक जनसांख्यिकीय संक्रमण के चरण को परिभाषित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन कारकों को चार व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। जैविक, सामाजिक, आर्थिक और जनसांख्यिकीय निर्धारक।

जैविक निर्धारकः नस्ल के कारक, महिलाओं में प्रजनन क्षमता और पुरुषों में आनुवंशिक प्रजनन क्षमता, प्रजनन क्षमता का निर्धारण करने वाले सबसे प्रमाणित जैविक कारक हैं। विभिन्न जातियों की प्रजनन दर अलग–अलग होती है और वे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होती हैं। सामान्य स्वास्थ्य स्थितियां भी प्रजनन क्षमता और मृत्यु दर को परिभाषित करती हैं। जहां स्वस्थ और स्वच्छ समाज में प्रजनन क्षमता और मृत्यु दर कम है, वहीं दूसरी तरफ प्रजनन और मृत्यु दर दोनों की उच्च दर है। बेहतर स्वास्थ्य स्थितियों में सुधार के साथ, लोग छोटे परिवार के मानदंडों को अपनाते हैं।

सामाजिक निर्धारकः ये सबसे अधिक प्रभावित करने वाले होते हैं और इसमें कई तरह के कारक शामिल होते हैं। प्रजनन क्षमता आज भारत में जनसंख्या परिवर्तन का मुख्य कारण है। जनसंख्या परिवर्तन धार्मिक पृष्ठभूमि द्वारा निर्धारित किया जा सकता है – प्रत्येक धर्म के जनसंख्या नियंत्रण और प्रवास की स्वतंत्रता के अपने मानदंड हैं; जातीय संरचना – छोटे समूहों में आमतौर पर उनकी संख्या बढ़ाने के लिए उच्च प्रजनन स्तर होता है; शिक्षा का स्तर – एक माँ जितनी अधिक शिक्षित होगी, उसके बच्चे उतने ही कम होंगे, उच्च शिक्षा का स्तर भी बेहतर अवसरों के लिए प्रवास करने की प्रवृत्ति विकसित करता है; विवाह की आयु – विवाह की आयु जितनी अधिक होगी, बच्चों की संख्या उतनी ही कम होगी; वैवाहिक और यौन जीवन से संबंधित परंपराएं और रीति–रिवाज; महिलाओं को दिया गया स्थान और पुत्र की इच्छा; परिवार नियोजन के उपायों और गर्भपात के बारे में सरकारी नीतियों, जनसंख्या पुनर्वितरण के बारे में पहल, जनसंख्या नीतियों आदि के प्रति दृष्टिकोण। गतिशीलता से संबंधित अन्य सामाजिक कारक सामाजिक–आर्थिक स्थिति है – निम्न सामाजिक स्थिति वाले लोग सबसे अधिक गतिशील होते हैं क्योंकि उनके पास उन्हें एक स्थान पर बांधने की कोई संपत्ति नहीं होती है। महिलाओं की स्थिति, शिशु हत्या की प्रधानता और चिकित्सा सुविधाओं की उपलब्धता, आवास की सुविधाएं और स्थितियां, स्वच्छता, पोषण, शिक्षा और पारंपरिक जीवन शैली मृत्यु दर को काफी प्रभावित करती है।

आर्थिक निर्धारकः जनसंख्या की आय का स्तर भी प्रजनन क्षमता और मृत्यु दर का निर्धारण कर सकता है। अमीर और सबसे महत्वपूर्ण मध्यम वर्ग परिवार के आकार पर सख्त नियंत्रण रखता है। वे निम्न मृत्यु दर भी दिखाते हैं। जीवन स्तर भी प्रजनन दर को परिभाषित करता है; गरीब लोगों की प्रजनन दर अधिक होती है। आहार की आदतें, प्रोटीन का सेवन भी प्रजनन क्षमता को नियंत्रित करता है, उच्च प्रोटीन सेवन वाले क्षेत्रों में प्रजनन क्षमता कम होती है। हालांकि, जब चिकित्सा सुविधाएं सार्वभौमिक रूप से

उपलब्ध होती हैं तो मृत्यु दर में असमानता काफी कम हो जाती है। एक व्यक्ति बेहतर आर्थिक स्थिरता के लिए प्रवास करता है; इसलिए वह उच्च शहरी–औद्योगिक अर्थव्यवस्था के क्षेत्रों और जहां बेहतर और बड़ी कृषि भूमि उपलब्ध है, की ओर बढ़ता है।

जनसांख्यिकीय निर्धारक: प्रजनन आयु वर्ग में अधिक जनसंख्या, विवाह के समय कम आयु और महिलाओं की कमी, शहरी जीवन और अधिक संख्या में कामकाजी महिलाओं जैसे कारक किसी क्षेत्र की प्रजनन दर को प्रभावित करते हैं। युवा जनसंख्या का अनुपात जितना अधिक होगा, गतिशीलता की प्रवृत्ति उतनी ही अधिक होगी। भीड़–भाड़ वाले पिछड़े क्षेत्रों में उच्च प्रवासन और उच्च प्रजनन दर होती है। अधिक संख्या में मध्यम आयु वर्ग और वृद्धों के साथ आयु–संरचनाओं में उच्च मृत्यु दर दिखाई देती है। कम विकसित देशों में कुपोषण और कम चिकित्सा सुविधाओं से पीड़ित लोगों में महिला मृत्यु दर अधिक है। शहरी विकास के विभिन्न चरण मृत्यु दर के विभिन्न प्रतिरूप दिखाते हैं।

तालिका 14.1: भारत, जनसंख्या वृद्धि 1901–2011

जनगणना वर्ष	जनसंख्या (लाख में)	दशकीय वृद्धि दर (%)	औसत वार्षिक वृद्धि दर (%)	प्रगतिशील वृद्धि दर 1901 के ऊपर (%)
1901	238.39	-	-	-
1911	252.09	5.75	0.56	5.75
1921	251.32	-0.31	-0.03	5.42
1931	278.97	11.00	1.04	17.02
1941	318.66	14.22	1.33	33.67
1951	361.09	13.31	1.25	51.47
1961	439.23	21.64	1.96	84.25
1971	548.15	24.80	2.22	129.94
1981	683.32	24.66	2.20	186.64
1991	846.42	23.87	2.14	255.05
2001	1028.73	21.54	1.95	331.52
2011*	1210.08	17.70	1.63	407.64

स्रोत: 1. भारत की जनगणना, अस्थायी जनसंख्या योग, पृष्ठ 41
2. भारत की जनगणना से गणना की गई, प्राथमिक जनसंख्या सार, 2011, आनलाईन उपलब्ध **www.censusindia.gov.in/2011**

भारत में जनसंख्या वृद्धि (1901–2011)

भारत में जनसंख्या वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि के विभिन्न चरणों से गुजरी है। चीन के 1.3% के मुकाबले औसतन जनसंख्या की वृद्धि दर 1.64% प्रति वर्ष रही है। किसी देश की जनसंख्या यदि 2% प्रति वर्ष की दर से बढ़ रही है, तो लगभग 35 वर्षों की अवधि में अपने आप दोगुनी हो जाती है। भारत की जनसंख्या 1951 और 1986 के बीच 361 मिलियन से बढ़कर 763 मिलियन हो गई है (चौरसिया और गुलाटी, 2008, पृष्ठ 1)। भारत में जनसंख्या की दशकीय और वार्षिक वृद्धि दर बहुत अधिक है और समय के साथ लगातार बढ़ रही है। भारत की जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर 1.64% (2011) है।

पिछली एक शताब्दी में भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर वार्षिक जन्म दर और मृत्यु दर और प्रवास की दर के कारण हुई है और इस तरह विभिन्न प्रवृत्तियों को दर्शाती है।

भारत की जनसंख्या निरंतर गति से बढ़ रही है। तालिका 14.1 से पता चलता है कि 2011 की जनसंख्या देश की जनसंख्या जो 20वीं शताब्दी की शुरुआत में थी इससे पांच गुना अधिक है। जवाहरलाल नेहरू – पहले प्रधान मंत्री – को अक्सर यह कहते हुए सुना जाता था कि 'भारत ... (होगा) ... और अधिक उन्नत राष्ट्र होता यदि इसकी जनसंख्या इसके वास्तविक आकार से लगभग आधी होती' (डायसन, 2018, पृष्ठ 171)।

चित्र 14.1 से पता चलता है कि 1951 तक जनसंख्या की वृद्धि कम थी, 1961 के बाद जनसंख्या तीव्र दर से बढ़ने लगी। 1961 से 2001 तक, जनसंख्या वृद्धि को दर्शाने वाला रेखाचित्र एक सीधी ऊपर की ओर जाने वाली रेखा है जिसका अर्थ है जनसंख्या में तीव्र वृद्धि। 2011 में, एक मामूली गिरावट देखी गई है जिसका अर्थ है विकास दर में कमी।

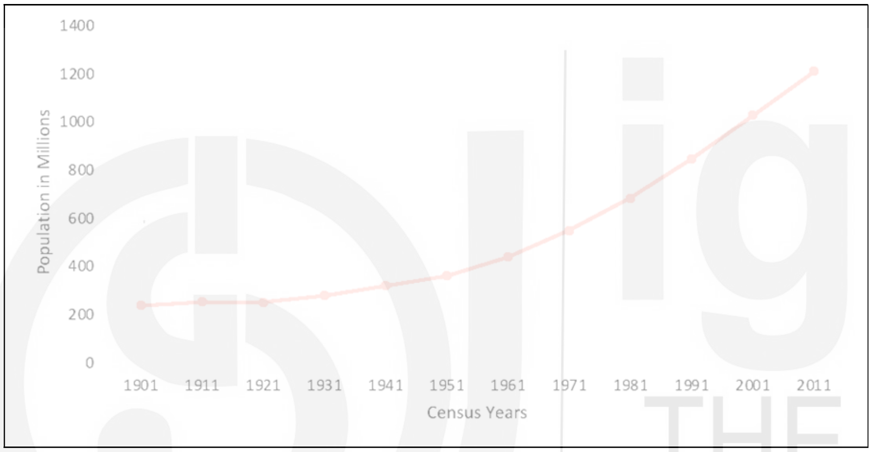

चित्र 14.1: भारत, जनसंख्या वृद्धि, 1901–2011

1901 से 2011 तक भारत के जनसांख्यिकीय इतिहास को तीन अलग–अलग अवधियों में विभाजित किया जा सकता है। स्थिर जनसंख्या की अवधि (1901–21), लगातार बढ़ती जनसंख्या (1921–1971), और तेजी से बढ़ती जनसंख्या (1971–2011)।

स्थिर जनसंख्या वृद्धि की अवधि (1901–1921)

20वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों अर्थात 1901 से 1921 तक को स्थिर जनसंख्या की अवधि के रूप में मान्यता दी गई है। इस अवधि के दौरान, भारत की जनसंख्या 23.8 करोड़ से बढ़कर 251 मिलियन हो गई। यह वह दौर था जब जन्म दर और मृत्यु दर बहुत अधिक थी। जन्म दर और मृत्यु दर दोनों ही 40 प्रति हजार से काफी ऊपर थे, जिसने एक दूसरे को रद्द कर दिया और परिणामस्वरूप जनसंख्या में बहुत कम वृद्धि हुई (तालिका 14.2)।

तालिका 14.2: भारतः प्राकृतिक वृद्धि दर, 1911–2011

जनगणना वर्ष	जन्म दर प्रति हज़ार	मृत्यु दर प्रति हज़ार	प्राकृतिक वृद्धि की दर
1911	49	43	6
1921	48	47	1

1931	46	36	10
1941	45	31	14
1951	40	27	13
1961	42	23	19
1971	37	15	23
1981	34	12	22
1991	31	11	20
2001	25	8	17
2011	22	7	15

स्त्रोतः 1. भारत की जनगणना, जनसंख्या सांख्यिकीय पुस्तिका, 1988 तालिका 35 पृष्ठ 109

2. चांदना. आर.सी., जनसंख्या भूगोलः अवधारणा, निर्धारक एवं प्रतिरूप 2014, तालिका 28, पृष्ठ 238

नोटः जन्म एवं मृत्यु दर को पूर्ण (अंकों में) लिया गया है।

उच्च मृत्यु दर सूखे और अकाल के साथ बार–बार होने वाले हैजा, चेचक, प्लेग, बुखार, पेचिश और डायरिया के कारण हुई। 1901–11 के दशक में व्यापक प्लेग के कारण जनसंख्या पिछले दशकों की तुलना में धीमी गति से बढ़ी। 1911–21 का दशक देश में जनसंख्या वृद्धि के लिए सबसे खराब दशक था। जीवन प्रत्याशा औसतन केवल 22 वर्ष थी। यह 1918–19 में इन्फ्लूएंजा महामारी या स्पेनिश फ्लू का परिणाम था (डायसन, 2018, पृष्ठ 125–126)।

लगातार बढ़ती जनसंख्या की अवधि (1921–1971)

वर्ष 1921 को एक महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय विभाजक माना जाता है क्योंकि 1921 के बाद देश की जनसंख्या में लगातार वृद्धि हुई। 1921–71 की अवधि के दौरान देश की जनसंख्या 251 मिलियन से बढ़कर 548 मिलियन हो गई। 1921 से 1941 के बीच जनसंख्या में 1.2% की औसत वार्षिक दर से वृद्धि हुई। 1941 से 1951 के दौरान, जनसंख्या वृद्धि दर 1.2% के करीब रही लेकिन फिर 1960 और 1970 में विकास दर तेजी से बढ़कर 2% प्रति वर्ष हो गई। विकास दर में यह अचानक वृद्धि मृत्यु दर में गिरावट और जीवन प्रत्याशा में वृद्धि का परिणाम है। मृत्यु दर में कमी मुख्य रूप से प्लेग, हैजा, चेचक, इन्फ्लूएंजा आदि जैसी व्यापक महामारियों पर नियंत्रण के कारण थी। इसी अवधि के दौरान भारत ने जनसांख्यिकीय संक्रमण के दूसरे चरण में प्रवेश करना शुरू किया।

तेजी से बढ़ती जनसंख्या की अवधि (1971–2011)

जनसंख्या तेजी से बढ़ी और 1971 से 2011 के बीच 548 मिलियन से बढ़कर 1210 मिलियन हो गई। इसमें लगभग 2% की वृद्धि दर के साथ 662 मिलियन की वृद्धि देखी गई। इसका कारण यह था कि जन्म दर और मृत्यु दर में समान संख्या में गिरावट आई और इस प्रकार वृद्धि दर अपरिवर्तित रही (तालिका 14.2)। 1971 से 1991 के दशक के दौरान वृद्धि की प्राकृतिक दर बीस की संख्या में बनी रही। 1991 के बाद जन्म दर और मृत्यु दर में पिछले वर्षो की तुलना में इतनी अधिक गिरावट आई है कि वृद्धि की प्राकृतिक दर 20 से नीचे गिर गई और 2011 में यह और गिरकर 15 प्रति हजार हो गई। 1991 में दशकीय प्रतिशत वृद्धि दर में गिरावट के कुछ संकेत दिखने लगे थे। 2001 और 2011 में दशकीय प्रतिशत वृद्धि दर में और गिरावट आई। 2011 में, यह 20% से

नीचे आ गई लेकिन जनसंख्या अभी भी बढ़ रही है। यह वृद्धि जनसंख्या की गति के कारण है।

जनसंख्या गति तब होती है जब किसी देश की प्रजनन दर प्रतिस्थापन स्तर यानी प्रति महिला 2.1 बच्चे तक या उससे कम हो जाती है, लेकिन कम आयु वर्ग में जनसंख्या के बड़े अनुपात के कारण जनसंख्या संख्या बढ़ती जा रही है। चूंकि बड़ी संख्या में युवा प्रजनन आयु वर्ग में प्रवेश करेंगे, उनके अपने बच्चे होंगे। नतीजतन, प्रजनन दर प्रतिस्थापन स्तर से नीचे होने के बावजूद, बच्चों को जन्म देने वाली महिलाओं की संख्या कुल मौतों से अधिक होगी और जनसंख्या में वृद्धि जारी रहेगी। हालाँकि, जनसंख्या की वृद्धि दर देश में अभी भी अधिक है, और विश्व विकास रिपोर्ट द्वारा यह अनुमान लगाया गया है कि 2025 तक भारत की जनसंख्या 1,350 मिलियन तक पहुंच जाएगी। अब तक किया गया विश्लेषण औसत विकास दर को दर्शाता है, लेकिन देश में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में विकास दर में भी व्यापक भिन्नता है जिसकी चर्चा नीचे की गई है।

जनसंख्या वृद्धि में क्षेत्रीय भिन्नता

भारतीय राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में 2001–2011 के दौरान जनसंख्या की वृद्धि दर बहुत स्पष्ट प्रतिरूप दिखाती है। देश में कुल मिलाकर 17.64% की दशकीय वृद्धि दर दर्ज की गई। केरल, गोवा, आंध्र प्रदेश, सिक्किम, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, त्रिपुरा, तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र, असम और चंडीगढ़ जैसे राज्यों ने राष्ट्रीय औसत से कम विकास दर प्रदर्शित की है। केरल ने न केवल राज्यों के इस समूह में बल्कि पूरे देश में 4.86% की न्यूनतम विकास दर दर्ज की (तालिका 14.3) है।

तीन केंद्र शासित प्रदेशों पुडुचेरी, दादरा और नगर हवेली और दमन और दीव ने 25% से अधिक की जनसंख्या वृद्धि दर की सूचना दी। केवल एक राज्य नागालैंड ने नकारात्मक विकास दर दिखाई। इसे म्यांमार से नागाओं के अवैध प्रवास और पिछली जनगणना के दशकों में बांग्लादेशी अवैध प्रवासियों और 2011 की जनगणना या पहले की गलत रिपोर्टिंग के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। नागालैंड सरकार के अनुसार, 1991 और 2001 की पिछली जनगणना के आँकड़ों ने जनसंख्या के आँकड़ों को बढ़ा दिया था, जिसे ग्रामीणों और जनसंख्या गणनाकर्ताओं ने अपने गांवों के लिए अधिक विकास निधि प्राप्त करने के लिए रिपोर्ट किया था। हालांकि, इन दावों की पुष्टि नहीं हुई है। अवैध अप्रवास या बढ़ी हुई आबादी के आँकड़ों के दावे का समर्थन करने के लिए कोई आँकड़ा या आधिकारिक दस्तावेज नहीं है।

तालिका 14.3: भारत की जनसंख्या वृद्धि

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	वृद्धि दर (2001–2011)
दादर एवं नगर हवेली	55.50
दमन एवं दीव	53.54
मेघालय	27.82
पुदुचेरी	27.72
अरूणाचल प्रदेश	25.92
बिहार	25.07

जम्मू एवं कश्मीर	23.71
मिज़ोरम	22.78
छतीसगढ़	22.59
झारखंड	22.34
राजस्थान	21.44
दिल्ली	20.96
मध्य प्रदेश	20.30
उत्तर प्रदेश	20.09
हरियाणा	19.90
गुजरात	19.17
उत्तराखंड	19.17
मणिपुर	18.65
चंडीगढ़	17.10
असम	16.93
महाराष्ट्र	15.99
कर्नाटक	15.67
तमिल नाडु	15.60
त्रिपुरा	14.75
उड़ीसा	13.97
पश्चिम बंगाल	13.93
पंजाब	13.73
हिमाचल प्रदेश	12.81
सिक्किम	12.36
आंध्र प्रदेश	11.10
गोआ	8.17
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	6.68
लक्षद्वीप	6.23
केरल	4.86
नागालैंड	-0.47
भारत	**17.64**

स्त्रोतः भारत की जनगणना 2001–2011

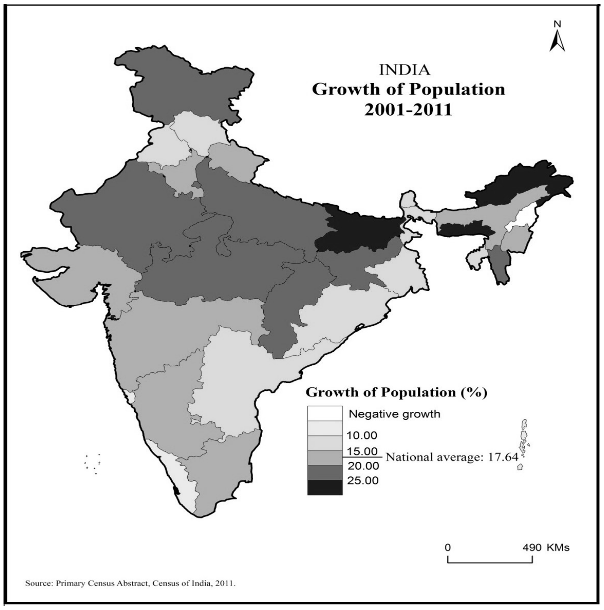

चित्र 14.2: भारत, जनसंख्या वृद्धि

उत्तर में पश्चिम से पूर्व की ओर और देश के उत्तर मध्य भागों में कई राज्यों की एक सतत पेटी में दक्षिणी राज्यों की तुलना में अपेक्षाकृत उच्च विकास दर है। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखंड, मेघालय, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश के इस क्षेत्र में विकास दर औसतन 20–25% के बीच रही। सिक्किम, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश के पूर्व में एक और निरंतर पेटी में कम विकास दर दर्शाया गया है (चित्र 14.2)।

14.3 वितरण

मनुष्य का पृथ्वी की सतह के केवल पाँच प्रतिशत हिस्से पर कब्जा है क्योंकि महासागर, रेगिस्तान, वर्षावन और हिमनद पृथ्वी ग्रह के अधिकांश भाग पर आच्छादित हैं। जिन क्षेत्रों में मनुष्य स्थायी रूप से बसते हैं, उनके लिए 'वास्य क्षेत्र' शब्द का प्रयोग किया जाता है। जब दुनिया बहुत कम आबादी वाली थी, मानव वितरण ने रैखिक प्रतिरूप का पालन किया जो ज्यादातर नदियों या प्रमुख मार्गों के साथ था लेकिन स्थलमंडल के अधिकांश रहने योग्य हिस्सों में मनुष्यों के प्रसार के साथ, इस तरह के वितरण के प्रतिरूप की व्याख्या करना मुश्किल हो गया।

इससे पहले कि हम जनसंख्या वितरण के विभिन्न निर्धारकों पर विचार करें, हमें पहले जनसंख्या वितरण और जनसंख्या घनत्व के बीच अंतर करना चाहिए।

जनसंख्या वितरण भूमि पर लोगों का फैलाव है, अर्थात जहां लोग रहते हैं। यह पृथ्वी की सतह पर रहने वाले लोगों के स्थानिक प्रतिरूप को दर्शाता है। यह रेखीय, बिखरा हुआ, केन्द्रकयुक्त और गुच्छेदार आदि हो सकता है। भूगोलवेत्ता विभिन्न पैमानों पर जनसंख्या वितरण प्रतिरूप का अध्ययन करते हैं: स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक।

जनसंख्या घनत्व एक विशेष क्षेत्र में रहने वाले लोगों की संख्या है – आमतौर पर 1 वर्ग किलोमीटर – और इसे कुल जनसंख्या/भूमि क्षेत्र के रूप में लिखा जा सकता है। यह लोगों की संख्या और भूमि/क्षेत्र के बीच का अनुपात है।

संक्षेप में, जनसंख्या वितरण स्थानीय है और जनसंख्या घनत्व आनुपातिक है (चंदना, 2014, पृष्ठ 42)। विश्व की आबादी अब 7 अरब से अधिक है, जिनमें से अधिकांश विकासशील दुनिया में रहते हैं। विश्व की जनसंख्या कुछ क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की बड़ी संख्या के साथ विश्व भर में असमान रूप से फैली हुई है। संपूर्ण विश्व में 'भीड़' वाले क्षेत्रों की तुलना में 'खाली' क्षेत्र अधिक हैं। जनसंख्या संदर्भ ब्यूरो द्वारा जारी विश्व जनसंख्या आँकड़ा शीट 2021 के अनुसार, विश्व जनसंख्या 7837 मिलियन थी, लेकिन यह जनसंख्या समान रूप से वितरित नहीं थी। कम विकसित देशों में बड़ी आबादी (83. 78%) थी और अधिक विकसित देशों में दुनिया की आबादी का केवल 16.22% था।

तालिका 14.4ः विश्व जनसंख्या का प्रादेशिक वितरण

विश्व	7837 (लाख में)	100%
दक्षिण एशिया	1970	25.14
पूर्व एशिया	1650	21.05
दक्षिण–पूर्व एशिया	671	8.56
लैटिन अमेरिका एवं कैरेबियन	656	8.37
पूर्वी अफ्रीका	458	5.84
पश्चिमी अफ्रीका	413	5.27
उत्तरी अफ्रीका	371	4.73
पूर्वी यूरोप	290	3.70
पश्चिमी एशिया	284	3.62
उत्तरी अफ्रीका	248	3.16
पश्चिमी यूरोप	196	2.50
मध्य अफ्रीका	185	2.36
दक्षिणी यूरोप	152	1.94
उत्तरी यूरोप	106	1.35
केन्द्रीय एशिया	76	0.97
दक्षिणी अफ्रीका	68	0.87
ओशेनिया	43	0.55

स्त्रोतः विश्व जनसंख्या आंकड़ा शीट, 2021, जनसंख्या सन्दर्भ ब्यूरो।

जनसंख्या का क्षेत्रीय वितरण भी व्यापक असमानता को प्रदर्शित करता है। दक्षिण एशिया और पूर्वी एशिया में जनसंख्या का सबसे बड़ा हिस्सा है, सामूहिक रूप से इन दोनों क्षेत्रों में विश्व जनसंख्या का 46% हिस्सा है। दूसरी ओर, मध्य एशिया, दक्षिणी अफ्रीका और ओशेनिया जैसे क्षेत्रों में विश्व जनसंख्या का 1% से भी कम है। महाद्वीपों के भीतर भी जनसंख्या का वितरण व्यापक असमानता को दर्शाता है। एशिया में ही, दक्षिण एशिया और पूर्वी एशिया में विश्व जनसंख्या का अनुपात सबसे अधिक है लेकिन दक्षिण पूर्व एशिया, पश्चिमी एशिया और मध्य एशिया में जनसंख्या का हिस्सा बहुत कम है। इसके अलावा, मध्य एशिया (0.97%) में विश्व जनसंख्या का अनुपात सबसे कम है। अफ्रीका के भीतर भी, पूर्वी और पश्चिमी अफ्रीका संयुक्त (871 मिलियन) की आबादी उत्तरी, मध्य और दक्षिण अफ्रीका (501 मिलियन) से अधिक है। यूरोप के सभी चार क्षेत्रों

में से, पूर्वी यूरोप (290 मिलियन) की जनसंख्या पश्चिमी (196 मिलियन), उत्तरी (152 मिलियन) और दक्षिणी यूरोप (106 मिलियन) से अधिक है।

इन विविधताओं को समझाने के लिए कई भौतिक और मानवीय कारक हैं। 'वास्य क्षेत्र' और गैर वास्य क्षेत्र या नोन–एक्यूमिन, भूगोलवेत्ताओं द्वारा स्थायी रूप से बसे हुए भागों और निर्जन भागों या दुनिया के बहुत कम आबादी वाले हिस्सों के बीच अंतर करने के लिए उपयोग किए जाने वाले शब्द हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि पृथ्वी की लगभग 60% भूमि को वास्य क्षेत्र कहा जा सकता है, जबकि शेष गैर–वास्य क्षेत्र का गठन करती है। जनसंख्या के वितरण में ये विरोधाभास विभिन्न कारकों के प्रभाव के कारण हैं, जिन्हें मोटे तौर पर भौतिक, सामाजिक–सांस्कृतिक और जनसांख्यिकीय कारकों में वर्गीकृत किया जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र' (1973) जनसंख्या अध्ययन संख्या 50, जनसंख्या प्रवृत्तियों के निर्धारक और परिणाम, इन कारकों का एक अच्छा विवरण प्रस्तुत करता है।

भौतिक कारक

भौतिक कारकों में क्षेत्र की जलवायु, भूविज्ञान और स्थलाकृति शामिल हैं। ये किसी क्षेत्र में जनसंख्या के वितरण को निर्धारित करने वाले सबसे प्रत्यक्ष और प्रभावशाली कारक हैं। हालाँकि, प्रौद्योगिकी कई गैर–वास्य क्षेत्रों को मनुष्य के लिए रहने योग्य बनाने में सक्षम रही है, लेकिन जनसंख्या वितरण का प्रतिरूप अभी भी क्षेत्र के भौतिक परिदृश्य के प्रभाव को दर्शाता है। जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले भौतिक कारकों में जलवायु, ऊंचाई और अक्षांश, उच्चावच, मिट्टी, वनस्पति, पानी और खनिज और ऊर्जा संसाधनों का स्थान शामिल है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि अधिकांश भौतिक कारक जनसंख्या वितरण को केवल अप्रत्यक्ष रूप से जलवायु परिस्थितियों के माध्यम से प्रभावित करते हैं।

जलवायु

जलवायु भौतिक कारकों के प्रमुख तत्वों में से एक है जो तापमान की स्थिति और वर्षा की मात्रा के माध्यम से जनसंख्या के स्थानिक वितरण को प्रभावित करता है। राजस्थान के गर्म और शुष्क मरूस्थलों और ठंडे और आर्द्र पूर्वी हिमालयी क्षेत्र को लें, जहां बहुत कम तापमान और भारी वर्षा होती है। यहाँ असमान वितरण और जनसंख्या के कम घनत्व का यही कारण है। लगभग समान वितरण और जनसंख्या का उच्च घनत्व केरल और पश्चिम बंगाल के मैदानी इलाकों में पाए जाते हैं जहां वर्षा अधिक होती है। यह राजस्थान के क्षेत्रों में और पश्चिमी घाट के निचले हिस्से में कम है। अत्यधिक तापमान का अनुभव करने वाले क्षेत्रों में जनसंख्या का विरल वितरण होता है। गर्म भूमि में पानी की कमी होती है, और ठंडी भूमि बहुत कम आबादी वाली होती है। लोग समशीतोष्ण जलवायु में रहना पसंद करते हैं जहाँ पर्याप्त वर्षा होती है और तापमान की कोई चरम सीमा नहीं होती है।

भूआकृतियां

भू–आकृतियाँ जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप को प्रभावित करती हैं। ऊँचाई, ढलान और जलनिकास जैसे कारक जनसंख्या वितरण को प्रभावित करते हैं। कम वायुमंडलीय दबाव और कम ऑक्सीजन सामग्री के कारण उच्च ऊँचाई मानव अस्तित्व पर एक अंतिम शारीरिक सीमा लगाती है। इसलिए, दुनिया के ऊँचे पहाड़ों में 5,000 मीटर से

ऊपर की ऊँचाई पर बहुत कम स्थायी बस्तियां देखी जा सकती हैं। स्टैज़वेस्की (1957) ने देखा कि दुनिया की कुल आबादी का केवल 20% 500 मीटर से अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में और 80% 500 मीटर के भीतर पाया जाता है। दुनिया की आबादी का 56% से थोड़ा अधिक समुद्र तल से 200 मीटर ऊपर रहता है।

पहाड़ों और मैदानों के बीच जनसंख्या घनत्व और वितरण पर ऊँचाई और ढलान के प्रभाव के सबसे महत्वपूर्ण सबूत देखे गए हैं। उदाहरण के लिए, एक तरफ सबसे घनी आबादी वाले भारत–गंगा के मैदानों का मामला लें और दूसरी तरफ अरुणाचल प्रदेश का एक अत्यधिक पहाड़ी राज्य। इसके अलावा, जलनिकास और जल स्तर जैसे कारक भी जनसंख्या वितरण को प्रभावित करते रहे हैं।

मृदा

यह एक अन्य कारक है जो जनसंख्या के घनत्व और वितरण को प्रभावित करता है। आज के अत्यधिक औद्योगीकृत समाज में मृदा की भूमिका की वैधता पर प्रश्नचिन्ह लग सकता है। लेकिन आज भी भारत में लगभग 70% आबादी गांवों में रहती है। गांवों में लोग अपनी आजीविका कृषि से कमाते हैं जो मिट्टी की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। यही कारण है कि उत्तरी मैदानों के जलोढ़ क्षेत्र और भारत के तटीय और डेल्टाई क्षेत्रों में लगातार जनसंख्या का उच्च घनत्व है। दूसरी ओर, यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान और गुजरात में कच्छ के मैदान जैसे मरूस्थलीय क्षेत्रों में भूमि के विशाल क्षेत्र मिट्टी के कटाव और मिट्टी के प्रस्फुटन जैसी समस्याओं से पीड़ित हैं, जो केवल जनसंख्या के कम घनत्व का समर्थन करते हैं। किसी भी क्षेत्र में घनत्व और वितरण एक से अधिक कारकों से प्रभावित होते हैं। उदाहरण के लिए, भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र को लें यहाँ जनसंख्या के कम घनत्व के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं। ये कारक उच्च वर्षा, उबड़–खाबड़ इलाके, घने जंगल और मिट्टी की खराब गुणवत्ता हैं। उपजाऊ मिट्टी वाले क्षेत्र जनसँख्या के भरण पोषण के लिए फसल उगाने के लिए अच्छे हैं। इसलिए, नदी घाटियों के उपजाऊ इलाकों में मानव आबादी की उच्च सांद्रता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि पोडज़ोल जैसी मृदा, जो आमतौर पर गहन कृषि प्रथाओं में बाधा डालती है, में कम आबादी होती है। मिट्टी एक क्षेत्र के भूविज्ञान, जलवायु और स्थलाकृति का संयुक्त प्रभाव है, इसलिए मानव अधिवास के निर्धारण में मिट्टी की भूमिका का सटीक आकलन मुश्किलें पैदा करता है।

जल

मीठे जल की उपलब्धता भी मानव आवास के लिए एक निर्धारक है। जल को जीवन का अमृत माना गया है। मानव बस्ती के लिए जल सबसे आवश्यक है; यह मानव अस्तित्व के लिए मौलिक है क्योंकि कृषि पूरी तरह से जल पर निर्भर है। अतीत में यह देखा गया है कि इन बस्तियों के आसपास जल के स्रोत सूख जाने से कई बस्तियां बर्बाद हो गईं। सिंधु–सरस्वती सभ्यता से कई उदाहरणों का हवाला दिया जा सकता है, प्रमुख रूप से लोथल (गुजरात) और कालीबंगन (राजस्थान) में, जिसमें जल के व्यापक उपयोग को दर्शाया गया था, लेकिन जल के विलुप्त होने के साथ ये अच्छी तरह से विकसित बस्तियां खंडहर में बदल गईं।

भूविज्ञान और खनिज

किसी स्थान का भूविज्ञान और खनिज की उपस्थिति भी जनसंख्या सांद्रता के स्तर को निर्धारित करती है। कोयला, कच्चा तेल, अयस्क, चूना पत्थर, संगमरमर आदि के आर्थिक भंडार से समृद्ध क्षेत्र मानव आबादी को आकर्षित करते हैं।

अभिगम्यता

वे स्थान जो परिवहन और संचार के मामले में अच्छी तरह से जुड़े हुए हैं, उनमें जनसंख्या की उच्च सांद्रता है। इसलिए, हम देखते हैं कि तटीय क्षेत्र अपने आंतरिक भागों की तुलना में घनी आबादी वाले हैं। समान सुविधाएं प्रदान करने वाले बड़े शहर भी आबाद हैं।

सामाजिक–सांस्कृतिक कारक

भौतिक कारकों की तरह, सामाजिक–सांस्कृतिक कारक भी जनसंख्या के घनत्व और वितरण में समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालाँकि, इन दो निर्धारकों के सापेक्ष महत्व पर एक पूर्ण सहमति नहीं हो सकती है। कुछ स्थानों पर भौतिक कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जबकि कुछ स्थानों पर सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों का अधिक प्रभाव पड़ता है। आमतौर पर यह माना गया है कि सामाजिक–सांस्कृतिक (गैर–भौतिक) निर्धारकों की भूमिका अधिक है। जनसंख्या पर प्रभाव डालने वाले विभिन्न कारक हैं (i) सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनीतिक कारक; (ii) प्राकृतिक संसाधनों का दोहन। क्लार्क के अनुसार (1971, पृष्ठ 435), शहरीकरण के आगमन के साथ भौतिक कारकों की भूमिका घट रही है। चूंकि मानव की बढ़ती तकनीकी प्रगति उन्हें अन्यथा कम उपयुक्त क्षेत्रों में जीवित रहने और विभिन्न जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होने में सक्षम बना रही है।

सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनीतिक कारक

मुंबई–पुणे औद्योगिक परिसर यह दिखाने के लिए एक अच्छा उदाहरण है कि कैसे सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और राजनीतिक कारकों ने सामूहिक रूप से जनसंख्या के तेजी से विकास और इसके घनत्व में योगदान दिया है। पश्चिमी तट पर थाना संकरी खाड़ी के छोटे–छोटे महत्वहीन द्वीप थे। साहसी पुर्तगाली नाविकों ने इन द्वीपों पर अपने सम्राट के लिए दावा किया। 200 साल से भी कम समय पहले, उन्होंने इन द्वीपों को दहेज के रूप में इंग्लैंड के शाही परिवार को उपहार में दिया था। इन द्वीपों पर स्थित मछली पकड़ने वाले ये सोए हुए गाँव कभी अनुमान नहीं लगा सकते थे कि वे जल्द ही भारत के सबसे बड़े जनसंख्या समूह में बदल जाएंगे। इंग्लैंड की ईस्ट इंडिया कंपनी ने इन द्वीपों पर एक व्यापारिक केंद्र स्थापित किया और बाद में इसे बॉम्बे प्रेसीडेंसी की राजधानी बनाया। पारसियों, कच्छियों और गुजरातियों के उद्यमी व्यापारिक और व्यापारिक समुदायों ने कपड़ा मिलों की स्थापना की, इसमें जल शक्ति के विकास और पश्चिमी घाट में सड़कों और रेलवे को इसके भीतरी इलाकों से जोड़ने में अग्रणी भूमिका निभाई। अप्रत्याशित रूप से, स्वेज अंतरराष्ट्रीय नौपरिवहन नहर ने मुंबई को यूरोप का निकटतम भारतीय बंदरगाह बना दिया। मुंबई और पुणे के शिक्षित युवाओं की उपलब्धता और कोंकण से सस्ते और कुशल श्रमिकों ने भी तेजी से जनसंख्या वृद्धि में योगदान दिया। बॉम्बे हाई तेल और प्राकृतिक गैस क्षेत्रों की खोज ने इसके पेट्रो–रसायन उद्योग को बढ़ावा दिया। आज, मुंबई को अंतरराष्ट्रीय और घरेलू हवाई अड्डों, प्रमुख समुद्री बंदरगाहों और राष्ट्रीय सड़क और रेल टर्मिनलों द्वारा भारत की

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

वाणिज्यिक राजधानी के रूप में जाना जाता है। कोलकाता और चेन्नई जैसे अन्य शहरों का भी यही हाल है जो औपनिवेशिक शासकों द्वारा स्थापित किए गए थे।

प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता

छोटानागपुर का पठार हमेशा चट्टानी और ऊबड़–खाबड़ इलाके वाला क्षेत्र रहा है। यह बरसाती और वनाच्छादित क्षेत्र कई जनजातियों का घर रहा है और देश के कम आबादी वाले हिस्सों में से एक था। हालांकि, लौह–अयस्क, मैंगनीज, चूना पत्थर, कोयला आदि जैसे समृद्ध खनिज असामान्य बहुतायत में और एक दूसरे के करीब पाए जाने के तुरंत बाद पिछली शताब्दी में औद्योगिक कस्बों और केंद्रों की एक लड़ी उभरी। समृद्ध कोयले और लोहे के क्षेत्रों ने भारी उद्योगों को विशेष रूप से लोहा और इस्पात, भारी इंजीनियरिंग, और धातुशोधन और परिवहन उपकरण उद्योगों को आकर्षित किया। इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुपर–पावर उष्मीय या थर्मल स्टेशन भी हैं जहाँ से दूर–दराज के क्षेत्रों में बिजली की आपूर्ति की जाती है। उदारीकरण के बाद, कई बहुराष्ट्रीय कंपनियां और साथ ही राष्ट्रीय कंपनियां बड़ी संख्या में अपने उद्योग स्थापित कर रही हैं। इन सभी कारकों ने जनसंख्या वृद्धि में योगदान दिया।

अधिवास का इतिहास

जनसँख्या के वर्तमान संकेंद्रण में अधिवास का इतिहास एक निर्धारण कारक है। सिंधु–गंगा के मैदान, दक्षिण भारत की नदी घाटियों के रूप में बसने के लंबे इतिहास का आनंद लेने वाले क्षेत्रों में अभी भी मानव आबादी की उच्च सांद्रता है। इस कारक के कारण पुरानी और नई दुनिया में जनसंख्या का वितरण भिन्न होता है।

आर्थिक विकास

आर्थिक विकास के प्रत्येक चरण में जनसंख्या घनत्व और वितरण में अलग–अलग परिवर्तन होते हैं। इसलिए, तकनीकी और आर्थिक प्रगति एक क्षेत्र में जनसंख्या के संकेंद्रण और पुनर्वितरण के लिए इसके द्वारा जिम्मेदार हैः

- रोजगार के अवसर,
- बेहतर परिवहन सुविधाएं,
- बेहतर आय और जीवन स्तर और
- आर्थिक गतिविधियों में परिवर्तनशीलता।

शहरीकृत क्षेत्र का घनत्व इस तथ्य के कारण अधिक है कि एक औद्योगिक श्रमिक की सहायक क्षमता एक कृषि श्रमिक से अधिक होती है। इसलिए, कृषि क्षेत्रों में छोटे आकार की निकट दूरी वाली बस्तियां आम हैं।

राजनीतिक कारक

राजनीतिक कारक पुनर्वितरण प्रवृत्तियों को भी प्रभावित करते हैं। युद्धों, राजनीतिक घटनाओं और सरकारी नीतियों ने गहरा प्रभाव डाला है। कुछ देशों में, सरकार कम आबादी वाले क्षेत्रों में जनसंख्या का पुनर्वितरण शुरू कर रही है, उदाहरण के लिए चीन अपनी आबादी को पश्चिमी भागों में पुनर्वितरित कर रहा है। सामाजिक संगठन और अंतर समूह असंगतताएं सूक्ष्म स्तर पर वितरण को प्रभावित करती हैं।

जनसांख्यिकीय कारक

जनसंख्या के वितरण और घनत्व में परिवर्तन प्राकृतिक वृद्धि की दर में भिन्नता और क्षेत्रों के बीच प्रवास के माध्यम से भी होता है। गतिशीलता, प्रजनन क्षमता और मृत्यु दर के कारकों में भिन्नता एक क्षेत्र में जनसंख्या के वितरण में असमानता को जन्म देती है। आमतौर पर यह देखा गया है कि जिन क्षेत्रों में जनसंख्या का आधार बहुत बड़ा होता है और तुलनात्मक रूप से उच्च प्राकृतिक वृद्धि होती है, वहां जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है।

प्राकृतिक और मानव निर्मित आपदाएं

यह देखा गया है कि प्राकृतिक और मानव निर्मित आपदाएँ कुछ क्षेत्रों के जनसंख्या मानचित्र को बदलने के लिए जिम्मेदार रही हैं। जिन क्षेत्रों में बार–बार आने वाली आपदाएँ होती हैं, वे उन क्षेत्रों की तुलना में कम जनसंख्या वाले होते हैं जो इन आपदाओं से अप्रभावित रहते हैं।

शहरीकरण

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, दुनिया की आधी से अधिक आबादी अब शहरी क्षेत्रों में रहती है, विशेष रूप से उच्च घनत्व वाले शहरों में। यह संख्या 2030 तक 60% तक बढ़ने की उम्मीद है। विश्व स्तर पर, 4 अरब से अधिक लोग शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। यह 2050 तक बढ़कर 7 बिलियन से अधिक होने का अनुमान है। विकासशील देशों में शहरीकरण की दर तेजी से बढ़ रही है क्योंकि लोग ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों में प्रवास करते हैं। विकासशील देशों में, बहुत से लोग अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं, क्योंकि खेती जैसी प्राथमिक गतिविधियों में बड़ी संख्या में लोग काम करते हैं, जबकि विकसित देशों में अधिकांश लोग उद्योगों और सेवाओं में कार्यरत होते हैं।

भारत में जनसंख्या वितरण का प्रतिरूप

भारत में, जनसंख्या बहुत असमान रूप से वितरित है। उदाहरण के लिए, सिंधु–गंगा के मैदान, तटीय मैदान, नदियों के पास के अधिवास, उपजाऊ भूमि बहुत घनी आबादी वाले हैं, जबकि हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों, उत्तर–पूर्व में बहुत कम घनत्व है। कस्बों, शहरों और महानगरों जैसे शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में उच्च घनत्व है। कोई कल्पना कर सकता है कि घनी आबादी वाले क्षेत्र और कम आबादी वाले क्षेत्र एक साथ सह–अस्तित्व में हैं, दोनों के बीच तीव्र सीमाएं हैं (चित्र 14.2)।

भारत में सिंधु–गंगा का मैदान सबसे घनी आबादी वाला क्षेत्र है। यह मुख्य रूप से भारत में अर्थव्यवस्था के कृषि आधार के कारण है और यह क्षेत्र उपजाऊ समतल भूमि, सिंचाई के लिए भरपूर जल, अनुकूल जलवायु और सस्ते श्रम प्रदान करता है। महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी की दक्षिणी नदियों के डेल्टाई क्षेत्र जनसंख्या वितरण के समान प्रतिरूप को दर्शाते हैं। केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश राज्यों में भी कई कृषि और औद्योगिक लाभ हैं और ये जनसंख्या की उच्च सांद्रता दिखाते हैं। हालांकि, नमीयुक्त दक्षिणी राज्यों में जनसंख्या का घनत्व उत्तरी राज्यों की तुलना में कम है। इस असमानता के लिए सापेक्ष ऊबड़–खाबड़ इलाके और जनसंख्या वृद्धि के प्रति अधिक जागरूकता को जिम्मेदार ठहराया गया है।

भारत के विभिन्न शहर, जिनका मानव अधिवास का एक लंबा इतिहास है, वर्तमान में औद्योगिक विकास का अनुभव कर रहे हैं और उच्च जनसंख्या संकेंद्रण प्रदर्शित कर रहे हैं। इसकी तुलना में, जिन नगरों का अभी तक औद्योगीकरण नहीं हुआ है और मानव निवास के लिए प्रतिकूल भौतिक स्थितियाँ हैं, उनकी जनसंख्या कम है।

उबड़–खाबड़ हिमालयी इलाके और कठोर जलवायु परिस्थितियों वाले उत्तरी क्षेत्रों और उत्तर–पूर्वी राज्यों में जनसंख्या का घनत्व कम है। यह अनुपयुक्त कृषि स्थितियों और अपर्याप्त विकासात्मक शुरुआत के लिए भी जिम्मेदार है। दक्षिण भारत के पहाड़ी क्षेत्र भी इसी तरह के प्रतिरूप दिखाते हैं।

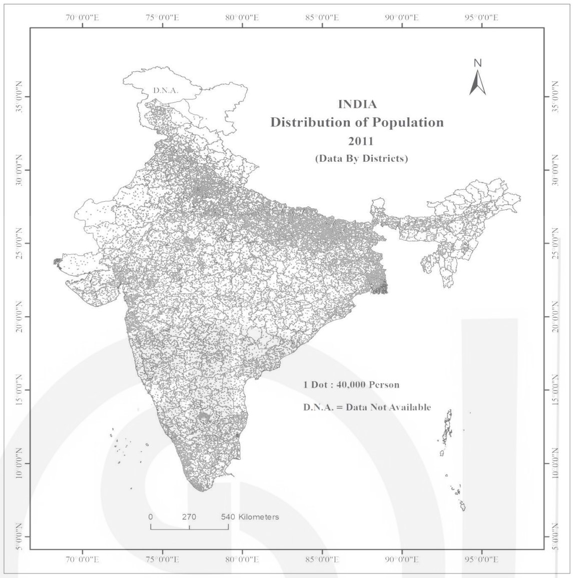

चित्र 14.3: जनसंख्या वितरण

केन्द्रीय उच्च भूमि के कुछ क्षेत्रों, राजस्थान के थार मरूस्थल, कच्छ प्रायद्वीप, प्रायद्वीप के वर्षा–छाया वाले हिस्सों और बंगाल की खाड़ी और अरब सागर के द्वीपों में भी जनसंख्या की कम सांद्रता है। यह कृषि योग्य भूमि की कमी, चरम जलवायु परिस्थितियों और मुख्य भूमि आदि से बड़ी दूरी आदि के लिए जिम्मेदार है। झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में खनिजों की उपस्थिति ने विभिन्न विकास गतिविधियों और रोजगार के अवसरों के सृजन के कारण जनसंख्या की एकाग्रता में योगदान दिया है।

पूर्वी और पश्चिमी तट घनी आबादी वाले हैं, इसलिए कई शहर मिलियन शहर बन गए हैं। यह उपयुक्त तापमान, पर्याप्त वर्षा, शहरीकरण और औद्योगीकरण के उच्च स्तर, समुद्र के माध्यम से निर्यात और आयात की सुविधाओं, द्वीपों और दूर के क्षेत्रों तक पहुंच आदि के लिए जिम्मेदार है। कुछ हिस्सों की आबादी का घनत्व सिंधु–गंगा के मैदानों के उच्च घनत्व वाले क्षेत्रों के बराबर है।

दिल्ली, पांडिचेरी, चंडीगढ़ के केंद्र शासित प्रदेशों और मुंबई, कोलकाता, चेन्नई, बैंगलोर, पुणे आदि के विभिन्न महानगरीय केंद्रों और अन्य मिलियन शहरों में जनसंख्या का भारी दबाव है; यह उच्च शहरीकरण, बेहतर जीवन स्तर और रोजगार के अवसरों आदि के कारण है। उनका उच्च घनत्व भी उच्च प्रवासन के लिए जिम्मेदार है। इन कारकों के कारण, उपजाऊ कृषि भूमि को घेरते हुए इन स्थानों का खतरनाक दर से विस्तार हो रहा है। मलिन बस्तियों का उदय, अपशिष्ट निपटान की समस्याएँ और यातायात,

आवास, प्रदूषण, स्वास्थ्य और स्वच्छता की समस्याएँ इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के सामने आने वाली कुछ सामान्य कठिनाइयाँ हैं।

जनसंख्या वृद्धि का प्रतिरूप और जनसंख्या वितरण का प्रतिरूप समान नहीं है। उदाहरण के लिए, केरल, पश्चिम बंगाल और तमिलनाडु कम विकास दर प्रदर्शित करते हैं लेकिन उच्च जनसंख्या की एकाग्रता है। दूसरी ओर, उत्तर–पूर्वी राज्य उच्च विकास दर दिखाते हैं लेकिन भारत में घनत्व कम है। इसलिए, जनसंख्या वितरण राज्य के जनसांख्यिकीय इतिहास को दर्शाता है जबकि जनसंख्या वृद्धि सामाजिक जागरूकता और क्षेत्र के विकास के स्तर को दर्शाती है। भारत में, सामाजिक कारक देश के जनसांख्यिकीय आँकड़ों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अन्य कारक, अधिकांश समय, निर्धारकों के इस समूह द्वारा खारिज कर दिए जाते हैं। यह न केवल समाज के पारंपरिक तरीके को दर्शाता है बल्कि कभी–कभी यह देश के सामाजिक उत्थान और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण बाधाओं के रूप में कार्य करता है।

बोध प्रश्न 1

जैविक निर्धारकों को परिभाषित कीजिए।

14.4 घनत्व

जनसंख्या के घनत्व को प्रति वर्ग किलोमीटर व्यक्तियों की संख्या के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह किसी विशेष क्षेत्र में जनसंख्या संकेंद्रण का एक महत्वपूर्ण सूचकांक है। जनसंख्या के वितरण और जनसंख्या के घनत्व का विश्लेषण जनसंख्या भूगोल से संबंधित अध्ययनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ये दोनों एक क्षेत्र में काम कर रहे कई प्राकृतिक और साथ ही सामाजिक–आर्थिक कारकों के संचयी प्रभावों का परिणाम हैं। जनसंख्या घनत्व को जनसंख्या की सघनता को मापने के लिए एक संकेतक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

जनसंख्या घनत्व = कुल जनसंख्या/कुल भूमि क्षेत्रफल वर्ग किलोमीटर में।

यह क्षेत्र की जनसंख्या और उसके प्राकृतिक संसाधनों के बीच संतुलन को दर्शाता है। यह मानव–भूमि अनुपात का परिमाण देता है। स्वास्थ्य, व्यापार और सामाजिक–आर्थिक विकास से संबंधित किसी भी योजना में जनसंख्या का घनत्व महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। संक्षेप में, यह विकास की संभावनाओं को इंगित करता है। यदि जनसंख्या का घनत्व किसी क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों से अधिक है, तो ऐसी स्थिति बाहरी प्रवास को प्रोत्साहित करती है।

भारत में जनसंख्या घनत्व, 2011

विश्व के दस सबसे अधिक आबादी वाले देशों में, केवल बांग्लादेश में भारत की तुलना में अधिक जनसंख्या घनत्व है। 2011 की जनगणना आंकड़ों के अनुसार, भारत का जनसंख्या घनत्व 2011 में 325 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से बढ़कर 382 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया है। एक दशक पहले की तुलना में देश में हर वर्ग किलोमीटर में औसतन 57 और लोग निवास करते हैं (तालिका 14.5)। 20वीं सदी की शुरुआत में यानी 1901 में भारत का घनत्व 77 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर जितना कम था। यह

प्रत्येक दशक में लगातार बढ़कर 2011 में 382 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर तक पहुंच गया। यह 2001 की तुलना में 17.5% बढ़ा है। जनसंख्या के घनत्व में उच्च वृद्धि एक बड़ी चिंता का विषय है क्योंकि यह प्राकृतिक संसाधनों और मौजूदा बुनियादी सुविधाओं पर अत्यधिक दबाव डालता है, और जीवन की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न दबावों ने प्राकृतिक दुनिया पर मांग बढ़ा दी है जो सतत भविष्य को प्राप्त करने के किसी भी प्रयास को प्रभावित कर सकती है।

हमारे देश के राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में जलवायु परिस्थितियों, भू–भौतिक विशेषताओं, संसाधनों की उपलब्धता आदि में अंतर के कारण उनके घनत्व के मामले में व्यापक रूप से भिन्नता है। इसलिए, राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में भिन्नता का विश्लेषण करना आवश्यक है।

2001 और 2011 की जनगणना के आँकड़ों की तुलना करने पर पता चलता है कि दो राज्यों यानी बिहार और पश्चिम बंगाल ने अपने स्थान बदल लिए हैं। पश्चिम बंगाल को दूसरे स्थान पर धकेलते हुए बिहार शीर्ष पर है। केरल और उत्तर प्रदेश ने क्रमशः तीसरे और चौथे स्थान पर अपनी क्रमविन्यास बरकरार रखी है। दूसरी ओर, हरियाणा दो पंक्ति की बढ़त के साथ स्थान 7 से स्थान 5 पर पहुंच गया है, जो पंजाब की जगह लेता है, जो 5 से 7 तक दो स्थान गिर गया है। इसी तरह, झारखंड भी गोवा की जगह 10 वें स्थान से 8 वें स्थान पर है, जो 8 वें स्थान से गिरकर 10 वें स्थान पर आ गया है। कर्नाटक एक स्थान ऊपर आ गया है जबकि आंध्र प्रदेश एक स्थान गिरकर 13 से 14 हो गया है।

मेघालय 2 स्थान ऊपर चढ़ा है; जम्मू और कश्मीर 3 स्थान ऊपर चढ़ा है; हिमाचल प्रदेश 1 स्थान गिरा; नागालैंड 4 स्थान गिरा है। तमिलनाडु, असम, महाराष्ट्र, त्रिपुरा, गुजरात, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड, छत्तीसगढ़, मणिपुर, सिक्किम, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश जैसे अन्य राज्यों ने अपना स्थान बरकरार रखा है।

जनसंख्या घनत्व के अनुसार संघ शासित प्रदेशों की क्रमविन्यास दमन और दीव और लक्षद्वीप को छोड़कर, जो एक दूसरे के साथ स्थानों का आदान–प्रदान कर चुके हैं, कुल मिलाकर समान है। दिल्ली का एन.सी.टी केंद्र शासित प्रदेशों का प्रमुख बना हुआ है, जबकि अंडमान और निकोबार द्वीप समूह सबसे पीछे है।

तालिका 14.5: भारत, जनसंख्या का घनत्त्व, 2001–2011 (प्रतिवर्ग कि.मी. पर व्यक्ति)

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	2011	2001
दिल्ली	11297	9340
चंडीगढ़	9252	7900
पुदुचेरी	2598	2034
दमन एवं दीव	2169	1413
लक्षद्वीप	2013	1895
बिहार	1102	881
पश्चिम बंगाल	1029	903
केरल	859	819

उत्तर प्रदेश	828	690
दादर एवं नागर हवेली	698	449
हरियाणा	573	478
तमिल नाडु	555	480
पंजाब	550	484
झारखंड	414	338
असम	397	340
गोवा	394	364
महाराष्ट्र	365	315
त्रिपुरा	350	305
कर्नाटक	319	276
आंध्र प्रदेश	308	277
गुजरात	308	258
ओडिशा	269	236
मध्य प्रदेश	236	196
राजस्थान	201	165
उत्तराखंड	189	159
छतीसगढ़	189	154
मेघालय	132	103
जम्मू एवं कश्मीर	124	100
हिमाचल प्रदेश	123	109
मणिपुर	122	103
नागालैंड	119	120
सिक्किम	86	76
मिजोरम	52	42
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	46	43
अरूणाचल प्रदेश	17	13
भारत	**382**	**324**

स्त्रोतः भारत की जनगणना, 2001–2011।

भौगोलिक क्षेत्रों द्वारा जनसंख्या घनत्व

देश के छह क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व में अंतर का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। पूर्वी क्षेत्र में सबसे अधिक घनत्व 625 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है और उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में सबसे कम घनत्व 176 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। मध्य क्षेत्र घनत्व में 417 के साथ दूसरे स्थान पर है, इसके बाद क्रमशः दक्षिणी क्षेत्र (397), पश्चिमी क्षेत्र (344) और उत्तरी क्षेत्र (267) हैं। 2001–2011 की अवधि में, मध्य क्षेत्र में घनत्व में 20.31%, उत्तरी क्षेत्र में 19.48% और पूर्वी क्षेत्र में 18.98% की वृद्धि हुई है, जो पश्चिमी क्षेत्र (17.

18%), उत्तर–पूर्वी क्षेत्र (17%) और दक्षिणी क्षेत्र (12.58%) की तुलना में अधिक गति से बढ़ा है। यह उस बात के अनुरूप है जिसे ऐतिहासिक जनसांख्यिकीवेत्ता ने नोट किया है कि गंगा के मैदान ने दो सहस्राब्दियों से अधिक के लिए उपमहाद्वीप की जनसांख्यिकीय हृदयभूमि का गठन किया है, और निकट भविष्य के दौरान ऐसा ही रहेगा। उत्तर–दक्षिण जनसांख्यिकीय विभाजन भी लंबे समय से है। जनसंख्या का घनत्व पर्यावरण और अंततः लोगों के जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। जनसंख्या के बढ़ते दबाव ने लोगों के जीने के तरीके और उनके शासित होने के तरीके को पहले ही प्रभावित कर दिया है। प्राकृतिक संसाधनों और बुनियादी ढांचे पर विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में भार को कम करना प्रशासकों और नीति निर्माताओं के लिए एक बड़ी चुनौती बनी रहेगी।

जिलों द्वारा जनसंख्या घनत्व

2011 में, भारत का सबसे घनी आबादी वाला जिला दिल्ली का उत्तर–पूर्वी जिला था, जिसका जनसंख्या घनत्व 36155 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था। दिल्ली के छह जिले भारत के सबसे घनी आबादी वाले 12 जिलों में शामिल हैं।

अन्य छह जिले वे थे जिनमें मिलियन से अधिक जनसँख्या वाले शहर थे जैसे चेन्नई, कोलकाता, मुंबई उपनगर, मुंबई और हैदराबाद। निचले छोर पर अरुणाचल प्रदेश का दिबांग घाटी जिला था, जिसकी जनसंख्या घनत्व केवल 1 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर थी।

जिलों की पट्टी पंजाब के मैदानी इलाकों से शुरू होकर, गंगा–यमुना के मैदानों, मध्य और निचली पहुंच और गंगा प्रणाली के डेल्टा, पूर्वी तट से कन्याकुमारी तक से होती हुई, महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी और अन्य नदियों के डेल्टाओं को पार करती हैं और अंत में पश्चिमी तटीय जिलों, विशेष रूप से केरल, जिसका घनत्व राष्ट्रीय औसत से काफी ऊपर है, की तरफ मुड़ जाती हैं। इसकी तुलना में, उत्तर–पूर्व के जिलों, विशेष रूप से अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर और मिजोरम के जिलों और हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उत्तराखंड और राजस्थान के कुछ शुष्क जिलों में घनत्व बहुत कम है (चित्र 14.5)।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

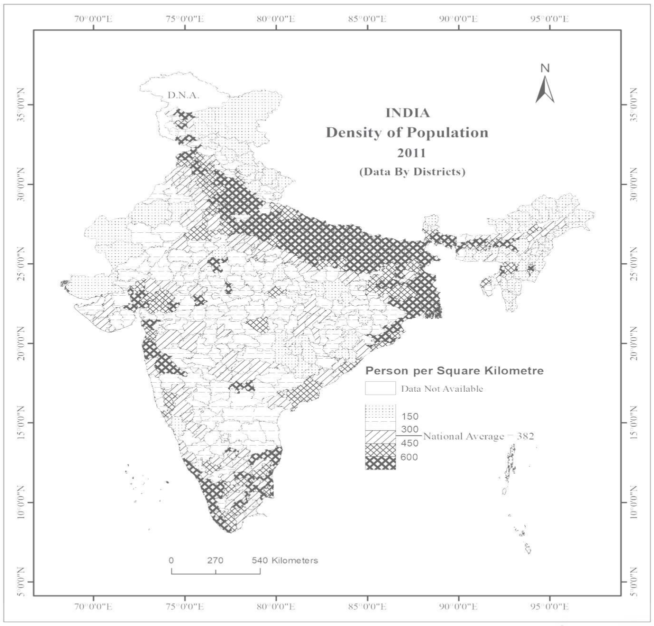

चित्र 14.5: जनसंख्या का घनत्त्व

बोध प्रश्न 2

वास्य क्षेत्र क्या है?

14.5 आयु और लिंग संरचना

आयु और लिंग मानव जनसंख्या की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं। जनसांख्यिकीय विश्लेषण के लिए ये बहुत महत्वपूर्ण हैं इन्हें "जनसांख्यिकीय चर" के रूप में संदर्भित किया जाता है (बोग, 1969: 149)। प्रजनन क्षमता, मृत्यु दर और प्रवासन की जनसांख्यिकीय प्रक्रियाएं जनसंख्या की आयु और लिंग संरचना को उत्पन्न करती हैं (होरीची और प्रेस्टन, 1988), और आयु और लिंग संरचना जनसांख्यिकीय प्रक्रियाओं को प्रभावित करती है। जनसांख्यिकीय चर और जनसांख्यिकीय प्रक्रियाओं के बीच एक बहुत करीबी संबंध है। जनसँख्या के आयु और लिंग वितरण को आलेखीय रूप से चित्रित करने का सबसे प्रभावी तरीका जनसंख्या पिरैमिड के माध्यम से है।

जनसंख्या पिरैमिड में, जनसंख्या X–अक्ष और उम्र Y–अक्ष पर आलेखित की जाती है। इसमें दो एक के पीछे एक (बैक–टू–बैक) दंड आरेख होते हैं। एक व्यक्ति की संख्या दिखा रहा है और एक पांच साल के आयु वर्गों में विशेष जनसँख्या में महिलाओं को दिखाता है (जिसे समूह भी कहा जाता है)। पुरुषों को पारंपरिक रूप से बाईं ओर और महिलाओं को दाईं ओर दिखाया जाता है, और उन्हें वास्तविक संख्या या कुल जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में मापा जा सकता है।

जनसांख्यिकीयवेत्ता किसी देश की जन्म दर और मृत्यु दर के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। किसी भी जनसंख्या पिरैमिड का आकार इस बात का संकेत होता है कि किसी विशेष स्थान या क्षेत्र को किन चुनौतियों या लाभों का सामना करना पड़ेगा।

जनसंख्या पिरैमिड के प्रकार

आकार के आधार पर पिरैमिड तीन प्रकार के होते हैं, स्थिर (स्थिर), संकुचित और विस्तृत (चित्र 14.6)। पिरैमिड का आकार उस देश की जनसंख्या जनसांख्यिकी के स्तर पर निर्भर करता है।

1. **विस्तृत पिरैमिडः** विस्तृत पिरैमिड जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसमें युवा लोगों का बड़ा अनुपात होता है। व्यापक आधार के साथ विस्तृत पिरैमिड आमतौर पर उच्च प्रजनन दर और कम जीवन प्रत्याशा वाली आबादी को दर्शाता है। वृद्ध आयु वर्ग के लोगों की संख्या आमतौर पर कम होती है और इस प्रकार एक संकीर्ण शीर्ष होता है। कई विकासशील देशों में विस्तृत जनसंख्या पिरैमिड हैं। शीर्ष में स्थिर संकीर्णता यह दर्शाती है कि प्रत्येक उच्च पट्टी में लोग मरते हैं। इस प्रकार के जनसंख्या पिरैमिड दिखाने वाले देशों में उच्च जन्म दर और उच्च मृत्यु दर है।

2. **संकुचित पिरैमिडः** जिस जनसंख्या में कम या घटती संख्या में युवा लोग होते हैं, जब उन्हें दंड आरेख में दर्शाया जाता है, तो एक संकुचित पिरैमिड होता है। यह एक ऐसे देश का परिणाम है जहां जन्म दर धीमी या घटती जा रही है और प्रत्येक उत्तरगामी आयु वर्ग छोटा और छोटा होता जा रहा है। देश में युवा लोगों की तुलना में अधिक वृद्ध लोग होंगे। बड़ी संख्या में वृद्ध लोगों को वृद्ध नागरिकों के लिए अच्छी स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं से भी जोड़ा जा सकता है। इससे उच्च आयु वर्ग में मृत्यु दर कम हो जाती है और वे लंबे समय तक जीते हैं। इसे बैरल के आकार के पिरैमिड के रूप में भी जाना जाता है।

3. **स्थिर पिरैमिडः** एक स्थिर पिरैमिड या स्थायी पिरैमिड बनाया जाता है यदि जन्म और मृत्यु दर समय के साथ जनसँख्या में समान रहता है। यह आमतौर पर एक आयताकार या वर्ग आकार का आलेखी निरूपण होता है जहां यह आलेख के शीर्ष पर थोड़ा शंकुनुमा हो जाता है। यह बहुत ही सामान्य है क्योंकि बुजुर्गों के बीच होने वाली मौतें अधिक हैं। बेहतर रहने की दशाएं, जराचिक्तसा (गेरियाटीक) देखभाल, और चिकित्सा सुविधाओं वाले देशों में जीवन की उच्च प्रत्याशा है। इसके अलावा, कई देशों में जन्म की एक स्थिर दर है क्योंकि इनमें जन्म नियंत्रण उपायों का उपयोग करने की अधिक जागरूकता है। इस तरह के पिरैमिड नियत समय में जनसंख्या के साथ एक स्थिर वृद्धि को दर्शाता है। इसे जनसंख्या पिरैमिड के रूप में भी माना जा सकता है जो प्रजनन क्षमता और मृत्यु दर का एक अपरिवर्तनीय प्रतिरूप दिखा रहा है। स्थिर पिरैमिड ज्यादातर स्वीडन, यू.एस.ए. और नीदरलैंड जैसे अत्यधिक विकसित देशों में देखा जाता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

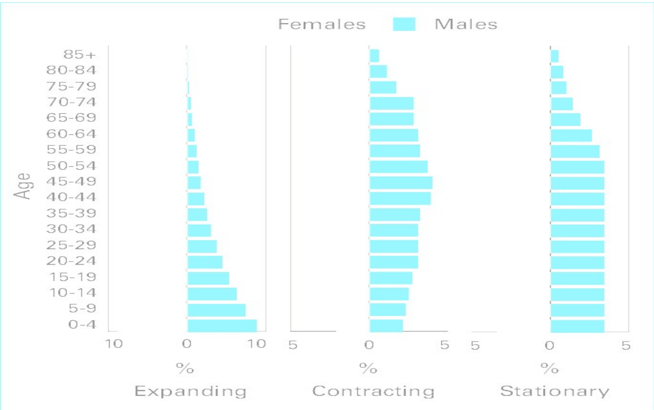

चित्र 14.6: जनसंख्या पिरैमिड के प्रकार

किसी देश की आयु संरचना हमें उसकी जनसांख्यिकीय विशेषताओं के बारे में बहुत कुछ बताती है। यह हमें बता सकता है कि देश जनसांख्यिकीय संक्रमण के किस चरण से गुजर रहा है और यह हमें मोटे तौर पर देश के निर्भरता अनुपात के बारे में भी बताता है। जनसंख्या की आयु संरचना का विश्लेषण करने की तीन विधियाँ हैं। ये विधियां आयु समूह, आयु पिरैमिड और आयु सूचकांक हैं।

1. आयु वर्ग

प्रत्येक देश 0 से 80 वर्ष तक के पांच वर्ष के आयु वर्गों में आँकड़ा प्रदान करता है। अधिकतर, 15 वर्ष और 60 वर्ष को विराम बिंदु माना जाता है, और इस आधार पर जनसंख्या को तीन व्यापक वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है: युवा आयु वर्ग (0–14), वयस्क आयु वर्ग (15–60) और वृद्ध आयु वर्ग (60 और उससे अधिक)।

- **युवा आयु वर्ग:** इस आयु वर्ग में 15 वर्ष से कम आयु के बच्चे शामिल हैं। इस आयु वर्ग में जनसंख्या का अनुपात जनसांख्यिकीय संक्रमण के उस चरण से निर्धारित होता है जिससे वह गुजर रहा है। यह अनुपात उन देशों में अधिक है जो जनसांख्यिकीय संक्रमण के पहले या दूसरे चरण से गुजर रहे हैं। विश्व स्तर पर 26% जनसंख्या 15 वर्ष से कम आयु की है। यह आयु वर्ग आर्थिक और जैविक रूप से अनुत्पादक है और स्वास्थ्य और शिक्षा के मामले में अधिक आर्थिक खर्च की आवश्यकता है।

- **वयस्क आयु वर्ग:** इस आयु वर्ग में 15 से 59 वर्ष के आयु वर्ग के लोग शामिल हैं। वयस्क आयु समूह जैविक और आर्थिक रूप से सबसे अधिक उत्पादक और जनसांख्यिकीय रूप से सबसे अधिक गतिशील है (ट्रिवार्था, 1969, पृष्ठ 122)। यह आयु वर्ग युवा और वृद्ध आयु वर्गों की देखभाल करने का भार वहन करता है।

- **वृद्ध आयु वर्ग:** वे सभी लोग जिनकी आयु 60 वर्ष या उससे अधिक हो गई है, इस आयु वर्ग में शामिल हैं। इन लोगों को वरिष्ठ नागरिक कहा जाता है। जैसे–जैसे देश जनसांख्यिकीय संक्रमण के एक चरण से दूसरे चरण में जाता है, इस आयु वर्ग का अनुपात बढ़ता जाता है। इस आयु वर्ग में पुरुषों की तुलना में महिलाओं का अनुपात अधिक है क्योंकि महिलाओं की मृत्यु दर पुरुषों की तुलना में कम है।

2. आयु पिरैमिड

यह आयु संरचना का विश्लेषण करने के लिए आमतौर पर उपयोग की जाने वाली विधियों में से एक है। इस आरेख में, पुरुषों और महिलाओं को विभिन्न आयु वर्गों में क्षैतिज पट्टियों द्वारा दर्शाया गया है। पिरैमिड का आकार जनसांख्यिकीय संक्रमण के उस चरण के आधार पर भिन्न होता है जिससे देश गुजर रहा है।

आयु पिरैमिड जनसंख्या और अर्थव्यवस्था की आयु संरचना के बीच संबंधों का आरेखीय प्रतिनिधित्व प्रदान करके जनसंख्या के विश्लेषण में मदद करता है। आयु पिरैमिड का आकार संबंधित जनसंख्या के सामाजिक–आर्थिक और जनसांख्यिकीय इतिहास की व्याख्या कर सकता है।

3. आयु सूचकांक

आयु सूचकांक जनसंख्या के विभिन्न आयु वर्गों के बीच का अनुपात है। इन अनुपातों की गणना श्रम शक्ति के आकलन और नियोजन, जनसंख्या विश्लेषण आदि के प्रयोजनों के लिए की जाती है। इन सूचकांकों की गणना युवा, वयस्क और वृद्ध आयु वर्गों के बीच की जाती है। सबसे महत्वपूर्ण सूचकांक निर्भरता अनुपात है जिसकी गणना वयस्क आयु वर्ग और युवा और वृद्ध आयु वर्ग के बीच संयुक्त रूप से की जाती है। यह निर्भरता अनुपात देश की वयस्क जनसंख्या पर होने वाले निकास को दर्शाता है। बड़ी संख्या में युवा लोगों के कारण विकासशील देशों के मामले में निर्भरता अनुपात अधिक है।

भारत में जनसंख्या की आयु संरचना

2011 में भारत की आयु संरचना काफी सकारात्मक थी, जिसमें 60% आबादी वयस्क आयु वर्ग की थी और केवल 40% युवा आयु वर्ग और वृद्ध आयु वर्ग समूह में थे। इसमें भी 31% बच्चे थे और 8% वरिष्ठ नागरिक थे (तालिका 14.6)। हालाँकि, बच्चों का अनुपात विश्व औसत से अधिक था लेकिन वृद्धों का अनुपात विश्व औसत 9% के काफी करीब था।

तालिका 14.6: भारत की आयु संरचना, 2011

आयु समूह	व्यक्ति	%	पुरूष	%	महिलाएं	%
सभी आयु वर्ग	1210854977	100	623270258	100	587584719	100.00
0.14	372444116	30	194351375	31	178092741	30.31
15.59	730072019	60	375474130	60	354597889	60.35
60̦	103849040	8	51071872	8	52777168	8.98
नहीं बताई गई आयु	4489802	0.37	2372881	0.38	2116921	0.36

स्त्रोतः भारत की जनगणना, तालिका **C**-14, 2011

2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, भारत के आयु–लिंग पिरैमिड का आकार एक उल्टे शीर्ष की तरह है (चित्र 14.7)। 10 वर्ष से कम आयु वर्ग की जनसंख्या का अनुपात 10–14 आयु वर्गों की तुलना में कम है जो दर्शाता है कि जन्म दर में गिरावट आ रही है। जनसंख्या का अनुपात बाद में आयु वर्ग में वृद्धि के साथ घट रहा है। 80+ आयु वर्ग के लोगों का अनुपात फिर से बढ़ रहा है। सभी आयु समूहों में महिलाओं का अनुपात कम है लेकिन 55–59 आयु वर्ग के बाद महिलाओं का अनुपात बढ़ता जा रहा

है, हालांकि महिलाओं का अनुपात पुरुषों की तुलना में थोड़ा अधिक है, लेकिन निरपेक्ष संख्या में यह काफी महत्वपूर्ण साबित होता है।

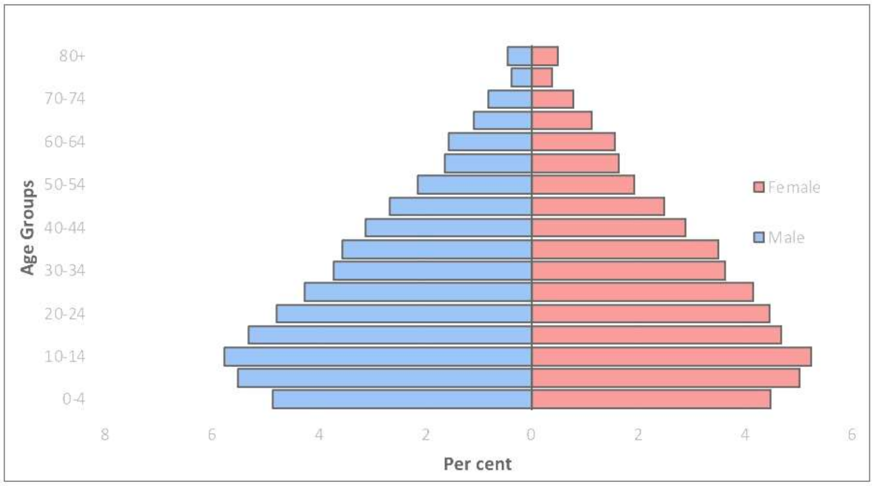

चित्र 14.7: भारत का आयु–लिंग पिरैमिड, 2011

विभिन्न आयु समूहों में जनसंख्या समय के साथ बदल रही है। समय के साथ युवा आयु वर्ग के अनुपात में गिरावट आई है, 1961 से 2011 की जनगणना में 10.3 अंकों की गिरावट आई है। यह पूरे देश के लिए एक बहुत ही सकारात्मक संकेत है क्योंकि यह दर्शाता है कि देश जनसांख्यिकीय संक्रमण के विभिन्न चरणों से गुजर रहा है जहां जन्म दर समय के साथ घट रही है। जन्म दर में गिरावट और मृत्यु दर में गिरावट के कारण वृद्ध जनसंख्या का अनुपात भी समय के साथ बढ़ रहा है। 50 वर्षों की अवधि में 2.9 अंक की वृद्धि हुई है। यह वृद्धि यह भी बताती है कि देश के चिकित्सा ढांचे में भी सुधार हो रहा है। वयस्क आयु वर्ग भी समय के साथ बढ़ रहा है, इस आयु वर्ग में 7.1 अंक की वृद्धि देखी गई है। वयस्क आयु वर्ग में वृद्धि और युवा आयु वर्गों में कमी एक सकारात्मक निर्भरता अनुपात को दर्शाती है (तालिका 14.7)।

तालिका 14.7: भारतः प्रतिशत आयु में कालिक परिवर्तन संयोजन

आयु समूह	1961	1971	1981	1991	2001	2011
0—14	41.1	42.0	39.6	37.3	35.3	30.8
15—59	53.2	52.0	53.9	55.5	56.9	60.3
60+	5.7	6.0	6.5	6.8	7.4	8.6

स्त्रोतः 1. भारत की जनगणना, 1991, भारतः सामान्य जनसंख्या तालिकाएँ।
2. भारत की जनगणना, 2001, भारत एक नज़र में /व्यापक आयु समूह।
3. भारत की जनगणना, 2011, तालिका सी—14।

आयु संरचना का राज्य—वार वितरण जनसांख्यिकीय संक्रमण के चरण को दर्शाता है। केरल जैसे राज्य, जो अपने जनसांख्यिकीय संक्रमण के अंतिम चरण में है, की ऐसी आयु संरचना है जो दुनिया के कई विकसित देशों के साथ तुलनीय है। केरल की कुल आबादी में केवल 23.44% बच्चे हैं जो कि वैश्विक औसत 26% से भी कम है। इसकी कुल जनसंख्या में वृद्ध जनसंख्या का अनुपात 12.55% है जो देश में सबसे अधिक है और वैश्विक औसत 9% से भी अधिक है। टिम डायसन (2010) के अनुसार जैसे—जैसे आबादी संक्रमण से गुजरती है, युवा आयु संरचनाएं भी वृद्ध आयु संरचनाओं में बदल जाती हैं जोकि जनसंख्या परिपक्वन है। ऐसा ही केरल, गोवा, तमिलनाडु, पंजाब और हिमाचल प्रदेश राज्यों के साथ हो रहा है जहां बच्चों का अनुपात 21 से 26% के बीच

है और वृद्ध आबादी 10 से 13% के बीच है। कुल जनसंख्या में बच्चों का सबसे कम अनुपात गोवा (21.81%) में है। दूसरी ओर बिहार, मेघालय, झारखंड, उत्तर प्रदेश और अरुणाचल प्रदेश जैसे राज्य हैं जहां बच्चों का अनुपात 35 से 40% के बीच है। यह जनसांख्यिकीय संक्रमण के पहले या दूसरे चरण को दर्शाता है जहां मृत्यु दर में गिरावट आई है लेकिन जन्म दर में उसी अनुपात में गिरावट नहीं आई है। इस प्रकार, यह उनकी कुल जनसंख्या में उच्च बाल अनुपात की ओर अग्रसर है।

तालिका 14.8ः भारतः आयु संरचना का प्रतिरूप, 2011

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	0-14	15-59	60+
जम्मू एवं कश्मीर	33.81	58.71	7.36
हिमाचल प्रदेश	25.86	63.75	10.24
पंजाब	25.54	63.98	10.33
चंडीगढ़	25.25	68.36	6.36
उत्तराखंड	31.02	59.88	8.93
हरियाणा	29.70	61.52	8.65
दिल्ली	27.19	65.87	6.83
राजस्थान	34.61	57.54	7.46
उत्तर प्रदेश	35.69	55.77	7.73
बिहार	40.08	52.13	7.40
सिक्किम	27.18	65.96	6.67
अरूणाचल प्रदेश	35.65	59.64	4.60
नागालैंड	34.32	60.41	5.19
मणिपुर	30.17	62.55	7.00
मिजोरम	32.45	61.24	6.25
त्रिपुरा	27.71	64.37	7.88
मेघालय	39.70	55.42	4.68
असम	32.84	60.44	6.66
पश्चिम बंगाल	27.10	64.29	8.48
झारखंड	36.05	56.46	7.14
ओडिशा	28.77	61.45	9.49
छतीसगढ़	32.04	60.03	7.84
मध्य प्रदेश	33.46	58.56	7.87
गुजरात	28.86	62.82	7.92
दमन एवं दीव	22.60	72.58	4.67
दादर एवं नगर हवेली	31.37	64.48	4.04
महाराष्ट्र	26.62	63.13	9.88

आंध्र प्रदेश	25.76	63.54	9.79
कर्नाटक	26.23	64.22	9.48
गोवा	21.81	66.83	11.21
लक्षद्वीप	25.53	66.12	8.17
केरल	23.44	63.90	12.55
तमिलनाडु	23.57	65.93	10.41
पुडुचेरी	23.91	66.35	9.65
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	24.35	68.87	6.68

स्त्रोतः भारत की जनगणना, तालिका C-14, 2011

वयस्क आयु वर्ग का अनुपात 52% और 72% के बीच भिन्न था। वयस्क आयु वर्ग का उच्चतम अनुपात दमन और दीव (72.58%) में देखा गया, जबकि बच्चे और वयस्क जनसंख्या का समरूपी अनुपात 22.60 और 4.67% था। 52.13% का न्यूनतम अनुपात बिहार में पाया गया (तालिका 14.8)।

लिंग संरचना

लिंग संरचना मानव जनसँख्या की बुनियादी जनसांख्यिकीय विशेषताओं में से एक है, जो किसी भी सार्थक जनसांख्यिकीय विश्लेषण के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। लिंग संरचना में परिवर्तन मोटे तौर पर समाज के अंतर्निहित सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक प्रतिरूप को अलग–अलग तरीकों से दर्शाते हैं। एक निश्चित समय में किसी समाज में पुरुषों और महिलाओं के बीच प्रचलित समानता की सीमा को मापने के लिए लिंग अनुपात एक महत्वपूर्ण सामाजिक संकेतक है। भारत में महिलाओं की जनसंख्या और महिलाओं का पुरुषों से अनुपात कितना है इसे ज्ञात करने के लिए लिंग अनुपात एक मूल्यवान स्रोत है। लिंगानुपात का उपयोग प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या का वर्णन करने के लिए किया जाता है। यह मुख्य रूप से मृत्यु दर में लिंग अंतर, लिंग चयनात्मक प्रवास, जन्म के समय लिंग अनुपात और कभी–कभी जनसंख्या गणना में लिंग अंतर के परस्पर क्रिया का परिणाम है।

तृतीयक लिंग अनुपात के निर्धारक

लिंगानुपात में व्यापक क्षेत्रीय भिन्नताएँ हैं। यह अनुपात मुख्य रूप से तीन बुनियादी निर्धारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है, जो इस प्रकार हैः

- जन्म होने पर लिंगानुपात
- मृत्यु होने पर लिंगानुपात
- प्रवासियों का लिंगानुपात

विभिन्न देशों के पंजीकृत जन्मों के लिंगानुपात की जांच से प्रत्येक सौ महिलाओं पर जन्म के समय अधिक पुरुष होने के समान प्रतिरूप का पता चलता है। फिर भी, विश्व के सभी देशों में समान प्राकृतिक लिंगानुपात नहीं है, और यह विभिन्न कारकों के कारण है। थॉम्पसन एंड लाइव्स के अनुसार, "चूंकि प्राकृतिक लिंगानुपात अपने आप में दो लिंगों की प्रसव पूर्व मृत्यु दर में अंतर से नियंत्रित होता है और चूंकि महिलाओं की तुलना में अधिक पुरुष जन्म से पहले मर जाते हैं, इसलिए अक्सर यह कहा जाता है

कि ये देश जहां प्रसव पूर्व पूर्वाग्रह कम हैं, प्राकृतिक लिंगानुपात अधिक पौरुष है और यह कम पौरुष है जहां प्रसव पूर्व पूर्वाग्रह अधिक हैं"।

यह जानना काफी दिलचस्प है कि एक ही देश के भीतर, विभिन्न जनसंख्या वर्गों के लिंगानुपात में अंतर पाया जा सकता है जैसा कि भारत में होता है जहां मुस्लिम, ईसाई, हिंदुओं का लिंग अनुपात अलग–अलग होता है। मृत्यु के समय लिंगानुपात अलग–अलग देशों में अधिक भिन्न होता है। विभिन्न देशों में मृत्यु के समय लिंगानुपात में अंतर सामाजिक–आर्थिक विकास की अवस्था में उनके अंतर, जीवन स्तर, महिलाओं को दिया गया स्तर, अर्थव्यवस्था के प्रकार, महिलाओं द्वारा काम में भागीदारी की मात्रा आदि से जुड़ा है।

तीसरा कारक, जो लिंगानुपात को प्रभावित करता है, वह है लिंग के आधार पर प्रवासियों में चयनात्मकता। मूल रूप से, आर्थिक कारणों से होने वाले प्रवास मुख्य रूप से लिंग–चयनात्मक होते हैं, उदाहरण के लिए, भारत में ग्रामीण से शहरी प्रवास अत्यधिक पुरुष प्रधान है। यह आर्थिक रूप से प्रेरित प्रवास है। अधिक विकसित देशों में शहरी लिंगानुपात महिलाओं के पक्ष में अधिक है। सामाजिक रूप से निर्धारित प्रवास भी लिंग–चयनात्मक है। इसका आदर्श उदाहरण भारत का है, जहाँ विवाह के लिए प्रवास में महिलाओं का अपने माता–पिता के निवास स्थान से अपने पति के निवास स्थान तक आना–जाना शामिल है। एक पहलू यह भी है जिस पर यहां चर्चा की जानी चाहिए यानी ग्रामीण–शहरी लिंग अनुपात में अंतर। विकसित देशों में, पुरुषों की संख्या ग्रामीण इलाकों में महिलाओं की संख्या से अधिक है जबकि शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक है। भारत जैसे कम विकसित देशों में स्थिति इसके विपरीत है। इन तीन बुनियादी निर्धारकों के अलावा, किसी भी समय जनसंख्या का लिंगानुपात भी युद्धों, महामारियों और किसी विशेष लिंग के लिए आंशिक रूप से कुछ प्रथाओं से काफी प्रभावित होता है।

भारत की जनगणना, 2011 में यह पता चला था कि देश में लिंगानुपात प्रति 1000 पुरुषों पर 943 महिलाएं थीं। यह 2001 के लिंगानुपात से 10 अंक बेहतर था। यह 1971 के बाद से सबसे अधिक था। देश में लिंगानुपात ऐतिहासिक रूप से नकारात्मक रहा है, जिसका अर्थ है कि यह महिलाओं के लिए प्रतिकूल था। चित्र 14.8 से पता चलता है कि स्वतंत्रता पूर्व अवधि के दौरान भी, लिंगानुपात पुरुष प्रधान था, जिसका अर्थ था कि प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की कमी थी। 1941 तक लिंगानुपात में लगातार गिरावट आई, लेकिन 1951 में फिर से लगातार दो दशकों तक थोड़ा बढ़ गया, 1981 में लिंग अनुपात में फिर से मामूली सुधार हुआ, लेकिन 1991 में देश में प्रति हजार पुरुषों पर 927 महिलाओं के साथ सदी में सबसे कम लिंगानुपात देखा गया। लेकिन 1991 के बाद और नई सहस्राब्दियों में, लिंगानुपात में 2001 में 933 से 2011 में 943 तक सुधार हुआ है। यह वृद्धि भारत सरकार द्वारा गिरते लिंगानुपात को कम करने के लिए उठाए गए कई कदमों के कारण है, जिनमें से सबसे प्रमुख लिंग का प्रसव पूर्व निर्धारण पर प्रतिबंध लगाया जाना है।

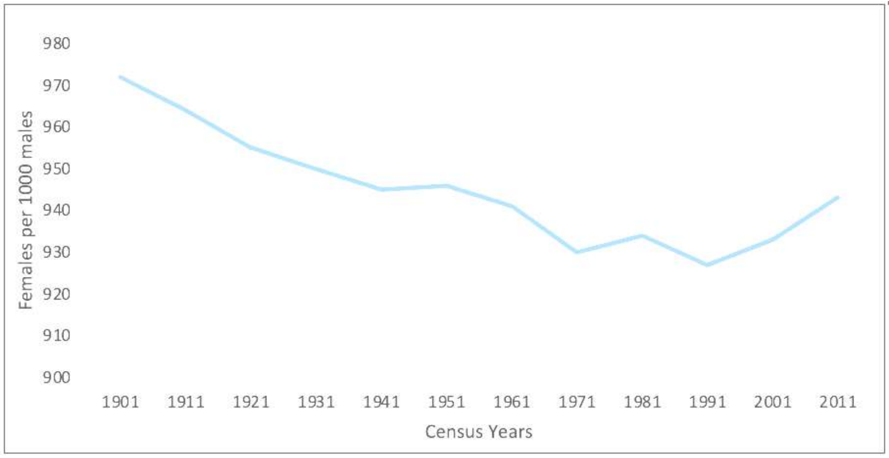

चित्र 14.8: भारत का लिंगानुपात, 1901—2011

2011 में लिंग अनुपात

2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार, भारत में प्रति हजार पुरुषों पर 943 महिलाओं का लिंगानुपात दर्ज किया गया। ग्रामीण लिंगानुपात 949 महिला प्रति हजार पुरुष था जबकि शहरी लिंगानुपात केवल 929 था (तालिका 14.9)। इसका अर्थ यह है कि ग्रामीण लिंगानुपात शहरी लिंगानुपात से बेहतर था लेकिन यहाँ कोई भी सामान्यीकरण करने से पहले पुरुष—चयनात्मक ग्रामीण से शहरी प्रवास के प्रभाव को ध्यान में रखा जाना चाहिए। उच्चतम लिंगानुपात केरल (1048) और सबसे कम दमन और दीव (618) द्वारा दर्ज किया गया था। केरल और पुडुचेरी केवल दो राज्यों ने प्रति हजार पुरुषों पर 1000 महिलाओं से अधिक लिंगानुपात प्रदर्शित किया। उच्चतम ग्रामीण (1078) और शहरी (1091) लिंगानुपात भी केरल में देखा गया। राष्ट्रीय परिदृश्य के विपरीत, ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में केरल में शहरी लिंगानुपात अधिक था। केवल कुछ राज्यों ने ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक शहरी लिंगानुपात प्रदर्शित किया। ये राज्य/केंद्र शासित प्रदेश थे चंडीगढ़, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, पुडुचेरी, सिक्किम, तमिलनाडु और त्रिपुरा।

छत्तीसगढ़, गोवा, केरल, पुडुचेरी और उत्तराखंड इन पांच राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों ने ग्रामीण लिंगानुपात प्रति हजार पुरुषों पर 1000 से अधिक महिलाओं को प्रदर्शित किया।

तालिका 14.9: भारतः लिंगानुपात, 2011

नाम	कुल	ग्रामीण	शहरी
भारत	***943***	**949**	***929***
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	876	877	874
आंध्र प्रदेश	993	996	987
अरूणाचल प्रदेश	938	953	890
असम	958	960	946
बिहार	918	921	895
चंडीगढ़	818	690	822
छतीसगढ़	991	1001	956

दादर एवं नगर हवेली	774	863	682
दमन एवं दीव	618	864	551
गोआ	973	1003	956
गुजरात	919	949	880
हरियाणा	879	882	873
हिमाचल प्रदेश	972	986	853
जम्मू एवं कश्मीर	889	908	840
झारखंड	948	961	910
कर्नाटक	973	979	963
केरल	1084	1078	1091
लक्षद्वीप	946	952	945
मध्य प्रदेश	931	936	918
महाराष्ट्र	929	952	903
मणिपुर	985	969	1026
मेघालय	989	986	1001
मिजोरम	976	952	998
नागालैंड	931	940	908
दिल्ली	868	852	868
ओडिशा	979	989	932
पुडुचेरी	1037	1028	1042
पंजाब	895	907	875
राजस्थान	928	933	914
सिक्किम	890	882	913
तमिलनाडु	996	993	1000
त्रिपुरा	960	955	973
उत्तर प्रदेश	912	918	894
उत्तराखंड	963	1000	884
पश्चिम बंगाल	950	953	944

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार

ज़िलेवार लिंगानुपात के आँकड़े विपरीत तस्वीर पेश करते हैं। इधर, पुडुचेरी केंद्र शासित प्रदेश के माहे जिले में देश में प्रति हजार पुरुषों पर 1184 महिलाओं का उच्चतम लिंगानुपात था, इसके बाद अल्मोड़ा (1139) और कन्नूर (1136) का स्थान है। दमन जिले में प्रति हजार पुरुषों पर 534 महिलाओं का लिंगानुपात सबसे कम था। लगभग 99 जिलों में प्रति हजार पुरुषों पर 1000 या अधिक महिलाओं का लिंगानुपात था। अनुगुल, खंडवा (पूर्वी निमाड़), महाराजगंज, नांदेड़, रायबरेली, तामेंगलोंग और उखरुल नाम के सात जिलों में लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत के बराबर था। 343 जिलों में

लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत 943 महिलाएं प्रति हजार पुरुषों पर, से अधिक था। 291 जिलों में लिंगानुपात राष्ट्रीय औसत से कम था।

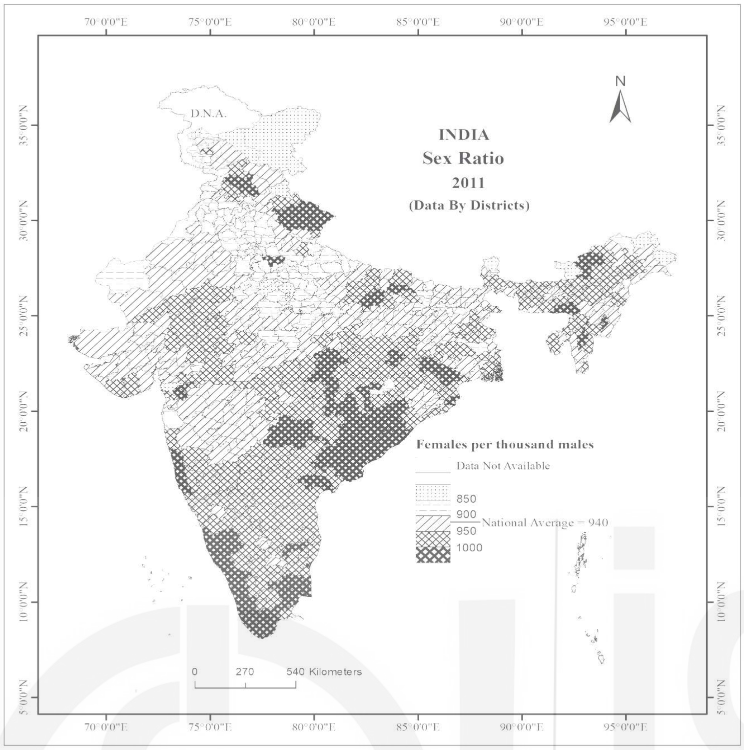

चित्र 14.9: लिंगानुपात

0–6 आयु वर्ग में बाल लिंग अनुपात

जबकि समग्र लिंगानुपात देश में विशेष रूप से नई सहस्राब्दी में उत्साहजनक रुझान दिखा रहा है, लेकिन 0–6 वर्ष की आयु वर्ग की लड़कियों के मामले में ऐसा नहीं है। तालिका 14.10 और चित्र 14.10 दोनों देश में बाल लिंगानुपात में गिरावट की प्रवृत्ति को दर्शाते हैं। बाल लिंगानुपात 976 लड़कियों प्रति हजार लड़कों से लगातार गिरकर 918 लड़कियों प्रति हजार लड़कों पर आ गया है। छह दशकों में 58 अंकों की गिरावट आई है।

तालिका 14.10: भारतः सामान्य लिंगानुपात एवं शिशु लिंगानुपात (0–6) 1961–2011

जनगणना वर्ष	लिंगानुपात	शिशु लिंगानुपात
1961	941	976
1971	930	964
1981	932	962
1991	927	945
2001	933	927
2011	943	918

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना, सार, 2011

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

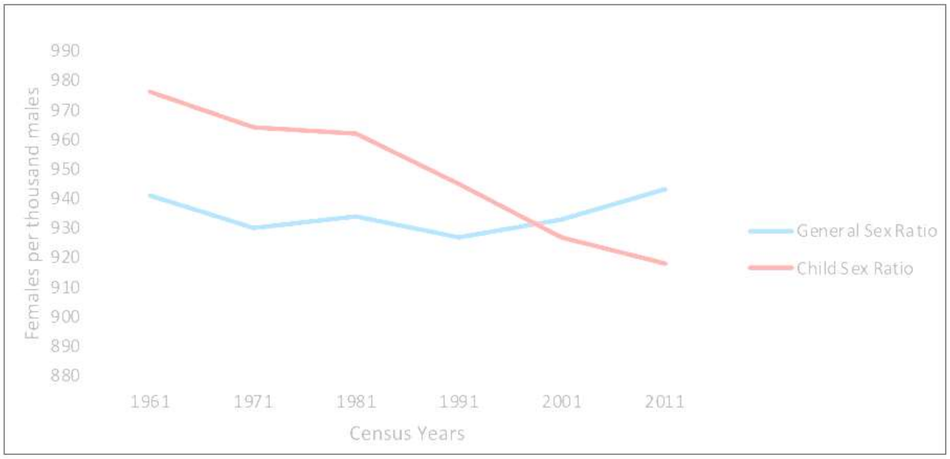

चित्र 14.10: भारत का सामान्य एवं शिशु लिंगानुपात, 1961–2011

तालिका 14.11: भारत का शिशु लिंगानुपात (0–6), 2011

नाम	कुल	ग्रामीण	शहरी
भारत	***918***	**923**	***905***
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	968	976	954
आंध्र प्रदेश	939	941	935
अरूणाचल प्रदेश	972	975	957
असम	962	964	944
बिहार	935	938	912
चंडीगढ़	880	871	880
छतीसगढ़	969	977	937
दादर एवं नगर हवेली	926	970	872
दमन एवं दीव	904	932	894
गोवा	942	945	940
गुजरात	890	914	852
हरियाणा	834	835	832
हिमाचल प्रदेश	909	912	881
जम्मू एवं कश्मीर	862	865	850
झारखंड	948	957	908
कर्नाटक	948	950	946
केरल	964	965	963
लक्षद्वीप	911	911	911
मध्य प्रदेश	918	923	901
महाराष्ट्र	894	890	899
मणिपुर	930	923	949
मेघालय	970	972	954

मिजोरम	970	966	974
नागालैंड	943	933	973
दिल्ली	871	814	873
ओडिशा	941	946	913
पुडुचेरी	967	953	975
पंजाब	846	844	852
राजस्थान	888	892	874
सिक्किम	957	964	934
तमिलनाडु	943	936	952
त्रिपुरा	957	960	947
उत्तर प्रदेश	902	906	885
उत्तराखंड	890	899	868
पश्चिम बंगाल	956	959	947

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार, 2011

हालांकि, सामान्य लिंगानुपात 2001 से बढ़ रहा है लेकिन बाल लिंगानुपात समय के साथ घट रहा है। तालिका 14.11 से पता चलता है कि देश के शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में बाल लिंगानुपात बेहतर है। भारत के तीन उत्तर–पूर्वी राज्यों अर्थात् अरुणाचल प्रदेश (972), मिजोरम (970) और मेघालय (970) ने उच्चतम बाल लिंगानुपात प्रदर्शित किया, जबकि दूसरी ओर उत्तर भारत के तीन राज्य हरियाणा (834), पंजाब (846) और जम्मू और कश्मीर (862) थे। विडंबना यह है कि भारत के दो सबसे अधिक कृषि रूप से विकसित राज्यों जिनको भारत के भोजन के कटोरे के रूप में जाना जाता है, इसकी जनसंख्या में लड़कियों का अनुपात सबसे कम है। हरियाणा में स्थिति इतनी गंभीर है कि कई गांवों में लोगों को पश्चिम बंगाल, बिहार, असम और उत्तर प्रदेश के अन्य राज्यों से दुल्हन खरीदनी पड़ी है (यादव, 2020)। छत्तीसगढ़ और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के ग्रामीण इलाकों में बाल लिंगानुपात काफी बेहतर था। इसके विपरीत, हरियाणा और पंजाब के ग्रामीण इलाकों में बाल लिंगानुपात सबसे खराब था। हालाँकि, देश के शहरी क्षेत्रों में लड़कियों की कमी बहुत तीव्र थी, 1000 लड़कों की तुलना में केवल 905 लड़कियां थीं।

देश में लिंगानुपात को सामान्य रूप से सुधारने की आवश्यकता है लेकिन विशेष रूप से बाल लिंगानुपात बढ़ाने पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए। यद्यपि हरियाणा सरकार ने 'बेटी बचाओ बेटी पढाओ' योजना शुरू की है, लेकिन 2021 की जनगणना के परिणाम जारी होने पर बाल लिंग अनुपात पर इसके प्रभाव की जाँच करने की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न 3

संकुचित पिरैमिड को परिभाषित कीजिए।

14.6 धार्मिक और भाषाई संरचना

धर्म विश्वास या पूजा की एक प्रणाली है जो किसी व्यक्ति के सोचने, देखने और दुनिया के साथ बातचीत करने के तरीके को प्रभावित करती है। एक व्यक्ति का धर्म अक्सर उनके नैतिक और सदाचार–पूर्ण विश्वासों का मुख्य स्रोत होता है। कई विश्वासियों के लिए, धर्म महान आराम का स्रोत है, शायद उद्देश्य भी। धर्म संगठित विश्वासों, प्रथाओं और प्रणालियों का एक समूह है जो अक्सर एक व्यक्तिगत ईश्वर या किसी अन्य आलौकिक प्राणी के रूप में एक नियंत्रित शक्ति के विश्वास और पूजा से संबंधित होता है।

धर्म सामाजिक–आर्थिक संस्थानों, राजनीतिक लोकाचार और समाज के कानूनों को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, विवाह के लिए अधिकांश समूहों में धार्मिक प्रतिबंधों की आवश्यकता होती है। धर्म परिवार के आकार को भी प्रभावित करता है।

विश्व भर में कई अलग–अलग धर्म मौजूद हैं। यद्यपि धर्म अक्सर धर्मशास्त्र और व्यवहार में एक दूसरे से बहुत भिन्न होते हैं, यह तर्कपूर्ण है कि उनमें से अधिकांश दो निकट–सार्वभौमिक विषयों पर ध्यान केंद्रित करते हैंः यहां पृथ्वी पर कैसे व्यवहार करें, और मरते समय हम क्या उम्मीद करें।

दुनिया के लगभग 85% लोग धर्म के साथ अपनी पहचान बनाते हैं। सबसे लोकप्रिय धर्म ईसाई धर्म है जिसे दुनिया भर में अनुमानित 2.38 बिलियन लोग मानते हैं। इस्लाम, जो 1.91 अरब से अधिक लोगों द्वारा माना जाता है, दूसरा सबसे बड़ा अनुयायी है। अन्य अनुमानित धर्मों में हिंदू धर्म (1.16 अरब), बौद्ध धर्म (507 मिलियन), यहूदी धर्म (14. 6 मिलियन), और दो छत्र श्रेणियां शामिल हैं। इन श्रेणियों में से पहला "लोक धर्म" (430 मिलियन) है, जिसमें पारंपरिक अफ्रीकी धर्म, चीनी लोक धर्म और मूल अमेरिकी और ऑस्ट्रेलियाई आदिवासी धर्म दोनों शामिल हैं। दूसरी श्रेणी "अन्य धर्म" (61 मिलियन) है, एक कैच–ऑल जो शिंटोवाद, ताओवाद, सिख धर्म और जैन धर्म जैसे छोटे धर्मों को ट्रैक करता है। दुनिया भर में लगभग 1.2 अरब लोगों की एक महत्वपूर्ण संख्या गैर–धार्मिक या नास्तिक बनी हुई है।

भारत चार धर्मों का जन्म स्थान है जैसे हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म और सिख धर्म। सिंधु घाटी सभ्यता के निवासियों के लिए भी धर्म एक महत्वपूर्ण पहलू रहा है। धर्म के साक्ष्य हड़प्पा की मूर्तियों और मुहरों में पाए जाते हैं जो एक देवी माँ और भगवान पशुपति (प्रोटो–शिव) को दर्शाते हैं (डेनिनो, 2014)।

भारत में धार्मिक विविधता और धर्मनिरपेक्षता बहु–संस्कृतिवाद और सामाजिक लोकतंत्र को बढ़ावा देने में सहायक रही है। भारत का कोई राज्य धर्म नहीं है। भारत की कुल आबादी का लगभग 80% हिंदू हैं। लेकिन हिंदू कौन हैं? मूल रूप से, हिंदू का मतलब सिंधु नदी या सिंधु नदी से परे रहने वाले लोगों से था। मामले को बदतर बनाने के लिए, 'हिंदू' शब्द किसी भी भारतीय भाषा में तब तक मौजूद नहीं था जब तक कि विदेशियों द्वारा इसके इस्तेमाल से भारतीयों को आत्म–परिभाषा के लिए एक शब्द नहीं मिला। 'हिंदू धर्म' इस प्रकार वह नाम है जिसे विदेशियों ने भारत के स्वदेशी धर्म के रूप में सबसे पहले लागू किया (थरूर, 2018)।

लगभग 80% भारतीय हिंदू धर्म का पालन करते हैं, अन्य 14% इस्लाम के अनुयायी हैं जबकि ईसाई धर्म और सिख धर्म क्रमशः 2.3% और 1.7% हैं। बौद्ध धर्म, जैन धर्म और अन्य धर्मों का पालन कुल जनसंख्या के 3% से कम जनसंख्या द्वारा किया जाता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

तालिका 14.12: भारत, धार्मिक संयोजन (%), 2011

नाम	हिन्दू	मुस्लिम	ईसाई	सिख	बौद्ध	जैन	अन्य	कथित नहीं किया गया घर्म
भारत	**79.80**	**14.23**	**2.30**	**1.72**	**0.70**	**0.37**	**0.66**	**0.24**
जम्मू एवं कश्मीर	28.44	68.31	0.28	1.87	0.90	0.02	0.01	0.16
हिमाचल प्रदेश	95.17	2.18	0.18	1.16	1.15	0.03	0.01	0.12
पंजाब	38.49	1.93	1.26	57.69	0.12	0.16	0.04	0.32
चंडीगढ़	80.78	4.87	0.83	13.11	0.11	0.19	0.02	0.10
उत्तराखंड	82.97	13.95	0.37	2.34	0.15	0.09	0.01	0.12
हरियाणा	87.46	7.03	0.20	4.91	0.03	0.21	0.01	0.17
दिल्ली	81.68	12.86	0.87	3.40	0.11	0.99	0.01	0.08
राजस्थान	88.49	9.07	0.14	1.27	0.02	0.91	0.01	0.10
उत्तर प्रदेश	79.73	19.26	0.18	0.32	0.10	0.11	0.01	0.29
बिहार	82.69	16.87	0.12	0.02	0.02	0.02	0.01	0.24
सिक्किम	57.76	1.62	9.91	0.31	27.39	0.05	2.67	0.30
अरूणाचल प्रदेश	29.04	1.95	30.26	0.24	11.77	0.06	26.20	0.48
नागालैंड	8.75	2.47	87.93	0.10	0.34	0.13	0.16	0.12
मणिपुर	41.39	8.40	41.29	0.05	0.25	0.06	8.19	0.38
मिजोरम	2.75	1.35	87.16	0.03	8.51	0.03	0.07	0.09
त्रिपुरा	83.40	8.60	4.35	0.03	3.41	0.02	0.04	0.14
मेघालय	11.53	4.40	74.59	0.10	0.33	0.02	8.71	0.32
असम	61.47	34.22	3.74	0.07	0.18	0.08	0.09	0.16
पश्चिम बंगाल	70.54	27.01	0.72	0.07	0.31	0.07	1.03	0.25
झारखंड	67.83	14.53	4.30	0.22	0.03	0.05	12.84	0.21
ओडिशा	93.63	2.17	2.77	0.05	0.03	0.02	1.14	0.18
छतीसगढ़	93.25	2.02	1.92	0.27	0.28	0.24	1.94	0.09
मध्य प्रदेश	90.89	6.57	0.29	0.21	0.30	0.78	0.83	0.13
गुजरात	88.57	9.67	0.52	0.10	0.05	0.96	0.03	0.10
दमन एवं दीव	90.50	7.92	1.16	0.07	0.09	0.12	0.03	0.10
दादर एवं नगर हवेली	93.93	3.76	1.49	0.06	0.18	0.35	0.09	0.14

महाराष्ट्र	79.83	11.54	0.96	0.20	5.81	1.25	0.16	0.25
आंध्र प्रदेश	88.46	9.56	1.34	0.05	0.04	0.06	0.01	0.48
कर्नाटक	84.00	12.92	1.87	0.05	0.16	0.72	0.02	0.27
गोवा	66.08	8.33	25.10	0.10	0.08	0.08	0.02	0.21
लक्षद्वीप	2.77	96.58	0.49	0.01	0.02	0.02	0.01	0.10
केरल	54.73	26.56	18.38	0.01	0.01	0.01	0.02	0.26
तमिलनाडु	87.58	5.86	6.12	0.02	0.02	0.12	0.01	0.26
पुडुचेरी	87.30	6.05	6.29	0.02	0.04	0.11	0.01	0.17
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	69.45	8.52	21.28	0.34	0.09	0.01	0.15	0.18

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार, 2011

हालाँकि, बौद्ध धर्म की उत्पत्ति भारत में हुई थी, लेकिन देश में इसके अनुयायी केवल 8. 2% हैं। हालाँकि, बौद्ध धर्म का प्रसार पूर्व, दक्षिण–पूर्व और दक्षिण एशिया में राजा अशोक के प्रयासों के कारण हुआ, जिन्होंने देश के भीतर और बाहर दोनों जगह गौतम बुद्ध का संदेश फैलाया।

भारत में 28 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में हिंदू धर्म के बहुसंख्यक अनुयायी हैं। जम्मू और कश्मीर और लक्षद्वीप केवल दो राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में मुस्लिम बहुसंख्यक हैं। केवल पंजाब में सिख बहुसंख्यक हैं जबकि चार उत्तर–पूर्वी राज्यों अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मिजोरम और मेघालय में ईसाई बहुसंख्यक हैं। सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश में बड़ी संख्या में बौद्धों की गणना की गई थी। अन्य अरुणाचल प्रदेश और झारखंड में महत्वपूर्ण संख्या में थे। ये आदिवासी धर्मों का पालन करने वाले लोग हैं।

हालाँकि, देश में बड़ी संख्या में धार्मिक समुदाय हैं लेकिन सबसे महत्वपूर्ण धर्म हिंदू धर्म है क्योंकि देश में इसके सबसे बड़े अनुयायी हैं। हालांकि अन्य धर्म भी हैं लेकिन हिंदू धर्म की तुलना में उनका स्थानिक और संख्यात्मक विस्तार बहुत कम है।

भाषाई संरचना

भाषा संचार का माध्यम है, जो या तो बोली जाती है या लिखित होती है, जिसमें शब्दों का उपयोग संरचित और पारंपरिक तरीके से होता है। भाषा के कार्यों में संचार, पहचान की अभिव्यक्ति, खेल, कल्पनाशील अभिव्यक्ति और भावनात्मक प्रदर्शन शामिल हैं।

बोली भाषा की एक किस्म है जो व्याकरण, उच्चारण या शब्दावली द्वारा विशिष्ट होती है, जो किसी विशिष्ट क्षेत्र में लोगों के एक विशिष्ट समूह द्वारा बोली जाती है। बोली आमतौर पर स्थानीय सांस्कृतिक समूह द्वारा उपयोग की जाती है। एक भाषा में कई बोलियाँ हो सकती हैं जो विशेष रूप से मौखिक अभिव्यक्ति में काफी भिन्न होती हैं। ऐसा कहा जाता है कि 40 से 50 किलोमीटर के बाद बोली बदल जाती है। हिंदी पट्टी में हिंदी की कुछ प्रमुख बोलियाँ जैसे मगधी, भोजपुरी, अवधी, बुंदेलखंडी आदि हैं जो एक दूसरे से काफी भिन्न हैं। उत्तर भारत में डोगरी, मांझी, दोबी, मालवई, बगड़ी, भटनी, अहिरवती, मेवाती, ब्रज, हरियाणवी, पुअदि, किन्नौरी, लाहोली, कुल्वी, मण्डियाली,

पहाड़ी, कंगड़ी, बिलासपुरी और चंबियाली जैसी बोलियाँ जम्मू, हिमाचल प्रदेश, पंजाब और हरियाणा के लोगों द्वारा बोली जाती हैं।

हिंदी भारत की आधिकारिक भाषा है लेकिन भारत के संविधान द्वारा 22 अनुसूचित भाषाओं को मान्यता दी गई है। इनका उल्लेख भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में किया गया है। ये भाषाएं हैं;

1. कश्मीरी 2. पंजाबी 3. हिंदी 4. उर्दू 5. नेपाली 6. बंगाली 7. उड़िया 8. मराठी 9. कोंकणी 10. गुजराती 11. सिंधी 12. कन्नड़ 13. तमिल 14. तेलुगु 15. मलयालम 16. संस्कृत 17. असमिया 18. मणिपुरी 19. बोडो 20. डोगरी 21. मैथिली 22. संथाल

भारतीय भाषाएँ मुख्यतः चार भाषायी परिवारों से संबंधित हैं।

1. ऑस्ट्रिक (निषाद)
2. द्रविड़ (द्रविड़)
3. चीन–तिब्बती (किराता)
4. इंडो–आर्यन (आर्य)

इन भाषाई परिवारों का कालानुक्रमिक विकास भारतीय उपमहाद्वीप के नस्लीय इतिहास से निकटता से संबंधित है।

1. ऑस्ट्रिक परिवार (निषाद)

यह भाषाई परिवार आस्ट्रेलियाई (ऑस्ट्रिक) लोगों से संबंधित है जो नीग्रिटो के बाद भारत आए थे। भाषाओं के ऑस्ट्रिक परिवार को दो शाखाओं में विभाजित किया गया है, ऑस्ट्रोएशियाटिक और ऑस्ट्रोनेशियन, जिसे बाद में मलय–पोलिनेशियन कहा जाता था। ये भारत, दक्षिण पूर्व एशिया और प्रशांत द्वीप समूह में बोली जाती हैं।

ऑस्ट्रोएशियाटिक शाखा की तीन उप–शाखाएँ हैं: मुंडा, मोन–खमेर और वियतनामी–मुओंग, जिनमें से पहली भारत में स्थित है। भारत में मुंडा भाषाएं भारत के पूर्वी और दक्षिणी हिस्सों में आदिवासियों द्वारा बोली जाती हैं। प्रसिद्ध मुंडा भाषाओं में निम्नलिखित शामिल हैं: संताली, मुंदरी, भूमिज, बिरहर, हो, त्रि, कोरकू, खारी, जुआंग और सावरा आदि। मुंडा बोलने वाले ज्यादातर पहाड़ियों और जंगलों में पाए जाते हैं।

2. द्रविड़ भाषाएँ

वास्तविक शब्द 'द्रविड़ियन' का प्रयोग सर्वप्रथम रॉबर्ट ए. काल्डवेल द्वारा किया गया था, जिन्होंने संस्कृत शब्द द्रविड़ को द्रविड़ भाषाओं में पेश किया था, दुनिया के कई हिस्सों में फैली चार अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर ज्ञात भाषाओं के अलावा, वर्तमान गणना के अनुसार 26 द्रविड़ भाषाएं हैं, जिनमें से 25 भारत में बोली जाती है और एक (ब्राहुई) पाकिस्तान–अफगानिस्तान सीमा पर बलूचिस्तान में बोली जाती है। दक्षिण एशिया में 300 मिलियन से अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली, द्रविड़ भाषाओं की पुरातनता मुख्यतः शास्त्रीय तमिल की समृद्ध व्याकरणिक और भाषाई–साहित्यिक परंपरा के कारण है।

तमिल के अलावा, यहां तक कि अन्य प्रमुख द्रविड़ भाषाओं, अर्थात् मलयालम, कन्नड़ और तेलुगु में पूर्व–ईसाई युग से संबंधित स्वतंत्र लिपि और साहित्यिक इतिहास हैं। ये भाषाएँ मुख्य रूप से दक्षिणी पठारी क्षेत्र और आसपास के तटीय मैदानों में केंद्रित हैं।

3. चीन–तिब्बती परिवार

इस भाषाई परिवार में तिब्बत हिमालय पर्वतीय क्षेत्र और भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों में बोली जाने वाली 70 भाषाएँ शामिल हैं। इस परिवार की महत्वपूर्ण भाषाएँ तिब्बती, भोटिया, किन्नौरी, लेपचा, अदि मिरी, आका, डफला, मिशी, अबोर, बोडो, गारो, मिकिर, त्रिपुरी, अंगामी, सेमा, मणिपुरी, लुशाई एवं कोन्याक आदि हैं। ये भाषाएँ लगभग लद्दाख, हिमाचल प्रदेश के कुछ हिस्सों, सिक्किम, असम, मेघालय और अन्य उत्तर–पूर्वी राज्यों में रहने वाले विभिन्न आदिवासी समुदायों के 8 मिलियन लोगों द्वारा बोली जाती हैं।

4. इंडो–आर्यन भाषाएं

भाषाओं और मातृभाषाओं का सबसे बड़ा हिस्सा इंडो–यूरोपीय भाषाओं के इंडो–आर्यन उप–परिवार से संबंधित है। इन्हें इंडिक या भारतीय के रूप में भी जाना जाता है। इन्हें दो प्रमुख शाखाओं में विभाजित किया गया है – दर्दीक और इंडो–आर्यन। दर्दीक भाषाओं में दर्दी, शिना, कश्मीरी और कोहिस्तानी शामिल हैं, और इंडो–आर्यन समूह की भाषाएँ हिंदी, उर्दू, संस्कृत, पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, कोंकणी, उड़िया, बंगाली, असमिया, सिंधी और नेपाली आदि हैं। इंडो–आर्यन भाषाएँ, हिंदी और बंगाली अंर्तराष्ट्रीय स्तर पर सबसे प्रसिद्ध भाषाएँ हैं।

भाषा द्वारा जनसंख्या का वितरण

भाषाओं और मातृभाषाओं पर 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, भारत की कुल आबादी का 3/4 हिस्सा इंडो–आर्यन परिवार की भाषाएं बोलता है। 43.63% ने हिंदी भाषा बोली, उसके बाद बंगाली (8.03%), मराठी (6.86%), तेलुगु (6.70%), तमिल (5.70%), गुजराती, उर्दू, कन्नड़, उड़िया, मलयालम, पंजाबी, असमिया, मैथिली, संथाली, कश्मीरी, नेपाली, सिंधी, डोगरी, कोंकणी, मणिपुरी, बोडो और संस्कृत हैं। यद्यपि संस्कृत लगभग 25000 लोगों द्वारा बोली जाती है, लेकिन इसके प्रतिशत की गणना करते समय, यह बहुत ही सूक्ष्म निकली है (तालिका 14.13)।

तालिका 14.13: भारत की कुल जनसंख्या में अनुसूचित भाषाएं बोलने वाले लोगों का अनुपात

क्रम संख्या	अनुसूचित भाषाएं	बोलने वाले लोगों का (%)
1	हिन्दी	43.63
2	बंगाली	8.03
3	मराठी	6.86
4	तेलुगू	6.70
5	तमिल	5.70
6	गुजराती	4.58
7	उर्दू	4.19
8	कन्नड़	3.61
9	उड़ीया	3.10
10	मलयालम	2.88

11	पंजाबी	2.74
12	असमी	1.26
13	मैथिली	1.12
14	संथाली	0.61
15	कश्मीरी	0.56
16	नेपाली	0.24
17	सिंधि	0.23
18	डोगरी	0.21
19	कोंकणी	0.19
20	मणिपुरी	0.15
21	बोड़ो	0.12
22	संस्कृत	नगण्य

स्त्रोतः भारत की जनगणना, भाषाएं एवं मातृ भाषा, 2011

बोध प्रश्न 4

भारतीय भाषाई परिवार में कितनी भाषाएँ हैं? भाषाई परिवार की किसी एक भाषा को परिभाषित कीजिए।

14.7 जाति और जनजाति

भारतीय समाज विभिन्न संप्रदायों और वर्गों में विभाजित है। इसका कारण देश में प्रचलित जाति व्यवस्था है। जाति व्यवस्था की जड़ें मनुस्मृति में लोगों को वर्ण या व्यवसाय के आधार पर विभाजित करने तक जाती हैं। इसने समाज में कई बुराइयां लाई हैं।

अनुसूचित जातियां हिंदू जाति व्यवस्था के ढांचे के भीतर उप–समुदाय हैं, जिन्होंने ऐतिहासिक रूप से अपनी कथित 'निम्न स्थिति' के कारण भारत में वंचन, उत्पीड़न और अत्यधिक सामाजिक अलगाव का सामना किया है। संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश, 1950 के अनुसार भारत में केवल सीमान्त हिंदू समुदायों को ही अनुसूचित जाति माना जा सकता है।

जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नाम के चार प्रमुख वर्णों में से एक थे, उन्हें सवर्ण कहा जाता है।

हिंदू चार–स्तरीय जाति व्यवस्था, या वर्ण व्यवस्था ने इन समुदायों को काम करने के लिए मजबूर किया, जिसमें मुख्य रूप से स्वच्छता, जानवरों के शवों का निपटान, मल की सफाई, और अन्य कार्य शामिल थे जिनमें "अशुद्ध" सामग्री का संपर्क शामिल था।

अवर्ण को 'अछूत' भी कहा जाता था और दलित नाम से जाना जाता है, यह शब्द हिंदी शब्द दलन से आया है, जिसका अर्थ है उत्पीड़ित या टूटा हुआ। महात्मा गांधी ने उन्हें हरिजन कहा, जिसका अर्थ था 'भगवान की संतान'। अनुसूचित जाति शब्द का इस्तेमाल

पहली बार अंग्रेजों द्वारा भारत सरकार अधिनियम, 1935 में किया गया था, जिसने सबसे पहले निचली जातियों को 'दलित वर्गों' के तहत वर्गीकृत किया था।

2011 की जनगणना के अनुसार, भारत में अनुसूचित जातियों की संख्या कुल जनसंख्या का 16.63% है, कुल मिलाकर 201,378,372 लोग। इन अनुसूचित जातियों का पांचवां हिस्सा केवल उत्तर प्रदेश में पाया जाता है। उत्तर प्रदेश की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों की संख्या सबसे अधिक है। यह राज्य की कुल जनसंख्या का 20. 70% है। यानी उत्तर प्रदेश में रहने वाला हर पांचवां व्यक्ति अनुसूचित जाति वर्ग का है। यद्यपि उत्तर प्रदेश की जनसंख्या में अनुसूचित जातियों की संख्या सबसे अधिक है, लेकिन अनुसूचित जाति का सबसे बड़ा अनुपात पंजाब राज्य में पाया जाता है, जहाँ वे कुल जनसंख्या का 31.94% हैं।

अनुसूचित जाति के लोगों की दूसरी सबसे बड़ी संख्या पश्चिम बंगाल में है, इसके बाद बिहार, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्य प्रदेश और कर्नाटक में है (तालिका 14.14)।

दो राज्यों और दो केंद्र शासित प्रदेशों जैसे अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, लक्षद्वीप और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह ने अपनी कुल आबादी में अनुसूचित जाति की आबादी नहीं होने की सूचना दी।

तालिका 14.14: भारत में अनुसूचित जाति जनसंख्या का वितरण, 2011

नम	अनुसूचित जाति	%
भारत	***201378372***	***100.00***
उत्तर प्रदेश	41357608	20.54
पश्चिम बंगाल	21463270	10.66
बिहार	16567325	8.23
तमिलनाडु	14438445	7.17
आंध्र प्रदेश	13878078	6.89
महाराष्ट्र	13275898	6.59
राजस्थान	12221593	6.07
मध्य प्रदेश	11342320	5.63
कर्नाटक	10474992	5.20
पंजाब	8860179	4.40
ओडिशा	7188463	3.57
हरियाणा	5113615	2.54
गुजरात	4074447	2.02
झारखंड	3985644	1.98
छतीसगढ़	3274269	1.63
केरला	3039573	1.51
दिल्ली	2812309	1.40

असम	2231321	1.11
उत्तराखंड	1892516	0.94
हिमाचल प्रदेश	1729252	0.86
जम्मू एवं कश्मीर	924991	0.46
त्रिपुरा	654918	0.33
चंडीगढ़	199086	0.10
पुडुचेरी	196325	0.10
मणिपुर	97328	0.05
सिक्किम	28275	0.01
गोआ	25449	0.01
मेघालय	17355	0.01
दादर एवं नगर हवेली	6186	0.00
दमन एवं दीव	6124	0.00
मिजोरम	1218	0.00
अरूणाचल प्रदेश	0	0.00
नागालैंड	0	0.00
लक्षद्वीप	0	0.00
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	0	0.00

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार, 2011

तालिका 14.15ः भारत, अनुसूचित जाति की जनसंख्या का कुल जनसंख्या में अनुपात

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	कुल जनसंख्या	अनुसूचित जाति जनयंख्या	%
भारत	**1210854977**	**201378372**	**16.63**
पंजाब	12541302	41357608	31.94
हिमाचल प्रदेश	6864602	21463270	25.19
पश्चिम बंगाल	27743338	16567325	23.51
उत्तर प्रदेश	1055450	14438445	20.70
हरियाणा	10086292	13878078	20.17
तमिलनाडु	25351462	13275898	20.01
चंडीगढ़	16787941	12221593	18.86
उत्तराखंड	68548437	11342320	18.76
राजस्थान	199812341	10474992	17.83
त्रिपुरा	104099452	8860179	17.83
कर्नाटक	610577	7188463	17.15
ओडिशा	1383727	5113615	17.13

दिल्ली	1978502	4074447	16.75
आंध्र प्रदेश	2855794	3985644	16.41
बिहार	1097206	3274269	15.91
पुडुचेरी	3673917	3039573	15.73
मध्य प्रदेश	2966889	2812309	15.62
छतीसगढ़	31205576	2231321	12.82
झारखंड	91276115	1892516	12.08
महाराष्ट्र	32988134	1729252	11.81
केरल	41974218	924991	9.10
जम्मू एवं कश्मीर	25545198	654918	7.38
असम	72626809	199086	7.15
गुजरात	60439692	196325	6.74
सिक्किम	243247	97328	4.63
मणिपुर	343709	28275	3.41
दमन एवं दीव	112374333	25449	2.52
दादर एवं नगर हवेली	84580777	17355	1.80
गोवा	61095297	6186	1.74
मेघालय	1458545	6124	0.58
मिजोरम	64473	1218	0.11
अरूणाचल प्रदेश	33406061	0	0.00
नागालैंड	72147030	0	0.00
लक्षद्वीप	1247953	0	0.00
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	380581	0	0.00

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार, 2011

कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति की आबादी का अनुपात एक पूरी तरह से अलग तस्वीर पेश करता है। तालिका 14.15 में प्रस्तुत जनगणना के आंकड़ों के अनुसार 16.63% भारतीय अनुसूचित जाति वर्ग के हैं। राज्यवार अनुसूचित जातियों का सबसे बड़ा अनुपात पंजाब (31.94%) में पाया जाता है, जिसका अर्थ है कि हर तीसरा पंजाबी अनुसूचित जाति वर्ग का है। पंजाब के बाद हमारे पास हिमाचल प्रदेश (25.19%) है जहां हर चौथा व्यक्ति अनुसूचित जाति का है। पश्चिम बंगाल में 23.51% लोग अनुसूचित जाति के हैं। उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु और हरियाणा में हर पांचवां व्यक्ति अनुसूचित जाति का है।

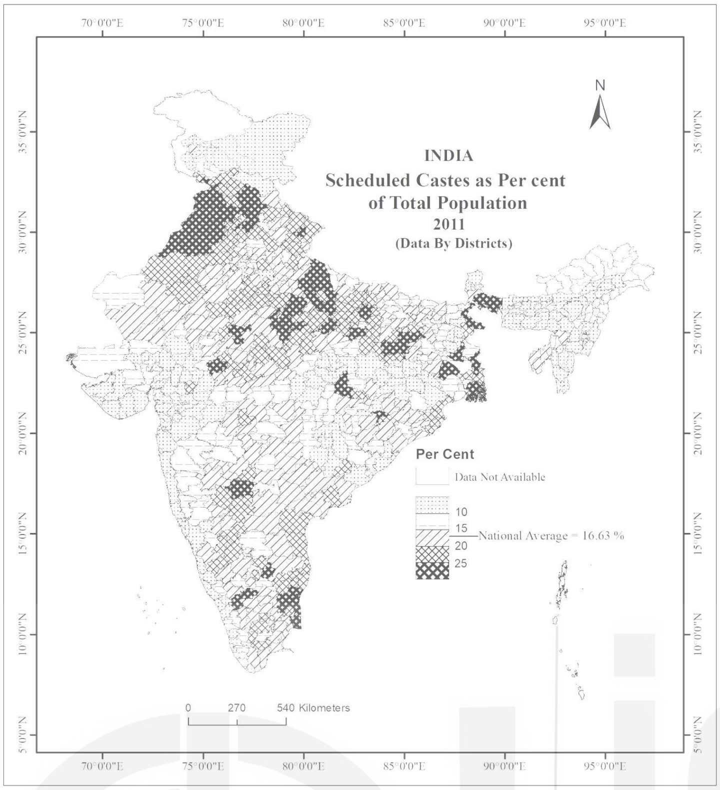

चित्र 14.10: कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति का प्रतिशत

दूसरी ओर, हमारे पास ऐसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश हैं जिनकी कुल आबादी में अनुसूचित जाति की आबादी का 1% से भी कम है ये हैं मेघालय और मिजोरम।

अनुसूचित जाति की आबादी के जिलेवार वितरण से पता चलता है कि अनुसूचित जातियों का उच्चतम अनुपात पश्चिम बंगाल के कूच बिहार (50.17%) जिले में था, उसके बाद शहीद भगत सिंह नगर (42.51%) जो पहले नवांशहर के नाम से जाना जाता था, मुक्तसर (42.31%), फिरोजपुर (42.17%), जालंधर (38.95%), फरीदकोट (38.92%), जलपाईगुड़ी (37.65%), गंगानगर (36.58%), मोगा (36.50%) और होशियारपुर (35.14%)। दूसरी ओर, हमारे पास 33 जिले ऐसे हैं जहां कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों का अनुपात शून्य है या वे नगण्य हैं। अन्य 33 जिलों की आबादी में अनुसूचित जाति के 1% से भी कम लोग हैं।

भौगोलिक पार्थक्य के आधार पर अनुसूचित जनजातियों को सीमान्त समुदायों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग के अनुसार भारत में 700 से अधिक अनुसूचित जनजातियां हैं।

अनुसूचित जातियों की परिभाषा की तरह, जिसे ब्रिटिश काल के कानून से लिया गया था, "अनुसूचित जनजाति" की परिभाषा को 1931 की जनगणना से बरकरार रखा गया है।

राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग बताता हैः इन कारणों से आदिमता, भौगोलिक पार्थक्य, संकोची और सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक पिछड़ापन ऐसे लक्षण हैं जो हमारे देश के अनुसूचित जनजाति समुदायों को अन्य समुदायों से अलग करते हैं।

इसके अलावा, जनजातीय मामलों का मंत्रालय देश भर के 18 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों से 75 जनजातियों की एक सूची भी जारी करता है जो विशेष रूप से सुभेद्य या कमजोर जनजातीय समूहों (PVTGs) के वर्गीकरण में आते हैं। मंत्रालय राज्यों की सिफारिशों के आधार पर PVTGs के संरक्षण के लिए विशिष्ट कल्याणकारी पहल करता है, जो सभी अनुसूचित जनजातियों तक विस्तारित नहीं होती हैं।

'अनुसूचित जनजाति' शब्द सबसे पहले भारत के संविधान में आया था। अनुच्छेद 366 (25) ने अनुसूचित जनजातियों को "ऐसी जनजातियों या जनजातीय समुदायों के कुछ हिस्सों या समूहों के रूप में परिभाषित किया है जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजाति माना जाता है"।

हरियाणा और पंजाब राज्य और चंडीगढ़, दिल्ली और पुडुचेरी के केंद्र शासित प्रदेशों के संबंध में किसी भी समुदाय को अनुसूचित जनजाति के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया गया है।

अनुच्छेद 342 जनजातियों या जनजातीय समुदायों या जनजातियों या जनजातीय समुदायों के कुछ हिस्सों या समूहों का विशेष वर्णन प्रदान करता है जिन्हें संविधान के प्रयोजनों के लिए उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में अनुसूचित जनजाति माना जाता है। इन प्रावधानों के अनुसरण में, अनुसूचित जनजातियों की सूची प्रत्येक राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के लिए अधिसूचित की जाती है और केवल उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के अधिकार क्षेत्र में मान्य होती है न कि बाहर।

अनुसूचित जनजातियों की सूची राज्य/केंद्र शासित प्रदेश विशिष्ट है और एक राज्य में अनुसूचित जनजाति के रूप में घोषित समुदाय को दूसरे राज्य में ऐसा होने की आवश्यकता नहीं है। किसी समुदाय को अनुसूचित जनजाति के रूप में शामिल करना एक सतत प्रक्रिया है।

इन समुदायों की आवश्यक विशेषताएं हैंः

- आदिम लक्षण
- भौगोलिक पार्थक्य
- विशिष्ट संस्कृति
- मुक्त रूप से समुदाय के संपर्क में आने से कतराते हैं।
- आर्थिक रूप से पिछड़े

जनजातीय समुदाय मैदानों और जंगलों से लेकर पहाड़ियों और दुर्गम क्षेत्रों तक विभिन्न पारिस्थितिक और भू–जलवायवीय परिस्थितियों में रहते हैं। जनजातीय समूह सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक विकास के विभिन्न चरणों में हैं। जबकि कुछ जनजातीय समुदायों ने जीवन की मुख्य धारा को अपनाया है, स्पेक्ट्रम या मानावली के दूसरे छोर पर, कुछ अनुसूचित जनजातियां जिनकी संख्या 75 है, विशेष रूप से सुभेद्य या कमजोर जनजातीय समूहों (PVTGs) के रूप में जानी जाती है, जिनकी विशेषता है

- प्रौद्योगिकी का पूर्व–कृषि स्तर
- स्थिर या घटती जनसंख्या
- अत्यंत कम साक्षरता

- अर्थव्यवस्था का निर्वाह स्तर

तालिका 14.17: भारत की अनुसूचित जनजाति जनसंख्या का वितरण, 2011

नम	अनुसूचित जनजाति	%
भारत	***104545716***	***100.00***
मध्य प्रदेश	15316784	14.65
महाराष्ट्र	10510213	10.05
ओडिशा	9590756	9.17
राजस्थान	9238534	8.84
गुजरात	8917174	8.53
झारखंड	8645042	8.27
छतीसगढ़	7822902	7.48
आंध्र प्रदेश	5918073	5.66
पश्चिम बंगाल	5296953	5.07
कर्नाटक	4248987	4.06
असम	3884371	3.72
मेघालय	2555861	2.44
नागालैंड	1710973	1.64
जम्मू एवं कश्मीर	1493299	1.43
बिहार	1336573	1.28
मणिपुर	1167422	1.12
त्रिपुरा	1166813	1.12
उत्तर प्रदेश	1134273	1.08
मिजोरम	1036115	0.99
अरूणाचल प्रदेश	951821	0.91
तमिलनाडु	794697	0.76
केरल	484839	0.46
हिमाचल प्रदेश	392126	0.38
उत्तराखंड	291903	0.28
सिक्किम	206360	0.20
दादर एवं नगर हवेली	178564	0.17
गोवा	149275	0.14
लक्षद्वीप	61120	0.06
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	28530	0.03
दमन एवं दीयू	15363	0.01

पंजाब	0	0.00
चंडीगढ़	0	0.00
हरियाणा	0	0.00
दिल्ली	0	0.00
पुडुचेरी	0	0.00

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार, 2011

भारत में अनुसूचित जनजातियों का वितरण

अनुसूचित जनजातियों को 30 राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में अधिसूचित किया गया है और अनुसूचित जनजातियों के रूप में अधिसूचित व्यक्तिगत जातीय समूहों आदि की संख्या 705 है। 2011 की जनगणना के अनुसार देश की जनजातीय आबादी 10.45 करोड़ है, जो कुल जनसंख्या का 8.6% है (तालिका 14.17 और 14.18)। उनमें से लगभग 90% (89.97) ग्रामीण क्षेत्रों में और 10.03% शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। 2001 से 2011 तक आदिवासियों की दशकीय जनसंख्या वृद्धि कुल जनसंख्या के 17.69% के मुकाबले 23.66% रही है।

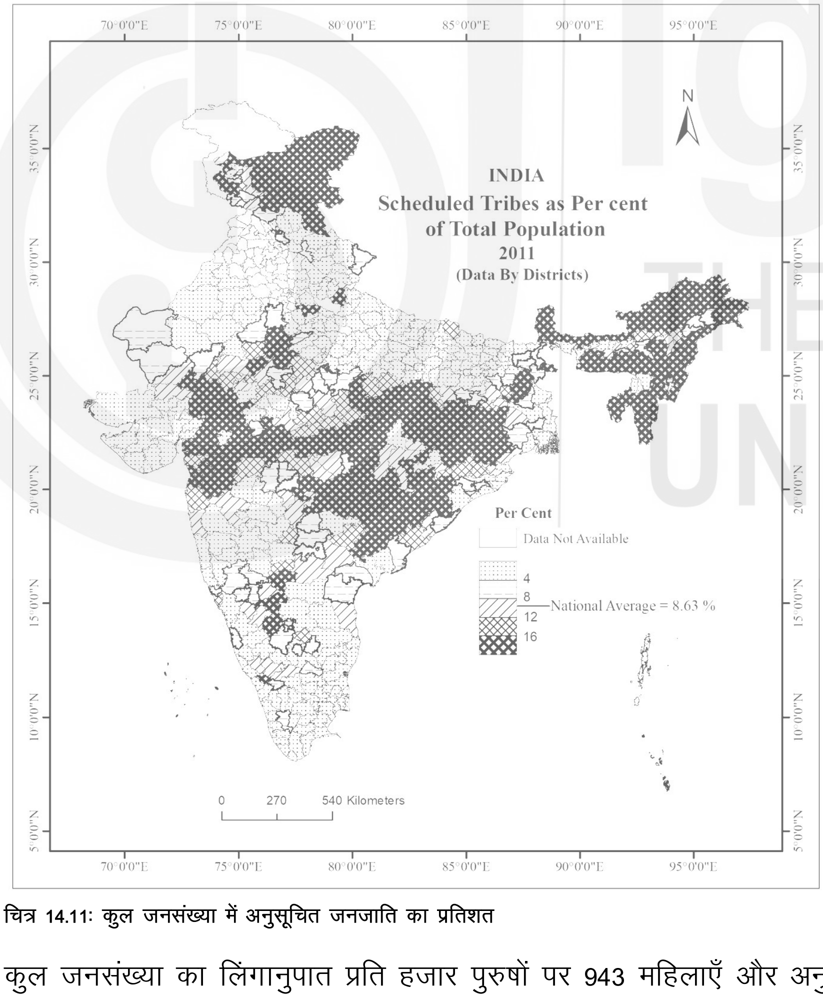

चित्र 14.11: कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत

कुल जनसंख्या का लिंगानुपात प्रति हजार पुरुषों पर 943 महिलाएँ और अनुसूचित जनजाति का 990 महिलाएँ प्रति हज़ार पुरुष है।

मोटे तौर पर, अनुसूचित जनजातियाँ दो अलग–अलग भौगोलिक क्षेत्रों में निवास करती हैं–मध्य भारत और उत्तर–पूर्वी क्षेत्र। अनुसूचित जनजाति की आधी से अधिक आबादी मध्य भारत, यानी मध्य प्रदेश (14.65%), महाराष्ट्र (10.05%), ओडिशा (9.17%), राजस्थान (8.84%), गुजरात (8.53%), झारखंड (8.27%), छत्तीसगढ़ (7.48%), आंध्र प्रदेश (5.66%) और पश्चिम बंगाल (5.07%) में केंद्रित है। अन्य विशिष्ट क्षेत्र उत्तर–पूर्व है जिसमें असम, नागालैंड, मिजोरम, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश शामिल हैं। दूसरे छोर पर हमारे पास गोवा, लक्षद्वीप, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह और दमन और दीव जैसे राज्य/केंद्र शासित प्रदेश हैं जहां देश की कुल अनुसूचित जनजाति की जनसँख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसँख्या का अनुपात बहुत कम है (तालिका 14.17)।

तालिका 14.18: भारत की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति का अनुपात, 2011

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	कुल जनसंख्या	अनुसूचित जनजाति का अनुपात	%
भारत	**1210854977**	**104545716**	**8.63**
लक्षद्वीप	64473	61120	94.80
मिजोरम	1097206	1036115	94.43
नागालैंड	1978502	1710973	86.48
मेघालय	2966889	2555861	86.15
अरूणाचल प्रदेश	1383727	951821	68.79
दादर एवं नगर हवेली	343709	178564	51.95
मणिपुर	2855794	1167422	40.88
सिक्किम	610577	206360	33.80
त्रिपुरा	3673917	1166813	31.76
छतीसगढ	25545198	7822902	30.62
झारखंड	32988134	8645042	26.21
ओडिशा	41974218	9590756	22.85
मध्य प्रदेश	72626809	15316784	21.09
गुजरात	60439692	8917174	14.75
राजस्थान	68548437	9238534	13.48
असम	31205576	3884371	12.45
जम्मू एवं कश्मीर	12541302	1493299	11.91
गोवा	1458545	149275	10.23
महाराष्ट्र	112374333	10510213	9.35
अंडमान एवं निकोबार द्वीप	380581	28530	7.50
आंध्र प्रदेश	84580777	5918073	7.00
कर्नाटक	61095297	4248987	6.95
दमन एवं दीव	243247	15363	6.32

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पश्चिम बंगाल	91276115	5296953	5.80
हिमाचल प्रदेश	6864602	392126	5.71
उत्तराखंड	10086292	291903	2.89
केरल	33406061	484839	1.45
बिहार	104099452	1336573	1.28
तमिलनाडु	72147030	794697	1.10
उत्तर प्रदेश	199812341	1134273	0.57
पंजाब	27743338	0	0.00
चंडीगढ़	1055450	0	0.00
हरियाणा	25351462	0	0.00
दिल्ली	16787941	0	0.00
पुडुचेरी	1247953	0	0.00

स्त्रोतः भारत की जनगणना, प्राथमिक जनगणना सार, 2011

तालिका 14.18 के आंकड़े राज्य की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या के अनुपात को दर्शाता है। इससे पता चलता है कि जिन राज्यों में देश की कुल अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का अनुपात सबसे कम था, उनकी कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का अनुपात सबसे ज्यादा था। उदाहरण के लिए, लक्षद्वीप में देश की कुल अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का केवल 0.06% था, लेकिन लक्षद्वीप के भीतर अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का अनुपात राज्य की कुल जनसंख्या का 94.80% था। इसी तरह, कुछ द्वीपों और उत्तर–पूर्वी राज्यों में उनकी कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का अनुपात सबसे अधिक था।

14.8 सारांश

इस इकाई में आपने निम्नलिखित सीखाः

- जन्म, मृत्यु और प्रवास तीन प्रमुख तत्व हैं जो मानव जनसंख्या परिवर्तन को प्रेरित करते हैं और बदले में जैविक, सामाजिक, आर्थिक और जनसांख्यिकीय निर्धारकों से प्रभावित होते हैं।
- जनसंख्या की वृद्धि की प्रवृत्ति और जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप समान नहीं हैं।
- भारत में जनसंख्या का वितरण अधिवास के इतिहास, भूभाग, जलवायु, रोजगार, व्यापार और वाणिज्य आदि जैसे कारकों पर आधारित है।
- अनुकूल भौतिक कारकों जैसे उपजाऊ भूमि, अनुकूल जलवायु के कारण गंगा के मैदानी इलाकों, पूर्वी तट के डेल्टा क्षेत्र में जनसंख्या का उच्च घनत्व हो गया है।
- प्रायद्वीपीय क्षेत्र, मरुस्थलीय क्षेत्र, उत्तर–पूर्व आदि में उबड़–खाबड़ इलाकों और प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के कारण जनसंख्या का घनत्व कम है।
- जनसंख्या की आयु और लिंग वितरण को आलेखीय रूप से दर्शाने का सबसे प्रभावी तरीका जनसंख्या पिरैमिड है।
- भारत की तीन–चौथाई आबादी इंडो–आर्यन भाषाएं बोलती है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

- समग्र जनसंख्या के मामले में, उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जातियों का सबसे बड़ा अनुपात है, इसके बाद पश्चिम बंगाल, बिहार और इसी तरह के अन्य स्थान हैं।
- देश में 10.45 करोड़ आदिवासी हैं, जो 2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार कुल आबादी का 8.6% है।

14.9 अंतिम प्रश्न

1. जनसंख्या वृद्धि से आप क्या समझते हैं? भारत के संदर्भ में जनसंख्या वृद्धि के विभिन्न घटकों का वर्णन कीजिए।
2. भारतीय परिप्रेक्ष्य में जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों की व्याख्या कीजिए।
3. जनसंख्या पिरैमिड क्या है? भारत के जनसंख्या पिरैमिड के स्वरूप का वर्णन कीजिए।
4. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से आप क्या समझते हैं? भारत के विशेष संदर्भ में इसकी व्याख्या कीजिए।
5. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें

   a) भारत में जनसंख्या वितरण का प्रतिरूप
   b) भारत में जनसंख्या घनत्व का क्षेत्रीय प्रतिरूप
   c) जनसंख्या पिरैमिड और इसके प्रकार
   d) लिंगानुपात का प्रकार
   e) भारत की भाषाई विविधता

14.10 उत्तर

<u>बोध प्रश्न</u>

1. यह नस्ल के कारक, महिलाओं में प्रजनन क्षमता और पुरुषों में आनुवंशिक प्रजनन क्षमता को संदर्भित करता है जो प्रजनन क्षमता को निर्धारित करता है। यह विभिन्न जातियों के साथ–साथ एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होता है।
2. यह उस शब्द को दर्शाता है जिसमें पृथ्वी की सतह का 5% क्षेत्र शामिल है जो मनुष्यों के लिए स्थायी रूप से बसने के लिए उपयुक्त है।
3. जब संकुचित पिरैमिड को एक दंड आरेख में दर्शाया जाता है तो यह जनसंख्या के युवा लोगों की कम या घटती संख्या को दर्शाता है।
4. भारतीय भाषाओं में चार भाषाई परिवार हैं। ऑस्ट्रिक परिवार का संबंध ऑस्ट्रलॉयड (ऑस्ट्रिक) लोगों से है। यह दो शाखाओं में विभाजित है, ऑस्ट्रोएशियाटिक और ऑस्ट्रोनेशियन।

<u>अंतिम प्रश्न</u>

1. अपने उत्तर में जनसंख्या वृद्धि का अर्थ शामिल करें। अनुभाग 14.2 का संदर्भ लें।

2. इसका उत्तर देने के लिए जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों की चर्चा कीजिए। अनुभाग 14.4 का संदर्भ लें।

3. जनसंख्या पिरैमिड को परिभाषित कीजिए और अपने उत्तर में भारतीय परिदृश्य को शामिल कीजिए। अनुभाग 14.5 का संदर्भ लें।

4. अपने उत्तर में, भारत में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की प्रमुख विशेषताओं की व्याख्या कीजिए। अनुभाग 14.7 का संदर्भ लें।

5. अनुभाग 14.3, 14.4, 14.5 और 14.6 का संदर्भ लें।

14.11 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

- Bogue, Donald J. (1969). *Principles of Demography*. New York: John Wiley and Sons, Inc.
- Dyson, T. (2010). *Population and Development: The Demographic Transition.* London: Zed Books.
- Dyson, T. (2018). *A Population History of India: From the First Modern People to the Present Day*. New Delhi: Oxford University Press.
- Chandna, R.C. (2014). *Geography of Population: Concepts, Determinants and Patterns.* New Delhi: Kalyani Publishers.
- Chaurasia, A.R. and Gulati, S.C. (2008). *India: The State of Population 2007.* New Delhi: Oxford University Press.
- Clarke John I. (1972). *Population Geography.* Oxford: Pergamon Press.
- Danino, M. (2010). *The Lost River: On the Trail of the Sarasvati.* Gurgaon: Penguin Books India Pvt. Ltd.
- Horiuchi, S. and Preston, S. (1988). Age-Specific Growth Rates: The Legacy of Past Population Dynamics. *Demography*, *25(3)*, 429-441.
- Staszewski, J. (1957). *Vertical Distribution of World Population.* Warsaw: State Scientific Publishing House.
- Stewart, John Q. and Warntz W. (1958). Macrogeography and Social Science. *Geographical Review, 48(2), 167-184.*
- Tharoor, S. (2018). *Why I Am A Hindu.* Australia: Scribe Publications.
- Trewartha, G.T. (1969). *A Geography of Population: World Patterns.* New York: John Wiley & Sons.
- United Nations (1953). *The Determinants and Consequences of Population Trends.* New York.
- United Nations (1973). *The Determinants and Consequences of Population Trends. Population Studies No. 50.* New York.
- Yadav, J. (2020). *'Mol Ki Bahuein' — The Women Haryana's Men Buy as Brides. The Print,* 23 November, 2020 retrieved from https://theprint.in/india/mol-ki-bahuein-the-women-haryanas-men-buy-as-brides/549641/.
- Chandna, R.C. (2016). *Geography of Population (10th Edition)* Ludhiana: Kalyani Publishers.
- Hussain, M. (2005). *Population Geography,* Jaipur: Rawat Publication.
- Maurya, S.D. (2018). *Population Geography*, Allahabad: Pravalika Publication.

- Premi, M.K. (2009). *India's Changing Population Profile*, New Delhi: National Book Trust India.
- Quazi, S.A. (2012). *Population Geography,* New Delhi: APH Publishing Corporation.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 15

अधिवास / बस्तियाँ

संरचना

15.1 प्रस्तावना
अपेक्षित सीखने के परिणाम
15.2 अधिवासों / बस्तियों का वर्गीकरण
15.3 ग्रामीण अधिवासों / बस्तियों के लक्षण
15.4 नगरीय / शहरी बस्तियों के लक्षण
15.5 नगरीकरण
15.6 सारांश
15.7 अंतिम प्रश्न
15.8 उत्तर
15.9 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

15.1 प्रस्तावना

आश्रय (मकान), भोजन और वस्त्र के साथ मनुष्य की महत्वपूर्ण बुनियादी आवश्यकता है। पहले मनुष्य वनों या जंगलों में रहा करते थे फिर गुफाओं में रहने लगे। मानव ने अपने लिए घर बनाना शुरू कर दिया था, जब उन्होंने पौधों और जानवरों का पालतू बनाना शुरू कर दिया था। अधिवास या बस्ती एक ऐसी जगह है जहाँ मानव निवास करते हैं या रहते हैं। मनुष्य स्थापित जीवन के लिए आवासों का निर्माण करता है, और जिस स्थान पर वे घर बनाते हैं उसे बस्ती या अधिवास के रूप में जाना जाता है। परिणामस्वरूप, अधिवास स्थायी रूप से आबादी वाला मानव निवास स्थान है, जो घरों और संबंधित इमारतों के एक समूह को दर्शाता है जो एक छोटे गांव से महानगर तक के आकार में हो सकता है। ए. एन. चार्क (1989), के अनुसार एक घर को भी एक बस्ती के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है, जबकि यह आमतौर पर इमारतों के समूह के लिए उपयोग किया जाता है। मनुष्य बस्तियों की स्थापना करके अपने भौतिक और सांस्कृतिक परिवेश के अनुकूल होने का प्रयास करता है। बस्ती एक समुदाय है जिसमें लोग रहते हैं। बस्तियों का आकार छोटे आवासों से लेकर बड़े शहरों तक भिन्न हो सकता है। बस्तियों में गाँव, कस्बे और शहर या नगर शामिल हो सकते हैं। बस्तियों में सड़क, तालाब, पार्क, अस्पताल, स्कूल, बाजार, सरकारी भवन, पुलिस स्टेशन और दमकल आदि जैसी निर्मित सुविधाएं भी शामिल हैं। बस्तियाँ दो प्रकार की होती हैं, अस्थायी और स्थायी।

अस्थायी बस्तियाँ आखेटकों, संग्रहकर्ताओं और उन लोगों द्वारा बनाई और कब्जा की जाती हैं जो ऋतु–प्रवास और स्थानांतरित कृषि करते हैं। अस्थायी बस्तियाँ उन लोगों

द्वारा भी बनाई जाती हैं जो आपदाओं के कारण अपने घरों से विस्थापित हो जाते हैं। टेंट और कच्चे घर अस्थायी बस्तियों के सबसे सामान्य रूप हैं।

स्थायी बस्तियों में पक्के घर शामिल हैं। स्थायी बस्तियों के लिए कुछ महत्वपूर्ण निर्धारण कारक हैं – कृषि के लिए जल और भूमि, परिवहन, संचार, शिक्षा के लिए बुनियादी ढांचा, आजीविका, स्वास्थ्य और सुरक्षा की उपलब्धता।

भूगोल में बस्तियों का अध्ययन मानव भूगोल में किया जाता है। प्राकृतिक और मानवीय कारकों जैसेकि भौगोलिक, जलवायु, सांस्कृतिक, सामाजिक–आर्थिक और व्यवहारिक, के बीच परस्पर क्रिया, अनंत अधिवास प्रारूप को जन्म देती है (देसाई, 1984)।

बस्ती में साइट (स्थल) और स्थान (अवस्थिति) होता है। साइट या स्थल वह भूमि क्षेत्र है जिस पर बस्ती बनी होती है, यह एक पहाड़ी के आधार पर, नदी के किनारे या मैदान पर हो सकती है जबकि स्थान क्षेत्र में अन्य सांस्कृतिक विशेषताओं या बस्तियों के संबंध में इसकी स्थिति है। उदाहरण के लिए, चंडीगढ़ शिवालिक की तलहटी के पास बसा है, हम इसके स्थल का वर्णन कर रहे हैं। लेकिन जब हम कहते हैं कि यह नई दिल्ली से लगभग 265 कि.मी. उत्तर में स्थित है और पूर्व में हरियाणा राज्य और अन्य सभी तरफ पंजाब राज्य से घिरा है, तो हम इसकी स्थिति का वर्णन कर रहे हैं।

अधिवास या बस्ती एक ऐसा स्थान है जहां लोग रहते हैं और कृषि, व्यापार और मनोरंजन जैसी गतिविधियों के माध्यम से परस्पर जुड़े होते हैं। भूगोल में बस्तियाँ हमें पर्यावरण के साथ मानव के संबंधों को समझने में मदद करती हैं।

ग्रामीण बस्ती एक ऐसा स्थान है जहां समुदाय प्राथमिक गतिविधियों जैसे कृषि, काष्ठ कर्म और खनन आदि में मुख्य रूप से शामिल होता है जबकि शहरी बस्ती में लोग मुख्य रूप से द्वितीयक और तृतीयक गतिविधियों जैसे उद्योग, व्यापार और सेवाओं आदि में लगे होते हैं।

कार्य, जनसंख्या आकार और जनसंख्या घनत्व के बीच प्रायः सह–संबंध होता है। एक ग्रामीण बस्ती में कम आबादी होती है। नगरीय बसावट में प्रायः विशाल जनसंख्या आकार और घनत्व होता है। भौतिक वातावरण बस्ती के स्थल का निर्धारण करता है, जो इस पर निर्भर करता हैः

जल आपूर्ति – मानव अस्तित्व और कृषि गतिविधियों के लिए जल आवश्यक है।

उच्चावच – व्यापक समतल भूमि जैसे बाढ़ के मैदान की उपलब्धता कृषि गतिविधियों को बढ़ावा देती है।

मृदा – कृषि गतिविधियों के लिए मृदा उर्वरता एक महत्वपूर्ण भाग है।

इसलिए, इस इकाई के अनुभाग 15.2 और 15.3 में ग्रामीण और शहरी बस्तियों की विशेषताओं पर विस्तार से चर्चा की गई है। अंतिम अनुभाग में भारत में नगरीकरण पर चर्चा की गई है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आपः

- अधिवासों या बस्तियों के वर्गीकरण को समझ सकेंगे:
- भारत की ग्रामीण और शहरी बस्तियों की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे:
- नगरीकरण की प्रक्रिया को परिभाषित कर सकेंगे।

15.2 अधिवासों या बस्तियों का वर्गीकरण

इस इकाई के मुख्य विषयों पर चर्चा करने से पहले, हम आपको कई मानदंडों के आधार पर बस्तियों के वर्गीकरण के बारे में संक्षेप में परिचित कराना चाहेंगे। यह आपको भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया के साथ ग्रामीण एवं शहरी दोनों बस्तियों की विशेषताओं को स्पष्ट रूप से समझने में मदद करेगा। इनकी चर्चा नीचे की गई है:

बस्तियों को उनके प्रारूप, आकार और आवास घनत्व के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है। इन्हें कार्यों, आकारिकी और अन्य कारकों के आधार पर भी वर्गीकृत किया जा सकता है, लेकिन सर्वाधिक मान्य मानदंड बस्ती के निवासियों द्वारा किया जाने वाला कार्य है।

प्रारूप या प्रतिरूप आधारित वर्गीकरण

प्रतिरूप के आधार पर अधिवास या बस्तियाँ पाँच प्रकार की होती हैं। ये एकाकी, परिक्षिप्त, आकेंद्रित, रेखीय और एकीकृत आकेंद्रित एवं रेखीय हैं।

एकाकी बस्ती में एक एकल फार्म या घर होता है जो किसी अन्य से बहुत दूर होता है, यह आमतौर पर भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में पाया जाता है।

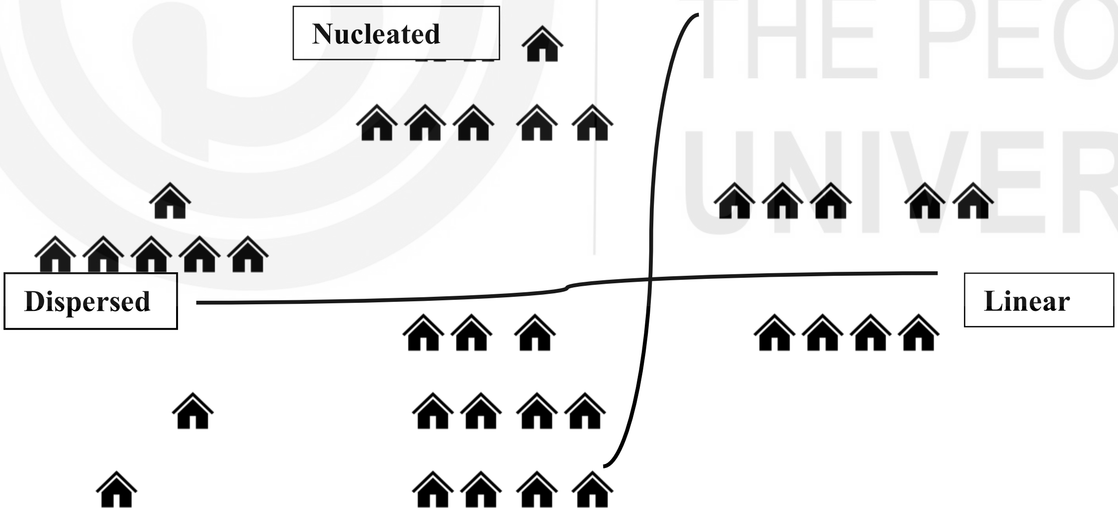

चित्र 15.1: अधिवासों या बस्तियों के प्रकार।

एक **परिक्षिप्त बस्ती** में कई घर, बिखरी हुई या परिक्षिप्त (जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है) होती है। आवास या घर एक दूसरे से एक या अधिक किलोमीटर की दूरी पर हो सकता है। इस प्रकार की बस्तियाँ हिमालय में समान्य रूप से पाई जाती हैं।

एक **आकेंद्रित या संहत/कॉम्पैक्ट बस्ती** में, इमारत या मकान क्लस्टर में पाया जाता है, सड़कों से जुड़ा होता है, और अधिवास का आकार लगभग गोलाकार या अनियमित हो

सकता है। ऐसी बस्तियाँ सांस्कृतिक या शहरी हो सकती हैं, जो उनके द्वारा किए जाने वाले आकार और कार्यों पर निर्भर करती हैं।

एक रेखीय या दीर्घित बस्ती एक सीधी या घुमावदार रेखा बनाती है, जो गति की एक पंक्ति का अनुसरण करती है, जैसे कि सड़क, नदी, समुद्र तट या लम्बी ढलानपाद पर। इस प्रकार की बस्ती ग्रामीण क्षेत्र में पाई जाती है, लेकिन रैखिक विकास से उनके बाह्य इलाके में शहरों का विस्तार हो सकता है।

अंत में, **एकीकृत आकेंद्रित एवं रेखीय बस्तियों** में दोनों प्रकार के अधिवासों की विशेषता मिलती हैं और ये तारांकित (स्टार) होती हैं। वे अक्सर मिलान बिंदु (जंक्शनों) पर होते हैं, और उनमें से कई शहरी इलाकों में होते हैं। चित्र 15.1 में बस्तियों के प्रकारों को दर्शाया गया है।

आकार और आवास घनत्व आधारित वर्गीकरण

बस्तियों को प्रमुख श्रेणियों अर्थात ग्रामीण और नगरीय या शहरी में वर्गीकरण, अधिवास में होने वाले कार्यों के साथ आकार और आवास घनत्व के आधार पर किया जाता है।

ग्रामीण बस्तियाँ अक्सर आकार में छोटी होती हैं और इनमें आवास और जनसंख्या घनत्व कम होता है।

शहरी बस्तियाँ आकार में बड़ी होती हैं और इनमें कई घर एक साथ बने होते हैं।

ग्रामीण बस्तियों को आकार के आधार पर इन चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, वासभूमि या घर, मकानों से युक्त खेत, पल्ली या टोला या पुरवा और गाँव।

एक **एकल घर** में केवल एक परिसर होता है, जो आमतौर पर अलग–थलग और एक परिवार के स्वामित्व में होता है, और दूसरे से कई किलोमीटर दूर हो सकता है।

मकानों से युक्त खेत में दो या दो से अधिक घर होते हैं, जो आमतौर पर एक खेत में फैले होते हैं और पचास व्यक्ति निवास करते हैं।

एक पल्ली कई बिखरे हुए, आकेंद्रित या रैखिक घरों से बना होता है जिसमें आमतौर पर दुकानें, स्कूल या अन्य सेवा केंद्र होते हैं और कुछ सैकड़ों लोग निवास करते हैं जो खेती, शिकार और मत्स्य पालन जैसी प्राथमिक गतिविधियों में लगे होते हैं।

एक **गांव**, एक पल्ली या टोला की तरह, बिखरा हुआ, केंद्रीकृत या दोनों केंद्रीकृत या रैखिक हो सकता है, लेकिन गांव में अधिक घर होते हैं और आबादी कई हजारों तक हो सकती है। लोग प्राथमिक व्यवसायों में संलग्न रहते हैं, लेकिन शिल्प और कुटीर उद्योग और स्कूल, डाकघर, स्वास्थ्य केंद्र और बाजार जैसे सेवा केंद्र भी हो सकते हैं।

शहरी बस्तियों को आकार के अनुसार समान रूप से चार प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। ये कस्बे या शहर, नगर, सन्नगर और महानगर हैं।

शहर में कई हजार व्यक्ति निवास करते हैं। मकान एक साथ बनते हैं और प्राथमिक व्यवसाय के बजाय द्वितीयक और तृतीयक व्यवसाय पर अधिक बल दिया जाता है। आमतौर पर, एक शहर में बड़े गोदाम या दुकान होते हैं, और कई अन्य सामाजिक और व्यावसायिक सुविधाएं होती हैं।

नगर किसी देश के प्रमुख शहर होते हैं, जैसे प्रमुख राज्यों की राजधानियाँ जिनमें प्रशासनिक कार्य होते हैं। एक शहर की प्राचीर या दीवारी—नगर होने की पुरानी अवधारणा अब मान्य नहीं है क्योंकि इन दिनों शहर अब प्राचीर या दीवारी—नगर नहीं हैं। ये आमतौर पर कस्बों से बड़े होते हैं।

जब दो या दो से अधिक कस्बों या भागों का विकास होता है और एक साथ मिलकर 1 मिलियन व्यक्तियों या उसके आसपास के बड़े शहरी क्षेत्र का निर्माण होता है, तो एक **सन्नगर** बनता है। मूल शहरों के बीच की सीमा अस्पष्ट होती है, ठीक वैसे ही जैसे हमारे पास लागोस (इकेजा) और अकरा (टेमा) में है।

विकसित नगर (मेगापोलिस) कई शहर या सन्नगर हैं जो वर्षों से विकसित हुए हैं और एक विशाल शहरी बस्ती का निर्माण होता है। इस तरह की बस्तियाँ कई वर्ग किलोमीटर में फैली हुई होती हैं और, सन्नगर के रूप में, यह जानना मुश्किल है कि एक मूल शहर कहाँ समाप्त होता है और दूसरा कहाँ शुरू होता है। शहरी बस्तियों के पदानुक्रम में विकसित नगर (मेगापोलिस) सबसे ऊपर है। इसके उदाहरण नई दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, कोलकाता (भारत), टोक्यो (जापान), ग्रेटर लंदन (ब्रिटेन), मैक्सिको सिटी (मध्य अमेरिका), और जर्मनी के रहुर विनिर्माण क्षेत्र में डसेलडोल्फ—ड्यूसबर्ग—एसेन—डॉर्टमुंड हैं।

ग्रामीण अधिवास या बस्तियाँ

''ग्रामीण अधिवास'' शब्द घरों के समूह ''गांवों'' के साथ आसपास की भूमि को संदर्भित करता है, जहां से निवासियों को अपनी आजीविका मिलती है। विभिन्न लेखकों ने गाँव को विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया है। रिचथोफेन का मत है कि ''वे (गांव) परिवारों के समूह हैं जो एक ही फसल के उत्पादन में भाग लेने की आवश्यकता के कारण एक दूसरे से जुड़े रहते हैं क्योंकि वे साझा वंश या कम से कम साझा अनुष्ठानों से संबंधित हैं''। ब्लॉश के अनुसार गाँव समुदाय का एक रूप है जो एक परिवार या कबीले से बड़ा होता है। ब्रुहनेस की व्याख्या के अनुसार, ''गांव एक भौगोलिक तथ्य का वर्णन करने वाला वाक्यांश है—सबसे बड़े समूह के निवासियों का समूहन है''। जेलिंस्की के अनुसार, एक गाँव केवल खेतों के संग्रह से अधिक है यह एक विशिष्ट सामाजिक इकाई है। गाँव में कई तरह के गुण हैं जो इसे एक अलग इकाई के रूप में चिह्नित करते हैं: भौगोलिक, जातीय और सांस्कृतिक। एम. डीक्लर्क के अनुसार एक गांव, ''सबसे ऊपर, एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक वातावरण है जिसमें हर कोई हर किसी को जानता है, जहां हर किसी के दृष्टिकोण को समूह द्वारा दृढ़ता से नियंत्रित किया जाता है, जहां सांस्कृतिक व्यवस्था व्यवहार के प्रतिरूप को निर्देशित करती है, और व्यक्तिगत आदतें गांव के रीति—रिवाजों के साथ मिलती है।''

भारत में, हालांकि, एक गांव को मौजा के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसका अर्थ है ''अपने लोगों के लिए अस्पष्ट और गैर अनुरूप ढंग से राजस्व के निर्धारित सीमा के साथ भूमि का एक खंड।'' एक राजस्व ग्राम, जैसा कि परिभाषित किया गया है, एक विशिष्ट प्रशासनिक इकाई है जिसमें घरों के एक या अधिक समूहों के साथ—साथ इसके नियंत्रण में भूमि भी होती है। प्रत्येक गाँव का अपना नाम होता है जो इसे दूसरों से अलग करने में मदद करता है। एक पल्ली (हैमलेट), जिसे फलिया, पारा, ढाना, धानी और अन्य स्थानीय नामों के रूप में भी जाना जाता है, गाँव की सीमाओं के भीतर

आवासों के एक असतत समूह को संदर्भित करता है जो कभी–कभी एक नाम के साथ परन्तु हमेशा कुल हिस्से के भाग के रूप में होता है।

गांवों का वर्गीकरण

हालांकि गांवों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से होता है, लेकिन सबसे सामान्य आधार आकार होता है। सर्वाधिक मान्यता प्राप्त वर्गीकरण जनसंख्या और भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर होता है। इन विशेषताओं के आधार पर निम्नलिखित ग्राम वर्गीकरणों को पहचाना जाता है।

1. **पुरा** – उस स्थान को संदर्भित करता है जहां एक निवास स्थान पहले मौजूद था और प्रमुख आवास चारों ओर या आसपास के स्थानों में पाए जा सकते थे। इसलिए, इस आवास को क्षेत्र के केंद्रक के रूप में संदर्भित किया जा सकता है। कृषि क्षेत्रों में, पृथक निवास स्थान आमतौर पर ''पुरवा'' बन जाते हैं, जो उपयुक्त परिस्थितियों के साथ बस्तियों में विस्तारित हो सकते हैं।

2. **खास** – प्रमुख गांव या सदर को खास कहा जाता है। मुख्य गाँव के लोग एक नए स्थान पर स्थानांतरित हो सकते हैं और अपने गृह समुदाय के नाम पर इसका नाम रख सकते हैं। जब किसी गांव की आबादी बढ़ती है, तो खास शब्द का इस्तेमाल उस गांव के लिए किया जाता है जहां से लोग बाहर निकलते हैं।

3. **कलां** – कलां शब्द का प्रयोग बड़ी बस्तियों के लिए किया जाता है और गांव के नाम के अंत में यह शब्द जोड़ा जाता है, जैसे बून्द कलां। ये बस्तियां विभिन्न सामाजिक समूहों और जातियों के लोगों के घर हैं।

4. **खुर्द** – क्योंकि खुर्द शब्द उर्दू शब्द बरखुरदार (जिसका अर्थ है बेटा, जवान या छोटा) का एक निम्नीकृत रूप है, इसका इस्तेमाल छोटी बस्तियों, जैसे दुमरखा खुर्द के लिए किया जाता है।

5. **खेरा** – यह शब्द छोटी कॉलोनियों के साथ–साथ गांव की ऊंची जमीन को भी दर्शाता है। गांव समुदाय के लिए खेड़ा का एक उच्च सामाजिक महत्व है क्योंकि यह व्यावहारिक रूप से गांव के सभी कार्यक्रमों जैसे रामलीला, नौटंकी और अन्य का आयोजन होता है। खेड़ा शब्द का प्रयोग कुछ स्थानों पर उन स्थानों का वर्णन करने के लिए किया जाता है जहां एक पुराने किले के अवशेष खोजे जा सकते हैं।

6. **नांगले** – यह छोटी बस्तियों के संग्रह से बना है, जिनमें से प्रत्येक कई अनुषंगी ग्राम से घिरा है।

भारत का ग्रामीण परिदृश्य

गाँव और उनके निवासियों द्वारा की जाने वाली बुनियादी गतिविधियाँ भारत के ग्रामीण परिवेश पर हावी हैं। ब्लाश लिखते हैं, ''भारत सर्वोत्कृष्ट है, एक ग्रामीण राष्ट्र है।'' लोगों द्वारा किए जाने वाले सभी मौलिक व्यवसायों में सबसे आवश्यक कृषि है। इसलिए, गांव ग्रामीण भारत के कृषि परिदृश्य का प्रतीक हैं।

बस्तियों के प्रकार

अधिवास प्रकारों से पहले, प्रकार और अधिवास प्रारूप या प्रतिरूप के बीच के अंतर को समझना महत्वपूर्ण है। भौगोलिक साहित्य में इन अवधारणाओं के विभिन्न अर्थ हैं। कुछ मामलों में, ये पर्यायवाची हैं, दूसरों में, परस्पर विनिमेय हैं, और अन्य में, एक दूसरे का अभिन्न अंग है। दूसरी ओर, ये उनमें से कोई नहीं हैं। सामान्य शब्दों में, ग्रामीण समुदायों के प्रकार घरों के फैलाव या केन्द्रीकरण की मात्रा को संदर्भित करते हैं, जबकि प्रारूप आवास व्यवस्था द्वारा उत्पन्न ज्यामितीय आकृतियों को संदर्भित करते हैं। विभिन्न प्रकार की बस्तियों पर चर्चा करने के लिए विभिन्न लेखकों ने विभिन्न दृष्टिकोणों या उपागमों को प्रस्तावित किया है। फिंच, ट्रिवार्था और अन्य दो प्रकार की बस्तियों के बीच अंतर करते हैं। 1. आकेंद्रित (न्यूक्लियेटेड) और 2. एकाकी या बिखरा हुआ। एकाकी बस्तियां एकल परिवार के घर से संबंधित हैं, जबकि आकेंद्रित गांव, गांव के मैदान के केंद्र में केंद्रित आवासों के समूह को संदर्भित करते हैं।

डी. सी. मनी ने तीन प्रकार की बस्तियों को बताया:

1. एकल बड़ा केंद्रीकृत गांव।
2. ग्रामीण इलाकों में बिखरे हुए पुरवा या बस्तियाँ और
3. एकल वासभूमि या गृहस्थी।

इनायत अहमद ने चार प्रकारों को बताया है:

1. संहत (कॉम्पैक्ट), समूह (क्लस्टर), टोला या पुरवा या पल्ली (हैमलेट) और गांव।
2. प्रकीर्ण बस्तीय
3. विखंडित या पल्लीकृत बस्तीय तथा
4. परिक्षिप्त।

आर. एल. सिंह ने चार विभिन्न प्रकारों की पहचान की है:

1. संहत (कॉम्पैक्ट) बस्ती,
2. सामिसंहत (सेमी–कॉम्पैक्ट) या टोला या पुरवा या पल्ली (हैमलेट) समूह,
3. विखंडित पल्लीकृत बस्तियां और
4. परिक्षिप्त प्रकार।

गांवों, बस्तियों और निवासियों की संख्या के आधार पर, आर बी सिंह ने चार प्रकार की बस्तियों की पहचान की है। वे इस प्रकार हैं:

1. संहत (कॉम्पैक्ट),
2. सामिसंहत (सेमी–कॉम्पैक्ट),
3. पल्लीकृत और
4. परिक्षिप्त या प्रकीर्ण।

सघन या संहत बस्तियाँ: बस्तियाँ जो एक–दूसरे के निकट होती हैं। यदि किसी क्षेत्र इकाई में गाँवों की संख्या पुरवा या पल्ली की संख्या के बराबर हो तो बस्ती सघन होती है। मालवा का पठार, नर्मदा घाटी, निमाड़ उच्चभूमि, राजस्थान के महत्वपूर्ण क्षेत्र, बिहार, उत्तर प्रदेश में धान की भूमि, विंध्य का पठार और भारत के कई अन्य कृषि योग्य भाग में भी ऐसे समुदायों के आवास या घर हैं। ऐसे समुदायों के सभी घर एक केंद्रीय स्थान पर केंद्रित होते हैं। गांव के निवासी एक साथ रहते हैं और सामुदायिक जीवन का लाभ

प्राप्त करते हैं। इन गांवों का आकार, दर्जन से लेकर विभिन्न आकार और उद्देश्यों के साथ सैकड़ों घरों तक हो सकता है।

सघन ग्रामीण समुदायों का उद्भव और विकास विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। यह उत्तर भारत के हरे–भरे मैदानों में गहन निर्वाह कृषि के क्षेत्रों में मिलते हैं। इस विस्तृत मैदान में ऐसे समुदायों का स्थल प्रायः बांगर भूमि है, जो वार्षिक बाढ़ से मुक्त है। थार रेगिस्तानी क्षेत्र के जल क्षेत्र (मरुउद्यान) और मध्य गंगा के मैदान की गोखुर झीलें, ऐसे समुदायों की अवस्थिति में जल की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण कारक है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान और दक्कन ट्रैप के व्यापक क्षेत्रों में किसान कुओं, नहरों और तालाबों सहित पानी के स्थायी स्रोतों की ओर पलायन करते हैं।

सामिसंहत या अर्ध सघन (सेमी–कॉम्पैक्ट): यह सघन और पल्लीकृत बस्तियों के बीच एक मध्यवर्ती प्रकार का अधिवास है। यह आसानी से पहचाने जाने योग्य स्थल (मुख्य गांव) और एक या दो छोटे गांवों की उपस्थिति से चिह्नित है जो पैदल पथ या कार्ट ट्रैक (ब्लाचे, 1962) द्वारा मुख्य पथ से जुड़े हुए हैं। ऐसे गाँवों में घर एक ही स्थान पर एक साथ अव्यवस्थित रूप से जुड़े हुए हैं और उनकी स्थिति एक जगह हैं। इसका गांव के किनारे पर नई भूमि पर विस्तार होता है जिसमें सघन समुदायों, गांवों की तुलना में बड़े क्षेत्र शामिल होते हैं। इन बस्तियों की मूल विशेषता एक या एक से अधिक टोला या पल्ली साथ एक पुरानी भूमि है जो फुटपाथ, कार्ट ट्रैक या रोडवेज के माध्यम से मुख्य भाग से जुड़ी हुई हैं। मुख्य समुदाय की आबादी बढ़ने के साथ मुख्य गांव के आसपास के क्षेत्र में पूर्वा और मजरास (पल्ली) का विस्तार होता है। मुख्य स्थल पर जनसंख्या के दबाव के कारण कई परिवारों को मुख्य गाँव के बाहर स्थानांतरित करने और अपने घर बनाने के लिए मजबूर होना पड़ा है। मुख्य समुदाय से बाहर रहने वाले परिवारों में खेतिहर मजदूर, कारीगर जातियां और अन्य गरीब लोग शामिल हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियों के आधार पर मैदानी और पठार दोनों पर अर्ध–सघन या पल्लीकृत ग्रामीण गाँव पाए जा सकते हैं। ये गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र और उनकी कई सहायक नदियों के खादर क्षेत्रों में बहुत आम हैं। ये पंजाब के नम किनारों, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड के तराई क्षेत्र, महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी की प्रायद्वीपीय नदियों के डेल्टा में भी पाए जाते हैं।

पल्लीकृत अधिवास या बस्तियाँ: यदि गाँवों की संख्या पल्ली या पुरवा की संख्या के आधे के बराबर हो तो यह एक पल्लीकृत बस्ती है। बस्तियाँ पूरे क्षेत्र में फैली हुई हैं, खेतों से अलग हैं, और समुदाय का प्रमुख केंद्र हैं। प्रारंभिक स्थान को समझना अक्सर मुश्किल होता है, और रूपात्मक विविधता लगभग दिखाई नहीं पड़ती है। पश्चिम बंगाल, पूर्वी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और तटीय मैदानों में ऐसी बस्तियाँ हैं।

परिक्षिप्त बस्तियाँ: यदि गाँवों की संख्या पुरवा या पल्ली की संख्या के आधे से कम हो तो बस्ती को परिक्षिप्त माना जाता है। इसमें अलग–अलग घरों को खेती वाले क्षेत्रों में वितरित किया गया है। व्यक्तिवाद, स्वतंत्र रूप से जीने की इच्छा और वैवाहिक परंपरा सभी ऐसी बस्तियों के अनुकूल हैं। हालांकि, इन घरों में समुदाय, सांप्रदायिक अन्योन्याश्रयता और सामाजिक संपर्क की भावना का अभाव है। मध्य भारत के आदिवासी क्षेत्र, पूर्वी और दक्षिणी राजस्थान परिक्षिप्त गाँवों के घर हैं। हिमालय की ढलानों और

एक विच्छेदित और असमान सतह वाले इलाकों में भी ऐसी बस्तियों का उद्भव मिलता है। पंजाब और हरियाणा में गेहूं उत्पादक क्षेत्रों में घर या खेत हैं।

सघन बस्तियों और परिक्षिप्त बस्तियों के बीच अंतर

A. सघन या संहत बस्तियाँ

1. सघन बस्तियाँ मुख्य रूप से उपजाऊ मैदानों और नदी घाटियों में पाई जाती हैं।
2. मुख्य व्यवसाय कृषि है।
3. मकान एक–दूसरे के पास बने होते हैं और उनमें निवास करने योग्य जगह कम होती है।
4. खेतों का आकार छोटा होता है।
5. जल निकासी की उचित व्यवस्था नहीं होने के कारण सड़कें गंदी हैं।
6. सघन बस्तियों के निवासी सामूहिक रूप से काम करते हैं और अपना बचाव करते हैं।

B. परिक्षिप्त बस्तियाँ

1. यह मुख्य रूप से पहाड़ियों, पठारों, उच्चभूमि और शुष्क और अर्ध–शुष्क भूमि में पाई जाती हैं।
2. पशु चारण और लकड़ी काटना मुख्य व्यवसाय हैं।
3. मकान अलग–थलग हैं और बिखरे हुए हैं। इसमें निवास योग्य भूमि अधिक होती है।
4. क्षेत्र बड़े हैं।
5. ये बस्तियां काफी साफ–सुथरी हैं।
6. बिखरी हुई बस्तियों के लोग अलग–थलग जीवन व्यतीत करते हैं।

ग्रामीण अधिवास प्रतिरूप

प्रतिरूप अधिवासों या बस्तियों के ज्यामितीय रूप और आकार को संदर्भित करता है, और विभिन्न बस्तियों में स्थान और ऐतिहासिक अतीत के आधार पर विभिन्न प्रकार के प्रारूप होते हैं। एक घर या इमारत और दूसरे के बीच की कड़ी को एम्ब्रियोस जोन्स द्वारा अधिवास प्रतिरूप के रूप में चित्रित किया गया है। एक बस्ती का प्रारूप उसके आकार को दर्शाता है, और प्रत्येक प्रतिरूप को एक नाम दिया जाता है, जैसेकि रैखिक, दीर्घित (लम्बी), वर्गाकार और अन्य। किसी क्षेत्र में ग्रामीण गांवों की द्वि–आयामी ज्यामितीय व्यवस्था को कभी–कभी एक प्रारूप के रूप में संदर्भित किया जाता है। एक ग्रामीण गांव किसी भी ज्यामितीय आकार को चित्रित कर सकता है या नहीं भी कर सकता है, इस प्रकार के प्रतिरूप को गैर–ज्यामितीय कहा जाता है।

भारत में पाई जाने वाली ग्रामीण बस्तियों के कुछ सामान्य प्रारूप निम्नलिखित हैं।

1. रैखिक प्रतिरूप – इस प्रतिरूप को कभी–कभी रिबन या तार (स्ट्रिंग) प्रतिरूप के रूप में जाना जाता है। गाँव के अधिकांश स्टोर समुदाय की मुख्य सड़क पर स्थित हैं, जो सड़क, रेलवे लाइन या जल मार्ग के समानांतर चलता है। समुद्र के किनारे कई मछुआरा समुदायों का स्थान उच्च ज्वार पर समुद्र स्तर से निर्धारित होता है। यह प्रतिरूप अधिकांशतः मध्य और निचले गंगा के मैदानों, हिमालयी क्षेत्र के हिस्सों और समुद्र तटों के साथ, विशेष रूप से भारत के मालाबार और कोंकण क्षेत्रों में देखा जा सकता है।

2. चेकरबोर्ड डिजाइन (शतरंजी डिजाइन) – यह प्रतिरूप दो सड़कें या परिवहन के अन्य साधन जब व्यावहारिक रूप से समकोण पर प्रतिच्छेद करते हैं। बस्ती का विस्तार दो प्रमुख मार्गों के चौराहे पर केंद्रित है। अन्य सड़कें मुख्य मार्गों के समानांतर और कैच गलियों के समांतर होती हैं। वे एक दूसरे से समकोण पर हैं। गंगा–यमुना दोआब में ऐसी बस्तियों का उच्च संकेंद्रण है, जो उत्तर भारत के मैदानी इलाकों में बड़ी संख्या में पाई जा सकती हैं। दक्षिण भारत में तमिलनाडु और कर्नाटक में शतरंजी डिजाइन काफी लोकप्रिय है।

3. आयताकार प्रतिरूप – ये बस्तियां ज्यादातर आयताकार और कभी–कभी चौकोर आकार की होती हैं। उत्तर भारत के मैदानी इलाकों में ऐसे शहर सबसे आम हैं, जहां गहन कृषि किया जाता है। इन समुदायों की सड़कें सीधी हैं और समकोण पर जुड़ती हैं। ये सड़कों या फुटपाथों से जुड़े हुए हैं। भारत में यह प्रतिरूप हमारी पिछली भूमि माप पद्धति की विरासत है, क्योंकि पहले कृषि योग्य भूमि और बागों का निर्माण आयताकार रूप में किया गया था। पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के पश्चिमी आधे हिस्से में ऐसी बस्तियां मिलती हैं। राजस्थान में इंदिरा गांधी नहर कमान क्षेत्र में आयताकार आकार के ग्रामीण गांवों की संख्या अधिक पाई जाती है। सूरतगढ़ में इनका सर्वाधिक संकेंद्रण है। दक्षिण भारत में प्रायद्वीपीय नदियों के डेल्टा, हनुमानगढ़ और गंगानगर जिलों में कई आयताकार बस्तियां हैं।

4. अरीय प्रतिरूप (रेडियल) – यह प्रतिरूप एक नोडल बिंदु पर उभरता है जब कई सड़कें, पथ या फुटपाथ विभिन्न दिशाओं से अभिसरण करते हैं। दूसरी ओर, सड़कें, पथ और फुटपाथ, एक अरीय प्रतिरूप का निर्माण करते हुए, एक नोडल बिंदु से बाहर की ओर निकलते हैं। परिवहन गलियारों के साथ अरीय प्रतिरूप में घर बनाए जाते हैं। जाहिर है, केंद्रीय या नोडल घटक अधिवास के विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है, यहाँ जमींदार, ग्राम नेता निवास करते हैं, या एक पवित्र स्थल होता है। यह स्थान कुछ सामाजिक–सांस्कृतिक संरचनाओं का घर भी हो सकता है।

5. तारांकित (स्टार) प्रतिरूप – यह अरीय या रेडियल डिजाइन का अधिक परिष्कृत संस्करण है। यह परिवहन चैनलों जैसे सड़कों, गलियों और फुटपाथों के बीच के क्षेत्र में घरों और अन्य इमारतों के शामिल नहीं होने पर बनता है। आवासों का निर्माण एक नोडल बिंदु से शुरू होता है और सभी दिशाओं में फैलता है। हालाँकि, अधिकांश निर्माण परिवहन गलियारों के साथ होता है, और पूरा गाँव एक तारे के रूप में दिखाई देता है।

6. वृत्ताकार या गोलाकार प्रतिरूप – किसी तालाब, झील या ज्वालामुखी–विवर के चारों ओर एक वृत्ताकार प्रतिरूप मिलता है। जल उपलब्धता के कारण, लोग तालाब या झील के पास अपना घर बनाना पसंद करते हैं। कभी–कभी मंदिर या मस्जिद के चारों ओर भी एक प्रारूप बन सकता है। गंगा–यमुना दोआब के ऊपरी आधे हिस्से, यमुना पार क्षेत्र और मध्य प्रदेश में गोलाकार प्रतिरूप में गांव हैं।

7. त्रिकोणीय प्रतिरूप – तीन तरफ से होने वाली बाधाओं के परिणामस्वरूप यह प्रतिरूप बनता है। बाधाएं भौतिक, सांस्कृतिक या दोनों हो सकती हैं। इस तरह की बाधाएं तीन तरफ से अधिवासों के वृद्धि को सीमित करती हैं, जिससे यह एक त्रिकोण आकार ले लेता है। दो नदियों या दो राजमार्गों के मिलन पर आमतौर पर ऐसा प्रतिरूप उभर कर आता है। नदियाँ संगम पर इमारतों के पार्श्व विस्तार को सीमित करती हैं, और बस्ती का त्रिभुज आकार प्रकट होता है।

8. अर्ध–गोलाकार या वृताकार प्रतिरूप – नदी सर्पण के किनारे, गोखुर झीलों, या तलहटी में झील के आसपास गाँव अर्ध–वृत्ताकार रूप धारण करते हैं। गंगा और उसकी सहायक नदियों के किनारे वृत्ताकार बस्तियाँ देखी जा सकती हैं।

9. तीर पैटर्न – एक अंतरिप के छोर पर मिलने वाले गांव, या एक बहती नदी सर्पण या गोखुर झील में तेज मोड़ पर, कभी–कभी एक तीर का रूप लेते हैं। अधिकांश घर सड़कों के किनारे हैं, और जैसे–जैसे आप तीर बिंदु से दूर जाते हैं, आवासों की संख्या बढ़ती जाती है। ऐसे गाँव भारत में कन्याकुमारी के पास, मध्य प्रदेश में, चिल्का झील के आसपास, खंभात की खाड़ी और सुनार नदी के किनारे, और बिहार में और बूढ़ी गंडक के साथ देखे जा सकते हैं।

10. सीढ़ीनुमा प्रतिरूप – इस तरह के गांव मुख्य रूप से पहाड़ी ढलानों पर पाए जाती हैं। इन पहाड़ियों को काटकर कृषि के लिए सीढ़ीनुमा आकार में बदल दिया जाता है। किसान अपने घरों को सीढ़ियों के सहारे बनाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप एक तहदार प्रारूप बनता है। इन बस्तियों में घर एक–दूसरे से सटे या दूर–दूर हो सकते हैं। भूभाग के ढलान के आधार पर ये एक दूसरे के संबंध में विभिन्न ऊँचाइयों पर बने होते हैं। ये आमतौर पर एक झरने या एक धारा के आसपास बनाए जाते हैं। ऐसी बस्तियाँ जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम और पश्चिमी घाटों में पहाड़ी ढलानों पर पाई जाती हैं।

बोध प्रश्न 1

परिक्षिप्त और आकेंद्रित अधिवासों या बस्तियों के बीच अंतर बताएं।

15.3 ग्रामीण बस्तियों की विशेषताएं

ग्रामीण बस्तियाँ लंबे समय से कृषि से जुड़ी हुई हैं। ग्रामीण समुदायों के अन्य रूप हाल के दिनों में उभरे हैं। सबसे बुनियादी विशेषता ग्रामीण बस्तियों में काम पर स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। इसका कारण यह है कि, स्थायी समुदायों, जैसे स्थानांतरित काश्तकारों या खानाबदोशों की अर्ध–स्थायी बस्तियाँ, या शिकारियों और आखेटकों के अस्थायी शिविर, जहाँ से वे उभरे हैं, को भोजन, जल, आश्रय और सुरक्षा की समान मूलभूत जरूरतें हैं जैसे कि स्थानांतरी कृषकों या चलवासीयों की अर्ध–स्थायी बस्तियों की। जैसे–जैसे मनुष्य ने जीविकोपार्जन के लिए तेजी से प्रबुद्ध या प्रगतिशील तरीके विकसित किए हैं, वे अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए एक ही स्थान पर अधिक से अधिक भरोसा करने में सक्षम हो गए हैं, लेकिन बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा किया जाना चाहिए। यदि इन आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है, तो अतिरिक्त विचार, जैसे कि नियोजन, चलन में आ सकते हैं, जो अधिवास के स्थान को प्रभावित करते हैं।

अधिकांश देशों में अब हम ग्रामीण बस्तियों का जो स्वरूप देखते हैं, वह सदियों के पर्यावरणीय परिवर्तनों का परिणाम है।

ग्रामीण बस्तियाँ वे हैं जहाँ लोगों के व्यवसाय अधिकांश स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों से संबंधित हैं, जैसे

- तट के सहारे मत्स्य पालन,

- वन में जनजातीय या आदिवासी आबादी,
- नदियों के किनारे किसान।

भारत में ग्रामीण अधिवास या बस्तियाँ

2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार भारत में 640,932 ग्रामीण बस्तियाँ थीं, जिनमें से 597,608 आबादी या बसे हुए थे और 43,324 गैर आबादी वाले या निर्जन थे। सबसे अधिक ग्रामीण बस्तियाँ उत्तर प्रदेश (106,774) में पाई गईं। आबाद और निर्जन ग्रामीण बस्तियों की सबसे बड़ी संख्या भी उत्तर प्रदेश में ही स्थित थी। केरल में केवल एक निर्जन गांव था और पुडुचेरी, दादरा और नगर हवेली, दमन और दीव और चंडीगढ़ में कोई निर्जन गांव नहीं था। चंडीगढ़ हालांकि एक नियोजित शहर है लेकिन यहां पांच बसे हुए गांव भी हैं।

तालिका 15.1: भारत में ग्रामीण अधिवास/बस्तियां, 2011

नाम	गाँवों की संख्या		कुल	परिवारों की संख्या	जनसंख्या
	आबाद	गैर–आबाद / निर्जन			
भारत	**5,97,608**	**43,324**	**6,40,932**	**16,86,12,897**	**83,37,48,852**
जम्मू और कश्मीर	6,337	216	6,553	15,53,433	91,08,060
हिमाचल प्रदेश	17,882	2,808	20,690	13,12,510	61,76,050
पंजाब	12,168	413	12,581	33,58,113	1,73,44,192
चंडीगढ़	5	0	5	7,140	28,991
उत्तराखंड	15,745	1,048	16,793	14,25,086	70,36,954
हरियाणा	6,642	199	6,841	30,43,756	1,65,09,359
राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	103	9	112	79,574	4,19,042
राजस्थान	43,264	1,408	44,672	94,94,903	5,15,00,352
उतर प्रदेश	97,814	8,960	1,06,774	2,56,85,942	15,53,17,278
बिहार	39,073	5,801	44,874	1,68,62,940	9,23,41,436
सिक्किम	425	26	451	93,288	4,56,999
अरुणाचल प्रदेश	5,258	331	5,589	2,00,210	10,66,358
नागालैंड	1,400	28	1,428	2,77,491	14,07,536
मणिपुर	2,515	67	2,582	3,85,520	20,21,640
मिजोरम	704	126	830	1,05,812	5,25,435
त्रिपुरा	863	12	875	6,16,582	27,12,464
मेघालय	6,459	380	6,839	4,30,573	23,71,439
असम	25,372	1,023	26,395	54,20,877	2,68,07,034
पश्चिम बंगाल	37,469	2,734	40,203	1,38,13,165	6,21,83,113

झारखंड	29,492	2,902	32,394	47,29,369	2,50,55,073
उड़ीसा	47,675	3,636	51,311	80,89,987	3,49,70,562
छत्तीसगढ	19,567	559	20,126	43,65,568	1,96,07,961
मध्य प्रदेश	51,929	2,974	54,903	1,10,80,278	5,25,57,404
गुजरात	17,843	382	18,225	67,73,558	3,46,94,609
दमन और दीव	19	0	19	12,744	60,396
दादरा और नगर हवेली	65	0	65	36,094	1,83,114
महाराष्ट्र	40,959	2,706	43,665	1,32,14,738	6,15,56,074
आंध्र प्रदेश	26,286	1,514	27,800	1,42,34,387	5,63,61,702
कर्नाटक	27,397	1,943	29,340	79,46,657	3,74,69,335
गोवा	320	14	334	1,28,208	5,51,731
लक्षद्वीप	6	15	21	2,710	14,141
केरल	1,017	1	1,018	41,49,641	1,74,71,135
तमिलनाडु	15,049	930	15,979	95,28,495	3,72,29,590
पुडुचेरी	90	0	90	95,018	3,95,200
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	396	159	555	58,530	2,37,093

स्रोतः सारणी ए–1 से गणना गांवों, कस्बों, घरों, जनसंख्या और क्षेत्र की संख्या, भारत की जनगणना, 2011।

हालांकि शहर की योजना 58 गांवों के 21,000 लोगों को स्थानांतरित करके बनाई गई थी, लेकिन पांच गांवों ने इस परियोजना के लिए अपनी जमीन नहीं दी थी। यद्यपि ये गाँव योजना के समय शहर की सीमा से बाहर थे लेकिन दूसरे और तीसरे चरण के दौरान शहर के विस्तार के कारण ये गाँव चंडीगढ़ की प्रशासनिक सीमा के अंदर आ गए।

पश्चिम बंगाल के पश्चिम मेदिनीपुर जिले में देश की सबसे अधिक ग्रामीण बस्तियां (8694) थीं इनमें से 7600 बसे हुए थे और 1094 निर्जन थे। पूर्वी दिल्ली जिले में केवल एक ग्रामीण बस्ती थी जो देश में सबसे कम थी। हालांकि, नौ जिलों में कोई ग्रामीण बस्ती नहीं थी जिनमें नई दिल्ली, मध्य दिल्ली, कोलकाता, मुंबई उपनगरीय, मुंबई, हैदराबाद, चेन्नई, यनम और माहे थे।

भारत की 1210 मिलियन जनसंख्या 250 मिलियन घरों में निवास करती है तथा प्रत्येक घर में औसतन 5 व्यक्ति रहते हैं। 250 मिलियन परिवारों में से 67.58 प्रतिशत ग्रामीण बस्तियों में थे। यहां 168 मिलियन घरों में 833 मिलियन लोग रहते थे। ग्रामीण क्षेत्रों में भी, एक ही घर में रहने वाले लोगों की औसत संख्या पाँच व्यक्ति थी। उत्तर प्रदेश (25. 6 मिलियन) में सबसे अधिक ग्रामीण परिवार पाए गए, इसके बाद बिहार, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में प्रत्येक में 10 मिलियन से अधिक ग्रामीण परिवार पाए गए।

लक्षद्वीप (2710) में सर्वाधिक न्यून या कम ग्रामीण परिवार मिलते थे (तालिका 15.1)।

उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक 155 मिलियन ग्रामीण आबादी है, इसके बाद बिहार (92 मिलियन), पश्चिम बंगाल (62 मिलियन), महाराष्ट्र (61 मिलियन) और आंध्र प्रदेश (56 मिलियन) का स्थान है। लक्षद्वीप (14141 व्यक्ति) (तालिका 15.1) के साथ न्यूनतम ग्रामीण आबादी वाला क्षेत्र है।

सर्वाधिक ग्रामीण आबादी पश्चिम बंगाल के दक्षिण चौबीस परगना जिले में पाई गई और सबसे कम ग्रामीण आबादी पूर्वी दिल्ली में है। भारत में नौ जिले ऐसे थे जिसमें शून्य ग्रामीण है, जिसका अर्थ है कि ये नौ जिले पूरी तरह से शहरी थे। सर्वाधिक ग्रामीण जनघनत्व 6486 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर चंडीगढ़ में और मिजोरम में 26 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर के साथ सबसे कम देखा गया। केवल चार अन्य राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में ग्रामीण जनसंख्या घनत्व एक हजार व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से अधिक था, ये लक्षद्वीप, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, पुडुचेरी और बिहार थे। बाकी सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में ग्रामीण जनसंख्या घनत्व 967 और 26 वर्ग किलोमीटर के बीच था।

तालिका 15.2: भारत की कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत, 2011

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	कुल	ग्रामीण	प्रतिशत
भारत	**1210854977**	**833748852**	**68.86**
हिमाचल प्रदेश	6864602	6176050	89.97
बिहार	104099452	92341436	88.71
असम	31205576	26807034	85.90
उड़ीसा	41974218	34970562	83.31
मेघालय	2966889	2371439	79.93
उतर प्रदेश	199812341	155317278	77.73
अरुणाचल प्रदेश	1383727	1066358	77.06
छत्तीसगढ	25545198	19607961	76.76
झारखंड	32988134	25055073	75.95
राजस्थान	68548437	51500352	75.13
सिक्किम	610577	456999	74.85
त्रिपुरा	3673917	2712464	73.83
जम्मू और कश्मीर	12541302	9108060	72.62
मध्य प्रदेश	72626809	52557404	72.37
नागालैंड	1978502	1407536	71.14
मणिपुर	2855794	2021640	70.79
उत्तराखंड	10086292	7036954	69.77
पश्चिम बंगाल	91276115	62183113	68.13

आंध्र प्रदेश	84580777	56361702	66.64
हरियाणा	25351462	16509359	65.12
पंजाब	27743338	17344192	62.52
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	380581	237093	62.30
कर्नाटक	61095297	37469335	61.33
गुजरात	60439692	34694609	57.40
महाराष्ट्र	112374333	61556074	54.78
दादरा और नगर हवेली	343709	183114	53.28
केरल	33406061	17471135	52.30
तमिलनाडु	72147030	37229590	51.60
मिजोरम	1097206	525435	47.89
गोवा	1458545	551731	37.83
पुड्डुचेरी	1247953	395200	31.67
दमन और दीव	243247	60396	24.83
लक्षद्वीप	64473	14141	21.93
चंडीगढ़	1055450	28991	2.75
राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	16787941	419042	2.50

स्रोतः प्राथमिक जनगणना सार, भारत की जनगणना, 2011 से संकलित

जिलेवार आँकड़ों के अनुसार सर्वाधिक ग्रामीण घनत्व पूर्वी दिल्ली जिले में था, न्यूनतम ग्रामीण घनत्व 2 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर, जम्मू और कश्मीर के लेह (लद्दाख) जिले और हिमाचल प्रदेश के लाहुल और स्पीति जिले में था। इन दोनों जिलों में विषम जलवायु है और इन्हें अल्प प्राकृतिक वनस्पति वाले शीत मरुस्थल के रूप में माना जाता है। यह सर्दियों में दर्रों पर बहुत अधिक बर्फ जमा होने के कारण देश के बाकी हिस्सों से कट जाते हैं। यहां –40 डिग्री सेल्सियस चरम तापमान दर्ज किया गया है। इसलिए, ये स्थितियां बड़ी आबादी के लिए अनुकूल नहीं हैं। 2011 में, भारत की 68.86% आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती थी। ग्रामीण आबादी का सर्वाधिक अनुपात (89.97%) पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश में था, उसके बाद बिहार (88.71%), असम (85.90%), ओडिशा (83.31%) और अन्य का स्थान था। सबसे कम अनुपात राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली (2.50%) में पाया गया (तालिका 15. 2)।

हालांकि पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण आबादी का अनुपात घट रहा है लेकिन आज भी देश के हर तीन में से दो व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं।

बोध प्रश्न 2

उन स्थानीय संसाधनों की चर्चा कीजिए जिन पर ग्रामीण बस्तियों का व्यवसाय आधारित है।

15.4 नगरीय या शहरी अधिवासों या बस्तियों की विशेषताएं

शहरी बस्तियां आमतौर पर सघन और आकार में बड़ी होती हैं और विभिन्न प्रकार के गैर–कृषि आर्थिक और प्रशासनिक कार्यों में संलग्न होती हैं।

भारत में नगर प्रागैतिहासिक काल से ही फले–फूले हैं। सिंधु घाटी सभ्यता के समय हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे नगर अस्तित्व में थे। विभिन्न कालों में उनके विकास के आधार पर भारतीय नगरों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता हैः

प्राचीन नगरः भारत में ऐसे कई नगर हैं जिनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 2000 वर्ष से अधिक पुरानी है। उनमें से अधिकांश धार्मिक और सांस्कृतिक केंद्रों के रूप में विकसित हुए। वाराणसी इनमें से एक महत्वपूर्ण नगर है। प्रयागराज (इलाहाबाद), पाटलीपुत्र (पटना), मदुरै देश के प्राचीन नगरों के कुछ अन्य उदाहरण हैं।

मध्यकालीन नगरः मौजूदा नगरों में से लगभग 100 की जड़ें मध्ययुगीन काल में हैं। उनमें से अधिकांश रियासतों और राज्यों के मुख्यालय के रूप में विकसित हुए। ये दुर्ग नगर थे जो प्राचीन नगरों के खंडहरों पर बने थे। इनमें दिल्ली, हैदराबाद, जयपुर, लखनऊ, आगरा और नागपुर महत्वपूर्ण हैं।

आधुनिक नगरः ब्रिटिश और अन्य यूरोपीय लोगों ने भारत में कई शहरों का विकास किया है। तटीय स्थानों पर अपने–अपने शक्ति को बढ़ाते हुए, उन्होनें सूरत, दमन, गोवा, पांडिचेरी आदि जैसे कुछ व्यापारिक बंदरगाहों का विकास किया। अंग्रेजों ने बाद में तीन प्रमुख नोड्स (जगह)–मुंबई (बॉम्बे), चेन्नई (मद्रास), और कोलकाता (कलकत्ता) के आसपास अपनी पकड़ मजबूत कर उन्हें ब्रिटिश शैली में बनाया। सीधे तौर पर या रियासतों पर अपने नियंत्रण के माध्यम से अपने प्रभुत्व का तेजी से विस्तार करते हुए, उन्होंने अपने प्रशासनिक केंद्र, पहाड़ी शहरों को ग्रीष्मकालीन विश्रामस्थल बनाया तथा उनके साथ नए नागरिक प्रशासनिक और सैन्य क्षेत्रों को जोड़ा। आधुनिक उद्योगों पर आधारित नगर भी 1850 के बाद विकसित हुए। जमशेदपुर को एक उदाहरण के रूप में उद्धृत किया जा सकता है।

स्वतंत्रता बाद बड़ी संख्या में नगरों को प्रशासनिक मुख्यालय के रूप में विकसित किया गया है जैसे, चंडीगढ़, भुवनेश्वर, गांधीनगर, दिसपुर, आदि और औद्योगिक केंद्र जैसे दुर्गापुर, भिलाई, सिंदरी एवं बरौनी। कुछ प्राचीन नगर जैसे दिल्ली के आसपास गाजियाबाद, फरीदाबाद, गुड़गांव आदि अनुषंगी नगर के रूप में विकसित हुए। ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ते निवेश के साथ, पूरे देश में बड़ी संख्या में मध्यम और छोटे शहरों का विकास हुआ है।

नगरीय अधिवासों को शहरी विकास के संदर्भ कोड के रूप में अध्ययन किया जा सकता है। ह्यूस्टन (1953) ने तीन चरणों को बताया है।

(i) केंद्रकीय चरणः पेरिस, मॉस्को जैसे दीवारी शहर के अंदर एक शहर के मध्य क्षेत्र है।

(ii) प्रारंभिक चरणः परिवहन के सहारे या साथ केंद्रीय क्षेत्र के बाहर के घर।

(iii) आधुनिक चरणः मोटर परिवहन का विकास और उपनगरीय शहरों का बड़े पैमाने पर विकास।

टेलर (1949) ने कनाडा की शहरी बस्तियों के विकास के 4 चरणों को बताया है। उनका वर्गीकरण सभ्यता के विकास पर आधारित है।

(i) शैशव अवस्थाः ऐसे शहर जहां आवासीय और वाणिज्यिक क्षेत्रों को अलग नहीं किया जा सकता है और इमारतों का अव्यवस्थित ढंग से वितरण मिलता है।

(ii) प्रौढ़ा अवस्थाः घरों का क्षितिज ऊपर उठता है और कारखाने भी स्थापित होते हैं, जैसे मुंगेर।

(iii) परिपक्व अवस्थाः इस चरण में अलग आवासीय और वाणिज्यिक क्षेत्र होते हैं। सीमांत पर उदय और नई कॉलोनियों और ऊर्ध्वाधर विस्तार का नियम है जैसे, दिल्ली, पटना, ओंटारियो, लंदन।

(iv) वृद्धावस्थाः इस अवस्था में विकास रुक जाता है। कुछ क्षेत्रों का क्षय और आर्थिक विकास में गिरावट शुरू हो जाती है। जैसे, यॉर्कशायर, लंकाशायर, डरबन, आगरा, मथुरा, मुजफ्फरनगर।

पैट्रिक गेडेस से प्रभावित लुईस ममफोर्ड (1938) ने शहर को एक भौतिक इकाई के रूप में नहीं बल्कि एक सामाजिक घटना के रूप में देखा। उन्होंने शहरों के छह चरणों के विकास का सुझाव दिया।

(i) इओपोलिस या पूर्व नगर (Eopolis): कृषि, खनन और मत्स्य पालन पर आधारित गाँव का एक छोटा कस्बा या शहर।

(ii) पोलिस या सभ्य नगर (Polis): थोक अनाज मंडी वाला बाजार शहर।

(iii) महानगर (Metropolis): यह 10 लाख की आबादी वाला एक बड़ा शहर है।

(iv) विश्वनगरी / मेगालोपोलिस (Megalopolis): जब मुख्य शहर और महानगर मिलकर एक विशाल शहरी केंद्र बनाते हैं।

(v) टायरेनोपोली नगर (Tyranopoli): इस देश में व्यापक नगरीकरण मिलता था। यहां प्रदर्शन और खर्च, संस्कृति की माप बन जाते हैं।

(vi) नेक्रोपोलिस नगर (Necropoliss): इसे भूत शहर या मृत शहर के रूप में जाना जाता है। यह अवस्था युद्ध, अकाल, रोग, संस्कृति के क्षय के कारण आती है।

जनसंख्या के आधार पर वर्गीकरणः

1. **छोटा शहर** – 50,000 से कम आबादी
2. **मुख्य शहर** – 50,000 से 99.999 जनसंख्या
3. **नगर** – 1,00,000 जनसंख्या
4. **महानगर** – 1,000,000 जनसंख्या

कार्यों के आधार पर वर्गीकरणः

1. **प्रशासनिक नगरः** ये मुख्य रूप से राजधानी, प्रांतों, राज्यों और जिला मुख्यालयों के केंद्र हैं। इनका नियोजन किया जाता है जैसे, दिल्ली, लखनऊ, मुंबई, चंडीगढ़ आदि।

2. वाणिज्यिक शहरः ये ऐसे शहर हैं जहां खुदरा बिक्री और व्यापार सबसे बड़ा कार्य है। इन घरों में वित्तीय कार्यालय, व्यावसायिक भवन, बैंक हैं और वाणिज्यिक सेवाएं प्रदान करते हैं, जैसे कानपुर, नागपुर, आगरा, भोपाल, लंदन, न्यूयॉर्क।

3. मंडी नगरः यह मुख्य रूप में भिन्न वस्तुओं के संग्रह और वितरण के स्थान हैं और विनिमय गतिविधि होती हैं। आमतौर पर इन शहरो में मंडियां, दुकानों, गोदामों की विस्तृत श्रृंखला होती है, जो परिवहन सुविधाओं के अच्छे माध्यम से जुड़ी होती हैं।

4. खनन नगरः ऐसे नगरों का मुख्य कार्य खानों से खनिजों का दोहन करना है। उनका स्थान खनिज संसाधनों की उपलब्धता से नियंत्रित होता है। जैसे, रानीगंज, झरिया, बोकारो आदि।

5. औद्योगिक नगरः यहाँ मुख्य रूप से कच्चे माल को तैयार माल में बदलने की द्वितीयक गतिविधियाँ होती हैं। ऐसे शहर बिजली, श्रम, बाजार, संचार और परिवहन के कुशल जाल (नेटवर्क) की सुविधाएं प्रदान करते हैं। जैसे बैंगलोर (घड़ियाँ), बोकारो (इस्पात), सूरत (वस्त्र)।

6. सांस्कृतिक नगरः

a. शैक्षिक – पटना, इलाहाबाद, बैंगलोर, कैम्ब्रिज, ऑक्सफोर्ड।

b. मनोरंजन – मुंबई, हॉलीवुड।

c. धार्मिक – वाराणसी, ऋषिकेश, यरुशलेम, अयोध्या, मक्का।

d. विश्रामस्थल (**Resort**) –

i. तटीय विश्रामस्थल (**Resort**) – पुरी, मुंबई, गोवा, कोच्चि।

ii. हिल विश्रामस्थल (**Resort**) – शिमला, मसूरी, नैनीताल।

7. रक्षा नगरः ऐसे शहर नौसैनिक घाट, हवाई अड्डे हो सकते हैं और इनकी विशेषता बैरक, छावनी विशेष हवाई क्षेत्र, सेना के लिए प्रशिक्षण केंद्र, सुसज्जित अस्पताल हैं। जैसे, अंबाला, देहरादून, कोच्चि, चेन्नई।

8. आवासीय नगरः ये मुख्य रूप से भीड़भाड़ वाले शहरों से दूर स्थित नए और नियोजित शहर हैं और शहरी लोगों के लिए आवासीय सुविधाएं प्रदान करते हैं। ये सुनियोजित हैं और इनमें स्वस्थ वातावरण है जैसे, चंडीगढ़।

बाद में अन्य लोगों ने शहरी बस्तियों को द्वितीयक और तृतीयक के रूप में वर्गीकृत किया है। औद्योगिक गतिविधियाँ करने वाली बस्तियाँ द्वितीयक हैं और सेवाएँ देने वाली बस्तियाँ तृतीयक बस्तियाँ हैं।

भारत की 2001 की जनगणना में प्रयुक्त शहरी क्षेत्र की परिभाषा निम्नलिखित है।

a) कोई भी क्षेत्र जहां एक नगर पालिका, निगम, छावनी बोर्ड या अधिसूचित नगर क्षेत्र समिति है।

b) अन्य सभी स्थान जो निम्नलिखित आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

a. कम से कम 5,000 लोगों की आबादी,

b. श्रमजीवी पुरुष जनसंख्या का कम से कम 75% गैर–कृषि गतिविधियों में लगा हुआ है।

c. जनसंख्या घनत्व कम से कम 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर (1000 प्रति वर्ग मील) हो।

इसके अलावा, राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में जनगणना संचालन के निदेशकों को राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेशों के प्रशासन और भारत के जनगणना आयुक्त के परामर्श से शहरी के रूप में विशिष्ट शहरी विशेषताओं वाले कुछ स्थानों को शामिल करने का अधिकार दिया गया था, यद्यपि ऐसे स्थान ऊपर वर्णित श्रेणी (b) के तहत सूचीबद्ध मानदंडों में से सभी मानकों को पूरा न करते हों।

प्रमुख परियोजना कॉलोनियां, गहन औद्योगिक विकास के स्थान, रेलवे कॉलोनियां, प्रमुख पर्यटक आकर्षण आदि ऐसी स्थितियों के उदाहरण हैं।

2011 में, नगरीय या शहरी क्षेत्रों की अवधारणा को संशोधित किया गया था, जिसमें दो प्रकार की प्रशासनिक इकाइयाँ थीं – वैधानिक नगर और जनगणना नगर – शहरी क्षेत्र सहित थे।

a) वैधानिक नगर या शहर: नगर निगम, नगर पालिका, छावनी बोर्ड और अधिसूचित नगर क्षेत्र समिति सभी प्रशासनिक प्रभाग हैं जिन्हें कानून द्वारा शहरी के रूप में वर्गीकृत किया गया है। वैधानिक नगरों में नगर पंचायत, नगर पालिका और अन्य शामिल हैं।

b) जनगणना नगर: जनगणना नगर प्रशासनिक इकाइयाँ हैं जो एक ही समय में निम्नलिखित तीनों आवश्यकताओं को पूरा करती हैः

a) इसकी आबादी कम से कम 5000 लोगों की होनी चाहिए।
b) गैर–कृषि व्यवसायों में पुरुष श्रमजीवी आबादी का कम से कम 75% हिस्सा होना चाहिए।
c) इसका जनसंख्या घनत्व कम से कम 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर (1.000 प्रति वर्ग मील) होना चाहिए।

2001 की जनगणना के अनुसार 5000 या उससे अधिक की आबादी वाले सभी गांवों को जनगणना नगरों या शहरों के रूप में वर्गीकृत करने के लिए उपयुक्त स्थानों की पहचान की गई है। प्रति वर्ग किलोमीटर 400 लोगों की जनसंख्या घनत्व पर भी विचार किया गया था। कम से कम 75% पुरुष प्रमुख श्रमजीवी आबादी गैर–कृषि गतिविधियों में शामिल है।

भारत की जनगणना ने शहरी स्थानों को निम्नलिखित छह श्रेणियों में वर्गीकृत किया हैः

वर्ग I:	100,000 और अधिक जनसंख्या
वर्ग II:	50,000 से 99,999 की जनसंख्या
वर्ग III:	20,000 से 49,999 की जनसंख्या
वर्ग IV:	10,000 से 19,999 की जनसंख्या
वर्ग V:	5000 से 9,999 की जनसंख्या
वर्ग VI:	5000 से कम जनसंख्या

नगरः 100,000 और उससे अधिक की आबादी वाले शहरों को नगरों के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

इनके अलावा कुछ अन्य शब्द भी हैं जो नगरीय केंद्रों से जुड़े हैं।

बहिर्बृद्ध (Outgrowth): एक बहिर्बद्ध (ओजी) एक व्यवहार्य इकाई है, जैसे गांव या पल्ली, या ऐसे गांव या पल्ली से दिए गए सीमा और स्थान के साथ बना एक प्रगणना खंड है। रेलवे कॉलोनी, विश्वविद्यालय परिसर, बंदरगाह क्षेत्र, सैन्य शिविर, और अन्य विकास जो एक वैधानिक शहर के पास इसकी वैधानिक सीमा के बाहर विकसित हुए हैं, गांव के राजस्व सीमा के अंदर या शहर के नजदीक गांव इसके कुछ उदाहरण हैं।

किसी शहर के बहिर्बृद्ध का निर्धारण करते समय, इसमें शहरी विशेषताएं होनी चाहिए जैसे पक्की सड़कें, बिजली, नल, अपशिष्ट जल निपटान या निस्तारण के लिए जल निकासी प्रणाली आदि, साथ ही साथ शैक्षणिक संस्थान, डाकघर, चिकित्सा सुविधाएं, बैंक और अन्य सुविधाएं तथा नगरीय संकुल के केंद्रीय शहर के साथ भौतिक रूप से सटे हों। प्रत्येक शहर को इनके बहिर्बृद्ध के साथ, एक एकीकृत शहरी क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया गया है और एक महानगरीय क्षेत्र के रूप में मान्यता प्राप्त है।

नगरीय समूहन

प्रत्येक शहर, और इसके बहिर्बृद्ध को नगरीय संकुल माना जाता है। इस प्रकार, 1971 में, नगरीय समूहन के विचार को संशोधित किया गया और शहरी समीपता की अवधारणा द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। यह, शहरी निकटता, प्रक्रिया और नगरीकरण की प्रवृत्तियों और अन्य संबंधित मुद्दों के संबंध में बेहतर प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए किया गया था। एक ''नगरीय समूहन'' एक सतत शहरी फैलाव है जिसमें आमतौर पर एक शहर और उसके आस–पास के शहरी बहिर्बृद्ध (ओजीएस), या दो या दो से अधिक भौतिक रूप से सन्निहित शहर शामिल होते हैं, यदि कोई हो। इस धारणा को जनगणनाओं में बिना किसी बदलाव या संशोधन के अंगीकृत किया गया है।

नगरीय समूहन के परिसीमन के लिए निम्नलिखित कारकों को आवश्यक माना जाता हैः

a) एक नगरीय समूहन का केंद्र शहर, या उसके एक सदस्य शहर को एक वैधानिक शहर होना चाहिए।

b) एक शहरी समूह की कुल जनसंख्या (शहरों और बाह्य क्षेत्रों सहित) 20,000 लोगों से कम नहीं होनी चाहिए (2001 की जनगणना के अनुसार)। ग्रेटर मुंबई नगरीय समूहन, दिल्ली नगरीय समूहन और अन्य इसके उदाहरण हैं।

निम्नलिखित बोधगम्य विविध स्थितियां हैं जिनमें उपर्युक्त बुनियादी दो आवश्यकताओं को पूरा करने पर नगरीय समूहन का गठन किया जाना चाहिएः

- एक नगर या शहर जिसमें एक या एक से अधिक निकटवर्ती बहिर्बृद्ध होते हैं।
- दो या दो से अधिक निकटवर्ती नगर जिनकी बहिर्बृद्ध हुई है।
- एक नगर और एक या अधिक पडोसी शहर, अपने बहिर्बृद्ध के साथ, एक निरंतर प्रसार का निर्माण करते हैं।

महानगरीय शहर: महानगरों को दस लाख या अधिक की आबादी वाले शहरों के रूप में परिभाषित किया जाता है। उद्योग, व्यापार, वाणिज्य, परिवहन, संस्कृति और राजनीति इन शहरों की प्रमुख गतिविधियाँ हैं। महानगरों की संख्या 1981 में 12 से बढ़कर 2011 में 53 हो गई है।

मेगा शहर या सिटी: भारतीय जनगणना के अनुसार, मेगा शहर, 5 मिलियन से अधिक आबादी वाले शहर होते हैं। दूसरी ओर, मेगासिटीज को संयुक्त राष्ट्र द्वारा 10 मिलियन या उससे अधिक की आबादी वाले शहरों के रूप में परिभाषित किया गया है। भारत में मेगासिटीज में ग्रेटर मुंबई, कोलकाता और दिल्ली शामिल हैं।

सन्नगर या उपनगरीय विस्तार: इस शब्द को पैट्रिक गेडेस ने दिया था, और यह शहरी बस्तियों के विलय को संदर्भित करता है जो पहले खुली जगह से अलग हो गए थे। प्रमुख अंतर–शहरी परिवहन लाइनों के साथ रिबन विकास, सहसंयोजन के विकास का एक सामान्य तरीका है। मुंबई, दिल्ली और कोलकाता जैसे महानगर भारत में उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

विश्वनगरी (Megalopolis): यह एक ग्रीक शब्द है जो ''महान'' और ''नगर'' शब्दों के संयोजन से बना है। यह सन्नगर के समान है, यह तब विकसित होता है जब एक विशाल महानगर का विस्तार होता है और आस–पास के छोटे कस्बों और शहरों को उसमें विलय कर दिया जाता है। गॉटमैन ने 1964 में संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तर–पूर्वी तट के महानगरीय परिदृश्य की विशेषता के लिए इस शब्द का इस्तेमाल किया था। उन्होंने बोस्टन के उत्तर में तट तक 960 किलोमीटर (600 मील) उत्तर तक पहुंचने वाले जुड़े हुए निर्मित क्षेत्रों (हालांकि काफी अधिक खुले भूभाग के साथ) के विशाल सन्नगर जैसे भूमि की खोज की।

मेट्रोपोलिजेशन (या महानगरीकरण)

औद्योगिक और तृतीयक आर्थिक नींव के साथ महानगरीय केंद्रों के विस्तार को महानगरीयकरण कहा जाता है। एक महानगर एक अलग प्रकार का समुदाय है, इसके निर्मित क्षेत्र के प्रसार और इसके पड़ोसी गांवों और कस्बों की अन्योन्याश्रयता इसकी विशेषता है। महानगरीय क्षेत्र सवयं में एक ऐसा वर्ग है, जिसमें व्यापक पैमाने पर खपत और लोगों, वस्तुओं, सेवाओं और उनके माध्यम से प्राप्त सूचनाओं की व्यापक मात्रा होती है (प्रकाश राव, 1983), (आर रामचंद्रन (1995)। महानगरीकरण, राष्ट्रीय और राज्य की राजधानीयों में देश में प्रशासनिक, राजनीतिक और आर्थिक बल के केंद्रीकरण की उपज है।

महानगरीकरण की गति ग्रामीण लोगों के साथ छोटे शहरों से महानगरीय शहरों में सीधे प्रवास की दर पर निर्भर करती है। वास्तव में, प्रवासन नगरीकरण की प्रक्रिया की नींव है और इसे मुख्य तंत्र के रूप में मान्यता प्राप्त है जिसके द्वारा शहरी केंद्रों का विकास जारी है। एक विचार यह है कि जब शहरी केंद्रों की ओर प्रवासन रुक जाता है तो नगरीकरण रुक जाता है (प्रकाश राव 1983)।

तालिका 15.3: भारत में महानगरों की संख्या में वृद्धि (1901–2011)

जनगणना वर्ष	महानगरों की संख्या
1901	1

1911	1
1921	1
1931	1
1941	2
1951	5
1961	7
1971	9
1981	12
1991	23
2001	35
2011	47

स्रोतः भारत की जनगणना, 2011

भारत की जनगणना एक महानगरीय क्षेत्र को दस लाख या अधिक लोगों की आबादी वाले क्षेत्र के रूप में परिभाषित करती है। इन शहरों को मिलियन प्लस (million plus) शहरों के रूप में भी जाना जाता है। भारत में, महानगरीकरण मुख्य रूप से स्वतंत्रता के बाद प्रारंभ हुई है। वर्ष 1901 में, कोलकाता (कलकत्ता) भारत का एकमात्र महानगरीय शहर था। 1941 में मुंबई (बॉम्बे), कोलकाता में शामिल हो गया। अगले तीन दशकों तक, 1941 तक, ऐसे शहरों की संख्या 2 ही रही। हालाँकि, 1951 में स्वतंत्रता के बाद पहली जनगणना के समय, दिल्ली, चेन्नई (मद्रास) और हैदराबाद की जनसंख्या दस लाख को पार कर गई थी। महानगरों की संख्या 1981 तक बहुत धीमी गति से बढ़ी लेकिन 1991 में उनकी संख्या बढ़कर 23 हो गई और 2001 में ये बढ़कर 35 हो गई। यह एक दशक में 12 शहरों की सीधी वृद्धि थी। यह वृद्धि 2011 में भी जारी रही जहां कुल संख्या 47 हो गई (तालिका 15.3)।

नगर प्रसार

नगर प्रसार का तात्पर्य जनसंख्या वृद्धि और ग्रामीण इलाकों में एक महानगर के भौगोलिक विस्तार से है। समय के साथ, विश्व के लगभग सभी शहरों की जनसंख्या और क्षेत्र में वृद्धि होती है, जिससे नगर प्रसार एक निरंतर या सतत प्रक्रिया बन जाता है। नगर प्रसार के लिए उत्तरदायी तीन चर इस प्रकार हैं:

(i) प्राकृतिक कारणों से जनसंख्या का विस्तार (जन्म दर और मृत्यु दर के बीच अंतर)
(ii) ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या का बृहद पैमाने पर प्रवास।
(iii) छोटे शहरों से बड़े नगरों में आबादी का प्रवास।

ऊपर वर्णित तीन कारण जनसंख्या और शहरी क्षेत्र में तेजी से वृद्धि करते हैं, और वे अक्सर संयोजन में काम करते हैं। दूसरी ओर, इन तत्वों की सापेक्ष प्रासंगिकता समय और स्थान के अनुसार बदलती रहती है।

यद्यपि कुछ शहरों में प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि प्रमुख कारण हो सकती है, ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में लोगों का प्रवास अधिकांश शहरों में नगर प्रसार की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

विभिन्न बड़े शहरों में अमीर व्यक्ति लगातार भीड़भाड़ वाले शहर के केंद्रों से अधिक सुखद उपनगरों में स्थानांतरित हो रहे हैं, जहां वे बड़े घर बना सकते हैं और घर के आसपास के बगीचे की जगह और एकांत का आनंद ले सकते हैं।

बिना अधिकार किसी भूमि पर बसने वाले (Squatters) शहरों के बाहरी इलाके में खाली संपत्ति पर तात्कालिक झोंपड़ियों का निर्माण जबकि उनका जमीन पर कोई कानूनी दावा नहीं होता है।

उपनगर वे संगठित आवासीय समुदाय हैं, जो एक बड़े शहर की कॉर्पोरेट सीमाओं से बाहर हैं, लेकिन सांस्कृतिक और आर्थिक रूप से केंद्रीय शहर पर निर्भर हैं (डोब्रिनर, 1958)।

उप नगरीकरण बेहतर जीवन स्तर की तलाश में भीड़भाड़ वाले शहरी क्षेत्रों से शहर के बाहर स्वच्छ क्षेत्रों में जाने वाले लोगों की एक नवीन प्रवृत्ति है। महत्वपूर्ण उपनगर प्रमुख शहरों के आसपास विकसित होते हैं और हर रोज हजारों लोग उपनगरों में अपने घरों से शहर में अपने कार्यस्थलों पर आते हैं।

ऐतिहासिक रूप से उपनगर शहर में जाने वाली प्रमुख सड़कों के साथ पहले विकसित हुए हैं। इस प्रकार की वृद्धि को रिबन अधिवास के रूप में जाना जाता है। उपनगर छोटे शहरी क्षेत्र हैं जो शहरों को घेरते हैं। अधिकांश उपनगर शहरों की तुलना में कम घनी आबादी वाले हैं। ये शहर के अधिकांश कार्यबल के लिए आवासीय क्षेत्र के रूप में काम करते हैं। उपनगर अधिकांशतः एकल–परिवार के घरों, दुकानों और सेवाओं से बने होते हैं। कई शहर के निवासी उपनगरों में चले जाते हैं, जिसे उपनगरीय प्रवास के रूप में जाना जाता है। उपनगरों में घर आमतौर पर शहरों के घरों से बड़े होते हैं, जहां अधिक पार्क और खुले स्थान होते हैं। निवासी यातायात, शोर से बचने या बड़े निवास का आनंद लेने के लिए स्थानांतरित हो सकते हैं।

ग्राम–नगर सीमांत (Rural Urban Fringe), नगर और ग्रामीण कृषि क्षेत्र के बीच संक्रमण क्षेत्र है जहां ग्रामीण और शहरी दोनों प्रथाओं वाले मिश्रित भू–उपयोग प्रारूप मिलती हैं। यह वह क्षेत्र है जहां नगर, ग्रामीण इलाकों से मिलता है। यह कृषि और अन्य ग्रामीण भू–उपयोग से शहरी उपयोग के लिए संक्रमण का एक क्षेत्र है। नगरीय प्रभाव क्षेत्र के भीतर स्थित, सीमांत क्षेत्र में विभिन्न प्रकार का भूमि–उपयोग मिलता है जिसमें छात्रावास बस्तियों, मध्य–आय वाले यात्रियों के आवास शामिल हैं जो केंद्रीय शहरी क्षेत्र में काम करते हैं। उप नगरीकरण, ग्रामीण–नगर सीमा की नगरपालिका सीमा पर होता है। ग्रामीण–नगर सीमांत एक उपेक्षित क्षेत्र है क्योंकि यह शहर की प्रशासनिक सीमा से परे है। कई विद्वान सीमांत क्षेत्र को विभिन्न नामों से पुकारते हैं जैसे परिधीय क्षेत्र, बहिर्बृद्ध और ग्रामीण–शहरी निरन्तरता। यह एक समाजशास्त्रीय अवधारणा है, जो अर्ध–शहरी अवधारणा के समान है।

नगरीय या शहरी अधिवासों या बस्तियों की विशेषताएं

- शहरी बस्तियां आकार में बड़ी होती हैं और जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है।

- शहरी क्षेत्र एक नगर के आसपास का क्षेत्र है।
- शहरी क्षेत्रों के अधिकांश निवासी गैर–कृषि कार्य में संलग्न होते हैं। यहाँ मुख्य व्यवसाय द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों से संबंधित है।
- शहरी क्षेत्र अधिक विकसित होते हैं, जिसका अर्थ है कि मानव संरचनाओं जैसे घरों, वाणिज्यिक भवनों, सड़कों, पुलों और रेलवे का घनत्व अधिक है।
- शहरों में आमतौर पर स्थानीय स्वशासन होता है, और ये खनन या रेलरोडिंग जैसी विशेष आर्थिक गतिविधियों के आसपास विकसित हो सकते हैं।
- पूरे विश्व में, देशों के भीतर प्रवास का प्रमुख प्रारूप ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों की ओर रहा है। यह आंशिक रूप से इसलिए है क्योंकि बेहतर तकनीक ने कृषि श्रमिकों की आवश्यकता को कम कर दिया है और शहरों में अधिक आर्थिक अवसरों की उपलब्धता के रूप में देखा जाता है।

बोध प्रश्न 3

a) टायरेनोपोलिस नगर (Tyranopolis) और नेक्रोपोलिस नगर (Necropolis) को परिभाषित करें।

b) वैधानिक नगर (Statutory Towns) क्या हैं?

15.5 नगरीकरण

नगरीकरण परिवर्तन की एक प्रक्रिया है, जब कोई समाज कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था से औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो जाता है। टिस्डेल (1942) जनसंख्या सघनता को नगरीकरण प्रक्रिया के सबसे विशिष्ट पहलुओं में से एक मानते हैं। गिब्स (1963) ने जनसंख्या संकेंद्रण की निम्नलिखित पांच चरणों वाली प्रक्रिया विकसित की (चंदना, 2016):

चरण I: नगरीय अधिवास या बस्तियों का निर्माण होता है लेकिन शहरी आबादी में प्रतिशत वृद्धि, ग्रामीण आबादी में प्रतिशत वृद्धि के बराबर या उससे कम होती है।

चरण II: नगरीय जनसंख्या में वृद्धि की दर ग्रामीण जनसंख्या में वृद्धि की दर से अधिक होती है, मुख्यतः ग्रामीण–शहरी प्रवास के कारण। परिणामस्वरूप, काफी बड़े आकार के शहर मिलते हैं।

चरण III: ग्रामीण–शहरी प्रवास के कारण ग्रामीण जनसंख्या का ह्रास होता है, और ग्रामीण इलाकों में प्राकृतिक वृद्धि भी समाप्त हो जाती है। शहरी जनसंख्या सघनता दर और बढ़ती है।

चरण IV: बड़े शहरों की आवश्यकताएं अधिक परिष्कृत और विशेषज्ञता की ओर उन्मुख हो जाती हैं। बड़े शहर छोटे शहरों से प्रवासियों को आकर्षित करने लगते हैं। ग्रामीण–शहरी प्रवास की मात्रा कम हो जाती है।

चरण V: संकेंद्रण या सघनता प्रक्रिया जारी नहीं रहती है ताकि एक विशाल शहरी केंद्र में पूरी आबादी का केंद्रीकरण हो सके। वास्तव में, जनसंख्या के अधिक सर्वव्यापी

वितरण की प्रक्रिया शुरू होती है। परिवहन और संचार में सुधार भौतिक और समय की दूरी को कम करता है और जनसंख्या उच्च संकेन्द्रण के बगैर रहती है। इस प्रकार, क्रोड से परिधि की ओर बाह्य आवागमन शुरू होता है, विशाल महानगरीय सांद्रता की परिधि पर अनुषंगी नगर का विकास होता है।

नगरीकरण के कारणः

जनसंख्या में प्राकृतिक वृद्धिः जब जन्म दर (संख्या) मृत्यु दर (संख्या) से अधिक हो जाती है।

ग्रामीण से शहरी प्रवासः यह आकर्षक (pull) कारक (जो लोगों को शहरी क्षेत्रों की ओर आकर्षित करता है) और दबाव (push factors) कारक (जो लोगों को ग्रामीण क्षेत्रों से दूर ले जाते हैं) से होता है।

रोजगार के अवसर, शैक्षणिक संस्थान और शहरी जीवन शैली मुख्य आकर्षण कारक (pull factor) हैं।

गरीबी की स्थिति, शैक्षिक और आर्थिक अवसरों की कमी और खराब स्वास्थ्य सुविधाएं ग्रामीण क्षेत्रों से मुख्य दबाव (push factors) कारक हैं।

भारत में नगरीकरण की प्रवृत्ति

भारत में शहरी जनसंख्या 1901 में 11.0 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 31.1 प्रतिशत हो गई है। शहरी आबादी की वृद्धि की प्रवृत्ति स्थिर नहीं है। तालिका 15.4 शहरी विकास के तीन अलग–अलग चरणों को दर्शाती है।

1. धीमी शहरी विकास की अवधिः 1901 से 1931 तक की अवधि को धीमी शहरी विकास की अवधि कहा जा सकता है। सूखा, बाढ़, अकाल, महामारी और उच्च मृत्यु दर जैसी प्राकृतिक आपदाओं की लगातार घटना ने जनसंख्या के शहरी विकास को धीमा कर दिया। नगरीय केन्द्रों की संख्या भी 1917 से बढ़कर 2219 हो गई। वृद्धि मात्र 302 नगरीय केन्द्रों की थी, अर्थात् प्रति दशक औसतन 100 नगरीय केन्द्रों की वृद्धि हुई।

2. मध्यम वृद्धि दर की अवधिः 1931 से 1961 तक की अवधि मध्यम वृद्धि की अवधि थी। यह वृद्धि आंशिक रूप से स्वतंत्रता के बाद नियोजित विकास के कारण भी थी। इस अवधि के दौरान अनेक औद्योगिक इकाइयों की स्थापना हुई, परिणामस्वरूप नगरीकरण में वृद्धि हुई। इस अवधि के दौरान शहरी केंद्रों की संख्या में 480 की वृद्धि हुई। 1951 में शहरी केंद्रों की संख्या बढ़कर 3059 हो गई लेकिन 1961 में यह घटकर 2699 हो गई। यह वृद्धि शरणार्थी शिविरों की स्थापना के कारण हुई लेकिन 1961 तक कई शरणार्थियों का पुनर्वास किया गया। शहरी केंद्रों की संख्या में गिरावट आई है।

तालिका 15.4: भारत में नगरीकरण की प्रवृत्ति (1901–2011)

वर्ष	नगरीकरण (प्रतिशत)	नगरों की संख्या
1901	11.0	1917
1911	10.4	1909
1921	11.3	2047
1931	12.2	2219

1941	14.1	2424
1951	17.6	3059
1961	18.3	2699
1971	20.2	3119
1981	23.7	4019
1991	25.7	4689
2001	27.8	5167
2011	31.1	7933

स्रोतः भारत की जनगणना, 2011

3. तीव्र शहरी विकास की अवधिः देश की नगरीय या शहरी आबादी में 1961 और 2011 के दौरान तीव्र गति से वृद्धि हुई। 1961 में यह कुल जनसंख्या का 18.3 प्रतिशत थी, जो 2011 में बढ़कर 31.1 प्रतिशत हो गई। नगरीय या शहरी केंद्रों की संख्या भी 2699 से बढ़कर 7933 हो गई।

पंचवर्षीय योजनाओं के परिप्रेक्ष्य से भारत में शहरीकरण

स्वतंत्रता के बाद पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से नगरीकरण को निम्नानुसार केंद्रित किया गया हैः

पहली दो योजनाओं में संस्था और संगठन निर्माण पर ध्यान केंद्रित किया गया था और राज्यों को ऐसा करने का निर्देश दिया गया था। उदाहरण के लिए, इस दौरान दिल्ली विकास प्राधिकरण, शहरी और देश योजना संगठन बनाए गए।

तीसरी योजना (1961–66) नगरीय या शहरी नियोजन इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ थी, इसमें संतुलित क्षेत्रीय विकास में शहरों और नगरों के महत्त्व पर जोर दिया था। इसमें शहरी नियोजन के लिए क्षेत्रीय दृष्टिकोण को अपनाने की सलाह दी गई। इसमें शहरी भूमि विनियमन, शहरी भूमि की कीमतों की जांच, मास्टर प्लान तैयार करने आदि की आवश्यकता पर भी जोर दिया।

चौथी योजना (1969–74), तीसरी योजना के विषय के साथ जारी रही और 72 शहरी क्षेत्रों के लिए विकास योजनाएं शुरू की गईं। दिल्ली, मुंबई और कलकत्ता के आसपास के महानगरीय क्षेत्रों के संबंध में प्रादेशिक या क्षेत्रीय अध्ययन शुरू किए गए।

पांचवीं योजना के दौरान, 1976 में शहरी भूमि सीमा अधिनियम पारित किया गया था। इसने राज्य सरकारों को प्रशासनिक शहर की सीमा के विस्तारित क्षेत्रों की देखभाल के लिए महानगरीय नियोजन क्षेत्र बनाने की भी सलाह दी। 1974 में मुंबई महानगरीय क्षेत्र विकास प्राधिकरण (MMRD) और 1975 में आवास और शहरी विकास सहयोग स्थापित किया गया था। इसने शहरी और औद्योगिक विकेंद्रीकरण पर भी जोर दिया।

छठी पंचवर्षीय योजना (1978–83) ने छोटे और मध्यम आकार के शहरों (1 लाख से कम) को विकसित करने की आवश्यकता पर बल दिया, और केंद्र सरकार द्वारा 1979 में छोटे और मध्यम शहरों (IDSMT) के एकीकृत विकास की एक योजना शुरू की गई। सातवीं योजना के दौरान, कुछ महत्वपूर्ण संस्थागत विकास किए गए, जिन्होंने शहरी विकास नीति और योजना को आकार दिया। नगरीकरण पर राष्ट्रीय आयोग ने 1988 में

अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा 65वां संविधान संशोधन 1989 में लोकसभा में पेश किया गया। यह शहरी स्थानीय निकायों को तीन स्तरीय संघीय ढांचे को संवैधानिक दर्जा देने का पहला प्रयास था। लेकिन इसे पारित नहीं किया गया और अंततः 1992 में 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम के रूप में पारित किया गया तथा 1993 में लागू हुआ।

आठवीं योजना के दौरान, मुंबई, कलकत्ता, चेन्नई, बैंगलोर और हैदराबाद, पांच बड़े शहरों को शामिल करते हुए 1993–94 में मेगा सिटी योजना शुरू की गई थी। इसके अलावा, बड़े शहरों से छोटे और मध्यम शहरों में प्रवास को परिवर्तित करने के लिए, रोजगार सृजन को बढ़ावा देने के लिए, बुनियादी ढांचे के विकास कार्यक्रमों के माध्यम से IDSMT योजना को नया रूप दिया गया था।

नौवीं योजना, आठवीं योजना की योजनाओं के साथ जारी रही और शहरी स्थानीय निकायों के विकेंद्रीकरण और वित्तीय स्वायत्तता पर भी जोर दिया गया। स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना (SJSRY) कार्यक्रम को 1997 में दो उप–योजनाओं के साथ शुरू किया गया था–1. शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम और 2. शहरी मजदूरी रोजगार कार्यक्रम, यानी शहरी गरीबी में कमी और रोजगार का लक्ष्य। केंद्र सरकार द्वारा 2013 में SJSRY को राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन (NULM) के रूप में संशोधित करने का निर्णय लिया गया था।

दसवीं योजना (2002–07) के अनुसार नगरीकरण ने आर्थिक उदारीकरण के परिणामस्वरूप 1980 और 1990 के दशकों में आर्थिक विकास को गति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और इस बात पर भी जोर दिया कि नगरीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शहरी स्थानीय निकायों को मजबूत करना जरुरी है।

राजीव आवास योजना को 2011 में ''झुग्गी मुक्त भारत'' बनाने के उद्देश्य से, दो वर्षों के लिए एक पायलट या मार्गदर्शी परियोजना के रूप में शुरू की गई थी। लेकिन अब इसे 2022 तक बढ़ा दिया गया है। यह शहर की सभी मलिन बस्तियों, अधिसूचित या गैर–अधिसूचित पर लागू है। यह शहरी बेघर और फुटपाथ पर रहने वालों पर भी लागू होता है।

पहले ऐसी जनगणना 2011 में हुई जिसमें झुग्गियों में रहने वाले लोगों का आँकड़ा एकत्र किया गया जो भारत की तीव्र नगरीकरण में सामान्य बात हो गई है। यह पाया गया कि शहरी भारत में हर छह परिवारों में से एक परिवार (17.4%) झुग्गी में रहता है, और देश के सभी झुग्गी में से एक तिहाई (38%) से अधिक शहरों में हैं, जिसकी आबादी दस लाख से अधिक है।

भारत में नगरीकरण

भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार देश के शहरी क्षेत्रों में 37.7 करोड़ लोग रहते थे, यह कुल जनसंख्या का 31.14% था। 2011 में 4041 वैधानिक शहर, 3894 जनगणना शहर, 475 नगरीय संकुल और 981 बाहरी बहिर्वृद्धि थी। जनगणना नगरों की संख्या 147 थी जो वैधानिक नगरों से कम है। उस देश में जहां कुल आबादी का दो–तिहाई हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है, शहरी समूहों और बाहरी वृद्धि की संख्या पर्याप्त है।

तालिका 15.5: भारत में नगरीय केंद्रों की संख्या, 2011

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

नगर केंद्र	संख्या
वैधानिक नगर	4041
जनगणना नगर	3894
नगरीय समूहन	475
बहिर्बद्ध (outgrowth)	981

स्रोतः भारत की जनगणना, 2011

देश की 80% से अधिक शहरी आबादी 11 राज्यों महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली और केरल में निवास करती है। महाराष्ट्र 50.8 मिलियन व्यक्तियों (देश की कुल शहरी आबादी का 13.48%) के साथ सबसे आगे है। उत्तर प्रदेश में लगभग 44.4 मिलियन, तमिलनाडु में 34.9 मिलियन और पश्चिम बंगाल में 29.09 मिलियन हैं।

गोवा 62.17% शहरी आबादी के साथ सर्वाधिक नगरीकृत राज्य है। तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र और गुजरात में 40% से अधिक नगरीकरण हो चुका है।

उत्तर–पूर्वी राज्यों में, मिजोरम 52.11% शहरी आबादी के साथ सर्वाधिक नगरीकृत राज्य है।

केंद्र शासित प्रदेशः राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली और चंडीगढ़ के केंद्र शासित प्रदेश में क्रमशः 97.50% और 97.25% शहरी आबादी के साथ सर्वाधिक नगरीकृत है, लक्षद्वीप में (78.07%) और दमन और दीव में (75%) हैं। देश में शीर्ष पांच पंक्तियों या पदों पर केंद्र शासित प्रदेश हैं।

बिहार, असम, ओडिशा, मेघालय और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य नगरीकरण में, राष्ट्रीय औसत से निचले स्तर पर बने हुए हैं। देश के सत्रह राज्यों में नगरीकरण का स्तर राष्ट्रीय औसत से कम है। हिमाचल प्रदेश राज्य देश का सबसे कम शहरीकृत राज्य है। इसकी आबादी का केवल 10.03% शहरी क्षेत्रों में रहता है (तालिका 15.6)। बिहार भी सबसे कम शहरीकृत राज्यों में से एक है, इसकी आबादी का केवल 11.29% शहरी क्षेत्रों में रहता है।

तालिका 15.6: भारत की नगरीय जनसंख्या, 2011

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	कुल जनसंख्या	नगरीय (शहरी) जनसंख्या	%
भारत	**1210854977**	**377106125**	**31.14**
राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	16787941	16368899	97.50
चंडीगढ़	1055450	1026459	97.25
लक्षद्वीप	64473	50332	78.07
दमन और दीव	243247	182851	75.17
पुडुचेरी	1247953	852753	68.33
गोवा	1458545	906814	62.17

मिजोरम	1097206	571771	52.11
तमिलनाडु	72147030	34917440	48.40
केरल	33406061	15934926	47.70
दादरा और नगर हवेली	343709	160595	46.72
महाराष्ट्र	112374333	50818259	45.22
गुजरात	60439692	25745083	42.60
कर्नाटक	61095297	23625962	38.67
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	380581	143488	37.70
पंजाब	27743338	10399146	37.48
हरियाणा	25351462	8842103	34.88
आंध्र प्रदेश	84580777	28219075	33.36
पश्चिम बंगाल	91276115	29093002	31.87
उत्तराखंड	10086292	3049338	30.23
मणिपुर	2855794	834154	29.21
नागालैंड	1978502	570966	28.86
मध्य प्रदेश	72626809	20069405	27.63
जम्मू और कश्मीर	12541302	3433242	27.38
त्रिपुरा	3673917	961453	26.17
सिक्किम	610577	153578	25.15
राजस्थान	68548437	17048085	24.87
झारखंड	32988134	7933061	24.05
छत्तीसगढ	25545198	5937237	23.24
अरुणाचल प्रदेश	1383727	317369	22.94
उतर प्रदेश	199812341	44495063	22.27
मेघालय	2966889	595450	20.07
उड़ीसा	41974218	7003656	16.69
असम	31205576	4398542	14.10
बिहार	104099452	11758016	11.29
हिमाचल प्रदेश	6864602	688552	10.03

स्रोतः भारत की जनगणना, 2011

भारत में 7933 कस्बे थे जिनमें से 377 मिलियन लोग 80.8 मिलियन घरों में रहते थे, 2011 में जिसका घनत्व 3685 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था।

तालिका 15.7: भारत में नगरों, परिवारों की संख्या, जनसंख्या और घनत्व, 2011

नाम	नगरों की संख्या	परिवारों की संख्या	जनसंख्या	जनसंख्या प्रति वर्ग किमी
भारत	**7,933**	**8,08,88,766**	**37,71,06,125**	**3,685**
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	5	36,021	1,43,488	NA
आंध्र प्रदेश	353	67,88,201	2,82,19,075	3,784
अरुणाचल प्रदेश	27	70,367	3,17,369	3,593
असम	214	9,85,594	43,98,542	3,491
बिहार	199	20,50,625	1,17,58,016	5,058
चंडीगढ़	6	2,34,033	10,26,459	9,371
छत्तीसगढ	182	12,85,156	59,37,237	1,826
दादरा और नगर हवेली	6	40,364	1,60,595	3,514
दमन और दीव	8	48,212	1,82,851	3,769
गोवा	70	2,15,403	9,06,814	1,186
गुजरात	348	54,74,870	2,57,45,083	3,477
हरियाणा	154	18,13,768	88,42,103	4,475
हिमाचल प्रदेश	59	1,70,770	6,88,552	2,542
जम्मू और कश्मीर	122	5,66,285	34,33,242	2,755
झारखंड	228	15,25,412	79,33,061	3,273
कर्नाटक	347	54,10,370	2,36,25,962	3,928
केरल	520	37,04,113	1,59,34,926	2,097
लक्षद्वीप	6	8,864	50,332	2,416
मध्य प्रदेश	476	40,12,978	2,00,69,405	2,591
महाराष्ट्र	534	1,12,06,781	5,08,18,259	5,588
मणिपुर	51	1,72,339	8,34,154	4,647
मेघालय	22	1,17,486	5,95,450	2,105
मिजोरम	23	1,17,041	5,71,771	974
नागालैंड	26	1,18,511	5,70,966	2,345
राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	113	33,56,425	1,63,68,899	14,153

उड़ीसा	223	15,47,833	70,03,656	2,090
पुडुचेरी	10	2,07,432	8,52,753	5,517
पंजाब	217	21,54,958	1,03,99,146	4,136
राजस्थान	297	32,16,243	1,70,48,085	2,570
सिक्किम	9	35,718	1,53,578	4,015
तमिलनाडु	1,097	89,96,487	3,49,17,440	2,561
त्रिपुरा	42	2,38,974	9,61,453	2,453
उतर प्रदेश	915	77,62,093	4,44,95,063	5,884
उत्तराखंड	115	6,31,889	30,49,338	3,381
पश्चिम बंगाल	909	65,67,150	2,90,93,002	5,676

स्रोतः भारत की जनगणना, 2011

तमिलनाडु राज्य में सर्वाधिक नगर है जो देश के कुल नगरों का लगभग 13.83% है। इसमें 1097, उत्तर प्रदेश में 915, पश्चिम बंगाल में 909 नगर थे। इन तीनों राज्यों में देश के कुल शहरी केंद्रों का 36.82% हिस्सा था। सबसे कम शहरों वाला राज्य केंद्र शासित प्रदेश अंडमान और निकोबार द्वीप समूह था। छह राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में 10 से कम शहरी केंद्र थे। ये सिक्किम, दमन और दीव, चंडीगढ़, दादरा और नगर हवेली, लक्षद्वीप और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह थे (तालिका 15.7)। देश में पश्चिम बंगाल के हावड़ा (हावड़ा) जिले में सर्वाधिक 138 शहरी केंद्र हैं।

देश में 80.8 मिलियन परिवार शहर या नगर में रहते थे। सर्वाधिक नगरीय परिवार महाराष्ट्र (11.2 मिलियन) में पाए गए। सात राज्यों में 64.54% हिस्सा है। ये सात राज्य महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, गुजरात और कर्नाटक थे। बंगलौर (2.18 मिलियन) जिले में शहरी परिवारों की सर्वाधिक संख्या थी, इसके बाद मुंबई उपनगर था।

महाराष्ट्र देश का सबसे अधिक नगरीकृत राज्य था। इसकी आबादी 50.8 मिलियन थी जो देश की कुल शहरी आबादी का 13.48% थी। सात राज्यों में कुल नगरीय या शहरी आबादी का 62.82% था, ये राज्य थे महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, गुजरात और कर्नाटक। दूसरी ओर सत्रह राज्य और केंद्र शासित प्रदेश थे जिनकी कुल आबादी में शहरी आबादी का अनुपात एक प्रतिशत से भी कम था। लक्षद्वीप में नगरीय आबादी का सबसे कम हिस्सा 0.01% था। मुंबई उपनगरीय जिला देश का सर्वाधिक नगरीकृत जिला था जिसके बाद बैंगलोर जिला था।

देश के सभी शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व 974 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से अधिक थी। सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली (14,153 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी.) में दर्ज किया गया था। चंडीगढ़ में दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व (9371 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी) था। उत्तर पूर्वी दिल्ली देश में सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व (46867 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर) वाला जिला था।

कुल जनसंख्या में शहरी आबादी प्रतिशत का स्थानिक वितरण एक बहुत ही अलग तस्वीर प्रदर्शित करता है। 148 जिलों में शहरी आबादी 11% से कम थी, 210 जिलों में

शहरी आबादी 11 से 22% के बीच थी, 117 जिलों में शहरी आबादी 22 से 33% के बीच थी। राष्ट्रीय औसत 31.14% भी इसी वर्ग अंतराल में है। वर्ग अंतराल 33–44% में सभी पांच वर्गों में से सबसे कम जिले (63) थे। 44% से अधिक की श्रेणी में 103 जिले थे। चित्र 15.2 देश में नगरीकरण स्तरों के जिलेवार वितरण को प्रदर्शित किया गया है। उत्तर दक्षिण विभाजन शहरी जनसंख्या के वितरण में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। दक्षिणी जिले उत्तरी जिलों की तुलना में और पश्चिमी भाग पूर्वी भाग की तुलना में अधिक नगरीकृत है। हिमालयी राज्य कम नगरीकृत हैं। पश्चिमी तट, पूर्वी तट की तुलना में अधिक नगरीकृत है। उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, आंध्र प्रदेश, झारखंड, छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में कम नगरीकरण हुआ है तथा इसका स्तर 11% से कम है।

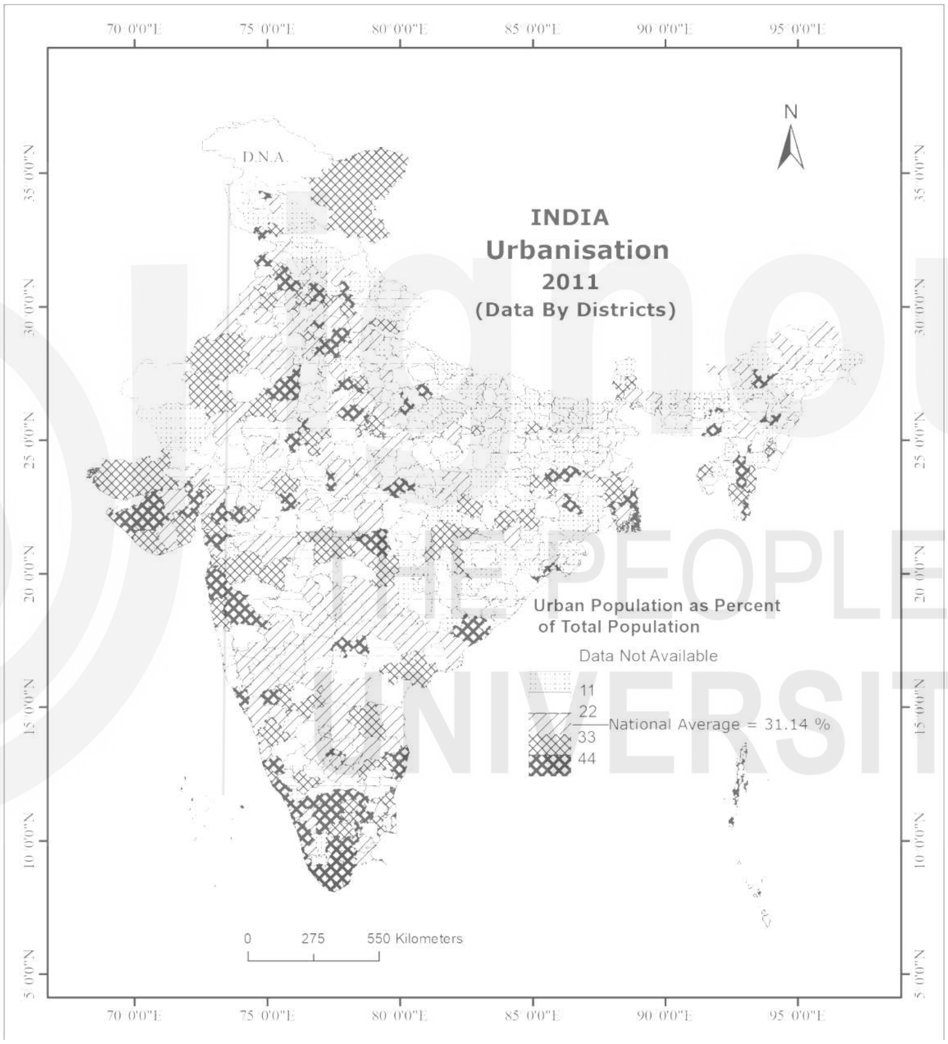

चित्र 15.2: भारत, नगरीकरण

तालिका 15.8: भारत, नगर और गांव, नगर (शहरी) और ग्रामीण क्षेत्रों की जनगणना 2011 परिभाषा के अपवाद

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	5000 से अधिक जनसंख्या वाले गाँव	5,000 से कम जनसंख्या वाले शहर
भारत	**23,335**	**498**

जम्मू और कश्मीर	235	24
हिमाचल प्रदेश	13	29
पंजाब	371	18
चंडीगढ़	3	-
हरियाणा	715	8
उत्तराखंड	117	14
राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	15	4
राजस्थान	952	10
उतर प्रदेश	3,978	26
मध्य प्रदेश	614	11
छत्तीसगढ	90	13
बिहार	4,345	9
झारखंड	259	29
पश्चिम बंगाल	2,132	85
सिक्किम	4	3
असम	330	28
अरुणाचल प्रदेश	1	9
मेघालय	7	1
मणिपुर	46	7
नागालैंड	31	2
त्रिपुरा	149	1
मिजोरम	2	8
उड़ीसा	205	29
आंध्र प्रदेश	2,405	6
तमिलनाडु	1,699	35
केरल	943	8
कर्नाटक	1,000	14
गोवा	15	8
महाराष्ट्र	1,486	26
गुजरात	1,129	31
पुदुचेरी	29	-

दादरा और नगर हवेली	7	-
दमन और दीव	5	-
लक्षद्वीप	1	1
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	2	1

यद्यपि, भारत की जनगणना ने नगरीय या शहरी क्षेत्रों को परिभाषित किया था लेकिन इसके कुछ अपवाद हैं। राष्ट्रीय स्तर पर भारत में, 23,335 गाँव हैं जिनकी जनसंख्या 5000 से अधिक है और 498 नगर हैं जिनकी जनसंख्या 5000 से कम है। ऐसे गांवों की सबसे बड़ी संख्या बिहार, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश में हैं। इसी तरह, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, गुजरात, हिमाचल प्रदेश राज्यों में 5000 से कम जनसँख्या वाले नगर है।

बोध प्रश्न 4

नगरीकरण के महत्वपूर्ण कारणों की विवेचना कीजिए।

15.6 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने सीखाः

- गांव, कस्बे और शहर या नगर आपस में जुड़े हुए हैं।
- ग्रामीण क्षेत्र, शहरी क्षेत्रों को सेवाएं, सामान, संसाधन और लोग प्रदान करते हैं।
- कई प्रकार के पश्चवर्ती (बैकवर्ड) एवं अग्रिम (फारवर्ड) संपर्क हैं, जो मानव बस्तियों की धारणीयता या संपोषणीयता के लिए महत्वपूर्ण हैं।
- चूंकि, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का सृजन बहुत कम है तथा कृषि मशीनीकरण के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी दर में वृद्धि हुई है, परिणामस्वरूप ग्रामीण—शहरी प्रवास हुआ है और इससे नगरीकरण हुआ है।
- इन प्रवासियों ने शहरी बुनियादी ढांचे और सेवाओं पर भारी दबाव डाला है जो पहले से ही गंभीर दबाव में हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर ग्रामीण प्रवासियों के पलायन को रोकने के लिए वहां गरीबी उन्मूलन, जीवन स्तर में सुधार के साथ ग्रामीण बस्तियों में रोजगार तथा शैक्षिक अवसर पैदा करने की तत्काल आवश्यकता है।
- ताकि नगरीकरण की गति को कम किया जा सके और शहरी क्षेत्रों में दवा, स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छ और शुद्ध पानी और स्वच्छता जैसी उचित शहरी सुविधाओं में सुधार किया जा सके।

15.7 अंतिम प्रश्न

1. ग्रामीण और शहरी अधिवासों की विशेषताएं क्या हैं?

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

2. ग्रामीण अधिवास या बस्तियों से आप क्या समझते हैं? जनसंख्या के आकार और भौगोलिक क्षेत्रफल के आधार पर गाँवों का वर्गीकरण कीजिए।

3. नगरीय या शहरी शब्द से आप क्या समझते हैं और किसी स्थान को नगरीय या शहरी क्षेत्र में वर्गीकृत करने के लिए भारत सरकार द्वारा अपनाए गए मानदंड क्या हैं?

4. नगरीय संकुल से आप क्या समझते हैं? विभिन्न प्रकार के नगरीय संकुल का संक्षिप्त विवरण दें?

5. कार्यों के आधार पर शहर का वर्गीकरण कैसे किया जा सकता है? विभिन्न विद्वानों द्वारा दिए गए, कार्यों के आधार पर नगरों का वर्गीकरण कीजिए।

6. नगर–प्रसार से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताओं का विस्तार से वर्णन कीजिए।

15.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. परिक्षिप्त बस्ती, प्रकीर्ण या परिक्षिप्त कई घरों से बनी होती है, जबकि केंद्रित या संहत बस्ती एक समूह के रूप में होती है, सड़कों से जुड़ी होती है तथा बस्ती का आकार लगभग गोलाकार या अनियमित हो सकता है।

2. इनमें तट के किनारे मत्स्य पालन, जंगल में आदिवासी और नदियों के किनारे किसान शामिल हैं।

3. a) टायरेनोपोलिस नगर (Tyranopolis) एक राज्य को संदर्भित करता है जब व्यापक नगरीकरण किसी देश के दृश्य पर हावी हो जाता है। नेक्रोपोलिस नगर (Necropolis) का अर्थ युद्ध, अकाल, बीमारियों, संस्कृति के क्षय के परिणामस्वरूप भूत शहर या मृत शहर हैं।

   b) वैधानिक कस्बों में नगर पंचायत, नगर पालिका और अन्य शामिल हैं।

4. नगरीकरण या शहरीकरण के महत्वपूर्ण कारणों में जनसंख्या की प्राकृतिक वृद्धि, ग्रामीण से शहरी प्रवास, रोजगार के अवसर, शैक्षणिक संस्थान और शहरी जीवन शैली आदि शामिल हैं।

अंतिम प्रश्न

1. अपने उत्तर में ग्रामीण और शहरी बस्तियों की मुख्य विशेषताओं को शामिल करें। अनुभाग 15.3 और 15.4 का संदर्भ लें।

2. आपके उत्तर में जनसंख्या के आकार और भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर वर्गीकरण के साथ–साथ ग्रामीण बस्तियों का अर्थ शामिल होना चाहिए। अनुभाग 15.3 का संदर्भ लें।

3. अपने उत्तर में किसी स्थान को नगरीय क्षेत्र में वर्गीकृत करने के लिए नगर शब्द और मानदंड को परिभाषित करें। अनुभाग 15.4 का संदर्भ लें।

4. आपके उत्तर में नगरीय संकुल का अर्थ और इसके प्रकारों का संक्षिप्त विवरण शामिल होना चाहिए। अनुभाग 15.5 का संदर्भ लें।

5. अपने उत्तर में विद्वानों द्वारा प्रतिपादित कार्यों के आधार पर नगरों के वर्गीकरण की विवेचना कीजिए। अनुभाग 15.5 का संदर्भ लें।

6. आपके उत्तर में नगर–प्रसार का अर्थ शामिल होना चाहिए और इसकी विशेषताओं का विस्तार से वर्णन कीजिए। अनुभाग 15.5 का संदर्भ लें।

15.9 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

- Chandna, R.C. (2016). *Geography of Population: Concepts, Determinants and Patterns,* Ludhiana: Kalyani Publishers.
- Desai, A.P. (1984). *Spatial Aspects of Settlement Pattern*, New Delhi: Concept Publishing Company.
- Dobriner, W.M. (1958). *The Suburban Community,* New York: G.P. Putman's Sons.
- Gibbs, J.P. (1963). *The Evolution of Population Concentration,* Economic Geography, Vol. 39.
- Houston, J.M. (1953). *A Social Geography of Europe*, London: Duckworth.
- Taylor, G. (1949) *Urban Geography*, London: Methven.
- Tisdale, H. (1942). *The Process of Urbanisation,* Social Forces, Vol. 20, pp. 311-16.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

शब्दावली

आयु संरचना	: प्रत्येक आयु वर्ग में कुल जनसंख्या का अनुपात।
आयु–निर्भरता अनुपात	: जनसंख्या में आर्थिक रूप से उत्पादक (15–64 वर्ष) के रूप में परिभाषित आयु के व्यक्तियों के लिए आश्रित (15 वर्ष से कम और 64 वर्ष से अधिक) के रूप में परिभाषित आयु के व्यक्तियों का अनुपात।
आयु–लिंग संरचना	: प्रत्येक आयु वर्ग में पुरुषों और महिलाओं की संख्या या अनुपात द्वारा निर्धारित जनसंख्या की संरचना। जनसंख्या की आयु–लिंग संरचना प्रजनन क्षमता, मृत्यु दर और प्रवास में पिछले रुझानों का संचयी परिणाम है।
आयु–विशिष्ट दर	: विशिष्ट आयु समूहों के लिए प्राप्त दर (उदाहरण के लिए, आयु–विशिष्ट प्रजनन दर, मृत्यु दर, विवाह दर, निरक्षरता दर, या स्कल नामांकन दर)।
जन्म दर (या अशोधित जन्म दर)	: किसी दिए गए वर्ष में प्रति 1,000 जनसंख्या पर जीवित जन्मों की संख्या।
जनसांख्यिकीय संक्रमण	: किसी जनसंख्या में जन्म और मृत्यु दर का उच्च से निम्न स्तर की ओर ऐतिहासिक बदलाव। मृत्यु दर में गिरावट आमतौर पर प्रजनन क्षमता में गिरावट से पहले होती है, जिसके परिणाम स्वरूप संक्रमण अवधि के दौरान तेजी से जनसंख्या वृद्धि होती है।
जनसांख्यिकी	: मानव आबादी का वैज्ञानिक अध्ययन, जिसमें उनके आकार, संरचना, वितरण, घनत्व, वृद्धि और अन्य विशेषताओं के साथ–साथ इन कारकों में परिवर्तन के कारण और परिणाम शामिल हैं।
निर्भरता अनुपात	: एक निर्भरता अनुपात एक आश्रित आयु समूह (15 वर्ष से कम या 65 वर्ष और अधिक आयु) के लोगों का जनसंख्या के आर्थिक रूप से उत्पादक आयु वर्ग (15 से 64 वर्ष की आयु) से अनुपात है। उदाहरण के लिए, 0.45 के बाल निर्भरता अनुपात का मतलब है कि प्रत्येक 100 कामकाजी उम्र के वयस्कों के लिए 45 बच्चे हैं।
परिक्षिप्त बस्ती	: यह बिखरी हुई या परिक्षिप्त प्रकार की बस्तियाँ होती है।
आवास	: रहने के लिए एक इमारत (जैसे घर या फ्लैट)।
वृद्धि दर	: प्राकृतिक वृद्धि के कारण एक वर्ष में जनसंख्या में जोड़े गए (या घटाए गए) लोगों की संख्या और समय अवधि की शुरुआत में जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में व्यक्त शुद्ध प्रवास।

आधारभूत संरचना : किसी देश में बुनियादी सेवाएं। जैसे सड़क, रेलवे, जलापूर्ति, टेलीफोन व्यवस्था।

जीवन प्रत्याशा : एक व्यक्ति औसत अतिरिक्त वर्ष जीने की उम्मीद कर सकता है, यदि वर्तमान मृत्यु दर उस व्यक्ति के शेष जीवन के लिए जारी रहती है। आमतौर पर जन्म के समय जीवन प्रत्याशा के रूप में उद्धृत किया जाता है।

रेखीय अधिवास : बस्ती के भवन सड़क, रेल या नदी के मार्ग के किनारे स्थित होते हैं।

विंास : एक नया या अर्ध–स्थायी निवास स्थापित करने के उद्देश्य से एक निर्दिष्ट सीमा के पार लोगों की आवाजाही। इसे अंतर्राष्ट्रीय प्रवास (देशों के बीच प्रवास) और आंतरिक प्रवास (एक देश के भीतर प्रवास) में विभाजित किया गया है।

आकेंद्रित अधिवास या बस्ती : बस्ती में सभी भवन या इमारतें एक समूह या क्लस्टर बनाती हैं।

जनसंख्या घनत्व : प्रति इकाई भूमि क्षेत्र पर जनसंख्या; उदाहरण के लिए, प्रति वर्ग मील लोग या प्रति वर्ग किलोमीटर भूमि पर लोग।

जनसंख्या वितरण : अधिवास का प्रतिरूप और जनसँख्या का प्रसार।

जनसंख्या पिरैमिड : एक दंड संचित्र, जो लंबवत रूप से व्यवस्थित होता है, जो आयु और लिंग के आधार पर जनसंख्या के वितरण को दर्शाता है। परंपरा के अनुसार, कम उम्र सब से नीचे है, बाईं ओर पुरुष और दाईं ओर महिलाएं हैं।

ग्रामीण क्षेत्र : ग्रामीण क्षेत्र, जहां लोग खेतों, पुरवा या पल्ली और छोटे गांवों में रहते हैं।

अधिवास या बस्ती पदानुक्रम : आकार के क्रम में बस्तियाँ जिसमें प्रथम क्रम में सर्वाधिक बड़ी बस्ती है।

अधिवास या बस्ती : एक जगह जहां लोग रहते हैं यह एक गांव, पुरवा या पल्ली, कस्बा या शहर हो सकता है।

स्थल : वह भूमि जिस पर बस्ती बनी हो।

स्थिति : नदियों, पहाड़ियों और अन्य बस्तियों जैसी सुविधाओं के संदर्भ में अधिवासों या बस्तियों की स्थिति।

कुल प्रजनन दर (TFR) : एक महिला (या महिलाओं के समूह) को उसके जीवनकाल के दौरान जीवित पैदा होने वाले बच्चों की औसत संख्या यदि वह किसी दिए गए वर्ष की आयु–विशिष्ट प्रजनन दर के अनुरूप अपने बच्चे के जन्म के वर्षों से गुजरती है। इस दर को कभी–कभी कहा जाता है कि आज महिलाओं के कितने बच्चे हैं।

शहरी क्षेत्र : एक निर्मित क्षेत्र (बिल्ट–अप एरिया), जैसे शहर या नगर।

नगरीकरण : वह प्रक्रिया जिसके द्वारा ग्रामीण क्षेत्र शहरी क्षेत्र में परिवर्तित होते हैं।

शून्य जनसंख्या वृद्धि : शून्य की वृद्धि दर के साथ संतुलन में एक जनसंख्या प्राप्त होती है, जब जन्म और आप्रवास मृत्यु और उत्प्रवास के बराबर होता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड

5

भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

इकाई 16

भूआकृतिक उपगमन

इकाई 17

सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 18

आर्थिक उपगमन

शब्दावली

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

BGGET - 141
भारत का भूगोल

खंड 1 भौतिक विन्यास

इकाई 1 उपमहाद्वीपीय विन्यास में भारत

इकाई 2 भूआकृति विज्ञान

इकाई 3 अपवाह तंत्र

इकाई 4 जलवायु

इकाई 5 मृदा एवं वनस्पति

खंड 2 संसाधनों का आधार

इकाई 6 भूमि संसाधन

इकाई 7 जल संसाधन

इकाई 8 वन संसाधन

इकाई 9 खनिज संसाधन

इकाई 10 ऊर्जा संसाधन

खंड 3 अर्थव्यवस्था

इकाई 11 कृषि

इकाई 12 उद्योग

इकाई 13 परिवहन

खंड 4 जनसंख्या एवं बस्ती/अधिवास

इकाई 14 जनसंख्या

इकाई 15 बस्तीयाँ/अधिवास

खंड 5 भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

इकाई 16 भूआकृतिक उपगमन

इकाई 17 सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 18 आर्थिक उपगमन

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 5: भारतीय भूगोल में प्रादेशिक उपगमन

अब तक इस पाठ्यक्रम के पहले चार खंडों में आपने सीखा कि भूगोल ज्ञान की एक बहुविषयक शाखा है जो भौतिक और मानवीय दोनों विशेषताओं के विविध पहलुओं का अध्ययन करती है। ऐसा करने में, भूगोलवेत्ता कुछ उपगमनों को ध्यान में रखते हैं जैसाकि विभिन्न विद्वानों द्वारा कुछ भौतिक और मानवीय विशेषताओं की एकरूपता के आधार पर उपगमनों को तैयार किया गया है। कई विद्वानों ने देश को विभिन्न भूआकृतिक, सामाजिक–सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों में कुछ निश्चित कारकों के आधार पर वर्गीकृत करने का प्रयास किया। इसमें ऐतिहासिक, क्षेत्रीय, सांस्कृतिक और जनसांख्यिकीय आदि कारक सम्मिलित हो सकते हैं। विविध प्रकार के क्षेत्रों की पहचान की जाती है और फिर वृहत् से लेकर मध्यम और सूक्ष्म स्तर तक विविध पैमाने पर क्षेत्रों का अध्ययन किया जाता है। क्षेत्रों को पहचानने और विभाजित करने का कारण विविध प्रकार के भौगोलिक क्षेत्र में निहित विशिष्टताओं, अवसरों और बाधाओं पर ध्यान केंद्रित करना आदि शामिल हो सकता है। इस तरह के उपगमन भौतिक, सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक और समकालीन विकास संबंधी क्षेत्रीय मुद्दों के संदर्भ में मानव–पर्यावरणीय संबंधों को उजागर करने में सहायक हो सकते हैं।

इस अंतिम खंड 5 में, हम आपको भारत के भूगोल में क्षेत्रीय उपगमनों से परिचित कराएंगे विशेषकर भूआकृतिक उपगमन, सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन और आर्थिक उपगमन पर ध्यान देंगे जो विस्तृत रूप से तीन इकाइयों में वर्णित हैं।

इकाई 16: भूआकृतिक उपगमन

इकाई 16 को भूआकृतिक उपगमन के अध्ययन के लिए समर्पित किया गया है। यह आपको भौगोलिक भूआकृतिक क्षेत्रों की संकल्पना के बारे में एक विचार प्रदान करेगा। आप भूआकृतिक क्षेत्रीयकरण के संदर्भ में प्रसिद्ध विद्वानों द्वारा तैयार किए गए भूआकृतिक उपगमन के बारे में जानेंगे। आप आगे विविध प्रकार के भूआकृतिक क्षेत्रों से संबंधित कई पहलुओं को सीखेंगे और भौतिक भू–आकृति की सराहना करेंगे और उनके महत्व को कीमती प्राकृतिक संसाधनों के संदर्भ में जानेंगे।

इकाई 17: सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

इकाई 17 सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन के अध्ययन के लिए समर्पित है। शुरुआत में आप उन संकल्पनाओं के बारे में एक विचार प्राप्त करेंगे जो भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्रों को परिभाषित करने और पहचानने के लिए लागू की गई हैं। आप प्रसिद्ध विद्वानों द्वारा तैयार किए गए सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमनों के बारे में जानेंगे। आप सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्रों और विभिन्न क्षेत्रीयकरण योजनाओं के प्रकार से जुड़े असंख्य पहलुओं के बारे में भी सीखेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्रों को व्यापक रूप से समझने के साथ–साथ मानव समाज और राष्ट्र के संदर्भ में प्रमुख विशेषताओं और उनका महत्व समझने में सक्षम होंगे।

इकाई 18: आर्थिक उपगमन

इस खंड की अंतिम इकाई 18 (पाठ्यक्रम भी) को आर्थिक उपगमन के अध्ययन के लिए समर्पित किया गया है। जैसा कि स्पष्ट है, आर्थिक उपगमन पृथ्वी ग्रह पर किसी भी भौगोलिक क्षेत्र की अर्थव्यवस्था के संबंध में महत्वपूर्ण है। आप विभिन्न विद्वानों द्वारा परिभाषित भारत के आर्थिक उपगमन के साथ–साथ इसकी विशेषताओं के बारे में एक विस्तृत विचार प्राप्त करेंगे। इसके अलावा, आप वर्तमान संदर्भ में भारत के आर्थिक उपगमन के महत्व के बारे में भी जानेंगे।

हम आशा करते हैं कि इस अंतिम खंड 5 का अध्ययन करने के पश्चात, आप भारत के भूगोल में क्षेत्रीय उपगमनों को अधिक सुसंगत और व्यवस्थित रूप से समझने में सक्षम होंगे।
इस प्रयास में हमारी शुभकामनाएं हमेशा आपके साथ हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 16

भूआकृतिक उपगमन

संरचना

16.1 प्रस्तावना

अपेक्षित अध्ययन परिणाम

16.2 भारत के भूआकृतिक प्रदेश

16.3 आर एल सिंह द्वारा भूआकृतिक प्रादेशीकरण

16.4 सारांश

16.5 अंतिम प्रश्न

16.6 उत्तर

16.7 संदर्भ/अन्य पाठ्य सामग्री

16.1 प्रस्तावना

पिछले खंडों 1 से 4 (इकाई 1 से 15 में) में आपने भारत की भौतिक विन्यास, संसाधन आधार, अर्थव्यवस्था के साथ–साथ जनसंख्या और बस्तियों के बारे में विस्तार से सीखा है। अब तक आप भारत के संदर्भ में इन विषयों में से प्रत्येक की भूमिका और प्रासंगिकता को विस्तार से समझ चुके होंगे। यह अंतिम खंड 5 भारत के भूगोल के प्रादेशिक उपगमन के अध्ययन के लिए समर्पित है जो आपको भारत के आर्थिक क्षेत्रों के साथ–साथ भूआकृतिक प्रदेशों, सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्रों की व्यापक विशेषताओं को समझने में मदद करेगा। खंड 5 की पहली इकाई भूआकृतिक उपगमन के अध्ययन के लिए समर्पित है जैसा कि इकाई 16 में चर्चा की गई है। कुछ विद्वानों ने भारतीय उपमहाद्वीप को भूआकृतिक विशेषताओं की एकरूपता या दूसरे शब्दों में, क्षेत्र की भौतिक विशेषताओं के आधार पर विभाजित किया है।

इस इकाई में, हम प्रसिद्ध भारतीय भूगोलवेत्ता आर एल सिंह और अन्य विद्वानों द्वारा तैयार किए गए भूआकृतिक प्रादेशीकरण के संदर्भ में भूआकृतिक उपगमन के बारे में चर्चा करेंगे। हम अनुभाग 16.2 में भौतिक प्रदेशों की पहचान करने के लिए प्रयुक्त विभिन्न अवधारणाओं पर चर्चा करके इकाई की शुरुआत करेंगे। हम अनुभाग 16.3 में विभिन्न प्रकार के भूआकृतिक प्रदेशों और प्रादेशीकरण की योजनाओं के कई पहलुओं पर चर्चा करेंगे और उन्हें उजागर करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप भौतिक भू–आकृतियों और प्राकृतिक संसाधनों के रूप में उनके महत्व की सराहना करने के लिए भारत के भूआकृतिक प्रादेशीकरण या भूआकृतिक विभाजनों को विस्तार से समझ सकेंगे।

यह भौतिक भूदृश्य है जो पूर्ण स्थान प्रदान करता है जहां जीवित रहने और आजीविका के लिए मनुष्यों, समाजों और राष्ट्रों द्वारा स्थानिक और गैर–स्थानिक गतिविधियां क्रियान्वित की जाती हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

अपेक्षित अध्ययन के परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपः

- भारत के मानचित्र पर विभिन्न भूआकृतिक प्रदेशों की पहचान कर सकेंगे;
- एक संसाधन के रूप में भूआकृतिक प्रदेशों के महत्व को पहचान सकेंगे;
- भारत के प्रत्येक भूआकृतिक प्रदेशों की मुख्य विशेषताओं को समझ सकेंगे।

16.2 भारत के भूआकृतिक प्रदेश

भूगोल शब्द की उत्पत्ति यूनानी शास्त्रीय दर्शन में से हुई है भूगोल का अर्थ है पृथ्वी का विवरण। इसे पृथ्वी की सतह के अध्ययन के लिए समर्पित ज्ञान की एक शाखा के रूप में माना जाता था। हालांकि, मामूली संशोधनों और विशिष्ट आवश्यकताओं के समायोजन के साथ, इसने पृथ्वी के विवरण पर विशेष रूप से इसकी सतह पर ध्यान केंद्रित करना जारी रखा, फिर भी 17वीं और 18वीं शताब्दी के दौरान आधुनिकता की शुरुआत तक कुछ पहलुओं पर अन्य की तुलना में अधिक बल दिया गया। नतीजतन, पृथ्वी की सतह का ठीक से वर्णन करने के लिए विभिन्न अवधारणाएं विकसित की गईं। कुछ अवधारणाएँ जैसे कि उच्चावच, भूभाग, स्थलाकृति और भूआकृति का परस्पर उपयोग किया गया था, जिसने बदले में भूगोल के विषय में भ्रम और मन्दन उत्पन्न किया। इसलिए, भारत के भौतिक प्रदेशों की पहचान करने से पहले इन अवधारणाओं को समझना आवश्यक है।

उच्चावचः पृथ्वी की सतह का वर्णन करने के लिए उच्चावच की अवधारणा का उपयोग तत्कालीन सबसे प्रचलित यूक्लिडियन द्वि–आयामी ज्यामिति के विपरित एक बड़ी सफलता थी। उच्चावच, समतलता का विलोम है, अर्थात, पृथ्वी की सतह पर क्रमशः दो उच्च और निम्न बिंदुओं के बीच माप का अंतर। परंपरागत रूप से, उच्चावच को हमेशा मीट्रिक इकाईयों जैसे मीटर और फीट आदि में मात्रात्मक शब्दों में मापा जाता है। उच्चावच का मापन पृथ्वी की सतह को बेहतर समझने के लिए सतहों के ढलान या ढाल को भी इंगित करता है। हालाँकि, उच्चावच को गुणात्मक विशेषताओं जैसे पठार, पहाड़ियों और पर्वतों के उच्च उच्चावच और घाटियों, मैदानों और तटीय क्षेत्रों के निम्न उच्चावच के माध्यम से भी परिभाषित किया जा सकता है। उच्चावच की एक महत्वपूर्ण विशेषता किसी दिए गए क्षेत्र में जल अपवाह तंत्र प्रतिरूप और प्रणालियों के विवरण की स्पष्ट अनुपस्थिति है। हालांकि, जल अपवाह तंत्र हमेशा सतह के ढाल का पालन करती है।

भू–भागः भू–भाग की अवधारणा पृथ्वी की सतह की दशा को संदर्भित करता है जो सतह की विशेषताओं के उन्नयन, ढलान और सामान्य अभिविन्यास के संदर्भ में व्यक्त किया जाता है। मानव उपयोग जैसे बस्तियों, कृषि, बुनियादी ढांचे, सिंचाई, जल विभाजक सीमाओं का परिसीमन, सतह अपवाह, भौम जल संचलन आदि के लिए उपयुक्तता के दृष्टिकोण से पृथ्वी की सतह की विशेषताएँ महत्वपूर्ण हैं। इसमें सतह की अवस्था के संबंध में उन गतिविधियों की स्थिरता/सुभेद्यता भी शामिल है। भू–प्रबंधन, मृदा संरक्षण, खेती के प्रकार और विकास गतिविधियों के लिए भूभाग की समझ भी महत्वपूर्ण है। हाल के दिनों में, सामरिक स्थान के चयन और रक्षा प्रतिष्ठानों की तैनाती, रडार और रेडियो संचार प्रणाली की स्थिति और विमानन गतिविधियों के विकास जैसे

रनवे और हवाई अड्डे के संरेखण आदि के लिए भू–भाग के बारे में समझ महत्वपूर्ण हो गई है।

स्थलाकृतिः यह दो आयामी मानचित्रों पर प्राकृतिक और मानव निर्मित विशेषताओं सहित पृथ्वी की त्रि–आयामी सतह की विशेषताओं का चित्रण है। इन विशेषताओं के कारण ही स्थलाकृति को भू–आकारमिति (जियोमॉर्फोमेट्री) भी कहा जाता है। स्थलाकृतिक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य क्षैतिज यानी अक्षांश और देशांतर और लंबवत यानी ऊंचाई निर्देशांक दोनों के संदर्भ में पृथ्वी की सतह की विशेषताओं की पूर्ण और सापेक्ष स्थिति निर्धारित करना है। इसलिए, सैन्य योजना, भूवैज्ञानिक अन्वेषण, नागरिक अभियांत्रिकी (सिविल इंजीनियरिंग), सार्वजनिक कार्यों और भूमि प्रबंधन के लिए स्थलाकृतिक अध्ययन महत्वपूर्ण है।

भूआकृति विज्ञानः इसे लोकप्रिय रूप से भौतिक भूगोल के नाम से जाना जाता है। पृथ्वी की सतह की विशेषताओं का वर्णन करने के लिए उपयोग की जाने वाली अन्य अवधारणाओं के विपरीत, भूआकृति विज्ञान प्राकृतिक पर्यावरण की प्रक्रियाओं और प्रतिरूप जैसे कि वायुमंडल, जलमंडल, जीवमंडल और भूमंडल आदि से संबंधित है, जिन्होंने मौजूदा सतह सुविधाओं को आकार देने में योगदान दिया है। दूसरे शब्दों में, यह पृथ्वी की सतह को आकार देने में भौतिक प्रक्रियाओं के हस्ताक्षर को समझने का अध्ययन है। डब्ल्यू. एम. डेविस ने भूआकृति विज्ञान और भौतिक भूगोल को एक माना, जो उनके अनुसार पृथ्वी और मानव के संबंधों को आकार देने में शामिल पृथ्वी की विशेषताओं का अध्ययन करता है। दूसरे शब्दों में, यह मनुष्य के भौतिक पर्यावरण का अध्ययन है। काफी हद तक इन विशिष्ट अवस्थाओं के कारण भौगोलिक अध्ययनों में भू–आकृतिक प्रदेश सबसे आम हैं। भूआकृति विज्ञान में, प्राकृतिक पर्यावरण, स्थलाकृतियों की संरचना और प्रक्रियाओं, चट्टानों के प्रकार और जैविक और अजैविक प्राकृतिक संसाधनों, खनिज, मिट्टी, नदियों, जल–विभाजक, झीलों, हिमनदीयों, महासागरों, वनस्पतियों और जीवों, जलवायु विशेष रूप से वर्षा, तापमान और मौसम से संबंधित घटनाएं और जिस तरह से इनका प्रभाव मानव गतिविधियों जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार और परिवहन और मानव बस्तियों आदि की विशिष्ट विशेषताओं को देने पर पड़ा है, इत्यादि विषय शामिल हैं।

यह भूआकृति विज्ञान में अंतर्निहित व्यापक और समावेशी दृष्टिकोण के आधार पर है कि इस अध्याय में अन्य अवधारणाओं की तुलना में भूआकृतिक प्रदेश को प्राथमिकता दी गई है।

बोध प्रश्न 1

भूआकृति विज्ञान क्या है? उपयुक्त उदाहरणों के साथ विस्तारपूर्वक प्रस्तुत करें।

16.3 आर. एल. सिंह द्वारा भूआकृतिक प्रादेशीकरण

भारत के भूगोल और विशेष रूप से प्रादेशिक भूगोल को प्रस्तुत करने का पहला व्यवस्थित प्रयास थॉमस हंगरफोर्ड होल्डिच ने अपनी पुस्तकः इंडिया 1904 में किया था। इस पुस्तक को मैकिंडर के अनुरोध पर अधिकृत किया गया था। यह व्यवस्थित और प्रादेशिक उपगमनों का एक संयोजन था। प्रारंभिक भारत, भारत के लोग, राजनीतिक भूगोल, कृषि और राजस्व, रेलवे, खनिज और जलवायु पर अध्यायों ने विषयों का

व्यवस्थित विवरण प्रस्तुत किया, जबकि सीमाओं के भूगोल पर अध्यायः बलूचिस्तान, अफगानिस्तान, कश्मीर और हिमालय, भारतीय प्रायद्वीप का भूगोल, असम, बर्मा और सीलोन ने भारत का प्रादेशिक लेखा–जोखा प्रस्तुत किया। होल्डिच द्वारा किए गए प्रयासों को एल.डी. स्टैम्प ने आगे बढाया जो बदले में रूसी जलवायु विज्ञानी व्लादिमीर कोप्पेन से बहुत प्रभावित थे, विशेष रूप से उनके विश्व के जलवायु प्रदेश से और भारत के प्रादेशिक प्रभाग, जो जॉन मैकफर्लेन द्वारा आर्थिक भूगोल पर अपने प्रसिद्ध खंड में तैयार किए गए थे। मैकफर्लेन, भूविज्ञान, जलवायु, भूआकृति विज्ञान, वनस्पति, जल अपवाह तंत्र और मिट्टी के आधार पर भारत के प्राकृतिक प्रदेशों की पहचान करने वाले पहले व्यक्ति थे। उन्होंने निम्नलिखित प्राकृतिक प्रदेशों की पहचान कीः हिमालय प्रदेश, उत्तर–पश्चिम सीमा क्षेत्र, गंगा मैदान, सिंधु मैदान, पश्चिमी तट प्रदेश, काली मिट्टी प्रदेश और उत्तर–पूर्वी दक्कन। इन विकासों के बाद, स्टैम्प ने 1922–23 में भारत के प्रादेशीकरण की एक योजना विकसित की। इसी समय के दौरान ए. एल. बेकर द्वारा एक और प्रयास किया गया था। हालाँकि, उनकी योजनाएँ एक–दूसरे से स्वतंत्र थीं, फिर भी वे उस समय और उनके द्वारा अपनाई गई कार्यप्रणाली में समान दिखती थीं।

बेकर एवं स्टैम्प में प्रदेशों की सीमाओं के बारे में व्यापक सहमति थी क्योंकि दोनों ने प्रादेशीकरण के लिए समान कार्यप्रणाली यानी भूआकृतिक और जलवायु मापदंडों को अपनाया था, जिसे उन्होंने तृतीय प्राकृतिक कारण का नाम दिया था। उनके द्वारा पहचाने गए तीन वृहत् प्रदेश थेः

पहाड़ी क्षेत्र के प्राकृतिक प्रदेशः यह जलवायु की विशेषताओं और क्षेत्र की ऊँचाई पर आधारित था। इसके चार उप–प्रदेश थेः पूर्वी पहाड़ी प्रदेश, 1500 मीटर (मी.) से ऊपर हिमालयी प्रदेश, 1500 मीटर से नीचे हिमालयी प्रदेश और तिब्बती पठार के भारतीय भाग।

उत्तरी मैदान के प्राकृतिक प्रदेशः यह मिट्टी और जलवायु मानकों पर आधारित था। उत्तर प्रदेश और पंजाब के पुराने जलोढ़ को डेल्टाई बंगाल के नए जलोढ़ से अलग माना जाता था। मध्य गंगा के मैदान को ऊपरी गंगा के मैदान से 100 सेंटीमीटर (सेमी) समवर्षा रेखा से अलग किया गया था।

भारतीय पठार के प्राकृतिक प्रदेशः स्टैम्प ने प्रायद्वीपीय भारत या दक्कन के बजाय सतपुड़ा श्रेणी के दक्षिण के भाग को प्रदेश कहना पसंद किया। हालाँकि, उन्होंने इसे तटीय प्रदेश, पठार और सतपुड़ा पर्वत के प्रदेशों में विभाजित किया।

पिठावाला भारत के प्रादेशिक भूगोल में रुचि रखने वाले एक और भूगोलवेत्ता थे और उन्होंने बेकर और स्टैम्प द्वारा अपनाए गए उपगमन की आलोचना की। उन्होंने भारत में प्रदेशों के पदानुक्रम की योजना में मुख्य प्रमुख कारक के रूप में भूआकृतिक एकरूपता की प्रबलता का प्रस्ताव रखा। हालांकि, उन्होंने स्टैम्प और बेकर द्वारा प्रस्तावित भारत के तृतीय बृहत् विभाजकों को मंजूरी दी और सुझाव दिया कि तटीय मैदान केवल डेक्कन ट्रैप और दक्षिणी पठारी प्रांतों के किनारे हैं। इन विचारों की साथी भूगोलवेत्ताओं विशेष रूप से काजी एस अहमद द्वारा आलोचना की गई थी। आलोचना मुख्य रूप से भारत जैसे विविधता पूर्ण और बड़े देश को प्रादेशिक बनाने के लिए प्रमुख सिद्धांत की भ्रांति और व्यवहार्यता के बारे में थी, चाहे वह सिद्धांत कितना ही कठोर और तार्किक रूप से सही क्यों न हो। अहमद ने अंतर्निहित भूगर्भिक संरचना और ऊपर प्रकट भू–आकृति के बीच स्पष्ट रूप से अंतर किया। उनका मत था कि भूगर्भीय रूप से तीन प्रमुख प्रभाग हैं लेकिन भूगोलवेत्ताओं के लिए चार भूआकृतिक प्रभाग हैं। निचले स्तर के प्रदेशों की

पहचान में जटिलताएँ बढ़ जाती हैं। अहमद ने अपनी बारी में भारतीय पठार से तटीय मैदानों को अलग करके भारत के चार वृहत प्रदेशों का सुझाव देकर प्रादेशीकरण की अपनी योजना का प्रस्ताव रखा। प्रदेशों के पदानुक्रम की पहचान करने में कई तार्किक विसंगतियों के साथ–साथ तटीय मैदानों को अलग करने के लिए उचित तर्क की कमी के लिए उन्हें स्पेट की आलोचना का सामना करना पड़ा। ग्रेटर हिमालय और उप–हिमालयी पर्वतों को हिमालय के अविभाजित खंड के रूप में मिलाने में प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ा। अहमद द्वारा सुझाई गई प्रादेशीकरण की मजबूत योजना से सहमत होते हुए भी स्पेट ने स्थानीय ज्ञान को संभालने में असमर्थता के बारे में खेद व्यक्त किया जो कई मौकों पर उनके नियंत्रण से बाहर हो गया है और जैसे ही कोई व्यक्ति प्रदेशों के पदानुक्रम में नीचे जाता है भ्रम का स्तर बढ़ जाता है। हालाँकि, अहमद के साथ समस्या उनके भौगोलिक नियतिवाद के कारण अधिक थी। जिस तरह से अहमद (1954) ने "वर्साय की संधि" के प्रतिभागियों के बीच भौगोलिक समझ की कमी को वर्तमान उथल–पुथल के मुख्य कारण के रूप में उजागर किया, यह उनकी स्थिति के बारे में बहुत कुछ बोलता है। वह विशुद्ध रूप से भौगोलिक आधार पर भारत और पाकिस्तान को दो राज्यों के रूप में तराश कर गलतियों को सुधारना चाहता था और "विशाल जटिलताओं से अलग राजनीतिक, नस्लीय, सांस्कृतिक और आर्थिक रूप से समरूप समूह", बनाना चाहता था। नतीजतन, उन्होंने भारत के लिए चार भौगोलिक क्षेत्रों की पहचान की: पश्चिमी सिंधु द्रोणी से युक्त, उत्तरी ऊपरी गंगा द्रोणी से युक्त, पूर्वी निचले गंगा द्रोणी या डेल्टा से युक्त और दक्कन पठार और पार्श्व तराई से युक्त क्षेत्र शामिल हैं। यह स्पष्ट है कि इन क्षेत्रों के बारे में उनका जोर "न केवल भौतिक है, बल्कि थोड़ा बहुत धार्मिक, मानवजातिय, सांस्कृतिक और आर्थिक एकता भी है" जो भारत के सांप्रदायिक विभाजन को सही ठहराने में एक लंबा रास्ता तय करता है, जो पश्चिमी, पश्चिमी पाकिस्तान और पूर्वी, पूर्वी पाकिस्तान अब बांग्लादेश, के साथ मेल खाता है। इसके अलावा, उनकी प्रादेशीकरण की योजना किसी अन्य से पहले सांप्रदायिक (धार्मिक) मुद्दे को संबोधित कर रही थी। उनके अनुसार "सांप्रदायिक, सामाजिक और आर्थिक न्याय के बिना राजनीतिक अधिकार निरर्थक हैं" और उन्होंने भारत के धार्मिक विभाजन के माध्यम से इसे हल करने का प्रस्ताव रखा। अपनी बारी में स्पेट ने प्रस्तावित किया कि यदि तृतीय विवर्तनिक विभाजन समस्याग्रस्त है तो चार विभाजन किसी भी तरह से कम नहीं है, इसलिए उन्होंने पांच विभाजनों का सुझाव दिया क्योंकि पूर्वी तटवर्ती क्षेत्र, उच्चावच और संरचना सहित लगभग हर मामले में अलग हैं। इसके अलावा, स्पेट (स्पेट एवं लियरमथ, 1984) भारत के प्रादेशीकरण से संबंधित मामलों में पिठावाला के दावों को लेकर अत्यधिक आलोचनात्मक थे क्योंकि उनके लिए "वर्गीकरण की तुलना में समझ अधिक महत्वपूर्ण थी" और उन्होंने जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, मानव बस्तियों और यहाँ तक कि संस्कृतियों आदि को समाहित करने वाले भू–आकृति के अत्यधिक संग्रह की आलोचना की और इसे अति निश्चयात्मक कहा। स्पेट के अनुसार, ऐसा लगता है कि पिठावाला ने भू–आकृति और संस्कृति को स्थानिक सह–संस्करणों के रूप में माना है, क्योंकि उनका मानना था कि मानव गतिविधियों को भौतिक वातावरण द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

स्पेट (स्पेट एंड लियरमथ, 1984) ने संरचना को मुख्य कारक के रूप में लेते हुए भारत को तृतीय विवर्तनिक विभाजनों में विभाजित किया। उनके अपने शब्दों में, "स्थूल स्तर पर किसी भी दर पर संरचना शायद सबसे स्पष्ट मार्गदर्शक है" लेकिन "जलवायु और स्थिति को कभी भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है"। वह उप–प्रदेशीय स्तरों पर संकेतकों को चुनने में अधिक उदार थे और उन्होंने प्रादेशीकरण की एक लचीली और गतिशील योजना का प्रस्ताव दिया जिसमें दावा किया गया कि "कठोर परिभाषा हालांकि

असंभव है" क्योंकि भारत जैसे बड़े देश में सार्वभौमिक अनुप्रयोग वाले कारक का होना असंभव है। उन्होंने विभिन्न विशेषताओं वाले क्षेत्रों को एक–दूसरे के साथ जोड़ने के लिए किसी सख्त सिद्धांत का पालन नहीं किया, जब तक कि ये समझ के लिए हानिकारक न हों और नई तकनीक और प्रादेशीकरण की पद्धति में प्रगति के साथ उप–विभाजनों को आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त गुंजाइश प्रदान की। इसी तरह, वे प्रादेशीकरण की प्रक्रिया में "पैमाने का सार है" के उपयोग के प्रति बहुत संवेदनशील थे, उदाहरण के लिए प्रायद्वीप के प्रादेशीकरण में एक कटक की एक प्रमुख विशेषता हो सकती है लेकिन यह हिमालय में एक सामान्य विशेषता हो सकती है। इसी तरह, "शिवालिक और अन्य उप–हिमालयी क्षेत्र, सैकड़ों मील लंबे और केवल कुछ मील चौड़े रिबन हैं। उनके साथ समग्र रूप में व्यवहार करने के लिए परस्पर संदर्भ की असहनीय मात्रा शामिल होगी"। इस प्रकार, उन्होंने प्रस्तावित किया कि भूगोलवेत्ताओं को विविधताओं के पैमाने से निपटने के दौरान भू–आकृतिक बनावट और मानव गतिविधियों की तीव्रता में भिन्नता दोनों के प्रति संवेदनशील होना चाहिए। इन धारणाओं के शुद्ध परिणाम के परिणामस्वरूप तीन बृहत क्षेत्रों (द्वीपों को छोड़कर), 34 प्रथम क्रम क्षेत्र, 74 द्वितीय क्रम और इनके 225 उप–विभागों की पहचान की गई।

स्वतंत्रता के समय के संघर्षों के दौरान राजनीतिक कारकों ने भारत के भूगोल को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नतीजतन, बड़ी संख्या में भारतीय विद्वानों (पनिक्कर के एम 1955) ने "भारतः भारतीय इतिहास में भौगोलिक कारक" और (एस पी चटर्जी 1947) "भारतः एक परिचयात्मक प्रादेशिक भूगोल" के महत्व पर प्रकाश डाला, ये उत्तर औपनिवेशिक भूगोल पर कुछ अग्रणी कार्य थे। एस पी चटर्जी 1947 में घटनाओं के परिवर्तन से प्रेरित थे। उनके लिए "भारत लगभग दो शताब्दियों तक ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा था। 15 अगस्त 1947 को एक बड़ा राजनीतिक परिवर्तन आया जब भारत का विभाजन हुआ। ये इस तथ्य के संकेत हैं कि क्रमबद्ध भूगोल ऐसे सवालों के जवाब देने के लिए अत्यधिक असंतोषजनक है क्योंकि "विशेष प्रकार के पर्यावरणीय कारक जो एक क्षेत्र को दूसरे से अलग करते हैं, जरूरी नहीं कि वे अलग–अलग राज्यों की राजनीतिक सीमाओं के भीतर ही सीमित हों"। इसके विपरीत, भौतिक वातावरण उसी प्रभाव को जारी रखेगा। नतीजतन, शुरू में उन्होंने मुख्य रूप से भू–आकृतिक विशेषताओं के आधार पर भारत को नौ भौतिक–भौगोलिक क्षेत्रों में विभाजित कियाः 1. हिमालय पर्वत श्रृंखला, 2. गंगा का मैदान, 3. भारतीय मरूस्थल, 4. प्रायद्वीपीय भारत; उत्तरी खंड, 5. प्रायद्वीपीय भारतः दक्षिणी खंड, 6. दक्कन का पठार, 7. प्रायद्वीपीय भारतः लावा क्षेत्र, 8. उत्तर पूर्वी क्षेत्रः ब्रह्मपुत्र घाटी असम, 9. पहाड़ी राज्यः मेघालय, मणिपुर, नागालैंड, त्रिपुरा और मिजोरम। उनके अनुसार ये विभाजन भारत के मामले में कम उपयुक्त हैं क्योंकि भूगोल मनुष्य की प्रभावी उपस्थिति को स्वीकार किए बिना विशेष रूप से उनके "जीवन जीने के तरीके", जो बदले में भूआकृति, जलवायु और जनसंख्या के बीच अन्योन्याश्रयता का प्रतिबिंब है, इसे कम कठोर करना चाहता है। इसलिए, उन्होंने निम्नलिखित वैकल्पिक भौगोलिक क्षेत्रों का सुझाव दियाः 1. शुष्क भूमिः उष्ण मरूस्थल और अर्ध–मरूस्थल, 2. उष्णकटिबंधीय घास के मैदान, 3. समशीतोष्ण घास के मैदान, 4. उष्णकटिबंधीय वर्षावन, 5. उत्तरध्रुवीय और उप–उत्तरध्रवीय जलवायु का उत्तरी क्षेत्र, 6. विकसित उत्तरी शंकुधारी वन, 7. मानसून क्षेत्र, 8. उपोष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण कृषि योग्य भूमि और 9. विनिर्माण और खनन। वे भौतिक पर्यावरणीय विशेषताओं की उपेक्षा के लिए भारत के राज्य पुनर्गठन (प्रशासनिक क्षेत्रों) के बहुत आलोचक थे और उन्होंने प्रादेशीकरण के उद्देश्य के लिए भौतिक एकता के निम्नलिखित मूलभूत भौतिक कारकों का सुझाव दियाः जलवायु क्षेत्र, प्राकृतिक वनस्पति क्षेत्र, मृदा क्षेत्र, संरचनात्मक क्षेत्र, भू–आकृतिक क्षेत्र। इन कारकों के आधार पर, उन्होंने भारत को

निम्नलिखित क्षेत्रों में विभाजित कियाः हिमालय पर्वत क्षेत्र, गंगा के मैदान, भारतीय मरूस्थाल, प्रायद्वीपीय भारत का उत्तरी खंड, प्रायद्वीपीय भारत का दक्षिणी खंड या दक्कन पठार, तटीय मैदान और भारतीय द्वीप समूह।

स्वतंत्र भारत को वस्तुनिष्ठ तथ्यों और वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर भारत के लोगों को जोड़ने के लिए नए आख्यानों की आवश्यकता थी। भारत एक लोकतांत्रिक और कल्याणकारी राज्य होने का दावा करता है। इसलिए, इसने प्राकृतिक संसाधनों और भौतिक पहलुओं की सूची पर जोर दिए बिना, सामाजिक–सांस्कृतिक और आर्थिक पहलुओं पर एक मजबूत आँकड़ा आधार बनाने पर जोर दिया। गृह मंत्रालय के तहत भारत की जनगणना के साथ–साथ सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के तहत 1951 में स्थापित केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (सी.एस.ओ.) द्वारा दिए गए योगदान और इंपीरियल सर्वेक्षण का भारतीय सर्वेक्षण में पुनः नामकरण करना आदि ने बहुत आवश्यक उद्देश्य मजबूत आँकड़ा आधार बनाने में प्रमुख भूमिका निभाई। इस प्रकार बनाए गए आँकड़ों ने स्वतंत्र भारत में भूगोलवेत्ताओं को भारत के बारे में वस्तुनिष्ठ समझ विकसित करने में मदद की। आर. एल. सिंह के नेतृत्व में बनारस स्कूल ऑफ भूगोलवेत्ता द्वारा दिया गया योगदान और जिस तरह से उनकी टीम ने भारत के भूगोल को समझने में भू–आकृति विज्ञान के महत्व पर जोर दिया, वह महत्वपूर्ण है। आर. एल. सिंह (1971) के अनुसार, "भूविज्ञान, संरचना, उच्चावच और भू–आकृति मिलकर स्थितिय कारक के साथ भारत का चार इकाइयों में एक पूरी तरह से स्पष्ट विभाजन प्रदान करते हैं"। उन्होंने आगे इस बात पर जोर दिया कि हिमालय पर्वत क्षेत्र, महान मैदान, प्रायद्वीपीय उच्च भूमि और भारतीय तट और द्वीप "देश के सरल लेकिन प्रभावी बृहत विभाग हैं और सामान्य रूप से भूमि के विभिन्न प्रतिरूपों के साथ अच्छी तरह से चलते हैं। वे एक–दूसरे से परस्पर भिन्न हैं, प्रत्येक में अलग–अलग कारकों के साथ 'विशिष्ट रहने की जगह' है। इनमें से प्रत्येक संरचना, स्थलाकृतियों, जलवायु, मिट्टी, प्राकृतिक वनस्पति, जनसंख्या और बस्तियों के वितरण प्रतिरूपों, सांस्कृतिक पहलुओं, आर्थिक विकास और सबसे बढ़कर संभावनाओं और चुनौतियों में एक दूसरे के विपरीत है। प्रादेशीकरण की अन्य योजनाओं के विपरीत, उन्होंने एक प्रदेश के भीतर क्रोड और अन्य क्षेत्रों की अवधारणा पर बल दिया। एक क्रोड की विशेषता उस प्रदेश की विशिष्ट विशेषताओं जिसने 'उत्कृष्ट उत्कृष्टता' विकसित किया, के विकास से होती है जबकि अन्य क्षेत्रों में विशेषताएँ वास्तविकता से अधिक स्पष्ट होती हैं। उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर आर एल सिंह ने 4 बृहत्, 28 मध्यम, 67 प्रथम क्रम और 192 द्वितीय क्रम के प्रदेशों की पहचान की।

बृहत् स्तर क्षेत्र	मध्यम स्तर क्षेत्र	प्रथम क्रम क्षेत्र	द्वितीय क्रम क्षेत्र
4	28	67	192

आर. एल. सिंह द्वारा सुझाई गई प्रादेशीकरण की योजना विभिन्न सरकारी संगठनों के माध्यम से उपलब्ध कराए गए तथ्यों के आधार पर अधिक विस्तृत थी, जिनमें से कुछेक का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। हालाँकि, यह कार्यप्रणाली और वैचारिक समझ के मामले में अपेक्षाकृत कमजोर योजना थी। नतीजतन, इसने विशेष रूप से स्पेट द्वारा सुझाई गई योजनाओं के साथ कुछ समस्याओं को अपनाया। कुछ मुख्य अंतर थेः

आर. एल. सिंह ने प्रादेशीकरण के लिए एक सख्त कार्यप्रणाली का पालन किया, यद्यपि भूगोलविदों के एक समूह के साथ चर्चा की और विभिन्न भूगोलवेत्ताओं के बीच विशिष्ट प्रदेशों को वितरित किया। कुछ ऐसे थे जिन्हें प्रदेशों के बारे में व्यापक ज्ञान था,

इसलिए उन अध्यायों ने एक उत्कृष्ट विश्लेषण प्रस्तुत किया था, लेकिन कुछ ऐसे प्रदेश बचे हैं जो युवा भूगोलवेत्ताओं को सौंपे गए हैं। सी.डी. देशपांडे (महाराष्ट्र), एस.एल. कायस्थ (हिमालयी ब्यास द्रोणी) आदि जैसे विद्वानों द्वारा प्रदर्शित दृढ़ता के संदर्भ में ये अध्याय अभावयुक्त या कम हैं। इसी प्रकार, महान मैदानों के भीतर राजस्थान के मैदान का समावेश, सतलुज और यमुना के बीच इंडो–गंगा विभाजन (दक्षिणी पंजाब मैदान) की सीमा, ऊपरी और मध्य गंगा मैदान के बीच की सीमा के रूप में 100 मीटर समोच्च प्रायद्वीपीय उच्च भूमि से तटीय मैदानों को अलग करना और बंगाल की खाड़ी और अरब सागर के द्वीपों के साथ उनका समावेश कुछ मुख्य कार्यप्रणाली समस्याएं हैं जिन्होंने इस योजना को कमजोर बना दिया है।

स्पेट ने पूरे उत्तर पूर्वी प्रदेशों को एक मध्यम क्षेत्र के तहत शामिल किया हैः पूर्वी सीमावर्ती क्षेत्रः असम और एन ई एफ ए लेकिन आर एल सिंह ने इन्हें अलग–अलग बृहत् प्रदेशों के तहत शामिल चार मध्यम प्रदेशों में विभाजित किया है। असम घाटी महान मैदानों, पूर्वी हिमालय और पूर्वांचल प्रदेश, हिमालय पर्वतीय प्रदेशों के कुछ हिस्सों और मेघालय–मिकिर प्रदेश और प्रायद्वीपीय उच्च भूमि के कुछ हिस्सों का हिस्सा है। हालाँकि, अरुणाचल प्रदेश को पूर्वांचल से अलग करना और कछार प्रदेश को इसके साथ शामिल करना ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियों के बीच बराक नदी को शामिल करके एक तथ्यात्मक गलती करने के अलावा गंभीर कार्यप्रणाली वाली समस्याएं पैदा करता है।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, भारत सरकार की विभिन्न संस्थानों के माध्यम से आँकड़ों के प्रकाशन ने कई भूगोलवेत्ताओं को योजना से संबंधित विभिन्न विषयों के प्रादेशिक प्रतिरूप को मानचित्रित करने के लिए प्रेरित किया। हालाँकि, इसकी शुरुआत भारत की जल संपदाः इसका आँकलन, उपयोग और अनुमान, के. एल. राव (1975) के द्वारा प्रकाशन के साथ शुरू हुई थी जिसे अब जल संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार (2014) और राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केंद्र द्वारा 'जलविभाजक एटलस ऑफ इंडिया' में उन्नयन अथवा अपग्रेड किया गया है, इत्यादि ने भी भू–आकृतिक प्रदेशों की नई योजनाओं को विकसित करने में योगदान दिया है।

इस अवसर पर, सी.डी. देशपांडे (1992) ने अपनी पुस्तकः "भारतः एक प्रादेशिक विवेचना" में भारत के प्रादेशिक भूगोल में एक नई अंतर्दृष्टि डालने का प्रयास किया। वह भी इस प्रदेश में क्रोड के महत्व के बहुत बड़े प्रशंसक थे, लेकिन उनकी क्रोड की अवधारणा सुब्बाराव, स्पेट और आर. एल. सिंह से अलग थी। स्पेट के अनुसार (स्पेट और लियरमथ, 1984) मुख्य क्षेत्र (बारहमासी परमाणु प्रदेश) "अधिकांश भाग जलोढ़ के साथ प्रमुख कृषि क्षेत्र" थे। सुब्बाराव (1958) ने मुख्य क्षेत्रों (आकर्षण के क्षेत्रों) के बारे में पूरी तरह से अलग दृष्टिकोण रखा और उन्होंने प्रादेशीकरण की अपनी योजना के लिए "संस्कृतियों के चक्र" की उपस्थिति का समर्थन किया। आर. एल. सिंह के अनुसार विकास क्षमता का उच्च संकेंद्रण क्रोड का सार था और सी.डी. देशपांडे (1992) ने प्रादेशिक समुदायों के गैर–दृश्यमान पारंपरिक, सामाजिक–सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहलुओं के मूल्यांकन को उच्च महत्व दिया। उनके अनुसार "प्रादेशिक समुदायों के सांस्कृतिक पहलू जैसे भाषा, बोलियों की पारंपरिक प्रकृति, द्विभाषी पट्टी और शहरी बस्तियों के बहुभाषी द्वीपों में स्थानिक भिन्नता के बावजूद उपयोगी आधार है। पारंपरिक प्रदेशों के सहयोग से उपयोग की जाने वाली भाषा क्रोड और उनकी व्यापक रूप से ज्ञात सीमाएं भौगोलिक क्षेत्र का एक कार्यशील चित्रण प्रदान करती हैं। यद्यपि, बृहत स्तर पर, उन्होंने भी भारत के त्रिपक्षीय विभाजन का अनुसरण किया, फिर भी वे राज्य और जिला स्तरों पर सरकारी संस्थानों द्वारा उपलब्ध कराए गए आँकड़ों के प्रलोभन का

विरोध करने में विफल रहे और उनका मत था कि "संघ के मौजूदा राज्य अगले क्रम के प्रदेशों को आधार प्रदान करते हैं और नीचे के स्तर को मानव कब्जे, स्थानिक प्रसार और संख्या में वृद्धि, जातीय और भाषाई समानताएं, और राजनीतिक धार्मिक और सांस्कृतिक अंर्तसंबंध से संबंधित सांस्कृतिक मानकों के आधार पर चित्रित किया गया है। अंत में, उन्होंने 12 भौगोलिक प्रदेशों और 53 प्रभागों की पहचान की है।

मृदा सर्वेक्षण का राष्ट्रीय ब्यूरो और भूमि उपयोग योजना (आईसीएआर, 1999) द्वारा क्षेत्र में एक और महत्वपूर्ण कार्य या बहु लक्षण विषयगत प्रादेशीकरण का प्रयास किया गया है। उन्होंने भू–आकृति (19 विभाजन), मिट्टी के दृश्य (16 मिट्टी के दृश्य), जैव–जलवायु प्रदेश (5 क्षेत्र), मिट्टी की तापमान व्यवस्था (बढ़ते मौसम की लंबाई के 5 वर्ग) को शामिल करके एक बहुत व्यापक कार्यप्रणाली का उपयोग किया है। अंत में, उन्होंने छह प्रमुख कृषि–जलवायु प्रदेशों की पहचान कीः शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र, अर्ध–शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र, उप–आर्द्र पारिस्थितिकी तंत्र, आर्द्र–पूर्व आर्द्र पारिस्थितिकी तंत्र, तटीय पारिस्थितिकी तंत्र और द्वीप पारिस्थितिकी तंत्र। इन्हें आगे 20 प्रथम क्रम प्रदेशों और 130 उप–प्रदेशों में उप–विभाजित किया गया है।

इसी तरह, मृदा एवं भूमि उपयोग सर्वेक्षण (भारत के) ने भारत को 6 जल संसाधन क्षेत्रों, 35 द्रोणीयों, 112 जलग्रहण क्षेत्रों, 550 उप–जलग्रहण क्षेत्रों, 3257 जलविभाजकों और बड़ी संख्या में उप–जलविभाजकों और लघु जलविभाजकों में विभाजित किया है।

भूगोलवेत्ता अब तक प्राकृतिक और मानवीय दोनों घटनाओं के मानचित्रण और दोनों के बीच एक बेहतर भविष्य के तथाकथित निर्माण, या संपूर्णता में स्थायी जीवन के लिए अंतःक्रिया में व्यस्त रहे हैं। 1972 के बाद "विकास की सीमा" (मीडोज 1972) और "आवर कॉमन फ्यूचर" के प्रकाशन के साथ "एजेंडा –21" (यूएन, 1992) ने समाज और पर्यावरण पर कथा में एक बड़ा बदलाव लाया। भूगोलवेत्ता शायद ही इन रिपोर्टों में उजागर की गई चुनौतियों को नज़रअंदाज़ कर सकें। भारत में, शहरी मामलों के मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा शुरुआत की गई थी और इसने "भारत का पहला सुभेद्यता मानचित्रावली" (1997) चालू किया। प्रारंभ में, पूरे देश के लिए भूकंपीय खतरों, चक्रवात और पवन खतरों, बाढ़ खतरों और आवास सुभेद्यता मानचित्रावली को ध्यान में रखते हुए मानचित्रावली तैयार किया गया था। इसके बाद, उन्होंने आपदा न्यूनीकरण और प्रबंधन के लिए केंद्र (सेंटर फॉर डिजास्टर मिटिगेशन एंड मैनेजमेंट) के सहयोग से "भारत की भूस्खलन संकट क्षेत्रीय मानचित्रवाली (लैंडस्लाइड हैज़र्ड ज़ोनेशन एटलस ऑफ़ इंडिया)" (2003) भी प्रकाशित किया। चूंकि संबंधित संगठन द्वारा खतरों के शमन और प्रबंधन से संबंधित विषय की पहचान की गई है, इसलिए उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर खतरों की आवृत्ति और तीव्रता के आधार पर देश का प्रादेशीकरण किया है; और प्रदेशों के दूसरे और तीसरे क्रम के स्तर की पहचान राज्य सरकारों और जिला प्रशासन द्वारा की गई है। पहले तीन खतरों यानी भूकंप, चक्रवात और हवा और बाढ़ के मामले में, क्षति जोखिम स्तरों को पांच श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया हैः बहुत अधिक क्षति जोखिम, उच्च क्षति जोखिम, मध्यम क्षति जोखिम, कम क्षति जोखिम और बहुत कम क्षति जोखिम। लेकिन भूस्खलन क्षेत्रों की पहचान इस प्रकार की गई हैः गंभीर से बहुत अधिक, उच्च, मध्यम से निम्न और असंभावित।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि हालांकि, विभिन्न विद्वानों ने भारत के भूगोल के बारे में विशिष्ट विशेषताओं पर जोर दिया है और इसके प्रादेशीकरण की विभिन्न योजनाएं प्रस्तुत की हैं, फिर भी सभी ने भारत की भू–आकृति द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका पर व्यापक रूप से सहमति व्यक्त की है। अंतर का प्रमुख आधार मोटे तौर पर

इस इकाई के परिचयात्मक खंड में उल्लिखित अवधारणाओं के बीच भ्रम की वजह से था, जैसे कि उच्चावच, भू भाग, स्थलाकृति और भू–आकृति।

इस प्रकार, मामूली भिन्नताओं के साथ, भारत के निम्नलिखित तीन भौगोलिक क्षेत्रों की पहचान करने के लिए भूगोलविदों के बीच व्यापक सहमति है।

अतिरिक्त प्रायद्वीपीय पर्वतः

इस प्रदेश का सापेक्ष स्थान तिब्बती पठार की विशिष्ट जीर्ण स्थलाकृति के दक्षिण और पश्चिम में और सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र और उनके प्रदेशों के लगभग सुविधाहीन मैदानों के उत्तर में है। इस व्यापक वृहत् प्रदेश के उत्तर में हिमालय और पूर्वी तिब्बत की सीमा से लगे पूर्वांचल पर्वत और पहाड़ियाँ और म्यांमार के साथ अंतर्राष्ट्रीय सीमा शामिल हैं। इस प्रदेश में लगभग समानांतर पर्वत श्रृंखलाओं के सामान्य संरेखण को उत्तर–पश्चिम से दक्षिण पूर्व दिशा में, जम्मू, कश्मीर, लद्दाख, हिमाचल प्रदेश में और पूर्व से पश्चिम में उत्तराखंड, नेपाल और उत्तर प्रदेश के उत्तरी भाग में गिरिपद और बिहार की सीमा से लगे नेपाल, दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व दिशा में दार्जिलिंग–सिक्किम और अरुणाचल हिमालय और उत्तर से दक्षिण दिशा में भारत म्यांमार सीमा के सहारे बड़े भ्रंशों, गहरे महाखड्डों और घाटियों द्वारा चिह्नित किया गया है। इन पर्वत श्रृंखलाओं की दिशा में ऐंठन और मोड़ ज्यादातर भारतीय प्लेट द्वारा टिथिस सागर के आधार पर जमा तलछट पर डाले गए विभेदी दाब के कारण हैं और उत्तर में यूरेशियन प्लेट से प्राप्त प्रतिरोध, जो भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में दक्षिण के पठार के विस्तार, भ्रंश के कारण मालदा गैप का गठन, छोटा नागपुर पठार से मेघालय पठार की पृथकता और मेघालय पठार से करबी–एंग्लोंग पठार का टूटना और एक तरफ दो पठारों के बीच कोपिली भ्रंश का गठन और दूसरी तरफ उत्तर से दक्षिण दिशा में नागा, मणिपुर और लुसाई पहाड़ियों की दिशा में परिवर्तन से स्पष्ट होता है। इस प्रकार, तीन महत्वपूर्ण पर्वत श्रृंखलाएँ मिलकर हिमालय बनाती हैंः ग्रेटर हिमालय, मध्य हिमालय और शिवलिक हिल। ग्रेटर हिमालय में दो उप–विभाजन हैं जिनमें महान हिमालयी श्रृंखला और ट्रांस हिमालय शामिल हैं। महान और मध्य हिमालयीय श्रेणी उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में गिलगित बाल्टिस्तान से पूर्व में नागा, मणिपुर और मिज़ो पहाड़ी में फैली हुई हैं, हालांकि उत्तर में तिब्बत से आने वाली बड़ी नदियों के गहरे हिमखड्ड और ग्रेटर हिमालय के हिमनदीयों से उत्पन्न नदियों से विच्छेदित हो रही हैं। इस क्षेत्र में पाए गए कुछ महत्वपूर्ण हिमनद सियाचेन, ड्रैंग–ड्रग, रिमो (लद्दाख), बरा शिगरी, छोटा शिगरी (हिमाचल प्रदेश), भागीरथी खारक, बण्डरपंच, गंगोत्री, कफनी, चतुरंगी, मिलम, सतोपंथ (उत्तराखंड), ज़ेमू, राथोंग, लोनाक (सिक्किम), बिचोम, कांग्तो और माज़गोल हिमनद (अरुणाचल प्रदेश) हैं। अन्य हिमालयी श्रेणियों के विपरीत, शिवालिक अत्यधिक विच्छेदित और अपरदित पहाड़ियां हैं जो मध्य हिमालय के दक्षिण में और महान मैदानों के उत्तर में स्थित है।

पहाड़ों की भूवैज्ञानिक संरचना, जैसा कि संकेतों और सक्रिय भूवैज्ञानिक और भू–आकृति विज्ञान प्रक्रियाओं के माध्यम से समझा जाता है, यह दर्शाता है कि इस क्षेत्र की उत्पत्ति टेथिस समुद्र के ग्रेट भू–अभिनति में तलछटी जमा होने से भारतीय और यूरेशियन प्लेटों के संरचनात्मक विस्थापन के कारण हुई है। समुद्र दक्षिण में गोंडवानालैंड (भारतीय प्लेट) और उत्तर में अंगारा भूमि (यूरेशियन प्लेट) के बीच स्थित था। इसके परिणामस्वरूप अलग–अलग ऊँचाइयों की समानांतर मुड़ी हुई पर्वत श्रृंखलाओं का निर्माण हुआ। भारतीय प्लेट के उत्तर की ओर गति करने का अनुमानित समय 65–70 मिलियन वर्ष पूर्व आंका गया था। यह न तो एक बार की और न ही एक अंतिम घटना थी। इसके विपरीत, धक्का देने की विभिन्न तीव्रता के विभिन्न चरणों में, यह लंबे

भूगर्भीय समय तक जारी रहा। इस प्रकार परिणामस्वरूप विभिन्न भूगर्भीय समय पर लगभग समानांतर पर्वत श्रृंखलाओं का उत्थान हुआ और यह प्रक्रिया अभी भी सक्रिय है। उत्थान का पहला चरण अल्पनूतन काल के दौरान था जिसके परिणामस्वरूप ग्रेटर हिमालय पर्वतमाला वाले मध्य हिमालयी अक्ष का उदय हुआ। ये पर्वतमालाएँ पुरानी अवसादी और रवेदार या क्रिस्टलीय चट्टानों से बनी हैं। उत्थान का दूसरा चरण मध्यनूतन काल के दौरान हुआ, जिसमें बड़े पैमाने पर घाटियों में जमी तलछट का मुड़ना इसकी विशेषता थी। तीसरे चरण को अतिनूतन काल के बाद शिवालिक के मुड़ने के द्वारा चिह्नित् किया गया था। इस समय के अलावा पहले, दूसरे और तीसरे चरण के बीच मुख्य अंतर स्थान या उत्पत्ति का था। पहले और दूसरे चरण में उत्थान टेथिस सागर में तलछटी निक्षेपों से हुआ था, जबकि तीसरे चरण में उत्पन्न होने वाले शिवालिक पहाड़ियों की उत्पत्ति नदी से हुई थी जो इनके दक्षिण में हिमालय पर्वतमाला के समानांतर बह रही थी। भूवैज्ञानिक इसे इंडो–भरम नदी या शिवालिक नदी कहते हैं। इस नदी का तल अत्यंत अतिनूतन काल में ऊपर उठा और इसने पहाड़ियों को जन्म दिया। उत्तर–पश्चिम में गिलगित–बाल्टिस्तान से लेकर उत्तर–पूर्व में सांगपो–ब्रह्मपुत्र घाटी तक इन पर्वत श्रृंखलाओं की अनुमानित लंबाई लगभग 2400 किलोमीटर (किमी) है। इसके अलावा, लगभग 500 किलोमीटर लंबी नागा–मणिपुर और मिजो पहाड़ियाँ हैं। उत्थान के समय के आधार पर, हिमालय पर्वतमाला को निम्नलिखित चार क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है:

1. **ट्रांस हिमालय पर्वतमाला:** इन्हें तिब्बती हिमालय भी कहा जाता है। ये पुरापाषाण काल से लेकर अत्यंतनूतनयुग के पुराजीवी से आदिनूतन तक के समुद्री जीवाश्म वाली तलछटी चट्टानों से बने हैं। यहां शामिल महत्वपूर्ण पर्वतमालाएं लद्दाख, ज़ांस्कर और काराकोरम पर्वतमाला हैं। ग्रेट हिमालयन पर्वतमाला के वर्षा–छाया प्रतिपवन क्षेत्र में अपनी स्थिति के कारण, ये ठंडे और शुष्क हैं और हिमनदों और वायु भू–आकृतियों का एक अनूठा संयोजन प्रदर्शित करते हैं। इन पर्वतमालाओं में कुछ सबसे बड़े हिमनद काराकोरम श्रेणी में और रेत या बालु के टीले नुब्रा घाटी में स्थित हैं।

2. **महान हिमालय पर्वतमाला:** इस पर्वतमाला को अक्षीय पर्वतमाला के रूप में भी जाना जाता है और यह मुख्य रूप से रवेदार और रूपांतरित चट्टानों जैसे ग्रेनाइट, शिस्ट और नीस से बना है जो पुराण श्रृंखला की पुरानी तलछटी चट्टानों के साथ मिश्रित है। इन पर्वतमालाओं की भू–आकृतिक विशेषताएँ हिमनदीय भू–आकृतियों, हिमनदों की झीलों, ऊंची चोटियों, गहरी घाटियों, खड़ी ढलानों के साथ–साथ 'यू' आकार और 'वी' आकार की घाटियों, नदी वेदिकाओं और हिमोढ़ द्वारा चिह्नित हैं। इन श्रेणियों की एक महत्वपूर्ण विशेषता शीतकालीन हिमरेखा और स्थायी हिम रेखा के बीच समशीतोष्ण घास के मैदानों की उपस्थिति है।

3. **लघु हिमालय पर्वतमाला:** इन्हें मध्य हिमालय के नाम से जाना जाता है। ये पुराने चट्टानों के विस्थापन और नई चट्टानों को धक्का देने की विशेषता वाले नापे क्षेत्रों के निर्माण में योगदान देने वाले प्रतिवलन और क्षेपण भ्रंशों के अधीन हैं। इसके उत्तर में अन्य दो क्षेत्रों के विपरीत, मध्य हिमालय में स्थलाकृतिओं को आकार देने में हिमनदों की कम भूमिका होती है, लेकिन सक्रिय नदी कटाव और जमाव अच्छी तरह से स्पष्ट 'वी' आकार की घाटियों, जलोढ़ पंखों और नदी वेदिकाओं के रूप में होते हैं।

4. **बाहरी या उप–हिमालयी क्षेत्रः** इन्हें शिवालिक पहाड़ियों के रूप में भी जाना जाता है जो उत्तर में हिमालय पर्वतमाला के क्षरण सामग्री से प्राप्त तलछटी निक्षेपों और कांग्लोमरेट से बनी होती हैं। ऐसा माना जाता है कि ये ऊपरी तृतीयक काल के दौरान बने थे और उत्तर से आने वाली नदियों और धाराओं के कारण इनका गंभीर क्षरण हुआ है। हिमालय की अन्य श्रेणियों के विपरीत, उत्तर बंगाल में तिस्ता–महानंदा भ्रंश के पार शिवालिक अनुपस्थित हैं। भूवैज्ञानिकों का विचार है कि भारतीय पठार के उत्तर–पूर्वी सीमा की ओर धक्का इतना तीव्र था कि शिवालिक पर्वतमाला को मध्य हिमालय के नीचे धकेल दिया गया, जिसने उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में दुआर संरचनाओं को पीछे छोड़ दिया जो उत्तराखंड/उत्तर प्रदेश में भाबर और तराई के समान है।

हिमालय पर्वतमाला विशेष रूप से महान और मध्य हिमालय के उच्चावच की विशेषता उच्च चोटियाँ, खड़ी ढलान और अत्यधिक ऊबड़–खाबड़ स्थलाकृति है जो हिमनद और नदी के कटाव और निक्षेपण की प्रक्रियाओं द्वारा बनाई गई है जो उत्तर में लद्दाख और तिब्बत में वायु और हिमनद स्थालाकृतियों और दक्षिण में खड्ड मैदान में नदी स्थालाकृतियों से अलग है। पर्वतमाला की ऊँचाई दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़ती है और महान हिमालय पर्वतमाला पर स्थित चोटियों के कई मामलों में 8000 मीटर से अधिक तक पहुँच जाती है। हालाँकि, ट्रांस हिमालय पर्वतमाला में कुछ चोटियाँ ऐसी भी हैं जिनकी ऊँचाई 8000 मीटर से अधिक है। यह मुख्य रूप से इन उच्च पर्वत श्रृंखलाओं के कारण है कि हिमालय मध्य एशिया और दक्षिण एशिया के बीच महान जलवायु विभाजक के रूप में भी कार्य करता है, उष्णकटिबंधीय मानसून जलवायु की प्रबल उपस्थिति इसकी विशेषता है। लेकिन इनके अलावा, हिमालय ने तिब्बत सहित मध्य एशिया के लोगों के साथ दक्षिण एशिया के समुदायों के बीच सांस्कृतिक संपर्क को भी प्रतिबंधित कर दिया है। सीमित संपर्क केवल महान और ट्रांस हिमालय पर्वतमाला में स्थित उच्च पर्वतीय दर्रों के माध्यम से ही संभव था। पश्चिम से पूर्व की ओर कुछ महत्वपूर्ण दर्रे हैंः अघिल, मिंटका, खारदुंग ला, काराकोरम दर्रा, चांग ला, जोजी ला, बारा लाचा ला, रोहतांग, रूपिन, बोरासु, नीती, माना, बाराहोती, कालिंदी, धूमधर कंडी, ट्रेल्स, लिपुलेख, टुनजुन, जेलेप ला, नाथू ला, पंगसाऊ, कुमजांग, सेला, दीफू, बुम ला और केपांग ला।

हिमालय सक्रिय भूवैज्ञानिक बलों और भू–आकृति विज्ञान प्रक्रियाओं का एक रंगमंच बना हुआ है, जैसा कि भूकंप की लगातार घटनाओं जो कभी–कभी रिक्टर पैमाने पर 8 जैसे उच्च रूप में दर्ज किया जाता है, कश्मीर में करेवा के रूप में झील में जमा अवसाद के नए झुके हुए आधारों की उपस्थिति, सक्रिय ढलानों के परिणामस्वरूप बार–बार होने वाले भूस्खलन, हिमनदों और हिमस्खलन में गति, तेजी से बहने वाली बारहमासी नदियाँ और अचानक बाढ़ की संभावना वाली धाराएँ, गहरी घाटियाँ, जलप्रपात, झरने, नदी वेदिकाएं और जलोढ़ पंख आदि से प्रकट होता है। इसी प्रकार, उत्तर तृतीयक निक्षेपों के उप–हिमालयी तलछटी निक्षेप में समाहित स्तनधारियों के जीवाश्मों की उपस्थिति पहाड़ियों की अपेक्षाकृत कम आयु का संकेत देती है। शिवालिक पहाड़ियों और मध्य हिमालय के बीच, विवर्तनिक मूल की बड़ी संख्या में अनुदैर्ध्य घाटियाँ हैं जिन्हें दून के नाम से जाना जाता है। कुछ महत्वपूर्ण हैं उदमपुर दून, पिंजौर दून, हरकी, देहरादून, कोटा दून आदि। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि शिवालिक और दून घाटियों की उपस्थिति उत्तर पूर्वी हिमालय में मालदा भ्रंश के पार उनकी अनुपस्थिति से सुस्पष्ट है।

हिमालय न केवल सबसे लंबी और सबसे ऊंची पर्वत श्रृंखलाएं हैं, बल्कि ये दुनिया की सबसे नम पर्वत प्रणालियां भी हैं और पर्यावरणविद् हिमालय को हिमानीयों, झीलों, झरनों और प्राकृतिक स्रोतों की संख्या और आकार के कारण जल के पहाड़ों के रूप में

संबोधित करते हैं। ये पर्वत श्रृंखलाएं विश्व के सबसे बड़े जलविभाजक के रूप में भी कार्य करती हैं। इन पर्वत श्रृंखलाओं से निकलने वाली अधिकांश नदियाँ सिंधु और इसकी सहायक नदियाँ हैं जो पश्चिम की ओर बहती हैं। गंगा, ब्रह्मपुत्र, इरावदी, छिंदविन और उनकी सहायक नदियाँ दक्षिण और पूर्व की ओर बहती हैं। तिब्बती पठार में अंतर्देशीय जल अपवाह तंत्र, इस क्षेत्र की अधिकांश नदियाँ महान हिमालय पर्वतमाला और ट्रांस–हिमालय में स्थित हिमनदों और झीलों से निकलती हैं और अनेकों भ्रंशों और महाखड्डों से होकर बहती हैं। सिंधु, सतलज और ब्रह्मपुत्र जैसी महत्वपूर्ण नदियां महान हिमालय श्रृंखला में ट्रांस हिमालय से उत्पन्न होती हैं और ये दक्षिण एशिया में महत्वपूर्ण नदी प्रणाली बनाती हैं जो पूर्ववर्ती जल अपवाह तंत्र के विशिष्ट उदाहरण पेश करती हैं। इनके अलावा, कुछ नदियाँ हिमनद झीलों और अत्यधिक स्थानीय जलभृतों और झरनों से निकलती हैं। हिमालय की अधिकांश झीलों में अलवण जल होता है लेकिन कुछ ट्रांस–हिमालयी क्षेत्रों जैसे पैंगोंग सो, सोकार और सो मोरारी आदि में खारे या लवणीय जल की झीलें भी हैं।

पूर्वगामी चर्चा के आधार पर, अतिरिक्त प्रायद्वीपीय पहाड़ों को निम्नलिखित मध्यम प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता हैः

उत्तर पश्चिमी हिमालयः इन्हें निम्नलिखित उप–प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता हैः गिलगित–बाल्टिस्तान प्रदेश, लद्दाख–कारगिल प्रदेश, कश्मीर की घाटी और जम्मू हिमालय। सर्दियों के दौरान बर्फ गिरने के रूप में सर्दियों की वर्षा की मात्रा और विश्व के कुछ सबसे बड़े हिमनदों की उपस्थिति इन प्रदेशों का एक समान महत्वपूर्ण लक्षण है। पहला और दूसरा मध्यम प्रदेश यानी गिलगित–बाल्टिस्तान और कारगिल–लद्दाख प्रदेश वर्षा छाया अथवा प्रतिपवन क्षेत्रों के अंतर्गत आते हैं। लेह में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 15 सेंटीमीटर (से.मी.) है और संपूर्ण लद्दाख जिला भारत में ठंडे मरूस्थल का हिस्सा है।

मध्य हिमालयः हिमाचल हिमालयः स्पीति और लाहौल प्रदेश, सतलुज–ब्यास द्रोणी और चंद्र–भागा द्रोणी।

उत्तराखंड हिमालयः इन्हें गढ़वाल और कुमाऊं हिमालय में भी विभाजित किया जा सकता है।

उत्तर–पूर्वी हिमालयः दार्जिलिंग–सिक्किम हिमालय, अरुणाचल हिमालय, नागा–मणिपुर–मिजो की पहाडियाँ।

उत्तरी मैदानः महान भारतीय उत्तरी मैदान उत्तर में हिमालय और दक्षिण में भारतीय पठार के बीच स्थित है। इसमें तीन नदी प्रणालियों के द्वारा जमा किये गए अवसादों से निर्मित मैदान शामिल हैंः सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र और इनकी सहायक नदियाँ। पाकिस्तान में सिंधु नदी के मुहाने से भारत–बांग्लादेश में गंगा नदी के मुहाने तक फैले इन मैदानों की लंबाई लगभग 3200 किलोमीटर है। इनमें से पंजाब राज्य में रावी के तट से पश्चिम बंगाल और असम में गंगा डेल्टा तक 2400 किलोमीटर के मैदान भारत में आते हैं। इन मैदानों की औसत चौड़ाई 150 से 300 किलोमीटर के बीच होती है। हालाँकि, ब्रह्मपुत्र के मैदानों के मामले में चौड़ाई लगभग 90 किलोमीटर है और यह इलाहाबाद के पास 300 किलोमीटर तक बढ़ जाती है। ऐसा माना जाता है कि इन आकृतिविहीन मैदानों का निर्माण भारतीय पठार के उत्तरी किनारों के नीचे आने से हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप भू–अभिनति का उदय हुआ है। यह भू–अभिनति उत्तर में हिमालय और दक्षिण में पठार से बहने वाली नदियों द्वारा जमा तलछट से भर गया।

इन मैदानों की उत्पत्ति की अनुमानित समय रेखा तृतीयक काल से है और यह प्रक्रिया अभी भी सक्रिय है। जगह–जगह पर इन निक्षेपों की मोटाई 5500 मीटर तक है, जो पर्वत निर्माण के चरण के दौरान इसके अवतलन के कारण पठार के उत्तरी किनारे के साथ घट जाती है। मैदानी इलाकों के उत्तरी किनारे ढलानों के टूटने पर हिमालय की नदियों द्वारा लाए गए निक्षेपों की दो संकरी पेटियों द्वारा चिह्नित हैं। कम ढाल के कारण हिमालय से नीचे बहने वाली नदियों और जलधाराओं के लिए भारी सामग्री का परिवहन करना मुश्किल हो जाता है। इस प्रकार, नदियाँ पहाड़ियों से निकलने के तुरंत बाद गोलाश्म, कंकड़ और अन्य मोटे पदार्थ जैसे पदार्थों को जमा करना शुरू कर देती हैं। यह भाभर नामक उच्च सरंध्रता का एक क्षेत्र बनाता है, जो अंततः अधिकांश धाराओं के गायब होने की स्थिति पैदा करता है। भाबर की औसत चौड़ाई 8 से 16 किलोमीटर के बीच होती है। भाबर में भारी परिवहन सामग्री जमा करने के तुरंत बाद, भाबर के दक्षिण में दलदल, कच्छभूमि और जलभराव की विशेषता वाली एक संकरी पट्टी होती है। यह नदी जलमार्गों के अच्छी तरह से बने बिना नदियों और धाराओं के फिर से उभरने से चिह्नित है। यह क्षेत्र तराई के नाम से जाना जाता है। मैदानी भाग के शेष भाग में, तीन अलग–अलग उच्चावच आकृति मैदानी इलाकों में मौजूद हैंः खादर और बांगर मैदान और डेल्टा। इनके अलावा खादर और इन नदियों के डेल्टा में नदी द्वीप हैं। माजुली ब्रह्मपुत्र नदी के खादर मैदानों पर स्थित सबसे बड़े नदी द्वीपों में से एक है। बार–बार जलप्लावन और नई जलोढ़ के जमाव के साथ–साथ नदी जलमार्गों का बार–बार स्थानांतरण खादर और डेल्टा की विशेषता होती है। इसके विपरीत, पुराने जलोढ़ निक्षेपों (बांगर) का उपयोग मैदानी इलाकों के अधिकांश हिस्सों में गहन कृषि के लिए किया जाता है, और उत्तरी बंगाल, ब्रह्मपुत्र मैदान और सूरमा घाटी में चाय बागान के लिए भी किया जाता है।

कुछ महत्वपूर्ण पपड़ी में गति से इन मैदानों का एक समान उच्चावच बाधित होता है। इनमें से पहला भारतीय प्लेट का उत्तर–पूर्वी झुकाव है, जो सिंधु–गंगा विभाजन के लिए स्थिति पैदा करता है, राजमहल पहाड़ियों के पास अपने उत्तरी छोर पर भारतीय प्लेट के टूटने और अंततः भारतीय प्लेट से इसके अलग होने से पश्चिम में राजमहल पहाड़ियों और उत्तर–पूर्व में गारो, खासी और जयंशिया पहाड़ियों के बीच मालदा भ्रंश का निर्माण हुआ है। धक्के का प्रभाव इतना तेज था कि अलग हुई उत्तर–पूर्वी प्लेट आगे दो भागों में टूट गईः शिलांग पठार और कोपिली भ्रंश से अलग कार्बी–आंगलोंग पठार। एक ओर बराक नदी को ब्रह्मपुत्र नदी प्रणाली से अलग करना और इसके दक्षिण में मेघालय पठार और इसके उत्तर में भूटान–अरुणाचल हिमालय के बीच पूर्व से पश्चिम की ओर ब्रह्मपुत्र नदी के प्रवाह की दिशा बदलना इसके अन्य परिणाम थे। ऐसा माना जाता है कि पूर्वी पहाड़ियों की दिशा में उत्तर से दक्षिण दिशा में परिवर्तन भी उसी धक्के का परिणाम था। इसके अलावा, यूरेशियन प्लेट के नीचे भारतीय प्लेट के धंसने के कारण, प्रायद्वीपीय भारत की जल अपवाह तंत्र प्रणाली भी गंगा नदी प्रणाली का हिस्सा बन गई, विशेष रूप से उत्तर–पश्चिम में पोटवार द्रोणी के उत्थान के कारण घग्गर नदी का लगभग गायब होना माना जाता है। और गंगा नदी प्रणाली द्वारा यमुना नदी और उसकी सहायक नदियों पर कब्जा करने से नदियों का मार्ग बदल गया। ऊपर वर्णित कुछ कारकों के आधार पर, भूगोलवेत्ताओं ने उत्तरी नदी के मैदानों को कुछ प्रमुख अंतरों के साथ निम्नलिखित मध्यम प्रदेशों में विभाजित करने का प्रयास किया हैः

सिंधु–गंगा विभाजन की सीमाः आर. एल. सिंह के नेतृत्व में बनारस स्कूल ऑफ भूगोलवेत्ता का तर्क है कि सिंधु–गंगा विभाजन की सीमा पश्चिम में सतलज नदी और पूर्व में यमुना नदी होनी चाहिए। ओ.एच.के. स्पेट विशुद्ध रूप से विभाजन की दो

आवश्यक विशेषताओं यानी बारहमासी नदी प्रणाली की अनुपस्थिति और ढलान के उलट के उल्लंघन के आधार पर इन सीमांकनों से असहमत थे। स्पेट के अनुसार हरियाणा राज्य की सीमा पर घग्गर नदी के रूप में एक सुस्पष्ट नदी नाला मौजूद है। इसलिए सतलज और घग्गर नदियों के बीच ढलान का कोई उत्क्रमण नहीं है। अतः, सिंधु–गंगा विभाजन की सीमा पश्चिम में घग्गर और पूर्व में यमुना के बीच होनी चाहिए।

मध्य गंगा के मैदान की पश्चिमी सीमाएँ: आर. एल. सिंह के अनुसार, ऊपरी और मध्य गंगा के मैदानों के बीच सीमांकन का आधार 100 फीट समोच्च रेखा होनी चाहिए। स्पेट ने इसके बारे में अलग–अलग राय रखी और उल्लेख किया कि इस तरह का दृष्टिकोण तकनीकी नियतवाद पर जोर देकर समझ से समझौता करता है। इसलिए, उन्होंने औसत वार्षिक वर्षा की मात्रा पर जोर दिया, यानी 100 सेमी समवर्षा रेखा। समवर्षा रेखा का चुनाव फसल प्रतिरूप पर इसके प्रभाव के आधार पर किया जाता है। निचले गंगा के मैदान में धान–जूट का वर्चस्व है, जबकि ऊपरी गंगा के मैदान में गेहूं–गन्ना संयोजन में प्रमुख फसलें हैं।

दूसरा विवाद बंगाल डेल्टा के विस्तार को लेकर था। आर एल सिंह ने बंगाल डेल्टा में केवल दक्षिण बंगाल का जिला शामिल किया, जबकि स्पेट के बंगाल डेल्टा में राज्य के अन्य हिस्सों को शामिल किया गया है और इसे तीन उप–विभाजनों में विभाजित किया गया हैः सक्रिय, परिपक्व और मृतप्राय डेल्टा।

दूसरा विवाद बराक नदी को ब्रह्मपुत्र नदी प्रणाली में शामिल करने से जुड़ा है। आर एल सिंह इसे ब्रह्मपुत्र की एक सहायक नदी के रूप में शामिल करते हैं, जो वास्तव में मेघना नदी की एक सहायक नदी है, जो जमुना (गंगा और ब्रह्मपुत्र का एक संयोजन) में मिलती है और इसमें शामिल होने के बाद पद्मा बन जाती है। अतः, बराक ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी नहीं है।

स्पेट ने इसे अंतर्निहित चट्टान संरचना के कारण प्रायद्वीपीय खण्ड का हिस्सा माना, जबकि आर. एल. सिंह ने इसे सिंधु–गंगा के मैदानों का हिस्सा माना।

अंत में, आर. एल. सिंह द्वारा विकसित प्रादेशीकरण की योजना आंशिक रूप से नए आंकड़ा स्रोतों की उपलब्धता विशेष रूप से 1961 की जनगणना और आंशिक रूप से अलग–अलग अध्याय लिखने वाले लेखकों की क्षमता से प्रभावित थी। इन सीमाओं ने उनकी योजना को तथ्यात्मक जानकारी में उत्कृष्ट लेकिन समझ में अपेक्षाकृत कमजोर बनाने में योगदान दिया।

पंजाब के मैदानः पंजाब के मैदानों को सिंधु नदी की सहायक नदियों द्वारा जमा किए गए अवसादों से बने कुछ महत्वपूर्ण दोआबों द्वारा चिह्नित किया गया हैः बिष्ट–जालंधर दोआब, ब्यास और सतलुज के बीच; ब्यास और रावी के बीच बारी दोआब; रावी और चिनाब के बीच रचना दोआब; चिनाब और झेलम के बीच चाज दोआब और चिनाब–झेलम और सिंध के बीच सिंध सागर दोआब। हालांकि, ये दोआब उत्तरी मैदानों के अन्य दोआबों के समान हैं, फिर भी बाढ़ के मैदानों को समतल करते हुए 3 मीटर की ऊँचाई तक कगार के संदर्भ में एक उल्लेखनीय अंतर है। इन्हें देशी शब्द अथवा स्थानीय भाषा में धया के नाम से जाना जाता है। मैदानी इलाकों के अन्य हिस्सों में हिमालय की नदियों द्वारा लाए गए तराई निक्षेप के समान, दलदल और कच्छ भूमि को पंजाब में स्थानीय रूप से चोस के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा, बिष्ट दोआब और ऊपरी बारी दोआब का एक छोटा हिस्सा आज भारत में है। पंजाब राज्य का सबसे बड़ा क्षेत्र अब पंजाब मालवा से आच्छादित है जो घग्गर और सतलुज के बीच की भूमि

है। इसी तरह पंजाब में कोई तराई या दलदल नहीं है। चोस शिवालिक तलहटी में छोटी मौसमी धाराएँ हैं जो सामान्य रूप से शुष्क होती हैं लेकिन बारिश के समय ही भर जाती हैं, जिससे मिट्टी का बहुत अधिक क्षरण होता है। भारत के विभाजन के बाद, पंजाब का पश्चिमी उपजाऊ मैदानी भाग पाकिस्तान में चला गया और इसका पूर्वी भाग भारत के पास रह गया। सिंधु–गंगा विभाजक में हरियाणा और दिल्ली राज्य शामिल हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, यह क्षेत्र बारहमासी जल अपवाह तंत्र की स्पष्ट अनुपस्थिति से चिह्नित है और उत्तरी मैदानों में सिंधु और गंगा प्रणालियों के बीच एक विभाजन के रूप में कार्य करता है।

ऊपरी और मध्य गंगा के मैदानः इससे पहले चर्चा की गई थी कि ऊपरी और मध्य गंगा के मैदानों के बीच की सीमा के बारे में भूगोलवेत्ताओं की अलग–अलग राय है। ए. बी. मुखर्जी ने सीमांकन रेखा के बारे में अलग–अलग दृष्टिकोण रखे हैं। वह एक सांस्कृतिक भूगोलवेत्ता होने के नाते भोजपुरी, मिथिला, मघाही और अंगिका बोलियों की प्रधानता के अलावा मध्य गंगा के मैदान की एक विशिष्ट विशेषता के रूप में त्योहार के महत्व पर प्रकाश डालते हैं। उनके अनुसार यह बंगाल डेल्टा, ब्रह्मपुत्र मैदानों और बराक मैदानों के बीच की सीमाओं के सीमांकन के मामले में भी यह लागू होता है। बंगाली भाषा की प्रधानता के साथ दुर्गा और काली पूजा बंगाल डेल्टा की विशेष विशेषता है, असमिया भाषा और कामाख्या पंथ ब्रह्मपुत्र मैदानों के लिए अद्वितीय हैं और सिलहट बोली बराक मैदानों के लिए अद्वितीय है।

बंगाल डेल्टाः बंगाल डेल्टा की विशेषता नई मिट्टी, पुरानी मिट्टी और कच्छ भूमि के रूप में अपरदी मैदान है। गंगा नदी की वितरिकाओं के किनारों के क्षरण और नदी तलों पर निक्षेपण की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप जलमार्गों का बार–बार स्थानांतरण होता है। डेल्टा का पश्चिमी भाग पश्चिम बंगाल राज्य में है जबकि इसका पूर्वी भाग बांग्लादेश में है। यह डेल्टा दुनिया के सबसे बड़े और घनी आबादी वाले डेल्टाओं में से एक है। चूंकि यह उभरते तट का हिस्सा है, बंगाल डेल्टा को चार उप–प्रदेशों में विभाजित किया गया हैः गंगा–ब्रह्मपुत्र दोआब में सक्रिय डेल्टा, परिपक्व, मृतप्राय और पारा डेल्टा। सक्रिय डेल्टा में सुंदरी वृक्ष के प्रभुत्व वाले शानदार वनस्पति आवरण हैं, इसलिए इसे सुंदरवन डेल्टा भी कहा जाता है।

ब्रह्मपुत्र और बराक मैदानः ब्रह्मपुत्र और बराक मैदान असम के भूगोल पर हावी हैं। भारत–बांग्लादेश सीमा पर पहले वाला ऊपरी असम में सदियों से निचले असम में धुबरी तक लगभग 640 किलोमीटर है। मैदान की औसत चौड़ाई 60 से 90 कि.मी. के बीच होती है। ब्रह्मपुत्र का मैदान बार–बार आने वाली बाढ़ के लिए कुख्यात है लेकिन असम में बाढ़ देश के अन्य हिस्सों की बाढ़ से अलग है। चूंकि ब्रह्मपुत्र में एक समृद्ध जल अपवाह तंत्र प्रणाली है, इसलिए बाढ़ के दौरान, मुख्य ब्रह्मपुत्र जलमार्ग का जल स्तर सहायक नदियों के जल स्तर से ऊपर हो जाता है। इसलिए, घाटी में बाढ़ मुख्य जलमार्ग से पानी के वापस सहायक नदियों में प्रवाह के कारण होती है। बराक मैदान बड़े सिलहट मैदान का हिस्सा है जो विभाजन के बाद अब बांग्लादेश का हिस्सा है। बार–बार बाढ़ के अलावा, ब्रह्मपुत्र और बराक के मैदानों की सामान्य विशेषताएं भांगर पर चाय के बागान और पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के बड़े भंडार हैं।

भारतीय प्रायद्वीपः उत्तर भारतीय मैदानों के दक्षिण में प्रायद्वीपीय पठार है। इसका एक त्रिकोणीय आकार है और यह उत्तर में दिल्ली कटक से राजमहल पहाड़ियों तक फैला हुआ है और दक्षिण की ओर नोकीला या शुंडिय होता है, जबकि कन्याकुमारी में बंगाल की खाड़ी–अरब सागर और हिंद महासागर के त्रिसीमा तक फैला हुआ है। अपने

भूवैज्ञानिक अतीत में, पठार उत्तर में पश्चिम में थार मरूस्थल से लेकर उत्तर–पूर्व में मेघालय–कार्बी–आंगलोंग पठार तक फैला हुआ था। पठार के विस्तृत उत्तरी सीमा पर विवर्तनिक परिवर्तनों के अमिट हस्ताक्षर हैं, जिनमें अवशेष पर्वत, कगारी पठार, भ्रंशित गर्त, छोटानागपुर की क्षरित सतहें, विच्छेदित बुंदेलखंड, नर्मदा, ताप्ती और दामोदर नदियों की दरार घाटियाँ शामिल हैं। इनके अलावा, पठार के पश्चिमी किनारों पर नीलगिरी, अन्नामलाई, पलानी और कार्डामॉम की अपेक्षाकृत ऊँची पहाड़ियाँ और न ही इतनी ऊँची पंचाईमलाई पहाड़ी, शेवरॉय पहाड़ियाँ, जावड़ी पहाड़ियाँ, नल्लामाला पहाड़ियाँ और पूर्वी घाटों में महेंद्रगीर, गोदावरी, महानदी, कृष्णा और कावेरी नदियों की घाटियों सहित पठारों की श्रृंखला शामिल हैं। मालवा, अमरकंटक, छोटा नागपुर, तेलंगाना, सेलम–कोयम्बटूर, विदर्भ, मराठवाड़ा और कोलार पठार। कुछ चोटियों को छोड़कर, पठार की सामान्य ऊंचाई 600–900 मीटर के बीच होती है। पहले यह उल्लेख किया गया है, कि पठार के उत्तरी भाग प्लेट की गति के कारण यूरेशियन प्लेट के नीचे दबे हुए हैं। विंध्य–कैमूर पर्वतमाला उत्तर, दक्षिण और दक्षिण पूर्व में बहने वाली प्रायद्वीपीय नदियों के बीच जल विभाजक का काम करती है। हालाँकि, यह पूर्व से पश्चिम दिशाओं की ओर ढलान के साथ अपनी क्षेत्रीय पहचान को बरकरार रखता है, जैसा कि नर्मदा और ताप्ती नदियों द्वारा इंगित किया गया है, जो भ्रंश घाटियों के माध्यम से पश्चिम की ओर बहती है। सतपुड़ा–मैकाल पर्वतमाला के दक्षिण के क्षेत्रों में, पठार का ढलान उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व दिशा की ओर है, जैसा कि गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों द्वारा विकसित जल अपवाह तंत्र प्रणाली से परिलक्षित होता है। अमरकंटक पठार के आसपास के पठार के पूर्वी भाग में, चारों दिशाओं में बहने वाली नदियों के साथ जल अपवाह तंत्र प्रतिरूप अरीय हैः उत्तर की ओर सोन, पूर्व की ओर महानदी, पश्चिम की ओर नर्मदा और दक्षिण की ओर वैनगंगा (गोदावरी की एक सहायक नदी)।

पठार की जटिलताएं इतनी विशाल हैं कि भारतीय पठार में तटीय मैदानों और भारतीय मरूस्थल के समावेश/बहिष्करण के बारे में भूगोलवेत्ता एक बार फिर अलग–अलग राय रखते हैं। आर एल सिंह की राय है कि भारतीय मरूस्थल उत्तर भारतीय मैदान का हिस्सा है, क्योंकि उत्तर भारत के अन्य मैदानों के समान, राजस्थान घग्घर मैदान का हिस्सा था, जो अभी भी पंजाब राजस्थान सीमा के साथ दिखाई देता है। वायु स्थालाकृतियों की प्रधानता जलवायु परिवर्तन, विशेष रूप से बढ़ती हुई शुष्कता के कारण है। जैसलमेर शहर के पास आकल में लकड़ी के जीवाश्म उपवन में उपलब्ध साक्ष्यों की मदद से उनके तर्कों की पुष्टि की जा सकती है। स्पेट के विचार अलग हैं और उन्होंने राजस्थान को भारतीय पठार के हिस्से के रूप में अंतर्निहित भूवैज्ञानिक संरचना के आधार पर शामिल किया जो जैसलमेर शहर में सोनार किला जैसे स्थानों में दिखाई देता है। इसी तरह, उन्होंने तटीय मैदानों को भी भारतीय पठार के समुद्री साक्ष्यों के रूप में शामिल किया। उनके तर्कों को प्राकृतिक इतिहास अभिलेखागार द्वारा किए गए शोध द्वारा प्रदान किए गए जीवाश्मीय साक्ष्यों की सहायता से भी प्रमाणित किया जा सकता है। बड़ौदा संग्रहालय में 73 फीट लंबी व्हेल मछली का कंकाल, जैसलमेर के पास ब्रह्मसर में समुद्री निक्षेप आदि से पता चलता है कि तटीय मैदानों के समान, राजस्थान के मरूस्थल पर अपने भूवैज्ञानिक अतीत में समुद्र द्वारा रुक–रुक कर आक्रमण किया गया था। कच्छ के रण का अस्तित्व उसी को साबित करने के लिए एक और सबूत है। इन जटिलताओं के आधार पर, भारतीय पठार को विशिष्ट भौतिक विशेषताओं के साथ निम्नलिखित मध्यम प्रदेशों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

राजस्थान का मरुस्थल, अरावली की पहाड़ियाँ, कच्छ–काठियावाड़ क्षेत्र, मालवा का पठार, छत्तीसगढ़ का पठार, तेलंगाना का पठार, नर्मदा–तापी की भ्रंश घाटियाँ, विंध्य और सतपुड़ा पर्वतमाला, दक्कन लावा पठार, गोदावरी के नदी मैदान, कृष्णा और कावेरी, कॉइनबेटर–सलेम– कर्नाटक पठार, छोटानागपुर पठार, मेघालय और कार्बी–आंगलोंग पठार, पूर्वी और पश्चिमी तटीय मैदान, पश्चिमी और पूर्वी घाट।

भारतीय प्रायद्वीप के उपर्युक्त मध्यम प्रदेशों में उनकी उत्पत्ति की उम्र, भूवैज्ञानिक संरचना, सतह के उच्चावच को आकार देने में आंतरिक और बाहरी ताकतों की भूमिका आदि से संबंधित कुछ सामान्य विशेषताएँ हैं। फिर भी इनमें स्थलाकृति, जलवायु, मिट्टी और परस्पर संबंधित वनस्पति, जीव और अन्य प्राकृतिक विशेषताओं से संबंधित कुछ विशिष्ट विशेषताएं हैं। विशिष्ट व्यक्तित्व वाले कुछ मध्यम प्रदेश हैं:

भारतीय मरुस्थलः हालांकि मरुस्थल की अंतर्निहित संरचना में भारतीय पठार के साथ कई समानताएँ हैं, फिर भी कम वर्षा के कारण शुष्कता का स्तर, वायु स्थलाकृतियों की प्रबलता और शुष्क और अर्ध–शुष्क वनस्पति प्रकार भारतीय मरूस्थल की कुछ विशेष विशेषताएँ हैं।

मेघालय और कार्बी–आंगलोंग पठारः ये राजमहल पहाड़ी और मेघालय पठार के बीच मालदा भ्रंश द्वारा अलग किए गए भारतीय पठार के विस्तार हैं। कार्बी–आंगलोंग पठार कोपिली भ्रंश द्वारा मेघालय पठार से और अलग कर दिया गया है जिसके माध्यम से बराक नदी सिलहट के मैदानों में बांग्लादेश की ओर बहती है। भारतीय पठार में अन्य स्थानों के समान कोयला, लौह अयस्क, चूना पत्थर, सिलीमेनाइट, यूरेनियम और सोना आदि खनिजों की उपलब्धता इन पठारों के बीच भूवैज्ञानिक गठन और इतिहास की निरंतरता को साबित करती है।

तटीय मैदानः पूर्वी और पश्चिमी तटीय मैदानों को भूगोलवेत्ताओं ने भारतीय पठार के समुद्र के साक्ष्यों के रूप में नामित किया है। हालांकि, न केवल पठार से बल्कि पूर्व और पश्चिम तटीय मैदानों के बीच भी इनकी विशिष्ट विशेषताएँ हैं। पश्चिमी तट जलमग्न तट की एक विशिष्ट घटना है। यह पोताश्रयों और बंदरगाहों के विकास के लिए संकीर्ण और आदर्श हैं। पश्चिमी तट पश्चिमी घाटों से घिरा है, जो कई छोटी और तेज बहने वाली नदियों का स्रोत भी हैं। पूर्वी तट के विपरीत, ये नदियाँ अपने मुहाने पर डेल्टा नहीं बनाती हैं। इसके विपरीत कुछ स्थानों पर पश्चजल (कयाल) हैं। पश्चिमी तट के विपरीत, पूर्वी तट तटीय मैदान के रूप में उभरे हैं। ये व्यापक हैं और महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों के विशाल डेल्टा के साथ हैं। पश्चिमी घाटों के विपरीत, पूर्वी घाट इन नदियों द्वारा अत्यधिक कटे और विच्छेदित हैं। इन निचली पहाड़ियों से निकलने वाली कोई प्रमुख धारा नहीं है।

बंगाल की खाड़ी और अरब सागर में द्वीप समूहः 350 किलोमीटर में फैले लगभग 200 द्वीप हैं जो अंडमान द्वीप समूह में हैं और 19 द्वीप समूह जो बंगाल की खाड़ी में निकोबार द्वीपों के समूह का गठन करते हैं। इनमें से कुछ द्वीपों की लंबाई 60 से 100 किलोमीटर तक है। ऐसा माना जाता है कि इन द्वीपों की उत्पत्ति ज्वालामुखी से हुई है। इन द्वीपों की अनुमानित दूरी बंगाल डेल्टा में हल्दिया बंदरगाह और चेन्नई से क्रमशः 830 से 850 किलोमीटर के बीच है। इनके विपरीत, अरब सागर में द्वीपों का निर्माण प्रवाल निक्षेपों से हुआ है और ये बंगाल की खाड़ी के द्वीपों की तुलना में अपेक्षाकृत छोटे हैं। इनकी अवस्थिति और अन्य भौगोलिक विशेषताओं में अंतर के अलावा इन द्वीपों को भारतीय संघ में शामिल करने की प्रक्रिया भी अलग है। अरब सागर में लक्षद्वीप समूह

केरल और मैसूर में विभिन्न शासकों विशेष रूप से टीपू सुल्तान के राज्यों का हिस्सा रहा है। इसके विपरीत, "सभ्य समाज में रहने वाली मानवता की उच्च नस्ल को दूषित करने के डर के बिना" औपनिवेशिक शासन के तहत स्वतंत्रता सेनानियों के साथ–साथ अन्य अपराधियों को पूर्ण अलगाव में रखने के लिए दंड समझौते के निर्माण के कारण बंगाल की खाड़ी द्वीप समूह को शामिल किया गया। इस प्रकार, 20वीं शताब्दी की शुरुआत से अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में रखे गए अधिकांश कैदियों के आधार पर, ये द्वीप भारतीय राष्ट्रवाद के राजनीतिक इतिहास से और अंततः स्वतंत्रता के बाद भारत के हिस्से के रूप में समाहित हो गया।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 2

आर. एल. सिंह द्वारा तैयार किए गए भारत के भूआकृतिक प्रदेशों को विभाजित करने की मान्यताओं पर संक्षेप में चर्चा करें?

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 3

a) प्रायद्वीपीय पठार के बारे में संक्षेप में चर्चा करें।

b) उपयुक्त उदाहरणों के साथ बाहरी या उप–हिमालयी क्षेत्र की संक्षेप में चर्चा करें।

16.4 सारांश

इस इकाई में आपने अब तक सीखा हैः

- पृथ्वी के सतह पर किसी स्थान या प्रदेश की भू–आकृति का वर्णन करने के लिए उपलब्ध शब्दावली के विभिन्न समूह।
- असंख्य उद्देश्यों के लिए भौगोलिक प्रादेशीकरण की आवश्यकता और महत्व के साथ–साथ भारत के भूआकृतिक प्रदेशों का महत्व।
- आर एल सिंह और अन्य विद्वानों द्वारा तैयार की गई भूआकृतिक प्रादेशीकरण की योजना।

16.5 अंतिम प्रश्न

1. भू–आकृतिक शब्दावली के समानांतर विभिन्न शब्दावलियों के महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. उपयुक्त उदाहरणों के साथ स्पेट नामक विद्वान द्वारा संरचना को मुख्य कारक के रूप में अपनाकर भारत के तीन विवर्तनिक विभाजनों की चर्चा करें।
3. भारत के भूगोल को समझने के लिए भू–आकृति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए आर. एल. सिंह के नेतृत्व में बनारस स्कूल ऑफ भूगोलवेत्ता द्वारा किए गए योगदान पर एक विस्तृत विवरण दें।

16.6 उत्तर

<u>स्व–मूल्यांकन प्रश्न</u>

1. इसे भौतिक भूगोल के नाम से भी जाना जाता है। भू–आकृति पृथ्वी की सतह की विशेषताओं का वर्णन करती है और प्राकृतिक पर्यावरण की प्रक्रियाओं और प्रतिरूपों से संबंधित है। इसमें वायुमंडल, जलमंडल, जीवमंडल और भूमंडल शामिल हैं जिन्होंने पृथ्वी की सतह पर मौजूद आकृतियों को आकार देने में योगदान दिया है। अनुभाग 16.3 का संदर्भ लें।

2. भूविज्ञान, संरचना, उच्चावच और भू–आकृति एक साथ स्थानीक कारक के साथ भारत को स्पष्ट रूप से चार इकाईयों में विभाजित करते हैं। अनुभाग 16.4 का संदर्भ लें।

3. a) इसके उत्तर में त्रिकोणीय आकार की सीमा है जो दिल्ली कटक से राजमहल पहाड़ियों तक फैली हुई है और दक्षिण की ओर नोकीली हो जाती है, जोकि त्रिसीमा बंगाल की खाड़ी–अरब सागर और हिंद महासागर में कन्याकुमारी तक फैली हुई है। अनुभाग 16.4 का संदर्भ लें।

   b) इसे शिवालिक की पहाड़ियों के रूप में जाना जाता है जो तलछटी जमाव और समूह से बना है। ये उत्तर में हिमालय पर्वतमाला के अपघटित पदार्थ से प्राप्त होते हैं। अनुभाग 16.4 का संदर्भ लें।

अंतिम प्रश्न

1. उपयुक्त उदाहरणों के साथ प्रत्येक शब्द की मुख्य लक्षणिक विशेषताओं का संक्षेप में उत्तर दें। अनुभाग 16.2 का संदर्भ लें।

2. इस प्रश्न का उत्तर देते समय, प्रदेशों की पहचान पर चर्चा करें और प्रदेशों के प्रमुख, वृहत्, प्रथम क्रम, द्वितीय क्रम और आगे के उप–विभागों को भी शामिल करें। अनुभाग 16.4 का संदर्भ लें।

3. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, भारत को विभिन्न भूआकृतिक प्रदेशों में विभाजित करने के औचित्य पर चर्चा करें और आर. एल. सिंह द्वारा तैयार किए गए भारत के भूगोल को समझने के लिए भू–आकृति के महत्व पर प्रकाश डालें। अनुभाग 16.4 का संदर्भ लें।

16.7 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

1. Holdich T.H., 2002: *India of 1904,* Henry Frowde, Oxfrod University Press.
2. Ahmad Kazi Sai-Ud-Din (1945): Is India Geographically One? In Mushirul Hassan (2000): Inventing Boundaries: Gender, Politics and the Partition of India, Oxford University Press, p. 63.
3. Ahmad Kazi Sai-Ud-Din (1945): Is India Geographically One? In Mushirul Hassan (2000): Inventing Boundaries: Gender, Politics and the Partition of India, Oxford University Press, p. 63.
4. Ahmad Kazi Sai-Ud-Din (1945): The Communal Pattern of India, In Mushirul Hassan (2000): Inventing Boundaries: Gender, Politics and the Partition of India, Oxford University Press, p. 63.
5. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, p.410.

6. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, p.407.
7. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, pp.409-10.
8. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, p.410.
9. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, p.407.
10. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, p.409.
11. Panikkar K.M. (1955): India: Geographical Factors in Indian History, Bharatiya Vidya Bhawan, Bombay.
12. Chatterjee S.P. (1947): India: An Introductory Regional Geography, Orient Longman Limited, Bombay. (archive.org)
13. Chatterjee S.P. (1947): India: An Introductory Regional Geography, Orient Longman Limited, Bombay, p.1.
14. Chatterjee S.P. (1947): India: An Introductory Regional Geography, Orient Longman Limited, Bombay, p.1.
15. Singh R.L. (ed.) (1971): India: A Regional Geography, Silver Jubilee Publication, National Geographical Society of India, Varanasi.
16. Singh R.L. (ed.) (1971): India: A Regional Geography, Silver Jubilee Publication, National Geographical Society of India, Varanasi, pp.34-5.
17. Singh R.L. (ed.) (1971): India: A Regional Geography, Silver Jubilee Publication, National Geographical Society of India, Varanasi, p.35.
18. Rao K.L. (1975): India's Water Wealth: It's Assessment, Uses and Projections, Orient Longman,
19. Government of India, Ministry of Water Resources (2014): Watershed Atlas of India, India-WRIS: A Joint Project of CWC and ISRO.
20. Deshpande C.D. (1992): India: A Regional Interpretation, Indian Council of social Science Research, & Northern Book Centre, New Delhi.
21. Spate O.H.K. & Learmonth A.M. (1984): India and Pakistan: A General and Regional Geography, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, p. 178.
22. Subbarao Bendapudi (1958): The Personality of india, Faculty of Arts, Maharaja Sayajirao University of Baroda, p. 58.
23. Deshpande C.D. (1992): India: A Regional Interpretation, Indian Council of social Science Research, & Northern Book Centre, New Delhi, pp. 6-7.
24. Deshpande C.D. (1992): India: A Regional Interpretation, Indian Council of social Science Research, & Northern Book Centre, New Delhi, p. 8.
25. Deshpande C.D. (1992): India: A Regional Interpretation, Indian Council of social Science Research, & Northern Book Centre, New Delhi, p. 8.
26. Deshpande C.D. (1992): India: A Regional Interpretation, Indian Council of social Science Research, & Northern Book Centre, New Delhi, p.8.
27. ICAR (1999): Agro-Ecological Subregions of India for Planning and Development, NBSS Publication No. 35.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

28. Meadows D. & et al (1972): The Limits to Growth: A Report of the Club of Rome, A Potomac associates Book.
29. World Commission on Environment and Development (1987): Our Common future also known as the Brundtland Report, Oxford University Press.
30. United Nations (1992): Earth Summit Agenda-21, United Nations.
31. Ministry Urban Development Government of India (1997): Vulnerability Atlas of India, Building Materials & Technology Promotion Council.
32. Ministry Urban Development Government of India and Centre for Disaster Mitigation and Management (2003): Landslide Hazard Zonation Atlas of India, Building Materials & Technology Promotion Council and Centre for Disaster Mitigation and Management Anna University.
33. Chatterjee Partha (2021): The Truth and Lies of Nationalism, Permanent Black

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 17

सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन

संरचना

17.1 परिचय
अपेक्षित सीखने के परिणाम
17.2 सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों का संक्षिप्त विवरण
17.3 सोफर द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक प्रादेशीकरण
17.4 सारांश
17.5 अंतिम प्रश्न
17.6 उत्तर
17.7 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

17.1 परिचय

पिछली इकाई 16 में, आपने आर. एल. सिंह और कई अन्य विद्वानों द्वारा भारत की भूआकृतिक या भौतिक प्रदेशों और इसके भौतिक प्रादेशीकरण की योजना का अध्ययन किया। इन भौतिक प्रदेशों में विभिन्न प्रकार के स्थलाकृति या भू–दृश्यों का निर्माण हुआ तथा ये आपस में मिलकर विविध रूपों में निश्चित आकार के साथ विकसित हुए। आप खंड 5 की इकाई 17 में भारत के भूगोल के अंतर्गत सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन का अध्ययन करेंगे। यह आपको भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के साथ उसकी प्रमुख विशेषताओं और मानव समाज तथा राष्ट्र के लिए उनके महत्व को व्यापक रूप से समझने में मदद करेगा।

इस इकाई में, हम डेविड सोफर नामक प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता और अन्य विद्वानों द्वारा तैयार किए गए सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन पर चर्चा करेंगे। इकाई के प्रारंभ में, अनुभाग 17.2 में सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों की परिभाषा एवं इनकी पहचान के लिए प्रयुक्त विभिन्न अवधारणाओं पर संक्षेप में चर्चा होगी। हम अनुभाग 17.3 में विभिन्न प्रकार के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के प्रकार और प्रादेशीकरण की योजनाओं से संबंधित अनेक पहलुओं का वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आपको भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के सीमांकन के लिए प्रयुक्त उपगमनों और उनके महत्व को समझने में मदद मिलेगी।

अंतिम इकाई 18 में, हम उन आर्थिक उपगमनों का वर्णन करेंगे जहां मनुष्य, समाज और राष्ट्र द्वारा विभिन्न प्रकार की आर्थिक गतिविधियों को क्रियान्वित किया जाता है।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप :

- भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों को समझ/पहचान सकेंगे;
- भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों की योजनाओं को समझ सकेंगे;
- एक संसाधन के रूप में सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे; तथा
- भारत के प्रत्येक सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों की मुख्य विशेषताओं को समझ सकेंगे।

17.2 सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों का संक्षिप्त विवरण

सर–जमीन–ए–हिंद पर अक्वाम–ए–आलम के 'फिराक'
काफिले बसते गए हिंदोस्ता बनता गया।
फिराक गोरखपुरी

एक अंग्रेजी नाटककार जॉन हेवुड ने एक बार उल्लेख किया था ''रोम एक दिन में नहीं बनाया गया था, वे हर घंटे ईंटें बिछा रहे थे''। आंशिक रूप से, वही भारत के बारे में भी उचित है। यह आंशिक, इसलिए क्योंकि रोम सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए एक इतिहास है। 31वीं ईसा पूर्व से 476 ईस्वी तक रोमन साम्राज्य के दौरान इसका महान इतिहास था। इसका वर्तमान इसके अतीत की एक धुंधली छाया है, सिवाय इसके कि यह रोमन कैथोलिक धर्म का केंद्र बना हुआ है जहां पोप कैथोलिक धर्म निर्विवाद रूप से सर्वोच्च प्रमुख है। भारत का भी एक महान इतिहास था इसने रोमन साम्राज्य के उदय से पहले भी दुनिया का मार्गदर्शन किया और रोम के विपरीत, यह आज भी सुर्खियों में बना हुआ है। रोम ने एकात्मक संस्कृति और धर्म का समर्थन करके खुद को प्रतिष्ठित किया, लेकिन इसके विपरीत, भारत कई संस्कृतियों और सभ्यताओं का उद्गम स्थल रहा है और यहां सामाजिक–सांस्कृतिक विविधताएं पाई जाती हैं। हेमिंग्वे के उपमा या रूपांतर के अनुसार, हालांकि, एक अन्य संदर्भ में, भारत को एक गतिशील उत्सव जो न तो अपने भव्य अतीत से निर्दिष्ट किया जा सकता है और न ही किसी भी प्रकार की विलक्षणता में कम किया जा सकता है। इसलिए, भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक स्थलों (विस्तार) के चित्रांकन के समय इन तथ्यों को ध्यान में रखना अनिवार्य है। इन मान्यताओं की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए विभिन्न विद्वानों ने भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक स्थल (स्थानों) को आंतरिक एवं बाह्य दोनों रूप में निम्नलिखित प्रकार से देखा हैः

1. भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक स्थान (स्थानों) का बाह्य प्रतिरूप (धारणा) और कल्पनाएँ :

   a. विदेशागत (Exoticist)
   b. प्रबंधकीय (Managerial) और
   c. संरक्षकीय (Curatorial)

2. भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक स्थान (स्थानों) का आंतरिक (धारणा) और कल्पनाएँ :

   a. सभ्यता
   b. आध्यात्मिक

c. आधुनिकतावादीः बहुलवादी–धर्मनिरपेक्ष–लोकतांत्रिक, मौलिक या अतिवादी

1. बाह्य भारतीय प्रतिरूप (छवि / धारणा)

1. a): विदेशी न केवल संशयवादी थे, बल्कि महान भारतीय संस्कृति की उपेक्षा भी करते थे। इनमें से अधिकांश यूरोप के श्वेत वर्चस्ववादी ईसाई थे। इनमें लॉर्ड मैकाले, कैंटरबरी के आर्कबिशप, रुडयार्ड किपलिंग और ई एम फोस्टर आदि शामिल थे। मैकाले ने भारतीय संस्कृति को गाय और वानर उपासकों, सपेरे द्वारा प्रचलित काले जादू से भरे अंधविश्वास के रूप में माना और वेद, पुराण, महाभारत, रामायण आदि जैसे भारतीय शास्त्रों को यूरोपीय शास्त्रीय ग्रंथों की साहित्यिक चोरी या महान यूरोपीय संस्कृति की सांस्कृतिक कलाकृतियों की तुलना में अरूचिकर मान कर उपहास किया। इसी तरह, कैंटरबरी के आर्कबिशप ने भारतीय उपमहाद्वीप में लोगों की धार्मिक प्रथाओं को यह कहते हुए उपेक्षित किया कि दुनिया के इस हिस्से में रहने वाले लोगों का न तो धर्म है और न ही भगवान का नाम है। इसलिए, इन पुरा–धार्मिक बर्बर समुदायों को सभ्य बनाने की जिम्मेदारी का बोझ ईश्वर ने ईसाइयों को दिया है। इसके अलावा, जंगल बुक के लेखक किपलिंग ने भारतीय लोगों, उनकी संस्कृति और सभ्यता की तुलना ''मुगली ऑफ द जंगल बुक'' द्वारा दर्शाया गए जैसे क्रिप्टो–असभ्य, नग्न आधे मानव आधे जानवर से की है। यह सांस्कृतिक मंदन ही है जिसके परिणामस्वरूप यह उनके बचकाने मनोवृत्ति के प्रतिबिंब भी थे तथा सांस्कृतिक रूप से समृद्ध और मनोवैज्ञानिक रूप से मजबूत पश्चिम तथा असभ्य एवं मानसिक रूप से अपंग पूर्व के बीच एक विशाल अति कठिन मौजूद अंतर को दर्शाते हैं। इस प्रकार ''पूर्व पूर्व है, और पश्चिम पश्चिम है, और दोनों कभी नहीं मिलेंगे''।

1. b): प्रबंधकीयवादियों की राय थी कि भारत चीनी, मेसोपोटामिया, बेबीलोनियन और मिस्र की सभ्यताओं के समानांतर विश्व की शीर्ष चार सभ्यताओं में से एक है। यह विभिन्न समयों पर महान धर्मों का जन्म स्थान रहा है और इसने विश्व सभ्यताओं की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। विज्ञान, गणित, दर्शन, संगीत और नृत्य आदि के क्षेत्र में भारतीयों का मौलिक योगदान सभ्यता के उद्गम स्थल का प्रमाण है, जो एक देश के भीतर दुनिया के लगभग सभी महान धर्मों की उपस्थिति के प्रतीक के रूप में कई महान सभ्यताओं का जरिया भी रहा है। हालाँकि, या तो आंतरिक सांस्कृतिक उपलब्धियों का उचित प्रबंधन अधिकता की वजह से नियमित था या भारतीय संस्कृतियों की सूक्ष्म और श्रेष्ठ बारीकियों को समझने के प्रति बाह्य प्रभाव बहुत क्रूर और असंवेदनशील थे कि भारतीय संस्कृति चारों ओर एक अराजक दृश्य का प्रतीक है। सदियों से अनेक सांस्कृतिक भंडार जमा हुए हैं ओर भारतीय संस्कृति को समझने और संरक्षित करने के लिए एक गंभीर महत्वपूर्ण प्रबंधन कौशल की आवश्यकता है।

1. c): संरक्षकीयवादीयों के अनुसार प्रारंभ में भारतीय संस्कृति और सभ्यता उत्कृष्ट रही थी लेकिन अन्य सभ्यताओं के विपरीत यह पुराने, अप्रचलित, अंधविश्वासों को त्यागने और वैज्ञानिक और आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा देने में विफल रहा है। इसलिए सच्चे और मूल्यवान पहलुओं को बचाने तथा पुनर्जीवित करने के लिए बहुत से अवांछित पहलू को सत्य और तर्कसंगत रूप से अलग करने की आवश्यकता है। ऐतिहासिक और प्राचीनता के संरक्षण के साथ, एक संरक्षकीय दृष्टिकोण महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है जो ज्ञान की महान परंपरा को बचाए और मिथकों और अंधविश्वासों को दूर करे। जर्मन इंडोलॉजिस्ट मैक्स मूलर का मत था

कि ब्रिटिश विजय और उपनिवेशीकरण ने वर्तमान भारत को महान इतिहास की धुंधली छाया में बदल दिया था। इसलिए, उन्होंने अपने छात्रों को भारत आने से मना किया और बताया कि महान भारतीय संस्कृतियों और सभ्यताओं को पुनर्जीवित करने में एक अनुभवी संरक्षकीय दृष्टि और संवेदनशीलता ही सक्षम है।

2. भारत की आंतरिक प्रतिरुप (छवि)

2. **a) सभ्यतावादीः** भारतीय सभ्यता के समर्थक भारत और इसकी सभ्यता के बारे में समान विचार और दृष्टिकोण रखते हैं, जो जर्मनी के बारे में नाजियों के बीच लोकप्रिय था। उनके अनुसार भारत आर्यन प्रजाति का स्थान है। वे अपनी इस भूमि पर पूरा गर्व करते हैं, जहां भगवान अलग–अलग समय पर अवतार लेकर हिंदू धर्म के विध्वंसको का सफाया करने के लिए उतरे हैं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे

इसी तरह, वे हिंदू धर्म के ग्रंथों को राक्षसों के खिलाफ धार्मिक नायकों की हेरलड्री (वंशानुगत प्रतीक अथवा विद्या) का प्रामाणिक और सच्चा वर्णन मानते हैं। हिंदुत्व के प्रमुख विचारक विनायक दामोदर सावरकर के अनुसार हिंदू वह है जो भारत को एक पवित्र भूमि (पुण्य भूमि), पूर्वजों की भूमि (पितृभूमि) और जन्म भूमि (जन्म भूमि) मानता है। सभ्यतावादी पवित्र ग्रंथों, वेदों, पुराणों विशेष रूप से भगवद्गीता, मनु स्मृति और मध्यकालीन कवि गोस्वामी तुलसी दास द्वारा रचित रामचरित मानस के प्रति श्रद्धा तथा सम्मान रखते हैं और मनु स्मृति के सिद्धांतों के साथ प्रशासित राम राज्य की स्थापना की आशा और प्रतिज्ञा करते हैं। उनके अनुसार हिंदू धर्म के इन तीन सिद्धांतों को तथा हिंदू राष्ट्र और पवित्र गाय पंथ की अवधारणा को मानने वाले सभी हिंदू और भारत के मूल निवासी हैं। यह विशिष्ट रूप से भारतीय संस्कृति की व्याख्या करने का एक अनिवार्य और बहिष्करणवादी दृष्टिकोण है जो एक भ्रमपूर्ण 'अन्य' आधार पर आधारित ऊपर वर्णित अपनी संकीर्ण परिभाषाओं को स्वीकार नहीं करते हैं। वे, यह स्वीकार नहीं करते है कि आज के तथाकथित 'अन्य' हिंदू धर्म के भीतर सामाजिक भेदभाव की अमानवीय प्रथाओं जैसे अस्पृश्यता और असंवेदनशीलता का परिणाम है जो भारत में समुदायों में प्रमुख सांस्कृतिक मतभेदों का कारण है। हिंदू सभ्यताओं के अनुयायियों में हिंदुओं के अलावा बौद्ध, जैन, सिख और अन्य शामिल हैं, कई जीवात्मवादी धर्मों को मानने वाले भारतीय सभ्यता का हिस्सा हैं। इसके विपरीत, मुस्लिम और ईसाई 'अन्य' का निर्माण करते हैं क्योंकि वे न तो भारत को अपनी पवित्र भूमि (भारत माता) मानते हैं और न ही पैतृक भूमि। इसलिए, वे भारतीय सभ्यता का हिस्सा नहीं हैं। वे परदेशी या बाहरी हैं।

इसके अलावा, अन्य धर्मों के अनुयायी विशेष रूप से यहूदी और पारसी भी भारत को एक पवित्र और पैतृक भूमि नहीं मानते हैं, फिर भी सभ्यतावादी उनके विरूद्ध अपनी राय नहीं रखते हैं। हालाँकि, भारत के इस निर्माण में कई कमियाँ हैं, इनमें से कुछ यहाँ ध्यान देने योग्य हैं अर्थात् हिंदू की अवधारणा के बारे में कोई आम सहमति नहीं है, नागरिकता की उनकी अवधारणा ''जूस सेंगुइन'' ("jus sanguine") अर्थात् राष्ट्रीयता या जातीयता पर आधारित नागरिकता संवैधानिक परिभाषा ''जूस सोलि'' ("jus soli") अर्थात् जन्म–स्थान पर आधारित नागरिकता की पद्धति के विपरीत है। इसी तरह, पदानुक्रमित

सामाजिक संरचना तथा जाति, जातीयता, नस्ल, लिंग, भाषा और रीति–रिवाजों के साथ सामाजिक–सांस्कृतिक भेदभाव के अभ्यास के बारे में उनकी चुप्पी ने इस अवधारणा के बारे में कई सवाल उठाए हैं, जिसका जवाब संभव नहीं था।

2. **b) अध्यात्मवादीः** अध्यात्मवादी भारतीय संस्कृति की एक सीमित और बहिष्कृत या अपवादपूर्ण अवधारणा के बारे में आलोचनात्मक थे। उनका मत था कि भारत का मूलतत्त्व स्थानीय को वैश्विक स्तर पर ले जाने और मानव जाति की एकता के सामान्य और सार्वभौमिक आधारों के बारे में सोचने में निहित है। नोबल पुरस्कार विजेता कवि रवींद्र नाथ टैगोर ने सार्वभौमिक समानता का संदेश दियाः

जहाँ निर्भय चित्त हो मस्तक ऊँचा, ज्ञान हो बाधा हीन
जहाँ मनुज मनुज में भेद नहीं, हो वाणी सत्यासीन |
जहाँ पूर्णता के शिखर स्पर्शहित, बाहू हो चिरविस्तृत,
जहाँ शुद्ध ज्ञान की निर्मल धारा, मरू में ना होती विलीन |
अंतयामी ! अंतर को तुम, करते जहाँ विशाल,
स्वतंत्रता के उसी स्वर्गदृहित, जागे जागे, अपना देश विशाल |

यह मुख्य रूप से अपनी संस्कृति की आध्यात्मिक शक्ति के कारण, भारत ने न केवल लाखों वर्षों में अपने भीतर लाखों विश्वासों और विश्वास प्रणालियों का पोषण किया है, अन्य धर्मों की रक्षा और प्रचार किया है और अन्य देशों में उत्पन्न होने वाले विश्वासों को भी फैलाया है, बल्कि बौद्ध धर्म, जैन धर्म, सूफीवाद, सिख धर्म आदि द्वारा प्रख्यापित सत्य, त्याग, अहिंसा, कारण, ज्ञान, करुणा और शांति के संदेशों, महात्मा गाँधी और अरबिंदो के दर्शन के माध्यम से दुनिया भर में सार्वभौमिक प्रेम का संदेश भी फैलाया है।

2. **c)** आधुनिकतावादी प्रारंभ में पश्चिम–यूरोपीय देशों और उत्तरी अमेरिका में तर्कसंगत, उदार, वैज्ञानिक, औद्योगिक और सामाजिक–राजनीतिक क्रांतियों तथा उसके बाद रूस में अक्टूबर क्रांतियों से प्रभावित थे। वे लोगों के दैनिक जीवन में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उपयोग के साथ एक नागरिक के रूप में अपनी पहचान, कानून के शासन यानी संविधान तथा राज्य और समाज की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक नीतियों को तैयार करने में लोगों की भागीदारी के प्रति अटूट श्रद्धा रखते थे। पिछले दो उपगमनों के विपरीत, आधुनिकतावादियों को उस उद्देश्य, वैज्ञानिक और तथ्यात्मक ज्ञान से बहुत लाभ हुआ जिसने पूरे विश्व में आधुनिकतावाद को आधार बनाया। विभिन्न सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं के तथ्यों और आँकड़ों पर अधिक जोर देना, और अधिक तथ्यों के लिए आग्रह करना, स्वतंत्रता, बंधुत्व, समानता, धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र और वैज्ञानिक स्वभाव के सिद्धांतों के आधार पर नए सामाजिक अनुबंधों के साथ जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा तैयार कानून के शासन ने भारत में आधुनिकतावादियों की पहचान बनाई। लेकिन, विषयगत या बाह्य–मात्रात्मक तथ्यों और सांस्कृतिक–गुणात्मक तथ्यों पर मतभेदों के कारण आधुनिकतावादियों के भीतर विचार की दो अलग धाराओं का उदय हुआः

i. **उदारवादी बहुलवादी और पंथनिरपेक्षः** ये अधिकतर अक्टूबर–पूर्व क्रांति के आधुनिकतावादी हैंः जवाहरलाल नेहरू और दादाभाई नौरोजी आदि भारत में उदारवादी बहुलवादी आधुनिकतावादियों के मुख्य समर्थक थे। उन्हें उदारवादी और जन हितैषी लोगों जैसे ए.ओ. ह्यूम, सी.एफ. एंड्रयूज और एनी बेसेंट का समर्थन प्राप्त हुआ। उनका मत था कि भारत ने प्रारंभ में निकटवर्ती संस्कृतियों के

साथ नियमित संपर्क से बेहतर शुरुआत किया और विभिन्न संस्कृतियों और सभ्यताओं के एक साथ मिलने वाले स्थान या घरिया के रूप में उभरा तथा अपनी ज्ञान प्रणालियों, वैज्ञानिक उपलब्धियों, दर्शन, गणित, कला, संस्कृति, कृषि के विकास में इन अंतर–मिश्रण से लाभान्वित हुए और बदले में दुनिया को कई क्षेत्रों में निर्देशित किया। पश्चिम में तीव्र विकास, विशेष रूप से औद्योगिक क्रांति के दौरान, औपनिवेशिक नीतियों का विस्तार, संसाधनों का अति–दोहन और इसकी संस्कृति को विकृत करते हुए भारत को आश्रित बना दिया गया था। आधुनिकतावादियों के अनुसार औपनिवेशिक शासन के कारण भारत की अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक–सांस्कृतिक ताने–बाने या बनावट को गंभीर नुकसान पहुंचा है, परन्तु अनेक कठिनाइयों के वावजूद, भारतीय मनोवृति में अंतर्निहित इसकी सांस्कृतिक विविधताएं और सामाजिक बहुलताएं फलती–फूलती रही। इसीलिए, भारतीय संस्कृति का सार इसकी बहुलता, विविधता, लोकतंत्र, पंथनिरपेक्षता और संवैधानिकता में निहित है।

ii. **मुलजाभासी भौतिकवादी**: अक्टूबर क्रांति की सफलता और स्वाधीनता या आत्मनिर्णय के अधिकार के सिद्धांत की विजय से भारत में भी कट्टरपंथी मुख्य रूप से आर. पी. दत्त और भगत सिंह आदि को मानव जाति के इतिहास में एक सामान्य सूत्र की पहचान करने के लिए प्रेरित किया और उन्होंने बताया कि प्रत्येक स्थान पर वर्ग संघर्ष इतिहास का प्रेरक रहा है तथा भारत भी इसका अपवाद नहीं है। भारत में ऐतिहासिक चरणों में उप–वर्गों में एक छोर पर दानव और अछूतों की अवधारणाएं सामाजिक पदानुक्रम में थी और पुजारी, योद्धा और व्यापारिक समुदाय दूसरे छोर पर थे। इन दो ध्रुवों के बीच में कई समुदाय थे जो ऊपर–नीचे गतिशीलता के लिए सहज अनुगामी थे। इनमें से अधिकांश को नीचे धकेल दिया गया और अधीनस्थ शामिल हो गए और केवल एक छोटा वर्ग पदानुक्रम में ऊपर जाने में सफल रहा। अंग्रेजी उपनिवेशीकरण ने भारत में नई गतिशीलता लाई जिससे 'केटेरीस पारिबुस', अर्थात अगर अन्य बातें पूर्ववत रहीं तो पूरे देश को ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन सामंत की स्थिति में घटा दिया गया था। कट्टरपंथियों का विचार था कि भारत में साम्राज्यवादी और शासक वर्गों के बीच एक मौन समझ है और दोनों ही इसकी सांस्कृतिक विविधता और सामाजिक बहुलता के खिलाफ हैं। इसलिए, उन्होंने भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने के लिए कदम उठाया और दुनिया के मजदूर–वर्ग संगठनों के साथ–साथ अधीनस्थों के एक व्यापक मोर्चे के पास भीतर और बाहरी शत्रु दोनों से लड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं रहा।

उनके अनुसार, भारत में दो संस्कृतियां हैं, कुलीन और निम्नपदस्थ या उप–वर्ग दास संस्कृति। पहला वर्ग एक ओर साम्राज्यवादियों और दूसरी ओर स्थानीय संस्कृतियों के बीच एक माध्यम का कार्य करता है। इस प्रक्रिया में, यह मानकीकृत, एकसमान एकल राष्ट्रीय संस्कृति की विजय या सफलता और दूसरे वर्ग के पूर्ण विनाश या विलोपन के लिए काम करता है। इसके विपरीत, निम्नपदस्थ संस्कृति या दास संस्कृति, संस्कृतियों की विविधता, बहुलता और आत्मनिर्णय के लिए है और निम्नपदस्थ या उप–दास संस्कृतियों की विजय और उत्सव ही केवल औपनिवेशिक शासकों से सच्ची स्वतंत्रता और स्वाधीनता सुनिश्चित करेगा। इसके विपरीत, कुलीन संस्कृति की विजय स्वतंत्रता संग्राम को सत्ता हस्तांतरण के सरल रिवाज तक सीमित कर देगी।

फैज (FAIZ)

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, आधुनिकतावादियों को उपलब्ध उद्देश्य और तथ्यात्मक जानकारी विशेष रूप से सरकार के साथ–साथ स्वतंत्र शोधकर्ताओं द्वारा किए गए पुरातात्विक अनुसंधान और अनुभवजन्य अथवा आनुभविक अध्ययन से लाभ हुआ। हालांकि, भारत में अलग–अलग समय पर सांस्कृतिक स्थानों के मानचित्रण पर अनेक अनुसंधान उपलब्ध मौजूद हैं, फिर भी वर्तमान अध्ययन के दृष्टिकोण से सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों की पहचान के लिए इन दो महत्वपूर्ण योगदानों में से हैं:

1. बेंदापुडी सुब्बाराव

सुब्बाराव द्वारा अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'द पर्सनैलिटी ऑफ इंडियाः प्री एंड प्रोटो–हिस्टोरिक फाउंडेशन ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान' में भारत में पुरातत्व अनुसंधान द्वारा उपलब्ध कराए गए नए तथ्यों द्वारा किए गए योगदान को स्वीकार किया, जिससे उन्हें भारत में सांस्कृतिक विविधता के संदर्भ में स्थान एवं समय के बीच सहसंबंध स्थापित करने में मदद मिली (सुब्बाराव, बी. 1958)। उनके अनुसार ''भारत के सांस्कृतिक इतिहास की सबसे बुनियादी विशेषता इसकी विविधता है''। भारतीय उपमहाद्वीप की विशालता और महान पर्यावरण एवं सांस्कृतिक विविधता के कारण इसका मानचित्रण शोधकर्ताओं के लिए अधिक कठिन है। इसलिए, उन्होंने सुझाव दिया कि हालांकि, भारत के इतिहास को ''किसी भी अवधि में एक इकाई के रूप में नहीं माना जा सकता है'', उन्होंने कहा कि वृहद् पैमाने पर ''भारत का पूरा इतिहास एक वाक्य है जिसे भूगोल द्वारा उत्पन्न अभिकेन्द्री और अपकेन्द्री बलों के बीच संघर्ष'' के रूप में वर्णित किया जा सकता है (सुब्बाराव, बी. 1958)।

a) अभिकेंद्री बलों अथवा ताकतों ने हमेशा एक अंतरमहाद्वीपीय संचार प्रणाली से जुड़ी साझा संस्कृति और सामाजिक विरासत पर आधारित मौलिक एकता को राजनीतिक अभिव्यक्ति देने की कोशिश की है। इन ताकतों को कुछ तकनीकी परंपराओं से मजबूती मिली जो पूरे देश में आम हैं। मौर्य, सातवाहन, गुप्त, हर्ष, मुगल और ब्रिटिश जैसे केंद्रीकृत 'अखिल भारतीय अथवा पैन इंडियन' साम्राज्यों से संकेत के आधार पर उन्होंने अपने शोध की पुष्टि की और दावा किया कि हालांकि, इन केंद्रीकृत शक्तियों की अवधि क्षेत्रीय स्थानीय साम्राज्यों की तुलना में अपेक्षाकृत कम थी, फिर भी वे एकीकृत अखिल भारतीय शक्ति के प्रतीक थे।

b) केन्द्रापसारक बल अथवा ताकत अधिक महत्वपूर्ण भौगोलिक कारकों में से हैं जिन्होंने एकीकरण की ताकतों का प्रतिकार किया है। कोसल, मगध, गौड़ा, अवंती, लता, सौराष्ट्र, कलिंग, आंध्र, महाराष्ट्र, कर्नाटक, चेर, चोल और पांड्या जैसे क्षेत्रीय साम्राज्य जीवंत रहे है। ये ''बारहमासी केन्द्रक क्षेत्र'' के रूप में जीवंत रहे हैं (सुब्बाराव, बी. 1958)। इन संस्कृतियों ने ''उपमहाद्वीप के भीतर और बाहर'' होने वाले परिवर्तनों के बावजूद क्षेत्रीय भौगोलिक कारकों के भारी प्रभाव को प्रकट किया है (सुब्बाराव, बी. 1958)।

विशिष्ट भौगोलिक कारकों और इन क्षेत्रों की अवस्थिति के साथ इन ताकतों के परस्पर क्रिया के कारण भारतीय उपमहाद्वीप में संस्कृति और सांस्कृतिक परिदृश्य का एक विशिष्ट स्थानिक–कालिक प्रारूप उत्पन्न हुआ है। ग्रिफिथ टेलर के जैविक सादृश्य या समरूपता से संकेत लेते हुए, सुब्बाराव ने उल्लेख किया कि भारत में सांस्कृतिक स्थल ''क्षेत्र और स्तर'' अवधारणा को प्रदर्शित करता है जिसे ''आयु और क्षेत्र'' (सुब्बाराव, बी. 1958) अवधारणा भी कहा जा सकता है। इसका अर्थ है, ''यदि कोई केंद्र है जहां विकास (चाहे जैविक या अजैविक प्रकार का) हो रहा है .... फिर, एक उचित समय व्यतीत होने के बाद, विभिन्न विभेदित वर्ग क्षेत्रों की श्रृंखला में पाया जाएगा ताकि सबसे

आदिम वर्ग हाशिये पर हो और सबसे उन्नत वर्ग श्रृंखला के केंद्र में हो। इस प्रकार, सबसे पहले वर्ग ने अपने प्रवास में सबसे बड़े क्षेत्र को आवृत किया होगा लेकिन इस वर्ग का जीवाश्म या पुराना साक्ष्य सबसे गहरे स्तर पर, विकास के केंद्र में बाद के स्तर के तहत पाए जाएंगे'' (सुब्बाराव, बी. 1958)।

इस प्रकार, सुब्बाराव के अनुसार, केन्द्राभिमुख और केन्द्रापसारक बलों की परस्पर क्रिया, आयु और क्षेत्र की अवधारणा, क्षेत्रीय भौगोलिक कारकों के साथ–साथ प्रवासन की अंतरमहाद्वीपीय लहरों के संबंध में भारत की सापेक्ष अलगाव और कूल–डे–सैक की स्थिति के परिणामस्वरूप पूरे इतिहास में वास–विस्थापन–समायोजन/वास के अद्वितीय प्रारूप विकसित हुए हैं। हिमालय पर्वत के दक्षिण में भारत का स्थान और जिस तरह से इन पर्वतमालाओं ने दक्षिण एशिया और अन्य यूरेशियाई देशों के बीच दुर्जेय अवरोध पैदा किए, कभी–कभी लंबे अंतराल के बाद उच्च पर्वतीय दर्रों के माध्यम से सीमित परस्पर संबंध या क्रिया के अतिरिक्त यह क्षेत्र अपने ऐतिहासिक अतीत में अधिकांश अलग और अकेला रहा है। भारत, अन्य देशों के विपरीत, जो अंतरमहाद्वीपीय प्रवासियों के दल के रास्ते में सीधे खड़े थे, समय–समय पर अपनी ऐतिहासिक उपलब्धियों के पूर्ण विनाश से बचा रहा।

येट्स (Yeats)

दूसरी तरफ, प्रवासियों की मुख्य धारा की तुलना में आंतरायिक अंतराल या अनिरंतर प्रवासियों के प्रवाह ने मौजूदा संस्कृतियों में क्रमिक विस्थापन–समायोजन के अतिरिक्त एक बड़ा रुकावट या दरार पैदा करना मुश्किल पाया, जिससे विभिन्न सांस्कृतिक विचारों का आदान प्रदान या मिश्रित संस्कृतियों का विकास हुआ। चूंकि अधिकांश अप्रवासियों को हिमालय के ऊंचे पर्वतीय दर्रों को पार करना था, इसलिए उनकी गतिशीलता और आवृत्ति, कई वर्षों के व्यवधान में सीमित थी, इसलिए मिश्रित संस्कृतियों को विकसित करने के अतिरिक्त सीमित विकल्प बचे थे। इसके अलावा, वहाँ अप्रवासी भी तत्कालीन रूप से मौजूदा अपने संस्थानों और प्रौद्योगिकियों की असंगति से विवश थे। परिणामस्वरुप, उन्होंने अस्थायी रूप से बसने और एक अन्य प्रवासी विस्थापन के दौरान कम प्रतिरोध के मार्ग का अनुसरण किया। इन सभी परस्पर संबंधित कारकों का अंतिम परिणाम थाः उत्तर में जंगेरेन द्वार एवं काबुल घाटी से दक्षिण में तमिलनाडु–मालाबार तट तक भारत के लोगों ने गतिशीलता के ''जेड'' प्रतिरूप या पैटर्न का अनुसरण हुआ। स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियों सहित स्थापना–विस्थापन और प्रवासन के इन मार्गों के साथ, सुब्बाराव ने भारतीयों को निम्नलिखित सांस्कृतिक क्षेत्रों में विभाजित कियाः

आकर्षण क्षेत्र
वियोजन क्षेत्र
सापेक्ष वियोजन क्षेत्र

1. **आकर्षण क्षेत्रः** विशेष रूप से उत्खनन के आद्य या प्रोटो–ऐतिहासिक स्थलों से पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर, यह पता चला है कि सिंधु द्रोणी विशेष रूप से हड़प्पा संस्कृति के साक्ष्य पंजाब, घग्गर द्रोणी, क्वेटा, किली गुल मोहम्मद, में प्रचलित थे। गाजी शाह, पिंडवाही, आमरी, कोट–दीजी, सिंध, मोहनजो–दारो, काठियावाड़, हिसार (राखीगढ़ी, गंगा द्रोणीः हस्तिनापुर, महेश्वर–नवदटोली, कन्नौज, राजगीर, वैशाली, सोनपुर, पटना, बंगालः दिनाजपुर, मिदनापुर, हुगली, मालवा पठारः महेश्वर, नर्मदा का दक्षिणी किनारा, पूर्वी राजपुताना, उज्जैन, नागदा,

महाराष्ट्रः तापी की घाटियाँ और कृष्णा और गोदावरी की ऊपरी घाटियाँ, प्रकाश, बहल, नासिक, जोरवे, नेवासा, निचली कृष्णा–गोदावरी द्रोणी (आंध्र–कर्नाटक क्षेत्र): ब्रह्मगिरि, संगनाकल्लु, पिकलीहाल, मुस्की, तमिलनाडुः पाला, कावेरी और ताम्रपर्णी, तेरी, अरिकामेडु, सेंगामेदु में मौजूद थे।

2. **वियोजन क्षेत्र** : भारतीय जनजातीय या शरण के क्षेत्र। इन्हें कूल–डे–सैक के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह मुख्य रूप से आखेटक और पशुचारण समुदायों का निवास है और वे ''अपनी तकनीकी उपलब्धियों के अनुकूल, सरल जीवन के साथ छोटे समुदायों में एक आदर्श पारिस्थितिक संतुलन में जीवित रहने में कामयाब रहे हैं'' (सुब्बाराव, बी. 1958)। दुर्भाग्य से, उनके समृद्ध जैविक और अजैविक संसाधनों का दोहन करने वाले विकसित समुदाय उन्हें पिछड़ा हुआ कहते हैं जो ''अपना मौका गँवा बैठे है'' (सुब्बाराव, बी. 1958)।

3. **सापेक्ष वियोजन क्षेत्रः** चूंकि प्रवासियों का प्रमुख समूह उत्तर और उनमें से अधिकांश मध्य एशिया से हिमालय के उत्तर में आते हैं, उनकी तकनीक आर्द्र या नम और उप–आर्द्र स्थितियों के साथ–साथ अत्यधिक शुष्क स्थितियों में, प्रचलित स्थानीय भौगोलिक स्थिति के अनुकूल नहीं थी। इसलिए, एक ओर बंगाल, असम और दूसरी ओर राजस्थान सापेक्ष अलगाव वियोजन क्षेत्र के रूप में है।

गुजरातः सौराष्ट्र, लता, लोथल, रंगपुर और काठियावाड़।
असमः कामरूप
उड़ीसाः गंजम, पुरी, कटक और बालासोर।
केरल

इस प्रकार, सुब्बाराव के अनुसार भारत के सांस्कृतिक मानचित्र में ऊपर वर्णित तीन महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं और उनके बीच कोई विकसित सीमांकित सीमा मौजूद नहीं है। इसके विपरीत, विशेष रूप से औपनिवेशिक शासन और भारत की स्वतंत्रता के दौरान आकर्षण के क्षेत्रों से वियोजन के क्षेत्रों में अतिक्रमण हुए हैं। इन क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधनों, जैव विविधता और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के संदर्भ में समृद्ध संसाधन आधार में महत्वपूर्ण सांस्कृतिक परिवर्तन हुए हैं।

सुब्बाराव ने भारत के सांस्कृतिक स्थान के मानचित्रण में निःसंदेह महत्वपूर्ण योगदान दिया है, उनका शोध मुख्य रूप से पुरातात्विक अनुसंधान द्वारा प्रदान किए गए साक्ष्यों पर आधारित था, यह पूर्व आलेखों के संदर्भ में बहुत समृद्ध और मजबूत है। इसलिए अन्य स्रोतों के माध्यम से उपलब्ध कराए गए नए साक्ष्यों के आधार पर अनुसंधान को दूसरे स्तर पर ले जाने की आवश्यकता थी। इस संबंध में डेविड सोफर का योगदान यहां ध्यान देने योग्य है।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 1

a) सुब्बाराव द्वारा तैयार किए गए भारत के सांस्कृतिक विभाजन की चर्चा कीजिए।
b) मुलजाभासी भौतिकवादियों की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

17.3 सोफर द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक प्रादेशीकरण

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, डेविड सोफर और सुब्बाराव ने दो अलग–अलग दृष्टिकोणों से भारत के सांस्कृतिक परिदृश्य का मानचित्रण करने का प्रयास किया था। सुब्बाराव के अनुसार पुरातात्विक साक्ष्यों से इन क्षेत्रों में अत्यधिक विशिष्ट कौशल के साथ भारत के पूर्व और प्रोटो ऐतिहासिक सांस्कृतिक परिदृश्य का मानचित्रण संभव हुआ तथा संस्कृतियों के विकास में स्थानीय भौगोलिक कारकों के महत्व पर जोर दिया गया है। उनके लिए, अतीत के साक्ष्य भारत की संस्कृतियों के मानचित्रण में महत्वपूर्ण हैं। इसके विपरीत, सोफर के लिए, भारत के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले विभिन्न समुदायों की जीवित संस्कृतियों के रूप में मौजूद सामाजिक तथ्य विशेष रूप से स्वदेशी समुदाय, भारत की सांस्कृतिक विविधता में चित्रांकन के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसके अलावा, सुब्बाराव के विपरीत, उनके लिए भारत का भौगोलिक स्थान (प्रारूप) भारतीय सभ्यता में संस्कृति की अभिव्यक्ति है (सोफर, डी. 1980)। उन्होंने देखा कि भारत में एक जटिल सामाजिक–स्थानिक व्यवस्था है जो औपचारिक नहीं बल्कि कार्यात्मक स्थानों (क्षेत्रों) के संदर्भ में प्रकट होती है जिसमें स्थानिक और कालिक अंतः क्रिया, मौजूद पर्यवेक्षित औपचारिक विभेदन की उत्पत्ति करता है और इसे बरकरार रखता है (सोफर, डी. 1980)। हालांकि, वह मोटे तौर पर भारत में लोगों के ''जेड'' प्रारूप और सुब्बाराव की योजना में भारत के ''मुख्य क्षेत्र'' या आकर्षण के क्षेत्रों या बारहमासी एकल क्षेत्रों में विभाजन से सहमत थे, फिर भी सुब्बाराव के विपरीत जो मुख्य क्षेत्रों की पहचान के लिए पुरातात्विक साक्ष्य पर अधिक निर्भर थे, सोफर ने उसी के लिए ''धार्मिक आंदोलनों का मार्ग, साक्षरता का स्थान, और कलात्मक विकास, प्रौद्योगिकी का प्रसार, लोगों के प्रवास पर जोर दिया। उनके अनुसार, मुख्य क्षेत्र वे हैं जिनमें धार्मिक आंदोलन उत्पन्न होते हैं या मजबूत होते हैं, उत्तेजना होती है, नई बहुमूल्य तकनीक स्थापित होती है, और आर्थिक एवं राजनीतिक क्रिया अधिक केंद्रित और गहन प्रतीत होती है" (सोफर डी. 1980)। इस प्रकार, वह बारहमासी एकल क्षेत्रों के सीमांकन में स्पेट के करीब है जो तकनीकी और आर्थिक रूप से व्यवहार्य हैं, प्रमुख मार्गों में अंतःक्रिया के साथ समुद्री व्यापार की महत्वपूर्ण रेखाओं के अंतस्थ या टर्मिनल पर, विशेष रूप से उत्पादक कृषि भूमि के केंद्र या उन क्षेत्रों में स्थित हैं, जो इन तत्वों का संयोजन करते हैं (सोफर, डी. 1980)।

सोफर के अनुसार, भारतीय सांस्कृतिक परिमंडल की रूपरेखा उत्तर में पर्वत प्राचीर, दक्षिण में हिंद महासागर में भारत की समचतुर्भुज आकृति, मध्य भारत के शुष्क–अर्ध–शुष्क मैदानों और वनाच्छादित पहाड़ियों, धमनी ट्रंक के माध्यम से उत्तरी जलोढ़ मैदानों का एकीकरण जो दक्षिण के पठार पर विभाजित होती हैं, पर्वत श्रृंखलाओं (पूर्वी और पश्चिमी घाट) द्वारा बनाई गई बाधाओं को पार करते हुए और पूर्वी और पश्चिमी तटीय मैदानों तक पहुंचने से भारत के सांस्कृतिक क्षेत्रों को आकार दिया है। पर्वत श्रृंखलाओं तथा विषम पर्यावरणीय परिस्थितियों द्वारा निर्मित बाधाओं जैसे उच्च स्तर की शुष्कता, दलदल, घने वन क्षेत्र, ऊबड़–खाबड़ इलाके और बीहड़ आदि को '' उपेक्षा या उदासीनता के क्षेत्र'' (सोफर, डी. 1980) के रूप में पहचान की जा सकती है। इन दो चरम सीमाओं के बीच में ''एक मध्यवर्ती संस्कृति विभाजन'' है। विभिन्न समय में इस विभाजन ने अद्वितीय नाम तंत्र लिया है, अर्थात, पहली सहस्राब्दी ईसा पूर्व के दौरान बिहार और बंगाल आदि के संबंध में आर्यों और म्लेच्छ के बीच।

इस प्रकार, सांस्कृतिक क्षेत्रों की अपनी योजना में सोफर ने भारत में उत्तर और दक्षिण दो वृहत् खंडो की पहचान की। दोआब और तमिलनाडु क्रमशः परिचलन के उत्तरी और दक्षिणी प्रणाली के सर्वोतम जुड़े हुए (संबद्ध) बिंदु हैं (सोफर, डी. 1980)। दोनों के बीच के विभाजन को ''उत्तर के पंच गौर'' यानी उड़ीसा और बंगाल सहित उत्तरी मैदान के

ब्राह्मणों द्वारा चिह्नित किया गया है। पंच द्रविड़ में महाराष्ट्र और गुजरात के ब्राह्मण शामिल हैं। ये दो नोडीय क्षेत्र गृह प्रकार, गाड़ियां, पोशाक, कृषि प्रणाली जैसे हल, उपजाऊपन और मृदा, तेल प्रेसेस और चावल भूसा उपकरण इत्यादि जैसी शिल्पकृति में भी भिन्न हैं। ये आद्र–शुष्क जलवायु मानावली को भी स्पष्ट करते हैं। उत्तर और दक्षिण की भौतिक संस्कृतियों में इन अंतरों के अतिरिक्त, सोफर ने दोनों के बीच महिलाओं की स्थिति और लिंगानुपात आदि के अंतर को भी चित्रित करने का प्रयास किया है। उत्तर में पुरुषों की संख्या महिलाओं की संख्या से अधिक है, लेकिन उत्तर, उत्तर–पश्चिम से दक्षिण, दक्षिण–पूर्व और उत्तर–पूर्व की ओर बढ़ने पर महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक हो जाती है। इसलिए, उत्तर में दक्षिण की तुलना में अधिक पुरुष हैं।

इसी तरह, भाषा प्रारूप और उसका प्रसार भी उत्तर–दक्षिण विभाजन को दर्शाता है। नर्मदा–छोटा नागपुर रेखा के दक्षिण में द्रविड़ भाषा की प्रधानता के विपरीत उत्तर भारत में भाषाओं की इंडो–आर्यन शाखा की प्रधानता है। इंडो आर्यन भाषा समूह ब्रह्मपुत्र, सूरमा घाटी, सिलहट के मैदानों और चटगांव तटीय मैदानों, छत्तीसगढ़ द्रोणी और तटीय उड़ीसा के उपजाऊ मैदानों में सफलता से प्रसारित हुआ। सोफर ने उल्लेख किया कि मैदानों तथा उत्तर–पश्चिम के पहाड़ों के बीच के भिन्न लिंगानुपात को सामाजिक संस्थानों और क्षेत्रीय पारिस्थितिकी के बीच जटिल संतुलन के माध्यम से समझाया जा सकता है। मैदानी इलाकों में आर्द्र या नम चावल की कृषि में सूखे कृषि और पशुचारण पर आधारित समाजों की तुलना में महिला कार्यबल की अधिक मांग है (सोफर, डी. 1980)। इसके अलावा, वह इन कारकों को ''जनसंख्या में बढ़ती पौरुष प्रवृत्ति के लिए जिम्मेदार ठहराते हैं जो व्यापक रूपरेखा में आर्द्र से सूखे तक भौगोलिक संक्रमण के संरूप है, एक ऐसी समरूपता पत्राचार जिसका महत्व इसके विस्तार के साथ बांग्लादेश और पाकिस्तान में भी बढ़ा है'' (सोफर, डी. 1980)। इसी तरह, वह मुस्लिम और हिंदू बहुल राज्यों और 140 शहरों की धार्मिक संरचना के आधार पर भी लिंग भेद का अनुमान लगाते हैं। उन्होंने उल्लेख किया कि इन राज्यों और शहरों में मुसलमान हिंदुओं की तुलना में अधिक हैं। हालाँकि, धर्म, भाषा और पारिस्थितिकी के संदर्भ में ये अंतर उत्तर–दक्षिण विभाजन की तुलना में कम हैं।

उनके द्वारा बताये गए भारत के सांस्कृतिक भूगोल के अन्य महत्वपूर्ण कारक, सुब्बाराव, ए. एल. बाशम, मोर्टिमर व्हीलर और अन्य द्वारा ''पश्चिमी सीमा से सांस्कृतिक प्रसार'' की भूमिका के बारे में किए गए दावों के समान था (सोफर, डी. 1980)। भारत की उत्तर–पश्चिमी सीमाओं से इंडो–आर्यन संस्कृति की शुरुआत ने भारत के सांस्कृतिक मानचित्र को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनके अनुसार, इसका प्रसार असम घाटी, चिटगाँव तटीय मैदानों और छत्तीसगढ़ के मैदानों तक पहुँच गया तथा द्रविड़ संस्कृति को या तो मध्य भारत की पहाड़ियों या तापी छोटा नागपुर रेखा के दक्षिण तक एवं अन्य गैर इंडो–यूरोपीय भाषाओं को उत्तर–पूर्व की पहाड़ियों तक सीमित कर दिया।

इन व्यापक सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का एक महत्वपूर्ण पहलू इस्लामी प्रभावों के प्रसार से टूट गया है। ''जनसंख्या में मुसलमानों की वर्तमान जनसंख्या और भारत में मुस्लिम शासन की अवधि के बीच एक स्थूल संबंध है, लेकिन उनके अंत हैं'' (सोफर, डी. 1980)। इसके अलावा, समय और स्थान के साथ बड़े पैमाने पर चर्चित दूरी–क्षय प्रतिमान या शक्ति की अवधि के साथ ये सीमाएँ अधिक सरंध्र हैं जिसमें परिधि के साथ उच्च स्तर की पारगम्यता होती है। उत्तर भारतीय दोआब से देश के अन्य भागों में इस्लामी संस्कृति के प्रसार में समान रूप से महत्वपूर्ण एक अन्य पहलु था। लेकिन, भारत में हिंदुओं की एक विशिष्ट पदानुक्रम की तरह, मुसलमानों को भी दो व्यापक

समूहों में विभाजित किया गया था, अर्थात् अशरफ और अजलाफ। पहले समूह ने खुद को महान विदेशी मूल का बताया। उनमें सैय्यदः पैगंबर के वंशज, शेखः पैगंबर के अरब अनुयायियों के बीच के अग्रदूत, मुगलः तुर्क मूल के वंशज और पठानः अफगान मूल के विजेताओं के वंशज शामिल हैं। इसके विपरीत, अजलाफ ज्यादातर हिंदुओं से धर्मांतरित थे और उनकी पहचान राजपूतों, जाटों और तेलियों जैसे उनकी जाति के नामों से की जा सकती है। चूँकि अधिकांश धर्मांतरित निम्न जातियों के थे जो विभिन्न प्रकार के शिल्प कार्यों में लगे हुए थेः हज्जाम (नाई), कसाब (कसाई), जुलाहा (बुनकर) आदि। वे ज्यादातर शहरी केंद्रों में फैले हुए थे, जबकि अशरफ ने कारीगरों को संरक्षण प्रदान करने वाले पड़ोसी शहरी केंद्रों पर पर्याप्त नियंत्रण के साथ जमींदार अभिजात वर्ग का गठन किया था। ।

भारतीय समाज में हिंदू–मुस्लिम सामाजिक संरचना के अतिरिक्त, सोफर ने बताया की जनसख्या में ईसाइयों के अनुपात बढ़ने से, ईसाइयों के नगरीकरण और अन्य आबादी के बीच असमानताएं घट जाती हैं।

अंततः सोफर ने भारत में जाति वितरण प्रारूप को मानचित्रित करने का प्रयास किया। उनका शोध 1931 के जातीय जनगणना में एकत्रित किए गए आँकड़ों पर आधारित था, जो इंगित करता है कि मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में ब्राह्मण, कुल आबादी का 2% से भी कम थी (सोफर, डी. 1980)। उत्तर भारत के मैदानों और पठारों के तिकोने में ब्राह्मणों की बहुलता है, विशेष रूप से गंगा के मैदान के ग्रामीण क्षेत्रों में, लेकिन उत्तर–पश्चिम में पंजाब, दक्षिण में दक्कन ओर पूर्व में बंगाल की ओर स्थिति बदल जाती है (सोफर, डी. 1980)। दक्षिणी किनारा और जिला तंजावुर के अतिरिक्त, ब्राह्मण अधिकांशतः दक्षिण भारत के ग्रामीण इलाकों में हैं। सामान्यतः, ग्रामीण दक्षिण भारत में ब्राह्मणों के पास छोटी जोत होती है, परन्तु कावेरी डेल्टा में उनके पास बड़ी जोत है जहां बड़े पैमाने पर अछूत समुदायों से श्रम शक्ति उपलब्ध है। उत्तर भारत के विपरीत, दक्षिण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में ब्राह्मण अन्य समुदायों से आंशिक रूप से अलग–थलग हैं, इसलिए वे दूसरों द्वारा अनुकरणीय ''संस्कृतिकरण'' के रोल मॉडल अथवा प्रेरणास्रोत के रूप में कार्य करने में विफल रहे (सोफर, डी. 1980)। लेकिन, यह किसी भी तरह से इंगित नहीं करता है कि ब्राह्मणों की सामाजिक स्थिति निम्न है, जैसा कि बंगाल के मत्स्यभोजी ब्राह्मणों तथा गढ़वाल और कुमाऊं के मांसाहारी ब्राह्मणों के मामले में पाया जाता है।

इस प्रकार, पदानुक्रम के शीर्ष पर ब्राह्मण के साथ भारतीय जाति व्यवस्था, उत्तर और दक्षिण भारत के बीच एक ट्रंकलाइन अथवा मुख्य रेखा प्रतिरूप बनाती है। कृषि अर्थव्यवस्था या कृषक समुदाय में जाति व्यवस्था अधिक बरकरार है तथा पशुचारक समुदायों जैसे अहीर, गूजर, यादव और अन्य में कमजोर हो जाती है। अंत में, निष्कर्ष निकालने के लिए, सोफर ने उल्लेख किया कि ''हिंदू धर्म का आंतरिक भूगोल इसी प्रकार के प्रारूप का उदाहरण है, जो दो खंडों उत्तरी और दक्षिणी में पाया जाता है। हिंदू धर्म ने ही भारत को सांस्कृतिक स्थल के रूप में मौलिक परिभाषा प्रदान की है। यद्यपि ''हिंदू धर्म'' शब्द ''भारत के लोगों का धर्म'' है, ''इसकी उत्पत्ति के क्रम को उत्क्रमित किया जाना चाहिए। भारत ''हिंदूडोम'' (सोफर, डी। 1980) है, जो पवित्र चार धाम हिमालय में बद्रीनाथ और केदारनाथ, उड़ीसा तट पर जगन्नाथपुरी, दक्षिण में सीलोन के रास्ते में रामेश्वरम और सौराष्ट्र के पश्चिमी छोर पर द्वारका की स्थायी पवित्रता द्वारा संरक्षित है।

भारत में सांस्कृतिक स्थल की इस व्यापक रूपरेखाओं के भीतर, विशेष रूप से दोहरे क्रोड या मूल क्षेत्रों जैसे उत्तर और दक्षिण के संबंध में, सरंध्र परिधि, ट्रंकलाइन अथवा

मुख्य रेखा, भारत के तटवर्ती क्षेत्रों विशेष रूप से मालाबार, कोंकण और सौराष्ट्र तट भी भारत में विभिन्न धर्मों और धर्मों यानी यहूदियों, ईसाइयों, मुसलमानों, पारसी और अन्य को आप्रवासन का अवसर प्रदान करने के लिए सरंध्र परिधि का कार्य कर रहा है। इनमें से अधिकांश अलग–अलग समय पर व्यापारियों, मिशनरियों या खोजकर्ताओं या यहां तक कि आक्रमणकारियों के रूप में आए और भारत के सांस्कृतिक मानचित्र पर अपनी छाप छोड़ी। यद्यपि ये सांस्कृतिक मानचित्र को बदलने में समर्थ नहीं थे, फिर भी वे उत्तर–दक्षिण भारत से समुद्र के बाहर की ओर भारत और इसकी संस्कृति–अर्थव्यवस्था के उन्मुखीकरण में बदलाव लाने के लिए पर्याप्त थे। कलकत्ता (कोलकाता), मद्रास (चेन्नई) और बॉम्बे (मुंबई) जैसे महानगरीय चौकियों की स्थापना के द्वारा इनको सुविधा प्रदान की गई थी। इसलिए स्वतंत्रता पश्चात के भारत में हिंदी हृदयभूमि और पश्चिम–पूर्व विभाजन मुंबई और कलकत्ता दो मुख्य क्षेत्रों के रूप में उभर रहा है। इसके अतिरिक्त, स्वेज नहर के खुलने से पश्चिमी तट और विशेष रूप से बॉम्बे का महत्व बढ़ गया, जिसे स्वतंत्र भारत में नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। परिणामस्वरूप, मुंबई गेटवे टू इंडिया के रूप में उभरा और आर्थिक स्थल और काफी हद तक आधुनिक मुद्रण और मनोरंजन संस्कृति जिसे ''बॉलीवुड'' के रूप में महत्वपूर्ण माना जाता है।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 2

a) डेविड सोफर द्वारा दिए गए भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रादेशीकरण के आधार पर संक्षेप में चर्चा करें।

b) इसके गुणों और अवगुणों पर भी प्रकाश डालिए।

17.4 सारांश

इस इकाई में अब तक आपने पढ़ा है:

- भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन के बारे में संक्षिप्त अध्ययन किया।
- विविध उद्देश्यों के लिए सामाजिक–सांस्कृतिक प्रादेशीकरण की आवश्यकता और महत्व के साथ भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के सीमांकन के लिए विभिन्न योजनाओं का अध्ययन किया।
- डेविड सोफर की सामाजिक–सांस्कृतिक प्रादेशीकरण की योजनाओं का विस्तृत विवरण प्राप्त किया।

17.5 अंतिम प्रश्न

1. सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के महत्व पर चर्चा करें।
2. भारत में सामाजिक–सांस्कृतिक स्थल (स्थानों) के बाह्य प्रतिरूप (छवि) और कल्पनाओं पर चर्चा करें।
3. सुब्बाराव और सोफर नामक दो प्रख्यात विद्वानों द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के सीमांकन के आधार के बीच अंतर पर प्रकाश डालें।

17.6 उत्तर

स्व–मूल्यांकन प्रश्न

1. a) यह आर. पी. दत्त और भगत के विचारों या दृष्टिकोणों को संदर्भित करता है जिन्होंने मानव जाति के इतिहास में एक सामान्य सूत्र की पहचान करने की कोशिश की और यह माना कि वर्ग संघर्ष सभी जगह इतिहास का प्रवर्तक या प्रेरक शक्ति रहा है तथा भारत कोई अपवाद नहीं है। अनुभाग 17.2 का संदर्भ लें।

   b) सुब्बाराव ने भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों को तीन घटकों के आधार पर विभाजित किया। ये आकर्षण के क्षेत्र हैं, वियोजन के क्षेत्र और अंत में सापेक्ष वियोजन के क्षेत्र हैं। अनुभाग 17.2 का संदर्भ लें।

2. a) भारत को सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों में विभाजित करने के प्रमुख आधारों में भारत के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले विभिन्न समुदायों की जीवित संस्कृतियों के रूप में मौजूद सामाजिक तथ्य शामिल हैं। यह विशेष रूप से स्वदेशी समुदायों को संदर्भित करता है जो भारत की सांस्कृतिक विविधता के चित्रांकन का आधार प्रदान करते हैं। अनुभाग 17.3 का संदर्भ लें।

   b) सोफर के सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमन के गुणों और अवगुणों पर संक्षेप में प्रकाश डालिए। अनुभाग 17.2 का संदर्भ लें।

अंतिम प्रश्न

1. उपयुक्त उदाहरणों के साथ सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमनों और प्रदेशों के महत्व को संक्षेप में वर्णित करें। अनुभाग 17.2 का संदर्भ लें।
2. इस प्रश्न का उत्तर देते समय, विदेशगत या विदेशज, प्रबंधकीय और संरक्षकीय प्रतिरूपों या छवियों का वर्णन करके भारत की बाह्य प्रतिरूप या छवि पर चर्चा करें। अनुभाग 17.2 का संदर्भ लें।
3. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, दो विद्वानों द्वारा अपनाए गए आधारों के बीच के अंतरों को संक्षेप में वर्णित करें। अनुभाग 17.3 का संदर्भ लें।

17.7 संदर्भ और अन्य पाठ्य सामग्री

1. Kipling Rudyard (1889): The Ballad East and West, Pioneer, December 2nd.

2. Subbarao Bendapudi (1958): The Personality of India: Pre and Proto-Historic Foundations of India and Pakistan; Faculty of Arts, Maharaja Sayajirao University of Baroda, Baroda.

3. Sopher David (1980): An Exploration of India: Geographical Perspective on Society and Culture, Cornel University Itaka.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 18

आर्थिक उपगमन

संरचना

18.1 प्रस्तावना
अपेक्षित सीखने के परिणाम
18.2 आर्थिक प्रदेशों का संक्षिप्त विवरण
18.3 भारत के आर्थिक प्रादेशीकरण की योजनाएं
18.4 भारत के आर्थिक प्रदेश
18.5 सारांश
18.6 अंतिम प्रश्न
18.7 उत्तर
18.8 संदर्भ/अन्य पाठ्य सामग्री

18.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों 16 और 17 में, आपने विभिन्न प्रतिष्ठित विद्वानों द्वारा प्रतिपादित भूआकृतिक प्रदेशों और सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के साथ–साथ उनकी प्रादेशीकरण की योजनाओं के बारे में सीखा है। आप मानव और भौतिक पर्यावरण के बीच होने वाली परस्पर क्रिया के लिए भू–आकृतिक और सामाजिक–सांस्कृतिक प्रदेशों के महत्व को समझ चुके हैं। खंड 5 की यह अंतिम इकाई 18 भारत के भूगोल के आर्थिक उपगमन के अध्ययन के लिए समर्पित है। आप अर्थव्यवस्था, समाज और राष्ट्र की वृद्धि और विकास के लिए भारत के आर्थिक प्रदेशों के महत्व को जानेंगे और समझेंगे।

इस इकाई में हम प्रख्यात विद्वानों द्वारा तैयार किए गए कुछ महत्वपूर्ण आर्थिक उपगमनों के बारे में चर्चा करेंगे। हम अनुभाग 18.2 में आर्थिक प्रदेशों को परिभाषित करने और उनकी पहचान करने के लिए उपयोग की जाने वाली विभिन्न अवधारणाओं पर संक्षेप में चर्चा करके इकाई की शुरुआत करेंगे। फिर, हम अनुभाग 18.3 में विभिन्न प्रकार के आर्थिक प्रदेशों और प्रादेशीकरण की योजनाओं से जुड़े असंख्य पहलुओं का वर्णन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आपको भारत के आर्थिक प्रदेशों और उनके महत्व की पहचान करने के लिए उपयोग किए जाने वाले विभिन्न उपगमनों को समझने में मदद मिलेगी।

अपेक्षित सीखने के परिणाम

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आपः

- आर्थिक प्रदेशों को समझ सकेंगे;
- भारत के आर्थिक प्रदेशों की योजनाओं को समझ सकेंगे; एवं
- आर्थिक प्रदेशों के महत्व को पहचान सकेंगे।

18.2 भारतः आर्थिक प्रदेशों का संक्षिप्त विवरण

भारत के आर्थिक उपगमन का अध्ययन करने से पहले, हम उन कारकों की संक्षिप्त पृष्ठभूमि पर चर्चा करेंगे जो आर्थिक प्रदेशों को आकार देने में मदद करते हैं। यह आपको मानव समुदायों, समाज और राष्ट्र के समग्र विकास के लिए आर्थिक प्रदेशों के महत्व को समझने और उनकी सराहना करने में मदद करेगा।

कहा जाता है कि भारत एक कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है, जो बड़े पैमाने पर अपने प्राकृतिक संसाधनों यानी भूमि, जल और पशु और मानव संसाधनों की बड़ी मात्रा को नियोजित करती है और इसका पारंपरिक ज्ञान, आनुवंशिक संसाधनों और स्वदेशी प्रौद्योगिकियों के उपयोग में लगभग एकाधिकार है। भारत के भौगोलिक स्थान की विशालता के कारण, यह अपनी कृषि के पर्यावरणीय निर्धारकों के संदर्भ में भारी विविधताओं से संपन्न है। देश के अधिकांश हिस्सों में अपेक्षाकृत लंबे समय तक फसलों को उगाने के मौसम के साथ–साथ और जानवरों को पालतू बनाने, भोजन की आदतों, पोशाकों, कर्मकांडों और रिवाजों के सन्दर्भ में इसमें समान रूप से उच्च स्तर की सामाजिक–सांस्कृतिक बहुलताएं हैं। इस प्रकार, यह स्वाभाविक है कि इसकी मुख्य रूप से कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था अपनी पर्यावरणीय विशेषताओं और सांस्कृतिक मोज़ेक की बहुलता में विविधता के विभिन्न रंगों का प्रतीक है। हालाँकि, यह निष्कर्ष निकालना अति सामान्यीकरण होगा कि भारतीय कृषि एक अविभाजित आर्थिक स्थान का गठन करती है। इसके विपरीत, भारतीय कृषि ने हमेशा उद्योग और अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों यानी व्यापार, परिवहन और सेवाओं के साथ–साथ आधुनिक चतुर्थ और पंचक क्षेत्रों विशेष रूप से सूचना प्रौद्योगिकी के साथ एक मजबूत अंतराफलक या अंतरापृष्ठ बनाए रखा है।

भारत बंगाल की खाड़ी में द्वीपों में सदाबहार भूमध्यरेखीय बायोम से लेकर पश्चिम में थार मरूस्थल में शुष्क परिस्थितियों, हिमालय में उच्चपर्वतीय वनस्पतियों तक, चरम उत्तर में लद्दाख में ठंडे मरूस्थल की स्थिति सहित, अपनी भौगोलिक स्थिति का लाभ उठा रहा है। भारत का भौगोलिक स्थान समृद्ध प्राकृतिक विविधता से संपन्न है। इसकी समृद्ध पर्यावरणीय निधि की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताएँ आर्द्र जलवायु और उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी हैं जो निचले गंगा के मैदानों में चावल आधारित खाद्य प्रसंस्करण उद्योग और कपास रेशा प्रसंस्करण उद्योगों के साथ मजबूत अंतराफलक या अंतरापृष्ठ के साथ धान और जूट की खेती के लिए अनुकूल पर्यावरणीय स्थिति प्रदान करती हैं। गंगा के निचले मैदानों और विशेष रूप से बंगाल डेल्टा कभी अपने जूट उत्पादन और जूट उद्योग के लिए दुनिया भर में प्रसिद्ध था। इसी तरह, उत्तर और उत्तर–पश्चिमी भारत के उपजाऊ मैदान जलवायु के साथ उप–आर्द्र से अर्ध–शुष्क परिस्थितियों में भिन्न होते हैं और अच्छी तरह से विकसित नहर और नलकूप आधारित सिंचाई प्रणालियों से संपन्न होते हैं, जो गेहूं और गन्ने की खेती, और चीनी उद्योग के साथ–साथ सूती और ऊनी वस्त्र उद्योग का पारंपरिक गढ़ रहा है। इसके अलावा, मध्य और पश्चिमी भारत की काली मिट्टी के क्षेत्र जहां मध्यम वर्षा 75 से 100 सेंटीमीटर (से.मी.) के बीच होती है, वह

कपास की खेती और कपास उद्योगों के लिए जानी जाती है। उत्तर–बंगाल में पुरानी जलोढ़ मिट्टी, पूर्वोत्तर में ब्रह्मपुत्र और सूरमा घाटियों में मध्यम से उच्च वर्षा और ठंढ से मुक्त सर्दियों के महीनों ने चाय बागानों और चाय प्रसंस्करण उद्योग के विकास में योगदान दिया है। इसी प्रकार, प्रायद्वीपीय भारत के तटवर्ती क्षेत्रों ने नारियल, रबड़, केला और कसावा बागानों और संबंधित उद्योगों के लिए उपयुक्त पर्यावरणीय परिस्थितियाँ प्रदान की हैं।

पर्वत और पहाड़ियाँ गंभीर सर्दियों से लेकर मध्यम गर्मी के मौसम और सुरम्य प्राकृतिक विन्यास से संपन्न हैं। इस प्रकार, ये बागवानी, पर्यटन, फल प्रसंस्करण और लकड़ी और पशु–फाइबर आधारित शिल्प और उद्योगों के विकास के लिए आदर्श वातावरण प्रदान करते हैं। गंभीर गर्मी और कम वर्षा वाले पश्चिमी शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्र पशुपालन और विदेशी पर्यटन के साथ–साथ चट्टान या पत्थर उत्खनन के लिए आदर्श वातावरण प्रदान करते हैं। बड़े दक्कन के पठार के भीतर विभिन्न पठारों वाले विशाल क्षेत्र खनिज संसाधनों के मामले में समृद्ध हैं। ये खनिज आधारित भारी उद्योगों और औद्योगिक परिसरों के विकास में विशेषज्ञता प्राप्त कर चुके हैं। उत्तर और उत्तर–पूर्वी भारत में विस्तृत सीमावर्ती भूमि में खेती के लिए सीमित भूमि और फसलों को उगाने के छोटे मौसम के साथ–साथ कठोर पर्यावरणीय बाधाएँ हैं। यहां, कई समुदायों ने मिश्रित कृषि पद्धतियों को अपनाकर खुद को अनुकूलित किया है, यानी व्यापक निर्वाह कृषि के साथ पशुचारण, शिकार, एकत्रीकरण और उत्खनन को संयुक्त करके। उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में, स्थानान्तरी कृषि (स्लैश और बर्न स्थानांतरण कृषि का एक रूप) विशेष रूप से अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम, मेघालय और असम और त्रिपुरा के पहाड़ी जिलों में निर्वाह खेती का प्रमुख तरीका है। इन सीमावर्ती क्षेत्रों में समृद्ध जैव विविधता के साथ–साथ समान रूप से विविध और लचीली सामाजिक–सांस्कृतिक परंपराओं ने कृषि और वन संसाधनों पर आधारित पारंपरिक हस्तशिल्प के रूप में पारंपरिक कौशल और ज्ञान प्रणाली के संरक्षण को भी देखा है। असम के मेखला चादोर, नागा, मिज़ो, मणिपुरी और कार्बी शॉल, मणिपुरी रजाई, खासी चाकू और लोहे के औजारों के साथ–साथ कई हस्तशिल्प संबंधित कुछ प्रसिद्ध कलाकृतियाँ हैं जो इन क्षेत्रों की संस्कृति–अर्थव्यवस्था–पर्यावरण संश्लेषण को दर्शाती हैं। यह काफी हद तक उनकी समृद्ध सामाजिक–सांस्कृतिक विरासत और जैव विविधता के कारण है कि ये क्षेत्र विरासत, पर्यावरण–पर्यटन, साहसिक और सांस्कृतिक पर्यटन जैसे पर्यटन के लिए पसंदीदा स्थलों के रूप में उभरे हैं। इसके परिणामस्वरूप होटल और अन्य पर्यटन संबंधी उद्योगों का विकास हुआ है। इसके अलावा, हिमालय के हिमनदीयों से निकल कर तेज बहने वाली बारहमासी धाराएं और नदियां भी समृद्ध अक्षय ऊर्जा संसाधनों का आधार प्रदान करती हैं। बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का विकास जैसे भाखड़ा–नंगल, रंजीत सागर, टिहरी बांध, तिस्ता पर बांध, कामेंग और सुबनसिरी आदि संसाधन विकास के कुछ महत्वपूर्ण पहलू हैं। इन प्राकृतिक लाभों के अभाव में, मध्य और दक्षिण भारत की पहाड़ियों और पठारों में बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का विकास हुआ है जो ऊर्जा की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए नदियों पर बांध बनाकर विकसित की गई हैं। कुछ महत्वपूर्ण बहुउद्देशीय जलविद्युत परियोजनाओं में दामोदर घाटी परियोजनाएँ, अलमट्टी बांध, चंबल नदी घाटी परियोजना, नागार्जुन सागर, जयकवाड़ी बांध और हीराकुंड परियोजना आदि शामिल हैं।

पूर्वगामी चर्चा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 1947 से पहले दो सौ साल से अधिक समय तक उपनिवेश रहे भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था और समाज के लगभग सभी क्षेत्रों में शानदार विकास किया है। हालाँकि, प्राकृतिक और मानव संसाधनों के मामले में इसके पास समृद्ध अक्षय निधि या बंदोबस्ती को देखते हुए, इसे शायद ही संतोषजनक कहा जा सकता है। विद्वानों ने भारत के आर्थिक विकास के प्रक्षेप–पथ पर चर्चा की है और इसके अभावग्रस्त परिणामों के कुछ कारणों की पहचान की है:

1. औपनिवेशिक बाधाएं।
2. संतुलन विकास, वितरणात्मक न्याय और संतुलित प्रादेशिक विकास।
3. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकृत विकास के विकल्प–भविष्य के लिये विकल्प।
4. प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण में विकल्प/विकल्प की अनिवार्यता।

1. **औपनिवेशिक बाधाएं:** भारत के कुछ प्रमुख राष्ट्रवादियों के अनुसार, भारत के उपनिवेशवाद के कारण इसके मेहनतकश लोगों का निर्मम शोषण और धन की निकासी भारत में व्याप्त गरीबी के मुख्य कारण थे। शोषण और वर्चस्व केवल आर्थिक और सामाजिक–राजनीतिक पहलुओं तक ही सीमित नहीं था। इसके विपरीत, प्रत्यक्ष उत्पादकों और उपभोक्ताओं के बीच मध्यस्थल या बिचौलियों के पदानुक्रम को बढ़ाने के मामले में उपनिवेशवादियों ने भारत की अर्थव्यवस्था में बड़े पैमाने पर विकृतियां भी पेश कीं। अक्सर, उत्पादक उपभोक्ता भी होते थे लेकिन बिचौलियों के बड़े वर्ग की मध्यस्थता के बाद ही। सोवियत आर्थिक इतिहासकार लेवकोवास्की के अनुसार, महाराष्ट्र के कपास उत्पादों और मैनचेस्टर–लंकाशायर में कारखाने के बीच लगभग 26 मध्यस्थल या बिचौलिए एकतरफा थे और यही मामला तब था जब तैयार उत्पाद महाराष्ट्र में कपास उत्पादकों तक पहुंचा। अन्य वस्तुओं के मामले में स्थिति बहुत अलग नहीं थी। मध्यस्थल या बिचौलियों के ये पदानुक्रम न केवल शोषक तंत्र के मूल का निर्माण करते थे, बल्कि वे स्वदेशी उद्योगों और कौशल के विनाश के लिए, कानून और व्यवस्था बनाए रखने और तृतीयक क्षेत्रों के रूप में प्रशासन के लिए वफादारों की सेना को बढ़ाकर भारत पर पकड़ मजबूत करने के लिए प्रशासनिक ढांचे में भी गहराई से अंतर्निहित थे। फ्रैंक, अमीन, लैक्लाऊ, हमज़ा अल्लावी और रणजीत एस. एयू. आदि जैसे निर्भरता स्कूल के विद्वानों के अनुसार इस तरह के विकास ने भारत को अविकसितता के मार्ग पर रखा। यह अत्यधिक विशिष्ट निर्यात उन्मुख वृक्षारोपण कृषि, विशिष्ट रूप से गैर–मौजूद या कमजोर विनिर्माण/माध्यमिक क्षेत्र और अपेक्षाकृत मजबूत तृतीयक क्षेत्र के साथ निर्धारित निर्वाह कृषि की प्रबलता की विशेषता थी। इन औपनिवेशिक नीतियों के कुछ महत्वपूर्ण प्रतिकूल प्रभाव थे, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में अपने उद्यमी वर्गों और श्रमिकों का गैर–औद्योगीकरण, गैर–नगरीकरण और अकुशलता और ग्रामीण क्षेत्रों में अनुपस्थित–जमींदार–किरायाजीवी वर्गों और भूमिहीन कृषि श्रमिकों को बढ़ावा देना इत्यादि। ये विकृतियां स्वतंत्र भारत में औपनिवेशिक विरासत की वसीयत बन गईं जिसने बदले में समाज और अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण में कई बाधाएं पैदा की।

2. **संतुलित प्रादेशिक विकास, वृद्धि और वितरणात्मक न्याय:** भारत में औपनिवेशिक शासन के प्रतिकूल प्रभावों पर कोई संदेह नहीं है और विद्वानों ने इन नतीजों को

सामने लाने में बहुमूल्य योगदान दिया है। मूनिस रज़ा और बुधायन चट्टोपाध्याय और इरफ़ान हबीब आदि ने उपनिवेशवादियों द्वारा बनाए गए प्रादेशिक असंतुलन की प्रकृति और परिमाण पर प्रकाश डाला। उनके अनुसार, बंबई, कलकत्ता और मद्रास जैसे बंदरगाह कस्बों/शहरों में विकसित महानगरीय बाहरी–पोस्ट थे, जो विश्व बाजार में मजबूत अगले संपर्क और भीतरी इलाकों में कमजोर पिछड़े संपर्क के साथ थे। ये देश के भीतर कपास, जूट, गन्ना–चीनी, चाय, लौह अयस्क, कोयला, पेट्रोलियम के कच्चे माल के उत्पादक क्षेत्रों से सीधे जुड़े हुए थे, इन सीमांत लाभों के अलावा, भीतरी इलाकों और शेष अर्थव्यवस्था के साथ उनके पिछड़े संबंध स्पष्ट रूप से अनुपस्थित थे।

इन विकृतियों को दूर करने का कार्य निश्चित रूप से एक समय लेने वाली अभ्यास या कवायद थी, लेकिन, एक बार जब ये विकास की अन्य अनिवार्यताओं जैसे कि सामाजिक वितरण न्याय और प्रादेशिक संतुलन के साथ विकास को प्राप्त कर लेते हैं, तो यह कार्य उस चीज़ से अधिक कठिन हो जाता है जिसे आसानी से समझा जा सकता है। इसके अलावा, यह एक सर्वविदित तथ्य है कि भारत में प्रचलित बहिष्करण और पदानुक्रमित आर्थिक और सामाजिक स्थान सदियों से जीवित हैं और आश्चर्यजनक रूप से बाहरी प्रभावों के माध्यम से भी इसे और समेकित किया गया है। नतीजतन, प्रगति के लाभों को हमेशा विशाल बहुमत की कीमत पर एक छोटे से अल्पसंख्यक द्वारा छीन लिया गया, जिसने बदले में कुछ सामाजिक वर्गों/समूहों और सामाजिक–आर्थिक गरीबी, बहिष्करण और हाशिए के क्षेत्रों के विशाल महासागरों से घिरे क्षेत्रों में समृद्धि पैदा की।

3. **लोकतांत्रिक और विकेंद्रीकृत शासन का चुनावः** यह पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि भारत की स्वतंत्रता विश्व इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ के रूप में चिह्नित थी। यह द्वितीय विश्व युद्ध का अंत था, निरंकुश और फासीवादी ताकतों की हार, सदियों पुराने औपनिवेशिक प्रभुत्व से उपनिवेशों की मुक्ति से प्रभुता राष्ट्र राज्यों का उदय हुआ और न केवल आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए बल्कि भविष्य में एक और वैश्विक युद्ध के खिलाफ एक प्रभावी रणनीति के रूप में विकास के एक व्यवहार्य प्रतिमान या नमूने के रूप में योजना बनाई गई। पश्चिमी लोकतंत्रों द्वारा मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था का एक समय–परीक्षणित मार्ग अपनाया जा रहा था, जिसमें कच्चे माल और उच्च लाभ के रास्ते की तलाश में बाजार के लिए भयंकर प्रतिस्पर्धा के साथ अप्रतिबंधित व्यक्तिगत स्वतंत्रता की विशेषता थी। भारत अपनी खराब प्रतिस्पर्धा के साथ इस कठिन रास्ते पर जाने का जोखिम नहीं उठा सकता था। इसके विपरीत, यह इस रास्ते के नुकसान से अच्छी तरह वाकिफ था और अपनी संप्रभुता और राष्ट्रीय स्वतंत्रता को बनाए रखने में फिलीपींस जैसे देशों के समृद्ध अनुभवों से लाभान्वित हुआ। यह एक ज्ञात तथ्य है कि फिलीपींस को पांच बार आजादी मिलने का दुर्भाग्य मिला और इसे छह बार गंवाना पड़ा। इसके अलावा, विश्व शांति स्थापित करने के लिए पंच–शील के सिद्धांतों के प्रति भारत की प्रतिबद्धता ने इस रास्ते पर चलना मुश्किल बना दिया जहां आर्थिक प्रतिस्पर्धा राजनीतिक और प्रतिद्वंद्विता अंततः युद्धों की ओर ले जाती है।

भारत के लिए उपलब्ध दूसरा विकल्प सोवियत संघ के केंद्रीकृत योजना प्रतिमान या नमूने का पालन करना था। लोकतंत्र की कमी, सत्ता के केंद्रीकरण और नए उद्यमियों के लिए सीमित प्रोत्साहन ने भी भारत के लिए इस रास्ते पर चलना मुश्किल बना दिया। नतीजतन, भारत ने अपने विकल्पों का मूल्यांकन किया और प्रमुख राज्य क्षेत्र और मुक्त निजी उद्यमियों के बीच साझेदारी के निर्माण की विशेषता वाले लोकतांत्रिक शासन का एक प्रतिमान या नमूना अपनाया, जिसे लोकप्रिय रूप से विकास के मिश्रित–अर्थव्यवस्था प्रतिमान या नमूने के रूप में जाना जाता था। अन्य बातों के अलावा, यह प्रतिमान या नमूना मुक्त–बाजार अर्थव्यवस्था के लिए भी महत्वपूर्ण था, जिसमें विकल्पों के एक समग्र निर्वात के भीतर कई विकल्प थे। इसी तरह, इसने केंद्रीकृत योजना की भी आलोचना की और चुनाव और विकल्प दोनों के संदर्भ में अपने कुल निर्वात के लिए एक पर्याय प्रदान किया। यह मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था और केंद्रीकृत योजना के बीच नहीं बल्कि ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर की योजना के बीच या प्रतिनिधित्व और जमीनी स्तर की लोकतांत्रिक योजना के बीच विकल्प खोजने की वकालत का एक प्रतिमान या नमूना था।

4. **विकास के लिए प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण में चुनाव बनाम विकल्प की अनिवार्यता:** यह पहले उल्लेख किया गया है कि भारत के उपनिवेशीकरण के दूरगामी परिणाम थे। इनमें से एक था अपनी कामकाजी आबादी का डी–स्किलिंग और नए नवाचारों के लिए जोखिम लेने के लिए उद्यमियों के बीच साहस की कमी, इस प्रकार, यह आयातित प्रौद्योगिकियों पर उनकी कुल निर्भरता को बढाती है, जोकि एक अत्यधिक भेदभावपूर्ण एकाधिकार बाजार में ज्यादातर पुरानी अथवा अप्रचलित पद्धति थी। इस प्रकार, विश्व बाजार में एक आश्रित भागीदार के रूप में, भारत के लिए बेहतर विकल्पों के द्वार हमेशा बंद रहे। इसलिए, इसे कम पुरानी और अप्रचलित प्रौद्योगिकियों में से चुनना पड़ा। इसके अलावा, भारत में विविध पर्यावरण और सांस्कृतिक बहुलताओं के लिए दी गई प्रौद्योगिकियों की उपयुक्तता के बारे में चिंताओं की कमी के कारण आयातित प्रौद्योगिकियों से वापसी प्राप्त करने में भी कठिनाई हुई।

इन सभी कारकों के संचयी प्रभावों का परिणाम न केवल विकसित देशों पर भारत की निर्भरता के बंधन को मजबूत करने में, विश्व बाजार के दबाव और खिचाव के प्रति संवेदनशील और तकनीकी नवाचारों के क्षेत्र में पिछड़ेपन में, बल्कि अस्पष्ट आर्थिक स्थान के उद्भव में भी हुआ। यह मुख्य रूप से इन अवसरों और सीमाओं की पृष्ठभूमि में है कि विद्वानों और संस्थानों ने भारत के आर्थिक क्षेत्रों को चित्रित करने का प्रयास किया है। आर्थिक प्रादेशीकरण की कुछ प्रसिद्ध योजनाएँ भारत के योजना आयोग, डैनियल थॉर्नर, पी सेनगुप्ता और गैलिना सदास्युक, अशोक मित्रा, राष्ट्रीय सामाजिक सर्वेक्षण ब्यूरो, भूमि उपयोग योजना और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद आदि द्वारा विकसित की गई हैं। हालांकि, वर्तमान अध्ययन के प्रयोजन के लिए केवल दो अध्ययनों पर कुछ विस्तार से चर्चा की गई है।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 1

औपनिवेशिक बाधाओं के बारे में संक्षेप में चर्चा करें।

18.3 भारत के आर्थिक प्रादेशीकरण की योजनाएं

कई विद्वानों ने भारत के आर्थिक प्रदेशों को परिभाषित करने के लिए कई उपगमन प्रतिपादित किए हैं। हम आपको भारत के आर्थिक प्रदेशों को परिभाषित करने के लिए उपयोग किए जाने वाले मानदंडों की सराहना करने के लिए एक स्पष्ट विचार प्रदान करने के लिए महत्वपूर्ण उपगमनों पर चर्चा करेंगे। यह आपको पिछली दो योजनाओं की बेहतर सराहना करने में भी मदद करेगा जो अध्ययन के तहत प्रदेश की विशिष्टता और बाधाओं के अनुसार विभिन्न प्रकार की आर्थिक गतिविधियों को लागू करने के लिए पृष्ठभूमि प्रदान करती है।

1. अशोक मित्रा

अशोक मित्रा, भारतीय सिविल सेवा (आईसीएस) के अंतिम सदस्यों में से एक, रजिस्ट्रार जनरल और जनगणना आयुक्त, भारत सरकार 1961, एक प्रतिष्ठित आलोचक, एक प्रसिद्ध जनसांख्यिकी और सामाजिक वैज्ञानिक, उन अग्रदूतों में से थे जिन्होंने भारत के आर्थिक प्रादेशीकरण की एक योजना तैयार की थी। अपने समृद्ध प्रशासनिक अनुभवों के आधार पर और भारत के जनगणना आयुक्त के रूप में जिला स्तर पर उपलब्ध समृद्ध और विविध सूचनाओं तक उनकी सीधी और प्रत्यक्ष पहुंच थी। लेकिन, राज्य और उसकी संस्थाओं द्वारा उत्पन्न आंकड़ों और तथ्यों के साथ उनके अति जुनून और प्राकृतिक विशेषताओं की विविधता के लिए उत्साह की कमी ने उनके प्रादेशीकरण के अभ्यास को सामाजिक तथ्यों, प्रशासनिक तर्कसंगतता और भौतिक सुविधाओं की कीमत पर जटिल सामाजिक विशेषताओं के मानकीकरण के लिए सरल सांख्यिकीय तकनीकों को लागू करने में सुविधा के पक्ष में एकतरफा बना दिया है। ये भारत के आर्थिक प्रदेशों की उनकी योजना में भी परिलक्षित होते थे, जिसे उन्होंने निम्नलिखित मान्यताओं के आधार पर पंचवर्षीय योजना के तहत भारत के नियोजित विकास की सफलता की कुंजी माना:

1. प्राकृतिक प्रदेशों ने लंबे समय तक भारत के जीवन, विचार और गतिविधियों में विविधता और विशिष्टता पैदा की है।

2. भारतीय योजनाओं का उद्देश्य इन प्राकृतिक कारकों के प्रभावों को समतल करना होना चाहिए जो देश को प्राकृतिक प्रदेशों और उप–प्रदेशों में विभाजित करते हैं और सांस्कृतिक और आर्थिक संगठनों की एक विशाल विविधता को आश्रय देते हैं।

3 भारत द्वंद्वात्मक प्रक्रियाओं की एक दिलचस्प अंतःक्रिया देख रहा है। कुछ सामाजिक और आर्थिक ताकतें हैं जो एकता चाहती हैं लेकिन उन्हें प्राकृतिक प्रदेशों, उप–प्रदेशों, आर्थिक स्थितियों, संस्कृतियों और भाषाओं आदि की विविधता से निपटना पड़ता है।

4. प्राकृतिक प्रदेशों की योजना पर फिर से काम करने की तत्काल आवश्यकता है।

5. जिला प्रदेशों की पहचान करने की आदर्श इकाई हैं क्योंकि विविधता का स्तर जिला स्तर पर आर्थिक और प्रशासनिक एकता की मजबूरियों के अधीन है।

6. सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक उपलब्धियों के चरणों जैसी अतिरिक्त विशेषताओं के आधार पर प्राकृतिक प्रदेशों को वर्गीकृत करने के लिए क्रमविन्यास पद्धति सबसे आदर्श है।

7. जिलों के पुनर्वर्गीकरण द्वारा न्यायोचित क्रमविन्यास विधियों की ताकत आर्थिक और सामाजिक विकास के संदर्भ में बन्धुतव के आधार पर और प्राकृतिक विशेषताओं के संदर्भ में साधारण रूप से समानता के आधार पर रही है।

8. विशिष्टताओं को समायोजित करने के लिए पर्याप्त गुंजाइश छोड़ते हुए योजना गतिशील होनी चाहिए।

9. उन्होंने पदानुक्रम के बजाय क्रमविन्यास अथवा रैंकिंग का समर्थन किया क्योंकि पूर्व वाली पद्धति बाद की कठोर पद्धति की तुलना में गतिशील है। इसलिए, उनकी प्रादेशीकरण की योजना को **'प्रादेशिक विकास का स्तर'** भी कहा जाता है।

इन मान्यताओं के आधार पर, अशोक मित्रा ने संकेतकों के समूहों का क्रमविन्यास करके भारत के आर्थिक प्रादेशीकरण की एक योजना विकसित की, जिसे उन्होंने जिला स्तर पर संकेतकों के खण्ड के रूप में नामित किया:

खण्ड – I सामान्य पारिस्थितिकी: इस खण्ड के भीतर शामिल संकेतक आगे उप–समूहित थे:

a. **भूवैज्ञानिक विशेषताएं, स्थलाकृति:** भौतिक विशेषताएं, नदियां और धाराएं, अपवाह तंत्र और ढलान, ऊंचाई सीमा: अधिकतम और न्यूनतम वर्षा, घर–प्रकार: दीवार और छत सामग्री द्वारा भवनों के प्रकार, भाषा: संख्यात्मक रूप से प्रमुख भाषा; कुल जनसंख्या का नाम और प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति: प्रमुख अनुसूचित जनजातियों के नाम और संख्या जहां प्रत्येक की संख्या 10,000 से अधिक है और अनुसूचित जाति।

b. **मिट्टी:** स्थानीय नाम और मिट्टी के प्रकार और राजस्व की घटनाएं, फसलें: प्रत्येक फसल के अंतर्गत क्षेत्र के प्रतिशत (%) के साथ खाद्य फसलें सकल फसल क्षेत्र (जी सी ए) के 5% और उससे अधिक तक सीमित हैं, प्रत्येक फसल के अंतर्गत क्षेत्र के प्रतिशत (%) के साथ नगदी फसलें जी सी ए के 5% और उससे अधिक तक सीमित हैं, मनों में प्रति मानक एकड़ स्वच्छ चावल की उपज।

खण्ड – II कृषि अवसंरचना

a. शुद्ध बुवाई क्षेत्र के प्रतिशत के रूप में दोहरी फसल के तहत क्षेत्र

b. सकल फसली क्षेत्र (जी सी ए) के प्रतिशत के रूप में सकल सिंचित क्षेत्र

c. कुल खेती करने वाले परिवारों के प्रतिशत के रूप में 0–5 एकड़ खेती करने वाले परिवार (भारतीय कृषि में अंतःनिर्मित अवनमनी को मापने के लिए)

d. सभी खेती करने वाले परिवारों के प्रतिशत के रूप में शुद्ध काश्तकारी जोत (भारतीय कृषि में अंतःनिर्मित अवनमनी को मापने के लिए)

e. किसानों के रूप में सभी कामगारों के प्रतिशत के बराबर संलग्न श्रमिकों को काम पर रखना (कृषि में बढ़ते बाजार संबंधों को मापने के लिए)

f. प्रति 100 एकड़ शुद्ध बुवाई क्षेत्र (NSA) पर खेती करने वाले और खेतिहर मजदूर।

g. कुल काम करने वाली आबादी में खेती करने वाले और खेतिहर मजदूरों का प्रतिशत।

खण्ड – III पारंपरिक क्षेत्रों में भागीदारी दर

a. 1961 में पुरुष भागीदारी दर

b. 1961 में महिला भागीदारी दर

c. 1961 में कुल पुरुष श्रमिकों के प्रतिशत के रूप में कृषि में काम करने वाले पुरुष

d. 1961 में गैर–कृषि क्षेत्र में एकल और पारिवारिक श्रमिकों का कुल गैर–कृषि श्रमिकों से प्रतिशत

e. 1961 में घरेलू उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों की कुल कामकाजी आबादी का प्रतिशत

खण्ड – IV मानव संसाधन की संभावनाएं

a. व्यक्ति प्रति वर्ग मील पर

b. महिला प्रति 1000 पुरुष पर

c. कुल जनसंख्या के प्रति 1000 पर ग्रामीण जनसंख्या

d. 1951 से 1961 तक कुल जनसंख्या में प्रतिशत वृद्धि

e. 1961 में कुल जनसंख्या का अप्रवासी प्रतिशत (अपकर्षी कारक को मापने के लिए)

f. 1–44 आयु वर्ग की महिलाओं के 0–4% बच्चे (जनसंख्या के गुणा होने की क्षमता को मापने के लिए)

g. अपरिष्कृत साक्षरता दर 1961 (सांस्कृतिक और तकनीकी उन्नति के उपाय)

h. 1961 में कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का प्रतिशत

i. 1961 में कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति की जनसंख्या का प्रतिशत

खण्ड – V वितरक व्यापार, विनिर्माण और बुनियादी ढांचा

a. प्रति 1000 जनसंख्या पर फुटकर व्यापार में श्रमिक

b. प्रति 1000 जनसंख्या पर विनिर्माण में श्रमिक

c. जनगणना घर सभी जनगणना घरों के प्रति 1000 कार्यालयों के व्यावसायिक घरों के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

d. सभी जनगणना घरों के प्रति 1000 पर सामुदायिक केंद्रों के रूप में उपयोग किए जाने वाले जनगणना घर।

e. जनगणना घरों का उपयोग सभी जनगणना घरों के प्रति 1000 में रेस्तरां और खाने के घरों के रूप में किया जाता है।

f. सभी जनगणना घरों में प्रति 1000 जनगणना घरों को विश्राम गृह के रूप में उपयोग किया जाता है।

g. सभी जनगणना घरों के प्रति 1000 पर स्कूलों के रूप में उपयोग किए जाने वाले जनगणना घर

h. सभी जनगणना घरों के प्रति 1000 पर चिकित्सा संस्थानों के रूप में उपयोग किए जाने वाले जनगणना घर

i. प्रति 1000 वर्ग मील क्षेत्र पर सतह सड़क के मील

खण्ड – VI आधुनिक क्षेत्रों में औद्योगिक गतिविधियों का आयोजन

a. बिजली से चलने वाले प्रतिष्ठान सभी औद्योगिक प्रतिष्ठानों का प्रतिशत

b. पंजीकृत फैक्ट्रियों में लगे कामगार सभी कामगारों का प्रतिशत

c. आवास में भीड़भाड़ की डिग्री

d. क्या मुख्यालय शहरः i. स्वयं बिजली उत्पन्न करता है, ii. ग्रिड या जाल से जुड़ा है या iii. दोनों या कोई नहीं?

e. संगठित क्षेत्र में औद्योगीकरण, घटते अनुपात के अनुसार पांच उद्योगों का वर्गीकरण

2. पी. सेनगुप्ता और गैलिना सदास्युक

पी. सेनगुप्ता और गैलिना सदास्युक सोवियत संघ के तहत केंद्रीकृत योजना प्रतिमान या नमूने के अपने पहले अनुभव से समृद्ध हुए और भारत में समाजवादी योजना के नेहरूवादी प्रतिमान या नमूने का हिस्सा बन गए। यह मुख्य रूप से दोनों देशों में प्रासंगिक और पाठ्य अंतर के कारण प्रादेशिक नियोजन का प्रतिलिपि पेस्ट उपगमन नहीं था। रूस के विपरीत भारत एक उपनिवेश रहा है और अपने सामाजिक–आर्थिक और प्रादेशिक ढांचे में धर्मनिरपेक्ष विकृतियों और अस्पष्ट अभिव्यक्तिओं के अधीन था। सांप्रदायिक आधार पर भारत के विभाजन से स्थिति और खराब हो गई, जिसके परिणामस्वरूप विभाजन से संबंधित सांप्रदायिक हिंसा के दौरान लाखों लोग विस्थापित हुए और लाखों लोग मारे गए। वे अवसरों के साथ–साथ चुनौतियों से अच्छी तरह वाकिफ थे और आश्वस्त थे कि नियोजित विकास विस्थापन, गरीबी, निरक्षरता, क्षेत्रीय असमानताओं, सामाजिक संघर्षों और विश्व बाजार पर निर्भरता से संबंधित समस्याओं के समाधान की कुंजी है। इसी तरह, वे अक्टूबर क्रांति से पहले रूस और स्वतंत्रता और विभाजन के बाद के भारत के बीच मुख्य प्रासंगिक अंतरों से भी अच्छी तरह परिचित थे। सोवियत संघ में सोवियत संघ द्वारा पूर्व–क्रांतिकारी सामाजिक गठन को पूरी तरह

से नकारने के विपरीत, भारत के पास अपनी सामाजिक और प्रादेशिक संरचनाओं में निरंतरता और परिवर्तन लाने का एक कठिन काम था। इन मतभेदों के अलावा, रूस और भारत के बीच कई समानताएं थीं। दोनों ने प्रादेशिक असमानताओं को चिह्नित् किया था। रूस का यूरोपीय भाग अधिक विकसित था जबकि पूर्वी और उत्तरी भाग बहुत पिछड़ा हुआ था। भारत के मामले में, कुछ विकसित महानगरीय चौकियों और परिक्षेत्रों को छोड़कर, भारत के बड़े हिस्से बहुत गरीब थे। इसी तरह, दोनों गरीबी की भयावहता, सामाजिक असमानताओं और प्रादेशिक विषमताओं के मामले में बराबर थे। ये कुछ विचार थे जिन्होंने भारत के आर्थिक प्रादेशीकरण को बनाने और स्पष्ट करने में योगदान दिया है, जिसे उन्होंने अपने सामान्य अवलोकन के माध्यम से आर्थिक योजना की प्रस्तावना के रूप में लिखा है:

सामान्य अवलोकनः

1. भारत से संसाधनों की निकासी की सुविधा के लिए औपनिवेशिक शासन के तहत बनाई गई प्रादेशिक संरचना भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पं जवाहर लाल नेहरू द्वारा आधुनिक भारत के मंदिरों के रूप में संदर्भित बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के निर्माण के बाद परिवर्तित हो गई।

2. मुख्य रूप से कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन बदलते फसल प्रतिरूप और फसलों की पसंद में देखा गया।

3. राज्य प्रायोजित भूमि सुधार नीति ने फसलों की पसंद के साथ–साथ प्रादेशिक कृषि विशेषज्ञता को भी परिवर्तित किया।

4. सबसे अधिक ध्यान देने योग्य परिवर्तन (वृद्धि) कृषि क्षेत्र में रोजगार था जिसने बदले में आधुनिक कृषि पद्धतियों का अभ्यास करने वाले क्षेत्रों में आंतरिक प्रवास की प्रक्रिया को तेज कर दिया।

5. विदेशी सहयोग के साथ सार्वजनिक क्षेत्रों में भारी उद्योगों और ऊर्जा क्षेत्रों के विकास में तेजी भारत के आर्थिक विकास में सबसे गतिशील कारक साबित हुई है। इसने प्रदेश गठन की प्रक्रिया को भी बदल दिया। (यह मोटे तौर पर एन.एन. कोलोसोवोस्की की पांच महत्वपूर्ण उत्पादन परिसरों की अवधारणाओं पर आधारित थाः ऊर्जा चक्र के रूप में ताप–धातु, लौह, अलौह, पेट्रोलियम और गैस।)

6. प्रारंभ में भारत में आर्थिक प्रदेश निर्माण भाषाई राज्यों के समेकन के साथ संघर्ष में हैं, लेकिन राज्य के हस्तक्षेप के साथ, इन भाषाई राज्यों ने आर्थिक सुदृढ़ीकरण में योगदान दिया है।

7. तीव्र प्रगति के लिए भारत को प्रादेशिक आर्थिक एकता यानी भाषाई राज्यों के बीच श्रम के तर्कसंगत भौगोलिक विभाजन की आवश्यकता है।

8. आत्मनिर्णय के अधिकार के लिए सौ से अधिक वर्षों के संघर्ष ने भारत को अन्य औपनिवेशिक और उत्तर–औपनिवेशिक देशों से गुणात्मक रूप से अलग बनाने में मदद की है।

9. भारतीय कृषि में नए बाजार संबंध विकसित हुए हैं।

10. भारत पूंजीवादी विकास के पथ पर है और पूंजीवादी विकास ने अपने 'औद्योगिक, कृषि के साथ–साथ खनिज आधारित उद्योगों में गहरी पैठ बना ली है।

11. बाजार और प्रौद्योगिकी के लिए औपनिवेशिक ढांचे पर भारत की निर्भरता बढ़ी है।

12. बुनियादी और भारी उद्योग, मशीन निर्माण, धातु विज्ञान, तेल खनन और शोधन, पेट्रोकेमिकल उद्योग जैसे प्रमुख उद्योग भारत में या तो अनुपस्थित हैं या बहुत कमजोर हैं।

13. धीरे–धीरे केंद्रीकरण की प्रवृत्ति होने पर भी कलकत्ता और मुंबई के आसपास औद्योगिक विकास का अति केंद्रीकरण भारत की विशेषता है।

14. भारत की अर्थव्यवस्था विशेष रूप से इसकी कृषि और खनन मुख्य रूप से निर्यात उन्मुख हैं।

15. तटीय क्षेत्रों में अच्छी तरह से विकसित आर्थिक आधार और बुनियादी ढांचा लेकिन बहुत कमजोर पिछड़े संपर्क हैं।

16. विशेष रूप से जहां तक श्रम के भौगोलिक विभाजन के संबंध में विकास का संबंध है, आंतरिक प्रदेशों का बड़ा हिस्सा या तो अप्रभावित रहा या नकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ।

इन सामान्य अवलोकनों के आधार पर, उन्होंने निम्नलिखित आर्थिक प्रदेशों की पहचान की:

1. **प्राकृतिक संसाधन प्रदेशः** प्राकृतिक प्रदेशों के साथ प्राकृतिक संसाधनों के क्षेत्रीय जुड़ाव के आधार पर इनका सीमांकन किया गया। पांच प्राकृतिक प्रदेशों की पहचान की गई;

   a. महान पर्वतीय क्षेत्र

   b. महान निचला मैदान

   c. प्रायद्वीप का महान पठार

   d. तटीय मैदान

   e. द्वीप

2. **आर्थिक प्रदेशों का निर्माण, जनसंख्या विशेषताएँ और संसाधन विकासः**

   a. गतिशील ग्रामीण और शहरी बस्तियाँ।

   b. अधिक जनसंख्या की स्तर

   c. आंतरिक प्रवास के लक्षण

   d. जनसंख्या संसाधन क्षेत्रः तीन विशेषताएंः गतिशील प्रदेशः पश्चिम बंगाल के डेल्टाई मैदान; उत्तर–पूर्वी प्रायद्वीप के संभावित प्रदेश; अधिक आबादी वाला मध्य गंगा का मैदान।

3. **कृषि प्रदेशः**

   a. हिमालय क्षेत्र

   b. शुष्क क्षेत्र

   c. उप–आर्द्र क्षेत्र

   d. आर्द्र क्षेत्र

4. **औद्योगिक प्रदेश**

5. **परिवहन प्रदेश**

उपर्युक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने सात सिद्धांतों के साथ आर्थिक प्रादेशीकरण की पद्धति विकसित कीः

अपनी धारणाओं में, उन्होंने निम्नलिखित सात सिद्धांतों पर जोर दियाः

1. जीवित वास्तविकताओं के रूप में प्रदेशों के पास उद्देश्य चरित्र होता है।
2. प्रदेश निर्माण में अन्य आर्थिक संकेतकों पर उत्पादन की सर्वोच्चता।
3. अर्थव्यवस्था की प्रादेशिक और क्षेत्रीय संरचना की एकता।
4. प्रदेश एक ऐतिहासिक।
5. आर्थिक प्रदेश दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य योजना के आधार हैं।
6. आर्थिक प्रदेशों और प्रशासनिक ढांचे के बीच अंर्तसंबंध।
7. आर्थिक प्रदेशों के निर्माण में नियोजित उत्पादन की विशेष भूमिका।

विधियाँ :

1. उत्पादन विशेषज्ञता की प्रधानता।
2. आर्थिक प्रदेश प्राकृतिक संसाधनों की अक्षय निधि या बंदोबस्ती की अच्छी समझ पर आधारित होने चाहिए।
3. प्राकृतिक संसाधन प्रदेशों के पदानुक्रम की पहचान।
4. आर्थिक प्रदेश नीचे से शुरू होने चाहिएः सूक्ष्म प्रदेश एकल संसाधन क्षेत्र के बराबर होना चाहिए। मध्यम प्रदेश हमेशा बहुउद्देशीय उत्पादन इकाई होना चाहिए। बृहत् प्रदेश में राष्ट्रीय महत्व के उत्पादन चक्र को संसाधित करने की क्षमता होनी चाहिए।
5. विभिन्न स्तरों पर प्रादेशिक सीमाएं एक दूसरे को नहीं काटनी चाहिए।
6. पावर अथवा शक्ति स्तर प्रदेशों को मिलाकर उच्च क्रम वाले प्रदेशों का निर्माण किया जाना चाहिए।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 2

आर्थिक प्रदेशों के अपने उपगमन में पी. सेनगुप्ता और गैलिना सदास्युक द्वारा अपनाए गए सात सिद्धांतों पर संक्षेप में प्रकाश डालें।

18.4 भारत के आर्थिक प्रदेश

आर्थिक प्रदेशों की पहचान निम्नलिखित मानदंडों के आधार पर की गई थी:

a. भौतिक विशेषताएं।

b. प्राकृतिक संसाधन विशेषताएं

c. कुल प्राकृतिक संसाधनों और संभावित आर्थिक विकास का मूल्यांकन।

1. महान पर्वतीय क्षेत्र:

a) पश्चिमी हिमालय:

i. कश्मीर: काराकोरम लद्दाख, ज़ांस्कर, ग्रेट हिमालय और पीर पंजाल पर्वत श्रृंखलाएं।

ii. पंजाब–कुमाऊं: हिमाचल, गढ़वाल, कुमाऊं।

b) पूर्वी हिमालय:

i. दार्जिलिंग–सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश

ii. पूर्वी पहाड़ियाँ (नागालैंड, मणिपुर और मिजोरम), पूर्वी पठार (कार्बी–आंगलोंग और मेघालय पठार)

2. महान मैदान

3. प्रायद्वीपीय भारत:

i. उत्तर पश्चिमी प्रायद्वीपीय पठार: अरावली की पहाड़ियां, चंबल द्रोणी, बुंदेलखंड उच्च भूमि, मालवा पठार और विंध्य खुरची भूमि।

ii. उत्तर–पूर्वी प्रायद्वीपीय पठार: बघेलखंड पठार, छत्तीसगढ़ द्रोणी, बस्तर पठार, उड़ीसा या पूर्वी घाट, छोटानागपुर पठार।

iii. महाराष्ट्र का पठार और उसका अनुबंध; पश्चिमी घाट, लावा पठार, वैनगंगा घाटी।

iv. कर्नाटक पठार: मलनाड और मैदान।

v. आंध्र पठार: तेलंगाना और रायलसीमा।

vi. तमिलनाडु पठार: पश्चिमी घाट, पठार और पहाड़ियाँ।

4. तटीय मैदानः

i. पश्चिमी तटः काठियावाड़ प्रायद्वीप, गुजरात का मैदान, कोंकण तट, कर्नाटक और मालाबार तट।

ii. पूर्वी तटः तमिलनाडु, आंध्र और उड़ीसा

5. द्वीपः

i. बंगाल की खाड़ी में अंडमान और निकोबार

ii. अरब सागर में लक्षद्वीप और मिनिकॉय

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, भारत के आर्थिक प्रदेशों की पहचान भारत की तत्कालीन नई जनगणना 1961 की उपलब्धता पर आधारित थी, जो न केवल जनसंख्या के सामाजिक–जनसांख्यिकीय कारणों जिसमें प्रवासन की धाराएं, अधिवास और परिवार के प्रकार शामिल थे बल्कि सांस्कृतिक पहलू जैसे मातृभाषा, धर्म, वैवाहिक स्थिति, आर्थिक पहलू विशेष रूप से भूमि जोत और प्राकृतिक पहलू जैसे तापमान और वर्षा आदि को शामिल करते हुए सबसे विस्तृत गणना में से एक था। अशोक मित्रा द्वारा सुझाई गई योजना के लिए ये पहलू विशेष रूप से महत्वपूर्ण थे। गैलिना सदास्युक और पी सेनगुप्ता ने भी इन नए आँकड़ों का इस्तेमाल किया लेकिन उनका विशेष जोर यू. एस.एस.आर. में विकसित प्रादेशिक और आर्थिक योजना की प्रासंगिकता पर था, विशेष रूप से एन. एन. कोलोसोवोस्की की क्षेत्रीय उत्पादन परिसरों की अवधारणा द्वारा विकसित योजना। हालाँकि, दोनों देशों में मौजूद शाब्दिक और प्रासंगिक मतभेदों को समायोजित करने के लिए पर्याप्त सावधानी बरती गई थी।

स्व–मूल्यांकन प्रश्न 3

प्रायद्वीपीय भारत के अंतर्गत पहचाने जाने वाले प्रदेशों का वर्णन कीजिए।

18.5 सारांश

इस इकाई में आपने निम्नलिखित सीखाः

- भारत के आर्थिक प्रदेशों को परिभाषित करने के लिए आर्थिक उपगमन के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त की।
- विविध उद्देश्यों के लिए आर्थिक प्रदेशीकरण की आवश्यकता और महत्व के साथ–साथ भारत के आर्थिक प्रदेशों का सीमांकन करने के लिए विभिन्न योजनाएं।
- पी. सेनगुप्ता और अन्य विद्वानों की आर्थिक प्रादेशीकरण योजना का विस्तृत विवरण।

18.6 अंतिम प्रश्न

1. आर्थिक प्रदेशों के महत्व की चर्चा कीजिए।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

2. भारत में आर्थिक प्रदेशों के बारे में अशोक मित्रा के उपगमन की प्रमुख विशेषताओं पर चर्चा कीजिए।

3. अशोक मित्रा और पी. सेनगुप्ता और गैलिना सदास्युक द्वारा आर्थिक प्रदेशों के सीमांकन के लिए अपनाए गए आधार के बीच अंतर पर प्रकाश डालें।

18.7 उत्तर

स्व–मूल्यांकन प्रश्न

1. यह स्वतंत्र भारत में औपनिवेशिक विरासत के परिणामस्वरूप विकृतियों को संदर्भित करता है जिसने बदले में समाज और अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण में कई बाधाएं पैदा की।

2. सात सिद्धांतों में प्रदेशों का उद्देश्य चरित्र, उत्पादन की सर्वोच्चता, अर्थव्यवस्था की प्रादेशिक और क्षेत्रीय संरचना की एकता, ऐतिहासिक प्रदेश, दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य योजना के आधार पर आर्थिक प्रदेश, आर्थिक प्रदेशों और प्रशासनिक संरचना के बीच अंतर–संबंध और प्रशासनिक संरचना और आर्थिक क्षेत्रों आदि के निर्माण में नियोजित उत्पादन की विशेष भूमिका।

3. इनमें उत्तर–पश्चिमी प्रायद्वीपीय पठार, महाराष्ट्र का पठार और उसका अनुबंध, कर्नाटक का पठार, आंध्र का पठार, तमिलनाडु का पठार शामिल हैं।

अंतिम प्रश्न

1. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए उपयुक्त उदाहरणों के साथ आर्थिक प्रदेशों के महत्व पर प्रकाश डालिए। अनुभाग 18.2 का संदर्भ लें।

2. इस प्रश्न का उत्तर देते समय अशोक मित्रा द्वारा तैयार की गई प्रमुख विशेषताओं पर चर्चा करें और उन पर प्रकाश डालें। अनुभाग 18.3 का संदर्भ लें।

3. इस प्रश्न का उचित उत्तर देने के लिए दो विद्वानों द्वारा अपनाए गए आधारों के बीच अंतर पर संक्षेप में प्रकाश डालें। अनुभाग 18.3 का संदर्भ लें।

18.8 संदर्भ /अन्य पाठ्य सामग्री

1. Mitra, A. (1965): Levels of Regional Development in India, Government of India.
2. Sdasyuk Galina and Sengupta P (1961): Economic Regionalization of India: Problems and Approaches, Census of India Monograph No. 8.
3. Deshpande C.D. (1992): India: A Regional Interpretation, Indian Council of social Science Research, & Northern Book Centre, New Delhi.
4. Singh R.L. (ed.) (1971): India: A Regional Geography, Silver Jubilee Publication, National Geographical Society of India, Varanasi….

शब्दावली

आर्थिक उपगमनः यह निश्चित मानदंडों के आधार पर आर्थिक क्षेत्रों की पहचान करने के लिए नियोजित उपगमन को संदर्भित करता है।

भूआकृतिक उपगमनः यह कुछ मानदंडों के आधार पर भौगोलिक क्षेत्रों की विभिन्न प्रकारों में पहचान करने के लिए उपयोग किए जाने वाले उपगमन को संदर्भित करता है।

भूआकृति विज्ञानः यह भौतिक प्रक्रियाओं के हस्ताक्षर को समझने के अध्ययन को संदर्भित करता है जो पृथ्वी की सतह को आकार देने में मदद करता है।

उच्चावचः यह क्रमशः पृथ्वी की सतह पर दो उच्च और निम्न बिंदुओं के बीच माप अंतर को दर्शाता है।

सामाजिक–सांस्कृतिक उपगमनः यह एक मानदंड के आधार पर सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्रों की पहचान करने के लिए एक उपगमन के उपयोग को संदर्भित करता है।

भूभागः यह सतह की लक्षणों जैसे ऊंचाई, ढलान और सामान्य अभिविन्यास के संदर्भ में व्यक्त की गई पृथ्वी की सतह के खाका को संदर्भित करता है।

स्थलाकृतिः यह द्वि–आयामी मानचित्रों पर प्राकृतिक और मानव निर्मित लक्षणों सहित पृथ्वी की त्रि–आयामी सतह की लक्षणों को दर्शाता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY